अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10

(Science / विज्ञान)

05. Ground Water - Hydro-Chemical and Hydro- Ecological Heritage of Nature (With Special Reference to "Barwani Area' of Narmada River Basin (M. P.) (Dr. Pramod Pandit) 12

06. Study of Ground water quality in Barwani District with special reference to Pansemal Tehsil (Vinod Thakur) 17

07. Fungicidal activity of polyurethane polymer was performed on hard woods (Kunjan Singh Songara, Anamika Jain, Dipak Sharma) 22

08. Geochemical Factors Associated With The Observed Lack Of Response To The Application Of Micronutrients In Soil Of The Madhya Pradesh (Dr. Salil Kumar Udaipure) 25

09. Identifcation Of River Wateriy Quality Usingh The Fuzzy Synthetic Evaluation Approach (Dr. Akhilesh Tripathi, Dinesh Solanki, Dharmendra Dwivedi) 28

10. Ethnobotanical Study Of Some Threatened Climber Plants Used By Tribals Of Dhar District, M. P. (Dr. Kamal Singh Alawa) 30

11. Isolation and identification of microbes associated with mobile phones in holkar science college of Indore district (N. Khurana, Chetna Mandloi) 32

(Home Science / गृह विज्ञान)

12. Addressing tribal women's health through Integrated Child Development Services (ICDS) scheme (Pushpa Devi, Dr. Lalita Vatta) 34

13. विभिन्न माध्यमिक शिक्षा मण्डलों के किशोर बालक एवं बालिकाओं के इंटरनेट की लत का उनके सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव का अध्ययन (डॉ. आभा तिवारी, निरंजना धोटे) 37

14. कामकाजी एवं गैरकामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन का अध्ययन (डॉ. आभा तिवारी, सपना श्रीवास्तव) 41

15. हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकल शिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि का अध्ययन (डॉ. आहुति साहू ,डॉ. आभा तिवारी) 44

16. मध्यान्ह भोजन में विद्यार्थियों की रुचि (डॉ. रशीदा कांचवाला, रेखा सोलंकी) 47

17. कुपोषण के कारण - मध्यप्रदेश के खरगोन जिले के संदर्भ में एक अध्ययन (प्रो. जयंती जोशी) 49

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

18. A Study On The Beneficiaries' Satisfaction With The Services Of Sidbi With Special Reference To Small Scale Industries (Pragati Bafna, Dr. Rajeev Kumar Jhalani) 51

19. The Looming Threat of Work Values in Indian Organizations - Review of Research (Dr. Harvinder Soni, Anagat Ashish) 54

20. मध्यप्रदेश की कृषि उपज मण्डियों का कृषकों की आर्थिक उन्नति में योगदान - इन्दौर संभाग के विशेष सन्दर्भ में (2001 से 2010 तक) (प्रो. राजेश जैन) 58

21. मध्यप्रदेश में जिला गरीबी उन्मूलन परियोजना का सामान्य अध्ययन (डॉ. व्ही. के. शुक्ल, नितेश मिश्रा) 62

22. निवेशकों के हित संरक्षण में सेबी की भूमिका (डॉ. संजय पण्डित, अखलाक मो. खान) 65

23. मध्यप्रदेश राज्य के स्वरोजगार योजनाओं की आवश्यकता एवं महत्व - एक अध्ययन (डॉ. विशाल पुरोहित) 67

(Economics / अर्थशास्त्र)

24. बेरोजगारी - कारण एवं उपाय (डॉ. सुनीता बाथरे) 69

25. रायपुर जिले में कृषि उपज मण्डी समितियों की वित्तीय स्थिति : एक अध्ययन (डॉ. मीनाक्षी तिवारी) 72

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

26. Communalism: A Challenge to India's Democracy (Dr. Sulekha Mishra, Aijaz Ahmad Khan) 75

27. महिला मानवाधिकार - एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. संगीता विजय, अनीता रानी राजावत) 78

28. दर्शन का पोप - प्लेटो (डॉ. मीनाक्षी पँवार) 81

29. भारत की विदेश नीति में असंलग्नता का परिवर्तनशील स्वरूप (महेन्द्र कुमार) 84

30. बालिका सशक्तिकरण की अनूठी योजाना 'बेटी बचाओं, बेटी पढ़ाओं' (डॉ. भावना ठाकुर) 87

31. भारत - अमेरिका सैन्य करार (एक अध्ययन) (प्रो. अंजना सेठिया) 89

32. भारतीय लोकतंत्र में राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया - एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (साधना डांगी) 91

33. जेल, प्रशासन और मानवाधिकार (डॉ. ममता राजपूत) 93

(History / इतिहास)

34. भारतीय राजनीति में महिलाओं की सहभागिता (डॉ. किशन यादव) 95

35. ऐतिहासिक व पर्यटन की दृष्टि से म.प्र. का महत्वपूर्ण धरोहर स्थल - साँची (डॉ. संदीप श्रीवास्तव) 97

36. बुंदेलखण्ड में मराठों का आगमन एवं विस्तार (डॉ. चेतना ठाकुर) 100

37. वागड़ के आदिवासियों की स्वतन्त्रता से पूर्व एवं बाद की स्थिति- एक तुलनात्मक अध्ययन (विक्रम सिंह ताबियार) 102

38. कल्चुरी कालीन विंध्य-प्रदेश के दर्शनीय स्थल (सुभाष कुमार तिवारी) 104

(Sociology / समाजशास्त्र)

39. A Sociological Analysis Of Widows : A Step For Empowerment (Dr. Puspanjali Padhal) 106

40. Maternity Benefits Act : A Step Towards Women Empowerment 109
(Girish Makwana, Dr. Ayushi Sule (PT), Dr. Shraddha Malviya)

41. जनजाति परिवारों के पलायन का सकारात्मक प्रभाव (डॉ. राजेन्द्र कुमार यादव) 112

42. अनुसूचित जनजाति की सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का प्रभाव - 115
बड़वानी जिले के संदर्भ में (डॉ. निशा जैन, रितेश मॉगरोलिय)

43. बदलते गांवों में सामाजिक न्याय और क्षेत्रीय भाषा की भूमिका (डॉ. आनन्द कुमार खरे) 118

44. मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ की जनजातियों का अध्ययन (डॉ. मनोज वानखेड़े) 121

45. अनुसूचित जनजातीय महिलाएँ एवं पंचायती राज (सतना जिले की अमरपाटन तहसील के संदर्भ में) 124
(विनोद कुमार शेण्डे)

46. आधुनिक समाज में बढ़ते हुए सायबर क्राइम एवं उनसे सावधान रहने के उपाय - एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 126
(डॉ. उमा लवानिया)

(Geography / भूगोल)

47. मध्य प्रदेश के अलीराजपुर जिले में जनजातीय कृषक परिवारों का सिंचाई परियोजनाओं पर प्रभाव 128
(डॉ. बी. एल. पाटीदार, कैलाश डावर)

48. डूँगरपुर जिले में जनजातियों की सामाजिक-सुविधाएँ एवं विकास (1981 से 2011)(एक भौगोलिक अध्ययन........... 132
भू.अ.नि.वृ. के आधार पर) (गोविन्द लाल सरगड़ा)

49. मनरेगा - आत्माओं का कार्यस्थल(दमोह जिले की ग्राम पंचायत घटेरा के संदर्भ में) (डॉ. नीरज कुमार सोनी) 136

50. नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रावधानों का वैयक्तिक अध्ययन - खरगोन जिले के सन्दर्भ में (डॉ. राजाराम आर्य) 140

51. मानवाधिकार एवं वैश्वीकरण (महेश चन्द मीना) 143

52. दक्षिणी राजस्थान में वर्षा की प्रवृत्ति, कृषि भूमि उपयोग का वर्गीकरण एक भौगोलिक विश्लेषण 2010-11 146
(राजेन्द्र कुमार मेघवाल)

53. दक्षिणी राजस्थान में कृषि गहनता का वितरण (2010-11 से 2012-13) - एक भौगोलिक विश्लेषण 149
(लक्ष्मीनारायण माली)

54. जनजातीय उपयोजना क्षेत्र में शैक्षणिक विकास- डूंगरपूर जिले का एक अध्ययन (बिन्दिया सोनी, डॉ. पलक भारद्वाज) .. 152

55. कृषि आधुनिकीकरण का पर्यावरण पर प्रभाव (इन्दौर जिले की साँवेर तहसील के संदर्भ में) (धर्मेन्द्र सिंह चौहान) 155

(Psychology / मनोविज्ञान)

56. A Study Of Social Support Among Working Women In Relation To Period Of Marital Life 158
(Dr. Mamta Barman)

57. टी.वी. के पारिवारिक सीरियलों का कामकाजी एवं गृहिणी महिलाओं पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव (भोपाल नगर के सन्दर्भ में) (ममता व्यास) 160

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

58. Gender Bias and Patriarchal effect in Mahesh Dattani's "Tara' (Dr. Shweta Singh Baghel) 162
59. Presentation Of Urban Life In Anita Desai's Novels (Dr. Vishal Sen) 164
60. References of Bible in Select Poems of Dylan Thomas(Dr. Indira Parmar) 166

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

61. Verbal Literature Of Madhya Pradesh (Dr. Kala Joshi) 168
62. भारतीय संस्कृति के गौरव रहीम और इकबाल का साहित्यिक अवदान (डॉ. अमित शुक्ल, डॉ. अनीता ठाकरे) 171
63. नारी मन का चित्रण - पटाक्षेप- मालती जोशी (डॉ. संध्या खरे) 174
64. वैश्विक समरसता में सन्त साहित्य की उपादेयता (डॉ. कमलेश सिंह नेगी) 177
65. दिनकर के काव्य में राष्ट्रीयता के स्वर (डॉ. गायत्री वाजपेयी) 180
66. नेताजी सुभाषचन्द्र बोस पर केन्द्रित बाल उपन्यासों का कथ्यशिल्प परक अध्ययन (डॉ. अलका दर्शन श्रीवास्तव, आशा कनेल) 183
67. समकालीन कविता - विषय और व्याप्ति (निधि जैन) 186
68. रेणु की कहानियों में किरदारों का नायकत्व (डॉ. रत्नेश विष्वक्सेन) 188
69. हिन्दी कथा साहित्य में नारी चेतना (डॉ. ओ. एस. परिहार) 190
70. बदलता सामाजिक परिवेश और नारी (डॉ. रश्मि प्रीति गुरू) 192
71. प्रेमचंद के कथा साहित्य में ग्रामीण जीवन (डॉ. शबनम खान) 194
72. हिन्दू धर्म और रहीम (डॉ. सारिका मिश्रा पाण्डेय) 196
73. ग्लोबल वार्मिंग और पर्यावरण प्रदूषण (डॉ. रशीदा खान) 198
74. उदात्त विचारों के धनी हरिवंशराय जी बच्चन (डॉ. सरोज जैन) 200
75. श्रीकृष्ण 'सरल' के काव्य में गाँधी दर्शन की अभिव्यक्ति (डॉ. दीपक कुमार गुप्ता) 202
76. भक्तिकाव्य की मूलचेतना जनवादी चेतना ही है (डॉ. पारसमणि गुप्ता) 204

(Sanskrit / संस्कृत)

77. ऋग्वैदिक देवता एवं प्रकृति (मधुबाला मीणा) 205
78. मानसिक स्वास्थ्य में योग की भूमिका (सन्जू यादव) 208

(Drawing / चित्रकला)

79. भारतीय चित्रकला में पहाड़ी शैली एक सुंदर अध्याय - (1700 ई से 1900 ई. तक) (डॉ. यतीन्द्र महोबे) 211

80. रवींद्रनाथ टैगोर की चित्रात्मक रूपसंपदा में अनुठा रंगाच्छादन (शालिनी रानी) 214

81. अमृता शेरगिल के आंतरिक मन की उदासी एवं संवेदना में डूबे चित्र-फलक (करूणा) 218

82. लालचन्द मारोठिया का प्रकृति संसार (प्रो. किरन सरना, पारूल बापलावत) 221

83. प्रकृति के वातायन में सौंदर्य का राग रचते जगमोहन माथोड़िया (प्रो. किरन सरना, प्रिया बापलावत) 224

(Education / शिक्षा)

84. The Effectivness Of The Jigsaw Methods Of Co-Operative Learning Versus Conventional Method Of Learning (Dr. Manorama Mathur, Khushboo Mathur) 227

85. शिक्षा अधिकार अधिनियम - समस्याऐं एवं परिवर्तन (नीलिमा पहारे) 230

86. माध्यमिक शिक्षा मण्डल, म.प्र., भोपाल से मान्यता प्राप्त विद्यालय एवं केन्द्रीय विद्यालय के हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की आपदा प्रबंधन शिक्षा के प्रति जागरूकता का अध्ययन (डॉ. आर. के. अरोरा, अंजना पाटनवाला) 233

87. विभिन्न अवस्थाओं में संज्ञानात्मक विकास (बालेन्द्र श्रीवास्तव, डॉ. एम. के. तिवारी) 235

88. योग्य शिक्षकों के निर्माण में सम सामयिक चुनौतियाँ (डॉ. उदय कालभंवर) 237

89. मूल्यपरक शिक्षा (डॉ. रश्मि पण्ड्या) 239

(Others / अन्य)

90. Environmental Torts : A Step Towardsthe Legal Revamping Policy Related To Environmental Protection (Aprajita Bhargava) 241

91. हिन्दुओं के रीति रिवाज एवं उनके ऐतिहासिक संदर्भ (डॉ. हजारी लाल मौर्य) 244

92. आचार्य शंकर एवं आचार्य रामानुज : सामान्य तुलना (विशेषत: उपनिषद् - भाष्यों के सन्दर्भ में) (डॉ. सरोज मेहता) 248

93. मध्यकालीन साहित्य का नीतिकाव्य (डॉ. अनुपमा सक्सेना) 250

94. The Use Of Literary Devices In Popular Modern Fiction (Dr. Panchali Sharma) 253

95. जयशंकर प्रसाद के उपन्यासों की विकासधारा (डॉ. कविता आचार्य) 257

96. Soil Water Conservation: Strategies For Sustainable Land Management (Dr. Anjul Singh) 261

97. Allama Iqbal's Shayaris: Reflection of Varied Moods (With Special Reference to Love) (Dr. Arshad Siraj) 266

98. Farmer Response To Farm Telecast Programme Among Viewers In Ajmer District (Dr. Govind Prakash Acharya) 270

99. प्राचीन भारतीय राजव्यवस्था में गुप्तचर संगठन तथा उनकी कार्यप्रणाली (डॉ. सोमेश कुमार सिंह) 275

100. Solar Cell-Working and Significance (With Special Reference to Photovoltaic cells) (Ashok Kumar Verma) 279

101. Are You Employable? (Dr. Monika Jain, Juned Nagori) 283

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर .... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार .... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू .... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी .... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा .... पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव .... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. .... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. .... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे .... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. .... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम .... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा .... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14) प्रो. डॉ. संजय खरे .... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय .... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. अखिलेश जाधव .... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18) प्रो. डॉ. कमल जैन .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से .... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन .... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार .... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी .... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव .... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया .... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी .... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम............. प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी........... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे............. विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता .... पूर्व अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ .... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा .... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू................. प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन .... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित .... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ....प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत

(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ....निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत

(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ....पूर्व सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत

(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ....प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ....प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ......प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ....प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ....प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ....पूर्व संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ....संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी..........अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ....अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे....................संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ....प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत

(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ....प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव ....प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(20) प्रो.डॉ. कान्ता अलावा .... प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

(21) प्रो. डॉ. एस. के. जैन ....प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

(22) प्रो. डॉ. किशन यादव ....एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) शोध केन्द्र, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झांसी (उ.प्र.) भारत

(23) प्रो. डॉ. बी.आर.नलवाया ....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

(24) प्रो. डॉ. नत्वरलाल गुप्ता ....अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(25) प्रो.डॉ. पुरुषोत्तम गौतम ....संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय,इन्दौर (म.प्र.) भारत

(26) प्रो. डॉ. एस. सी. मेहता ....प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, शासकीय भगत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

✻✻✻ विज्ञान संकाय ✻✻✻

गणित:- .... (1) **प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(2) **प्रो.डॉ. नीरज दुबे,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:- .... (1) **प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... (1) **प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(2) **प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची,** शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... (1) **प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)
(2) **प्रो. डॉ. अमृता खत्री,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... (1) **डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. सुयश कुमार,** शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... (1) **डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:- .... (1) **अनुराग झँवेरी,** बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

✻✻✻ वाणिज्य संकाय ✻✻✻

वाणिज्य :- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल ,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल,** शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

✻✻✻ प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ✻✻✻

प्रबंध :- .... (1) **प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी ,** शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... (1) **प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... (1) **प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

✻✻✻ विधि संकाय ✻✻✻

विधि:- .... (1) **प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन,** प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

✻✻✻ कला संकाय ✻✻✻

अर्थशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा,** शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. अंजना जैन,** एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:- .... (1) **प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. अनिल जैन,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा,** मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन ,** शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. उमा लवानिया ,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:- .... (1) **प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) **प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला,** वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. कला जोशी,** श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:-......................... (1) **प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:- .... (1) **प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:-....................... (1) **प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:- .... (1) **प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव,** शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. सरोज कोठारी,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:- .... (1) **प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव,** महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:- .... (1) **प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर,** राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:- .... (1) **प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. मधु गोयल,** स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. संध्या वर्मा,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:-................ (1) **प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) **प्रो. डॉ. आभा तिवारी,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:- ... (1) **प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा,** वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा .... (1) **प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** महींद्रा कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बैंगलुरू (कर्नाटक)
(2) **प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर,** प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. नीना अनेजा,** प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) **प्रो. डॉ. सतीश गिल,** शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

****** आर्किटेक्चर संकाय ******

शारीरिक शिक्षा .... (1) **प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा .... (1) **प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान .... (1) **डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़ .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत .... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर .... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी .... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन .... शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा .... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित .... जैन कला-वाणिज्य-विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार .... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा .... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक .... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान .... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान .... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र .... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन .... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान .... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित .... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी .... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी .... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े .... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित .... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता .... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना .... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे .... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी .... आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी .... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट .... शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद .... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर .... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल .... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया .... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी .... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल बाला सांधी .... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा .... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव .... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे .... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान .... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर .... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला- सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार .... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश .... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव .... सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा-बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी .... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे .... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी .... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल .... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल .... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन .... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे .... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा .... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव .... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला .... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया .... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल .... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला - शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल .... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान .... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा .... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला- रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा .... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी .... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान .... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर .... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा .... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश .... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित .... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा .... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री .... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला .... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. अपराजीता भार्गव .... अध्यापक ,आर. डी. पब्लिक स्कूल, बैतूल (म.प्र.) भारत
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई .... शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन .... वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ .... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख .... एस.एस.जी. पारीख स्नातकोत्तर कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा .... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया .... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला- प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह .... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल .... शोध सलाहकार, नई दिल्ली
(96) प्रो. डॉ. कविता भदौरिया .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

Ground Water - Hydro-Chemical and Hydro- Ecological Heritage of Nature (With Special Reference to 'Barwani Area' of Narmada River Basin (M. P.)

Dr. Pramod Pandit *

Abstract - Everything originated in the water and sustained by the water. All life on the earth depends on water. It is an indispensable, inorganic component of the earth's environment, among five basic elements.

According to the water budget of the hydrosphere only 3 % comprises fresh water, out of this 96% is ground water and lies in aquifers beneath the earth surface. This ground water is the sole and vast resources for different purpose.

The present paper attempts a strategic analysis of the ground water regime of the study are 'Barwani' of Narmada River Basin situated in the south western part of state M.P. As the area located at the bank of river Narmada and a significant part of the area will face submergence in the large water reservoir of Sardar Sarovar Dam (Gujrat) on Narmada River, in near future.

Proposed study area is also a intimate part of the global scenario as far as ground water is concern i.e. over exploitation, declining and depletion.

Although a vast research investigations has been carried out in the country on ground water resources but till date no systematic assessment study work has been done to monitor & evaluate the Hydro-Ecology & Chemistry in the area. Hence, it's the pioneer effort to study the ground water regime, not only in quantitative manner but also as its qualitative management and conservation as ecological factor.

Keyword- Groundwater, Ecological, Heritage, Quality management, Narmada river basin.

Introduction - (i) Study Area - The study area of the presented paper is part of Barwani Distt., Situated in the south western part of M.P. in Narmada River Basin, it lies between the parallels of 21^0. 44' - 22^0.04' N latitude and 74^0.27' - 75^0.07 - E longitude. It covers an area of 900 Hec. M., surrounded by three mountain ranges - Satpura in south, Vindhyanchal in north and Maikal ranges in the east, the northern limit of the area is bounded by the river Narmada.

Physiographically, area is hilly with plains. The general topographic elevation is 177-200 M. from mean sea level. Climate is tropical to humid i.e. season dependant. Deccan trap or igneous rocks are dominated in geological formations. Heavy black soil having high water holding capacity is the major soil type. 400-600 mm (i.e. - 20-25 inches) is the average annual rainfall contributed by south west monsoon.

(ii) An Appraisal of Ground Water

(a) Global and Indian Scenario - Apart from most vital and essential component of the ecosystem, water is also considered as a precious natural resources and an assets to a nation. The importance of Groundwater for the existence of human society can not be overemphasized.

Ground water of all categories is the major source of water for various purpose i.e. drinking, domestic, agriculture and industrial sector in both rural as wells urban areas, because it is considered as a safe and reliable sources of water.

According to the water budget of hydrosphere only 2.7 % comprises fresh water i.e. potable, out of this 22.21 % is ground water lies in aquifers beneath the earth surface. Water utilization projections for 2000 put the ground water usage at about 50 percent. Being an important and integral part of the hydrological cycle Groundwater is the sole and vast fresh water resources for agriculture (69 %), industrial activities (21 %) and domestic and drinking (6 %) sector in both rural as well as urban area.

It's availability as quantity and quality wise, depends upon the geography and geology of the area (i.e. soil type, slope and drainage); its exploitation and also on the rainfall and recharges condition of the resource.

Distribution of (2.7%) fresh- water

(After; Mishra, 1990)

Forms	Percentage (%)
Glaciers, Polar ice caps etc.	77.20
Groundwater (800 m.- 4 Km.)	12.35
Groundwater (up to 800 m.)	09.86
Lakes (fresh water)	00.35
Soil Moisture	00.17
Bio-mass	00.04

*H.O.D. (Chemistry) S.B.N. Govt. P. G. College, Barwani (M.P.) INDIA

Rivers, Ponds, Water ways	00.003
Hydrated minerals	00.001
Others	00.026
Total -	**100**

It has been assessed that in our country the total quantity of precipitation is 4000 cubic km., out of which available and usable ground water resources are 432 and 369 Cub km. respectively, which is preliminary stored in aquifers.

Today at the global level, the ground water resources have been the most exploited natural system due to accelerated pace of development, urbanization, industrialization and rapid population growth, resulting water scarcity in many parts of the world. About one third of the world's population experiencing moderate to high water stress and by the year 2025 as much as two-third of the world's population will face the sever water stress. The situation is aggravated by the problem of water pollution or contamination. India is heading towards a fresh water crisis mainly due to improper management of water resources and environmental degradation.

India water vision estimated that total water requirement for different uses will be 710, 843 and 1180 cubic km. by the year of 2010, 2025 & 2050 respectively. It is taken for granted that with a growing population, an increasing pace of urbanization and the process of development, the demand for water go up very sharply which has lead to a lack of access of safe water supply to millions of peoples of the country.

(b) Local (Study Area) Scenario - The proposed study area (i.e. Barwani) is also a integral part of this global scenario as far as ground water is concern. There has been a lack of adequate attention to water conservation, efficiency in water uses, water re-uses, ground water recharge and ecosystem sustainability. Rapid reducing forest cover due to deforestation and remarkable soil erosion leads into the declining of ground water table gradually, at few places it has been reached up to H" 350 meters (1100 ft.), a critical level.

As the area located at bank of Narmada River, the main drainage of all water bodies is controlled and affected by the river. The principal occupation of the 90 % population is agriculture and its related activities. The region has moved from subsistence farming to intensive irrigated farming mainly through utilization of ground water resources i.e. dug wells, tube wells and hand pumps. Growth in ground water draft is causing rapid decline in ground water level, which is likely to become more widespread in coming years, resulting in well failures affecting crop production and agriculture yield, adversely. On the other hand growing urban population within and outside the basin area have increased the water demand for municipal use. All these resulting in change the concern and priorities in water management and also the hydro ecological system of the basin area.

Water - A triangle of Ecology, Culture and Religion - Water is one of the five basic elements with Earth, Air, Space and Fire, from which creation emanates. Although water is a simple chemical compound of oxygen and hydrogen but its unique physical and chemical properties makes it distinct from other liquids as "Universal Solvent". Being a most basic constituent of all livings and non livings, it is an essential component of ecological system next to air.

It is the sole factor that can affect and alter the environment, ecology and economy of a particular area, a nation and even the globe.Thus, there is a need of realization that along with quantity, quality conservation and management of this ecological factor is most vital factor. In fact, organic evolution took place in the water.

Also human culture and civilization developed and flourished around water courses/systems.

Various ancient religious texts, epics like Vedas, Purans, Ramcharitmanas, Geeta and narratives from other valuable works such as Arthasashtra and Asthadhyayi of Kautilya and Panini, Shows importance of water storage, management and conservation. Hymns and prayers of Rigveda and Atharwaveda proves the saying - water is life (Jal Jivanam). There is no substitute for water.

In every religion, it is believed that protection and service of water (Jal Seva), to make available water for other living beings, is the best service to get blessing of almighty, God.

Various phenomena related to hydrological cycle was known to Vedic Period and illustrated there. Like cloud formation, types of clouds, rainfall, heating of earth, radiation and convectional currents, geomorphology is available in Asthadhyayi (700 BC) and Arthashashtra (400 BC). Ground water development, quality conservation and management, methods and materials of dam construction are shown in Varhat Samhita (550 AD), Meghmala (900 AD) and other literary sources.

Culture, Customs and ceremonies of many religions, countries and many states of our country also shows the importance of water protection, conservation and its management.

Cultural evolution and life style of Arabians and Israeli's is such that it revolves around economical and efficient use of water.

In drought prone and low rainfall areas of Gujarat, Rajsthan, South India and Maharashtra, follows traditional water service systems i.e. Lota and Piyala which in fact helps in saving drinking water.

Jain Sadhu's - Santa's life style puts up a exemplary example of economical use of water.

In fact, wasteful use of water is a sin, it is anti-religious as well as a national crime. Saving water by everyone can help in averting water crisis, collective efforts is the need of era. Let us do our duty religiously to save all livings from water crisis, otherwise water will not be available even for daily use, are the predictions of futurologist.

Research on Ground Water in the Area - In general, groundwater is considered as a safe and reliable source for all purposes. Recent studies have shown that groundwater of hydrological framework is highly susceptible to

contaminations & pollutants from natural as well as anthropogenic activities.

In the area of water management, so far the principal concern is limited up to quantitative management but no serious attention has been paid to the qualitative aspect. Thus, there is a strong need to provide a base line for qualitative management along with quantitative conservation.

Uniqueness of the study area is that it is situated in the Narmada River basin and in near future a significant part of it will submerge in the water reservoir of Sardar Sarovar Dam. It is expected that, this situation will change the ecology and chemistry of the ground water.

Although a vast research work has been in progress in the field of ground water in different part of the country at micro as well as macro level but reviews of literature reveals that till date no systematic assessment study work has been done to monitor and evaluate the hydro-ecology and chemistry of Groundwater in the study area.

Hence, the available ground water resources of the region at pre-submergence stage will provide significant information for wise planning and successful utilization of the resources in coming future.

Significance and Objectives of the Study - The study involves to develop a comprehensive picture of ground water resources in the area, studies show a challenging future and a chaotic view when considering competitive demands for water and available of endogenous water resources, along with remarkable shortage of water for basic survival needs.

Although the hydrology planners cannot accurately predict the future hydrological changes occurring in the area as part of the larger ecological & climatic changes, natural as well as human induced.

Problem of water table declining in this Barwani area increasing gradually, Sardar Sarovar reservoir will not only support well irrigation economy but also improve ground water ecology.

Also the success of ground water development programme depends on the close and active involvement of beneficiaries. It is essential to involve local peoples and communities in water management programme with suitable responsibilities at each level.Govt. organizations, institutes, welfare organizations, group housing societies, Panchayats, NGO's, VOs, industries should also be involved.

The study includes following basic objectives *:*

1. To carried out the picture of existing Groundwater resources of the area from both the angles i.e. quantitative as well as qualitative, before its submergence in the reservoir of S.S.D.
2. To establish a base line data and water quality index for public water supply systems.
3. To put the hydro-chemical picture of the ground water of the area before farmers, Govt. Officials, Health Experts, Planning Makers, Industrialists and Scientists of different disciplines.
4. To study the geological formations and physiographic conditions of the study zone.
5. To aware the communities by illustration the ground water recharge techniques and network developed by Govt. for appraising ground water resources.
6. To assess the suitability of Groundwater for irrigation and subsequently its effect on soil properties and plant growth.
7. To establish and know the relationship between water contaminations and water borne diseases.
8. To find out the cause of water pollution, degradation of water ecosystem and qualitatively conservation of water resources.

References :-

1. Ahmad, A. 2000; Environmental and social impacts associated with Sardar Sarovar (Narmada) water resources projects in India; a success story of conflict resolution and implementing sustainable development.
2. Awasthi, S. C. and N. M. Awasthi, 1993; water resources and its management with special reference to Bundelkhand region. Proceeding of National Conference of water resources and environmental management. Tikamgarha (M. P.).
3. Bouwer, H., 1978; Ground water hydrology, MC Graw Hill Series in water resources and environmental engineering: PP 335.
4. Burjia, J.S. and Saleem Romani, 2003; Ground water development - Present scenario and future needs. IJPA Vol. XLIX (3). PP 301-307.
5. Chakroborty, P.K., 1990; Need of Applied Research on water quality management. IJEP Vol. 19 (8).
6. Goswami, A. K, 2003; Water resources management in India - an overview, IJPA Vol. XLIX (3) PP 245 - 253.
7. Hudson. H. Nkotagu, et al, 1989; Appropriate methodologies for development and management of ground water resources in developing countries. International ground water symposium, Hydrabad.
8. Jain, P. K., 1993; Studies of Ground water quality around Hirapur (Sagar - Chatarpur District) Bundelkhand region. Proceedings of National Conf. on water resources and environmental management. Tikamgarha (M. P.).
9. Kumar, M. Dinesh and R. Ranade, 2004; Large water projects in the face of hydro -ecological and socioeconomic changes in Narmada Valley : Future Prospects and Challenges, Journal of IWRS. Vol. 24 (3)
10. Todd, D. K. 1980; Ground water hydrology, (2nd edition) John Willey and sons. Inc. New York.

Cyclic process of groundwater in hydrosphere (After; Mishra, 1990)

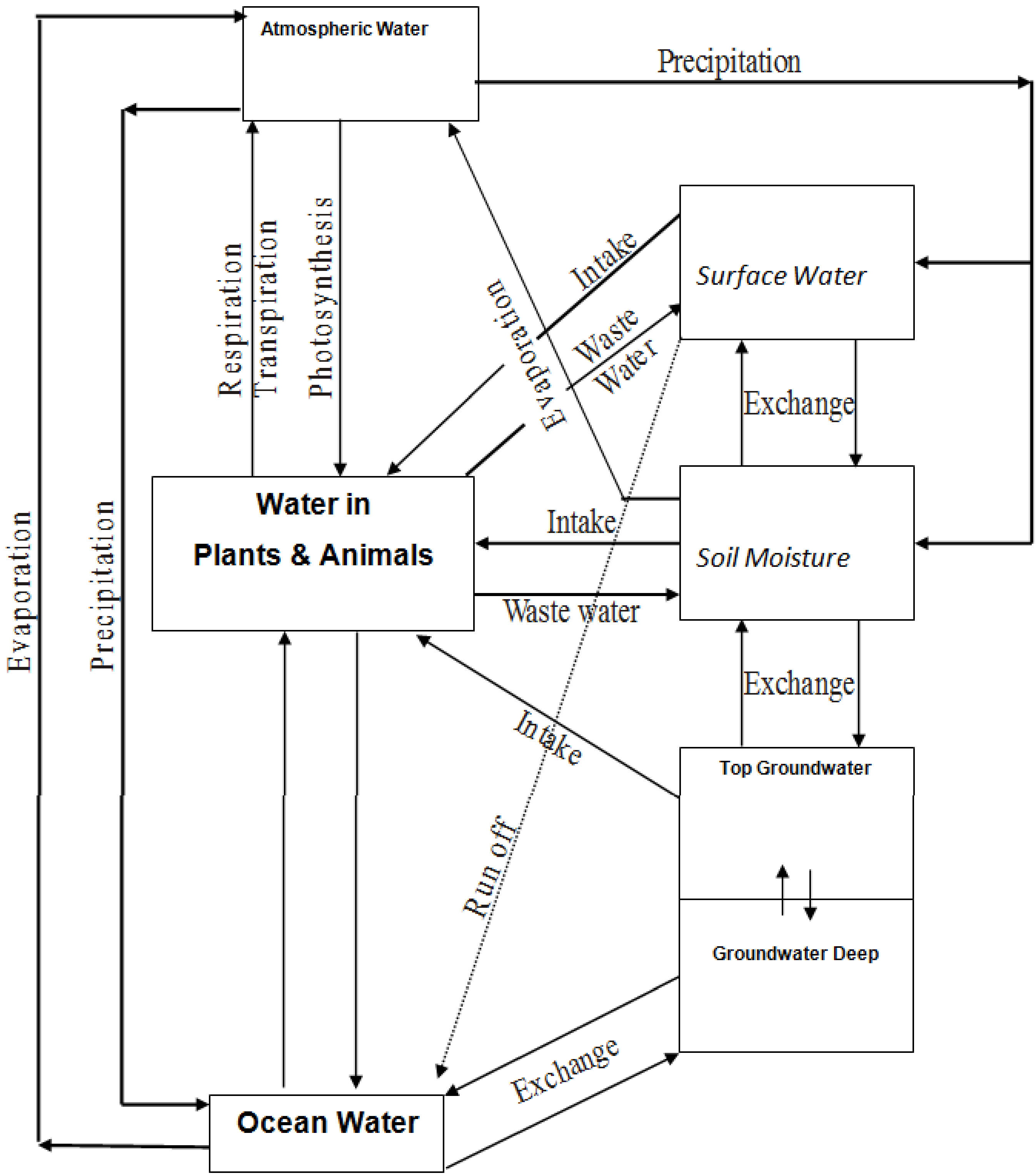

Distribution of (2.7%) fresh water In Hydrosphere

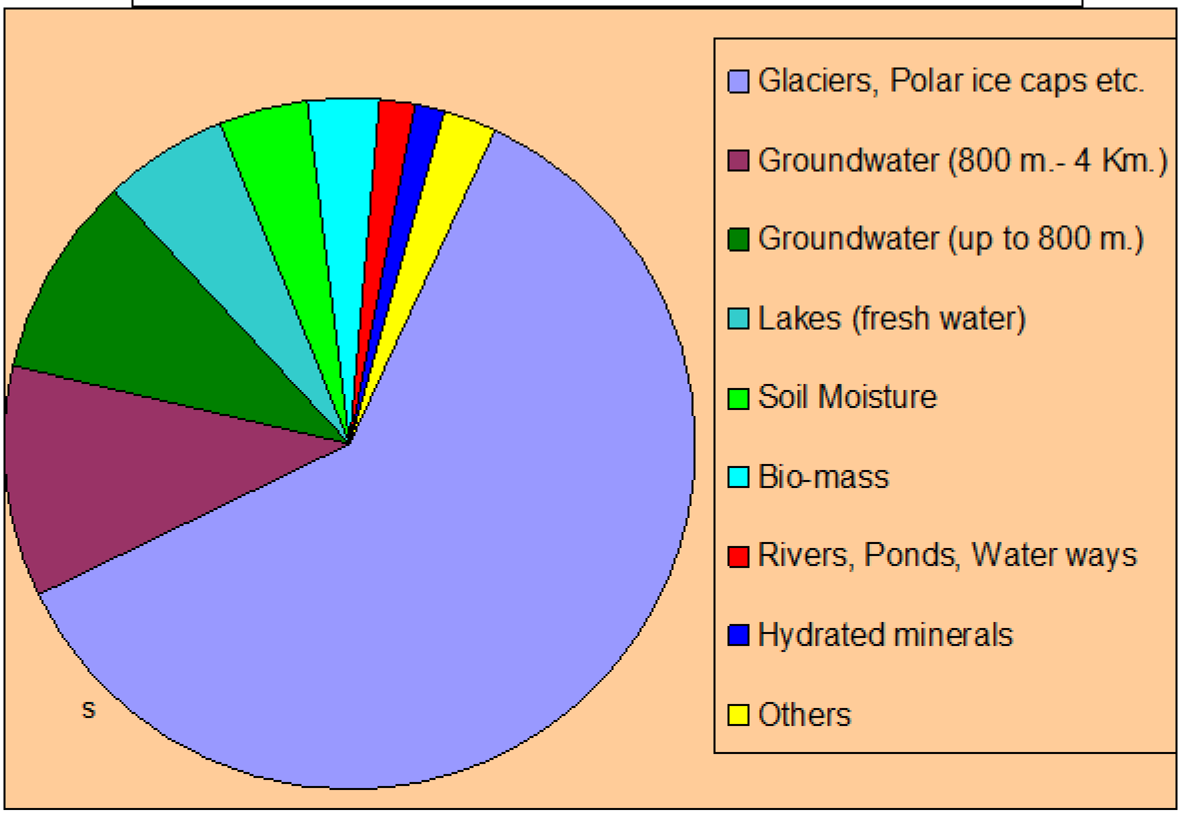

****

Study of Ground water quality in Barwani District with special reference to Pansemal Tehsil

Vinod Thakur *

Abstract - The study was carried out to assess the fluoride contamination status of groundwater in Pansemal Tehsil of Barwani District M.P. For this purpose, 24 water samples collected from Hand Pumps of village of study area were analysed for Dissolve Oxygen, Biological Oxygen Demand Chemical Oxygen Demand contain .DO, BOD and COD concentration in this sampling sides varied from in groundwater samples, with DO highest range in Pansemal 6.6 mg/l and lowest range in Junapani 4.4 mg/l .BOD highest range in Piprani 0.6mg/l and lowest range in Pansemal 0.1mg/l and COD highest range in Gongwada 8.0mg/l and lowest range in Piprani 4.0 mg/l
Keywords - Biological Oxygen Demand, Chemical Oxygen Demand , Pansemal Tehsil

Introduction - Surface water and groundwater have long been considered separate entities, and have been investigated individually. Chemical, biological and physical properties of surface water and groundwater are indeed different. In the transition zone a variety of processes occur, leading to transport, degradation, transformation, precipitation, or sorption of substance (Kalbus *et. al.,* 2006).

About 50% of all the underground used in urban areas of developing countries is derived from wells, springs and bore holes and more than 1000 million inhabitants in Asia and 150 million in Latin America rely on such resources (Ullah *et al.,* 2009).

High concentrations of fluoride in drinking water are harmful to human health (Beg *et al,* 2011).

Water is nature's most wonderful, abundant and useful compound. Of the many essential elements for the existence of human beings, animals and plants, water is rated to be of the greatest importance. Without food, human can survive for a number of days, but water is such an essential that without it one cannot survive. Water is not only essential for the lives of animals and plants, but also occupies a unique position in industries. Groundwater is an important source of water supply throughout the world. The quantity and the suitability of groundwater for human consumption and for irrigation are determined by its physical, chemical and bacteriological properties (Rupal *et al.,* 2012).

Water in its pure form occurs nearly in nature. Comprising over 70% of the earth's surface water is the most precious natural resource on our planet (Shinde *et al.,* 2013).

Water in the atmosphere comes from evaporation from the oceans, lakes, rivers ice-fields and glaciers, moist ground transpiration from plants and animal respiration .water available in the atmosphere is carried for long distances on land from the oceans by wind and convective moment under favourable conditions, it condition and precipitates over the earth's surface as rain, snow and hail (Tyagi and Singh, 2014).

Groundwater is almost globally important for human consumption as well as for the support of habitat and for maintaining the river's base-flow. It is usually of excellent quality. Being naturally filtered in their passage through the ground, they are usually clear, colourless, and free from microbial contamination and require minimal treatment (Afzali *et. al*., 2014).

Materials And Methods - Groundwater samples from different hand pumps, bore wells were analyzed.

Samples were collected in three different seasons June-May 2014-2015 Water sample could not be collected from the location during the post monsoons period due to mechanical problem in the hand pumps. The temperature pH and electrical conductivity were measured in the field using portable pH meter and EC meter. Captions and anions were analysed using ions chromatograph and standard titration method following standard procedures. (APHA, 1992)

Sampling station-Four sampling stations were selected in the present investigation-

S1. Pansemal
S2. Junapani
S3. Gongwada
S4. Piprani

The water samples were collected 3-3 times these selected sampling station in a precleaned and rinsed plastic container of 1litter capacity for further analysis for necessary precaution. (Brown *et al*, 1974)

1. Temperature-

Procedure :

1. Immerse thermometer in the sample up to the mark specific by the manufacturer and read temp. After equilibration.
2. When a temp. Profile at a number of different depth is

*School Of Life Science, D.A.V.V, Indore (M.P.) INDIA

required a thermo stat with a sufficiently long lead may be used.

2. pH-

Reagent :

1. Standard buffer solution of known pH.
2. Shake vigorously one excess (5-10g.) of finely crystalline $KHC_4H_4O_6$ with 100 to 300 ml distilled water at 25°c in a glass- stopper bottle.
3. Calcine a well washed, low alkali grade $caco_3$ in a platinum dish by igniting for 1L. At 1000° C Cool.
4. 0.1 N NaOH, 0.1 N Hcl, 5 N Hcl and acid potassium fluoride solution.

Procedure :

1. In each case follows manufacturer's instructions for pH meter and for storage and preparation of electrodes for use
2. Sample for 1 min. Blot dry, immerse in a fresh portion of the same sample and read pH.
3. Take a fresh sample to measure pH.

3. Colour :

Reagent –Dissolve 1.246 gm. Potassium chloro-platinate, K_2PtCl_6 and 1.00gm crystallised cobalt us chloride , $CaCl_2.6H_2O$ in distilled water with 100ml conc. Hcl and dilute to 1000ml with distilled water.

Procedure:

1. Pour sample in a nessler tube of 50 ml mark. Similarly fill three to four tube with colour standard which appear to correspond to the colour the of the sample
2. Compare colour of the sample with that of the standard by viewing vertically down words while the tube are placed on a white surface calculation.

Calculation – for dilute sample calculate colour units as:

A× 50

Where: -

Colour units =

A= estimation colour dilute sample

B= ml sample in 50 ml dilute sample

4. Odour

Procedure :

1. Full of sample, insert stopper and shake vigorously for 2-3 sec. And then quickly observe the odour .The sample should be at ambient temperature.
2. Odour free, rotten egg. Burnt sugar, soapy, fishy, septic aromatic, chlorines, alcoholic odour or any other specific odour.

D O (DISSOLVE OXYGEN)-

1. Manganous sulphate solution .Dissolve 480 gm $MnSo_4$ .4 H_2O, 400gm $MnSo_4$.2H_2O or 364 gm MnSo4 . H_2O in distilled water, filter and dilute to 1 litter.
2. Alkali iodine – Azid reagent –dissolve 500gm NaOH or 700 gm KOH and 135 gm NaI or 150 gm KI in dissolved water and dilute to 1 litter .Add 10 gm sodium azide (NaN_3) dissolved in 40 ml distilled water.
3. Sulphuric acid concentrated – 1 ml is equivalent to about 3 ml alkali – iodide - azide reagent.
4. Standard sodium thiosulphate 0.025N .Dissolve 6.205 gm sodium thiosulphate ($Na_2S_2O_3.5H_2O$) in freshly boiled and cooled distilled water and dilute to 1 litter. Add 5 ml chloroform or 0.4 gm NaOH /L or 4 gm borax and 510 mg HgI_2/L. 0.025 N potassium dichromate solution dissolved 1.226 gm potassium dichromate in distilled water and dilute to 1 L.
5. Standard potassium dichromate – a solution potassium dichromate equivalent to 0.025 N sodium thiosulphate contains 1.226 gm /L .$K_2Cr_2O_7$ at 103º C for 2 hrs before making the solution.
6. Standard disation of 0.025 N sodium thiosulphate solutions – Dissolved approximately 2 gm KI in an Erlenmeyer flask with 100-150 ml distilled water. Add 10 ml of H_2So_4, followed by exactly 20 ml 0.25 N potassium dichromate solution.
7. Starch Indicator – Add cold water suspension of 5 gm soluble starch to approximately 800ml boiling water with stirring .Dilute to 1 L allow to boil for a few minute and let settle overnight .

7. B O D (BIO CHEMICAL OXYGEN DEMAND)-

Procedure –

A. Fill BOD Bottle sample + 1ml $MnSo_4$ + 1ml Azide solution. And shake well $\xrightarrow[\textbf{1ml } H_2So_4]{\textbf{add}}$ to dissolved brown p $\xrightarrow[\textbf{Against}]{\textbf{titrate 200ml}}$ 0.025N $Na_2S_2O_3$ using starch as indicator till the solution become colourless.

B. Fill BOD Bottle with sample (incubate) at 27º C for three days (then) follow procedure as per ½A¼.

Calculation: -

BOD % mg /L = D1 –D2

D1 = Ini DO of 1st day

D2 = final DO of 3rd day

Reagents:

1. Monogamous sulphate: 480g $MnSo_4$ 4 H_2O dilute in 1 litter water.
2. Alkali iodide Azide: 500gm NaOH o 700 gm KOH and 135 g NaI on 150 gm KI in Distilled water.
3. Sulphuric acid : conc.H_2So_4
4. Starch solution :
5. Standard $Na_2S_2O_3$ 0.025 N: Dissolve 6.205 gm $Na_2S_2O_3.5H_2O$ in one litter distilled water.

8. C O D (CHEMICAL OXYGEN DEMAND)-

Procedure:

20 ml sample add '! 1gm $HgSo_4$ + Glass beads add & mix '! 30 ml H_2So_4 $\xrightarrow{\textbf{cool drops}}$ 10 ml of 0.25 N $K_2Cr_2O_7$ + '! reflux for 2 hrs at 150 º C '! cool to room

While mixing temperatures wash condenser with 25 ml distilled water

$\xrightarrow{\textbf{add 2-3 drops}}$ triturate against FAS till Blue Green to just Reddish

Ferroin indicator Brown .

"Reflux & Triturate a blank simultaneously."

Calculation: $C = \frac{(A-B) \times N \times 8000}{\text{ml of sample}}$

Where, C= COD as mg O_2/L

A = ml of FAS used for sample

B = ml of FAS used for blank

N = Normality of FAS

Reagent

1. Std. Potassium Dichromate solution : 0.25 N
   Dry $K_2Cr_2O_7$ at 103 º C for 2 hrs and dissolved 12.259 gm of dried $k_2Cr_2O_7$ in distilled water dilute to 1 litter.
2. Ferro in Indicator :
   Dissolved 1.485 gm 1:10 Phenanthrolein monohydrate + 695 mg.
   $FeSo_4$.$7H_2O$ in distilled water dilute to 1 litter.
3. Td. Ferrous Amm. Sulphate Solution :0.25 N (FAS)
4. Dissolved 98.0gm FAS in distilled water. And 20 ml come H_2SO_4 cool and dilute to 1 litre standardise against 0.25 N $K_2Cr_2O_7$ solutions.

9. Total solid –

Procedure –

A. Dry evaporating Dish /Biker at 103± 1º C cool and store in a desiccators, weigh immediately before use.

B. While stirring pipette a measured volume in to the pre – weighed evaporating dish / Beaker using a wide pore pipette. Choose a sample volume to yield between 10 and 200 mg dried residue

Calculation - mg Total solids/ L = (A-B) $\times 10^6$ /ml sample)

Where,

A= weight of dish /Beaker + residue, gm.

B = weight of dish / Beaker, g

Observation Tables and Results

Table3. (See in last page)

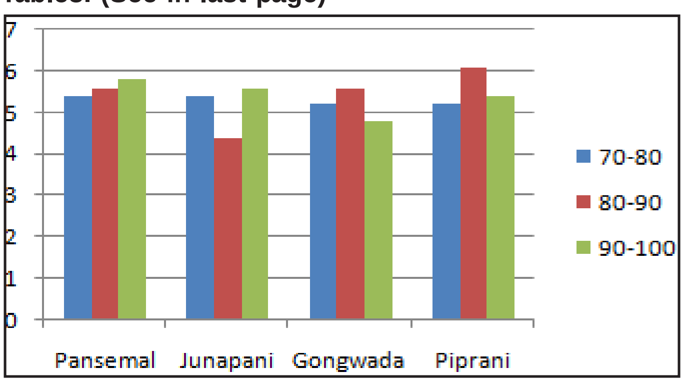

Fig. 3 Hand Pump

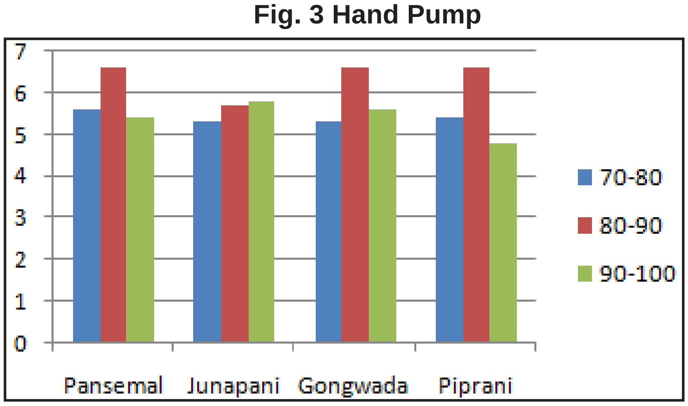

Fig. 3 Bore well

3. D O -The Dissolved oxygen in the sampling station was ranged between 4.4 to 6.6 mg/L in the present study period.

Table 4. (See in last page)

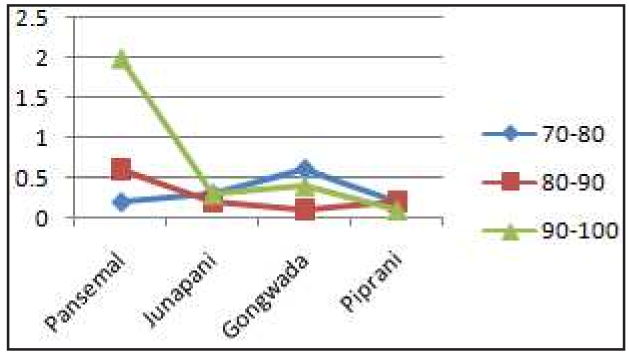

Fig. 4. Hand Pump

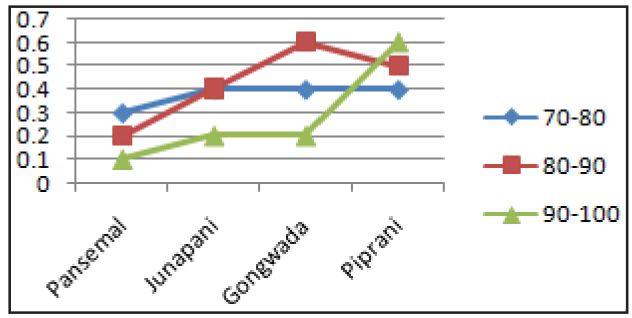

Fig. 4 Bore well

4. B O D – Biological oxygen demand level of sampling station range between 0.1 to 0.6 mg/L. The value of B O D in different groundwater sample was also under the permissible limit.

Table 5. (See in last page)

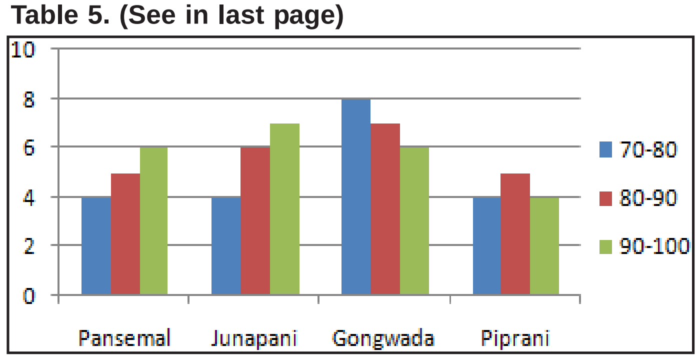

Fig. 5 Hand Pump

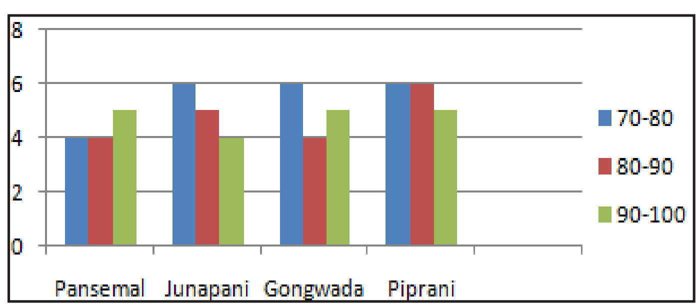

Fig. 5 Bore well

5.**C O D** – The C O D value of sampling station was range between 4.0 to 7.0 mg/L in competition to the low D O value , the C O D value always observed higher than B O D value.

Table 6. (See in next page)

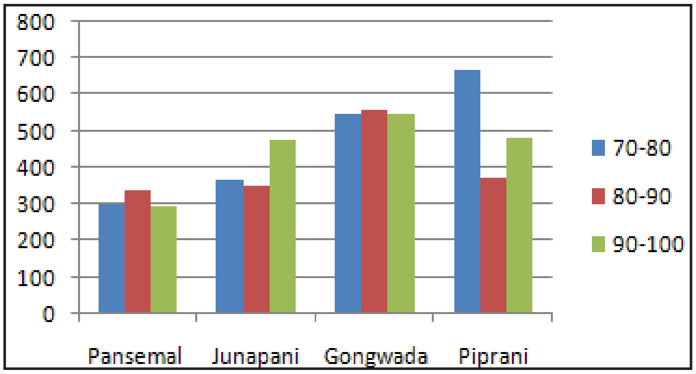

Fig. 6 Hand Pump

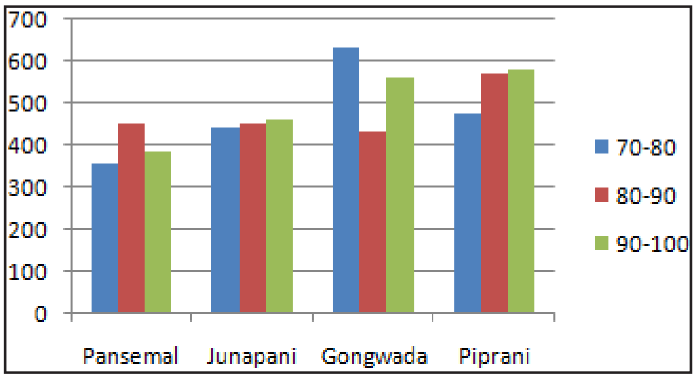

Fig. 6 Bore well

6.Total solid – The total solid content of sampling station was ranged between 298 to 670 mg/L the observed result of total solid indicate that all the sampling station were suitable for drinking purpose after necessary treatment .

Conclusion - The present study investigate the hydrochemistry of water and DO, BOD, COD and Total Solid in ground water. **D O** -The Dissolved oxygen in the sampling station was ranged between 4.4 to 6.6 mg/L in the present study period. **B O D** – Biological oxygen demand level of sampling station range between 0.1 to 0.6 mg/L. The value of B O D in different groundwater sample was also under the permissible limit. **C O D** – The C O D value of sampling station was range between 4.0 to 7.0 mg/L in competition to the low D O value , the C O D value always observed higher than B O D value.**Total solid –** The total solid content of sampling station was ranged between 298 to 670 mg/L the observed result of total solid indicate that all the sampling station were suitable for drinking purpose after necessary treatment .

References :-

1. APHA (1993) Standard methods for the examination of water and waste water. *American public health association, washing ton DC.*
2. Brown, E.Skougstad, M.W.and fish man, M.J. (1974).Method for collection and analysis of water sample for dissolved minerals and gases (Book No.5). Washington, DC: US Department of interior.
3. Ghosh, S. Chakra borty, S.Roy, B. Banerjee, P.Bagchi, A. (2010). Assessment of health Risks associated with fluoride contaminated ground water in Birbhum District of west Bengal,India.*Journal of Environmental protection science*,(4): 13-21.
4. Ibrahim, M.A simrasheed, M.Sumalatha, M. And Prabhakar, P. (2011). Effects of fluoride contents in ground water: A Review. *International Journal of pharmaceutical applications,* 2(2):128-134.
5. Qadir, A.Malik, R.N.Hussain, S.Z.(2008). Spatiotemporal variations in water quality of Nullah *Environmental monitoring and assessment* (140): 43-59.
6. Ripa, L.Clark, C. (2001).water fluoridation in: Primary preventive dentistry, *Editorial El manual modern*, Mexico 127-160.
7. Saxena, S.and Saxena, U. (2013). Study of fluoride contamination status of groundwater in Bassi tehsil of district Jaipur Rajasthan, India. International *Journal of Environmental science* and 3(6): 2256-2260.
8. Tyagi, A. Singh, V. (2014). Environment science New Edition, *Published by Danika Publishing Company*,P.9.Tailor,G.S.Chandel Singh,CP.(2010).To assess the quality of ground water in Malpura tehsil (Tonk Rajasthan,india) with emphasis to fluoride concentration *nature and science*,8(11): 20-26.
9. Umarani, P.And Ramu.(2014).fluoride contamination status of ground water in East coastal area in Tamilnadu, India. *International Journal of innovative Research in science Engineering and technology*.3 (3):10045-10051.
10. Vandana, K.L.and Reddy, S.M. (2007).Assessment of periodontal .status in dental Fluorosis subjects using community periodontal index of treatment needs. *Indian Journal of dental Research,(*8):67-71.
11. Yadav, J.P. Lata, S. Katarina, S.K. Kumar, S. (2009). Fluoride distribution in ground water and survey of dental Fluorosis among School children in the villages of the Jhajjar district of Haryana India. *Environment geochemical health*, (31): 431-438.

Table3. Comparison of D O (dissolved oxygen) at different depth on Northern and southern Hand Pump and Bore well.

Depth in feet	Pansemal		Junapani		Gongwada		Piprani	
	H.P	B.W	H.P	B.W	H.P	B.W	H.P	B.W
70-80	5.4	5.6	5.4	5.3	5.2	5.3	5.2	5.4
80-90	5.6	6.6	4.4	5.7	5.6	6.6	6.1	6.6
90-100	5.8	5.4	5.6	5.8	4.8	5.6	5.4	4.8

Table 4. Comparison of B O D (Biological oxygen Demand) at different depth on Northern and southern Hand Pump and Bore well.

Depth in feet	Pansemal		Junapani		Gongwada		Piprani	
	H.P	B.W	H.P	B.W	H.P	B.W	H.P	B.W
70-80	0.2	0.3	0.3	0.4	0.6	0.4	0.2	0.4
80-90	0.6	0.2	0.2	0.4	0.1	0.6	0.2	0.5
90-100	0.4	0.1	0.3	0.2	0.4	0.2	0.1	0.6

Table 5. Comparison of C O D (Chemical oxygen Demand) at different depth on Northern and southern Hand Pump and Bore well.

Depth in feet	Pansemal		Junapani		Gongwada		Piprani	
	H.P	B.W	H.P	B.W	H.P	B.W	H.P	B.W
70-80	4.0	4.0	4.0	6.0	8.0	6.0	4.0	6.0
80-90	5.0	4.0	6.0	5.0	7.0	4.0	5.0	6.0
90-100	6.0	5.0	7.0	4.0	6.0	5.0	4.0	5.0

Table 6. Comparison of Total solid at different depth on Northern and southern Hand Pump and Bore well.

Depth in feet	Pansemal		Junapani		Gongwada		Piprani	
	H.P	B.W	H.P	B.W	H.P	B.W	H.P	B.W
70-80	300	356	368	442	546	632	670	478
80-90	340	450	348	452	560	432	375	573
90-100	298	385	476	460	548	562	480	580

****

Fungicidal activity of polyurethane polymer was performed on hard woods

Kunjan Singh Songara * Anamika Jain ** Dipak Sharma ***

Abstract - Surface modification is an effective way to improve the durability of hard wood (Anjun-Hardwickia binata). Polyurethanes are produced by reacting an isocyanate containing two or more isocyanate groups per molecule with a polyol containing on average two or more hydroxyl groups per molecule in the presence of a catalyst. Fungicidal activity of polyurethane was performed by well diffusion method in which test organism was inoculated with two techniques, Spread plate technique and Pour plate technique. Fungicidal activity of polyurethane was performed using *Penicillium sp.* as test organisms. The effect of polyurethane was performed by maintaining seasonal condition in winter season. It has been observed that polyurethane exhibited different effects in seasonal conditions.
Key words - Fungicidal activity, Polyurethane Polymer, Seasonal conditions, hard wood, catalyst.

Introduction - Biocides are commonly used in medicine , agriculture, forestry, and industry. Biocidal substances and products are also employed as anti-fouling agents or disinfectants under other circumstances: chlorine, for example, is used as a short-life biocide in industrial water treatment but as a disinfectant in swimming pools. Many biocides are synthetic, but there are naturally occurring biocides classified as natural biocides, derived fraom, e.g., bacteria and plants[1].An innovation is the use of copper and its alloys (brasses, bronzes, cupronickel, copper-nickel-zinc, and others) as biocidal surfaces to destroy a wide range of microorganisms (*E. coli* O157:H7), methicillin-resistant *Staphylococcus aurous* (MRSA), *Staphylococcus* ,*Clostridiumdifficile*, influenza A virus, adenovirus, and fungi[2]. Antibacterial efficacy of silver and its salts has been known for a long time[3,4]. In recent years, there has been extensive research on the use of nanometric silver particles as antibacterial agents[5].The simple *in situ* technique which we have developed earlier[6]. For the fabrication of silver nanoparticle-embedded poly(vinyl alcohol) (Ag-PVA) thin film involves an environmentally benign fabrication protocol and provides free-standing films.

Experiments on *Escherichia coli* establish that Ag-PVA film can be used efficiently and repeatedly, allowing monitoring of the film by spectroscopy and microscopy between uses. The minimum inhibitory and minimum bactericidal concentrations (MIC and MBC) in terms of the weight of silver nanoparticles in the. PVA film used to treat unit volume of the *E.coli.* Bacterial medium are found to be 4.5 and 6.5 ìg/ml respectively. These values are appreciably lower than most of the values reported earlier[7, 8]. PURs are also widely modified with natural polymers to impart properties required in biomedical applications, such as biocompatibility and biodegradability[9].Surface modification is an effective way to improve the blood compatibility. Yuan J. et al. (2003) synthesized a novel non thrombogenic biomaterial by modifying the surface of cellulose with polyurethane in a three-step procedure. The platelet adhesion test showed that PUR-Cell membranes-grafted betaines have excellent blood compatibility[10].

Another example of cellulose chemical modification with polyurethanes is adding hydroxypropylcellulose (HPC) to the poly(ester urethane)s or poly(ether urethane) S. Macocinschi D. et al. obtained in this way materials with better hemocompatibility, biocompatibility and amphiphilic micro phase-separated domain structures[11].

Polyurethanes are in the class of compounds called reaction polymers, which include epoxies, unsaturated polyesters, and phenolics[12,13]. Polyurethanes are typically synthesized using a diisocyanate, a diol, and a polymer chain extender[14]. Polyurethanes are produced by reacting an isocyanate containing two or more isocyanate groups per molecule (R-$(N=C=O)_{n\ e>2}$) with a polyol containing on average two or more hydroxyl groups per molecule (R'- $(OH)_{n\ e>2}$) in the presence of a catalyst or by activation with ultraviolet light[15].

Interest in sustainable "green" products raised some interest in polyols derived from vegetable oils[16]. Many polyols are derived from renewable raw materials like vegetable oils. These oils include soybean, cotton seed, neem, pongamia glabara, castor, etc. Renewable source used to prepare polyols may be dimer fatty acid[17]. or fatty acid.

Some biobased and isocyanate-free polyurethanes

*Deptt. of Chemistry, Maharaja Bhoj Govt. P.G College, Dhar (M.P.) INDIA
** Deptt. of Chemistry, Govt. Holker Science P.G. College, Indore (M.P.) INDIA
*** Deptt. of Chemistry, Maharaja Ranjit Singh College, Indore (M.P.) INDIA

exploit the reaction between polyamines and cyclic carbonates to produce polyhydroxurethanes[18]. Unlike traditional cross-linked polyurethanes, cross-linked polyhydroxyurethanes have been shown to be capable of recycling and reprocessing through dynamic transcar- bamoylation reactions[19].

Method : Determination of Fungicidal Activity using -well Diffusion Method - Fungicidal activity of polyurethane was performed by well diffusion method in which test organism was inoculated with two techniques

1. Spread plate technique
2. Pour plate technique

1-Spread Plate Method for Fungicidal Activity of Polyurethane - Spread plate method was used to check fungicidal activity of polyurethane. The experiment was performed by preparing Potato Dextrose Agar medium, pH 5.6. Prepared medium was poured in the sterile Petri- plates. The medium was allowed to solidify for 30 minutes. These plates were used for analyzing fungicidal activity.

In this study, 0.1 ml test fungal isolate was inoculated on the medium and spread evenly by sterile swab under aseptic conditions. Fungal isolate. *Penicillium sp*. was used as test organisms and fresh plates were used for each test organism. Sterile well borer having size 0.08 mm were used for well preparation and 4 wells were prepared in plate. All experiments were performed in triplicate.

Sample Preparation: Following samples were prepared for this study.

1. Pure Acetone as control
2. 50 % Polyurethane prepared in acetone
3. 75 % Polyurethane prepared in acetone
4. 100 % Polyurethane

Each of test samples was inoculated in different well. Every potato dextrose agar plate was containing all test samples. Plates were initially incubated at 4^0C temperature for 30 minutes in refrigerator and then transferred to bacteriological incubator at 30 °C for 48 to 72 hours [20].

Preparation of Potato Dextrose agar Medium

Preparation of Petri plates and inoculation of test organism by spread plate technique

Preparation of 4 well using sterile well borer

Dispensing of test sample in each well

Well Diffusion Method - Well diffusion method was also performed to check effect of polyurethane on fungi**.** *Penicillium sp.* were taken as test fungal organisms in this study. In this assay, 4 samples were taken containing polyurethane prepared in acetone with varying concentration. Test organisms *A Penicillium sp.* were inoculated in the medium using spread plate and pour plate technique. Results show that Pour plate technique found to be more effective for fungicidal activity of polyurethane. Polyurethane exhibited their effectiveness against. The pure polyurethane was found to be more effective than the other preparations. The maximum zone of inhibition 9 mm observed with pure polyurethane against *Penicillium sp.* after 48 hours incubation in pour plate technique. Other preparations of polyurethane including 50 % and 75 % gave comparatively less zone of inhibition in test organisms. Lowest zone of inhibition 1 mm was observed with control where no polyurethane was added. In pour plate technique it has also been found that pure polyurethane more efficiently exhibit anti fungal activity than 50 % and 75 % preparations.

Result and Discussion - In four sets, set-1 was control which was not coated with anything. Set-2 consisted of wooden strips coated with primer and paint. Control set did not show any change in the presence of fungus throughout the experiment i.e. in 144 hours. The coating of paint and primer also did not show any effect on the presence and growth of fungus in set-2 in the duration of the experiment.

It has been observed that in set-3 and set-4 the growth of fungus was reduced due to complete inhibition of *Aspergillus sp.* observed in 96 hours in set-3 and 72 hours in set 4, where as *Penicillum sp.* could be inhibited in 120 hours in set-3 and 144 hours in set 4. It shows that polyurethane inhibits growth of *Aspergillus sp.* more efficiently than *Penicillium sp.*

The experimental results show that polyurethane works well in the winter seasons and fungicidal activities observed after 48 hours of incubation of wood strips in case of *Aspergillus sp.* .Polyurethane took comparatively longer time more than 120 hours to inhibit growth of *Penicillium sp.* Both set-3 and set-4 were containing polyurethane exhibited fungicidal activity in same time of duration. It also been observed that paint and primer also inhibited the *Penicillium sp*. growth after 144 hours in winter seasons.

Penicillium sp.

Fungicidal activity of polyurethane on *Penicillium sp.* was performed under winter conditions. It has been observed that wood strips coated with primer, paint and polyurethane controlled *Penicillium sp.* growth at 120 hours at 15ºC and no *Penicillium sp.* growth was observed. It has been found that set-1 and set-2 unable to control the *Penicillium sp.* growth on the medium. It is also observed that wood strip coated with polyurethane gave similar results to the set-3 (Table.1)

Table. 1: Result showing effect of polyurethane on *Penicillium sp.* under winter season.

Time (Hours)	Set-1	Set-2	Set-3	Set-4
0	Growth	Growth	Growth	Growth
24	Growth	Growth	Growth	Growth
48	Growth	Growth	Growth	Growth

72	Growth	Growth	Growth	Growth
96	Growth	Growth	Growth	Growth
120	Growth	Growth	No Growth	No Growth
144	Growth	No growth	No Growth	No Growth

Set-1: Control

Set-2: Wood strips coated with primer and paint

Set-3: Wood strips coated with primer, paint and polyurethane

Set-4: Wood strips coated with polyurethane only

Conclusion - Well diffusion method supports our previous wood strip method in case of fungus also. Fungicidal activity was observed in winter seasons for *Penicillium sp.*

Fungicidal activity of polyurethane on. *Penicillium sp* was performed under rainy conditions. It has been observed that wood strips coated with primer, paint and polyurethane controlled. *Penicillium sp.* growth at 96 hours at 25ºC and no *Penicillium sp.* growth was observed at 144 hours. It is also observed that wood strip coated with polyurethane gave similar results against *Penicillium sp.*

Acknowledgements - Authors would like to thank Dr. Sheetal Bhasin for infrastructure support for Lab. facilities in Maharaja Ranjit singh College Indore ,(MP).

References :-

1. *D'Aquino M., Teves SA., "Lemon juice as a natural biocide for disinfecting drinking water", Bull Pan Am Health Organ.,* PMID 7858646***(December1994***)
2. *A.Samuel,* Chilean subway protected with Antimicrobial Copper*, rail.co*, retrieved **(20 December 2012**)
3. Friedenthal, H., Absolute and relative disinfection power of elements and chemical compounds. *Biochem. Z*, **94**, 47–68**.(1919)**
4. Feng, Q. L., Wu, J., Chen, G. Q., Cui, F. Z., Kim, T. N. and Kim, J. O., A mechanistic study of the antibacterial effect of silver ions on *Escherichia coli* and *Staphylococcus aureus*. *J. Biomed. Mater.Res*., **52**, 662–668**.(2000)**
5. Nowack, B., Krug, H. F. and Height, M., 120 Years of nanosilver history: implications for policy makers. *Environ. Sci. Technol.*, **45**, 1177–1183**(2011)**
6. Porel, S., Singh, S., Harsha, S. S., Rao, D. N. and Radhakrishnan, T. P., Nanoparticle-embedded polymer: *in situ* synthesis, freestanding films with highly monodisperse silver nanoparticles and optical limiting. *Chem. Mater*.,**17**, 9–12**.(2005)**
7. Li, W. R., Xie, X. B., Shi, Q. S., Zeng, H. Y., Ou-Yang, Y. S. and Chen, Y. B., Antibacterial activity a005nd mechanism of silver nanoparticles on *Escherichia coli*. *Appl. Microbiol. Biotechnol*., **85**, 1115–1122**.(2010)**
8. Dankovich, T. A. and Gray, D. G., Bactericidal paper impregnated with silver nanoparticles for point-of-use water treatment. *Environ.Sci. Technol*.,**45**, 1992–1998**.(2011)**
9. Kuciñska-Lipka J., Gubañska I., Janik H.: *Polimery*, 58, 678, http://dx.doi.org/10.14314/polimery.678 **(2013)**
10 Yuan J., Zhang J., Zang X.P., Shen J., Lin S.C.: *Colloids Surf. B-Biointerfaces*,30 (1—2), 147, http://dx.doi.org/10.1088/1748-6041/4/4/044106 **(2003)**
11. Macocinschi D., Filip D., Vlad S.: *e-Polymers*, 062, ISSN 1618-7229,http://dx.doi.org/10.1007/s 10856-010-4006-8**(3008)**
12. *Ulrich, Henri. Chemistry and Technology of Isocyanates. New York: John Wiley & Sons, Inc.* ISBN 0-471-96371-2.*(**1996**)*
13. *Woods, George. The ICI Polyurethanes Book. New York: John Wiley & Sons, Inc.*ISBN 0-471-92658-2.***(1990)***
14. Bastioli, ed.: Catia. Handbook of biodegradable polymers (1. publ. ed.). Shawbury: Rapra Technology Ltd. ISBN 1-85957-389-4.**(2005)**
15. *Soto, Marc; Sebastián, Rosa María; Marquet, Jordi* . "Photochemical Activation of Extremely Weak Nucleophiles: Highly Fluorinated Urethanes and Polyurethanes from Polyfluoro Alcohols"*. J. Org. Chem.* ***79****: 5019–5027.* doi*:*10.1021/jo5005789*.**(2014)***
16. *Niemeyer, Timothy; Patel, Munjal; Geiger, Eric. A Further Examination of Soy-Based Polyols in Polyurethane Systems. Salt Lake City, UT: Alliance for the Polyurethane Industry Technical Conference****. (September2006***)
17. Biobased Dimer Fatty Acid Containing Two Pack Polyurethane for Wood Finished Coatings, S. D. Rajput, P. P. Mahulikar, V. V. Gite, Progress in Organic Coatings,77 (1), 38–46**(2014)**
18. *Nohra, Bassam; Laure Candy; Jean-Francois Blanco; Celine Guerin; Yann Raoul; Zephirin Mouloungui. "From Petrochemical Polyurethanes to Biobased Polyhydroxyurethanes". Macromolecules.* doi*:*10.1021/ma400197c***.(2013)***
19. *Fortman, David J., Jacob P. Brutman, Christopher J. Cramer; Marc A. Hillmyer; William R. Dichtel . "Mechanically Activated, Catalyst-Free Polyhydroxyurethane Vitrimers".Journal of the American Chemical Society.* doi*:*10.1021/jacs.5b08084*.**(2015)***
20. Kunjan.S.S, Anamika.J. 'Fungicidal activity of P U on wood Under Rainy Season" An International Referred Research Journal Naveen Shodh Sansar April to June. Volume II Issue XIV **(2016**)

****

Geochemical Factors Associated With The Observed Lack Of Response To The Application Of Micronutrients In Soil Of The Madhya Pradesh

Dr. Salil Kumar Udaipure*

Introduction - The studies regarding the micronutrient status of soil of Madhya Pradesh State and the response of different crops to soil and foliar application of micronutrients have been in progress for the past several years, At none of the centeres where the experiments are in progress, significant increase in yields have been obtained as a result of soil or foliar application of micronutrients, As a mater of fact, the result have been inconsistent and erratic. These observations lead to the possible conclusion that the soils of the Madhya Pradesh State can supply adequate quantites of micronutrients to produce healthy crops.

The adequate supply of micronutrients in soil of MADHYA PRADESH State can be partly accounted for on the basis off geological factors associated with soil development in the MADHYA PRADESH State. The present note embodies a short account of the geochemical facrtors which are responsible for the possibel adequate supply of micronutrients in MADHYA PRADESH soils.

The soils of MADHYA PRADESH state can be broadly divided into the following four categories viz(i) medium black calcareous soil of basaltic orgin, (ii) lateritic soils derived as a result of laterisation of basalts (iii) red soil of mixed parent material and (iv) coastal alluvium of basltic orgin for the greater part, the soil of the MADHYA PRADESH State are derived either from trap (i.e Augite basalt or pigeonite) or from mixed parent material consisting mostly of Granities and Gneisses and in rare cases from sandstones, From the geochemical point of view, Augite-Basalt and granites and Gneisses from a very importent parent material .Depending upon the climate conditions and topographical situation obtaining in diferent parts of the state the above parent rocks give rise to different kinds of soil. If the soils can supply adequate quantities of trace elements, it only means that the parent material from which they are derived are rich in minaeral containing trace elements.The important primary, secondary and accessory mineral which are usually found in Basalts, Granites and Genisses are given below.

Basalts	(i) Primary and accessory minerals	Orthoclase, Plagioclase felspar, Augite, Magnettie, Albite, Apatite & olivine.
	(ii) secondary minerals	Calcite, Quartz, Chalcedony, Zeolities, Stiites, Glaucomite, Apophyllite, Agate, Carnelian, Blood stone, Jasper Ilmenite, Hornblend and Opal
Granites & Gneisses	(i) Primary minerals	Orthoclase, Plagioclase, Microline, Quartz, Augite, Muscovite, Biotite, Hornblende.
	(ii) Secondary minerals	Chlorite, Tourmaline, Epidote, Apatite, Garnet, Actionlite, Corundum, Ilmentite, Rutile, Zircon, Graphite and Talc.

Of the various minerals listed above, some are rich either in Mn or Zn, while others are rich in Cu or Mo or both. The trace-elements present in different minerals as reported by other workers are shown in last :

It is thus clear that rocks like Basalts, Granites, and Gneisses from which the soils of MP State are mainly derived are rich in minerals which contain relatively high proportions of trace-elements like Mn, Cu, Mo and Zn. Thus from geo-chemical point of view. the soils derived from basalts and granites or gneisses may be expected to be adequately supplied with trace elements. The figures reported by Bendale et al (1951), Duart et al (1961), Zende and pharnde)1958, 1961 and 1964), Daji (1948), Badhe and Zende (1962), Kavimandan et al (1964) and Ranadive et al (1964) confirm the relatively high status of the soils of the MP State in respected of the imported micronutrients. The ranges of Micoronutrients. The ranges of micronutrient contents observed by these workers compare well with the levels reported by workers from other States of the Indian Union or those by foreign workers. {Waine(1955), Raychaudhari and Datta Biswas (1964).]

The soil reaction. texture, and level of organic matter

* H.O.D. (Chemistry) Govt. N.M.V., Hoshangabad (M.P.) INDIA

are the three main factors which influence the availability of trace elements in soils. In spite of some variations in each of the above three factrors, the reporied levels of trace elements in the available from are fairly high. Besides, the range between the optium and defieiency levels in respect of the micronutrients is so narrow (i.e.from a fraction of a microgram to 2 microgram per grma of soil) that it is difficult even to detect indipients deficiencies. If is therefore no wonder that all the trials on mieronutrients conducted on different agro-climatic regions have failed to show any signifieant effiects of crop yields. Localised patches specially in lighter soils lacking in chemical or biological activity may show some response on some occasions when the climatic conditions become unfavourable and the changes which the micronutrients usually undergo do not follow their normal course. The trace element contents of a soil are dependent almost entirely on the process of geochemical as well as pedochemical weathering (Mukerjee, 1957).

Further, as pointed out by Gold, Schmidt(1945), the micro-element contents of differenet minerals differ, and even in the same mineral, the amount of any particular element present would depend upon its fractional erystallisation from the magma. The two soils of Delhi (Dakshinamurti ei al 1955) wich showed higher status of total Mn also showed a higher percentage composition of heavy minerals like Honblende, Tourmaline, Ziron, Magnetire, Garnet, Sillimanite, etc. The trap rock is very rich in ferromagnesian and Zeolitie minerals, and as such, there is no doubt that the soil derived from trap would supply all the trace elements in suffiecient proportion to meet the crop needs.

A large area of the Madhya Pradesh state is covered by soils of basaltic origin. All these rocks are made up of minerals which contain fair amounts of Mn. Cu. Mo and Zn. in view of the possible contibution of the parent materials to the supply of micronutrients to the majority of soils of the MADHYA PRADESH state, the approach of conducting field trials with micronutrients on adhoc basis may not yield fruitul results.

In the first instance it would be necessary to establish the Limits of sufficiency, deficiency and toxicity of the micronutrients in respect of our crops under rigidly controlled conditions. The next step sould be to find out from the result of analysis of soils if the latter would supply adequate amounts of the micronutirents to the crop. finally, experiment may then be undertaken only on those soils which are found to be deficient in the particular micronutrient of micronutrients.

References :-

1. Bathe, N.N. & Zende, G.K. (1962) incian Jour. Agron, 6. No. 4, 304-310.
2. Bear, F.E.(1962) Chemistry of the soil.
3. Bendale, et al. (1951) pooaa Agril, Coll. Mag. 42: 1-7.
4. Daji, J.A. (1948) Curr. Sei. 17:259
5. Dakshinamurti, et al (1955) proc. National Acad. Sei. India, Allahabad, 24 (5) 566-72.
6. Duart, et al (1961) J.Ind. Soc. Soil Sci. 9, 41-53
7. Gold Schimidt, V.M. (1945) Soil Sci. 60 (i)
8. Groves. A.W. (1937) Silicate analysis, Chapter 11, P. 172-200. Thomas Murby & Co., London.
9. Hatch, F.H. (1912) Minerology, Whittaker & Co. London.
10. Johnson Albert (1932) petrology of the Igneous rocks. Vol. III, Uaiv. of Chicago Press.
11. Kavimandan, et al (1964) Jour. Ind. Soc. Soil Sci. 12, 281-88
12. Krishnan, M.S. (1943) Geology of India and Barma. Madras Law Juournal office.
13. Mukerjee, B.K. (1957) Presidential address at the 3rd all India Conference of Sug. Reg. & Dev. Work.
14. Randive, S. J. et al (1964) Jour, Ind. Soc. Soil Science, 12, 243&248
15. Raychaudhari, S.P. and Datta Biswas, N.R. (1964) Jour. Ind. Soc. Soil Sci. 12, 207-14.
16. Swaine, D.J. (1955) Trace element contents of soils. Commonwealth Bureanu of Soil Sci. Tech. Communication No. 48.
12. Wadia D.No. (1953) Geology of Inda, Macmillan & Co. Lted., London.
18. Zende, G.K. and Khonde, J.S. (1958) Deccan Sugar Tech. Asso. 15th Convention, 128-37.
19. Zende, G.K. and Pharande, K.S. (1958) Decean sugar Tech. Asso., 15 th Covention. 158-60
20. Zende, G.K. and Pharande, K.S. (1961) J. Ind. Soc. Soil Sce. 9,89
21. Zende, G.K. and Pharande, K.S. (1964) Indian Sug. Jour. 9. Pari- I, 146-50.

Mineral	Micronutrients present	Contents
Oliveine	Mn, Zn, Cu, Mo, Co and Fe	Mo = 10 ppm. Co = 125 ppm. Cu = 20 ppm. Mn = 1700 ppm. Fe (as Fe_20_3) = 2 percent Mn (as Mno) = 2 percent
Hornblende	Mn, Zn, Cu, Co and Fe	Mo = 2 ppm. Cu = 35 ppm. MnO=2 percent CuO=1 percent
Augite	-do-	Mn = 2100 ppm.
Biotite	-do-	Mn = 2 percent
Anorthite	Cu and Mn	(figures not available)
Andesine	-do-	-do-
Oligoclase	Cu	-do-
Garnet	Mn	Mn = 10-20 percent
Orthoclase	Cu	(figures not available)
Magnetite	Zn	-do-
Eipiodote	Mn and Cu	Mn_20_3 = 15 percent
Ourmaline	B and Mn	(figures not available)

The minerological composition of the trap rock, according to Wadia (1953) and Krishna (1943) is as follows :

Quartz	4.00 percent	Hypersthene	18.00 percet
Orthoclase	4.5 “	Magnetite	4.00 “
Albite	22.00 “	Apatite	1.00 “
Anorthite	23.00 “	Hmenite	3.7 “
Diopside	17.00		

As reported by Johnson (1932), the Granites and Gneisses on the other hand contain the following minerals :

	Percent
Quartz	36.9
Orthoclase felspar	40.3
Plagioclase felspar	8.4
Muscovite	3.0
Biotite	2.5
Zircon	0.1
Garnet	4.5

****

Identifcation Of River Wateriy Quality Usingh The Fuzzy Synthetic Evaluation Approach

Dr. Akhilesh Tripathi * Dinesh Solanki ** Dharmendra Dwivedi ***

Abstract - Proper identification of water quality conditions in a river system Based on limited observations is an essential task for meeting the Goals of environmental management . Various Classification methods have been used for estimating the changing status and usability of surface water in rever basins However ,a discrepancy frequently arises form the lack of a clear distinction between each water utilization mode . the uncertainty in the quality criteria employed and the vagueness or fuzziness embedded in the decision-making output values . owing to inherent imprecision , difficulties always exist in some conventional methodological when describing integrated water quality conditions with respect to various chemical constituents , biological aspects,nutrients and aesthetic qualities .

This paper presents a comparative study using three fuzzy synthetic evaluation techniques to assess water quality conditions in comprarison to the outputs generated by conventional procedures such as the Water quality index (WQI) based&on a set of data collected at seven sampling stations a case study for the sone River in Diyapeper in and amlai shahdol district ware used to demonstrate there application potential the findings clearly indicate that the techniques may successfully harminise inherent discrepancies and interpret complex conditions a futher newly developed fuzzy synthetic evaluatinn approach described in dis paper might also be useful for verifying water quality conditions ofr the total maximum Daily load (TMDL) program and be helpful for constructing an effective water quality management strategy in surroundings .

Introduction - Water quality refers to the chemical , physical and biolaogical characteristics of water [1] Is is a measure of the condition of water relative to the requirements of one or more biotic speciies and or to any human need or purpose [2] It is most frequently used by reference to a set of standards against which compliance can be assessed . the most common standards used to assess water qulity reality relate to health of ecosystyams , safety of human contact and drinking water .

General perception of water qulity is that of a simple property that tells whether water is polluted or not In fact water qulity is a complex subject in part because water is a complex medium intririsically tied to the ecology of the ert.industrital and commercial activities (e.g manufacturing , mining construction , transport) are a major cause of water pollution as are run off from agricultural areas , urban runoff and discharge of treated and untreated sewage.

Industrial and domestic use - Dissolved minerals may affect suitabllity of water for a range of range of industrial and domestic purposes . The most familiar of these os probably the presence of oons of calcium and magnesium which interfere with the cleaning . the cleaning action of soap and can from hardsulfate and soft carbonate deposits in water heaters or boilers. [4] hard water may be softened to remove these ions . the softening process often substitutes sodium cations [5] Hard water may be preferable to soft water for defliciencies . softening decreases nutrition and may increase cleaning effectiveness [6]

Sampling and measurement - The complexity of water quality as a subject is reflected in the many types of measurements of water quality indicators. The most accurate measurements of water quality are made on-site, because water exists in equilibrium with its surroundings. Measurements commonly made on-site and in direct contact with the water source in question include temperature, pH, dissolved oxygen, conductivity, oxygen reduction potential (ORP), turbidity etc.

Sample collection - More complex measurements are often made in a laboratory requiring a water sample to be collected, preserved, transported, and analyzed at another location. The process of water sampling introduces two significant problems.

The first problem is the extent to which the sample may be representative of the water source of interest. Many water sources vary with time and with location. The measurement of interest may vary seasonally or from day to night or in response to some activity of man or natural populations of aquatic plants and animals. The measurement of interest

*Govt .P.G College, Shahdol (M.P.) INDIA
** Govt .P.G College, Shahdol (M.P.) INDIA
*** Govt .P.G College, Shahdol (M.P.) INDIA

may vary with distances from the water boundary with overlying atmosphere and underlying or confining soil. The sampler must determine if a single time and location meets the needs of the investigation, or if the water use of interest can be satisfactorily assessed by averaged values with time and/or location.

The sample collection procedure must assure correct weighting of individual sampling times and locations where averaging is appropriate.

The second problem occurs as the sample is removed from the water source and begins to establish chemical equilibrium with its new surroundings – the sample container. Sample containers must be made of materials with minimal reactivity with substances to be measured, and pre- cleaning of sample containers is important. The water sample may dissolve part of the sample container and any residue on that container, or chemicals dissolved in the water sample may sorb onto the sample container and remain there when the water is poured out for analysis. Similar physical and chemical interactions may take place with any pumps, piping, or intermediate devices used to transfer the water sample into the sample container. Water collected from depths below the surface will normally be held at the reduced pressure of the atmosphere, so gas dissolved in the water may escape into unfilled space at the reduced pressure of the atmosphere, so gas dissolved in the water may escape into unfilled space at the top of the container.

Atmospheric ags peresnt in that ari space may also dissolve into the water sampe. Other chemical reaction eqitlibria may change if the water if the sample changes temperature finely divided solid particles formerly suspended by water turbulence may settle to the bottom of the sample container , or a solid phase may from biological growth or chemical precipitation Microorganisms within the water sample may biochemically alter concentrations of oxygen ,carbon dioxide, and organic compounds. Changing carbon dioxide concentrations may alter pH and change solubility of chenicals of interest. These problems are of special concem during measurement of chemicals assumed to be significant at very low concentrations .{10}

water quality index - Water quality index to com the wathre resources with other resources and also to determine the health of a watershed in the different parts used meanwhile quality control for a specific time period to undersand the changes in water ecosystem are also used

water Management system :

Fuzzy Synthetic Evaluation Of Water Quality - Based on the fuzzy logic principle, The potential application of the FSE has been tested in a case study. Ten sampling locations of Sone River and its industrial area of Amlai and Diyapeper area were selected and seven water quality parameters of BOD,COD fluoride, ammonia total phosphorus (TP), total nitrogen (TN) and permanganate index. The water quality of Sone River in shahdol area showed the Class II and III according to the Indian classification standard. More importantly, this provides a good showcase of the modified FSE in river water quality evaluation.

Fuzzy logic- Fuzzy logic[12] is a form of many- valued logic,it deals with reasoning that is approximate rather than fixed and exact.Compared to traditional binary sets (where variables may take on true or false values) fuzzy logic variables may have a truth value that ranges in degree between 0 and l. Fuzzy logic has been extended to handle the concept of partial truth, where the truth value may range between completely true and completely false.

Conclusion - The results of this study show that fuzzy inference systems integrated to stochastic non- parametric techniques may be used as complementary tools in water quality indexing methodologies.

References :-

1. Diersingh,Nancy (2009)"water Quality."Florida Brooks National Marine sanctuary, Key west, FL
2. Johnson, D.L.S,H. Ambrose, T.J. Bessett, M.L.Bowen, D.E Crummey, J.S isaacson, D.N.johnson, P Lamb, M.saul, and A.E.winter- Nelson (1997) "Meanings of environmental terms." Joumal of Environmental Quality. 26:581-589
3. United States Environmental Protection Agency (EPA)Washington.DC."water Quality standards Review and revision"2006.
4. Babbitt, Harold E.& Doland, james J.Water supply Engineering (1949) McGraw-hill p.388
5. Linstey. Ray K.& Franzini, joseph B. water- Resources engineering (1972) Mc Graw- Hill ISBN 0-07-037959-9pp.454-456
6. worid Health organization (2004)" Rolling Revision of the WHO guidelines for Drinking-water Quality (draft)from November 11-13, 2003 meeting in rome, Italy at the WHO Euroean centre for Environment and Health.
7. Goldman, chartes R.&Home,Alexander J.Limnology (1983)Mcgraw-Hill chapter 6
8. "jump up to" Franson, mary ann (1975) standard methods for the Examination of water and wastewater 14th ed. Washington, DC.american Public Health Association, American water works association &water Pollution Control federation.
9. EPA (1973). Handbook for monitoning industrial wastewater. Chapter 8
10. goldman, chardes R.& home, Alexander J.Limnologhy (1983) Mcgraw-hill pp. 87-88
11. Evaluation approach ni-Bin chang" H.W.chen, S.K.Ning.
12. Fuzzy logic" Stanford encyclopedia of philosophy Stanford University. 2006-07-23.

****

Ethnobotanical Study Of Some Threatened Climber Plants Used By Tribals Of Dhar District, M. P.

Dr. Kamal Singh Alawa *

Abstract - An ethnobotanical survey was carried out during 2013-2015. The present study observes 28 plant species belonging to 13 families under 24 genera that are commonly used by tribal communities of Dhar district. These threatened climber plants used by tribal are also used for varies purposes e.g. Hut making, thatching, ropes, baskets, edible, drink, treating pets and cattle etc. The scientific, vernacular and family names of these plants.These threatened climber plants are *Abrus precatorius* L., *Aristolochia indica* L., *Argyreia nervosa* (Burm.f.) Bojer.,*Butea superba* Roxb.ex Willd., *Cardiospermumhalicacabum* L., *Cayratiatrifolia* (L.) Domin., *Celastruspaniculatus* Willd., *Ceropegiabulbosa* Roxb., *Cryptolepisbuchanani* R.Br. ex R. & S. Syst., *Dioscorea hispida*Demst., *Dioscorea oppositifolia* L., *Diplocyclos palmatus* (L.) Jeffrey. *Gloriosa superba* L., *Gymnemasylvestre* (Retz.) R.Br. &Schult., *Lagenaria leucantha* (Duch) Rusby.,*Luffaacutangula*(L.) Roxb.,*Marsdenia tenacissima* (Roxb.) Moon.*Momordica dioica* Roxb.ex Willd.,*Mucuna pruriens* (L.) DC., *Puerariatubrosa* (Roxb. ex Willd.) DC., *Tinosporacordifolia* (Willd.) Miers.,*Trichosanthes tricuspidata* Lour., *Wattakaka volubilis* (L.f.) Stapf.
Key words - Climber plants, Ethnobotanical, Threatened, Tribals, Madhya Pradesh.

Introduction - Dhar district is situated in the South-western part of Madhya Pradesh. The district lies between the latitude of 22º 1' 14" to 23º 9' 49" North and the longitude of 74º 28' 27" to 75º 42' 43" East. Dhar name is supposed based on "Sword Blade"ofVairisingh to have been derived from Dharanagari. The district is bounded by Ratlam to the North, Ujjain to the Northeast, Indore to the East, Khargone to the Southeast, Barwani to the South, Alirajpur to the Southwest and Jhabua to the West. The elevation varies from 256-1000 m above sea level. The total area of the district comprising 8153 sq. km. is divided in to seven tahsils*viz*. Dhar, Dharampuri, Sardarpur, Manawer, Badnawer, Gandhwani and Kukshi. Geographically area is divided into Malwa plateau, Vindhyan scarps and Narmada valley. The average annual rainfall is between 656.7 mm. and 1556.6mm. and average Maxi. Temperature varies from 26.5ºC to 40.1ºC and mini. temperature varies between 9.7ºC to 24.2ºC. Most of area is drained by Narmada, Chambal, Man, Mahi, Karam, Khuj, Bag, Hathani rivers. The area under study is inhabited by Bhils, one of the most important and third largest tribe of India. The Bhil has been derived from the Dravidian word bil or vil meaning a bow.

According to 2011 census, population of the district is 21, 84,672. The Scheduled Tribes constitute 54 percent. Most of the village inhabitants of belong to tribal communities. Major part of the district is covered by dense forest area in which various tribes, like *Bhil, Bhilala, Barela* and *Patelia* are living in majority out of these tribes.Plants are also used for varies other purposes e.g. Hut making, thatching, ropes, baskets, edible, drink, treating pets and cattle etc.

Methodology - The present paper is outcome of extensive field survey of different tribal villages of Dhar district during 2013- 2015 to collect information on medicinal uses of different plant species. Herbarium of the collected plants specimen was prepared following customary method (Jain and Rao, 1977). During field work, interviews were conducted with local knowledgeable villagers; local elders and experienced tribal peoples (Both men and women) were interviewed and cross -interviewed again and again. Local 'Vaidyas,' 'Badwa' and 'Ojhas'.The collected plant species are arranged alphabetically along with their botanical name and family, local names, method of preparation of drug and mode of administration are given below in (Table-1). The plant specimens were collected and identified with local flora available literature (Khanna *et al*. 2001). Herbarium preserved in Department of Botany, PMB Gujarati Science College, Indore, Madhya Pradesh.

Results And Discussion - The present study observes 28 plant species belonging to 13 families under 24 genera that are commonly used by tribal communities of the district. Uses, preparation and mode of application varied from region. Most of the plants are used in the form of decoction, while others are used as paste, powder, juice and latex. Further, Seeds (12), fruits (10), leaves (4), Tuber (3), roots (3), bark and stem bark of1 species are used for the varies purposes e.g. Hut making, thatching, ropes, baskets, edible, drink, treating pets and cattle. These plants are recommended for cultivation which may improve and uplift the economy of

* Department of Botany, Govt. P.G. College, Dhar (M.P.) INDIA

tribals of Dhar district.

Acknowledgement - The author is thankful to Dr. G.D. Gupta, Principal and Prof. S. Pathak, Head of Botany Department, Govt. P.G. College, Dhar for their help and support. We are also thankful to Divisional forest officer, Dhar for help during the ethnomedicinal survey in tribal villages and forest areas of the district.We are thankfully acknowledging the informants for giving the valuable suggestions, support and help.

References :–

1. **Dwivedi SN, 2003.**Ethnobotanical studies and conservation strategies of wild and natural recourses of Rewa district of Madhya Pradesh.*J. Econ. Taxon. Bot*., **27**(1): 233-244.
2. **Dwivedi SN, Dwivedi S & Patel PC, 2006.** Medicinal Plants used by the tribals and rural people of Satna district, Madhya Pradesh for the treatment of gastrointestinal disease and disorders", *Nat.Pro. Rad.*, **5**(1): 60-63.
3. **Jain AK andVairale MG,2007**. Some Threatened Angiospermic Taxa of Chambal Eco-region. Phytotaxonomy,07:107-110.
4. **Jain SK and Rao RR, 1977.***A Handbook of Field and Herbarium Methods*.Todays and Tomorrows Printers and Publishers, New Delhi, India.
5. **Khan AV and Khan AA, 2006.**"Ethnomedicinal uses of Achyranthes aspera (Amaranthaceae) in management of GynecologicalDisorders in Western Uttar Pradesh (India)".*The JournalofReproductive and Fertility,***43**(1): 127-129.
6. **Sandhya B, Thomas S, Isabel W and Shenbagarathai R, 2006.**Ethnomedicinal Plants used by the Valaiyan Community of Pairanmalai Hills (Reserved Forest), Tamilnadu, India- A Pilot Study". *African Journal of Traditional, Complementary and Alternative Medicines*, **3**(1):101-114.
7. **Satyavati GV, Gupta AK and Tandon N, 1987.**Medicinal Plants of India.*Indian Council of Medical Research,* New Delhi, India.
8. **Singh NP, Khanna KK, Mudgal V and Dixit RD, 2001**.*Flora of Madhya Pradesh*. Vol III. BSI, Calcutta, India.

Table1- Ethnomedicinal Threatened Climber Plantsused by tribals of Dhar district

S.	Botanical name	Family	Local name	Habit	Part use
1.	Abrus precatorius L.	Fabaceae	Ghumchi	Climber	Seeds
2.	*Argyreia nervosa* (Burm. f.) Bojer.	Convolvulaceae	Phang vela	Climber	Fruit & Seeds
3.	*Aristolochia bracteolata* Lam.	Aristolochiaceae	Kiramar	Climber	Fruits
4.	*Aristolochia indica* L.	Aristolochiaceae	Sapsan, Kalesar	Climber	Fruits
5.	*Butea superba* Roxb.	Fabaceae	Palas bel	Climber	Seeds
6.	*Cardiospermumhalicacabum* L.	Cucurbitaceae	Choti popati	Climber	Seeds
7.	*Cayratiatrifolia* (L.) Domin	Vitaceae	Char-bel	Climber	Seeds
8.	*Celastruspaniculatus* Willd.	Celastraceae	Malkangni	Climber	Seeds & bark
9.	*Cryptolepisbuchanani*Roem&Schult.	Periplocaceae	Dudhibel	Climber	Fruits
10.	*Ceropegiabulbosa*Roxb.,	Asclepiadaceae	Khatumbra	Climber	Fruits
11.	*Dioscorea hispida*Dennst.	Dioscoreaceae	Bhu-kamal	Climber	Tuber
12.	*Dioscorea oppositifolia* L.	Dioscoreaceae	Chhinula	Climber	Tuber
13.	*Diplocyclos palmatus* (L.) Jeffrey.	Cucurbitaceae	Shivlingi	Climber	Seeds
14.	*Gloriosa superba* L.	Liliaceae	Kalihari	Herbs	Roots
15.	*Gymnemasylvestre* (Retz.) R.Br. ex Schult.	Asclepiadaceae	Gudmar	Under herbs	Leaf
16.	*Marsdenia tenacissima* (Roxb.) Moon.	Asclepiadaceae	Chirri	Climber	Leaf & fruit
17.	*Hymenodictyonorixense* (Roxb.) Mabb.	Rubiaceae	Bhavarsal,Bhaulan	Climber	Roots&Stembark
18.	*Lagenaria leucantha* (Duch) Rusby.	Cucurbitaceae	Tumbra	Climber	Seed
19.	*Lagenaria siceraria* (Molina) Standl.	Cucurbitaceae	Kadvitumbdi	Climber	Seed & Fruits
20.	*Luffaacutangula* (L.) Rox b.	Cucurbitaceae	Kadviturai, Dodka	Climber	Seed
21.	*Momordica dioica* Roxb.ex Willd.	Cucurbitaceae	Kakoda, Katle	Climber	Fruits
22.	*Mucuna pruriens* (L.) DC.	Fabaceae	Kevach, Konch	Climber	Root & Seeds
23.	*Puerariatuberosa* (Roxb.ex willd.) DC.	Fabaceae	Pataltumbadi	Climber	Tuber
24.	*Quiriveliafructescens* (L.) M.R. & S.M. Alm.	Apocynaceae	Uttaranbel	Climber	Leaves
25.	*Tinosporacordifolia* (Willd.) Miers ex Hk.f.& Th.	Menispermaceae	Giloe	Climber	Stem
26.	*Trichosanthes cucumerina* L.	Cucurbitaceae	Gavlon, Gavli	Climber	Fruit & Seeds
27.	*Trichosanthes tricuspidata* Lour.	Cucurbitaceae	Gavlon, Gavli	Climber	Fruit & Seeds
28.	*Wattakaka volubilis* (L.f.) Stapf.	Asclepiadaceae	Kadwadodi	Climber	Leaves

Isolation and identification of microbes associated with mobile phones in holkar science college of Indore district

N. Khurana * **Chetna Mandloi** **

Abstract - A study was carried out between august and september, 2015, to enumerate, isolate and identify bacteria associated with mobile cell phones in a college environment. this was with a view to determining the bacterial load. samples were collected from mobile cell phones of staff, marketers and students in holkar science college using aseptic swab technique. a total of thirty-five (35) mobile phones were randomly sampled from the following study groups: 10 university staff, 12 marketers and 13 students. for each mobile phone, two sterile swabs moistened with normal saline were rotated over the surface of both sides of the mobile phone and soaked in 10 ml sterile water. Enumeration of the bacterial counts was carried out using pour-plate technique while the bacterial isolates were identified using cultural, morphological techniques. the results showed that marketers, students and university staff had the overall mean bacterial counts of 5.25 x 102 cfu/ml respectively. The isolated bacteria were found to be gram negative as well as positive.
Keywords - Bacteria, contamination, cell phones, gram negative.

Itroduction - The global system for mobile telecommunication (GSM) was established in 1982 in Europe with a view to providing and improving communications networks (Naubauer *et al*., 2005). Today, mobile phones have become one of the most indispensable accessories of professional and social life. Although they are usually stored in bags or pockets, mobile phones are handled frequently and held to the face (Yusha'u *et al*., 2008;2010). The constant handling of the mobile phones by users makes it a breeding place for transmission of microorganisms as well as hospital-associated infections (Glodblatt *et al*., 2007; Yusha'u *et al*., 2010).Growing evidences have indicated that contaminated fornites or surfaces play a key role in the spread of bacterial infections (Kawo and Rogo, 2008; Kawo *et al*.,2009; 2012; Enemuor *et al*., 2012a; b). The first study of bacterial contamination of mobile phones was conducted in a teaching hospital in Turkey with bed capacity of 200 and one intensive care unit (Karabay *et al*., 2007). Another study on mobile phones in New York has shown that the examined phones were found to harbor pathogenic microorganisms (Goldblatt *et al*.,2007). In Nigeria, the usage of cell phones has increased to more than forty million with more than eight service providers (Nwadike, 2007). Cell phones have been identified as one of the carriers of bacterial pathogens (Mbata, 2003; Austin. *et al*., 2006; Akinyemi *et al.,* 2009; Yusha'u *et al*., 2010). The present study was aimed at investigating the bacterial contamination of mobile phones of students, marketers and staff in HOLKAR SCIENCE COLLEGE campus, INDORE M.P.

Materials And Methods - The study was conducted in HOLKAR SCIENCE campus, INDORE M.P between AUGUST AND SEPTEMBER, 2015.A total of thirty five (35) mobile phones were randomly sampled from the following study groups: 10 University staff, 12 marketers and 13 students. A sterile cotton swab stick was soaked in sterile water to moisten it. The target phone was swabbed over its surface after which the swab stick was put quickly into its container and sealed. The cotton end was aseptically cut off and soaked in 10 ml of STERILE water labeled with the specimen number

This served as the stock culture. Same technique was employed for each of the samples. bacterial count was determined using serial dilution technique (Chesebrough, 2000).From the stock culture in 1.0 ml of the sample was aseptically pipette into a sterile test tube containing 9.0 ml of STERILE water. The contents were mixed thoroughly. A quantity (1.0 ml) of the dilution from each of the test tubes (10-1 -–10-3) was aseptilly pipetted and transferred into correspondingly-labeled Petri dishes. This was followed by pouring of prepared, cooled but molten nutrient agar medium onto the plates. The contents were gently swirled and allowed to solidify at room temperature. Finally, the plates were aerobically incubated at 37±0.50C for 24 hours. The colonies developed after the incubation period were counted and the mean count obtained was recorded and expressed in colony forming unit per milliliter (cfu/ml) of the sample analyzed. Grams staining were used to determine morphological characteristics.

* Deptt. Of Biotechnology, Holkar Science College,Indore (M.P.) INDIA
** Student, Deptt. Of Biotechnology, Holkar Science College,Indore (M.P.) INDIA

Data

S.	Marketers	Students	Staff
1	5.25 x 10^2 cfu/ml	4.48 x 10^2 cfu/ml	2.50 x 10^2 cfu/ml

Mean Count of aerobic mesosphelic bacteria on mobile phones of marketers, students and staff.

Results - Students and university staff had the overall mean aerobic, mesophilic bacterial counts of 3.49x 10^2, cfu/ml respectively. The isolated bacteria were found to be gram negative as well as positive.

Discussion - The results of the present study (Table 1) showed that marketers had the highest contamination of bacterial Agents followed by the University staff while students had the lowest contamination. The overall mean aerobic, mesophilic bacterial counts of 5.25 x 10^2, 4.48 x 10^2 and 2.50 x 10^2cfu/ml were also recovered from the marketers, students and college staff respectively. The high prevalence of bacteria isolated from mobile phones of the marketers might be as a result of multiple usages and/or long-time exposure to environment especially those handling raw vegetables and meat (Akinyemi *et al.,* 2009; Famurewa and David, 2009). The frequency of use and exposure of mobile phones to environmental surfaces including the hands and skins of users could have also determined the degree of contamination of these phones (Mohammed *et al*., 2006). Similarly, poor handling, among other factors, might account for the high level of the bacterial load in the phones of the marketers compared to the students and University staff. In addition, improved personal hygiene generally observed among the students and university staff could be the reason for this observation.

Conclusion - The study show that the mobile phones examined were loaded with large numbers of bacterial including potential disease-causing ones. The results therefore highlight the health implications of using other people's phones as they could be loaded with microorganisms capable of causing various diseases and infections. Thus, cell phones could serve as vehicles of diseases.

Recommendations :

1. Since restriction or even prohibition of the use of handsets such devices may prove impractical in a public setting, strategies for preventing disease transmission are needed, especially given the risk of continuing contamination through hand–to–cell phone contact. Such strategies should target behavior controls of handsets users. In addition, the following should be considered. Frequent hand cleansing, especially with instant hand sanitizers is the most significant step to help prevent faeco-oral and droplet transmissions.
2. The cell phones should be handled in a manner that does not get contaminated with dirt and/or disease-causing agents. The cell phones should be regularly cleaned with relevant disinfectants. Covering the mouth or nose when coughing or sneezing decreases droplet spread and makes hand cleansing even more important.

References :-

1. Personal research.

****

Addressing tribal women's health through Integrated Child Development Services (ICDS) scheme

Pushpa Devi * Dr. Lalita Vatta **

Abstract - Integrated Child Development Services (ICDS) is the only major national programme that addresses the needs of children under the age of six years. It seeks to provide young children with an integrated package of services such as supplementary nutrition, health care and pre-school education. Because the health and nutrition needs of a child cannot be addressed in isolation from those of his or her mother, the programme also extends to adolescent girls, pregnant women and nursing mothers. The Department of Women and Child Development through its nationwide programme of ICDS continued to provide the much needed nutritional and health inputs/services for the benefit of tribal children, adolescent girls and expectant and nursing mothers living in the remote tribal areas with relaxed norms. Of the total 4,608 ICDS projects in action by the end of the Ninth Plan, 758 (13.4 per cent) were Tribal Projects through which a package of 6 services viz. health check-ups; immunization, supplementary feeding; referral services; non-formal pre-school education and health and nutrition education were being extended to 4.77 million children and 0.96 million mothers. In 2014, out of 7075 sanctioned ICDS projects, 7067 projects were operationalised. The concept of Mini-Anganwadis introduced in the tribal areas was only to ensure that ICDS services reach the tribal women and children even in the remotest tribal areas.
Key Words - Integrated, Child Development, Tribal, Immunization, Supplementary.

Introduction - Integrated Child Development Services (ICDS) Scheme was launched on 2 October, 1975 – the 106th birth anniversary of Mahatma Gandhi–the Father of the Nation. ICDS is the most unique programme for early childhood care and development encompassing integrated services for development of children below six years, expectant and nursing mothers and adolescent girls living in the most backward, rural, urban and tribal areas. The National Nutrition Policy, 1993 recognizes the problem of malnutrition and under nutrition prevalent amongst tribal women and children and strongly advocates the need for controlling the same. In pursuance of the commitments of the Policy, the Department of Women and Child Development through its nationwide programme of Integrated Child Development Services (ICDS) continued to provide the much needed nutritional and health inputs/services for the benefit of tribal children, adolescent girls and expectant and nursing mothers living in the remote tribal areas with relaxed norms. While services to children are expected to yield results in the short run by contributing to reduction in child mortality and morbidity, those provided to pregnant women are aimed at reducing the Maternal Mortality Rate (MMR) in the short run. The inclusion of lactating mothers is intended to address the high rate of Infant Mortality Rate (IMR), while the programmes for adolescent girls address malnutrition with a long term perspective. The Administrative Unit for the location of an ICDS Project is a Community Development Block in the rural areas, a Tribal Development Block in the tribal areas and a group of slums in urban areas. In the selection of the location of a Project, consideration is given to the areas inhabited predominantly by Scheduled Castes or Tribes especially Backward Tribes or nutritionally dependence areas or areas poor in reach of social services.

Methodology - The research depended on secondary source. It was effectively based upon electronic mail, web based survey, journals, books etc. Data from secondary source were collected, analyzed and presented in table.

Dimentions Of Tribal Health In India

Key Health Indicators - National Family Health Survey (NFHS)-III asked all women age 15-49 to provide a complete history of their births including for each live birth, the sex, month and year of birth, survival status, and age at the time of the survey or age at death. Age at death was recorded in days for children dying in the first month of life, in months for other children dying before their second birthday, and in years for children dying at later ages.

According to NFHS- III 2005-06, the under- five mortality rate for tribes is highest 95.7.

*Research Scholar (Home Science) Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA
** Assistant Professor (Home Science) Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA

Key Health Indicators, India
(Figures in percentage)

Sr.	Indicators Schedule	Tribe	Total
1.	Infant mortality	62.1	57
2.	Neo- natal Mortality	39.9	39
3.	Post- natal Mortality	22.3	18
4.	Child Mortality	35.8	18.4
5.	Under-five Mortality	95.7	74.3
6.	Childhood vaccination (Full Immunization)	31.3	43.5
7.	Prevalence of any anemia (<12.0g/dl) in Women	68.5	55.3
8.	Prevalence of any anemia (<11.0g/dl) in Children	76.8	69.5

Source: NFHS-III

NFHS-III also measured anemia in women, using the same equipment and procedures used to measure anemia among children. 68.5 percent of ST women and 55.3 percent total women are anemic. 76.8 percent of children belonging to Tribes are anemic.

Mother Mortality Ratio (MMR) - MMR measures number of women aged 15-49 years dying due to maternal causes per 1,00,000 live births in 2004-2006 was 254 of India and 388 of Rajasthan and in 2007-2009 was 212 of India and 318 of Rajasthan.

MMR of India and Rajasthan 2004-2006 and 2007-2009

Sr.	MMR	2007-2009	2010-2012
1.	India	212	178
2.	Rajasthan	318	255

Source: Maternal Mortality in India: 2007-2009 and 2010-2012 office of Registrar General, India

49.9 percent of scheduled-tribe children received services at an Anganwadi centre and 33.1 percent of Tribal children received any immunization through an Anganwadi centre in the past 12 months.

Nutritional status of tribal women (age 15-49)
(Figures in percentage)

Sr.		Mean Body Mass Index in kg/m2		
		<18.5 (total thin)	17.0-18.4 (mildly thin)	<17.0 (moderat -ely/severely thin)
1.	Tribes	46.6	25.3	21.2
2.	Total	35.6	19.7	15.8

Source: NFHS-3, M/o H&FW, GOI

NFHS-III collected information on two indicators of nutritional status – height and body mass index (BMI) - for women age 15-49. This excludes women who were pregnant at the time of the survey and women who gave birth during the two months preceding the survey. Chronic energy deficiency is usually indicated by a BMI of less than 18.5 and among Tribal woman, 46.6 percent have a BMI below 18.5, indicating a high prevalence of nutritional deficiency.

Objectives Of ICDS - The basic purpose of the ICDS scheme is to meet the health, nutritional and educational needs of the poor and vulnerable infants, pre-school-aged children and women in their child-bearing years. Its specific objectives are:

1. To improve the nutritional and health status of children in the age-group 0-6 years;
2. To lay the foundation for proper psychological, physical and social development of the child;
3. To reduce the incidence of mortality, morbidity, malnutrition and school dropout;
4. To achieve effective co-ordination of policy and implementation amongst the various departments to promote child development; and
5. To enhance the capability of the mother to look after the normal health and nutritional needs of the child through proper nutrition and health education.

Service Provided By ICDS - The scheme seeks to meet these objectives by delivering an appropriate combination of the following six basic services to children below six years of age, pregnant women, nursing mother and adolescent girls. 6 services are:

1. Supplementary Nutrition and Growth Monitoring - Supplementary Nutrition and Growth Monitoring are the two important, high cost input activities of the ICDS programme. Supplementary nutrition is given for 300 days a year. Severely malnourished children are given extra supplementary nutrition. Revised norms of energy and protein are:

Sr.	Age Group	Energy (kcal/day)	Protein (gm/day)
1.	Children (6-72 months)	500	12-15
2.	Severely malnourished child	600	20-25
3.	Pregnant and Nursing mother	800	18-20

Evaluation report of planning commission showed that of the registered children, 64% received food on an average of 16 days per month.

2. Immunization - Immunization of pregnant women and infants protects children from six vaccine preventable diseases-poliomyelitis, diphtheria, pertussis, tetanus, tuberculosis and measles. These are major preventable causes of child mortality, disability, morbidity and related malnutrition.

3. Health Check-ups - This includes health care of children less than six years of age, antenatal care of expectant mothers and postnatal care of nursing mothers. The various health services provided for children by anganwadi workers and Primary Health Centre (PHC) staff includes regular health check-ups, recording of weight, immunization, management of malnutrition, treatment of diarrhea, de-worming and distribution of simple medicines etc.

4. Referral Services - During health check-ups and growth monitoring, sick or malnourished children, in need of prompt medical attention, are referred to the Primary Health Centre or its sub-centre. The anganwadi worker has also been oriented to detect disabilities in young children. She enlists all such cases in a special register and refers them to the medical officer of the Primary Health Centre/ Sub-centre.

5. Non-formal Pre-School Education (PSE) - The Non-formal Pre-school Education (PSE) component of the ICDS may well be considered the backbone of the ICDS

programme, since all its services essentially converge at the Anganwadi – a village courtyard. Anganwadi Centre (AWC) – a village courtyard – is the main platform for delivering of these services. As a result, total number of AWC would go up to almost 1.4 million. This is also the most joyful play-way daily activity, visibly sustained for three hours a day. **Its programme for the three-to six years old children in the Anganwadi is directed towards providing and ensuring a natural, joyful and stimulating environment, with emphasis on necessary inputs for optimal growth and development.** It also contributes to the universalization of primary education, by providing to the child the necessary preparation for primary schooling and offering substitute care to younger siblings, thus freeing the older ones – especially girls – to attend school.

6. Nutrition and Health Education - Nutrition, Health and Education (NHED) is a key element of the work of the Anganwadi worker. This forms part of BCC (Behavior Change Communication) strategy. This has the long term goal of capacity-building of women – especially in the age group of 15-45 years – so that they can look after their own health, nutrition and development needs as well as that of their children and families.

Number Of Beneficiaries - A tribal Project (a tribal development block) is assumed to have population of 35,000 of which 17 per cent i.e. 5,950 are less than 6 years (3 per cent i.e. 1,050 are less than 1 year, 6 per cent i.e. 2,100 are 1-2 years and 8 per cent i.e. 2,800 are 3-5 years); the number of women 15-45 years is estimated at 7,000; of this the number of nursing and expectant mothers at any point of time is estimated at 1,400. The number of villages in a tribal project is assumed to be 50.

Conclusion - Antenatal registration, TT immunization, use of safe delivery kits, home visits by health functionaries, birth weight recording are some key MCH services. The antenatal registration is an important indicator to show improvement in the quality and coverage for maternal and child health (MCH) Services. Anemia is common not only in the tribal areas but also in the rural counterparts. In a study on primitive tribal's 70.0 – 90.0 % prevalence of anemia was reported among these tribal groups of different states (Hanumatha Rao et al., 1989). About 29.0 % of children were either non immunized or partially immunized.

In recent year ICDS has been evaluated by many agencies which have resulted in numerous changes to achieve the objectives. The ICDS has a huge potential as a platform to provide comprehensive maternal and child services. Coverage of supplementary nutrition needs to be increased with maintenance of continuous supply. Moreover quality of food is to be seriously addressed. Immunization activities under ICDS have appreciable credibility. However, Non-formal pre-school education, nutrition and health education are not fully functioning in the way they were planned to be. Above all a better reporting system which is transparent and accountable needs to be put in place.

References :-

1. Evaluation Report on ICDS. Programme Evaluation Organization Planning Commission; Govt. of India. March 2011.
2. Gupta, A.; Gupta, SK. and Baridalyne, N. (2013), Integrated Child Development Services (ICDS) Scheme: A Journey of 37 years; Indian Journal of Community Health, Vol.25, No-1, pp 77-81.
3. Hanumatha Rao, D., G. N. V. Brahmam, Ch. Gal Reddy, K. Mallikharjuna Rao andN. Pralhad Rao. 1989 .Health and nutritional status of Konda Reddis of East Godavari District, Andhra Pradesh. *Technical Report*. Hyderabad: National Institute of Nutrition, ICMR.
4. National Family Health Survey (NFHS) -3- 2005-06, M/o Health & Family Welfare.
5. National Family Health Survey (NFHS) -3- 2005-06, M/o Health & Family Welfare; Infant and Child Mortality.
6. Scheme of Integrated Child Development Services; Department of women and child development, Ministry of Human Resource Development, Govt. of India
7. Statistical Profile of Schedule Tribes in India 2010; Ministry of Tribal affairs, Statistical Division, Govt. of India. (www.tribal.nic.in)
8. 10th five year plan, Chapter 4.2 Schedule Tribes pp-447.
9. www.tribal.nic.in/.../201306110208002203443 Demographicstatusofschedule (Demographic Status of Scheduled Tribal Population of India)

Utilization of ICDS by children

(Figures in percentages)

Sr.		Children (0-71 Months) getting facilities from Anganwadi Centre (AWC)		Frequency of going to an AWC for early childhood care / preschool education	
		Receiving any service from an AWC	Receiving any Immunizations from an AWC	Regularly	Occasionally
1.	Tribes	49.9	33.1	16.0	14.4
2.	Total	32.9	20.0	14.0	8.8

Source: NFHS-III, M/o H&FW, GOI

****

विभिन्न माध्यमिक शिक्षा मण्डलों के किशोर बालक एवं बालिकाओं के इंटरनेट की लत का उनके सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव का अध्ययन

डॉ. आभा तिवारी * निरंजना धोटे **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में विभिन्न माध्यमिक शिक्षा मण्डलों के किशोर बालक एवं बालिकाओं के इंटरनेट की लत का उनके सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव का अध्ययन किया गया है। अध्ययन हेतु न्यादर्श में केन्द्रीय एवं राज्य माध्यमिक शिक्षा मण्डलों के 150-150 किशोर बालक-बालिकाओं को लिया गया। शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित इंटरनेट की लत मापनी से छांटे गये अधिक एवं कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं पर डॉ. अशोक शर्मा द्वारा निर्मित सामाजिक व्यवहार मापनी का प्रशासन कर निष्कर्ष प्राप्त किये गये। निष्कर्षों से ज्ञात होता है कि विभिन्न माध्यमिक शिक्षा मण्डलों के बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर इंटरनेट की लत का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

शब्द कुंजी– किशोरावस्था, इंटरनेट की लत, सामाजिक व्यवहार।

प्रस्तावना – मनुष्य को एक सामाजिक प्राणी कहा गया है। मनुष्य का जन्म समाज के मध्य होता है एवं वह इसी समाज में अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत कर एक दिन चिर निद्रा में लीन हो जाता है। सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास के दृष्टिकोण से किशोरावस्था अत्यंत महत्वपूर्ण अवस्था होती है। किशोरावस्था की एक विशेष प्रवृत्ति यह होती है कि किशोर अन्य व्यक्तियों की अभिवृत्तियों और मत को बहुत अधिक महत्व देने लगते हैं। इस अवस्था में समवय साथी किशोरावस्था में बहुत महत्वपूर्ण हो जाते हैं. जिससे उनके सामाजिक विकास को एक नई दिशा प्राप्त होती है। सामाजिक व्यवहार सामाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा अर्जित किये जाते हैं, जिसका अर्थ है, सामाजिक परम्पराओं और नैतिक मूल्यों का अन्तर्ग्रहण करना और दूसरों के लिए धनात्मक सामाजिक अभिवृत्ति विकसित करना। जिस वातावरण में बालक का पालन-पोषण होता है ,उसके फलस्वरूप वे सामाजिक अभिवृत्तियां रीति-रिवाज सामाजिक व्यवहार के मानक और अपने समुदाय की परम्परायें सीखते हैं। जैसे ही बालक किशोरावस्था में प्रवेश करता है, उसका सामाजिक वातावरण विस्तृत होता जाता है और बाहरी दुनियां से सामाजिक सम्पर्क तेजी से बढ़ते हैं, जिनके द्वारा उसे नये अनुभव प्राप्त होते हैं। किशोरावस्था में, भविष्य में सफलता, इस समय सामाजिक व्यवहार के उचित विकास और समायोजन पर निर्भर करती है।

इंटरनेट की लत एक ऐसी मनोदशा है, जो कि कम्प्यूटर का अत्यधिक उपयोग करने से होती है। इंटरनेट का उपयोग किशोरों में एक बढ़ती हुई समस्या है। दैनिक जीवन में अधिक से अधिक लोग इंटरनेट का उपयोग अपनी आवश्यकता के लिये करते हैं, परंतु किशोरों में इंटरनेट का उपयोग जरूरत से ज्यादा बढ़ता जा रहा है।

इंटरनेट सोशल नेटवर्किंग साइटों का महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया है तथा किशोरावस्था में इंटरनेट की लत एक सामाजिक समस्या के रूप में सामने आयी है। इंटरनेट के अधिक उपयोग के कारण किशोरों में इंटरनेट का उपयोग नशे की तरह हो गया है, जिसके कारण उनके सामाजिक व्यवहार व उनके व्यक्तित्व पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। इंटरनेट की लत के कारण किशोरों की स्कूल उपलब्धि में कमी देखने को मिलती है। इंटरनेट आधुनिक युग की देन है। समाज में सूचनाओं को संप्रेषित करने और ज्ञान प्रसारण में इंटरनेट ने अहम् भूमिका निभाई है। इसके माध्यम से एक ओर जहाँ लोगों के बीच की दूरियां कम हुई हैं, वहीं दूरियां भी बढ़ी हैं। यह बात सच है कि इंटरनेट के उपयोग से किशोरों का सामाजिक व्यवहार प्रभावित होता है, जिसका कारण है, इंटरनेट की लत का होना। इंटरनेट की लत से मानसिक बीमारियों के फलस्वरूप असामाजिक व्यवहारों का जन्म हो रहा है। इंटरनेट की लत वाले किशोरों में सामाजिक और मानसिक रूप से विचलित होने जैसी समस्याऐं होने लगती हैं।

ऐलेना (2011) ने किशोरों द्वारा इंटरनेट के उपयोग का मानसिक एवं सामाजिक क्षमता पर प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन से जो निष्कर्ष प्राप्त हुए उनसे ज्ञात होता है कि इंटरनेट के अधिक उपयोग का किशोरों के मानसिक एवं सामाजिक व्यवहार के साथ प्रतिकूल प्रभाव जुड़ा हुआ पाया गया। चेगं-फेगं को एवं अन्य (2009) ने किशोरों में इंटरनेट की लत, आक्रामक व्यवहार एवं ऑनलाइन गतिविधियों के मध्य संबंध का अध्ययन किया। अध्ययन से जो निष्कर्ष निकले उनसे ज्ञात होता है कि इंटरनेट की लत से जहाँ एक ओर किशोरों में आक्रामक व्यवहार आता है, वहीं दूसरी और उनका सामाजिक व्यवहार भी प्रभावित होता है। कहा जा सकता है कि इंटरनेट की लत का किशोर बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर कुछ न कुछ प्रभाव पड़ रहा है। अत: यह सच है कि इंटरनेट से कई तरह के फायदे होते हैं और इनसे हमें कई तरह की सुविधायें भी आसानी से मिल जाती हैं, पर वहीं समाधान के लिए समय रहते सही प्रयास करने की आवश्यकता है। यह जरूरी है कि इंटरनेट का उपयोग इसके सीमित दायरे में रहकर किया जाए तथा इसकी लत से बचा जाए और अपने जीवन को इसके दुष्परिणामों से बचाया जा सके।

उद्देश्य –

1. केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव का

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (मानव विकास) शासकीय मो. ह. गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी), जबलपुर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

अध्ययन।

2. राज्य माध्यमिक शिक्षा मण्डल के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पनाएँ -

1. केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार में सार्थक अंतर नहीं होता है।
2. राज्य माध्यमिक शिक्षा मण्डल के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।

न्यादर्श- शोध कार्य हेतु निम्नानुसार न्यादर्श लिया गया है-

न्यादर्श तालिका क्रमांक-01

	बालक	बालिका	योग
केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल	150	150	300
राज्य माध्यमिक शिक्षा मण्डलों	150	150	300
योग	**300**	**300**	**600**

उपरोक्त प्रारंभिक न्यादर्श में किशोरों पर इंटरनेट उपयोग मापनी का प्रशासन किया गया। फलांकन के उपरान्त इंटरनेट के अधिक एवं कम उपयोग करने वाले किशोरों को निम्नानुसार लिया गया। बालक एवं बालिकाओं की संख्या निम्नांकित तालिका के रूप में प्रदर्शित की गयी है-

अंतिम न्यादर्श तालिका क्रमांक-2

इंटरनेट का उपयोग		बालक	बालिका	योग
अधिक	केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल	39	50	89
	राज्य माध्यमिक शिक्षा मण्डल	39	32	71
कम	केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल	44	38	82
	राज्य माध्यमिक शिक्षा मण्डल	36	42	78
	योग	158	162	320

उपकरण-

(1) विद्यार्थी सामाजिक व्यवहार परीक्षण - डॉ. अशोक शर्मा

(2) इंटरनेट का उपयोग मापनी स्वनिर्मित

विधि - केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल एवं राज्य माध्यमिक शिक्षा मण्डलों के न्यादर्श में चयनित छात्र एवं छात्राओं पर इंटरनेट की लत मापनी का प्रशासन कर फलांकन किया गया एवं इंटरनेट की अधिक एवं कम लत वाले छात्र-छात्राओं को अलग-अलग कर उन पर सामाजिक व्यवहार मापनी का प्रशासन किया गया, फलांकन के उपरान्त सांख्यिकीय विश्लेषण कर निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

परिणामों का विश्लेषण- इंटरनेट की लत का किशोर बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव हेतु न्यादर्श से प्राप्त परिणामों का विश्लेषण निम्नानुसार है-

तालिका क्रमांक -3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक -3 में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले किशोर बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर इंटरनेट की लत संबंधी परिणामों से स्पष्ट होता हैं कि इंटरनेट की लत का सामाजिक व्यवहार पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है क्योंकि प्राप्त क्रांतिक अनुपात का मान 0.05 स्तर के न्यूनतम सारणी मान की अपेक्षा कम है। अत: पूर्व में ली गई परिकल्पना सत्यापित होती है।

ग्राफ क्रमांक 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक -4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक -4 में राज्य माध्यमिक शिक्षा मण्डल के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर इंटरनेट की लत संबंधी परिणामों से स्पष्ट होता है कि इंटरनेट की लत का सामाजिक व्यवहार पर सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है क्योंकि प्राप्त क्रांतिक अनुपात का मान 0.05 स्तर के न्यूनतम सारणी मान की अपेक्षा कम है। अत: पूर्व में ली गई परिकल्पना सत्यापित होती है।

ग्राफ क्रमांक 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

आधुनिक समय में पूरी दुनिया में इंटरनेट एक बहुत ही शक्तिशाली और दिलचस्प माध्यम बनता जा रहा है। यह एक नेटवर्कों का नेटवर्क हैं, जो कई प्रकार की सेवाओं तथा संसाधनों का समूह है। जो हमें कई प्रकार से लाभ पहुँचाता है जैसे-सर्फिंग, सर्च इंजन, सोशल मीडिया, शिक्षाप्रद वेबसाइट, रोजमर्रा की सूचनाओं से अवगत रहना आदि। किशोरों के लिये इसकी उपलब्धता जितनी लाभप्रद है, उतनी ही नुकसानदायक भी है। विद्यालयों में भी प्राथमिक स्तर से कम्प्यूटर का उपयोग करना सिखाया जाता है, जिससे कि आगे चलकर विधार्थी इसका उपयोग बिना किसी कठिनाई के कर सकें। संभवत: यही कारण है कि प्रस्तुत शोध कार्य में इंटरनेट की लत का किशोर बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर सार्थक प्रभाव नहीं आया है, चाहे वे विधार्थी केन्द्रीय एवं राज्य माध्यमिक शिक्षा मण्डलों के विद्यालयों में अध्ययन कर रहे हों। इस संबंध में एस. आर. सीसिलिंग (2012) का शोध महत्वपूर्ण है, जिसमें इंटरनेट की लत एवं लिंग के मध्य कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। हमारी संस्कृति में परिवार का अत्यंत महत्व है। परिवार के बड़े व्यक्तियों का सभी कोई आदर एवं सम्मान करते हैं। वे बड़ों के अनुभव का लाभ उठाकर इंटरनेट का केवल उतना उपयोग करते है, जो उनके शैक्षिक जीवन के लिए आवश्यक है। वे सामाजिक जीवन में उसका उपयोग नहीं करते। संभवत: इंटरनेट की लत का सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव न आने का यह भी एक कारण है।

विद्यालयों में वर्तमान में कम्प्यूटर के उपयोग के साथ-साथ विद्यार्थी सोशल नेटवर्किंग साइट्स में भी कुछ समय व्यतीत करने लगे हैं जो उनकी विद्यालयीन उपलब्धि के दृष्टिकोण से हानिकारक हो सकती है। अत: किशोर बालक एवं बालिकाओं के अभिभावकों को इस ओर ध्यान देना चाहिए कि उनके पाल्य उनके सानिध्य में ही इंटरनेट का प्रयोग करें, जिससे कि किशोर इंटरनेट के दुष्प्रभाव से बच सकें।

निष्कर्ष-

1. केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार में सार्थक अंतर नहीं है।
2. राज्य माध्यमिक शिक्षा मण्डलों के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार में सार्थक अंतर नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डेविड, अलका, यकिशोरावस्था एवं पारिवारिक जीवन, पृ. सं. 01-02।
2. गुप्ता, रामबाबू (2000), यविकासात्मक मनोविज्ञान, रतन प्रकाशन मंदिर, प्रोफेसर्स कॉलोनी, दिल्ली गेट, आगरा, अष्टम संस्करण, पृ. सं. 469-470।

3. सुलैमान, मोहम्मद एवं दिनेश कुमार मनोविज्ञान और सामाजिक समस्याएँ पृ.सं. 273
4. सिंह, अरूण कुमार, (2006) समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, छठा संशोधित संस्करण,पृ.सं. 68
5. www.wikipedia.com
6. www.fudmed.com

तालिका क्रमांक -3

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार में अंतर संबंधी तुलनात्मक परिणाम

लिंग	इंटरनेट की लत	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
बालक	अधिक	39	148.67	17.79	0.76	0.05
	कम	44	145.36	23.10		
बालिका	अधिक	50	152.34	14.79	1.67	0.05
	कम	38	145.53	21.59		
बालक एवं बालिका	अधिक	89	150.73	16.18	1.76	0.05
	कम	82	145.44	22.23		

स्वतंत्रता के अंश - 81,86 — 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान -1.99; 0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान- 2.63

स्वतंत्रता के अंश - 169 — 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान -1.98; 0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान- 2.61

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार में अंतर संबंधी तुलनात्मक परिणाम

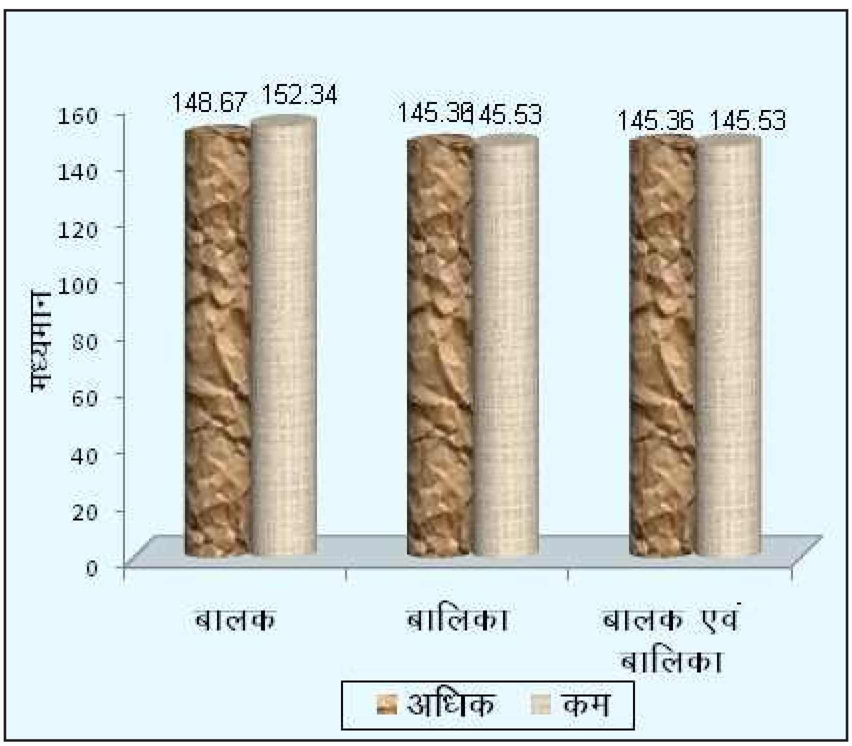

तालिका क्रमांक –4

राज्य माध्यमिक शिक्षा मण्डल के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार में अंतर संबंधी तुलनात्मक परिणाम

लिंग	इंटरनेट की लत	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
बालक	अधिक	39	140.36	26.10	0.20	0.05
	कम	36	141.72	31.94		
बालिका	अधिक	32	145.50	21.26	1.36	0.05
	कम	42	151.24	13.76		
बालक एवं बालिका	अधिक	71	142.62	24.00	1.07	0.05
	कम	78	146.55	24.23		

स्वतंत्रता के अंश – 73,72 — 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान –1.99
0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान– 2.63,

स्वतंत्रता के अंश – 147 — 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान –1.98
0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान– 2.61

राज्य माध्यमिक शिक्षा मण्डल के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार में अंतर संबंधी तुलनात्मक परिणाम

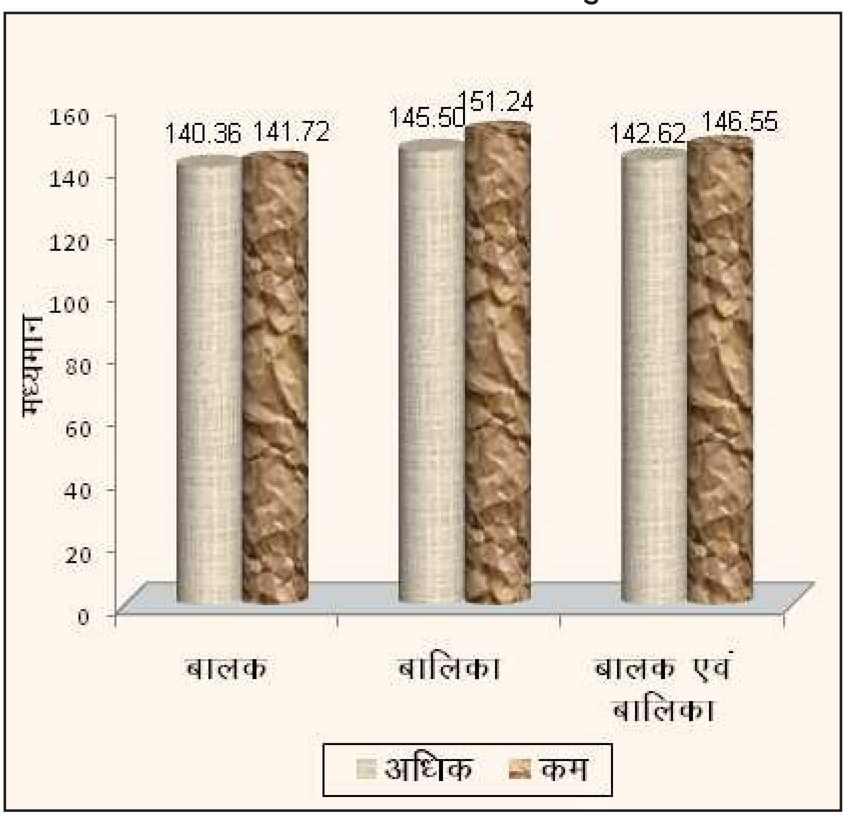

****

कामकाजी एवं गैरकामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन का अध्ययन

डॉ. आभा तिवारी * सपना श्रीवास्तव **

शोध सारांश – विवाह के पश्चात् महिलाओं को जीवन में सामंजस्य बैठाने के लिए अनेक समायोजन करने होते हैं। कामकाजी होने पर परिवार तथा व्यवसाय दोनों के साथ समायोजन करना पड़ता है। इससे महिलाओं का वैवाहिक जीवन प्रभावित होता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में कामकाजी एवं गैरकामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन का अध्ययन किया गया है। कामकाजी एवं गैरकामकाजी महिलाओं का चयन कर वैवाहिक समायोजन मापनी का प्रयोग कर निष्कर्ष प्राप्त किए गए। परिणामों द्वारा ज्ञात हुआ कि कामकाजी एवं गैरकामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन में सार्थक अंतर नहीं पाया गया है। अत: निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि कामकाजी तथा गैरकामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन में अंतर नहीं होता है।

प्रस्तावना – आधुनिक युग में पारिवारिक परिवेश बदल रहा है। जब से स्त्री ने अपनी स्वतंत्रता को मायने दिए हैं और अपनी पहचान के प्रति जागरूक हुई है, तभी से उसके अंदर कुछ बनने की महत्वकांक्षा पनपने लगी है। प्राचीन काल में महिलाओं का कार्यक्षेत्र उनका घर ही रहा है। वे घर के अंदर रहकर ही कार्य करती थी। घर से बाहर का कार्यक्षेत्र पुरूषों का माना जाता था, किन्तु आधुनिक समय में इसका विभाजन पहले जैसा नहीं रहा है। अब कार्यो के प्रति स्त्री-पुरूष का समान उत्तरदायित्व हो गया है। वर्तमान युग उन्नति प्रतिस्पर्धा और सफलता का युग है। महिलाऐं भी घर से बाहर निकलकर कामकाज के क्षेत्र में पहुँच कर सफलता प्राप्त कर रहीं हैं। महिलाऐं शिक्षा, चिकित्सा, बैंक, राजनीति, अभियांत्रिकी, वकालत आदि सभी क्षेत्रों में पदार्पण कर चुकी हैं और निरंतर सफलता की ओर अग्रसर हो रही हैं। आज की महिला जितनी अधिक पढ़ी-लिखी है, उतनी ही अधिक सभ्य, सुसंस्कृत और शालीन है।

इन सब परिस्थिति के होते हुए भी कामकाजी एवं गैरकामकाजी महिलाओं को वैवाहिक समायोजन करने पड़ते हैं। विवाह के पश्चात् स्त्री-पुरूष अपना नया जीवन प्रारंभ करते हैं चूँकि भारत में विवाह को एक धार्मिक संस्कार माना जाता है तथा यह मान्यता भी है कि विवाह जन्म जन्मांतर का बंधन होता है। अत: विवाह के पश्चात् जीवन को खुशहाल एवं सरल बनाने हेतु महिलाओं को अनेक समायोजन करने होते हैं। वैवाहिक जीवन में जीवन साथी एवं परिवार के साथ समायोजन सबसे महत्वपूर्ण चुनौती होती है। महिलाओं को कार्यरत् अवस्था में परिवार तथा व्यवसाय दोनों के साथ समायोजन करना होता है। व्यावहारिक दृष्टि से दोनों के मध्य तारतम्य बना पाना कठिन है। जिससे महिलाओं का वैवाहिक जीवन प्रभावित होता है। शोध समस्या से संबंधित कुछ पूर्व शोध अध्ययन निम्नानुसार है-

ब्रांचमेड एवं नेफास (2013) ने अपने अध्ययन में पाया कि कामकाजी महिलाओं में ज्यादा घनिष्टता, समायोजन, वैवाहिक संतुलन और अच्छी जीवनशैली पाई जाती है। जबकि गैरकामकाजी महिलाओं में मनोवैज्ञानिक आक्रामकता शारीरिक आक्रामकता प्रहार में अंतर पाया गया और तनाव भी ज्यादा देखा गया है कामकाजी महिलाऐं गैर कामकाजी महिलाओं की तुलना में अच्छी जीवन शैली व्यतीत करती हैं। अध्ययनों द्वारा पाया गया कि दोनों समूहों में अधिकतर गैर कामकाजी महिलाओं का उनके जीवन साथी के साथ समायोजन अच्छा नहीं पाया गया जबकि कामकाजी महिलाओं का उनके जीवन साथी के साथ समायोजन अधिक अच्छा पाया गया जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि कामकाजी महिलाऐं गैरकामकाजी महिलाओं की अपेक्षा जीवन को अधिक आनंदपूर्वक व्यतीत करती हैं।

जी, सोनल एवं बी परमार (2014) ने कामकाजी महिलाओं तथा गैरकामकाजी महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य तथा वैवाहिक समायोजन का निर्धारण करने के लिए अध्ययन किया एवं अपने निष्कर्ष में पाया कि कामकाजी महिलाओं तथा गैर कामकाजी महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य तथा वैवाहिक समायोजन के बीच सार्थक अंतर पाया जाता है।

नारी परिवार की धुरी है, जिसके समक्ष समस्त पारिवारिक गतिविधियाँ संतुलित, सुनियोजित व सफलतापूर्वक संपन्न होती हैं। फलत: गृहस्थी रूपी रथ चलता रहता है। पति-पत्नि इसके दो पहिये हैं। जिनके मध्य संतुलन अति आवश्यक है। दाम्पत्य जीवन के प्रवाह में परिवर्तन तब दृष्टिगोचर होते हैं जब गृहिणी एवं कामकाजी महिलाओं के स्वास्थ्य, सामर्थ्य एवं क्षमताओं में परिवर्तन आते हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में कामकाजी एवं गैरकामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन में अंतर का अध्ययन किया गया है। पारिवारिक जीवन के लिए अच्छा वैवाहिक समायोजन अत्यंत आवश्यक है क्योंकि महिला चाहे कामकाजी हो अथवा गैरकामकाजी हो, भारतीय परम्परा के अनुसार घरेलू जीवन का उत्तरदायित्व महिलाओं का ही माना जाता है।

उद्देश्य –

1. कामकाजी तथा गैरकामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन में अंतर का तुलनात्मक अध्ययन।

परिकल्पना-

1. कामकाजी तथा गैरकामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।

चर –

स्वतंत्र चर – कामकाजी महिलाएँ एवं गैरकामकाजी महिलाएँ

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (मानव विकास) शासकीय मो. ह. गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी) जबलपुर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, शासकीय मो. ह. गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी) जबलपुर (म.प्र.) भारत

परतंत्र चर – वैवाहिक समायोजन

न्यादर्श – कामकाजी तथा गैरकामकाजी 30–30 महिलाओं का चयन (जिनकी शिक्षा का स्तर कम से कम स्नातक तक हो) यादृच्छिक न्यादर्श विधि से किया गया।

न्यादर्श तालिका–1

महिलाओं की प्रकृति	समूह	संख्या	योग
कामकाजी	शिक्षिका	30	30
गैरकामकाजी	गृहिणी	30	30
योग		**60**	**60**

उपकरण – वैवाहिक समायोजन मापनी – (1999) डॉ. प्रमोद कुमार एवं डॉ. के. रस्तोगी।

मनोविज्ञान संकाय– सरदार वल्लभ भाई पटेल– विश्वविद्यालय विद्या नगर गुजरात

विधि – अध्ययन के उद्देश्य से न्यादर्श तालिका अनुसार न्यादर्श में चयनित 60 कामकाजी एवं गैरकामकाजी महिलाओं पर वैवाहिक समायोजन मापनी का प्रशासन किया गया एवं फलांकन कुंजी (मेनुअल) के आधार पर फलांकन कर आंकड़े प्राप्त किऐ गऐ। इनका सारणीय विश्लेषण निम्नानुसार है–

तालिका क्रमांक –2 (देखे)

परिणामों से स्पष्ट होता है कि उच्च समायोजन की कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं में मात्रात्मक सार्थक अंतर नहीं है क्योंकि प्राप्त काई वर्ग का मान 0.26 आया है। जो सांख्यकीय दृष्टिकोण से सार्थक नहीं है। इसी प्रकार औसत समायोजन में भी कामकाजी एवं गैरकामकाजी महिलाओं में मात्रात्मक रूप से सार्थक अंतर नहीं है। काई वर्ग का मान 0.54 भी सांख्यकीय दृष्टिकोण से सार्थक नहीं है।

अत: उपरोक्त परिणामों से स्पष्ट होता है कि कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन के वर्गीकरण के अनुसार तुलनात्मक रूप से समायोजन की श्रेणी में सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका क्रमांक –3 (देखे अगले पृष्ठ पर)

ग्राफ क्रमांक 01 (देखे अगले पृष्ठ पर)

परिणामों का विश्लेषण– परिणामों का विश्लेषण निम्नानुसार किया गया है–

तालिका से स्पष्ट होता है कि कामकाजी महिलाओं में वैवाहिक समायोजन के अध्ययन करने हेतु लिऐ गऐ मध्यमान का मान 19.30 तथा गैरकामकाजी महिलाओं में वैवाहिक समायोजन के अध्ययन करने हेतु लिए गए मध्यमान का मान 18.30 है। इन दोनों के मध्य का अंतर 1.00 है। यह अंतर सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक नहीं है क्योंकि सार्थकता ज्ञात करने के लिए निकाले गए क्रांतिक अनुपात का मान 0.13 है जो 0.05 स्तर पर निर्धारित न्यूनतम मान 2.00 की अपेक्षा बहुत कम है।

सामान्य रूप से महिलाएँ परिवार का केन्द्र होती है। एवं वे पूरे परिवार के समन्वय में अहम भूमिका का निर्वाह करती है। यदि समायोजन अच्छा नहीं होगा, परिवार के सदस्यों के साथ संबंध अच्छे नहीं होगें तो इसके फलस्वरूप पारिवारिक वातावरण असामान्य हो जायेगा। अत: महिलाओं की सहनशीलता एवं धैर्य के गुण के कारण समायोजन भी अच्छे से अच्छा रखने का प्रयास रखती है।

अत: उपरोक्त सांख्यिकीय गणना के परिणामों के आधार पर कामकाजी तथा गैरकामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन में सार्थक अंतर नहीं पाया गया है। उपरोक्त परिणाम के परिप्रेक्ष्य में पूर्व में दी गई परिकल्पना स्वीकृत होती है।

निष्कर्ष – कामकाजी तथा गैरकामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन में सार्थक अंतर नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गैरेट, हेनरी ई. (1989) यशिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकीय में प्रयोग' कल्याणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. सं. 284–285।
2. कपिल, डॉ. एच. के. (2011), यअनुसंधान विधियाँ' राखी प्रकाशन, 12ए, चतुर्थ लाल यरमन टावर संजय पैलेस व्यवसायिक काम्पलेक्स, आगरा, पृ. सं. 441–442।
3. श्रीवास्वत, डॉ. डी. एन. (1996) यआधुनिक प्रयोगात्मक मनोविज्ञान पुस्तक मंदिर, आगरा, पृ.सं. 737–758।

तालिका क्रमांक –2

वैवाहिक समायोजन के वर्गीकरण के अनुसार तुलनात्मक परिणाम

वर्गीकरण	संख्या		प्रतिशत		काई वर्ग
	कामकाजी महिलाऐं	गैर कामकाजी महिलाऐं	कामकाजी महिलाऐं	गैर कामकाजी महिलाऐं	
उच्च समायोजन	19	21	64%	70%	0.26NS
औसत समायोजन	11	9	36%	30%	0.54NS
निम्न समायोजन	–	–	–	–	–

तालिका क्रमांक -3

कामकाजी एवं गैरकामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन संबंधी तुलनात्मक परिणाम

प्रकृति	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	'क्रांतिक' अनुपात	'पी' मान
कामकाजी	30	19.30	2.10	0.13	>0.05
गैरकामकाजी	30	18.30	2.00		

स्वतंत्रता के अंश - 58

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान -2.00

0-01स्तर पर सार्थकता हेतु मान- 2.66

ग्राफ क्रमांक 01

कामकाजी एवं गैरकामकाजी महिलाओं के वैवाहिक समायोजन के परिणाम

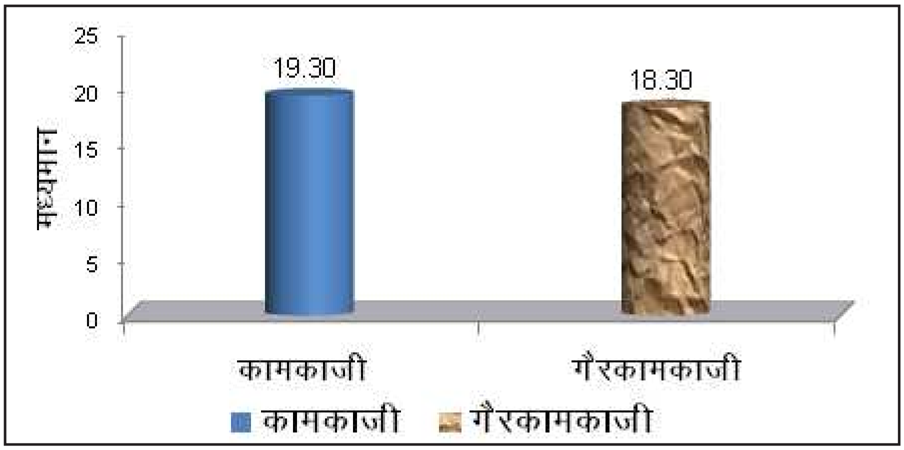

****

हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकल शिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि का अध्ययन

आहुति साहू * डॉ. आभा तिवारी **

शोध सारांश – अध्ययन का उद्देश्य हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा में अध्ययनरत् किशोर विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि का अध्ययन करना है। अध्ययन हेतु न्यादर्श में हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम से सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा के 120-120 किशोर बालक एवं बालिकाओं को लिया गया। डॉ. संतोष धर एवं डॉ. उपेन्द्र धर (1971) के आध्यात्मिक बुद्धि परीक्षण का उपयोग किया गया है। अध्ययन के परिणामों से ज्ञात होता है, माध्यम एवं शिक्षा की प्रकृति का आध्यात्मिक बुद्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।शब्द कुंजी – किशोरावस्था, माध्यम, शिक्षा की प्रकृति, आध्यात्मिक बुद्धि।

प्रस्तावना –किशोरावस्था जटिल समस्याओं की अवस्था है। किशोरावस्था में किशोर बालक एवं बालिकाओं के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों (यथा – शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं सांवेगिक) में ऐसे क्रांतिकारी परिवर्तन होते हैं, जिसके कारण हम किशोरावस्था को नया जन्म की संज्ञा देते हैं। स्टेनली हाल के अनुसार 'किशोरावस्था एक नया जन्म है, क्योंकि इसी अवस्था में उच्चतर एवं श्रेष्ठतर मानव विशेषताओं के दर्शन होते हैं।' किशोरावस्था में इन तीव्र परिवर्तनों का प्रभाव किशोरों के स्वास्थ्य पर भी पड़ता है, जो किशोर इन परिवर्तनों के साथ स्वयं को समायोजित कर लेते हैं वे अपने समायोजन के क्षेत्र में सफल हो जाते हैं और अपना विकास करने में सफल हो जाते हैं। किशोरों के स्वयं के समायोजन करने के पीछे उनकी आध्यात्मिक बुद्धि होती है, जो उनकी आत्म शक्ति के रूप में मदद करती है। आध्यात्मिकता किशोरों को मानसिक संतुष्टि प्रदान करती है, जिससे उनमें विषम परिस्थितियों से लड़ने की क्षमता मिलती है। ईआन मारशल (2011) अनुसार 'आध्यात्मिक बुद्धि एक ऐसा केन्द्र बिन्दु है, जिससे व्यक्ति अपने स्वार्थ को छोड़कर, स्व-इच्छा से कार्य करने के लिये आगे बढ़ता है और कार्य का मूल्य समझता है।'

वाउल (2004) के अनुसार 'आध्यात्मिक बुद्धि केवल सीखना या करना नहीं है, बल्कि स्व के विकास को चरम सीमा तक ले जाना है, ताकि स्वस्थ्य और सफल जीवन बन सके।' डेविड एवं किंग के अनुसार 'आध्यात्मिक बुद्धि में वे मानसिक योग्यतायें हैं, जिसमें बौद्धिक वस्तुओं को महत्व ना देते हुए, वास्तविकता को समझने से संबंधित है। आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के डॉ. दनाह जौहर जो एक भौतिक शास्त्री, मनोवैज्ञानिक एवं धर्म संबंधी विज्ञान के विशेषज्ञ हैं, उन्होंने एक तीसरी लब्धि के बारे में 21वीं सदी के आरंभ में वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर बताया कि मानव बुद्धि को संपूर्ण प्रदान करने में आध्यात्मिक लब्धि की महत्वपूर्ण भूमिका है। उनके अनुसार आध्यात्मिक लब्धि वह बुद्धि है, जिसके माध्यम से अर्थ एवं मूल्य संबंधी समस्याओं का निराकरण करते हैं, हमारे क्रिया-कलाप एवं जीवन को यह एक ज्यादा विस्तृत एवं उच्च स्तरीय अर्थ प्रदान करती है, और हमें यह निर्णय लेने में मदद करती है, कि कोई क्रिया या जीवन पथ का एक अलग मार्ग पहले की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है। बुद्धिलब्धि एवं संवेगात्मक लब्धि के प्रभावकारी रूप से कार्य करने के लिए आध्यात्मिक बुद्धि की अत्यंत ही महत्वपूर्ण भूमिका होती है। 'आध्यात्म वह रास्ता है, जिससे होकर और जिस साधन को अपनाकर, आत्मा वापस लौटकर अपने निज भंडार अर्थात् परमपिता में समाहित हो जाती है और पुनर्जन्म के चक्कर से बच जाती है।' रार्बट के अनुसार 'आध्यात्मिक बुद्धि से किशोरों को उन विश्वासों के विकास का सुअवसर प्राप्त होता है, जो निजी जीवन के अनिवार्य अंग है।' बॉघन, (2003) ने किशोर विद्यार्थियों पर आध्यात्मिक बुद्धि के प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन में पाया गया कि आध्यात्मिक बुद्धि किशोर विद्यार्थियों को उनके जीवन को अर्थपूर्ण एवं आनंदमय बनाने में मदद करती है, उन्हें व्यक्तिगत रूप से प्रसन्नता, एक दीर्घ जीवन जीने की आशायें, अधिक क्रियात्मक बनाने एवं मानसिक रोगों से बचाने में सहायता करती है।

सिंह एवं कौर, (2010) ने आध्यात्मिक बुद्धि, परोपकारिता, शाला का वातावरण और शैक्षिक उपलब्धि का उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन से ज्ञात होता है, विद्यालय का प्रकार, वातावरण, आध्यात्मिक बुद्धि, परोपकारिता, अस्वीकृति और नियंत्रण मानसिक स्वास्थ्य के महत्वपूर्ण पूर्वकथन करने वाले थे। लिंग, निवास की स्थिति, रचनात्मक प्रेरण, संज्ञानात्मक प्रोत्साहन, स्वीकार्यता, अत्याधिक स्वतंत्रता और शैक्षणिक उपलब्धि मानसिक स्वास्थ्य के महत्वपूर्ण पूर्वकथन वाले थे। इस प्रकार विभिन्न शोध अध्ययनों से ज्ञात होता है कि आध्यात्मिक बुद्धि का जीवन की संतुष्टि पर गहन और सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। आध्यात्मिक बुद्धि व्यक्ति के समाज में आध्यात्मिक एवं धर्म के प्रति व्यवहार का आधार है।

प्रस्तुत शोध कार्य में यह देखने का प्रयास किया गया है कि क्या विभिन्न माध्यमों एवं सहशिक्षा/एकल शिक्षा विद्यालयों में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की अध्यात्मिक बुद्धि में अन्तर होता है ? अध्ययन व्यक्तित्व के संतुलित विकास में सहायक होगा।

* शोधार्थी , शासकीय मो.ह. गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी) जबलपुर(म.प्र.) भारत
**प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (मानव विकास) शासकीय मो.ह. गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी) जबलपुर (म.प्र.) भारत

चर –

स्वतंत्र चर	–	माध्यम
परतंत्र चर	–	आध्यात्मिक बुद्धि
नियंत्रित चर	–	किशोरावस्था
		कक्षा नवमीं के किशोर बालक–बालिका
आयु	–	14–16 वर्ष

उद्देश्य – हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि का अध्ययन।

परिकल्पना – हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

शोध विधि –

न्यादर्श –

क्र.	माध्यम	शाला की प्रकृति	छात्र	छात्रा	योग
1	हिन्दी	सहशिक्षा	60	60	120
		एकलशिक्षा	60	60	120
2	अंग्रेजी	सहशिक्षा	60	60	120
		एकलशिक्षा	60	60	120

विधि –

1. हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा विद्यालयों की सूची बनायी गई।
2. इन सूचियों में से दो–दो विद्यालयों का यादृच्छिक विधि से चयन किया गया।
3. इन विद्यालयों के 60–60 बालक एवं बालिकाओं को न्यादर्श में चुना गया।
4. न्यादर्श में चयनित किशोर बालक एवं बालिकाओं पर आध्यात्मिक बुद्धि का परीक्षण का प्रशासन किया गया।
5. आध्यात्मिक बुद्धि परीक्षण का फलांकन कर परिकल्पना के सत्यापन हेतु प्रदत्त की सांख्यिकीय गणना की एवं निष्कर्ष प्राप्त किया गया।

उपकरण –आध्यात्मिक बुद्धि परीक्षण – डॉ. संतोष धर एवं डॉ. उपेन्द्र धर (1971)

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या – हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि के परिणाम निम्नानुसार हैं –

तालिका क्रमांक – 01

हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि के तुलनात्मक परिणाम

माध्यम	शिक्षा की प्रकृति	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
हिन्दी	सहशिक्षा	120	231.78	28.60
	एकल शिक्षा	120	234.18	21.20
अंग्रेजी	सहशिक्षा	120	203.97	16.94
	एकल शिक्षा	120	203.32	25.73

प्रसरण विश्लेषण की सारांश तालिका **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि माध्यम एवं शिक्षा की प्रकृति का आध्यात्मिक बुद्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है। एकल शिक्षा के हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि सबसे अधिक एवं एकल शिक्षा के ही अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि सबसे कम है।**(ग्राफ देखे अगले पृष्ठ पर)**

किशोर अवस्था में पदार्पण करने पर किशोर बालक एवं बालिकाओं में विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण की भावना आने लगती है। सहशिक्षा में दोनों ही लिंगों के विद्यार्थी साथ–साथ अध्ययन करते हैं, उनके विद्यालयीन संबंधी समस्त पाठ्य एवं सहगामी क्रियायें साथ–साथ होती हैं। इस कारण विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण एवं मन की अस्थिरता स्वाभाविक ही रहती है। किन्तु एकल शिक्षा में एक ही लिंग के विद्यार्थी अध्ययन करते हैं, उनका दृष्टिकोण एवं व्यवहार अपने ही लिंग के मित्रों के साथ अधिक रहता है। वस्तुत: यही कारण हो सकता है कि सहशिक्षा की अपेक्षा एकल शिक्षा के विद्यार्थियों की अध्यात्मिक बुद्धि अधिक पाई गई। सामान्यत: धर्म, आध्यात्म की जो भी चर्चा एवं अनुपालन होता है वह मुख्यत: हिन्दी में ही होता है। इस संबंध में पूजा–पाठ आदि जो कर्मकाण्ड से संबंधित हैं, उनमें भी हिन्दी भाषा का उपयोग होता है और भक्ति, संगीत, संतों के प्रवचन, आदि भी अधिकतर हिन्दी में ही होते हैं। उसमें आध्यामिकता का जो चरम बिन्दु है वहाँ पर यदि नीचे के सोपानों को पार करने में भाषा की प्रधानता की बात है तो वहाँ हिन्दी ही ऐसी भाषा है, जिसमें अंग्रेजी भाषा की अपेक्षा विद्यार्थी समझ की भाषा के रूप में उपयोग कर सकता है। सूचना आधारित पाठ्यक्रम भी समान रूप से हिन्दी भाषा की प्रधानता लिए रहते हैं।

आध्यात्मिक बुद्धि किसी में चेतन, अर्द्धचेतन, किसी में विकसित, अविकसित होती है। आध्यात्मिकता अपने आप में अलग विकासात्मक सोपान है। यह एक अभिवृत्ति है जो हर एक अवस्था में पायी जाती है। आध्यात्मिक बुद्धि, आंतरिक जीवन, मन और चेतना के बीच संबंध है। यह एक ऐसा गहन विचार है, सोच है, जिस पर आधारित सारगर्भित जीवन व्यतीत किया जा सकता है। आध्यात्मिक बुद्धि आत्मा या अंतर्मन की आवाज है। यह ऐसी चेतना है, जिससे व्यक्ति जीवन, शरीर, मन, आत्मा और विवेक को सहसंबंधित करता है। मनोविज्ञान में भी इसकी चर्चा की गयी है। दर्शन शास्त्र में स्वचेतना तथा ईश्वरीय शक्तियों से जीवित रहते हुए संबंध स्थापित करने की प्रक्रिया को आध्यात्मिक बुद्धि कहा गया है। मनोचिकित्सक, आध्यात्मिक बुद्धि को हृदय और मन की जागरूकता कहते हैं, जहां मनुष्य के मन का संबंध वास्तविक और अवास्तविक तत्वों से जुड़ता है। कई संस्कृतियों में आध्यात्मिक बुद्धि को प्रेम, ज्ञान और सेवा कहा है। आध्यात्मिक बुद्धि को संवेगात्मक बुद्धि से जोड़ा गया है। आध्यात्मिक बुद्धि में उस दृष्टि का विकास होता है, जिससे हम धारणाओं और व्यवहार में अंतर स्पष्ट कर सकते हैं। आध्यात्मिक बुद्धि में आत्मचिंतन आवश्यक है, जहां व्यक्ति अपनी संवेदना, चेतना पर आधारित वैज्ञानिक तरीके से सोचना आरंभ करता है। हर एक धर्म में प्रेम, दया, सच्चाई, सहनशीलता, धैर्य, त्याग का प्रशिक्षण किया जाता है। व्यक्ति इसको कितनी योग्यता के साथ वास्तविक जीवन में परिवर्तित करता है यही आध्यात्मिक बुद्धि है।

स्प्रिंगर (2012) ने किशोरों की जीवन संतुष्टि पर आशावादी दृष्टिकोण, आध्यात्मिक एवं धार्मिक कार्यों में संलग्नता का अध्ययन किया। इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि जो किशोर अपने जीवन के प्रति आशावान, आध्यात्मिक एवं धार्मिक कार्यों में संलग्न होते हैं, उनमें जीवन संतुष्टि अधिक होती है। आशा, जीवन संतुष्टि को प्रभावित करती है तथा आध्यात्मिक एवं धार्मिक जीवन के प्रति उत्साह दर्शाती है। नलेन एवं बाबानजारी (2012) ने किशोर विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि और आनंदित रहने के बीच सहसंबंध का अध्ययन किया। अध्ययन के प्रमुख निष्कर्षों से ज्ञात होता है कि किशोर विद्यार्थियों में आध्यात्मिक बुद्धि और

आनंदित रहने में महत्वपूर्ण सकारात्मक सहसंबंध होता है। इल्यासी एवं जाटिया, (2012) ने किशोरों की आध्यात्मिक बुद्धि एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य संबंध का अध्ययन किया। अध्ययन के प्रमुख निष्कर्षों से ज्ञात होता है कि आध्यात्मिक बुद्धि एवं मानसिक स्वास्थ्य में सकारात्मक सहसंबंध होता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि आध्यात्मिक बुद्धि व्यक्ति को प्रभावित करती है। अधिकांश विद्यार्थियों की मातृभाषा अथवा सम्पर्क (बोलचाल) की भाषा हिन्दी होने के कारण हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि अधिक आना स्वाभाविक है।

निष्कर्ष – (1) माध्यम एवं शिक्षा की प्रकृति का आध्यात्मिक बुद्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है। (2) एकल शिक्षा के हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि सबसे अधिक एवं एकल शिक्षा के ही अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि सबसे कम है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कपिल, एच.के. (1975), सांख्यिकीय के मूल तत्व, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पृ.सं. 607.
2. गुप्त, रामबाबू, (2000), विकासात्मक मनोविज्ञान, अष्टम संस्करण, रतन प्रकाशन मंदिर, प्रोफेसर्स कॉलोनी, दिल्ली गेट, आगरा, पृ.सं. 469-470.
3. सिंह, अरूण, (2006), आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, चतुर्थ संस्करण, मोतीलाल वनारसी दास प्रकाशन, बंगला रोड, दिल्ली, 110007।
4. Babanazari I. (2012) Spiritual intelligence and happiness for adolescents in high school. Journal Life Science, 9(3) 2296-2299.
5. Mohammadyari G. (2012) Relationship betwen parents spiritual intelligence. Le education and children's mental health. Al http:/www.sciencedirect com/science /artide/ pii/s1877042812056418.
6. Singh, Tirah et.al. (2008), Development of Spirital Intelligence Scale, Psycholingus I Psycholinguistic Association of India 38(2) : 143-146.
7. Springes. L. (2012) Study of the spiritual intelligence role in prediciting student Quality of life. Journal. Religion and Health.
8. Springes.L. (2012), The role of hope spirtituality and religinous practice in adolescent life satistaction : Longitudinal findings. Junral. Happiness Studies.
9. Vaughan, F. (2002). What is spirital intelligence ? Journal of Mumenistic Psychology. Vol. 42(2).
10. Zohar, D., Marshall.I. (2001) , Spirital intelligence the ultimate intelligence, Bioomsbury London.

प्रसरण विश्लेषण की सारांश तालिका

विचरण के स्रोत	स्वतंत्रता के अंश	वर्गों का योग	मध्यमान वर्ग	'एफ' अनुपात	'पी' मान
समूहों के बीच	3	103651.22	34550.41	62.37	< 0.01
समूहों के मध्य	476	26393.52	553.98		

स्वतंत्रता के अंश – 3,476

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.62

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 3.83

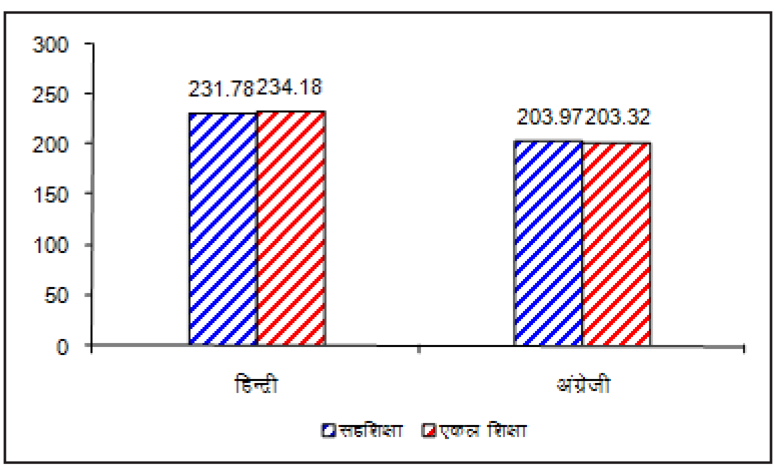

****

मध्यान्ह भोजन में विद्यार्थियों की रुचि

डॉ. रशीदा कांचवाला * रेखा सोलंकी **

प्रस्तावना –भारतीय मान्यताओं में बच्चों को भगवान का रूप माना जाता है यदि इस मान्यता को सामाजिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो बालक ही बड़े होकर उस परिवार, देश एवं परिवेश का भविष्य सुनिश्चित करते है, इसलिए आज का बालक कल का भविष्य है। राष्ट्र का निर्माता है। मध्यान्ह भोजन योजना कार्यक्रम भारत सरकार द्धारा प्रवर्तित योजना है। मध्यप्रदेश में जिसका सुचारू संचालन किया जाना जिला प्रशासन की जवाबदेही है तथा इस कार्यक्रम का उद्देश्य शिक्षा एवं स्वास्थ्य के पोषण स्तर में सुधार करना है। प्रदेश की शालाओं में चल रहा मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम शासन की अत्यंत महत्वपूर्ण गतिविधि है इस कार्यक्रम से प्रदेश की विशेष तौर पर नियमित स्कूल जाने वाले को न केवल आर्थिक राहत मिलती है बल्कि भोजन के प्रदाय से उन्हें पर्याप्त रूप से पोषक तत्व मिलने से उनकी शारीरिक व मानसिक शक्ति में भी वृद्धि होती है।

उद्देश्य –

1. शासन द्धारा प्रदाय किया गये मध्यान्ह भोजन में विद्यार्थियों की रूचि ज्ञात करना।

उपकल्पना –

1. शासन द्धारा प्रदाय किये गया मध्यान्ह भोजन विद्यार्थियों के लिए रूचिकर होगा।

निर्देशन विधि – इस शोध कार्य के लिए न्यादर्श का चयन धार जिले से किया गया है। इस न्यादर्श का चयन उद्देश्यपूर्ण न्यादर्श विधि द्धारा किया गया।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श हेतु धार जिले के कुल 03 चयनित विकासखण्डों से 5-5 प्राथमिक शालाओं का चयन किया। प्रत्येक शाला से 20-20 विद्यार्थी एवं उनके पालकों का चयन दैव न्यादर्श विधि के द्धारा किया गया है। इस प्रकार कुल 300 विद्यार्थी एवं उनके पालकों का चयन किया गया है।

उपकरण – उपकरणों का चयन शोध अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया गया। स्वनिर्मित साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया।

(तालिका देखे)

सांख्यिकीय विधि – संकलित तथ्यों का सारणीयन एवं प्रस्तुतीकरण करके निष्कर्ष की विश्वसनीयता हेतु प्रतिशत एवं उपकल्पना की सार्थकता ज्ञात करने के लिए काई वर्ग का प्रयोग किया गया। तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि धार जिले के विभिन्न विकासखण्डों में प्रदाय किऐ गऐ मध्यान्ह भोजन में विद्यार्थियों की रुचि को जाँचने हेतु विद्यार्थियों से प्राप्त अभिमत में कुक्षी विकासखण्ड का काई वर्ग का मान 47.54 है, मनावर विकासखण्ड का काई वर्ग का मान 52.02 है एवं गंधवानी विकासखण्ड का काई वर्ग का मान 21.68 है। धार जिलों के तीनों विकासखण्ड 0.01 के स्तर पर सार्थक पाये गऐ है। इस आधार पर हमारी उपकल्पना स्वीकृत पाई गई है।

निष्कर्ष – तालिका के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि विद्यार्थियों की दृष्टि से कुक्षी व मनावर विकासखंड के विद्यालयों में 63 से 68 प्रतिशत प्रतिदिन मध्यान्ह भोजन में रूचि लेते हैं। 23 से 30 प्रतिशत अरूचि दिखाते है एवं 7 से 9 प्रतिशत किसी विशेष दिन ही रूचि लेते हैं। जबकि गंधवानी विकासखंड में 52 प्रतिशत अरूचि लेते है। 34 प्रतिशत प्रतिदिन रूचि लेते है एवं 14 प्रतिशत ही किसी विशेष दिन रूचि लेते हैं। अत: तालिका से स्पष्ट होता है कि अधिकांश विद्यार्थियों की रूचि मध्यान्ह भोजन में है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अग्रवाल बी.बी., आधुनिक भारतीय शिक्षा, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर, सं. (1995)
2. भाटिया के.के., आधुनिक भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ, लुधियाना : प्रकाश ब्रदर्स, पुस्तक बाजार, सं. (1980)
3. चाँदोरे दुर्गा, विद्यालय में मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम का मूल्यांकन कस्तुरबा ग्राम रूरल इस्टीट्यूट इंदौर, (2009)।
4. चान्देकर डॉ. रमेश, सामाजिक अनुसंधान, इंदौर : सत् प्रकाशन संचार केन्द्र, सं. (2009)।
5. गौर माया, ग्रामीण क्षेत्र में बच्चों के पालन पोषण की पद्धतियाँ का अध्ययन देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (1999)।
6. डाँगी बलवंत सिंह, मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम मार्गदर्शिका, इंदौर : चराटे पब्लिशिंग हाउस, सं. (2012)।
7. जैन श्रीमति आशा, पोषण एवं आहार के सिद्धांत, आगरा : विनोद पब्लिशिंग, सं. (1989)।
8. आहुजा लाजपत, मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम का विस्तार, मध्यप्रदेश संदेश: अंक 4, अप्रैल (2007), पृ. 13।
9. मेहरा मनोज, मध्यान्ह भोजन में कैलोरी एवं प्रोटीन का पोषाहार, सरस सलित : अंक-4, अप्रैल (2008), पृष्ठ-2।
10. स्वामीनाथन एम., खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को कम महत्व, योजना : धरा प्राजंन, मई (2007), पृष्ठ-13।
11. दैनिक भास्कर, मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम में हलवा एक नये व्यंजन के रूप में। 2 अगस्त (2008), पृष्ठ-7
12. मध्यान्ह भोजन योजनाओं के बारे में शिक्षा विभाग से जानकारी
13. www.cedmapindia.org
14. www.m.d.m.dhar.in
15. www.ashaparivat.org
16. www.zpdhar.org.
17. wwww.childlineindia.org.in

* प्राध्यापक (गृह विज्ञान) बी.एल.पी. शासकीय पी.जी. महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (गृह विज्ञान) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

धार जिले के विभिन्न विकासखण्डों में प्रदाय किये गये मध्यान्ह भोजन में विद्यार्थियों की रुचि
(प्रतिशत)
(विद्यार्थी की दृष्टि से)

क्रं.	विकासखण्ड	प्रतिदिन रूचि कर	किसी विशेष दिन रूचि कर	अरूचिकर	X^2 का मान	सार्थकता का स्तर
1	कुक्षी	63	07	30	47.54	0.01
2	मनावर	68	09	23	57.02	0.01
3	गंधवानी	34	14	52	21.68	0.01

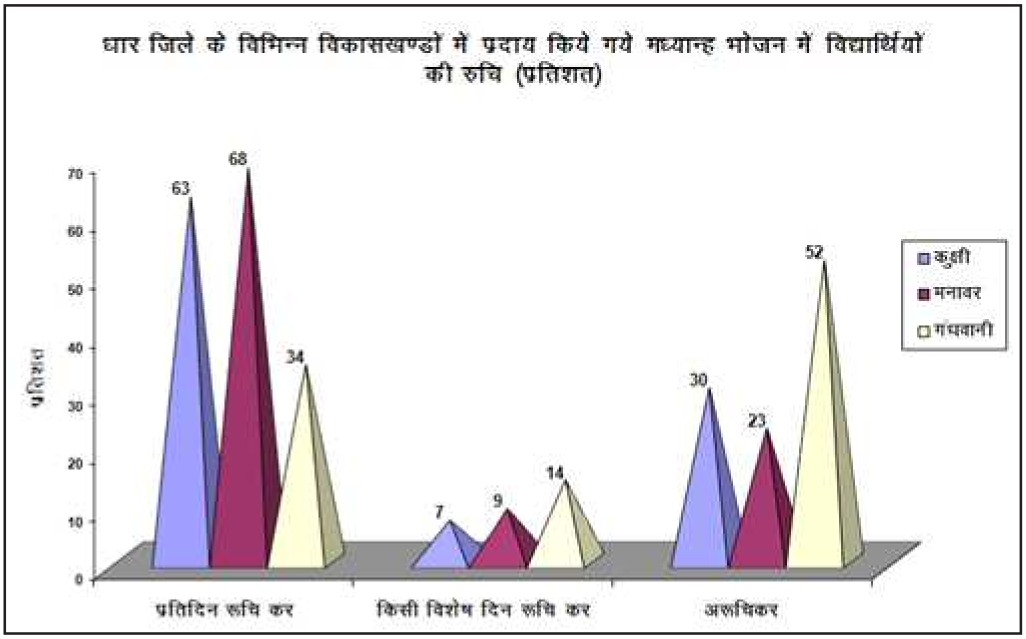

****

कुपोषण के कारण - मध्यप्रदेश के खरगोन जिले के संदर्भ में एक अध्ययन

प्रो. जयंती जोशी *

प्रस्तावना – अनेक विकासशील देशों के लिए स्वास्थ्य एवं पोषण के क्षेत्र में कुपोषण एक गंभीर चुनौती हैं। इसका सीधा प्रभाव बाल मृत्युदर पर देखा जाता हैं। कुपोषण के कारणो में सामाजिक - आर्थिक पहलुओं के साथ - साथ शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव, अप्रासंगिक सांस्कृतिक परम्पराए एवं आचरण प्रमुख हैं। उपरोक्त कारणो के अतिरिक्त आवश्यक पोषण आहार की अनुपलब्धता का एक बड़ा महत्वपूर्ण कारण गरीबी भी हैं।

आज के विकासशील विश्व में कुपोषण के सर्वाधिक मामले भारत में हैं जिनका कारण जानकारी और जागरूकता का अभाव, गरीबी तथा पर्याप्त और संतुलित आहार का न होना है। इनके कारण कुपोषण तथा न्यूनतम पोषण होता है जो शिशुओं और बच्चों के शारीरिक और संज्ञानात्मक विकास को अवरूद्ध करता है और वयस्कों की कार्य क्षमता और उत्पादकता को कम करता है और बच्चों, महिलाओं और पुरूषों में मृत्यु पर और रूग्णता को बढ़ाता है। कम उत्पादकता से अर्जन क्षमता कम हो जाती है, जिसके परिणामत: गरीबी उत्पन्न होती है और यही क्रम चलता रहता है।

न्यूनतम पोषण एक ऐसा महत्वपूर्ण कारक है, जिसके कारण शिशु और मातृत्व मृत्यु दर अधिक होती है और बच्चों में जन्म के समय वज़न कम होता है। एन.एफ.एच.एस. 2 आंकड़ों के अनुसार 40.6 प्रतिशत भारतीय ग्रामीण महिलाओं का वज़न कम होता है। इसके साथ कम उम्र में और बार-बार माँ बनना मातृत्व मृत्यु दर में वृद्धि और बच्चों में जन्म के समय कम वजन होने का प्रमुख कारक है।

[1]विश्व में हर तीसरे कुपोषित बच्चे का जन्म स्थान भारत हैं। भारत में लगभग 40 प्रतिशत बच्चों कम वजन के हैं। ग्लोबल हंगर इंडेक्स 2013 के अनुसार 'भारत में भुखमरी के शिकार लोगों की संख्या चिंताजनक हैं। देश में पाँच साल से कम उम्र के 40 प्रतिशत बच्चे कुपोषित हैं। सूचकांक में 120 विकासशील देशों में भूख पीड़ितों की संख्या का आकलन किया गया हैं। इसके लिये तीन प्रमुख संकेतकों को आधार बनाया गया हैं। कुल जनसंख्या में कुपोषित लोगों का प्रतिशत, पाँच साल से कम उम्र के कुल बच्चों में कुपोषित बच्चों का प्रतिशत और इसी उम्र के बच्चों की मृत्युदर को प्रमुख संकेतक माना गया हैं।' इस सुचकांक में भारत की स्थिति पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका जैसे देशों से नीचे की पायदान पर हैं।

अध्ययन का महत्व – शिशुओं और बालकों का स्वास्थ्य उनके पोषणिक स्तर पर निर्भर करता हैं। कुपोषण विकासशील देशों की एक बड़ी समस्याँ हैं। अधिक जनसंख्या के कारण जनता आवश्यक स्वास्थ्य सेवाओं और पोषण सलाह से वंचित हैं। कुपोषण का मुख्य कारण गरीबी, अशिक्षा एवं अज्ञानता हैं।

कुपोषण एक विकराल समस्यां है, जिसका सामना हमारा देश कर रहा हैं। जिसमें मध्य प्रदेश विशेष रुप से हैं। कुपोषण के कारण बच्चों की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती हैं, जिससे सामान्य बिमारियाँ, निमोनिया, मलेरियां, मीजल, ड़ायरियां के कारण बाल मृत्यु दर बढ़ती हैं।

प्रस्तुत शोद्य पत्र क्षेत्र में 0 से पाँच वर्ष के बच्चों के पोषण स्तर का विश्लेषण कर कुपोषण के कारणो एवं प्रभावी कारकों के चिन्हिकरण में सहायक होगा।

कुपोषण के कारण – कुपोषण के कारण एवं प्रभाव का विश्लेषण उन कारकों के चिन्हिकरण में सहायक होगा जिन्हें प्राथमिकता के आधार पर हल किया जाना चाहियें-

- **सामाजिक पहलू –** भारत में राष्ट्रिय सामाजिक परम्पराओं व रूढ़ियों के कारण लगभग 50 प्रतिशत लड़कियों का विवाह 18 वर्ष की आयु में हो जाता हैं। कम आयु में विवाह होने से वे कम आयु मे गर्भधारण कर लेती हैं। कम आयु में विवाह होने से वे कम आयु में गर्भधारण कर लेती है। अशिक्षा व अज्ञानता के कारण कम अन्तर से बार-बार गर्भधारण के कारण शिशु व माँ दोनों गंभीर कुपोषण के शिकार होते है। कुपोषण का यह चक्र पीढी दर पीढी चलता रहता है ऐसी लड़कियाँ जो स्वयं अल्पपोषित है, वे कम वजन वाले कुपोषित बच्चे को जन्म देती है।
- **घरेलू एवं पारिवारिक पहलू –** [1]पीने हेतु साफ पानी व आसपास के वातावरण में स्वच्छता का अभाव होने से विभिन्न बिमारियों व कुपोषण का खतरा बढ़ जाता हैं। 5 वर्ष से कम आयु के लगभग 50 प्रतिशत बच्चों की मृत्यु संक्रामक रोगों जैसे- निमोनिया, ड़ायरिया, मलेरिया, और खसरे के कारण होती हैं। इसलिये बच्चों में संक्रमण से होने वाले रोगों के अधिक फैलाव और टीकाकरण की कम दर के कारण बच्चों में कुपोषण की स्थिति देखी जाती हैं।
- **तात्कालिक पहलू –** विकासशील देशों में कुपोषण का एक बड़ा कारण हैं, जनसंख्या का अधिक होना और गरीबी । इस कारण बालक को पर्याप्त आहार एवं गुणवत्तापुर्ण आहार की अनुपलब्धता होती हैं। कुपोषण का एक बड़ा कारण अशिक्षा व अज्ञानता के कारण बच्चों की पोषणिक आवश्यक्ता, आहार में पोषक तत्वों की गुणवत्ता की जानकारी का अभाव भी कुपोषण का कारण हैं।

अपर्याप्त एवं गलत तरीके से स्तनपान एवं पोषण संबंधी आदतें भी कुपोषण का कारण हैं। बड़ी संख्या में अज्ञानता के कारण नवजात शिशु जन्म के तुरन्त बाद स्तनपान व कोलस्ट्रम से वंचित रह जाते हैं। संतुलित स्तनपान व उचित आहार के द्वारा 5 वर्ष से कम उम्र के लगभग 20 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु को रोका जा सकता हैं।

शोध विधि–प्रस्तुत अध्ययन के लिए उद्देश्य अनुसार मध्य प्रदेश के खरगोन जिले का चुनाव किया गया। 0 से 5 वर्ष के बच्चों को अध्ययन की इकाई के रुप मे शामिल किया गया हैं। अध्ययन में निदर्शन का चुनाव दैव निर्दशन पद्धति द्वारा किया गया हैं। अध्ययन हेतु खरगोन जिले के पाँच विकासखण्डे

* सहायक प्राध्यापक (गृह विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

में से चयनित प्रत्येक गांव से 20 – 20 बच्चों का चुनाव किया गया। इस प्रकार 400 बच्चों को अध्ययन में शामिल किया गया।

तथ्यों का विश्लेषण–

1.परिवार का व्यावसाय

क्र.	परिवार का व्यवसाय	आवृत्ति	प्रतिशत
1	कृषि	127	31.8
2	मजदूरी	235	58.8
3	नौकरी/पेंशन	6	1.5
4	निजी काम	15	3.8
5	व्यापार	17	4.3
	कुल	**400**	**100.0**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है की, 58.8 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्णत: कृषि मजदूरी पर निर्भर है, 31.8 प्रतिशत उत्तरदाता कृषि कार्य करते हैं। 1.5 प्रतिशत उत्तरदाता नौकरी करते हैं। 3.8 प्रतिशत उत्तरदाता निजी काम करते हैं और 4.3 प्रतिशत उत्तरदाता व्यापार करते हैं। अधिकंाश उत्तरदाता प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि क्षेत्र से संबध रखते हैं। जिन किसानों के पास कृषि भूमि है किंतु सिंचाई के साधन कि अनुपलब्धता होने के कारण वे कृषि से पर्याप्त लाभ नहीं प्राप्त कर पाते। शोध के दौरान प्राप्त हुआ कि मजदूर वर्ग को भी पर्याप्त मजदूरी नहीं मिलती जिसके कारण उन लोगों को आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ा। जो पोषण स्तर पर प्रभाव डालता हैं।

2.माता कि शिक्षा

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	अनपढ़	276	69.0
2	प्राथमिक	82	20.5
3	माध्यमिक	32	8.0
4	हाई स्कुल	10	2.5
	कुल	**400**	**100.0**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता हैं की, 2 प्रतिशत माताएं हाई स्कूल स्तर तक पढ़ी है, 8 प्रतिशत माताएं माध्यमिक स्तर तक तथा 20 प्रतिशत माताएं प्राथमिक स्तर तक पढ़ी है। जबकी सर्वाधिक 69 प्रतिशत मातायें अशिक्षित हैं।

महिलाओं कि शिक्षा पुरूषों कि तुलना में अधिक महत्वपूर्ण होती हैं। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षित महिलाएं बच्चों को एवं सम्पूर्ण परिवार का उचित संसाधन एवं देखरेख प्रदान कर सकती है इसके विपरित यदि माता अशिक्षित है और उसे पोषण के विषय में ज्ञान ही नहीं है तो वह संसाधन होने पर भी उसका उचित प्रयोग नहीं कर पाएगी।

3.विवाह के समय माता की आयु

क्र.	आयु	आवृत्ति	प्रतिशत
1	16 से 17 वर्ष	160	40.0
2	18 वर्ष	163	40.8
3	18 से अधिक	77	19.3
	कुल	**400**	**100.0**

यह भी एम महत्वपूर्ण तथ्य है क्यों कि माता कि उम्र से बच्चे के स्वास्थ्य का सीधा संबंध है। यदि माता स्वस्थ एवं परिपूर्ण होगी तभी वह एक स्वस्थ्य परिवार का निर्माण कर सकती है।

4. शौचालय की सुविधा

क्र.	शौचालय की	आवृति	प्रतिशत
1	हां	88	22.0
2	नहीं	312	78.0
3	**कुल**	**400**	**100.0**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 78 प्रतिशत लोगों के घर पर शौचालय कि सुविधा नहीं है तथा केवल 22 प्रतिशत लोगों के घर शौचालय बना हुआ है। छोटे बच्चों में कुपोषण की समस्या खुले में शौच जाने से भी संबंधित है। छोटे बच्चे जो घरों में बने शौचालय का इस्तेमाल करते हैं, उनमें कुपोषण के लक्षण कम देखे गए है

निष्कर्ष– भारत देश विकासशील देश हैं। भारत में विकास के विभिन्न आयाम अर्जित कर लिये हैं, किन्तु कुपोषण की समस्या आज देश के लिये एक चुनौती बनी हुई हैं।

शोध से यह सिद्ध हो चुका है कि ग्रामिण पिछड़े क्षेत्रो में कुपोषण से अनेक बच्चें प्रभावित हैं। जब व्यक्ति को उसकी शारीरिक आवष्यक्ता से कम पोषण मिलते हे तो उसके शरीर की वृद्धि रुक जाती हैं, यह स्थिती कुपोषण कहलाती हें। यदि हम शोध क्षेत्र के संदर्भ में विश्लेषण करे तो पायेंगे कि ज्यादातर ग्रामीण क्षेत्रों में इसका अधिक प्रभाव होने के कारण बच्चों का शारीरिक स्तर दयनीय हैं।

निम्न आर्थिक स्थिती के कारण परिवार मे उचित उर्जा और पोषण युक्त भोजन पर्याप्त मात्रा में प्राप्त नहीं हो पाता हैं। अधिकांश बच्चे कम भारिता से ग्रस्त है क्यों कि उनकी पोषण संबंधि आवश्यकता कि पूर्ति नहीं हो पा रही है।

महिलाओं कि शिक्षा पुरूषों कि तुलना में अधिक महत्वपूर्ण होती हैं। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षित महिलाएं बच्चों को एवं सम्पूर्ण परिवार को उचित संसाधन एवं देखरेख प्रदान कर सकती है इसके विपरित यदि माता अशिक्षित है और उसे पोषण के विषय में ज्ञान ही नहीं है, तो वह संसाधन होने पर भी उसका उचित प्रयोग नहीं कर पाएगी। क्योंकि बच्चों को पूरक आहार कब देना है, कितनी बार देना हैं, किस उम्र में बच्चों को पोषक आहार की कितनी आवश्यक्ता होगी ओर पोषण आहार की गुणवत्ता आदि बातों जानकारी बच्चों को स्वस्थ एवं पोषित रखने के लिए अति आवश्यक हैं।

यह स्थिति ग्रामीण क्षेत्रों में मजदूर परिवार के बच्चों मे अधिक दयनीय है क्योंकि वे बच्चों का बच्चों का पेट तो भरते है किंतु उनके भोजन में समस्त पोषक तत्व उपस्थित नहीं रहते है। इसका मुख्य कारण गरीबी, अशिक्षा एवं पोषण संबंधित जागरूकता अभाव है। महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा आंागनवाडी केंन्द्र मे समस्त बच्चों को 300 किलो कैलोरी और 12 ग्राम प्रोटीन प्रतिदिन दिया जाता है। किंतु उन्हें घर में संतुलित आहार न मिल पाने के कारण उनकी पोषण संबंधित आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो पाती।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नई दुनिया 16 अक्टुबर 2013
2. WHO 2003 और कोलफील्ड़ इ. टी. ए. एल. 2004
3. Food Science and Nutrition (IInd Edition) Sunetra Roday
4. आहार एवं पोषण – डॉ. अमिता सिंह ।
5. आहार एवं पोषण – मंगला कानगो ।

****

A Study On The Beneficiaries Satisfaction With The Services Of Sidbi With Special Reference To Small Scale Industries

Pragati Bafna * Dr. Rajeev Kumar Jhalani **

Abstract - The movement of entrepreneurship endorsement and expansion in the past few decades has gone a long way in Central India, particularly in the state of M.P. Both governments and various industrial promotion and support institutions are making substantial pains to assist the process of emergence of new entrepreneurs for setting up enterprises in small scale sector. These efforts involved making attractive schemes for availability of finance and various other assistances including technical knowhow, training, sales, purchases, etc. It is believed that these efforts have made a favourable impact on the growth of these enterprises in the State as well as in the region. The present paper in this regard is an attempt to examine the role of financial institutions (SIDBI) in promoting small scale and tiny industries in terms of growth of entrepreneurs, enterprises and its contribution to State Domestic Products.
Keywords - Entrepreneurship promotion and development, SIDBI, SSIs.

Introduction - Role of Small Industries Development Bank of India - SIDBI was established in April 1990 under an Act of Parliament as a wholly owned subsidiary of Industrial Development Bank of India and as the principal financial institution for the following three-fold activities:

1. Financing the small scale sector by providing:
2. Indirect assistance to primary lending institutions (PLIs);
3. Direct assistance to small scale units; and
4. Promoting small industries through development and support services;
5. Coordinating the functions of other institutions engaged in similar activities.

The present section of the paper, however, mainly concentrates on financial aspect of SIDBI in promoting entrepreneurship in India in general and M.P. in particular.

Financing the Small Scale Sector - Credit is the prime input for sustained growth of small scale sector and its availability is thus a matter of great importance. The main objective of SIDBI has been to provide short term credit/ working capital to small enterprises for its day to day requirement for purchasing raw material and other inputs like electricity, water, etc. And for payment of wages and salaries; and long term credit for creation of fixed assets like land, building, plant and machinery. To ensure that financial assistance is made available to small units on easy terms and with hassle-free procedures it has been a matter of policy in SIDBI to identify the areas of gaps in credit delivery system and fill them through devising appropriate new schemes and implementing them. It provides credit to SSIs through a good network of PLIs spread across the State and in the country as a whole under the schemes of indirect assistance in addition to making provision for credit under direct assistance schemes. The assistance under indirect schemes is provided by way of refinance, bills rediscounting, and resource support in the form of short term loans, etc. However, direct assistance is provided under several tailor made schemes through its Regional/Branch offices. The objective behind direct assistance schemes has been to supplement the efforts of PLIs by identifying the gaps in the existing credit delivery mechanism for Small Scale Industries.

Indirect Assistance -

1. Loans granted by PLIs for new SSI projects and their expansion, technology up gradation, modernisation, quality promotion etc.
2. Loans sanctioned by PLIs to small road transport operators, qualified professionals for self-employment, small hospitals and nursing homes and to promote hotels and tourism-related activities.

Direct Assistance -

1. SSI units for new/expansion/diversification/ modernisation projects.
2. Marketing development projects which expand the domestic and international marketability of SSI products.
3. Existing well-run SSI units and ancillaries/sub-contracting units/ vendor units for modernisation and technology up gradation.
4. Infrastructure development agencies for developing industrial areas.
5. Leasing and hire purchase companies for offering leasing/hire purchase facilities to SSI units.
6. Existing export-oriented units to enable them to acquire

* Research Scholar, D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA
** Principal, R.P.L. Maheshvari College, Indore (M.P.) INDIA

ISO-9000 Series Certification.

Other Specific Assistances - IDBI provides loans for importing equipments to existing export-oriented SSIs and to new units having definite plans to enter into export markets.

1. It executes confirmed export orders by way of pre-shipment credit/letter of credit and provides post-shipment facilities.
2. It also provides assistance to those small scale enterprises (from its Venture Capital Fund) which use innovative indigenous technology and expertise.

SIDBI and Micro Credit - SIDBI launched a major project, "SIDBI Foundation for Micro Credit" (SFMC) in January 1999 as a proactive step to facilitate accelerated and orderly growth of the micro finance sector in India. It is envisaged to emerge as the apex wholesaler for micro finance in India providing a complete range of financial and non-financial services such as loan funds, grant support, equity and institution building support to the retailing Micro Finance Institutions (MFIs) so as to facilitate their development into financially sustainable entities, besides developing a network of service providers for the sector. While it is striving to accelerate the credit flow to the Micro finance sector it is working in close partnership with the Micro Finance Institutions in the country. SFMC is also poised to play a significant role in advocating appropriate policies and regulations and to act as a platform for exchange of information across the sector.

Review Of Literature - Roy Roth Well and Water Zegveld (1982) reveal that SME have been and in general, continue to be, technologically innovative. Technology based new SMEs plays an important part in the emergence of new technology and in economic growth SME, particularly, young technology based SMEs also make an exceptional contribution to employment creation., and their larger counterparts, does represent an important vehicle for regional regeneration.

Ram, Vepa (1983) in his study reports that over the last 25 years a network of institutions and policies has been developed in the country but not all of them have been success. But taken in totality, they have provided a well-organized frame works in which the small and cottage industry have been allowed to grow.

Dias Syrian (1991) examines the scale, nature and effects of current sub contracting linkages between small and large Industries in Sri-Lanka, In general weaker relationships exist between large and small industries, however strong links exhibit with respect to more organized few larger firms. The reason for this weaker relationship is the immaturity of small Industries in meeting the requirements of large Industries in terms of technology, production cost, and quality and delivery services.

Sandesara (I988) describes the Institutional framework for the small and medium Industries in India. The impact of assistance on firms in this sector and the working of these institutions are also analyzed. He argues for a fresh approach to the institutional set-up and policy framework for this sector.

Objectives Of The Study - In the light of above statement of problems this paper tries to examine the perception of beneficiaries of SSIs in Indore Region regarding efficiency and efficacy of SIDBI in delivering various services. More particularly, the objective of this paper is-

1. To study the level of satisfaction of beneficiaries of small scale industries with the services provided by the SIDBI.
2. To suggest some measures for improving the services provided by the SIDBI.

Methodology - The study is primarily a descriptive and analytical. The study is undertaken on the functioning of Small Scale Industries in Indore Region.

Sample Size - Total 110 managers were selected those covered under the SIDBI scheme from the industries in Indore (Pithampur) Area.

Source of Data - Primary data are collected from the sample beneficiaries working in different industries through questionnaire. Secondary data are collected from National & International Journals, collecting information from websites, consulting with expert and officials of SIDBI.

Analysis of Data - The collected data has been analyzed with the help of five point scale from strongly satisfied to strongly dis-satisfy and hypothesis is tested by applying chi-square test.

Testing Of Hypothesis - H01: There is no significant impact of services provided by SIDBI on the satisfaction level of beneficiaries (Managers)

Chi-Square Test - Table 1.1 **(See in the last page)**

From the above result, it has been found that null hypothesis there is no significant impact of services provided by SIDBI on the satisfaction level of beneficiaries (Managers) is rejected and alternate hypothesis there is a significant impact of services provided by SIDBI on the satisfaction level of beneficiaries (Managers) is accepted. As the calculated value of chi-squarer is greater than the tabulated value 7.81.

Findings & Discussions - As it is evident from the above data that 46 beneficiaries are not satisfied with the services. They responded that the interest rate is charged heavily, it means they are not aware of their rights to have such findings.

The services delivered by the employees or bank officials are regarded as the main pointer for the development and growth of any financial institutions. The above table reveals that 35 (respondents) are satisfied with the benefits.

The findings of this study has disclosed that majority of beneficiaries are satisfied with the facilities in terms of quality of test and service delivery within predetermined time. The chi-square test on the significance in the level of satisfaction among the beneficiaries of small scale industries with regard to the services and facilities is found to be significant. Thus, the hypothesis that there is no significant impact of benefits provided by the SIDBI on the satisfaction level of beneficiaries with regard to the services and facilities provided by the SIDBI is rejected at 5% level of significance.

Suggestions - This study has suggested some measures to create an awareness among the insured persons and as well as to improve the delivery of services. Therefore, SIDBI

should make effort to :

1. To create the awareness among the customers about the Schemes/benefits.
2. To address effectively and efficiently the grievance handling machinery.
3. Train professionals working in SIDBI to deal with their customers very sympathetically as they visit the bank for services with some expectations.
4. Improve functioning of banks etc. to develop better harmonization among various aspirants and advance settlement of Benefits.
5. To make the system more customer friendly.
6. More efforts are required to spread awareness among people regarding the micro financing services available and their uses.
7. The micro finance providers need to tailor new innovative financial products as per the requirements of the customers in order to raise their level of satisfaction and to ensure the further use of such services for their betterment.
8. The beneficiaries should also try to build a trustworthy relationship with the finance providers.

Conclusion - Financial Assistance to Small and Medium scale Enterprises plays a vital role because Small and Medium scale Enterprises have been considered as the engine of Economic growth. It encourages the new entrepreneurs by providing them the loans and helping their dreams to be alive and come true. M.P. State Financial Corporation in collaboration of SIDBI has promoted many enterprises and helped newly emerging entrepreneurs to develop their plan towards their objectives and implement it, which also helps in economic growth of the country and it also provides employment opportunities to many people. It also gives suggestions to the enterprises which have taken financial assistance at the initial stage and it also provides working capital loan to the enterprises. It has a good recovery policy which ensures that the assets will not slip in to Non Performing Assets (NPAs). The financial assistance should be reached to semi-urban and rural segments also to achieve balanced regional development. Financial institutions should try to finance for knowledge intensive industry like IT, ITES, Nano technology, clean technology, health care and life science etc for the growth of knowledge intensive industry in M.P. For the regional balance development it should also concentrate on medium scale enterprises instead of concentrating only on small scale enterprises.

The SME sector is the backbone of the economy in high-income countries. So India as a developing country has to undertake various measures or techniques to encourage and assist the new entrepreneurs and the enterprises by providing them the financial assistance through various Financial Institutions.

References :-

1. Ashok K. Arora, (1992) Financing of Small-scale Industries, Deep and deep Publications, New Delhi.
2. Dias Sriyani, (1991) Sub Contracting in Small-scale Industries, The case of Srilanka industry and development, Pp. 23-35 4.
3. Inderjith Singh and N.S Gupta, (1977) Financing of Small Industries, S Chand and Co. New Delhi.
4. J.C Sandesara, (1988) Institutional Frame Work for Promoting Small-scale Industries in India, Asian Development Review, No: 2 p. 10-40.
5. Moli. P. Koshy & Dr. Mary Joseph (2000) Women Entrepreneurship in the Small-scale Industrial Units: A Study of Kerala Southern Economist, Bangalore, March 2000, P.
6. RBI- Seminar on Financing of SSI in India 1950-52. Bombay, 1959. B Narayanan, Financing of Industries in M.P. An Industrial Development Bank for Bihar) Ph.D Thesis, Sagar University, 1964.
7. Ram K. Vepa, (1983) “Small Industry Development Programme “Indian Institute of Public Administration, New Delhi.
8. Roy Roth well, Walter Zegveld, (1982) Innovation and Small and Medium Sized Finn. Their Role in Employment and in Economic Change, Frances Printer (publishes) London.
9. S. Raviprakash Singaravelu, (1982) “Financing Small-scale Industries in Madras City” Institute of Management Development and Research, Poona, 1982.

Chi-Square Test

Table 1.1

Responses	Fo	Fe	Fo-Fe	$(Fo-Fe)^2$	$(Fo-Fe)^2/Fe$
Strongly Satisfied	29	12	17	289	24.08
Satisfied	35	12	23	529	44.08
Dissatisfied	26	12	14	196	16.33
Strongly Dissatisfied	20	12	08	64	5.33
Total	**110**				$\sum = 89.82$

$$X^2 = \frac{\sum (Fog - Fe)^2}{Fe} = 89.82$$

Degree of Freedom=d.f=k-1

4-1 d.f=3 (a level of significance) =.005

X^2 Table Value=7.81

The Looming Threat of Work Values in Indian Organizations - Review of Research

Dr. Harvinder Soni * Anagat Ashish **

Introduction - Work occupies a central place in one's life. The importance attached to work has been quite a popular topic in social science and management. Theory and research on work values proceed largely from the premise that work values are derived from people's basic value system that help them navigate through the multiple spheres of their lives. An International Project carried out in 1987 was an important cornerstone in understanding how countries differed with respect to the meaning they attach to work by investing work values , work -value congruence and work centrality .

Theory and research on work values precede largely from the premise that work values are derived from people's basic value systems that help them navigate through the multiple spheres of their lives.

Rokeach (1973) in an early pioneering thesis states that a value is an enduring belief that a specific mode of conduct or end. State of existence is personally or socially preferable to an opposite or converse mode of conduct or/ and a state of existence. He defines beliefs about preferable modes of conduct instrument values and beliefs about preferable and states terminal values. **In a value system, individual rank order their instrumental and terminal values along a continuum of importance**.

Some researchers stress that work goals can be regarded synonymous to work values since the concept of goals is a core element of values. **Zedeek (1997) for example has defined work values as goals that people strive to attain through working, which guides a person's life.** Therefore work values also have a significant relationship with life goals (Turgnt, 2004).

In the definitions of work values, "**the idea of an attitude towards or orientation with regard to work**" constitutes a central element. Most definitions of work values agree with the notion that work values are specific goals that the individual considers important to attain in the work context. Thus work values guide individuals work related preferences that can be attained through the act of working.

Word et al. (1990) suggests that **work values can be classified as intrinsic or extrinsic.** Intrinsic work values refer to end states that occur through work or in the course of people engaging in work activities such as sense of accomplishment and are dependent as the contents work while extrinsic work values refer to end states that occur as a consequence of work, regardless or independent of the state of the content of work per se such as family.

Ginzherg, et al. (1951) has suggested a third dimension of work value - **social/environmental values referring to relations with co-workers and the work environment itself**.

Ros and Surkis (1999) suggests that **work values are beliefs pertaining to desirable end state or behaviour and** examine the relationship between these basic values and work values. They argue that different work goals are ordered by their importance as guiding principles for evaluating work outcomes and settings.

Elizur (1964) arrived at a related tri-chotomour classification of work values by considering the modalities of their outcomes - (i) instrumental outcomes of work (pay benefits), (ii) affective element refers to social relations, and
(iii) cognitive work outcomes refer to responsibility, interest and achievement.

Tevoruj and Turgut (2004) conducted a study on work values in Turkey and derived 12 factors that explained work values and indicated that these factors aggregated on three value dimensions - (i) Information seeking (ii) normative work values, and (iii) worldly work values.

It can be seen from the above literature and conceptualization that work values constitute an important part of the experience of work. Work values are central aspects of the experience of work since determine the meaning and work, jobs and organizational experience have the people. People try to make sense of their work experience by judging how these experiences stack up against their work values.

Thus operation definition of work value can be defined as - **Work values, therefore, function as the evaluative standards people use to interpret their work experiences and determine the meaning that individuals attribute to work, jobs, organizations and**

*Professor (Management) Pacific University, PAHER (Raj.) INDIA
** Research Scholar (Management) Pacific University, PAHER (Raj.) INDIA

specific events and conditions.

Kanungo (1982) in his intensive research on work values **proposes concept of work centrality as a normative belief about the value and importance of work in the configuration of one's life** .It is a function of one's past cultural conditioning or socialization. Work centrality is also defined as the beliefs that individuals have regarding the degree of importance work plays in their lives. It has connotation that work centrality rests on the assumption that individuals place work importance in their life sphere and attribute differing levels of importance to those life spheres. A developing economy like India can achieve its pinnacle of advancement if it can increase its productivity appreciably .Raising productivity for an economy is usually considered to be an issue of whether economy can encourage capital spending, i. e. increase capital, and input that complements labour .However , there are growing signals that productivity decisively getting affected by the employees attitude toward work , which inturn is clearly deermined by the manner in which their work places are organizes and run by management. Indian organizations need to focus on the following aspects nce of work values -

1. **Meaningful Work :** The first and perhaps most important challenge is to give people **"good work".** Jobs must give people enough autonomy to be creative and enough time to perform well. Organizations that empower employees out perform those who attempt to "reduce the cost of labour". Organizations should design jobs which give people autonomy, mastery and purpose.
2. **Great Management:** Management is one of the most important parts of any organization and companies have to develop and support great leadership. People thrive through coaching, feedback and opportunities to develop. Self awareness is very important competency for development of employees.
3. **Growth Opportunities:** Among the many reasons people leave organizations, one of the biggest is lack of opportunity. Organizations which invest more heavily in training, career development, and mobility outperform their peers. Employees stay excited, the business becomes more agile and innovative and high performers want to stay.
4. **An Inclusive, Flexible, Fun Environment :** Organizations that have ping pong table, subsidized quality food, vacation time, picnics, games / sports, gym, flexi hours of work, personalized work station, health and fun facilities on campus bus facility, free dry cleaning of uniform etc. have been found to enhance employee engagement with organization.
5. **Leadership People Trust :** The fifth element is inspirational leadership. While most organizations expect people to work hard, CEOs now realize that it is the soul of the business that inspires people to contribute, with a strong mission to relate and leaders trust employees to make the right decisions.

Building Ethical Work Values - Recent developments with regard to corruption, scans and unethical mindset of some organization have emphasized the need of the hour is to build ethical culture as part of business strategy. Organizations are evolving HR processes for monitoring ethical behaviour need to be implemented by aligning with performance appraisal system. Organizations are imparting ethics training to change perception and thinking with constant reviews of code of conducts and implement the policies properly.

Meaning of Work Team (MOW, 1987) studied work values in an international research project and came out with two major theoretical component of the work centrality construct - (1) the value orientation, and (ii) involvement or commitment of working. Considering that the concept of work centrality has been derived from work values, it is believed that work values or goals are an important determinant of centrality.

Tripathi (1990) in a scholarly article proposed that Indian organizations displays a mixed set of work values, characteristics of western and non-western societies. A belief in detachment is found to co-exist with materialistic orientation. Collectivism with Individualism and humanism with power orientation. To sustain this, results from two studies on member integration, carried out in form public sector organization and a multi national organization are discussed. Personal values and organizational values in the two types of organizations were analyzed. Factor analysis of these values in the public sector organizations yielded factors based on indigenous as well as universal values. The value clusters in the case of the multinational organization were largely based on universal values while in the public sector organization it was found to be associated with certain background variables such as the level of professional education, family's exposure to work organizations prior with experience etc. nurturance by superiors, organization expectation from universalism and peer leadership enhanced member integration with work values.

Singh (1990) studied by replicating using Hofstede's Value Survey Module (VSM) found that four dimensions of culture tend to vary considerably for different samples. Author studied the Indian managerial culture based upon a sample of 176 managers and analyzed variations in scores due to age, education, nature of job etc. The results show that considering the effective range of the scales, the Indian managers' scones are low on all four dimensions. Results also show that culture scores tend to vary selectively with age, education, nature of job and economic sector. Variations in power distance were related to preferred and perceived style of the superior, uncertainly avoidance to stress at work and employment stability, in individualism to the importance of the cooperative colleagues and desirable area for living.

Singh (2001) studied work values in five different automobile companies by taking a sample of 282 respondents based on non-probability incidental sampling consisted of all major departments. Average age and tenure of the sample was 39 and 12 years respectively. Oliver Nick Work Value Scale and Laworence Miller Work Culture

Questionnaire were used. It has been found that organizations do not make conscious efforts to socialize their employees, to develop congruence between the persons and the jobs, the personal work values may have deter mental impact on work culture.Organization factors, which can be managed by the company make a direct contribution to work culture and, therefor, should be given due consideration.

Stokes (2003) proposed that due to India's steadfast devotion to its culture and traditions, it has unfortunately fallen behind the globalization bandwagon. India is a country that has actively tried to resist much of its global cultural homogenization. But even there, among India's elites, the electronic field is fast at work. India has made significant attempts to accommodate the western culture and work values with regards to corporations entering. Indian managers showed focus on ethical quality of means used to achieve ends rather than simply on the achievements of ends. Indian managers feel moral wellness is more important than economic success, the author concludes that India should learn from China and need to examine how the workforce is affected by contradictory business and social cultures. A paradigm shift is necessary along with a complete change in the mindset of Indian employees so that Indian business can become competitive and foreign investors can enjoy the benefits of globalization in this country.

Sinha and Kumar (2004) in a scholarly article attempted to understand Indian cultural ethos and concluded that Indians are basically collectivists, but they have a well protected secret self. Indian culture is indeed a complex one. Indian cultural traditions can be traced back at least five thousand years. The authors have identified following key factors which has influenced Indian culture - immigrations, inventions, colonial rule and modernization. These have brought with them streams of alien influences, only parts of which were assimilated into the primordial Indian world views; the remaining ones co-exist within the overarching Indian world views. The authors have concluded with some proposals about the best way to understand the complexity that constitutes Indian cultural reality.

Chatterjee(2006) in an empirical study suggested a strong causal link connecting the work cultural orientation , market responsiveness orientation and level of competency to the goal of building social capital, security and empowering climate in work organization. It is revealing that strategic tension brought about by the reform imperatives linked to the meaningfulness variables. The new outward looking culture of corporate governance has brought about a mindset change for external context. Perhaps the most striking implication of the study lies in the area of complete lack of linking with any of the work goals with reform orientation of social vision. The author concludes that in coming years organizations need to give more emphasis on work values than competency building.

Mazumdar (2010) in a in depth study of eleven banks 500 employees in the officers cadre studied the work values of public sector bank employees. This study was aimed to present the existing values in public sector banks and it depicts how" active inertia" has set into the Indian banking industry. The indicate that the need for achievement and advancement appears to be high among the top management, young officers(Gen Y) aged below the 41 years and those having proximity to head office. The challenge lies in how to motivate the middle management to develop work value high on achievement.

Effective organizations aim to create new work values and enable the individuals to develop a psychological contract with the organization.

As a part of doctoral work, **Agarwal (2010)** conducted a rare study on 322 top management team members (perspective CEO's) and 53 chief executive officers representing 67 organizations from across 7 industry sectors of India to examine the merit of value base organization. Findings of this study confirmed the significant impact of leadership on organization effectiveness of business results. He argued that time has cone now to see beyond value based leaderships as the value framework is also dependent on many factors and is dynamically changing. The author advocated in favour of a strategic leadership framework of value based leadership. It revealed that leadership has significant impact on some non-tangible measures of organization effectiveness such as job satisfaction , engagement , ownership, engagement and organization citizenship behaviour.

Jhunjhunwala (2012) reviewed Indian work culture with work culture in USA. The concept of work culture has been defined as the rules, regulations, policies, practices, traditions, rituals, values and beliefs of the organizations. The business culture in India is reflection of the various norms and standards followed by employees. In the United States work environment is professional and causal. Today's companies have a world of opportunities. The challenge lies in accessing them. Technology has made it possible to expand with international markets thereby employees to work across the world. This eliminated the huge gap between the work culture of India and other countries to some extent. The author found differences in work culture in India and USA with regard to working hours, work life balance, relationship between boss and subordinates, performance appraisal, accepting changes etc. The author raises challenges that are being faced by India off shore teams in working with Americans - language barrier, hierarchy in Indian organizations, indirect communication style, time orientation, hard work vis-a-vis smart work etc.

Morris (2012) in a thought provoking article has analyzed sociologically the Indian values with regard to various attributes like cooperation which is highly valued than competition, greater emphasis on personal orientation than task orientation, high emphasis on modesty, value is placed on respect for an individual's dignity and personal autonomy, placidity is valued, as the ability to remain quiet and still, silence is comfortable, to have patience and ability to most quietly is considered a good among Indians, generosity and

sharing are greatly valued, acquiring material goods merely for the sake of ownership of status is not as important as being a person, indifference to saving for future, puritan work ethic is foreign to most Indians, talking for the sake of talking is discouraged, being a good listeners valued, have sharp observation skills and not fine details and permissive child rearing practices. The author concluded that these values, attitudes and behaviour have great impact in developing work place values in Indian Organizations.

Satyawadi and Ghosh (2012) conducted a study in public and private sector enterprises to understand employees motivation and work values. Results indicated that employees in public sector enterprises are motivated to a greater extent by achievement and self control as compared to those in the private sector, they also value pride in work, job involvement, activity preference and upward striving more than employees in the private sector enterprise who value earnings and are motivated by financial gains

Pandey et al. (2013) have found that congenial OCTAPACE (stands for **O**penness, **C**onfrontation, **T**rust, **A**uthencity, **P**roaction, **A**utonomy, **C**ollaboration and **E**xperimentation, Pareek (1992)) is extremely important for promoting the organization effectiveness and good governance. In this context, the present paper is an endeavour to identify the major factors responsible for non-promoting of organization effectiveness among the employees about the prevailing OCTAPACE values. Based on 40 employees data, the authors found that Accenture had entrepreneurial culture which supports openess. It was also found that their values of trust and confrontation were equally supported by beliefs.

Vijaylakshmi (2013) in a descriptive research of the respondents from selected IT industries in Bangalore assessed the organization culture by using OCTAPACE questionnaire. The IT organizations are found to be significantly valued among the respondents for the following attributes such as openness and authenticity whereas other attributes of the OCTAPACE culture were found to be relatively low valued. These attributes represent mainly in terms of freeness to express one's opinions in the work environment.

Rai (2014) addressed the most important issues of human resource management that Indian organizations are bracing due to their growth and change in economic condition. The organizations are at cross roads to brace the crucial challenge of human resource management of organizations in the era of growth to develop and retain worthy and suitable talent. The author highlights the shift in work values which have come across generations and the need of effective successions and career progression planning and understanding work values of employees are the area where spectrum of Indian Organization be multinational or public sector need to emphasize if they want to address the challenge of retaining talent.

The above studies conclusively indicate that Indian organizations need to institutionalize employees work values processes which may significantly contribute to the business effectiveness. Available literature shows that work values are foundation stone for developing sustainable organizational processes and organizations need to work on it .

References :-

1. **Rai Sumita (2014)** Retaining Talent and Understanding Work Values : Indian Experience. Review of Contemporary Business Research, Vol.3, No.2, 87-95
2. **Vijaylakshmi, S (2013)** Impact of OCTAPACE Culture - A Study of Selected IT Organizations in Bangalore, MP Birla Institute of Management Journal, 73-88.
3. **Pandey, Kali Prasad et al. (2013)** A Study of OCTAPACE Culture of Accenture FORE School of Management, 1-17.
4. **Satyawadi, Rachita and Ghosh, Piyali (2012)** Motivation and Work Values in Indian Public and Private Sector Enterprises: A Comparative Study. International Journal of Human Resource Development and Management, Vol. 12, No. 3, 237-253.
5. **Morris, Joan S. (2012)** Indian Values, Attitudes and Behaviours and Educational Considerations. Healing Ourselves and Mother Earth Cultural Awareness.
6. **Jhunjhunwala, Soniya (2012)** Review of Indian Work Culture and Challenges Faced by Indians in the Era of Globalization. Interscience Management Review, Vol. 2, No. 2, 67-70.
7. **Agrawal, A(2010)** Examining Impact of Strategic Leadership on Effectiveness of Business Organizations. Unpublished Doctoral Thesis. Shailesh J. Mehta School of Management, Indian Institute of Technology, Mumbai
8. **Mazumdar, Deepa(2010)** Managerial Work Values in Public Sector Banks in India- an Exploratory Study in (Ed) Verma, Subir 196-216
9. **Chatterjee , S.R and Pearsob, C.A.L(2006)** Work Goals and Social Value Orientation of Senior Managers Sinha and Kumar (2004)
10. **Tevruj, S and Trugnt, T (2004)** Calisma Amaclarinin Tesbiti ve Calisma Amaclari Testimin Gelistirulmesi Oneri Dergisi, Vol 6, No,22,33-44Elizur (1964)
11. **Stokes, Pam D. (2003)** The Corporate and Work Culture of India http//www.sixsmart.com/SS Papers
12. **Singh, Kavita (2001)** Work Values and Work Culture in Indian Organizations - Evidence from Automobile Industry Delhi Business Review, Vol. 2, No. 2, July-Dec Singh (1990)
13. **Tripathi, R.C.(1990)** Interplay of Values in the Functioning of Indian Organizations. International Journal of Psychology, Vol.25, No.3-6 , 715-734
14. **Nord, W.R. et al. (1990)** Studying Meaning of Work-The case of Work Values in Meaning of - A Collection of Essays, Lexington
15. **Meaning of Work Research Team (1987)** The Meaning of Working – An Eight Country Comparative Study. London : Academic Press
16. **Rokeach, M.(1973)** The Nature of Human Values. New York : Free Press
17. **Ginzberg, et al .(1951)** Occupational Choice – An Approach to General Theory New York : Columbia University, Press

मध्यप्रदेश की कृषि उपज मण्डियों का कृषकों की आर्थिक उन्नति में योगदान - इन्दौर संभाग के विशेष सन्दर्भ में (2001 से 2010 तक)

प्रो. राजेश जैन *

शोध सारांश – भारत में हरित क्रान्ति मेहनतकश मजदूरों एवं किसानों के गाढ़े पसीने से आई है। धरती पुत्र ने नंगी छाती, ठिठुरती देह से अपनी थोड़े रकबे की खेती से सीमित सिंचित साधनों से अनाज उत्पन्न किया, जिसे वह सिर के बल से या बैलगाड़ी से बाजार में बेचने लाता तो उसका शोषण किया जाता है। शोध का उद्देश्य कृषि उपजों के मूल्य निर्धारण एवं उनकी प्रवृत्तियों , कृषकों की बचत, विनियोग एवं ऋणग्रस्तता , उनकी कृषि उपज मण्डियों से संबंधित समस्याओं का अध्ययन एवं इसे दूर करने हेतु सुझाव देना है । शोध अध्ययन से ज्ञात होता है कि कृषकों द्वारा आधुनिक तकनीकों का प्रयोग किए जाने से उपजों के उत्पादन में वृद्धि हुई हैं। इससे मण्डियों में आने वाली उपजों की आवकों व मण्डी आयों में भी बढ़ोत्तरी हुई हैं। शासन द्वारा न्यूनतम समर्थन मूल्य घोषित करने व मण्डियों द्वारा आधारभूत सुविधाएँ प्रदान किए जाने से कृषकों द्वारा बड़ी मात्रा में उपजें मण्डियों में विक्रयार्थ लायी जाने लगी हैं। इससे मण्डियों की आयों एवं कृषकों की आय-बचतों में निरंतर वृद्धि हुई हैं। वर्ष 2001-02 में संभाग के सर्वेक्षित कृषकों द्वारा चल-अचल संपत्तियों में विनियोग का सूचकांक 100 था, वह 2005-06 में बढ़कर 118.34 हो गया। वर्ष 2010-11 में यह बढ़कर 129.64 हो गया जो वर्ष 2001-02 की तुलना में लगभग 30 प्रतिशत अधिक रहा। कृषकों द्वारा अनुत्पादक व्ययों पर नियंत्रण कर अपनी बचतें प्रतिभूतियों, जमा योजनाओं, सहायक व्यवसायों में विनियोग करनी चाहिए, जिससे आयों में वृद्धि होगी व ऋणों पर निर्भरता कम हो सकेगी। मण्डियों को मूलभूत सुविधाओं का विकास करने, भ्रष्टाचार की रोकथाम हेतु नियमों का कड़ाई से पालन किए जाने की आवश्यकता हैं। जिससे कृषकों को असुविधाएँ नहीं होगी। संस्थागत स्त्रोतों द्वारा दूरस्थ क्षेत्रों में अपने व्यवसाय का विस्तार किया जाना चाहिए। जिससे कृषक, साहूकारों द्वारा बिछाये गये ऋण रूपी मकड़जाल से बच सकेंगे।

शब्द कुंजी – विनियोग, आवकों, न्यूनतम समर्थन मूल्य प्रतिभूतियां, संस्थागत स्त्रोत।

प्रस्तावना – भारत एक कृषि प्रधान देश है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का स्थान सर्वोपरि है। देश की आर्थिक क्रियाओं में विशालतम क्षेत्र होने के कारण खाद्य पदार्थ, कच्चा माल, जनसंख्या के बड़े भाग को रोजगार तथा राष्ट्रीय आर्थिक विकास को गति प्रदान करने में कृषि एक निर्णायक भूमिका वहन करती हैं। म.प्र. राज्य में, कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972, 15 जून 1973 को प्रभावशील हुआ। वर्तमान में म.प्र. में 10 संभाग एवं 50 जिले है, जिनमें 241 मण्डियाँ कार्यरत् हैं, जिनके अधीन 276 उपमण्डियाँ कार्यरत हैं। इन्दौर संभाग भी मालवा क्षेत्र के अंतर्गत आता हैं, जिसमें इन्दौर, धार, झाबुआ, अलीराजपुर, खरगोन, खंडवा, बड़वानी, बुरहानपुर जिले सम्मिलित है। वर्तमान में कृषि उपज के विपणन के लिए इन्दौर संभाग में 32 कृषि उपज मण्डियाँ कार्यरत् हैं।

शोध का उद्देश्य –

1. कृषि उपज मण्डियों के इतिहास, प्रशासनिक स्वरूप, कार्यो, उद्देश्यों एवं वर्तमान स्थिति का अध्ययन करना।
2. कृषि उपज मण्डियों के प्रावधानों एवं अधिनियमों का अध्ययन करना।
3. इन्दौर संभाग की मण्डियों में कृषि उपजों की आवकों एवं मण्डियों के वार्षिक विवरणों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. कृषकों की बचत, विनियोग एवं ऋणग्रस्तता का अध्ययन करना।
5. कृषकों की कृषि उपज मण्डियों से संबंधित समस्याओं का अध्ययन एवं इसे दूर करने हेतु सुझाव देना।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – किसी भी शोध के विशाल भवन का निर्माण संकलित समंकों की नींव पर होता है। अत: प्रस्तुत शोध विषय मध्यप्रदेश की कृषि उपज मण्डियों का कृषकों की आर्थिक उन्नति में योगदान - इन्दौर संभाग के विशेष संदर्भ में (2001 से 2010 तक) के मुख्य स्त्रोत प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों पर आधारित हैं। प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसंधान विधि का प्रयोग करते समय 300 कृषकों का चयन न्यादर्श की देव निदर्शन प्रणाली से किया गया तथा प्रश्नावली के माध्यम से तथ्य एकत्रित किए गए।

शोध व्याख्या –

1. उत्पादन लागत – संभाग के सर्वेक्षित कृषकों द्वारा उपजों की उत्पादन लागत में उन सभी व्ययों को सम्मिलित किया जाता हैं, जिनका संबंध फसलों के उत्पादन से हैं। इनमें बीजों का क्रय, सिंचाई पर व्यय, खाद-उर्वरकों-कीटनाशकों पर व्यय, खेतिहर मजदूरों को भुगतान की गई मजदूरी व अन्य व्यय प्रमुख हैं। तालिका क्रमांक 1 में उपजों की उत्पादन लागत को दर्शाया गया हैं।

तालिका क्रमांक 1
उत्पादन लागत

वर्ष	उत्पादन लागत (रु.)	सूचकांक
2001-02	36354540	100.00
2002-03	35173018	96.75
2003-04	40295372	110.84
2004-05	43403685	119.39
2005-06	41182423	113.28
2006-07	43829037	120.56
2007-08	46602884	128.19

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) आई.पी.एस. एकेडमी, इन्दौर (म.प्र.) भारत

2008-09	42694771	117.44
2009-10	45432268	124.97
2010-11	47599000	130.93

स्त्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त आंकडों पर आधारित

(ग्राफ देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

विश्लेषण – तालिका क्रमांक 1 के समंकों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि संभाग के सर्वेक्षित कृषकों द्वारा वर्ष 2001-02 में तैयार की गई फसलों की उत्पादन लागत का सूचकांक 100 था, जो वर्ष 2005-06 में बढ़कर 113.28 हो गया। वर्ष 2010-11 में यह बढ़कर 130.93 हो गया, जो वर्ष 2001-02 की तुलना में लगभग 31 प्रतिशत अधिक रहा। इसका कारण खाद-बीज-उर्वरकों की कीमतों में वृद्धि होना, मजदूरी की दरों का बढ़ना, बिजली की दरों व डीजल की कीमतों में बढ़ोत्तरी होना रहा हैं।

2. **उत्पाद का विक्रय –** संभाग के कृषकों द्वारा खेतों में उगाई गई गेहूँ, सोयाबीन, कपास, चना, मक्का, मटर, अलसी व अन्य उपजों को विक्रयार्थ मण्डियों में लाया जाता हैं। मण्डियों में ये उपजें शासन द्वारा निर्धारित न्यूनतम समर्थन मूल्यों या प्रचलित दरों पर व्यापारियों को बेची जाती हैं। तालिका क्रमांक -2 में संभाग के सर्वेक्षित कृषकों द्वारा उत्पाद के विक्रय को दर्शाया गया हैं।

तालिका क्रमांक- 2
उत्पाद का विक्रय

वर्ष	उत्पाद का विक्रय (रु.)	सूचकांक
2001-02	44136069	100.00
2002-03	43549059	98.67
2003-04	51100740	115.78
2004-05	53682700	121.63
2005-06	52486613	118.92
2006-07	54900856	124.39
2007-08	58016862	131.45
2008-09	53351680	120.88
2009-10	56608922	128.26
2010-11	60656200	137.43

स्त्रोत – व्यक्तिगत सर्वेक्षण पर आधारित

(ग्राफ देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

विश्लेषण – तालिका क्रमांक 2 के समंकों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2001-02 में संभाग के सर्वेक्षित कृषकों द्वारा उपजों के विक्रय से होने वाली आगमगत प्राप्तियों का सूचकांक 100 था, जो वर्ष 2005-06 में बढ़कर 118.92 हो गया। वर्ष 2010-11 में यह बढ़कर 137.43 हो गया, जो वर्ष 2001-02 की तुलना में 37 प्रतिशत अधिक रहा। इसका कारण कृषि उपजों के उत्पादन में वृद्धि होना, कृषकों द्वारा बड़ी मात्रा में उपजों को विक्रयार्थ मण्डियों में लाना, उपजों के न्यूनतम समर्थन मूल्यों व बिक्री मूल्यों में वृद्धि होना रहा हैं।

3. **चल-अचल संपत्तियों में विनियोग –** संभाग के कृषकों द्वारा फसलों के विक्रय से प्राप्त अतिरेक मूल्य या बचतों का विभिन्न चल-अचल संपत्तियों में विनियोग किया जाता हैं। चल-अचल संपत्ति के विनियोगों में कृषि भूमि-भवन के क्रय; ट्रेक्टर, मशीनों व उपकरणों का क्रय, कुँए-नलकूपों का निर्माण, पशुधन का क्रय, दोपहिया-चारपहिया वाहनों का क्रय शामिल हैं। तालिका क्रमांक 3 में संभाग के सर्वेक्षित कृषकों द्वारा चल-अचल संपत्तियों में विनियोग को दर्शाया गया हैं।

तालिका क्रमांक- 3
चल-अचल संपत्तियों में विनियोग

वर्ष	चल-अचल संपत्तियों में विनियोग (रु.)	सूचकांक
2001-02	191960675	100.00
2002-03	180769367	94.17
2003-04	210830409	109.83
2004-05	241467333	125.79
2005-06	227166262	118.34
2006-07	234345592	122.08
2007-08	256286697	133.51
2008-09	206760843	107.71
2009-10	243540508	126.87
2010-11	248857820	129.64

स्त्रोत – व्यक्तिगत सर्वेक्षण के आधार पर।

(ग्राफ देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

विश्लेषण – तालिका क्रमांक 3 के समंकों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2001-02 में संभाग के सर्वेक्षित कृषकों द्वारा चल-अचल संपत्तियों में विनियोग का सूचकांक 100 था, वह 2005-06 में बढ़कर 118.34 हो गया। वर्ष 2010-11 में यह बढ़कर 129.64 हो गया, जो वर्ष 2001-02 की तुलना में लगभग 30 प्रतिशत अधिक रहा। इसका कारण कृषकों द्वारा कृषि व्यवसाय में आधुनिक तकनीके अपनाने से बचतों व विनियोगों में वृद्धि होना, प्रॉपर्टी व जमीन के भावों में निरन्तर वृद्धि होना, म्यूचल फण्डों व अंशों पर अच्छा रिटर्न मिलना, भविष्य में जोखिम से बचने की मानसिकता का होना; नित नए संयंत्रों, उपकरणों, वाहनों की बाजारों में उपलब्धता रहा हैं।

निष्कर्ष एवं परिणाम –

- कृषकों द्वारा संभाग की मण्डियों में विक्रयार्थ लाई जाने वाली उपजों की आवकों में 55.68 प्रतिशत की वृद्धि हुई।
- इन्दौर संभाग की कृषि उपज मण्डियों के सदस्यों की संख्या में निरंतर बढ़ोत्तरी हुई। कृषक 19.64 प्रतिशत, व्यापारी 20.54 प्रतिशत, आढ़तियाँ 19.42 प्रतिशत, प्रसंस्करणकर्त्ता 17.52 प्रतिशत, भाण्डागारिक 20.29 प्रतिशत, तुलावटी 21.64 प्रतिशत व हम्माल 21.17 प्रतिशत से बढ़े।
- शोध अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि संभाग की मण्डियों द्वारा कृषि उपजों की विपणन प्रक्रिया में निरंतर सुधार किये जाने से उपजों का विपणन 58.79 प्रतिशत से बढ़ा।
- शोध अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि संभाग के कृषकों को विभिन्न स्त्रोतों द्वारा प्रदत्त ऋणों में 593.26 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इनमें 613.49 प्रतिशत संस्थागत स्त्रोतों एवं 513.21 प्रतिशत गैर-संस्थागत स्त्रोतों का बढ़ा।
- कृषि भूमि क्रय करने तथा भवनों के क्रय या निर्माण पर किये गये व्यय 26.53 प्रतिशत से बढ़े। पशुधन क्रय करने के व्ययों में 24.13 प्रतिशत की वृद्धि हुई। कृषकों द्वारा ट्रेक्टर व अन्य वाहनों के क्रय, थ्रेशर मशीन एवं कृषिजनित औजारों के क्रय, कुँए व नलकूपों के निर्माण में क्रमशः 32.18, 29.73 व 26.71 प्रतिशत की वृद्धि हुई। पेटेन्ट अधिकार प्राप्त करने तथा शोध व अनुसंधान पर किये गये व्यय 18.74 प्रतिशत से बढ़े।

- कृषि उपजों की उत्पादन लागत 30.93 प्रतिशत से बढ़ी। सर्वेक्षित कृषकों द्वारा बीजों के क्रय एवं सिंचाई पर व्यय 2923630 रु. से बढे। खाद, उर्वरकों एवं कीटनाशकों के व्ययों में 25.70 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हुई। कृषकों द्वारा चुकाए गए मजदूरी, मण्डी शुल्कों व करों के भुगतानों में 29.23 प्रतिशत की वृद्धि हुई। स्थायी संपत्तियों के रख-रखाव पर व्ययों के भुगतान का सूचकांक बढ़कर 127.54 हो गया। ऋणों पर चुकाया गया ब्याज व अन्य व्यय क्रमश: 28.92 व 26.65 प्रतिशत से बढ़े।
- शोध अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि संभाग के कृषकों द्वारा कृषि भूमि या भवन के विक्रय से प्राप्त प्रतिफल 31.47 प्रतिशत से बढ़े। पुराने ट्रेक्टरों व मशीनों को बेचने व पशुधन के विक्रय से प्राप्त होने वाली राशि क्रमश: 27.12 व 30.70 प्रतिशत से बढ़ी।
- शोध अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि कृषि की आधुनिक तकनीकों के प्रयोग से सर्वेक्षित कृषकों को होने वाली बचतों में 596518 रु. की वृद्धि हुई। उन्नत बीजों, मशीनों एवं ट्रेक्टरों के प्रयोग से कृषकों की बचतों में 63.58 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हुई।
- शोध अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि सीजनल दिनों में उपजों की आवक बढ़ने से औसत मूल्यों में कमी होने, प्राकृतिक आपदाओं व भूमि अधिग्रहण के बदले मिलने वाले मुआवजे में देरी होने से कृषकों को आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा।

सुझाव -नियमों को अधिक सरल व प्रभावपूर्ण बनाना - शोध से ज्ञात हुआ कि शासन द्वारा निर्धारित विभिन्न नियमों व प्रावधानों को सरलतम भाषा में व्यक्त किया जाना चाहिए जिससे कृषकों को उन्हें समझने में आसानी हो सकें। शासन द्वारा मण्डी समिति गठन संबंधी प्रावधानों में संशोधन कर समिति के कुल सदस्यों व कृषकों का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्यों की संख्या को बढ़ाया जा सकता हैं।

नीलामी प्रक्रिया को पारदर्शी बनाना व उपजों के विक्रय प्रतिफल की राशि कृषकों के खातों में जमा करवाना - शोध के दौरान पाया गया कि मण्डी समितियों द्वारा अधिकारियों-कर्मचारियों को पक्षपातरहित व्यवहार करते हुए अपने कर्त्तव्यों का ईमानदारी से निर्वाह करने संबंधी दिशा-निर्देश दिए जा सकते हैं।

आय के अन्य विकल्पों पर ध्यान दिया जाना - शोध के दौरान पाया गया कि कृषकों द्वारा पशुपालन, कुक्कुटपालन, मत्स्यपालन जैसे सहायक व्यवसायों में विनियोग व संचालन; स्थायी संपत्तियों को किराए पर देकर म्युचल फण्डों, शेयरों व अन्य बचत योजनाओं में विनियोग कर आयों व बचतों की राशियों को बढ़ाया जा सकता हैं।

मूलभूत सुविधाओं का विकास करना - शोध से ज्ञात हुआ कि मण्डी व उपमण्डी समितियों द्वारा मण्डी प्रांगणों में मूलभूत सुविधाओं यथा उपजों को रखने के लिए चबूतरों, तौलकांटों, वाहनों की पार्किंग, केन्टीन, पीने का पानी, शौचालयों, विश्रामगृहों की व्यवस्था चाक-चौबंद रखी जानी चाहिए जिससे कृषकों को अनावश्यक रूप से परेशानी नहीं उठानी पड़े।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम एवं नियम , **लेखक .** डॉ. राधेश्याम द्विवेदी , **प्रकाशक** सुविधा लॉ हाउस प्रा. लि., भोपाल, **वर्ष** 2010
2. भारतीय अर्थव्यवस्था , **लेखक .** मिश्र व पुरी , **प्रकाशक .** हिमालया पब्लिशिंग हाउस मुम्बई , **वर्ष** 2011
3. कृषि विस्तार समीक्षा , **प्रकाशक .** विस्तार निदेशालय, कृषि मंत्रालय, कृषि विस्तार सदन, नई दिल्ली , **वर्ष** 2007- 2011
4. बिजनेस भास्कर , **प्रकाशक .** मेसर्स डी. बी. कार्प लिमिटेड, इन्दौर , **वर्ष** 2008 - 2011

- **वेबसाइट -**

1. http://agricoop.nic.in/
2. www.indiaagristat.com
3. http://www.indg.in/agriculture/
4. http://agmarknet.dac.gov.in/

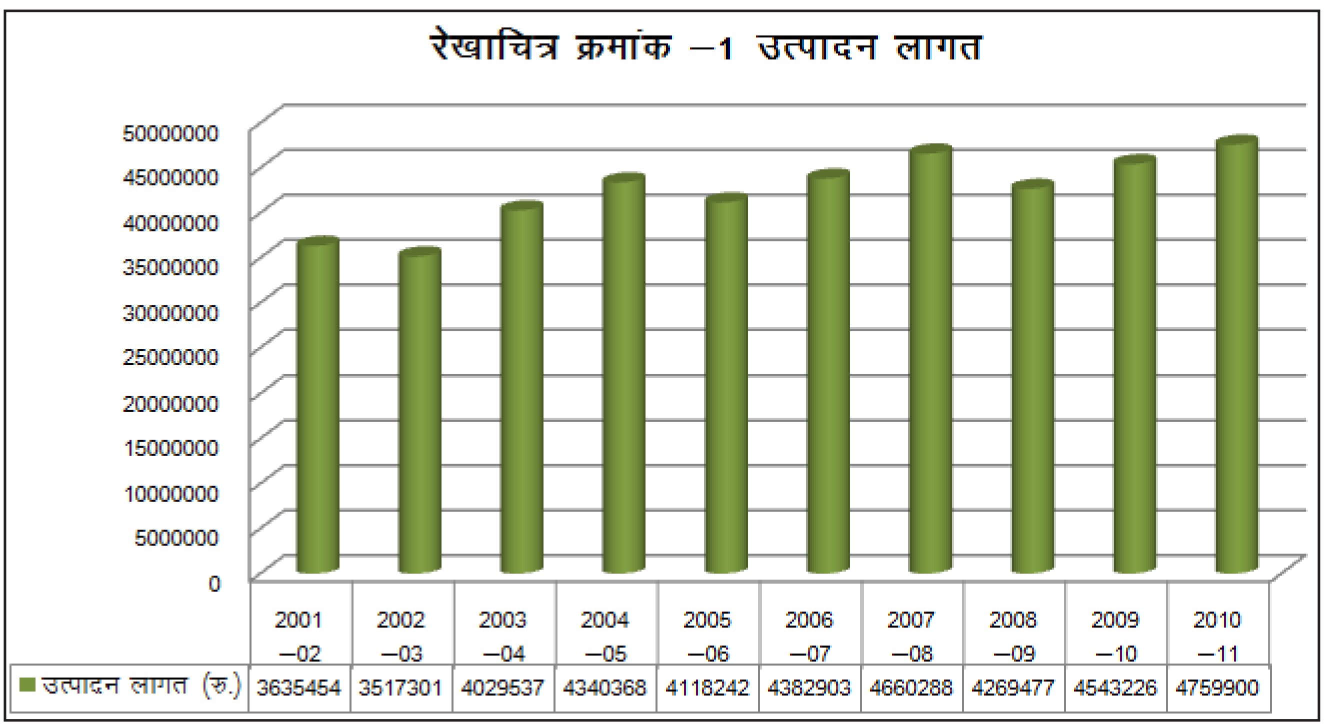

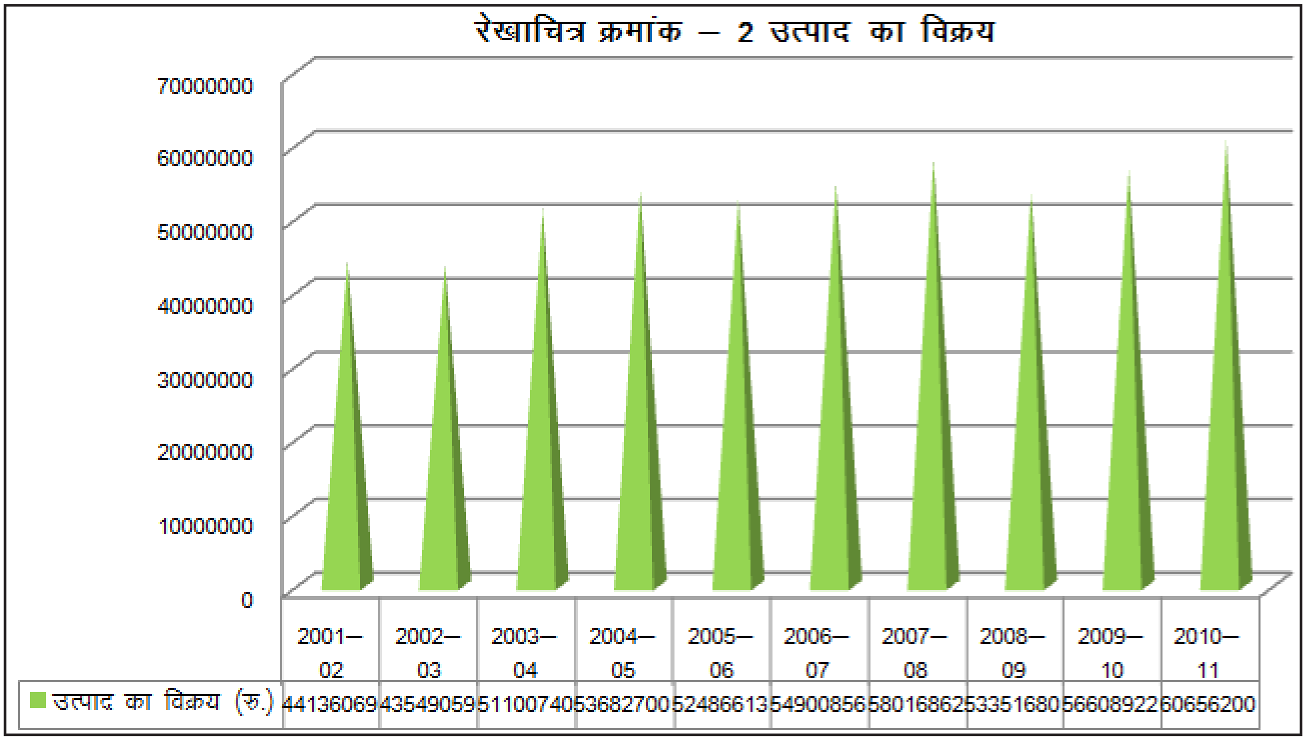
रेखाचित्र क्रमांक – 2 उत्पाद का विक्रय
70000000
60000000
50000000
40000000
30000000
20000000
10000000
0
2001–02
2002–03
2003–04
2004–05
2005–06
2006–07
2007–08
2008–09
2009–10
2010–11
उत्पाद का विक्रय (रु.)
44136069
43549059
51100740
53682700
52486613
54900856
58016862
53351680
56608922
60656200

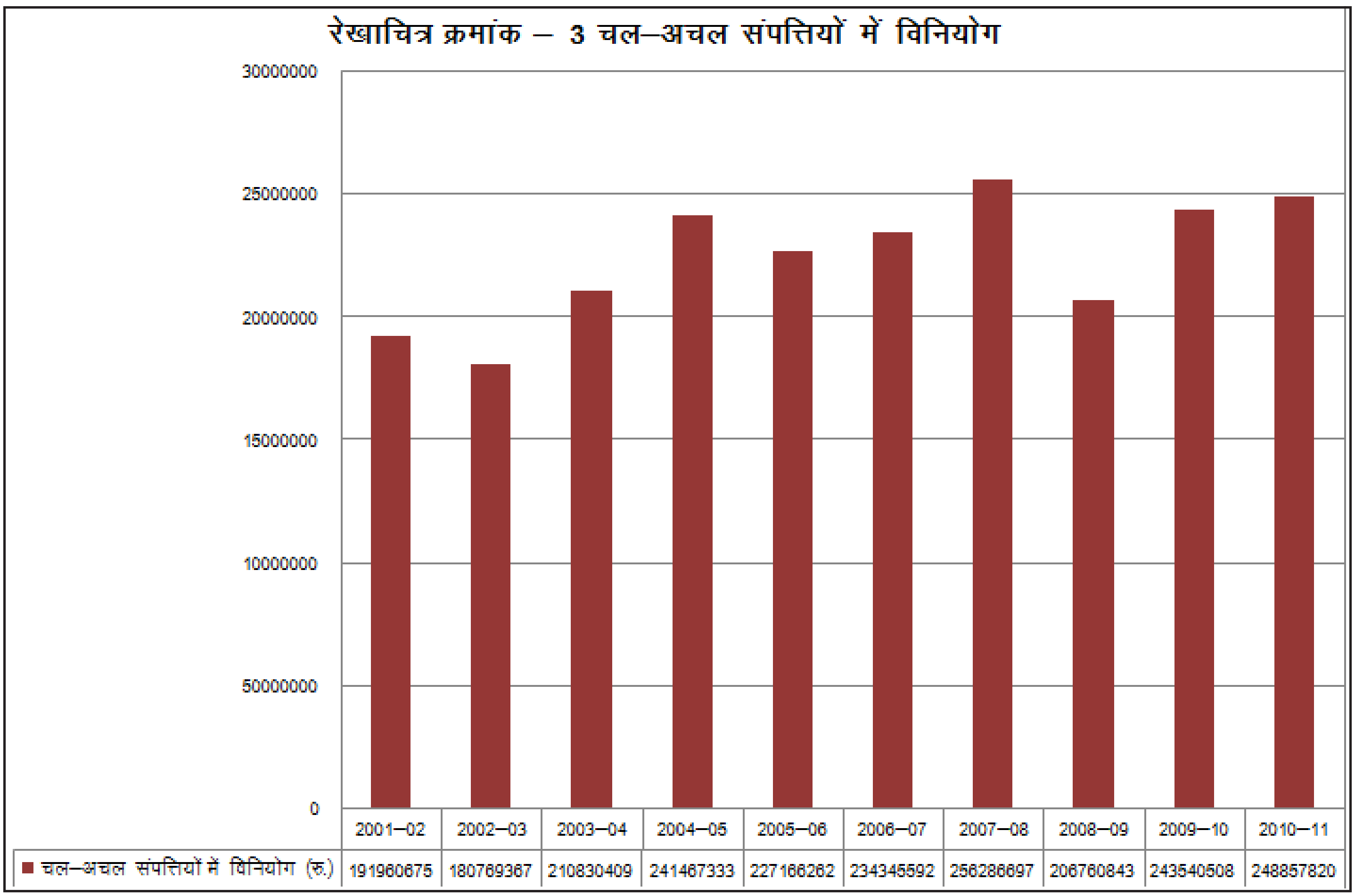
रेखाचित्र क्रमांक – 3 चल–अचल संपत्तियों में विनियोग
30000000
25000000
20000000
15000000
10000000
50000000
0
2001–02
2002–03
2003–04
2004–05
2005–06
2006–07
2007–08
2008–09
2009–10
2010–11
चल–अचल संपत्तियों में विनियोग (रु.)
191960675
180769367
210830409
241467333
227166262
234345592
256286697
206760843
243540508
248857820

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. I

मध्यप्रदेश में जिला गरीबी उन्मूलन परियोजना का सामान्य अध्ययन

डॉ. व्ही. के. शुक्ल * नितेश मिश्रा **

शोध सारांश – शोध पत्र के शोध शीर्षक संदर्भ में मध्यप्रदेश सरकार के ग्रामीण विकास विभाग की एक महत्वाकांक्षी विश्व बैंक की वित्त पोषित परियोजना है। जिसमें आर्थिक मूर्तियों और सामाजिक पृष्ठभूमि के साथ– साथ गरीब से गठित समूहों के आर्थिक और सामाजिक विकास से सीधा संबंध है। परियोजना के क्षेत्र में मध्यप्रदेश के 14 जिलों में संचालित छतरपुर, दमोह, सागर, पन्ना, रायसेन, विदिशा, गुना, टीकमगढ़, सीधी, नरसिंहपुर, राजगढ़, रीवा, शाजापुर, और शिवपुरी 53 ब्लॉक और 9753 गांवों को कवर कर लाभान्वित किया। यह योजना 2001 को शुरू की गई थी। सरकार द्वारा मानव विकास रिपोर्ट के आधार पर चयन की गई है। परियोजना के धन रैंकिंग प्रक्रिया की भागीदारी विधि द्वारा चयनित गरीबों और अत्यंत गरीब परिवारों के साथ बी.पी.एल परिवारों में जोड़ना इस परियोजना का लक्ष्य है। शोध सारांश में परियोजना के मूल्यांकन की स्थिति हेतु भौतिक एवं वित्तीय प्रगति का मूल्यांकन, प्रक्रियात्मक मूल्यांकन, परिणात्मक मूल्यांकन, विषय विशेष अध्ययन, सहकर्मी समीक्षा, प्रभावात्मक मूल्यांकन, आदि पहलुओं का अध्ययन कर परियोजना की वास्तविक स्थिति का मूल्यांकन किया गया।

शब्द कुंजी :– 1. डी.पी.आई.पी (Distict Poverty Initiatives Project) जिला गरीबी उन्मूलन परियोजना, 2. एस.एच.सी (Self Help Group) :– स्व– सहायता समूह, 3. व्ही.डी.सी :– ग्राम उत्थान समिति, 4. पी.एफ.टी :– परियोजना सहयोग इकाई, 5. प्लान :– योजना

प्रस्तावना – भारत वर्ष में कमजोर वर्गो को आर्थिक सहायता पहुँचाने, उनकी क्रय शक्ति में वृद्धि करने एवं उनका आर्थिक दृष्टि से उत्थान करने के लिये संचालित योजनाओं का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इस संदर्भ में जहॉ ग्रामीण एवं नगरीय गरीबी विकराल रूप धारण किये है। ऐसी विकराल समस्यों के निदान हेतु ऐसे कार्यक्रमों का संचालन बहुत ही आवश्यक है। भारत सरकार देश में इस समय मनरेगा एवं मध्यप्रदेश में जिला गरीबी उन्मूलन परियोजना, स्वर्ण जंयती ग्राम स्वरोजगार योजना, इंदिरा आवास योजना, मध्यप्रदेश ग्रामीण आजीविका परियोजना, एवं नवीन योजना, मुख्यमंत्री आवास योजना आदि अनेकानेक योजना मध्यप्रदेश में संचालित है इन कार्यक्रम के कुशल प्रबंधन के लिये अनेक एजेंसिया कार्यरत है गांवों में ग्राम पंचायतें इस हेतु अंतिम इकाई के रूप में कार्य कर रही है।

इस संदर्भ में यदि हम भारवर्ष के मध्यप्रदेश राज्य की ओर नजर डाले तो यह बात स्पष्ट होती है कि यहॉ साधनों के होते हुऐ भी उनका ढोहन करने की न तो कोई विधि है और न ही कोई ऐसे कुशल उद्योग स्थापित हो सके, जिससे मध्यप्रदेश की नींव को बेहतर मजबूती प्राप्त हो सकें। लेकिन पिछले गतवर्षो में 1999, 2001 से मध्यप्रदेश शासन एवं पंचायत ग्रामीण विकास विभाग द्वारा मध्यप्रदेश में जिला गरीबी उन्मूलन परियोजना का क्रियान्वयन हुआ। जिसमें विश्व बैंक के सहयोग से राज्य के चयनित 14 जिलों में डी.पी.आई.पी जिला गरीबी उन्मूलन परियोजना का शुभांरभ किया गया।

इस संबंध में जेत्र. हेन. ही स्पेन केपर ने लिखा है कि जिस प्रकार एक भवन निर्माण पत्थरों से होता है। उसी भांति विज्ञान का निर्माण तथ्यों से होता है। पर केवल तथ्यों का एक सकंलन उसी भांति विज्ञान नहीं है। जैसे कि पत्थरों का ढ़ेर भवन नहीं है। प्रस्तुत शोध पत्र में प्रस्तुत किये गये विचारों का विश्लेषण किया है। विश्लेषण कार्य में आवश्यकतानुसार प्रतिशत, अनुपात, सूचकांक, तथा सहसंबंध का प्रयोग किया जाता है। अध्ययन के दौरान जहॉ–जहॉ बहुअर्थक सूचनाएं मिली है। वहां उनका उचित निर्वचन किया गया है। ताकि शोध पत्र के परिणाम सही एवं सार्थक हो। अध्ययन में प्रयुक्त संमकों सारणीयों तथा उनसे प्राप्त निष्कर्षो को विभिन्न रूप में प्रदर्शित करना प्रस्तुतीकरण कहलाता है। प्रस्तुतीकरण जितना अधिक प्रभावी तथा आकर्षक होगा, वह उतना ही शीध्रता से अध्ययन से रूचि रखने वाले व्यक्ति को प्रभावित कर सकेगा। इसी बात को ध्यान में रखते हुऐ शोध पत्र में प्रयुक्त विभिन्न तथ्यों को समहित कर प्रस्तुत कर प्रस्तुतीकरण को प्रभावी तथा आकर्षक बनाने का प्रयास किया गया है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शीर्षक के उद्देश्य के अंतर्गत इस तथ्य का अध्ययन किया गया कि मध्यप्रदेश में आर्थिक व प्राकृतिक साधनों की सम्पन्नता के वाबजूद भी राज्य विकास की प्रगति पर अग्रसर है। इस प्रदेश के लोग अपेक्षाकृत अधिक निर्धन है। यद्यपि आर्थिक विकास की योजनाओं के माध्यम से इस प्रदेश का विकास करने का प्रयत्न किया गया है। लेकिन आशातीत सफलता नहीं मिली है। अत: इस शोध पत्र में प्रबंध का मुख्य उद्देश्य यह है कि निर्धनता उन्मूलन पर आर्थिक विकास योजनाओं के प्रभाव का एवं लाभान्वित हितग्राहियों का अध्ययन किया एवं उन्हें लाभान्वित किया गया। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में स्व–रोजगार के नवीन अवसरों का निर्माण तथा वर्तमान रोजगार को लाभकारी बनाने के लिए गरीब ग्रामीणों की क्षमता में वृद्धि कर, नियमित आय में वृद्धि करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु परियोजना द्वारा :–

1. ग्रामीण गरीबों की ऐसी संस्थाओं का विकास करने हेतु सशक्त बनाना जो कि उनके द्वारा संचालित, नियंत्रित एवं प्रबंधित हों तथा जिनके माध्यम से वे अपनी आजीविका सुनिश्चित कर सकें।
2. अर्थव्यवस्था के द्वारा बाजार में उत्पन्न रोजगारों के अवसरों का लाभ उठाकर अपनी आजीविका एवं आय प्राप्ति हेतु ग्रामीण गरीबों को सक्षम बनाना।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) विशेष कर्तव्यस्थ अधिकारी मध्यप्रदेश शासन उच्च शिक्षा विभाग, भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

शोध परिकल्पना – प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से प्रस्तुत शोध परिकल्पना पिछड़े क्षेत्र में रहने वाले निर्धन परिवारों के जीवकोपार्जन से संबंधित है। कि किस प्रकार से निर्धन, निम्न स्तर के परिवार अपने जीवन स्तर को सुधारने, संवारने हेतु किन–किन कार्यो को करते है। और अपने परिवारजनों का भरण–पोषण करते है। क्या वह मध्यप्रदेश में संचालित योजनाओं के माध्यम से भी अपने जीवन स्तर में विकास कर पा रहे है, जिस हेतु इस शोध शीर्षक अध्ययन के माध्यम से यह पता चलता है। कि मध्यप्रदेश में जिला गरीबी उन्मूलन परियोजनाओं से राज्य के अधिकांश जिले लाभान्वित हुये है। इन योजनाओं के माध्यम से मध्यप्रदेश के 14 जिलों के गरीब परिवारों का आर्थिक विकास सम्भव हुआ और साथ ही अर्थव्यवस्था सुदृढ़ हुई है और आशा की जाती है कि भविष्य में इन योजनाओं के चलने से आर्थिक विकास, उच्च जीवन स्तर, भावी रोजगार, विकास की संभावनाऐं बढ़ेगी।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – किसी भी अध्ययन को किसी एक प्रणाली के अंतर्गत लाने की प्रक्रिया का नाम पद्धति, किसी भी शोध पद्धति में वास्तविक अध्ययन की संरचना व्यवस्था तथा अध्ययन विषय का चयन, से लेकर सामान्यीकरण एवं नियमों का प्रतिपादन तक के समस्त चरण शामिल किये जाते है। शोध पद्धति एक विस्तृत अवधारणा है, जिनमें अनेक प्रविधियों (Technigues) तथा शोध पत्र के अनुकूल प्रयुक्त किये जाने वाले यंत्रों (Tools) तथा औजारों (apparatus) को आवश्यकतानुसार निश्चित करना पड़ता है। अध्ययन विषय के वास्तविक तथ्यों का पता लगाने के लिये वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया जाता है। वैज्ञानिक पद्धति द्वारा समस्या का निरीक्षण एवं परीक्षण करने पर उसकी वास्तविकता का पता लगाया जा सकता है।

अध्ययन क्षेत्र का निर्धारण शोध पत्र में शोध विषय की प्रकृति पर निर्भर करता है। शोध ग्रामीण एवं शहरी जीवन से संबंधित है। शोध का प्रतिपाद् विषय ग्रामीण जीवन से संबंधित है, अत: शोध का क्षेत्र मध्यप्रदेश के 14 जिलों में संचालित परियोजना मध्यप्रदेश में जिला गरीबी उन्मूलन परियोजना का अध्ययन है। शोध क्षेत्र का निर्धारण करते समय भौगोलिक सीमाओं, आवागमन की सुविधा, जनसंख्यात्मक, संरचना की प्रकृति आदि बातों पर ध्यान दिया गया है। अनुसंधान के निश्चित उद्देश्यों तक पहुॅचने के लिये शोधकर्ता को शोध की एक प्रचना (Research Design) का निर्माण करना पड़ता है। सरल अर्थो में शोध प्रचंना में शोध विषय से लेकर निष्कर्षीकरण तक शोध पद्धति, शोध में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न उपकरणों की सम्मिलित योजना का नाम सामाजिक प्रारंचना है। प्ररचिना में सम्पूर्ण शोध कार्यक्रम की रूपरेखा को सम्मिलित किया जाता है। प्रस्तावित शोध विषय वर्णनात्मक एवं निदानात्मक अध्ययन की विधियों के अतंर्गत आता है। इस प्रकार शोध प्रविधि में ही शोध पत्र का सार समहित होता है।

शोध उपकरण – शोध प्रविधि के अंतर्गत किसी भी कार्य को करने के लिये एवं उसके उद्धेश्यों को पूर्ण रूप से प्राप्त करने के लिये वैज्ञानिक विधि, तुलनात्मक विधि, विश्लेषण विधि, गुणात्मक विधि, परिणात्मक विधि एवं अन्य विधियों का सहारा लेकर शोध कार्य को पूर्ण किया जाता है। शोध प्रविधि के अंतर्गत अध्ययन विषय में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष टूल्स का उपयोग किया गया। जिसमें कम्प्यूटर द्वारा इंटरनेट द्वारा विभिन्न अनुप्रयोगों द्वारा मध्यप्रदेश के सामान्य अध्ययन पुस्तिका का पठन–पाठन विभिन्न राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर की पत्र–पत्रिकाऐं विभिन्न विद्धानों द्वारा प्रकाशित पुस्तिका, सामाचार पत्र, अन्य विधियों द्वारा सहायता, प्राप्त कर उनका गहन विस्तृत अध्ययन कर शोध कार्य को पूर्ण करने का प्रयास किया।

सांख्यिकीय तकनीक – शोध प्रक्रिया के संबंध में बरलसन वी. तथा अन्य विद्धानों ने अपने विचार व्यक्त करते हुये लिखा है। कि अनुसंधान प्ररचिना को अध्ययन की तार्किक शोधक नीतियो के दाव पेंच के रूप में बहुत अच्छे ढंग से परिभाषित किया जाता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है। कि शोध प्रक्रिया विषय में अध्ययन की क्रमबद्धता हो। सामान्यत: शोध प्रक्रिया के अंतर्गत तथ्यों के संकलन, सम्पादन, वर्गीकरण, अनुसंधान, संमक संकलन, सारणीयन, प्रतिदर्श, विश्लेषण, निदर्शन, एवं निर्वचन, प्रतिचयन, न्यादर्श, एवं सांख्यिकीय तकनीकी को सम्मिलित किया जाता है। दैनिक जीवन के अधिकांश समस्याओं का समाधान संगणना से नहीं वरन् प्रतिचयन के द्वारा ही संभव है। यह अपने आप में कुछ अतिश्योक्ति नहीं है। क्योंकि गेहूं के विशाल ढेर में से कुछ दाने देखकर उसकी किस्म का पता लगाना, रक्त की एक बूंद का परीक्षण करके रोगी के रोग का निदान कर देना, विवाह से पूर्व कुछ प्रश्नों के आधार पर जीवन साथी तय कर लेना ये सब बातें सही अर्थो में निदर्शन अथवा न्यादर्श की ही व्याख्या हैं, प्रतिचयन अथवा न्यायदर्श समूचे समग्र का प्रतिनिधित्व करता है। अधिकांश सांख्यिकीयों का अटूट विश्वास है कि यदि किसी समग्र में से निदर्शन, न्यादर्श इकाई का चयन वैज्ञानिक तरीके से किया जाये तो निदर्शन, न्यादर्श इकाई में समग्र की समस्त विशेषता दृष्टिगोचर होगी ।

शोध व्याख्या – प्रस्तुत शोध पत्र में शोध की व्याख्या अध्ययन विषय में वर्णनात्मक एवं निदानात्मक अध्ययन की विधियों के अंतर्गत आता है। तदानुसार ही शोध प्रारंचना एवं पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है। शोध की व्याख्या हेतु निम्न चरणों का प्रयोग किया गया।

1. Selection of the Problem
2. Review of Relative Literature
3. Determination of units
4. Making of Working Hypothesis
5. Determination of Scope of Study
6. Selection of respondents
7. Collection of Sources of Data
8. Determination of tools and Techniques Study
9. Pre- Testing of tools and Techniques and pilot Study
10. Collection and observation of data
11. Lease- Participant observation and recording
12. Editing and Coding of Data
13. Classification & Tabulation of data
14. Analysis and Interpretation of data
15. Generalisation and Formulation of Laws
16. Report Writing Etc.

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध पत्र के निष्कर्ष के रूप में अनुरोध है कि मध्यप्रदेश में चलाई जा रही, राज्य सरकार द्वारा वित्त पोषित योजनाओं की संख्या 142 एवं केन्द्र सरकार द्वारा वित्त पोषित योजनाओं की संख्या 55 है का अध्ययन किया गया है। जिसके समग्र अध्ययन से स्पष्ट है कि अनेको योजनाओं को आपस में समाहित कर एकीकृत किया जाना चाहिए। इसी प्रकार केन्द्र सरकार की भी योजनाओं को समेकित कर चुनिदां योजनाओं में परिवर्तित किया जाना चाहिए, चूंकि अनेक योजनाओं के होने से ग्रामीण परिवेश के कमजोर एवं अशिक्षित व्यक्ति योजनाओं के मकड़जाल में फस जाते है। एवं उन्हें वास्तविक योजनाओं का लाभ प्राप्त नहीं हो पाता है।

सुझाव – शोध पत्र के माध्यम से गरीबी उन्मूलन परियोजना के अंतर्गत भविष्य के क्रियान्वयन के संबंध में सुझाव निम्नानुसार है।

1. बचत तथा विनियोग में वृद्धि करना।
2. आय एवं प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि।
3. औद्योगिक विकास की आवश्यकता।
4. गरीबी निवारण कार्यक्रमों का संचालन।
5. आर्थिक नियोजन प्रणाली में सुधार।
6. स्वरोजगार/रोजगार हेतु उन्मूलन कार्यक्रमों का बृहद स्तर पर संचालन।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

मुख्य स्त्रोत :-

1. मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास :- राव एवं कोडावर मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल,
2. मार्केटिंग मैनेजमेंट :- कोटलर फिलिप
3. मध्यप्रदेश जिला सांख्यिकीय पुस्तिका :- जिला सांख्यिकीय कार्यालय मध्यप्रदेश
4. स्व सहायता समूह प्रशिक्षण मार्गदर्षिका :- पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग भोपाल मध्यप्रदेश
5. जिला गरीबी उन्मूलन परियोजना पंचायत एंव ग्रामीण विकास विभाग मध्यप्रदेश भोपाल
6. गरीबी और अकाल :- अमर्त्य सेन

पत्र/पत्रिकाऐं :-

1. फाइनेसियंल एक्सप्रेस
2. आउटलुक - दिल्ली पब्लिकेशन
3. ग्रामीण अर्थशास्त्र - मामोशिया प्रकाशक एस के एंड कंपनी नई दिल्ली
5. आर्थिक जगत - कलकत्ता प्रकाशन कार्यालय

****

निवेशकों के हित संरक्षण में सेबी की भूमिका

डॉ. संजय पण्डित * अखलाक मो. खान **

प्रस्तावना – भारत सरकार ने देश की बैंकिंग प्रणाली पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए 1 अप्रैल 1935 को भारतीय रिजर्व बैंक (R.B.I.) की स्थापना की तथा वर्ष 1969 में बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया। देश के सभी बैंक रिजर्व बैंक के दिशा–निर्देशों के अधीन कार्य कर रहे हैं, जिससे बैंक में धन जमा करने वाले ग्राहकों (निवेशकों) के हितों की रक्षा हुई है तथा बैंकों में निवेश बहुत सुरक्षित निवेश बन गया है। इसी प्रकार बीमा प्रणाली पर नियंत्रण के लिए बीमा विनियामक एवं विकास प्राधिकरण (I.R.D.A.) की स्थापना की गई, जिससे बीमा धारकों के हितों की रक्षा हुई है।

स्कन्ध विपणियाँ (स्टॉक एक्सचेंज) तथा इनमें कार्यरत् दलाल, उप–दलाल एवं कंपनियाँ आदि निवेशकों के साथ कई प्रकार की धोखाखड़ी और छलकपट करके उनके हितों को नुकसान पहुँचाते रहे हैं। परन्तु 1992 में हुए हर्षद मेहता प्रतिभूति घोटाला काण्ड ने समस्त आर्थिक प्रणाली (अर्थव्यवस्था) की नींव हिला दी थी और नियमन व्यवस्था में निहित कमजोरियों की पोल खोल दी थी। जिसके पश्चात् देश के प्रतिभूति बाजारों तथा उनमें कार्यरत् व्यक्तियों दलालों, उप–दलालों एवं कंपनियों की कार्यप्रणाली पर प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित करने के लिए तथा इनमें निवेश करने वाले निवेशकों के हितों की रक्षा के लिए एक सशक्त नियामक संस्था की आवश्यकता महसूस की गई।

भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) – प्रतिभूति विनिमय बाजार आधुनिक अर्थव्यवस्था की महत्वपूर्ण संस्था हैं। यह प्रत्येक विकसित एवं विकासशील देश के लिए अपरिहार्य है। इनके अभाव में देश के आर्थिक विकास के लिए पर्याप्त वित्तीय संसाधन जुटाना कठिन होता है। अत: इनके विकास पर ध्यान देना आवश्यक है।

गत वर्षों में भारतीय पूँजी बाजार (प्रतिभूति बाजार) बहुत अधिक उन्नति की ओर अग्रसर हुआ है। 1991 से सरकार की आर्थिक उदारीकरण नीतियों के कारण भारतीय निवेशक भी पूँजी बाजार की ओर आकर्षित हुआ है। पूँजी बाजार में निवेशकों के विश्वास को अर्जित करने एवं बनाए रखने के लिए निवेशकों के संरक्षण की आवश्यकता महसूस की गई। इसी उद्देश्य से एक प्रशासनिक संस्था के रूप में भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) की स्थापना की गई। भारतीय संसद द्वारा अप्रैल 1992 में 'सेबी' अधिनियम पारित किया गया और सेबी का कार्य एक अलग कानून के अन्तर्गत संचालित होने लगा, जिससे सेबी को और अधिक व्यापक कानूनी अधिकार प्राप्त हो गये और इसका कार्यक्षेत्र अधिक विस्तृत हो गया।

सेबी का निवेशक हित संरक्षण में योगदान (उपलब्धियाँ) – भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) ने निवेशक हित संरक्षण हेतु कई कार्य किए हैं, जिनका संक्षिप्त विवेचन अग्र प्रकार हैं :–

तालिका–1,2,3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 1 के अवलोकन से यह स्पष्ट हो रहा है कि प्रति वर्ष कार्यवाही योग्य लंबित शिकायतों की संख्या निरंतर कम हो रही है तथा सेबी की शिकायत निवारण दर में निरन्तर वृद्धि हो रही है। जो सेबी की कार्यकुशलता और निवेशक हित संरक्षण के लिए किए जा रहे प्रयासों की सफलता का प्रमाण है।

तालिका 2 से यह स्पष्ट हो रहा है कि सेबी के पास रजिस्ट्रीकृत स्टॉक दलालों की संख्या में प्रति वर्ष वृद्धि दर्ज हो रही है। वित्तीय वर्ष 2008–09 में (8652) पंजीकृत स्टॉक दलाल थे, जो वित्तीय वर्ष 2012–13 तक बढ़कर (10128) हो चुके थे। जो सेबी की कुशल नियमन व्यवस्था का प्रमाण है।

निवेशकों को शिक्षित करने और उनमें जागरूकता के प्रसार हेतु सेबी ने वर्ष 2008–09 में (26) निवेशक जागरूकता कार्यक्रम/कार्यशालाएँ आयोजित की थी, जो वित्तीय वर्ष 2012–13 तक बढ़कर (216) हो गये थे।

'भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड में निवेशक शिकायत निवारण व्यवस्था।'ऐसे सभी कार्यक्रमों में एक सामान्य शीर्षक रहता है। सेबी द्वारा तैयार की गई शिक्षण सामग्री इन कार्यक्रमों में निवेशकों को नि:शुल्क वितरित की जाती है।

निष्कर्ष – निवेशक हित संरक्षण को सभी नियामक संस्थाओं ने अपने नियमन एवं क्रियाकलापों का मूल लक्ष्य बिन्दु माना है। प्रमुख नियामक (सेबी) ने प्रतिभूति बाजार के सभी अंगों और मध्यस्थों के क्रियान्वयन के संबंध में विस्तृत मार्गदर्शक नियम निर्धारित किए हैं। RBI, IRDA तथा Consumer forum भी इस संबंध में सक्रिय हैं।

परंतु दूसरों के द्वारा किए गए संरक्षण उपाय उतने ही फलदायी हैं। जितना कि 'सिगरेट के पैकेट पर लिखी हानि की चेतावनी' अथवा शराब की खुली बिक्री के साथ 'नशामुक्ति गृह' की स्थापना। वास्तव में एक निवेशक को उसके स्वयं से कौन बचाएगा? निवेशक अपने अज्ञान, लोभ, हठधर्मिता, लापरवाही एवं अविवेक से अधिक पीड़ित होता है, न कि दूसरों के फुसलाने से। वह जान–बूझकर लोभ के वषीभूत अविवेकपूर्ण निवेश करता है। देखा जाएगा ठीक है। क्या फर्क पड़ता है। भाग्य आजमा लेते हैं। एक जुआं ही सही। उसने टीप दी है। आदि ऐसे ही अनेक बहानों से प्रभावित होकर निवेश निर्णय लेता है तथा निवेश के मूल दर्शन एवं उसमें निहित जोखिम को वह जान–बूझकर अनदेखा करता है।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

वही निवेशक बाजार में खरीदते समय 'टके की हांडी' भी ठोक बजाकर लेता है। बच्चों द्वारा फॉस्ट फूड, चॉकलेट, आइसक्रीम आदि के सामान्य व्यय को भी लाभ एवं हानि की कसौटी पर कस कर देखता है। वास्तव में उसके आचरण का यही विरोधाभास उसके निवेशक के रूप में ठगे जाने का मूल कारण है। वह स्वयं से ठगा जा रहा है, न कि किसी दूसरे से।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वित्तीय बाजारों की कार्यप्रणाली (2009) – डॉ. वी.पी. अग्रवाल (साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा)
2. वित्तीय बाजार परिचालन (2009) – प्रो. एस.सी. जैन (कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल
3. विनियोग प्रबंध (2010) – प्रो. सी.एम. चौधरी
4. सेबी बुलेटिन (समाचार पत्र) – भारतीय प्रतिभूति एवं विनियम बोर्ड (सेबी)
5. सेबी वार्षिक प्रतिवेदन (2012-13)
6. wwww.sebi.gov.in

तालिका-1 : सेबी द्वारा प्राप्त और निवारण की गई निवेशक शिकायतों की स्थिति

वित्तीय वर्ष	प्राप्त शिकायतें (संचित रूप में)	शिकायतों का निवारण (संचित रूप में)	लंबित शिकायतें (संचित रूप में)	शिकायत निवारण दर
2008-09	26,74,560	25,03,560	171,000	93.60%
2009-10	27,06,895	25,46,302	160,593	94.07%
2010-11	27,63,565	26,12,854	150,511	94.55%
2011-12	28,10,113	26,66,695	143,418	94.90%
2012-13	28,52,524	27,21,547	130,977	95.40%

स्त्रोत : सेबी वार्षिक प्रतिवेदन (2012-13)

तालिका-2 : सेबी के अंतर्गत पंजीकृत स्टॉक दलाल

विवरण	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13
पंजीकृत स्टॉक दलाल	8652	8804	9235	9307	10128

स्त्रोत : सेबी वार्षिक प्रतिवेदन (2012-13)

तालिका-3 : सेबी द्वारा आयोजित निवेशक जागरूकता कार्यक्रम/कार्यशालाएँ

क्र.	विवरण	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13
1.	**प्रधान कार्यालय**	04	13	25	09	30
2.	**पूर्वी प्रादेशिक कार्यालय**	00	00	18	35	28
3.	**उत्तरी प्रादेशिक कार्यालय**	00	03	31	72	64
4.	**पश्चिमी प्रादेशिक कार्यालय**	08	10	28	19	44
5.	**दक्षिणी प्रादेशिक कार्यालय**	14	14	47	43	50
	योग	**26**	**40**	**149**	**178**	**216**

स्त्रोत : सेबी वार्षिक प्रतिवेदन (2012-13)

****

मध्यप्रदेश राज्य के स्वरोजगार योजनाओं की आवश्यकता एवं महत्व - एक अध्ययन

डॉ. विशाल पुरोहित *

प्रस्तावना -स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देशों में बेरोजगारी की समस्या विकराल रूप धारण करती जा रही है, जिसके परिणामस्वरूप अनेकों समस्यायें जड़ जमाने लगी है। सरकार द्वारा बेरोजगारी को दूर करने के लिये अनेको प्रयास किऐ गए जो विफल रहे। विद्वानों का मत था कि सीमित नौकरियों से बेरोजगारी की समस्या हल नहीं हो सकती, बेरोजगारी का हल स्वरोजगार स्थापना से ही संभव है।

उद्यमिता किसी भी राष्ट्र के औद्योगिक विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है। औद्योगिक रूप से विकसित राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, चीन, जापान, जर्मन आदि इस तथ्य को प्रमाणित करने वाले जीते जागते उदाहरण है। भारत जैसे विकासशील राष्ट्र ने भी पिछले कई दशकों से इस तथ्य को स्वीकारा है लेकिन फिर भी इस विषय में काफी कुछ करने की अभी भी आवश्यकता है। मध्यप्रदेश सरकार द्वारा राज्य में व्याप्त बेरोजगारी की समस्या में कमी करने हेतु कई योजनाएँ संचालित की जा रही है, जो स्वरोजगार को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

उद्यम: साहसं धैर्य विद्या बुद्धि पराक्रम: ।
षड़ेते यत्र वर्तन्ते तत्र दैव: सहायकृत: ।।

अर्थात् जहाँ उद्यम, साहस, धैर्य, विद्या, बुद्धि और पराक्रम ये छ: गुण होते है वहाँ देव सहायता करते है।

राष्ट्रपति श्री आर. वेंकटरामन ने सरकार की नीतियों को स्पष्ट करते हुए कहा कि '**हमारा सीधा प्रहार गरीबी पर है, हमने बेरोजगारी को घटाने के लिए भरसक प्रयत्न किया है, हमारा मार्गदर्शक सिद्धान्त यह रहा कि कमजोर, अभावग्रस्त और दलित वर्ग के लिए न्याय और उन्नति के सुअवसर प्रदान किये जाएँ।**' बेरोजगारी को प्रगतिशील तरीके से कम करना भारत के आर्थिक नियोजन के लक्ष्यों में से एक प्रमुख लक्ष्य रहा है।

स्वरोजगार की स्थिति जानने के पूर्व रोजगार एवं स्वरोजगार शब्दों का महत्व समझना उचित होगा।

अ) रोजगार - जहाँ व्यक्ति किसी निश्चित कार्य को स्वीकार कर, अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों के समुह के नियंत्रण में निश्चित वेतन/आय प्राप्त कर अपनी सेवायें प्रदान करता है, रोजगार की श्रृंखला कहलाती है। रोजगार का यह रूप वेतन रोजगार के नाम से प्रसिद्ध है तथा यह सीमित आय का साधन है।

ब) स्वरोजगार - स्व + रोजगार, अर्थात् स्वयं के विशेष अर्जित ज्ञान के आधार पर स्वतंत्र रूप से कोई आर्थिक कार्य प्रारंभ किया जाता है, स्वरोजगार कहलाता है। यह असीमित आय का स्त्रोत है। स्वरोजगार एक उद्यमिता है, जिसके अन्तर्गत उद्योग, व्यवसाय, मरम्मत या सेवा का चुनाव करके लाभकारी आर्थिक क्रिया प्रारंभ की जाती है। आज विश्व का सबसे धनी राष्ट्र 'जापान' है जहाँ उद्योगों का जाल बिछा हुआ है, यह हर्ष का विषय है कि जापान की अर्थव्यवस्था स्वरोजगार प्रणाली पर आधारित है।

स्वरोजगार की आवश्यकता एवं महत्व को स्वरोजगार के परिप्रेक्ष्य में निम्न बिन्दुओं के माध्यम से स्पष्ट किया गया है जो इस प्रकार हैं -

योजनाओं की आवश्यकता एवं महत्व - भारत एक विकासशील राष्ट्र है। यहाँ की अर्थव्यवस्था पूर्णत: कृषि पर आधारित है, लेकिन किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास की प्रगति उस देश के उद्योग धन्धों एवं कल कारखानों पर निर्भर करती है।

बेरोजगारी की समस्या के परिणामों और इसके घातक प्रभावों को दृष्टिगत करते हुए अब तक की पंचवर्षीय योजनाओं में रोजगार सृजन हेतु किये गये प्रयास प्राय: असफल सिद्ध हुए है तथा आज सभी नीति निर्माताओं के मस्तिष्क में स्पष्ट है कि सार्वजनिक क्षेत्र एवं संगठित उद्योगों में सभी बेरोजगारों को रोजगार देना संभव है। परिणामस्वरूप पिछले कुछ वर्षों में स्वरोजगार के पक्षों में उपाय स्वरूप आवाजें उठने लगी है। स्वरोजगार की आवश्यकता एवं महत्व को निम्न बिन्दुओं के माध्यम से समझा जा सकता है-

1. **बेरोजगारी का व्यावहारिक रूप -** स्वरोजगार एक मात्र ऐसा उपाय है, जिसे अपनाकर बेरोजगारी की समस्या से निजात प्राप्त की जा सकती है। सिर्फ नौकरी एवं मजदूर के माध्यम से बेरोजगारी की समस्या हल नहीं की जा सकती है। इस हेतु व्यक्तियों को स्वरोजगार के माध्यम से अपने पैरों पर खड़ा करके बेरोजगारी को काफी हद तक हल किया जा सकता है।
2. **मानवीय संसाधनों का सर्वोत्तम प्रयोग -** भारत देश में जन संसाधनों का बाहुल्य है, अतिरिक्त कार्य अभाव में शिक्षित बेरोजगारों की बहुत बड़ी मात्रा देशभर में फैली है। तीव्र गति से शिक्षित बेरोजगारों की संख्या ना केवल देश के लिए एक आर्थिक बोझ बन रही है वरन् व्यक्ति का बेरोजगार रहना एक मानवीय अपराध है। स्वरोजगार के माध्यम से देश के मानवीय संसाधनों का प्रचुरता से प्रयोग किया जा सकता है। मानवीय संसाधन खजाने के समान है, जिसका उपयोग धन के सृजन हेतु किया जा सकता है।
3. **आत्मनिर्भर समाज की स्थापना -** आर्थिक क्रियाओं के विभिन्न क्षेत्रों में उत्पादकता क्रान्ति एवं पूंजी निर्माण से एक आत्म निर्भर समाज स्थापित होता है। परन्तु उत्पादकता एवं धन के सृजन का आधार स्तंभ स्वरोजगार है।
4. **आर्थिक विकास का आधार -** स्वरोजगार को बढ़ावा देने से देश के प्रत्येक भाग में उद्योग-धंधों की स्थापना होगी। जिसके माध्यम से आर्थिक क्रियाओं का देश में तीव्र गति से विस्तार होगा। परिणामस्वरूप देश के राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि होगी। जिससे राष्ट्रीय आय भी वृद्धि हेतु प्रभावित होगी। स्वनियोजित उद्यमी देश के आर्थिक विकास हेतु नये-नये अवसरों की खोज करके उचित रूप से उनका विदोहन करने की प्रक्रिया को बल प्रदान

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातक कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

करते है।

5. गरीबी उन्मूलन – भारत देश गरीबी और अभावों से एक लम्बे समय से ग्रसित है। देश की अधिकांश जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे अपना जीवन यापन कर रही है। देश में स्थापित हो चुकी भुखमरी, निर्धनता एवं मानसिक दुखों का मूल कारण देश की रोजगार समस्या है अर्थात् गरीबी एवं रोजगार का स्तर के मध्य सीधा संबंध होता है।

6. आर्थिक विकेन्द्रीकरण – देश के विभिन्न भागों में स्वरोजगार के माध्यम से उद्यमियों को रोजगार व उद्योग-धंधों को स्थापित करने हेतु प्रेरित करके आर्थिक विकेन्द्रीकरण को प्रभावित किया जा सकता है। देश में धन के समान वितरण को प्रेरित करके समाजवाद की स्थापना में स्वरोजगार की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

7. उद्यमीय प्रवृत्तियों एवं कौशल का विकास – स्वरोजगार की भावना से देश के उद्यमीय वर्ग में साहसी मनोवृत्तियों का विकास होने लगता है। समाज का युवा वर्ग रचनात्मक कार्यों की ओर प्रेरित होने लगते है। स्वरोजगार के माध्यम से समाज के व्यक्तियों में स्वतंत्र जीवन जीने, सृजनात्मक कार्य करने एवं परिश्रम के माध्यम से बुलंदियों को छुने की ललक विकसित की जाती है। इस हेतु जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

8. औद्योगिक वातावरण का निर्माण – स्वरोजगार योजना के माध्यम से देश में औद्योगिक वातावरण का निर्माण होता है। एक व्यक्ति द्वारा स्वरोजगार के माध्यम से उद्यम स्थापित करने तथा उसको औद्योगिक सफलता से प्रोत्साहित होकर अनेक युवक उद्यम हेतु प्रेरित होते है।

9. आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं की कमी – स्वरोजगार के माध्यम से देश के विभिन्न भागों में व्यावसायिक उपक्रम स्थापित होंगे, फलस्वरूप आर्थिक क्रियाओं का विकास एवं विस्तार होगा तथा व्यक्तियों की आय में वृद्धि होती होगी। इस प्रकार स्वरोजगार देश में विनियोग, उद्योग, उत्पादन, आय, बचत एवं पूंजी निर्माण को प्रोत्साहित करके अर्थ अभाव के कारण उत्पन्न समस्याओं में कमी लाता है।

10 समाज के कमजोर वर्गों का उत्थान – समाज के अनेक कमजोर वर्गों की आजीविका एवं आर्थिक उत्थान का प्रमुख उपाय स्वरोजगार है। समाज के शोषित लोगों, बेसहारा युवकों, अपंगों, महिलाओं व आर्थिक दृष्टि से पिछड़े व्यक्तियों को स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत वित्तीय सहयोग प्रदान कर उन्हें आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है।

11. आधारभूत सुविधाओं का विस्तार – स्वरोजगार योजना के सफल क्रियान्वयन के क्षेत्र में सरकार द्वारा कई आधारभूत सुविधाओं का विकास एवं विस्तार कार्य किया जाता है। सरकार औद्योगिक क्षेत्रों में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र एवं अन्य संबंधित संस्थाओं से सम्पर्क स्थापित कर सड़क, बिजली, पानी, प्रषिक्षण संस्थाओं, बैंको आदि सुविधाओं के विकास का कार्य भी करती है जिससे उद्योग-धंधों की स्थापना को प्रोत्साहित किया जा सके।

12. राजकीय नीतियों के क्रियान्वयन में सहयोग – सरकार अपनी विभिन्न नीतियों एवं कार्यक्रमों का सफलतापूर्वक क्रियान्वयन स्वरोजगार योजना के माध्यम से कर सकती है। सरकार द्वारा निर्धारित 20 सूत्रीय आर्थिक कार्यक्रम समन्वित ग्रामीण विकास, भूमिहीन किसानों का उत्थान, ग्रामीण क्षेत्रों में न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति से संबंधित कार्यक्रम भी स्वरोजगार योजना के द्वारा सफलतम रूप में लागू किये जा सकते है।

13. पूंजी निर्माण को प्रोत्साहन – देश के उद्योग-धंधों के विकास में स्वरोजगार की क्रियाओं का महत्वपूर्ण योगदान है। स्वरोजगार से देश में उत्पादक कार्यों का विस्तार होता है एवं समाज के अनेक नये उपक्रमों में अनेक नये उपक्रमों की संख्या बढ़ जाती है।

14. हस्त शिल्प कला का विकास – शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार हस्तशिल्पियों एवं कामगारों को स्वरोजगार योजना के अंतर्गत वित्तीय सहायता उपलब्ध करवाकर देश की हस्त शिल्पकला एवं कौशल को प्रोत्साहित कर भविष्य में जीवित रखा जा सकता है। भारत देश में अनेक लघु दस्तकारों व कलाकारों की आजीविका का साधन स्वरोजगार के माध्यम से स्थापित उद्योग-धंधें बनते जा रहे है। इस प्रकार देश में सांस्कृतिक वैभव, परम्पराओं एवं कौशल को सुरक्षित रखा जा सकता है।

15. प्रबन्धकीय योग्यता का विकास – स्वनियोजित व्यक्ति स्वयं रोजगार के पहल करने की, योजना बनाने की, निर्णय लेने तथा अपने व्यवसाय के प्रबन्धन की क्षमता का विकास करता है। इसके अतिरिक्त स्वरोजगार से व्यक्ति में अनेक गुणों जैसे- नेतृत्व क्षमता, निर्णय क्षमता, आत्म विश्वास, धैर्य, दूरदर्षिता, सहनषीलता आदि को विकसित करके व्यक्तित्व विकास का मार्ग प्रदत्ता करता है।

16. स्वरोजगार का राष्ट्रीय महत्व – स्वरोजगार योजना के क्रियान्वयन से सम्पूर्ण राष्ट्र लाभान्वित होता है। प्रादेशिक असंतोष एवं विद्रोह की भावना का निराकरण का एकमात्र एवं अखंडता को बल मिलता है।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि स्वरोजगार देश के आर्थिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में, एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। यह 'स्व-विकास' एवं 'स्व-सहायता' का एक महत्वपूर्ण सफलतम मार्ग है। यह व्यक्तित्व विकास का एक अमूल्य मार्ग है – अत: स्वरोजगार के संबंध में 'अपनी सहायता उत्तम सहायता' कहावत पूर्ण रूप से सत्य प्रतीत होती है। अर्थात् स्वरोजगार गरीबी मिटाने, वर्ग संघर्ष समाप्त करने, सामाजिक बुराईयों का अन्त करने, सामाजिक अपराधों में कमी लाने, राष्ट्र के अप्रयुक्त साधनों का समुचित उपयोग करने, पिछड़ी जाति एवं क्षेत्रों का विकास करने, कमजोर वर्ग का आर्थिक उत्थान करने, राष्ट्र के सामाजिक स्तर को उन्नत बनाने, व्यक्ति को आत्मनिर्भरता की शिक्षा देने एवं उसमें आत्मविश्वास उत्पन्न करने का अत्यंत प्रभावी कार्यक्रम है।

उपरोक्त विवेचन के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि रामबाण के रूप में 'स्वरोजगार' अपनाकर बेरोजगारी की समस्या से मुक्त होने का प्रयास सरकार द्वारा किया जा रहा है जिसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की योजनाएं संचालित एवं क्रियान्वित की जा रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जिला उद्योग एवं व्यापार केन्द्र।
2. सेडमेप।
3. दैनिक भास्कर।
4. नगर निगम एवं जिला पंचायत, इन्दौर।
5. जिलाधीश कार्यालय, जिला इन्दौर।

****

बेरोजगारी - कारण एवं उपाय

डॉ. सुनीता बाथरे *

प्रस्तावना -प्रत्येक प्रकार की अर्थव्यवस्था में, चाहे वह विकसित हो या विकासशील (अल्पविकसित), बेरोजगारी की समस्या सामान्तया पायी जाती है। मार्शल की पुस्तक प्रिंसिपल ऑफ इकॉनोमिक्स (1890) में बेरोजगारी का जिक्र नहीं है। 1930 की विश्व-व्यापी मंदी में गंभीर बेरोजगारी से ग्रस्त विकसित अर्थव्यवस्थाओं को बाहर निकालने में जान मेनार्ड कीन्स तथा जिनकी 1936 में प्रकाशित पुस्तक-जेनरल थ्योरी आफ एम्प्लावायमेंट, इन्टरेस्ट एण्ड मनी में यह प्रतिपादित किया कि मंदी की स्थिति में विकसित देशों में पाये जाने वाली बेरोजगारी या अर्थव्यवस्था में अधि उत्पादन की स्थिति समग्र मांग या समग्र व्यय की कमी के कारण होती है, जिससे उत्पादित वस्तुएं बिक नहीं पाती व अधि उत्पादन तथा गंभीर बेकारी की स्थिति दिखायी पड़ती है। बेरोजगारी की समस्या के समाधान के लिए कीन्स ने समग्र मांग की वृद्धि या समग्र व्यय की वृद्धि जो उपभोग व्यय, विनियोग व्यय तथा सार्वजनिक व्यय पर निर्भर करती है

किसी देश की श्रमशक्ति से अभिप्राय उन व्यक्तियों से है जो 15-65 आयु वर्ग के है, जो रोजगार में हैं तथा वे भी जो रोजगार की तलाश कर रहे हैं।

श्रम शक्ति = (रोजगार में लगे लोगों की संख्या + बेरोजगारी की संख्या) बेरोजगारी दर को श्रम शक्ति के प्रतिशत के रूप में बेरोजगारी की संख्या को व्यक्त करते हैं। अर्थात पूरी श्रमशक्ति में कितने प्रतिशत बेरोजगार है।

बेरोजगारी की संख्या/श्रम शक्ति x 100

बेरोजगारी = श्रमशक्ति-रोजगार में लगे श्रमिक

आर्थिक समीक्षा (2005-06) के अनुसार बेरोजगारी की दर को प्रति 1000 श्रम या श्रम दिन पर श्रमिकों की संख्या या श्रम दिन के रूप में व्यक्त किया जाता है। श्रम बाल भागीदारी दर (Labour Force Participation rate- LFPR) यह किसी अर्थव्यवस्था की श्रमशक्ति के सक्रिय भाग की मांग प्रस्तुत करता है। वह श्रम शक्ति जो रोजगार में लगी है, उसकी तथा राष्ट्रीय जनसंख्या के उसी आयु वर्ग के लोगों के बीच अनुपात प्रदर्शित करती है।

ऐसे व्यक्ति जो बाजार में प्रचलित मजदूरी पर कार्य करने के लिए तैयार हैं और जिन्हें रोजगार नहीं मिलता है, उन्हें अनैच्छिक बेरोजगार कहेगें, ऐसे व्यक्ति को भी रोजगार में नहीं कहेंगे जिसके काम करने के बाद भी सकल राष्ट्रीय उत्पाद में वृद्धि नहीं हो। ऐसे व्यक्ति जो अपनी इच्छा से कार्य नहीं करना चाहते या जो प्रचलित मजदूरी पर कार्य नहीं करना चाहते, उन्हें ऐच्छिक बेरोजगार कह सकते हैं। वे सभी लोग जो काम चाहते हैं उन्हें यदि चालू बराबर मजदूरी पर काम मिल जाय तो अर्थव्यवस्था पूर्ण रोजगार की स्थिति में होगी।

विकसित देशों में दो प्रकार की बेरोजगारी पायी जाती है- चक्रीय बेरोजगारी तथा धर्षणजनित बेरोजगारी ऐसी बेरोजगारी जो समग्र मांग में कमी तथा निष्क्रिय उत्पादन क्षमता के कारण हो और मांग में वृद्धि केसाथ समाप्त हो जाय, इसे चक्रीय बेरोजगारी कहते हैं। विकसित देशों में यह सर्वाधिक पायी जाती है। दूसरी ओर नयी टेक्नोलॉजी के प्रयोग के कारण एक व्यक्ति एक रोजगार से निकलकर या निकाल दिये जाने के बाद रोजगार की तलाश कर रहा है, इस अवधि में वह अस्थायी बेरोजगार होता है जिसे धर्षणजनित बेरोजगार कहते हैं।

विकासशील तथा अल्पविकसित देशों में (भारत में भी) जो बेरोजगारी पायी जाती है, वह समग्र मांग की कमी के कारण नहीं होती है, बल्कि संरचनात्मक होती है। इन देशों की बेरोजगारी को दो भागों में बांट सकते हैं, शहरी बेरोजगारी तथा ग्रामीण बेरोजगारी। शहरी बेरोजगारी दो प्रकार की हैं- औद्योगिक श्रमिकों में पायी जाने वाली बेरोजगारी तथा शिक्षित बेरोजगारी औद्योगिक क्षेत्र में पायी जाने वाली बेरोजगारी मुख्यतया संगठित क्षेत्र में है। जहां विकास की दर कम है, साथ ही औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार पाने वाले श्रमिकों की मात्रा में तेजी से वृद्धि हुई है। शिक्षित बेरोजगारी शहरी क्षेत्र में पायी जाती है इसका मुख्य कारण एक ओर दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली है, जिसका व्यवसायिक पहलू कमजोर है व्यवसायिक मांग या आवश्यकता के अनुरूप शिक्षा का न होना है तथा दूसरी ओर रोजगार सृजन के अवसरों में धीमी वृद्धि है। राष्ट्रीय दृष्टि से शिक्षित बेरोजगारी सबसे गंभीर समस्या है क्योंकि इसमें शिक्षा पर व्यय के रूप में विनियोग होता है पर प्रतिफल नहीं मिलता।

ग्रामीण क्षेत्रों में पायी जाने वाली बेरोजगारी दो प्रकार की होती है- मौसमी बेरोजगारी जो कृषि क्षेत्र में जुताई, बुबाई, कटाई के रूप में श्रमिक को कार्य के अवसर प्रदान करती शेष समय बेरोजगार रहते हैं।

- प्रच्छन्न बेरोजगारी में श्रमिक ऊपर से देखने में तो रोजगार में लगे रहते है पर वास्तव में रोजगार में नहीं होते हैं क्योंकि उनसे प्राप्त होने वाला सीमांत उत्पादन शून्य होता है, अर्थात कुल उत्पादकता ज्यों कि त्यों रहती है। चाहें उसमें से कुछ श्रमिक को हटा दिया जाये या बढ़ा दिया जाए भारतीय कृषि क्षेत्र की यह सबसे विचित्र गंभीर समस्या है बेरोजगारी का आधार-कब कहेंगे कि कई व्यक्ति बेरोजगार है। प्रो. रामकृष्ण इसके संबंध में चार कसौटियों कि बात करते हैं-
- यदि कोई व्यक्ति किसी वर्ष में इष्टतम पूर्ण रोजगारीय, घंटे से कम काम करता है, तो उसे समय आधार पर बेरोजगार कहेंगे।
- यदि कोई वांछित न्यूनतम स्तर से कम आय अर्जित करता है तो उसे आय कसौटी पर बेरोजगार कहेंगे।
- यदि कोई व्यक्ति वर्तमान में लगे हुये काम से अधिक कार्य करने के लिये इच्छुक है, तो उसे इच्छुकता के आधार पर बेरोजगार कहेंगे।

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) पं. शंभूनाथ शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

- यदि किसी व्यक्ति के रोजगार से निकालने के बाद भी कुल उत्पादन पर कोई प्रभाव नहीं पड़े तो उसे निष्पादन आधर पर बेरोजगार कहेंगे।

योजना आयोग द्वारा बेरोजगारी के अनुमान के संबंध में नियुक्त विशेषज्ञ कमेटी-भगवती कमेटी (1973) ने बेरोजगारी के माप के लिये बेरोजगारी के तीन धारणाओं- सामान्य (मूल) स्थिति चालू साहित्यिक स्थिति तथा चालू दैनिक स्थिति की संस्तुति की। एन.एस.एस.ओ जो भारत में प्रत्येक 5 वर्ष के पश्चात् बेरोजगारी संबंधी आंकड़े एकत्रित करता है।

भारत में बेरोजगारी तथा रोजगार नीति से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण तथ्य-

- भारत में बेरोजगारी की समस्या की पहचान तथा रोजगार परक आर्थिक विकास स्ट्रैटजी तथा सक्रिय रोजगार नीति की शुरूआत पांचवी पंचवर्षीय योजना से होती है।
- दूसरी पंचवर्षीय योजना के प्रारंभ में पिछली बरोजगारी 5 मिलियन थी व विकास दर 5प्रतिशत वार्षिक तथा 10 वर्षो में सबको रोजगार प्राप्त होगा।
- पहली चार योजनाओं में रोजगार को विकास के एक लक्ष्य के रूप में लिया गया पर इसे केन्द्र स्थान प्राप्त नहीं हुआ।
- 1973-74 में बेकारी की संख्या 5 मिलियन थी, 10 मिलियन से अधिक हो गयी इसलिये इस काल में (पांचवी योजना) रोजगार परक संवृद्धि के रूप में स्वीकार किया गया तथा गरीबी व बरोजगारी पर प्रत्यक्ष प्रहार की नीति अपनायी गयी।
- 1973 में बेरोजगारी की समस्या के अध्ययन, माप व समाधान के उपाय के संबंध में संस्तुति के लिये वी भगवती की अध्यक्षता में एक विशेषज्ञ कमेटी की नियुक्ति की गयी।
- छठीं योजना में रोजगारपरक तीव्र आर्थिक संवृद्धि पर बल दिया गया व अल्पकालीन उपायों पर बल दिया गया।
- छठीं योजना में IRDP, NREP तथा TRYSEM RLEGP (1983) जैसी रोजगार सृजक योजनायें चालू की गयी।
- सातवीं योजना में पहली बार रोजगार को विकास नीति में केंद्रीय स्थान दिया गया।
- 1 अप्रैल 1993 को बेरोजगारों की संख्या 23 मिलियन रिकार्ड की गयी।
- आठवीं योजना (1992-97) में आर्थिक संवृद्धि के साथ रोजगार सृजन की बात की गयी।
- नवीं योजना (1997-2002) में लोगों को उत्पादक रोजगार मुहैया कराने पर बल दिया गया।
- 1993-94 से 1999-2000 के बीच जी. डी. पी. वृद्धि दर 6.7 होने के बावजूद भी रोजगार की वृद्धि दर 1.07 प्रतिशत रही।
- दसवीं पंचवर्षीय योजन (2002.07) में बेरोजगारी 36 मिलियन थी।
- ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में कौशल कमी (skil deficit) को आर्थिक विकास में एक महत्वपूर्ण अवरोधक तत्व के रूप में लिया गया। उच्च शिक्षा तथा टेक्निकल शिक्षा में क्षमता विस्तार पर बल दिया गया।
- बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अनुसार योजनावधि में 50 मिलियन अतिरिक्त रोजगार के नये अवसर सृजित होंगे जो कृषि से अलग कौशल आधारित होंगे।

कारण-

- जनाधिक्य में तीव्र वृद्धि के कारण प्रतिवर्ष लाखों लोग श्रम-शक्ति में शामिल हो जाते हैं।
- दोषपूर्ण नियोजन के कारण समस्या विकराल रूप धारण कर रही।
- धीमा आर्थिक विकास व कृषि में आज तक आत्मनिर्भर नहीं हुए, औद्योगीकरण की धीमी गति भी जिम्मेदार।
- पूंजी गहन तकनीक के प्रयोग से बेरोजगारी बढ़ी।
- हरित-क्रांति के परिणामस्वरूप कृषि में यंत्रीकरण को प्रोत्साहन मिला।
- प्राकृतिक प्रकोप।
- कृषि का एक-फसली स्वरूप।
- कृषि क्षेत्रफल का सीमित होना व वृद्धि की धीमी गति।
- कुटीर उद्योग-धंधों का अल्प विकास।
- औद्योगिक उत्पादकता का स्तर निम्न व क्षमता का अपूर्ण प्रयोग।
- बेरोजगारी के लिये दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली जिम्मेदार।

उपाय -

- रोजगार वृद्धि हेतु ऐसी तकनीकी का चयन जो कुशल होने के साथ-साथ श्रम-प्रधान हो व रोजगार के अवसरों में वृद्धि हो सके।
- नियोजन को रोजगार-उन्मुख किया जाए।
- जनशक्ति नियोजन को प्राथमिकता।
- बेरोजगारी की समस्या का प्रभावी हल जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण द्वारा संभव।
- भूमि सुधार कार्यक्रमों का क्रियांवयन-चकबंदी, कृषि जोतों की सीमाबन्दी कर ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजित संभव।
- कुटीर एवं लघु उद्योगों का विकास।
- बहु-फसली कृषि को प्रोत्साहन।
- ग्रामीण रोजगार परियोजनाओं का विस्तार कर-राष्ट्रीय श्रम रोजगार कार्यक्रम, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, जवाहर रोजगार योजना।
- उत्पादन क्षमता का पूर्ण विकास द्वारा।
- शिक्षा को व्यावहारिक रूप/व्यवसायिक शिक्षा द्वारा/इसके अतिरिक्त ऐसे प्रशिक्षण केंन्द्रों व संस्थानों का विकास किया जाए जो शिक्षितों में प्रबंधकीय व साहसिक क्षमता का विकास करें। इससे स्वरोजगार को प्रोत्साहन मिलेगा।

भारत में बेरोजगारी से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण तथ्य (आर्थिक समीक्षा 2012-13 पर आधारित)

- 1999-2000 से 2009-10 के दशक में सामान्य प्रमुख एवं गोण स्थिति (UPSS) आधार पर रोजगार में 1.6 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि देखी गयी। इस दशक के उत्तारार्ध में रोजगार की वृद्धि कम रही। छडडज सर्वेक्षण के अनुसार ऐसा श्रम शक्ति में भागीदारी की कमी के कारण हुआ।
- 1993-94 से 2004-05 के बीच UPSS आधार पर बेरोजगारी में वृद्धि अल्प दर से तथा CDS आधार पर अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि देखी गयी (8.2 प्रतिशत रही) 2009-10 में बेरोजगारी दर घटकर (6.6 प्रतिशत हो गयी) NSS के अनुसार इसका सबसे प्रमुख कारण जनसंख्या लाभांश रहा। जिसके अंतर्गत जनसंख्या में बढ़ी हुयी युवा जनसंख्या ने श्रम बाजार में जाने के स्थान पर शिक्षा को वरीयता दी।
- संगठित क्षेत्र के अंतर्गत निजी क्षेत्र व सार्वजनिक क्षेत्र में 2010 में रोजगार में वृद्धि 1.9 प्रतिशत वार्षिक व 2011 में 1.0 प्रतिशत रही।

सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र में समग्र रोजगार की स्थिति (सारणी देखे)

भारत में बेरोजगारी की अद्यतन स्थिति (2014) –आई एल ओ (2014) की हाल ही में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार भारत में आर्थिक मंदी तथा धीमे व्यापार विस्तार की स्पष्ट छाप देश के रोजगार बाजार की मन्दता पर दिखाई पड़ती है। इधर पिछले दो वर्षों में बेरोजगारी की दर में बढ़ने की प्रवृत्ति अधिक देखी गई है। भारत में बेरोजगारी की दर 3.8 प्रतिशत वार्षिक रही है। आई एल ओ ने अपनी रिपोर्ट ग्लोबल इम्प्ल्वायमेंट ट्रेन्डस 2014 में यह स्थापित किया कि भारत रोजगार रहित विकास की दौर से गुजर रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय अर्थव्यवस्था– रूद्रदत्ता सुन्दरम।
2. भारत में आर्थिक विकास एवं नियोजन– डॉ. अनुपम गोयल।
3. सामान्य अध्ययन– आनंद कुमार पाण्डेय।
4. दैनिक भास्कर (समाचार पत्र)।
5. पत्रिका (समाचार पत्र)।
6. इंटरनेट।

सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र में समग्र रोजगार की स्थिति

	31 मार्च को रोजगार की स्थिति (लाख में)			परिवर्तन %	परिवर्तन %
	2009	2010	2011	2010-09	2011-10
सार्वजनिक	177.95	178.62	175.48	0.4	-1.8
निजी	103.77	108.46	114.52	4.5	5.6
कुल	281.72	287.08	289.99	1.9	1.0
महिला	55.80	58.59	59.54	-	-

****

रायपुर जिले में कृषि उपज मण्डी समितियों की वित्तीय स्थिति : एक अध्ययन

डॉ. मीनाक्षी तिवारी *

प्रस्तावना – विनिमय के परिणामस्वरूप ही जीवन-यापन का स्तर ऊँचा उठ पाया है और उपभोग में विविधता आ पायी है। उत्पादन की उपलब्धता, सुविधाओं की सीमितता, श्रम विभाजन के अभाव आदि के कारण एक तो उत्पादन का स्तर काफी नीचा था और दूसरा उत्पादन का दायरा छोटा था।

आजादी के बाद सरकार ने कृषकों की मूलभूत समस्याओं को दूर करने के लिए कृषि उपज मण्डी समितियों की स्थापना पर जोर दिया। जब तक विपणन व्यवस्था सुदृढ़ नहीं होगी, तब तक कृषकों को उसके उपज का सही मूल्य प्राप्त नहीं हो सकता। फसल मूल्य में तीव्र गति से उतार-चढ़ाव होने के कारण कृषकों को अत्यधिक हानि उठानी पड़ती है, जिसका एकमात्र कारण बाजार का असंगठित होना है। छत्तीसगढ़ में कृषि बाजारों की कमी रही है, जिसके परिणामस्वरूप कृषकों को अपनी उपज को बेचने तथा उसका सही मूल्य प्राप्त करने के लिए व्यापारियों एवं बिचौलियों के शरण में जाना पड़ता था। परिणामस्वरूप उनको उनकी उपज का सही मूल्य नहीं मिल पाता था। कृषि उपज मण्डी 'पण्डरी तराई' रायपुर की स्थापना पूर्व पुरानी मण्डी को गंज के नाम से जाना जाता था। यह मण्डी शासन के नियंत्रण से पूर्णत: बाहर थी अर्थात् इसका संचालन स्थानीय नगर-निगम द्वारा किया जाता था।

अध्ययन का उद्देश्य – शोध अध्ययन की प्रस्तुति के लिए निम्न उद्देश्यों को दृष्टिगत रखा गया है :

1. अध्ययन अवधि में कृषि उपज मण्डी समितियों की आय तथा व्यय का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।
2. कृषि उपज मण्डी समितियों के सफलतापूर्वक कार्य संचालन के मार्ग में आने वाले बाधाओं की जानकारी प्राप्त करना और उन्हें दूर करने हेतु आवश्यक सुझाव प्रस्तुत करना।

अध्ययन अवधि- प्रस्तुत अध्ययन की अवधि कुल 13 वर्षों की अर्थात् वर्ष 1991-92 से 2003-04 तक की है।

शोध प्राविधि :

1. प्रस्तुत अध्ययन मुख्य रूप से द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है। आंकड़ों का संकलन जिन स्त्रोतों से किया गया है उनमें छत्तीसगढ़ मण्डी बोर्ड एवं आर्थिक एवं सांख्यिकी, छ.ग. रायपुर है। प्राथमिक आंकड़ों के रूप में कृषि उपज मण्डी समितियों के संचालक एवं सदस्यगणों से तथा कृषकों से कृषि विपणन के मार्ग में आने वाली समस्याओं के संदर्भ में जानकारियां एकत्र की गई है।
2. **आंकड़ों का विश्लेषण –** प्रस्तुत अध्ययन में एकत्रित आंकड़ों के विश्लेषण हेतु प्रतिशत विधि, सामानान्तर माध्य, संयुक्त वृद्धि दर तथा विचरण गुणांक ज्ञात किये जाते हैं।

मूल मण्डी केन्द्र एवं मण्डी का प्रांगण – रायपुर कृषि उपज मण्डी की स्थापना के बाद मध्य प्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1962 की धारा 53 के अंतर्गत 'मूल मण्डी' अधिनियम घोषित की गई।

धारा 53 के अनुसार मूल मण्डी – राज्य शासन की अधिसूचना के अंतर्गत जैसा कि वह उचित समझे किसी भी ऐसे क्षेत्र को जिसमें समस्त भूमि उस पर भवन बने हो, मूल मण्डी घोषित कर सकेगा।

जिले की कृषि उपज मण्डी समिति का मूल्य निर्धारण – छत्तीसगढ़ में कृषकों के पास इतना अतिरेक नहीं होता कि वे मण्डियों की ओर आना चाहे। मण्डियों का दूरस्थ होना, असुविधाजनक यातायात व्यवस्था के कारण भी कृषक उपज को स्थानीय रूप से तत्काल बेच देना चाहते है। ऐसे में उन्हें मध्यस्थों, दलालों या स्थानीय व्यापारियों द्वारा निर्धारित मूल्य ही स्वीकार करना पड़ता है।

मूल्य निर्धारण की प्रमुख पद्धतियां – मूल्य निर्धारण की वर्तमान पद्धतियां निम्नानुसार है :

1. **न्यूनतम समर्थन मूल्य –** खरीफ और रबी की फसलों के लिए सरकार न्यूनतम समर्थन मूल्यों की घोषणा यथा समय करती है। न्यूनतम समर्थन मूल्य घोषित हो जाने पर कृषक अपनी उपज को खुले बाजार में प्रचलित मूल्यों पर बेचने को स्वतंत्र होता है। बाजार मूल्य कम होने पर सरकार समर्थन मूल्यों पर स्वयं क्रय करती है।
2. **न्यूनतम समर्थन मूल्य का निर्धारण –** न्यूनतम समर्थन मूल्य का निर्धारण कृषि की लागत के आधार पर किये जाते हैं। फार्म प्रबंध अध्ययन में लागत की चार अवधारणाएं प्रचलित है, A_2, B, C.

1. लागत A- इसमें निम्न मद शामिल होती हैं :

1. किराये पर रखे गये मानवीय श्रम का मूल्य।
2. किराये पर बैल के श्रम का मूल्य।
3. स्वयं के बैल के मूल्य।
4. किराये पर मशीनरी का मूल्य।
5. स्वयं की मशीन के प्रयोग का मूल्य।
6. बीज का मूल्य।
7. कीटनाशक व अन्य दवाईयों का मूल्य।
8. खाद का मूल्य।
9. उर्वरकों का मूल्य।
10. औजार मशीनरी व कार्य भवन का ऋण मूल्य ह्रास।
11. सिंचाई के चार्जेस।
12. भू-राजस्व शेष व अन्य कर।

* सहायक प्राध्यापक (अतिथि) शासकीय इंदरू केंवट कन्या महाविद्यालय, कांकेर (छत्तीसगढ़) भारत

13 फसल ऋणों पर चुकाया गया ब्याज।
14. कार्यशील पूंजी का ब्याज।
15. विविध खर्चे।

2. लागत A_2 – इसमें लागत A + किराये पर ली गई भूमि का किराया भी शामिल होता है।

3. लागत B – इसमें लागत A_2 + स्वयं की भूमि पर अनुमानित किराया + स्वयं की स्थिर पूंजी पर अनुमानित ब्याज।

4. लागत C – लागत B + कृषकों के परिवार द्वारा लगाया गया श्रम का अनुमानित मूल्य शामिल किया जाता है।

इस प्रकार लागत ऊँची होती है और इसमें स्वयं की भूमि का किराया, स्थिर पूंजी पर ब्याज भी शामिल किया जाता है। समर्थन मूल्य निश्चित करने के लिए सबसे कम कार्यकुशल कृषक की लागत पर ध्यान दिया जाना चाहिए। ताकि उनकी लागत भी निकल सके।

3. निकासी मूल्य – निकासी मूल्य वे मूल्य होते हैं जिन पर सरकार केन्द्रीय भण्डारों में से सार्वजनिक वितरण प्रणाली अथवा रोलर आटा मिलों के लिए अनाज जारी करती है, ये मूल्य भारतीय खाद्य निगम द्वारा राज्यों व अन्य एजेन्सियों को अनाज देते समय लगाये जाते हैं। प्राय: ये बाजार मूल्यों से नीचे होते हैं। निकासी मूल्य राशन के खुदरा मूल्य निकासी मूल्य से थोड़े ऊँचे होते हैं।

4. बाजार मूल्य – ये मूल्य बाजार में मांग व पूर्ति को शक्तियों द्वारा निर्धारित होते हैं। जब बाजार भाव बढ़ने लगते हैं, तो सरकार बफर स्टॉक में से माल बेचने का प्रयास करती है, ताकि बाजार में हो सकने वाली अनुचित मूल्य वृद्धि रोकी जा सके। जब बाजार भाव बहुत गिरने लगते हैं, तो सरकार न्यूनतम समर्थन मूल्यों पर किसानों से माल खरीद कर उनके हितों की रक्षा करती है। जिले की कृषि उपज मण्डी में कृषि उपज के मूल्य का निर्धारण खुले घोषित विक्रय के द्वारा किया जाता है

5. कृषि उपजों का मूल्यांकन– कृषि उपजों के मूल्यांकन का कार्य ग्रेडर के द्वारा किया जाता है, उपज की मात्रा व किस्म के आधार पर श्रेणीयन का कार्य करते हैं, उपज के मूल्य निर्धारण में सहायता मिलती है।

कृषि उपजों का सही-सही मूल्यांकन होना आवश्यक है जिससे कि उनके द्वारा उत्पादित उपज का उचित मूल्य प्राप्त हो सके। इससे उनकी वृद्धि होगी तथा कृषक इस बड़ी हुई आय का उपयोग उपज की वृद्धि तथा किस्म सुधार के लिए करेंगे। जिससे क्षेत्र का आर्थिक स्थिति में सुधार संभव हो सकेगी तथा कृषकों का जीवन स्तर भी सुधरेगा। ग्रेड, मात्रा व किस्मों के आधार पर कृषि उपजों का मूल्य तय किया जाता है।

मण्डी समितियों की आय के प्रमुख साधन तथा व्यय की प्रमुख मदें

कृषि उपज मण्डियों की आय के स्त्रोत :-

(अ) बाह्य स्त्रोत अनुदान / सहायता / ऋण	(ब) आंतरिक स्त्रोत विक्रय / शुल्क / आय
1. राज्य कृषि विपणन बोर्ड	1. मण्डी शुल्क
2. राज्य विपणन विकास निधि	2. अनुज्ञापत्र शुल्क
3. राज्य सरकार	3. अन्य आया
4. केन्द्र सरकार	4. मण्डी शुल्क पर ब्याज
5. अन्य सहयोगी मण्डियां	5. अनुज्ञापत्र के नवीनीकरण न होने पर अर्थदण्ड
	6. पुस्तकों एवं प्रपत्रों के विक्रय से आय
	7. प्रांगण से आय
	8. प्रवेश शुल्क से आय

कृषि उपज मण्डियों को नियमित आय के अतिरिक्त कुछ अन्य आय भी प्राप्त होती है, जिसका विवरण निम्न है :-

1. मण्डी शुल्क पर ब्याज
2. अनुज्ञापत्र के नवीनीकरण न होने पर अर्थदण्ड
3. पुस्तकों एवं प्रपत्र के विक्रय से आय।
4. प्रवेश शुल्क से आय।
5. प्रांगण से आय।

कृषि उपज मण्डियों के वार्षिक व्यावसायिक व्यय – नियमित कृषि उपज मण्डियों की वित्त व्यवस्था का अध्ययन विभिन्न व्ययों के विश्लेषण किये बिना पूर्ण नहीं हो सकता। अत: उनकी वास्तविक वित्तीय स्थिति की जानकारी प्राप्त करने हेतु इसके द्वारा किये जाने वाले वार्षिक व्ययों के विश्लेषण की सहायता से ही हो सकता है।

कृषि उपज मण्डी एक सेवा संस्थान है, जो कृषि उपजों के क्रय-विक्रय में सहयोग प्रदान करती है। जिसके प्रभावी संचालन के लिए इन्हें प्रतिवर्ष आय के साथ-साथ व्यय भी करना होता है, जिन्हें दो वर्गो में बांटा जा सकता है। एक वर्ग में उन व्ययों को सम्मिलित किया जाता है, जो वास्तव में संपत्तियों के क्रय या निर्माण करने हेतु किये जाते हैं, जिन्हें अनावर्ती व्यय भी कहा जाता है। दूसरे वर्ग में उन व्ययों को सम्मिलित किया जाता है जो मण्डियों की दैनिक गतिविधियों के संचालन हेतु निरन्तर करने पड़ते हैं। उन्हें आवर्ती व्यय भी कहा जाता है।

स्थापना व्यय (आवर्ती व्यय) – दैनिक कार्य संचालन हेतु किये जाने वाले व्ययों को स्थापना व्यय या आवर्ती व्यय कहा जाता है। इसकी प्रमुख मदें स्थापना व्यय, प्रशासनिक व्यय, कर्मचारियों व अधिकारी का वेतन, संचालक शुल्क, बिजली व्यय, लेख सामग्री, डाक व्यय, मरम्मत व्यय, वाहन संचालन व्यय, अग्नि बीमा शुल्क, सूचना व विज्ञापन व्यय, अंकेक्षण शुल्क, कानूनी व्यय आदि को सम्मिलित किया जाता है।

निर्माण व्यय (अनावर्ती व्यय) – कृषि उपज मण्डियों द्वारा विभिन्न संपत्तियों के क्रय करने, निर्माण करने में कृषकों की सुविधाओं आदि के लिए जो व्यय किये जाते हैं, उन्हें निर्माण व्यय या अनावर्ती व्यय कहा जाता है।

मण्डियों के व्ययों का वर्गीकरण

व्यावसायिक व्यय

आवर्ती व्यय	अनावर्ती व्यय
स्थापना व्यय संचालक व्यय अन्य नैमित्तिक व्यय	निर्माण व्ययस्थायी / पूंजीगत व्यय

स्त्रोत : उपलब्ध जानकारी के आधार पर प्रस्तुत।

अन्य व्यय – वे व्यय जो स्थापना व्यय एवं निर्माण व्ययों के अतिरिक्त किये जाते हैं, उन्हें अन्य व्ययों की श्रेणी में रखा जाता है। जो मण्डियों के संचालन संबंधी मदों पर व्यय होती है।

तालिका – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

समस्याएँ – कृषि विपणन में अनेक प्रकार की समस्याएँ आती है, जैसे – कृषकों को कम मूल्य का भुगतान, बाजारों में कम मूल्य के समय भण्डारण की सुविधा उपलब्ध न होना, उत्पादनों की खरीदी के लिए प्रतिस्पर्धी का अभाव, स्थान का अभाव, छत वाले शेड न होने के कारण उत्पादन नुकसान एवं अनाधिकृत कटौतियाँ, परिवहन की समस्याएँ, नीलामी एवं बिक्री में देरी

तथा ट्रकों को देरी से खाली करना, अपने कार्यकाल में बिना शुल्क के खुले निरीक्षण के लिए अधिनियमों के प्रति तथा उसकी उपविधि की प्राप्ति करवाना। मण्डी प्रांगण में नीलामी द्वारा क्रय-विक्रय पद्धति को देखना कि, क्रय-विक्रय उचित ढंग से हो रहा है कि नहीं।

सुझाव :

1. मण्डी प्रांगण से बाहर या गांव में होने वाली या फसल कटाई से पूर्व होने वाली बिक्री पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाया जाय।
2. मण्डी समितियाँ विनियमित मण्डियों से होने वाले लाभ को कृषकों के बीच प्रसारित करे ताकि कृषि उपज को बेचने के लिए मण्डी प्रांगण में लाये ताकि मण्डी की आवक बढ़े।
3. मण्डी विनियमन को प्रभावी रूप से लागू करने के लिए आवष्यक है कि मण्डी प्रांगण में अनुज्ञापत्रधारी व्यापारी ही कार्य करे।
4. सभी मण्डियों में खुली नीलामी द्वारा ही माल की बिक्री की जाय। गोपनीय ढंग से हुए समझौते को पूर्णत: रोका जाये।
5. नीलामी निर्धारित समय पर अपने माल को बेचने के लिए लायें

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. शुक्ला एवं सिन्हा : 'कृषि एवं ग्रामीण अर्थशास्त्र', लोक भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, 1971
2. सिंह, विजेन्द्र पाल : 'कृषि अर्थशास्त्र', नवयुग साहित्य भवन, आगरा, 1980
3. बघेल, डी.आर. : 'रायपुर सम्भाग में कृषि सहकारिता'
4. मिश्रा, बी.ए. : 'औद्योगिक विकास का रायपुर जिले की अर्थव्यवस्था पर प्रभाव'
5. वर्मा, एस.के.सी. : 'भारतीय कृषि में हरित क्रान्ति'
6. निगम, आर. : 'कृषि अर्थशास्त्र'
7. सक्सेना, कृष्ण सहाय, गुप्ता के.एल. : 'भारत का आर्थिक विकास' नवयुग साहित्य सदन, लोहामण्डी, आगरा
8. भार्गव, घनश्यामशरण : 'मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी संहिता'
9. द्विवेदी, राधेश्याम : 'कृषि उपज मण्डी अधिनियम एवं नियम', सुविधा लॉ हाउस, भोपाल, 1999

रायपुर जिले के कृषि उपज मण्डी समितियों की कुल आय-व्यय का तुलनात्मक अध्ययन स्थिति

वर्ष	कुल आय (रू.में)	कुल व्यय (रू.में)	आधिक्य/कमी (रू.में)
1991-92	16087167	17261290	-1174123
1992-93	21955092	35980869	-14025777
1993-94	47078750	21677618	25401132
1994-95	27111713	30777545	-3665832
1995-96	31417509	32694201	-1276692
1996-97	49951728	28399396	21552332
1997-98	15853604	34716868	-18863264
1998-99	38546504	44628908	-6082404
1999-00	61115480	38103735	23011745
2000-01	59281591	36124376	23157215
2001-02	78639882	80421670	-1781788
2002-03	7122957	13058021	-5935064
2003-04	32106793	92192175	-60085382

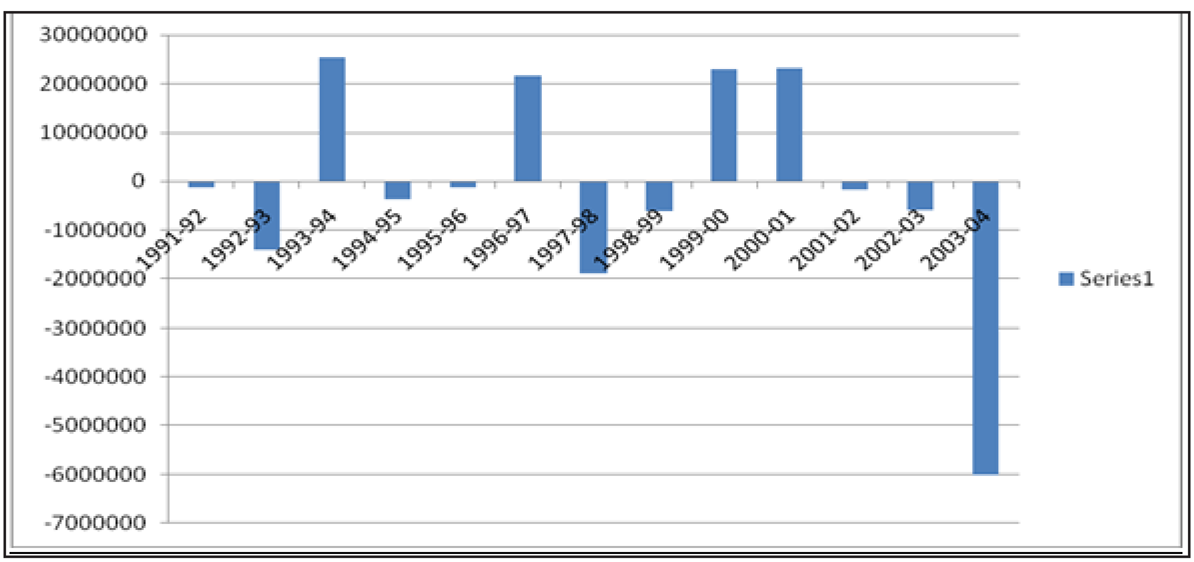

Communalism: A Challenge to India's Democracy

Dr. Sulekha Mishra * Aijaz Ahmad Khan **

Abstract - Communalism is referred in the Western World as a "theory or system of government in which virtually autonomous local communities are loosely in federation". But in the Indian context, communalism has come to be associated with tensions and clashes between different religious groups and communities in various regions. Communalism in South Asia is used to denote the difference between the various religious groups and differences among the people of different community and generally it is used to catalyse communal violence between these groups. It is significant socio-economic and political issue in Bangladesh, Pakistan, Nepal, Myanmar and India. Communalism is still a powerful force in India. The challenges of casteism, communalism and religious fundamentalism involving separatism in India are the major threats to our Secular state. They weaken the working and stability of our democratic secular Federal state and militate against the basic principles governing our national life and providing means to our new identity. 'Casteism' and 'Communalism' are tearing apart the rich and closely-knit fabric of Indian cultural pluralism. Our national movement was the biggest and the most widespread anti-imperialist movement in world history, because it was a movement of all patriotic elements drawn from the diverse regions linguistic groups, religious communities, castes and tribes rural and urban segments Inter–communal and Inter-caste tensions and violence have been recurrent and increasing numbers of communal riots and caste carnage. They should stop if India is to emerge as a democratic and secular polity.
Key Words - India, Democracy, Challenges, Communalism

Introduction - In 1947, when India gained her independence from colonial rule, the choice of parliamentary democracy and a universal franchise for such a poor, vast and largely illiterate nation was considered foolhardy by many observers, at home and abroad. Nevertheless the first general election was held with great rigour, enthusiasm and success in 1952. In the meantime, a Constitution reflecting the political and ideological goals of the new nation had been adopted. It was authored by the Constituent Assembly made up of 299 members who represented the enormous class, religious and linguistic diversity of India's population and who after much debate and deliberation set out the framework for India's future as a republic and parliamentary democracy. Enshrined within it were the principles of the separation of powers, a universal Indian citizen with constitutional rights, equality before the law, the separation of civil and military powers, and the necessity for political competition. The press remains as free as any in the world and contributes to a lively and highly contested public sphere. So according to the democratic checklist of institutional arrangements, India's democratic system is in a reasonable shape.

Review of Literature - This antagonism goes to the extent of falsely accusing, harming and deliberately insulting a particular community and extends to looting, burning down the homes and shops of the helpless and the weak, dishonouring women and even killing persons."[1] Richard Lambert defines communalism as "something colours political behaviour and produces a community oriented outlook."[2] Louis Dumont states that "communalism is an affirmation and assertion of the religious community as a political group."[3] In the words of Satish Sabarwal, "communalism in our sense means the channelling of personal sentiments and actions primarily with reference to the inscriptive group whose boundaries are determined by the accident of one's birth."[4] According to Bipan Chandra "communalism is the belief that because a group of people follow a particular religion, they have as a result, common social political and economic interests."[5] "Some authors have defined communalism as a form of indifference. Condes-cension, hatred or aggressive attitude to all the members of a religious community other than one's own, based on a real or imaginary threat from an individual or a group of that community or an actual damage done to one's personal interest or way of life or to those of one's religious community "[6] Many scholars hold the view that communalism is not essentially a product derived out of religious feelings. Prabha Dixit in her book, 'Communalism, a Struggle for Political Power' states that: "Communalism in India is neither the reaction to anti communalism nor an outgrowth of religious and cultural differences but it is a triangular power struggle of the elite."

Research Methodology - Research methodology is a means to an end and not an end in itself. The objective set for the present research shall be conveniently achieved by

*Professor & Head (Political Science) M.K.B College, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Political Science) Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.) INDIA

content analysis, and direct observations. Contest analysis involves analysis of documents and written records, with the objective of describing and classifying them. It is a research technique for making replicable valid inference from data to their context. It is regarded as an objective, systematic and quantitative technique. Objective & empirical methods will be used to make the study more valid & reliable. Only secondary resources will be taken into use to access the related data, information & literature. Secondary sources and documents like books, journals, magazines, newspapers, official statistics, governmental and non-governmental reports and so on.

Discussion - India is a puzzling and complex mix of tribal, feudal and industrial stages of social evolution. This is compounded by low literacy rate, strangle-hold of religion, superstitions, ignorance and poverty. Apart from these and other not so easily identifiable causes of social tension, the democratic process itself is the most potent cause of tension. Each group, community and region is, as it were, up in arms against the Union Government, the only viable unifying force still left intact. Revivalism of religious fundamentalism has pitted followers of different religions against each other. In Kashmir, it is Islam against Hindu hegemony; in Gujarat, it is Hindutva forces against Muslims and in Punjab it is Sikhs against Hindus .These tensions are not conflicts of divergent cultures; each one of them is potentially and actually a political movement aiming at realizing not a mere cultural or religious objective .The objective is open or camouflaged , political. Communalism is perversion of religion from a moral order to an arrangement of contemporary political convenience. In our country, eight major religious communities co-exist, namely the Hindus (82%), Muslims (12.12%), Christians (2.6%), Sikhs (2%), Buddhists (0.7%), Jains (0.4%),Parsis (0.3%) and Jews(0.1%). Quite often communalism is wrongly used as a synonym for religion or simply for a sense of belonging to a community .A communalist is basically interested in using and exploiting religion and that too for political, electoral and economic gains. Communalism is exploitation of religion, sometimes open and sometimes subtle.[7]

Kashmir Problem - Kashmir is a predominantly Muslim State situated in the backdrop of a long chain of Muslim countries of Asia. The militant outfits operating in the State draw their sustenance from rulers in Pakistan. Apart from geo-political factors, other factors too have helped in strengthening the forces of secessionism. They are absence of true democratic institutions in the State, rigged elections, Press censorship and denial of Fundamental Rights. The policy of extending subsidies has led to the developmental lag and mounting unemployment. The absences of ameliorative political reforms and unintended excesses by hard-pressed para-military forces have led to the creation of a plethora of secessionist groups. Whereas Jammu and Kashmir Liberation Front (JKLF) wants complete independence of the state, others like Hizbul Mujahideen and Jamait-Islami stand for Kashmir's merger with Pakistan[8]. The politics of expediency and policy of subsidies have created alienation and embitterment in Kashmir. Out of 12,400 civilians killed by militants in the past 12 years, 11,000 were Muslims. The Government of Mufti Mohammed Sayeed in Kashmir was settling down trying to come to grips with the ground situation, but there are positive signs-noticeable decline in militancy, State aid for victims of terrorism and Para-military excesses – that signal the Government's direction.

Punjab Problem - Roots of secessionism and communalism in Punjab go back to the year 1931.In the First Round Table Conference, the Akali delegates proposed the formation of an independent state to be named Azad Punjab or Khalistan. The Batala resolution of 1968 for the first time pressed the Sikh case for being considered a sovereign community that was further reiterated by Anandpur Sahib resolution .In 1974 , Jagjit Singh Chauhan declared Government in exile and the entry of firebrand religious bigot Jarnail Singh Bhindranwale meant the formation of a parallel government in parts of Punjab on communal lines .The Operation Blue Star hurt the Sikh psyche immeasurably and the subsequent riots against Sikhs following the assassination of Prime Minister Indira Gandhi in November , 1984 ,further exacerbated the ulcer of Sikh alienation. The Sikh militancy and terrorist activities in Punjab were put an end to under K.P.S.Gill's leadership.

Gujarat Carnage - In the multi-religious pluralistic society there can be no peace in the country without peace among different religious communities in India .The communal riots that occur so often in the country bear testimony to the lack of peace among different religious communities living in India. The Gujarat carnage is the beginning of a new chapter for the Bharatiya Janata Party in India. The Godhra and Post-Godhra incidents pointed to the absence of political sanity in Gujarat. But, fortunately, the Aksharadham attack saw no devastating aftermath directed against Muslims. The common people have followed the path shown by political leaders. Although inter-communal clashes have been distressingly frequent in the half century and more of partition and Indian independence, the scale and manner of the killings under the Bharatiya Janata Party's watch in Gujarat are in many ways unique. The post-Godhra and Ahmedabad riots between Hindus and Muslims helped B.J.P to retain power in Gujarat. Nothing could represent a more provocative insult to the national commitment to communal harmony and pluralist co-existence than Narendra Modi's repeated taunts of the Muslim minority people of his own state his insinuations that they are susceptible to the supposedly adventurous designs of Pakistan and his final desperate suggestion that if the opposition Congress wins the election, it would represent a victory for Pakistan. Most mocking and challenging of the authority of the Indian Constitution has been the campaign of the BJP leadership buttressed as it was by the incendiary propaganda of the Vishva Hindu Parishad which openly called upon Hindus to "protect their interests."

Gujarat's election puts to test the faith of millions of citizens in this country's ability to rise above such sectarian and narrow-minded bigotry[9].The people of Gujarat must reject the poison of bigotry and chauvinism that is being spread out by the peddlers of Hindu chauvinism. It is important that secular and pluralist values triumph in Gujarat in the near future. After the attack on Indian Parliament on December 13, 2001, by some Pakistan-Kashmir terrorists, India began laying anti-personnel and anti-vehicle landmines along its 1800 miles border with Pakistan .this proxy war between India and Pakistan went on for a few months. Now that peace prevails again on the borders, attention has to be concentrated on how to defuse the communal situation. The terrorist attack on Indian Parliament was unprecedented not only in the history of India but also in the annals of democracy in the world. It also manifests utter disregard and contempt for parliamentary democracy by Pakistan which only can boast of a military-propped democracy.

Communalism gave rise to a culture and climate of anti-minoritism resulting in increasing intolerance .Communalism, regionalism, linguistic fanaticism and casteism have become closely linked with our country's socio-political evolution.

Conclusion - The modern India state has to grapple with the challenges posed by communal forces. Therefore, we must oppose communalism not only in minority but also in the majority if we do not want to weaken the growth of real democratic and secular spirit. The real challenge to modern India state is from organized religious groups11.The internal weakness of the Indian state is and will be exploited by the imperialists who have important stakes in our country which is following the path of capitalist modernization and globalization. This is a real threat to the National Integration of India. The concept of secularism in India is the best antidote to communalism. In a society where secular values prevail, it's hard for the communalist to sow the seeds of religious fundamentalism. The uniqueness of Indian secularism is that it admits the freedom of religion unlike its western type of avoiding religion. This religious freedom granted in the secular concept, makes the consolidation of religious people under one umbrella.

References :-

1. Ram Ahuja, *Social Problems in India*, Rawat Publications, Jaipur, 1992, p.104.
2. Zenab Banu, *Politics of Communalism* , Popular Prakashan, Bombay, 1989, p.2.
3. Ibid.
4. George Mathew, *Communal Road to a Secular Kerala.* Concept publishing company New Delhi, 1994, p.11.
5. Bipan Chandra, *Communalism in Modern India*, Vikas Publishing House Private Ltd., New Delhi, 1984, p.1.
6. Zenab Banu, *Politics of Communalism*, Popular Prakashan Bombay, 1989, p.10.
7. Rashiduddin khan, Democracy in India, NCERT, 1990, P.167.
8. Balkrishna Kurvey, communal crisis in Indian sub-continent and its peaceful resolution journal of Indian institute for peace, disarmament and environmental protection, summer 2002, P.4.
9. The Hindu, Dec 12,2002.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

महिला मानवाधिकार - एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. संगीता विजय * अनीता रानी राजावत **

प्रस्तावना – मानवाधिकार वर्तमान में ज्वलन्त मुद्दे, चुनौती एवं समस्या के रूप के विश्वव्यापी बने हुए है। वस्तुत: मानवाधिकार को लिंगभेद के आधार पर महिला मानवाधिकार की अवधारणा के रूप में व्याख्या नहीं जा सकती है। चूंकि मानवाधिकार तो मानव के गरिमामय जीवन जीने के आधार होते है। इस आधार पर प्रकृति द्वारा निर्मित व प्रदत्त मानव के दोनों रूपों अर्थात, महिला एवं पुरूष दोनों के लिए मानवाधिकार नितांत आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है। किन्तु सदियों से समस्त वैश्विक समाज में पितृसत्तात्मक व्यवस्था, लैंगिक असमानता के कारण पुरूषों की तुलना में महिलाओं को कम शक्तिशाली तथा क्षमतावान माना जाता रहा है। परिणामत: महिलाओं की प्रस्थिति, अधिकार एवं स्वतंत्रता का पलड़ा हमेशा से ही निम्न रहा।

वस्तुत: मानवाधिकारों की श्रेणी में आने वाले समस्त अधिकारों जो मानव को प्राप्त होते है। महिलाओं को भी समान रूप से प्राप्त होने चाहिए, क्योंकि वे भी मानव है। महिलावादी चिन्तन, महिला आन्दोलनों तथा महिलावादी सोच एवं विचारधारा ने महिला मानवाधिकारों की आवश्यकता, आधार, अवधारणात्मक विचारबंध तथा वास्तविकता के धरातल पर उतारने का प्रयास किया। परिणाम स्वरूप आज महिला मानवाधिकार का मुद्दा सर्वाधिक ज्वलंत एवं चर्चित बन गया है।

महिलावादी चिंतकों ने समाज में महिला पुरूषों की सापेक्ष स्थिति, परिवार, कानून, राजनीति एवं जेण्डर के बारे में व्याप्त चुप्पी पर प्रश्न उठाए, साथ ही जेण्डर परिप्रेक्ष्य से सत्ता, अधिकार, प्रभुत्व, दमन, राजनीति आदि को पुन: परिभाषित करने की ओर ध्यान आकर्षित किया। परिणामस्वरूप महिला मानवाधिकार की अवधारणा की आधारभूत संरचना का विकास प्राप्त हुआ। अत: प्रस्तुत शोध पत्र में महिला मानवाधिकार पर केन्द्रित किया गया है।

महिला मानवाधिकार से अभिप्राय यह है कि महिला एक मानव है, वह पुरूष के समान ही बुद्धि की अधिकारिणी है। अत: वे सब अधिकार जो मानव को प्राप्त है, उसे भी प्राप्त होने चाहिए अर्थात् एक मानव होने के नाते गरिमामय जीवन यापन हेतु पर्याप्त दशाएं मानवाधिकार के रूप में महिला को प्राप्त होना महिला मानवाधिकार है किन्तु चूंकि महिला को प्रकृति द्वारा विशेष क्षमताओं एवं गुणों से सम्पन्न बनाया गया है उनके लिए महिलोचित दशाओं की आवश्यकता भी होती है। अत: महिला को महिला मानव होने के लिए महिलाओं को व्यक्तित्व के विकास, गरिमामय तथा न्यूनतम जीवन स्तर की गारंटी देने वाले अधिकार महिला मानवाधिकार होते है। इनमें महिलाओं के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, व्यक्तिगत, शैक्षणिक अधिकार सम्मिलित होते है। अत: महिला मानवाधिकर एक महिला को एक व्यक्ति या महिला मानव के रूप में अपना जीवन यापन करने की परिस्थितियाँ है।

महिला मानवाधिकारों की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार गिना सकते है–

- **महिलोचित मानवाधिकार–** महिला मानवाधिकार महिलाओं को उनके महिलोचित गुणों के कारण प्राप्त होते है।
- **बहुआयामी–** ये अधिकार राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक सांस्कृतिक, शारीरिक आदि सभी तरह के होते है।
- **सर्वव्यापी–** इसका अर्थ है कि महिला मानवाधिकार सभी महिलाओं के लिए होते है। चाहे ये युद्ध बंदी हो, श्रमिक हो या कोई और जाति, रंग नस्ल या प्रजाति के
- **संरक्षित एवं व्यवहारिक–** महिला मानवाधिकारों को राज्य द्वारा वैधानिक संरक्षण भी प्राप्त होता है। साथ ही महिला मानवाधिकार समाज में व्यवहारिक धरातल पर लाने योग्य होते है।
- **मानवतावादी एवं कल्याणकारी–** महिला मानवाधिकार एक मानव के रूप में मानवीय जीवन जीने की आधारभूत प्रस्थिति प्रदान करते हैं। एक महिला को जननी के रूप में प्राप्त मानवाधिकार समग्र समाज के कल्याण से सम्बद्ध होते है।

इस प्रकार महिला मानवाधिकार की अवधारणा, व्यापक, कल्याणकारी, महिलोचित, मानवतावादी एवं व्यवहारिक है।

महिला मानवाधिकार – चिन्तन एवं ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य–प्राचीन राजनीतिक चिन्तन में केवल प्लेटो ने महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार देने की बात करता है।[1] महिला अधिकारों के विचार का प्रारम्भ 15वीं शताब्दी के आरंभ में फ्रांसीसी महिला क्रिश्चयन डे पिजन की पुस्तक **'लेलिवर डोला सिटे डेस डेमस'** में हो गया था। 17वीं शताब्दी के दौरान अनेक महिला लेखकों फ्रांस की Marieds Gournay ने अपनी पुस्तक Egalite des Hommeset des permmes (1641) एन्ना मारिया The Learnld Maid तथा Whether a maid may be a scholar तथा एफ्रा बहन के नाटक Jealous Bridegroom ब्रिटिश महिला Mary Astell ने A serious proposal to the ladies for the advancement of their true and greatest interest के अन्तर्गत क्रिश्चियन डे पिजन का अनुसरण किया।[2] जाँआतुआं कोन्दर्से भी महिला–पुरुष समानता का प्रबल पक्षधर था। मर्सी वारेन और एबिगेल एडम्स के नेतृत्व में महिलाओं ने पहली बार मताधिकार और सम्पत्ति के अधिकार सहित सामाजिक समानता की मांग करते हुये जॉर्ज वाशिंगटन और टॉमस जैफर्सन पर इन मुद्दो को संविधान में शामिल करने के लिए जोर डाला।[3]

इसी काल में महिला अधिकारों से संबंधित दो महत्वपूर्ण दस्तावेज

* सह आचार्या (राजनीतिक विज्ञान एवं लोक प्रशासन) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत
** शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

प्रकाशित हुऐ। इनमें से पहला था– ओलिम्पी द गूजे , दूसरा सर्वाधिक महत्वपूर्ण दस्तावेज मेरी वोल्सटन क्राफ्ट Vindicational of the Rights of women 1792 थी। 19वीं व 20वीं शताब्दी के नारीवादी आंदोलनों की बुनियादी रूपरेखा इस पुस्तक में ही दिखाई देती है।[4] महिला अधिकारों की विचारधारा को काल्पनिक समाजवादी जैसे सेंट साइमन, फूरियर तथ रॉबर्ट आवेन के चिन्तन के माध्यम से भी गति मिली।

विलियम थाम्पसन (1975–1844) की पुस्तकों Appeal on teh Half of the Human Race, Women, Against teh pretensions of the other Half, व Men to Retain then in Political Shence civil and Domestic slavery में सामने आया।[5] जॉन स्टुअर्ट मिल की पुस्तक **'ऑन दी सब्जेक्शन ऑफ विमिन'**, एंगेल्स की पुस्तक **'फेमिली, प्राइवेट प्रॉपटी एण्ड ऑरिजन ऑफ स्टेट'**, अगस्त बेबेल ने अपनी पुस्तक **'नारी और समाजवाद'**, 'सीमोन द बूवोय का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उनकी प्रसिद्ध पुस्तक **'दी सेकण्ड सेक्स'** में उन्होंने सिद्ध किया कि **महिला पैदा नहीं होती बल्कि बना दी जाती है।** बेट्टी फ्रीडेन की पुस्तक **'दी फेमिनाइन मिस्टीग'**, सुशान बैसनेट ने अपनी पुस्तक **'फेमिनिस्ट एक्सपीरियेंसेज'**, **'दी सेकण्ड स्टेज'** में अमेरिकी महिलाओं में व्याप्त असंतोष का जिक्र किया है। साथ ही केटमिलेट की **'सेक्सुअल पोलिटिक्स'** और शुलामिथ फायरस्टोन की '**दी डायलेक्टिक ऑफ सेक्स – दी केस फोर फेमिनिस्ट रिवोल्यूशन'**, टाई–ग्रसएट किन्सन का **'अमेजन आडिसी'** तथा मेरी डेली की **'गाइनाकोलोजी : दी मेटाइपिक्स ऑफ रेडिकल फेमिनिज्म सेक्सुअल पोलिटिक्स'**। इस प्रकार महिला मानवाधिकारों की प्राप्ति में महिलावादी चिंतन ने निश्चित ही एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है।[6]

भारत में भी महिला अधिकारों के प्रति समानता एवं सकारात्मक दृष्टिकोण प्राचीनकाल से ही रहा है। यद्यपि व्यवहार इसके विपरीत रहा है। प्राचीन चिन्तन में मनु ने महिलाओं को एक ओर पूजनीय स्थान दिया वही दूसरी ओर अधिकारों से वंचित भी किया है। कौटिल्य ने महिलाओं को राजनैतिक क्षेत्र में कार्य करने के अधिकार दिऐ है। आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन में राजा राममोहन राय, दयानन्द सरस्वती, ज्योतिबा फूले, विवेकानन्द, तिलक, गाँधी आदि के द्वारा महिलाओं की प्रस्थिति में सुधार, महिला सशक्तिकरण एवं अधिकारों के प्रति न केवल सकारात्मक मत अभिव्यक्त किये वरन् इस दिशा में व्यवहार के धरातल पर ठोस प्रयास भी किये।

संयुक्त राष्ट्र संघ और महिला मानवाधिकार – 1945 में संयुक्त राष्ट्र संघ की प्रस्तावना में भी महिला एवं पुरुष को समान दर्जा एवं अधिकार प्रदान किऐ गऐ है। मानवाधिकारों के संरक्षण हेतु किए गए प्रयासों के द्वारा भी महिलाओं को भी समान अधिकार मिले है, किन्तु महिलाओं के मानवाधिकारों के लिए भी विशेष रूप से अनेक अभिसमय पारित किऐ गऐ है। जो इस प्रकार है–

1. **महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों पर अभिसमय 1952 –** इसके द्वारा महिलाओं को बिना किसी भेदभाव के पुरूषों के समान चुनाव में वोटे देने, राष्ट्रीय कानून द्वारा स्थापित सरकारी संरचनाओं का चुनाव लड़ने तथा राष्ट्रीय कानून द्वारा सरकारी दफ्तरों एवं सरकारी कार्यो में भागीदारी का अधिकार दिया गया।[7]

2. **विवाहित महिलाओं की राष्ट्रीयता पर समझौता 1957 –** प्रत्येक समझौते में कहा गया है कि पुरूष व महिला को अपनी राष्ट्रीयता प्राप्त करने, परिवर्तित करने एवं बनाये रखने का समान अधिकार है।[8]

3. **विवाह की सहमति, विवाह की न्यूनतम आयु एवं विवाह के पंजीकरण पर समझौता 1962 –** पुरुष एवं महिला को बिना किसी जाति, राष्ट्रीयता अथवा धर्म की सीमा के विवाह का एवं परिवार प्रारंभ करने का अधिकार देता है।

4. **महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव के समाप्ति पर घोषणा, 1967 –** इस के द्वारा महिलाओं के प्रति भेदभाव को संबंधी सभी परम्पराओं, कानूनों, नियमों व व्यवहारों को समाप्त करने तथा समान कानूनी संरक्षण प्रदान करने के उद्देश्य से समानता के सिद्धान्तों को सदस्य देशों के संविधान में सम्मिलित करने की अपेक्षा की।[9]

5. **आपातकाल एवं सशस्त्र संघर्ष में महिला एवं बच्चों के संरक्षण पर घोषणा, 1974 –** महिलाओं व बच्चों पर किसी प्रकार का आक्रमण व बमबारी पूर्णत: निषेध होगी। उन पर किसी भी प्रकार के रासायनिक या जैविक हथियारों का प्रयोग 1925 के जेनेवा प्रोटोकोल तथा 1949 के जेनेवा अभिसमय एवं मानवता से संबंधित कानूनों का हनन माना जायेगा।

6. **महिलाओं के प्रति सभी प्रकार के भेदभाव समाप्त करने सम्बन्धी कन्वेशन, 1979 –** यह अभिसमय महिलाओं को राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, नागरिक तथा अन्य सभी क्षेत्रों में पुरुषों के समान मानव अधिकार एवं मूलभूत स्वतंत्रता प्रदान करता है।[10]

महिला मानवाधिकारों के संवर्धन हेतु किऐ गऐ विश्व सम्मेलन – संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा महिला मानवाधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन हेतु किऐ गए प्रयासों में अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन भी महत्वपूर्ण है। जो इस प्रकार है–

1. प्रथम विश्व सम्मेलन, मैक्सिको (1975)
2. द्वितीय विश्व सम्मेलन, कोपनहेगन (1985)
3. तृतीय विश्व सम्मेलन, नैरोबी (1985)
4. चतुर्थ विश्व सम्मेलन, बीजिंग (1995)
5. बीजिंग+ वर्ष 2000

संगठनात्मक तंत्र – संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा महिला मानवाधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन हेतु न केवल कानूनी स्तर वरन् संगठनात्मक तंत्र विकसित करने का प्रयास किया गया, जिसके लिए अनेक महिला अभिकरणों एवं आयोगों का गठन किया गया। जो इस प्रकार है–

1. **महिलाओं की प्रस्थिति सम्बन्धी आयोग**–यह आयोग महिलाओं की स्थिति तथा अधिकारों से सम्बन्धित प्रत्येक मुद्दे पर संयुक्त राष्ट्र के लिए सिफारिशें एवं रिपोर्टो को तैयार करता है।

2. **महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव–उन्मूलन समिति –** यह समिति महिलाओं के प्रति सभी प्रकार के भेदभाव उन्मूलन पर संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन के पालन पर निगरानी रखती है।

3. **महिलाओं के निमित्त संयुक्त विकास निधि (यूनीफेम)–** यह एक स्वैच्छिक निधि है जो महिलाओं के मानवाधिकारों को प्रोत्साहित करने वाले नये ढंग के कार्यक्रमों को समर्थन एवं तकनीकी सहायता देती है।

4. **महिलाओं की प्रगति के निमित्त अंतरार्ष्ट्रीय शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान (इन्स्ट्रा)–** यह संस्थान महिलाओं की प्रगति ,नयी सूचना और संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग कर शोध एवं प्रशिक्षण का कार्य करता है।

5. **यू.एन. वूमन**12 – यू.एन.वूमन महिला सशक्तिकरण और लिंग समानता हेतु, महिलाओं तथा लड़कियों के विरूद्ध भेदभाव का निष्कासन करने के लिए विभिन्न मुद्दों पर कार्य कर रहा है। इस के चार विभाग कार्य कर रहे हैं। जो इस प्रकार है–

1. डिवीजन फॉर द एडवांशमेन्ट ऑफ वूमन (DAW)
2. इंटरनेशनल रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूशन फोर द एडवांसमेन्ट ऑफ वूमन (INSTRW)
3. आफिस ऑफ द स्पेशल एडवांसमेन्ट ऑफ वूमन (OSAGI)
4. यूनाइटिड नेशन्स डेवलपमेन्ट फण्ड फोर वूमन (UNIFEM)

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि महिला मानवाधिकारों की अवधारणा का विकास एवं क्षेत्र व्यापक हो रहा है। महिला मानवाधिकार का विचार एवं सिद्धान्त या अवधारणा के रूप में प्रफलन एक लम्बे सफर के उपरान्त हो पाया है। महिला को एक मानव के रूप में पहचान तथा उसके अधिकारों के संदर्भ में चेतना के सफर में अनेक महिला विद्वानों तथा विचारकों का अतिविशिष्ट योगदान रहा है। इस दिशा में संयुक्त राष्ट्र संघ की भूमिका अग्रणी रही है। जहाँ से समग्र विश्व में महिला प्रस्थिति में सुधार हेतु कानूनी एवं व्यवहारिक प्रयासों को सुदृढ़ता तथा सार्वभौमिकता प्राप्त हुई। यद्यपि महिला मानवाधिकार व्यवहार के धरातल पर अभी भी प्रश्नवाचक बने हुए है, किन्तु फिर भी इसका बिगुल बज गया है और निश्चित ही विश्व में क्रान्तिकारी परिवर्तन होंगें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 Bryson, Valeric, Feminist Political Theory, Parag on House New York, 1992, Page-1

2. Agosin, Majorie, women gender and Human rights : A global perspective, Rawat publication, Jaipur, 2003, Page, 20-21

3 सक्सैना, प्रगति, द्वारा अनुवादित जॉन स्टूअर्ट मिलकृंत **महिलाओं की पराधीनता,** राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002, पृ. 11

4 जोशी मधुबी द्वारा अनुवादित जर्मन ग्रीयर कृत **विद्रोही महिला,** राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001, पृ. 68

5 माहेश्वरी, सरला, **नारी प्रश्न,** राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, पृ. 16–17

6 श्रीवास्तव, सुधारानी, भारत में मानवाधिकार की अवधारणा, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2003, पृ. 107

7 V.P.Srivastava, Human Rights : Issues and implem entation (Vol-1), Indian Publishers, Delhi, 2004, page 431

8 http://www.untreaty.un.org/English/Treatyevent2001/Index.htm.Accessedon 5.11.14

9 Digumarti Bhaskara, Rao, International Encyclopiedia of Human Right : International instruments of Human Rights, Discovery Publisher, New Delhi, 2001, Page 113

10 http://www.un.org/womenwatch/daw/cedaw/Accessed on 20.11.13

11 http://www.unwomen.org/en/about.us /about.unwomen accessed on 02.05.2016

****

दर्शन का पोप - प्लेटो

डॉ. मीनाक्षी पँवार *

प्रस्तावना - प्रख्यात अमेरिकी कवि, निबंधकार और व्याख्याता राल्फ वाल्डो एमर्सन ने कहा था कि 'जीवन दर्शन प्लेटो है और प्लेटो ही जीवन दर्शन है'[1] प्लेटो, सुकरात और अरस्तु की त्रिमूर्ति के अभिन्न अंग थे, जिन्होंने पाश्चात्य दर्शनशास्त्र को एक नया रूप प्रदान किया। प्लेटो राजनीतिक दर्शन के इतिहास में सर्वाधिक प्रभावशाली दार्शनिक है। वह एक यूनानी विचारक मात्र नहीं है और न ही उनके विचार देश और काल की सीमाओं में आबद्ध हैं, वे आज समस्त विश्व के राजदर्शन का आधार बने हुए है। प्लेटो के सम्बन्ध में डॉ. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा लिखते है, 'यूरोपीय चिंतन के इतिहास में उसका इतना व्यापक प्रभाव रहा है कि वह निरा व्यक्ति न होकर एक परम्परा और प्रतीक के रूप में हमारे सामने आता है ....आध्यात्मिक और नैतिक वैशिष्ट्य की जो परम्परा उसने प्रतिपादित की है, वह उसे शंकराचार्य ,दाँते और काण्ट की श्रेणी में स्थान दिलाती है ....उदारतावादी न होकर भी राजनीति को स्वार्थपूर्ण मनोरथों, धनलिप्सा और अन्याय तन्त्र के आक्रमणों से मुक्त करने का उसका सुझाव लोकतान्त्रिकों को भी सदैव ही आकृष्ट करता रहेगा।'[2] प्लेटो ने अपने प्रसिद्ध उपदेशों के द्वारा परम प्रिय गुरु सुकरात की शिक्षाओं को लगभग अपने खुद के प्रयासों से परिभाषित और प्रचारित किया। प्लेटो के ज्ञान की विशालता दर्शनशास्त्र से राजनीति, काव्यात्मकता से धर्मशास्त्र और नीतिशास्त्र से लेकर शिक्षाशास्त्र तक को समाहित कर लेती है।

सुकरात और उनके जीवनीकार छात्र प्लेटो के उत्थान के साथ मनुष्य का मस्तिष्क और आत्मा ही चिंतन का विषय बन गए। प्लेटो द्वारा सुकरात का कथन 'खुद को पहचानों तब तक प्रचारित की गई जब तक कि यह पश्चिमी विचारधारा की पहचान नहीं बन गई। सुकरात के विचारों और सिद्धान्तों को प्रचलित करने का सबसे अधिक श्रेय प्लेटो को जाता है, जिन्होंने अपने चिंतन और अध्ययन से अपने परम गुरु सुकरात की शिक्षाओं को ना सिर्फ सरल अर्थों में समझाने का प्रयास किया अपितु उनके मतों को नए आयाम भी दिए।

मैक्सी ने इन शब्दों में प्लेटो की महत्ता को स्पष्ट किया कि 'उसकी रचनाएं चौबीस शताब्दियां बीत जाने के बाद आज भी आदर के साथ पढ़ी जाती है, इनसे प्रेरणा ग्रहण की जाती है और इनके आधार पर अपने मतों की पुष्टि की जाती है। किसी विचारक की अमरता और महत्ता का इससे अधिक प्रबल प्रमाण नहीं मिल सकता है।'[3]

जन्म -प्लेटो का जन्म ई.पू. 428-427 में यूनान के एक नगर राज्य एथेन्स में हुआ था।[4] इनकी माता का नाम पेरिकिट्यानी और पिता का नाम एरिस्टन था। प्लेटो की माता एथेन्स के प्रसिद्ध विधिवेत्ता सोलन की वंशज थी, इसीलिए प्लेटो पर भी कुलीन परिवार से सम्बन्ध होने के कारण, कुलीनता का प्रभाव था। प्लेटो का वास्तविक नाम अरिस्तोक्लीज था, किन्तु उसके खूब भरे, चौड़े कन्धों के कारण उसके मल्ल शिक्षक ने उसे प्लेटो[5] का नाम दिया।

प्लेटो की यात्रा -अधिकांश नवयुवकों की तरह प्लेटो भी एक राजनीतिज्ञ, एक राजनेता बनना चाहता था, किन्तु एथेन्स के इतिहास में एक अत्यन्त पीड़ाजनक घटना घटी, जिसने प्लेटो के सम्पूर्ण जीवन दर्शन को बदल दिया। यूनान में 'सबसे बुद्धिमान व्यक्ति' सुकरात को एथेन्स के न्यायधीशों ने मृत्युदण्ड़ सुना दिया और सुकरात को विषपान करना पड़ा। सुकरात को दिए गए मृत्युदण्ड़ ने प्लेटो को बहुत परेशान कर दिया। वह सोचने लगे कि जो शासन इतने महान व्यक्ति को मृत्युदण्ड़ दे सकता है, वह शासन कितना गलत है। वहां की जीवन पद्धति कितनी दूषित है। प्रश्न उठा- तो फिर सही जीवन पद्धति क्या है ? श्रेष्ठ शासन कौन-सा है ? इसी श्रेष्ठ शासन की तलाश में प्लेटो अपने नगर से निकल गये। इसके बाद उनका 12 वर्ष का इतिहास अज्ञात है। उनके इस अज्ञातवास के सम्बन्ध में यह अनुश्रुति प्रसिद्ध है कि उन्होंने ज्ञान प्राप्ति के लिए इस काल में मिश्र, इटली आदि देशों का भ्रमण किया, यहां तक कहा जाता है कि उन्होंने गंगा के तट तक भारत की यात्रा भी की थी।[6]

आदर्शवाद से यथार्थवादी की ओर -प्लेटो की यात्रा यहीं खत्म नहीं होती है। यद्यपि प्लेटो राजनीति से सन्यास ले चुका था फिर भी उसकी यही इच्छी इच्छा अवश्य थी कि वह जिन सिद्धान्तों और आदर्शो का प्रतिपादन करता है, उन्हें व्यवहार में परिणत किया जाना चाहिए। सौभाग्य से उसे ऐसा अवसर प्राप्त हुआ।

सिराक्युस के शासक डायोनिसिस प्रथम को आदर्श शासक बनाने के अवसर उसे प्राप्त हुए। पहली बार प्लेटो डायोनिसिस प्रथम को आदर्श शासक बनाने गया। वह शासक अत्यन्त विलासी और क्रूर था। प्लेटो ने जब उसे अपनी कल्पना का दार्शनिक शासक बनाने के उपदेश दिये तो डायोनिसिस प्रथम इतना नाराज हुआ कि उसने प्लेटो को एक दास के रूप में बिकवा दिया। बड़ी कठिनाई से प्लेटो ने अपने प्राण बचाये और वह एथेन्स पहुंचे।

डायोनिसिस प्रथम की मृत्यु के बाद डायोनिसिस द्वितीय जब शासक बना तो एक बार फिर प्लेटो को सुअवसर मिला। बड़े उत्साह से वह सिराक्यूज की ओर गये। प्लेटो ने सिराक्यूज पहुंचकर नये शासक को दार्शनिक शासक बनने के लिए गणित और ज्यामिति के कठोर पाठ पढ़ाने आरम्भ किये। शासक की समझ में ही नहीं आता था कि नीरस एवं बेजान पाठों का अच्छे राजनीतिज्ञ बनने से क्या सम्बन्ध है। इस बीच प्लेटो ने देखा कि सिराक्यूज का दरबार घिनौनी राजनीति और हीन षड्यन्त्रों का अखाड़ा बना हुआ है। उसके उपदेश बेकार सिद्ध हो रहे थे। निराश प्लेटो वापस एथेन्स लौट आये। उनका आदर्शवाद अब पराजित हो चुका था। उन्होंने कल्पना के पंख उतार

*प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

दिये और अब वह यथार्थ की धरती पर चलने लगे।

प्लेटो और दि अकादमी – 12 वर्ष तक देश–विदेश घुमने के बाद प्लेटो जब एथेन्स पहुंचे तब उनकी आयु 40 वर्ष (387 ई.पू.) की थी। उन्होंने एकाडेमस या हेकाडेमस की धरती पर 'दि अकादमी' की स्थापना की जो पाश्चात्य सभ्यता की सबसे पुरानी मानी जाने वाली औपचारिक शिक्षण संस्थाओं में से एक है। बहुत से प्रसिद्ध बुद्धिजीवियों ने 'दि अकादमी' में शिक्षा प्राप्त की, अरस्तु भी उनमें से एक थे।

प्लेटो की अकादमी वैज्ञानिक अनुसंधान का एक शिक्षणालय और संस्थान दोनों ही था। फोस्टर के शब्दों में 'प्लेटो की अकादमी केवल बौद्धिक प्रशिक्षण का केन्द्र मात्र नहीं थी। यह यूनानी जीवन को सुधारने के लिए आवश्यक राज वैज्ञानिकों तथा शासकों के निर्माण की कार्यशाला थी।'[7] अकादमी की सफलता के संदर्भ में ज्ञात होता है कि यह लगभग 900 वर्षो तक ज्ञान की किरणें फैलाती रही।[8]

कार्य – अधिकतम विद्वानों का मत है कि 399 ई.पू. के तुरंत बाद प्लेटो ने विस्तारपूर्वक बड़े पैमाने पर रचना करनी शुरू कर दी थी। प्लेटो की आदर्शवादी कार्य शैली किस तरह विकसित हुई इस पर कई मत प्रचलित है। प्लेटो के लेखन के विषय में ये मत तीन भागों में बंट जाते है, प्रथम, 'सुकरात के संवाद के नाम से जाना जाता है जो संभवत: 399 से 387 ई.पू. के वर्षो के बीच लिखा गया था। 'दि एपोलॉजी', 'क्रिटोय, 'लाचेस', 'लिसिस', 'चार्माइड्स', 'युथीफ्रोय, 'हिप्पीअस माईनर एंड मेजर', 'प्रोटागोरस', 'गार्जिअस' और 'आयॉन' संभवत: इसी अवधि में लिखी गई रचनाएं हैं। द्वितीय– 387 से 367 ई.पू. के बीच का समय जिसे कि प्लेटो के संक्रमणकाल के नाम से जाना जाता है। प्लेटो अपने संवादों को बहुत अच्छा लिख सकते थे, जो कि काफी क्लिष्ट और गूढ़ थे जैसे 'दमेनोय, 'युधिदेमस', 'मेन्क्सेनस', 'केटाइलस', 'रिपब्लिक', 'फेड्रस', 'सिम्पोसियम' और 'फेडोय। इन रचनाओं में प्लेटो का झुकाव आध्यात्मिक परिकल्पनाओं की तरफ था। तृतीय–प्लेटो की साहित्यिक गतिविधि के युग की अंतिम अवधि 360 से 347 ई.पू. मानी जाती है।

नैतिकता – प्लेटो के कार्यो से यह स्पष्ट होता है कि रिपब्लिक में केवल राज्य की व्यवस्था का वर्णन नहीं है। यह महाभारत की भांति प्लेटो के विचारों का विश्व कोश है। इसमें नीतिशास्त्र, दर्शनशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, अध्यात्मशास्त्र आदि विविध विषयों का वर्णन है। इस एक ही ग्रंथ में अनेक शास्त्रों और विषयों का वर्णन है। इसका मुख्य कारण यह है कि उस समय तक यूनानियों ने ज्ञान का विभिन्न शास्त्रों में सुस्पष्ट वर्गीकरण नहीं किया था।

यूनान प्रकृति के दर्शन (Philosophy of Nature) की तुलना में मानव के दर्शन (Philosophy of Man) को अधिक महत्व देते थे। प्लेटो के सामने मुख्य प्रश्न यह था कि अच्छा आदमी कौन है और उनका निर्माण कैसे हो सकता है ? यह मुख्य रूप से नैतिक प्रश्न होते हुए भी यूनानियों के लिए राजनीतिक प्रश्न था, क्योंकि वे यह मानते थे कि व्यक्ति राज्य का सदस्य बनकर ही उत्तम जीवन बिता सकता है। अत: पहले प्रश्न से स्वाभाविक रूप में यह दूसरा प्रश्न उत्पन्न होता है कि उत्तम राज्य क्या है और इसका निर्माण किस प्रकार संभव है ? इस प्रकार नैतिक दर्शन राजनीतिशास्त्र में परिवर्तित हो जाता है, किन्तु इन प्रश्नों का उत्तर ज्ञान पर निर्भर है, सुकरात के सिद्धान्त के अनुसार उत्तम गुणों वाले व्यक्ति के लिए ज्ञानी होना आवश्यक है, अत: तीसरा प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि, उत्तम व्यक्ति को, अच्छा बनने के लिए कौन सा चरम ज्ञान (Ultimate Knowledge)पाना आवश्यक है, इस ज्ञान के स्वरूप का निर्धारण अध्यात्मशास्त्र द्वारा होता है। इस प्रश्न का आध्यात्मशास्त्र द्वारा समाधान होने पर चौथा प्रश्न यह पैदा होता है कि उत्तम राज्य मनुष्यों को सद्‌गुणी बनाने के लिए यह चरम ज्ञान किस प्रकार प्रदान करे ? इसका उत्तर देने के लिए शिक्षा के सिद्धान्त का प्रतिपादन करने की आवश्यकता है। शिक्षा पद्धति को सफलतापूर्वक चलाने के लिए कुछ सामाजिक परिवर्तन करने आवश्यक होंगे, अत: सामाजिक पुनर्निर्माण आवश्यक है। इसके लिये समाज की आर्थिक व्यवस्था में भी कुछ परिवर्तन होने चाहिये। प्लेटो ने मनुष्य को उत्तम बनाने के लिए रिपब्लिक में इन सभी प्रश्नों का उत्तर देते हुए विवेचन किया है।[9]वार्कर ने इसके सम्बन्ध में सत्य ही लिखा है– 'यह मानव के समग्र जीवन का दर्शन (Complete Philosophy of life) का प्रयास है।[10]

नेटलशिप ने लिखा है– 'इसमें मानवीय आत्मा के उत्थान व पतन का आदर्श चित्र है।'[11]

प्लेटोनिक दर्शन (प्रेम) – प्लेटो की वास्तविकता का सिद्धान्त और अवास्तविक संसार का विरोधाभास उनके काव्य, कला, साहित्य और प्रेम के प्रति उनके दृष्टिकोण को दर्शाता है। प्रेम के प्रति आम धारणा उन चीजों में से थी जिनकी प्लेटो आलोचना करते थे। प्लेटोनिक दर्शन में प्रेम की प्रतिष्ठित धारणा प्लेटो की संकल्पना से सिद्ध होती है जैसे कि 'प्रेम सुन्दरता में जन्म लेता है और जो आत्मा परिपूर्ण होती है वह ज्ञान और नैतिकता का चिंतन करती है।' 'फेड्रस' में प्लेटो कहते है कि निम्न अभिलाषाओं को बढ़ावा देना प्रेम नहीं है। प्रेम और शारीरिक सौन्दर्य आते–जाते रहते हैं। केवल प्रेम की शुद्धता ही वास्तविक सुन्दरता को प्राप्त कर सकती है। प्लेटो के दृष्टिकोण से सच्चा प्रेम एक परिष्कृत तथा महानता की ओर ले जाना वाला अनुभव है जो सुन्दरता को जन्म देता है और वास्तविकता के सबसे करीब होता है।[12]

दार्शनिक शासक – प्लेटो ने शासकों के लिए 50 वर्ष की आयु तक की सुदीर्घ प्रशिक्षण की व्यवस्था की है। उसे अपने जीवन में एथेन्स आदि राज्यों के अज्ञानी शासकों (Ignorant)के दुष्परिणामों को देखकर यह दृढ़ विश्वास हो गया था कि संसार में जब तक शांति नहीं स्थापित हो सकती, जब तक सच्चे दार्शनिक शासक न बनें।

प्लेटो दार्शनिक की विस्तृत व्याख्या करता हुआ यह मानता है कि दार्शनिक वह व्यक्ति है, जो इन्द्रियों से प्रतीत होने वाले जगत से ऊपर उठी हुई वास्तविक सत्ता और सत्य के पूर्ण रूप को जानने की इच्छा रखता है।

प्लेटो का दार्शनिक एकान्तवासी, विद्याव्यसनी, लोक व्यवहार से अनभिज्ञ दार्शनिक तत्वों का चिंतन करने वाला कोरा बुद्धिजीवी प्राणी नहीं किन्तु 15 वर्ष तक संसार के विषयों का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करने वाला राजनीतिज्ञ है। वह परम तत्व को जानने वाला तथा जनता की राजनीतिक बीमारियों को दूर करने की शक्ति रखने वाला कुशल चिकित्सक है। उसके परम ज्ञानी होने का यह अभिप्राय है कि वह केवल विश्वासों या अनुभव के आधार पर नहीं किन्तु निश्चित प्रमाणों के आधार पर सुनिश्चित ज्ञान रखता है।[13]

मृत्यु – प्लेटो की मृत्यु की कहानी उनके जीवन की ही तरह प्रेरणास्पद है। एक दोपहर अपने शिष्य के विवाह की दावत में वो एक बड़े भोज का हिस्सा बने और बड़े खुश–मिजाज मन से अपने चाहने वालो से विदा लेकर अपने शयनकक्ष में अल्पनिद्रा लेने चले गए। जब लम्बे समय तक प्लेटो नहीं उठे तब उनके शिष्यों ने उन्हें जगाने की बहुत कोशिश की लेकिन अफसोस कि प्लेटो नींद में ही इस दुनिया से विदा ले चुके थे (81 वर्ष की आयु में 343 ई.पू.)[14]

उपसंहार – प्लेटो केवल एक यूनान का विचारक ही नहीं था क्योंकि प्लेटो के विचार यूनान से बाहर विश्व भर के राजदर्शन का आधार स्तम्भ है। प्लेटो की

'रिपब्लिक' ने न केवल आधुनिक विचारक 'सर टामस मूर' को प्रभावित किया, वरन् सिसरो की 'डी रिपब्लिका' पर भी प्लेटो का स्पष्ट प्रभाव है। सेण्ट आगस्टाइन ने रिपब्लिक की सहायता से दैवी नगर की कल्पना की है। मध्य युग में भी प्लेटो ने राजनीतिक विचारधारा को अत्यधिक प्रभावित किया है। दाँते की पुस्तक 'डी मोनोर्किया' प्लेटो से बहुत प्रभावित है। आधुनिक युग में रूसो, हीगल को प्लेटो के विचारों ने प्रभावित किया। ब्रिटेन में ग्रीन, बोसांके के विचारों पर प्लेटो का ही स्पष्ट प्रभाव है।[15]

प्लेटो का सबसे अधिक प्रभाव उसके शिष्य अरस्तु पर पड़ा। प्लेटो का महत्व तथा अनुदान को स्पष्ट करते हुए कैटलिन ने इसे 'दर्शन का पोपय (The Pope of) कहा है।[16]

नि:सन्देह प्लेटो का राजनीतिक दर्शन महत्वपूर्ण तथा शाश्वत है। अरस्तु से लेकर आधुनिक विचारक तक उसके दर्शन से प्रभावित हुए हैं आने वाली पीढ़ी भी प्लेटो के राजनीतिक दर्शन से प्रेरणा ग्रहण करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राल्फ वाल्डो एमर्सन-रिप्रेजेण्टेटिव मैन, पृ. 41
2. डॉ. विश्वनाथ प्रसाद शर्मा- पाश्चात्य राज. विचारधारा का इतिहास
3. Maxey – Political Philosophies, P. 54-55
4. टेलर - प्लेटो, पृ. 1
5. प्लेटो शब्द का शुद्ध यूनानी उच्चारण प्लातोन है, अरबी में इसी का विकृत रूप अफलातून है
6. विल ड्यूरैण्ट - स्टोरी ऑफ फिलासाफी, पृ. 20
7. फोस्टर - मास्टर्स ऑफ पॉलिटिकल, पृ. 36
8. डॉ.बी.एल.फड़िया - पाश्चात्य राज.चिंतन, पृ. 3
9. हरीदत्ता वेदालंकार - पाश्चात्य राज.चिंतन का इतिहास, पृ. 83-84
10. बार्कर - ग्रीक पोलिटिकल थ्योरी, पृ. 145
11. नेटलशिप -लैक्चर्स ऑन दी रिपब्लिक ऑफ प्लेटो, पृ. 5
12. इन्टरनेट से प्राप्त
13. प्लेटो - रिपब्लिक (कार्नफोर्ड) पृ. 225
14. डॉ. पुखराज जैन - प्रमुख राज. विचारक, पृ. 3
15. डॉ. जे.श्याम सुन्दरम एवं डॉ. सी.पी.शर्मा - राज.विज्ञान, पृ. 142
16. Catlin G. – A history of the Political Philosophers, P. 55

****

भारत की विदेश नीति में असंलग्नता का परिवर्तनशील स्वरूप

महेन्द्र कुमार *

प्रस्तावना – गुटनिरपेक्ष आंदोलन की शैशवावस्था से ही भारत असंलग्नता की नीति का अग्रदूत और पौषक रहा है। भारत ने अमरीका सहित पश्चमी देशों के दबाव और आलोचना के पश्चात भी असंलग्नता की नीति को ना केवल स्वयं अपनाया अपितु पूरे विश्व में इस संकल्पना को विस्तारित भी किया। परंतु भारत ने अपने तत्कालीन सामरिक और राजनैतिक हितों के कारण अपनी असंलग्नता की नीति में समय-समय पर बदलाव किया है। इस बदलाव को विभिन्न चरणों में विश्लेषित किया जा सकता है।

गुटनिरपेक्षता के प्रति भारत का वर्तमान दृष्टिकोण – क्या भारत ने गुटनिरपेक्षता की नीति को त्याग दिया है ? यह प्रश्न सम्पूर्ण विश्व में तब उठा जब वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने अमरीका की यात्रा की। भारतीय प्रधानमंत्री ने जिस गर्मजोशी से अमरीका की यात्रा की और अमरीकी राष्ट्रपति श्री बराक ओबामा ने जिस प्रकार खुले हृदय से भारतीय प्रधानमंत्री का स्वागत किया उससे अमरीका सहित पश्चिमी देशों की मीडिया ने यह महसूस किया कि भारत अब गुटनिरपेक्षता से कही आगे निकाल गया है। इसी प्रकार ओबामा के तीन दिवसीय भारत दौरे के बाद अमरीकी मीडिया ने कहा कि 'इस दौरे में दो सबसे बड़े लोकतंत्र अब तक सबसे नजदीक आए है।' अमेरिकी समाचार पत्र 'वाल स्ट्रीट जर्नल' ने लिखा कि 'कई सालों के बाद भारत आखिरकार यहाँ तक पहुँचा है कि उसने खुद को अमरीका का मजबूत साथी घोषित किया है। शीतयुद्ध के समय की उसकी गुटनिरपेक्षता के प्रति प्रतिद्धता विदेश नीति के सिद्धान्त के तौर पर की पहले ही खत्म हो गयी थी, लेकिन अब उसको श्रद्धांजलि दी गयी है। अमरीकी मीडिया ने यह टिप्पणी दोनों देशों के काफी करीब आने के बाद की थी।' अमरीकी मीडिया की यह टिप्पणी भले ही कितनी प्रासंगिक हो परंतु वास्तविकता इस से काफी दूर है। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि भारत ने गुटनिरपेक्षता को पूर्ण रूप से त्याग दिया है। हाँ यह जरूर है कि भारत ने वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य के अनुसार अपनी विदेश नीति में कुछ तकनीकी बदलाव जरूर किया है।

दक्षिण एशिया की राजनीति में भारत की असंलग्नता की नीति की प्रासंगिकता – अपनी स्वतन्त्रता के पश्चात पाकिस्तान को छोड़कर दक्षिणी एशिया के लगभग सभी देशों ने गुटनिरपेक्षता में अपनी आस्था को व्यक्त किया तथा गुटनिरपेक्षता के सिद्धानतों को अपनी विदेश नीति का आधार बनाया। जिसके परिणामस्वरूप कुछ अपवादों को छोड़कर भारत के सम्बन्ध इन देशों के साथ मधुर बने रहे। परंतु पाकिस्तान ने इन सबके विपरीत सीटो और सेंटों जैसी संधियों को स्वीकार करके स्वयं को अमरीका की परमाणु छतरी के नीचे खड़ा कर दिया। पाकिस्तान की इस हरकत का परिणाम ये हुआ कि सम्पूर्ण दक्षिण एशिया राजनीतिक रूप से अस्थिर हो गया। दक्षिण एशिया में स्थापित इस राजनीतिक अस्थिता का लाभ दोनों महाशक्तियों ने अपने-अपने स्तर पर उठाया और दक्षिण एशिया को शीत युद्ध का अखाड़ा बना दिया। दक्षिण एशिया में स्थापित इस राजनीतिक अस्थिता से सबसे अधिक क्षति भारत को पहुँची। जिसके कारण भारत को अपनी स्वतन्त्रता मिलने के कुछ सालों के भीतर पाकिस्तान से तीन और चीन से एक युद्ध लड़ना पड़ा। इन युद्धों में जहाँ पाकिस्तान के खिलाफ भारत अपने मान सम्मान को बचाने में कामयाब रहा वहीं चीन के खिलाफ युद्ध में भारत को बहुत बड़ी क्षति पहुँची। जिसके कारण देश-विदेश में भारत की असंलग्नता की नीति की खूब आलोचना हुई। परिणामस्वरूप भारत को युद्ध उपरांत तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों के अनुसार समय-समय पर अपनी गुटनिरपेक्षता के सिद्धान्तों पर आधारित विदेश नीति में परिवर्तन करने पड़े। दक्षिण एशिया की तत्कालीन राजनीतिक घटनाओं के संदर्भ में इन नीतिगत परिवर्तन की प्रासंगिकता को निम्नलिखित रूप से समझा जा सकता है।

भारत –पाकिस्तान युद्ध के संदर्भ में असंलग्नता की प्रासंगिकता – 26 अक्टूबर, 1947 को जम्मू कश्मीर के भारत में विधिवत विलय हो जाने के पश्चात् भी पाकिस्तान ने मुस्लिम बहुमत जनसंख्या वाले जम्मू कश्मीर के भारत में विलय को खुले दिल से स्वीकार नहीं किया और जम्मू कश्मीर के एक तिहाई भू-भाग पर अनाधिकृत कब्जा कर लिया। पाकिस्तान की इस हरकत पर भारत के प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कश्मीर समस्या को संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद के समक्ष रखने का अदूरदर्शी फैसला लिया। पंडित नेहरू की राष्ट्र संघ में गहरी आस्था थी। साथ ही नेहरू का यह भी मानना था, कि यदि भारत सैन्य ताकत के सहारे कश्मीर समस्या को सुलझता है, तो इसमें जम्मू कश्मीर दोनों महाशक्तियों का राजनीतिक आखाड़ा बन सकता है और उसका गंभीर प्रभाव भारत की प्रभुसत्ता पर पड़ेगा। अन्त: 1 जनवरी, 1948 को भारत ने सुरक्षा परिषद् में पाकिस्तान के विरूद्ध हमले की शिकायत की तथा हमलावरों को पाकिस्तान द्वारा हथियार और अन्य सैन्य सामग्री प्रदान नहीं करने का आदेश देने प्रार्थना की। परंतु पाकिस्तान ने सुरक्षा परिषद् में हमले को स्वीकार नहीं किया। कश्मीर समस्या पर सुरक्षा परिषद् में रूस के अतिरिक्त सभी देशों ने पाकिस्तान का समर्थन किया। इसका कारण सुरक्षा परिषद् के सदस्यों का पाकिस्तान के साथ-साथ भारत को भी दोषी माना तथा इस समस्या को और भी अधिक जटिल बना दिया और तब से लेकर आज तक कश्मीर समस्या भारत और पाकिस्तान के आपसी सम्बन्धों में तल्खी का प्रमुख कारण बनी हुई है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के मंच पर भारत की इस राजनीतिक विफलता ने भारत को सोवियत रूस की ओर झुकने के लिए प्रेरित किया। अब भारत ने अपने राजनीतिक और सामरिक हितों की सुरक्षा हेतु सोवियत रूस को राजनीतिक ढाल के रूप में अघोषित रूप से मान्यता दे दी। जिसके फलस्वरूप सोवियत रूस ने सुरक्षा परिषद् में कई बार भारत के पक्ष में अपनी वीटों शक्ति का उपयोग कर भारत का साथ दिया। यहाँ भारत ने एक और राजनीतिक

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.) भारत

भूल की। भारत ने गुटनिरपेक्षता के कारण सोवियत रूस के साथ अपने संबंधों को उस सीमा तक मजबूत नहीं किया। जिस सीमा तक पाकिस्तान ने अपने सम्बन्धों को पश्चिमी देशों के साथ मजबूत किया। साथ ही भारत ने अपनी गुटनिरपेक्षता के कारण सुरक्षा परिषद् के सदस्य देशों के साथ भी दूरी बनाए रखी। जिसका घातक परिणाम भारत को बाद के वर्षो में भुगतना पड़ा। इस दौरान पाकिस्तान ने साम्यवाद के विरूद्ध पश्चिमी देशों का साथ देकर पश्चिमी देशों से अपार सैन्य सामग्री और हथियार प्राप्त कर लिए। इन हथियारों का उपयोग उसने भारत के खिलाफ 1965 और 1971 के युद्धों में किया। वही इसके विपरीत भारत सोवियत रूस से केवल सैद्धांतिक समर्थन ही हासिल कर सका। 1965 और 1971 के भारत-पाक युद्ध में भारत विजयी पक्ष था। इसके पश्चात भी भारत अपनी सैद्धांतिक गुटनिरपेक्षता के कारण इसका कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सका। 1965 और 1971 के भारत-पाक युद्धों के पश्चात पाकिस्तान के साथ वार्ता की मेज पर भारत फिर असफल सिद्ध हुआ। भारत ने ताशकंद और शिमला समझौतों में सुरक्षा परिषद् के दबाव में पाकिस्तान की सभी मांगों को स्वीकार कर लिया। जिसके कारण कश्मीर समस्या जस के जस बनी रही। जिसके कारण आज भी कश्मीर समस्या भारत की आंतरिक और बाहरी असुरक्षा का एक बहुत बड़ा कारण बनी हुई है। 1965 और 1971 के भारत-पाक युद्धों के पश्चात भी भारत को 1999 में कारगिल में पाकिस्तान की सेना के साथ संघर्ष करना पड़ा। साथ ही साथ कंधार घटना, संसद पर आक्रमण, मुंबई हमले और हालही में पठानकोट ऐयरबेस पर हमले ने भारत को अपनी विदेश नीति विशेष असंलग्नता पर पुनर्विचार के लिए मजबूर कर दिया है। इसी तरह 1965 के भारत-पाक युद्ध में जिस प्रकार अमरीका सहित पश्चमी देश तटस्थ बने रहे उससे भी भारत की असंलग्नता की नीति को व्यापक समर्थन मिला। इसी प्रकार नदी जल के बटवारे के संदर्भ पाकिस्तान के द्धारा उठाए गए विभिन्न विवादों में जिस प्रकार अंतर्राष्ट्रीय बिरादरी ने भारत का पक्ष लिया उससे भी भारत की गुटनिरपेक्षता को व्यापक बल मिला। जब 1979 में पाकिस्तान ने सेंटों की सदस्यता त्याग कर हवाना गुटनिरपेक्ष सम्मेलन, 1979 में गुटनिरपेक्ष आंदोलन की सदस्यता ग्रहण की और भारत ने इसका कोई विरोध नहीं किया तो उसे भारत की विदेश नीति में निहित नैतिकता और मूल्यों की विजय के रूप में विश्वभर में देखा गया इस प्रकार पाकिस्तान के साथ रिश्तों के संदर्भ में भारत ने अपनी गुटनिरपेक्षता के कारण यदि कुछ खोया भी है तो उससे अधिक पाया भी है। केवल कश्मीर समस्या के कारण भारत की गुटनिरपेक्षता हो असफल मानना न्यायसंगत नहीं है।

भारत -चीन युद्ध के संदर्भ में असंलग्नता की प्रासंगिकता – गुटनिरपेक्षता की चर्चा करते समय भारत-चीन सम्बन्धों का विश्लेषण अत्यंत आवश्यक है। चीन द्धारा 1965 में भारत पर किए गए सैनिक हमले ने राजनीतिज्ञों के सामने दो महत्त्वपूर्ण प्रश्न खड़े कर दिये थे। एक तो भारत की गुटनिरपेक्ष नीति की प्रासंगिकता और दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रश्न थे कि क्या इस हमले के बाद भारत ने अपनी गुटनिरपेक्षता की नीति को त्याग दिया ? जब चीन ने भारत पर यह हमला किया तब भारत के परंपरागत मित्र सोवियत रूस ने यह तर्क देकर अपने हाथ पीछे खींच लिए कि 'यदि भारत हमारा मित्र है तो चीन हमारा भाई।' उधर अमरीका सहित पश्चिमी देशों ने भी भारत कि कोई बड़ी सहायता नहीं की अपितु भारत के सामने यह शर्त रखी की यदि भारत अमरीकी गुट में शामिल हो जाए तभी कोई ठोस मदद अमेरिकी गुट की तरफ से की जाएगी। इन्हीं तर्को के कारण देश की संसद सहित सम्पूर्ण विश्व में यह मत उभरने लगा कि यदि 'भारत किसी महाशक्ति के सैन्य संगठन से जुड़ा होता तो भारत की आज इतनी बड़ी दुर्गति नहीं होती।'

वर्तमान राजनीतिक परिपेक्ष में भारत की असंलग्नता नीति की प्रासंगिकता – सोवियत रूस के विघटन के पश्चात विश्व ने एक नए राजनीतिक परिवेश में प्रवेश किया, जहाँ केवल एक महाशक्ति (अमरीका) पूरे विश्व का नेतृव कर रही। उसके स्थान पर आर्थिक विकास का नया दौर शुरू हो चुका था। विकास की इस होड ने भारत को भी अपनी गुटनिरपेक्ष नीति में परिवर्तन करने हेतु प्रेरित किया। भारत अब गुटनिरपेक्ष आंदोलन के साथ-साथ जी-20, जी-77, इब्सा और ब्रीक्स जैसे आर्थिक संगठनों का भी सदस्य है। इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक में भारत तेजी से गुटनिरपेक्षता से आगे बढ़ रहा है। कई राजनीतिज्ञों ने इसे 'विविध एकत्रीकरण की संज्ञा दी है। उनके अनुसार भारत के कई देशों से अलग-अलग कारणों से संबंध है। जिसके कारण भारत गुटनिरपेक्ष आंदोलन के साथ-साथ विभिन्न राजनीतिक और आर्थिक गुटों का भी सदस्य है। इसके अलावा जिस प्रकार भारत अपनी परमाणु आवश्यकताओं के कारण परमाणु ईंधन आपूर्तिकर्ता समूह की और आकर्षित हो रहा है उसे भी भारत की गुटनिरपेक्ष नीति में एक बड़े बदलाव के रूप में देखा जा रहा है। प्रधानमंत्री मोदी के लगातार इन देशों के दौरों ने राजनीतिज्ञों के इस मत को बल दिया है कि वर्तमान भारत गुटनिरपेक्षता के दौर से काफी आगे निकाल चुका है।

परंतु इस सम्बन्ध में आलोचकों का मानना है कि भारत जैसे-जैसे पूंजीपति देशों के प्रति आकर्षित हुआ है, उतना ही वह अपने पड़ोसी देशों से दूर हो गया है। वर्तमान में श्रीलंका, बांग्लादेश, म्यांमार, नेपाल, भूटान और पाकिस्तान में जिस प्रकार चीनी हस्तक्षेप बढ़ रहा है। हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि चीन जिस प्रकार अपनी विस्तारवादी नीति के कारण प्राचीन रेशम मार्ग के नाम पर हिन्द महासागर में अपनी शक्ति बढ़ा रहा है, उसमें भारत के पड़ोसी देशों का विशेष योगदान है। अत: भारत को यदि चीन की इस नीति (मोतियों की माला) का मुकाबला करना है तो भारत को अपने पड़ोसी देशों के साथ अपने द्विपक्षीय सम्बन्धों को पूर्नेपरिभाषित करना होगा तथा उन्हें विश्वास दिलाना होगा कि भारत आज भी गुटनिरपेक्ष के सिद्धान्तों पर अपनी विदेश नीति को निर्धारित करता है तथा अपनी विदेश नीति के निर्धारण में पड़ोसी देशों के साथ अपने द्विपक्षीय सम्बन्धों को सर्वपरी महत्त्व देता है।

जिस प्रकार चीन में सामरिक दृष्टि से भारत के समक्ष चुनौतियाँ खड़ी की है, उसका सामना करने के लिए भारत को ना केवल पश्चिमी देशों के सहयोग की आवश्यकता है वरन् भारत को अपने पड़ोसी देशों के साथ अपने सम्बन्धों को भी मजबूत करने की भी आवश्यकता है। साथ ही हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि भारत की सम्पूर्ण रक्षा सामग्री का तीन चौथाई हिस्सा रूस से आयातीत है। अत: भारत को रूस के साथ भी अपने सामरिक हितों को भी नहीं भूलना चाहिए। ऐसे में गुटनिरपेक्ष ही वो रास्ता है, जिसके सहारे भारत अपने राजनीतिक और सामरिक हितों की रक्षा कर सकता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि आज भी गुटनिरपेक्ष के सिद्धांत प्रासंगिक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Ayub Khan, Field Marshal Mohammad, Speeches and Statements (Karachi: Pakistan Publications,1958-66),8 vols.
2. Bhutto, zulfiqar Ali,Important Press Conferences Held in 1965 (Karachi: Ministry of Foreign Affairs of the Government of Pakistan,1965).
3. Brecher, Michael, India and World Politics : Krishna

Menon's View of the world, (Recorded Interview) (London, Oxford University Press,1968).

4. Chagla,M.C., An Ambassador Speaks , (London A.sia Publication House,1962). 338
5. Jha, c.s., From Bandung to Tashkent: Glimpses of India's Forei2n Policy, (Madras,Sangam,l983).
6. Khan,M.Asghar,The First Round : Indo-Pakistan War 1965, (Ghaziabad:Vikas Publishing House,1979)-Indian edn.
7. Menon,Krishna,V.K., India and the Chinese Invasion (Bombay: Contemporary Publishers,1963).
8. MulliK,B.N., The Chinese Betrayal : My Years with Nehru (Bombay:Allied Publishers,1971).
9. Nkrumah,K., Neo Colonialism:The Last Stage of Imperialism, (London,Heinmann,1965).

Websites -

1. http://economictimes.indiatimes.com/small-biz/policy-trends/indias-foreign-policy-change-opens-new-avenues-for-businesses/articleshow/52633877.cms
2. http://www.thehindu.com/opinion/columns/finding-the-centre/article8760866.ece
3. http://www.telegraphindia.com/1160819/jsp/nation/story_103262.jsp#.V9VV8_B97IUhttps://www.washingtonpost.com/local/social-issues/indian-premier-feted-in-dc-arouses-rights-worries/2016/06/07/03d90efc-2cd6-11e6-9b37-42985f 6a265c_ story. html
4. http://timesofindia.indiatimes.com/edit-page/Non-alignment-in-a-new-light/articleshow/16077937.cms

****

बालिका सशक्तिकरण की अनूठी योजाना 'बेटी बचाओं, बेटी पढ़ाओं'

डॉ. भावना ठाकुर *

शोध सारांश - बालिका सशक्तिकरण की आवश्यकता क्यों पड़ी? भारत में जन्म से ही कन्याओं को बोझ और पराया धन समझा जाता है तथा बेटों का जन्म वंश बढ़ाने के लिए आवश्यक माना जाता है। बेटियों को जन्म लेने के पूर्व से लेकर जन्म लेने, किशोरावस्था व प्रौढ़ावस्था तक हर कदम पर भिन्न प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। बेटियों के साथ कई तरह के भेदभाव को देखा जा सकता है। सर्वप्रथम कन्या भ्रूण हत्या से ही उनके साथ पक्षपात शुरू हो जाता है, जन्म के बाद अपर्याप्त स्तनपान, अपर्याप्त भोजन, उनके देखभाल में कमी, अनदेशी उनकों भावनात्मक रूप से कमजोर करती है फिर बाल विवाह, दहेज प्रथा, बलात्कार जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। शिक्षा, स्वास्थ्य पोषण व व्यक्तित्व विकास आदि के संबंध में उनके लिए पर्याप्त संसाधन नहीं रखे जाते हैं। बालिकाओं की शिक्षा के बीच में ही छूट जाना या छुड़ा दिया जाना अपने छोटे भाई-बहिनों की देखभाल, ग्रामीण क्षेत्र में उचित शिक्षा का अभाव आदि समस्यायें भी देखी जा सकती है। नवजात बच्ची से लेकर प्रौढ़ महिला तक को कोई संघर्ष व चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। उसका कारण पुरूष प्रधान समाज, लोगों की संकीर्ण मानसिकता, उनकी अशिक्षा व अज्ञानता, उनकी दयनीय आर्थिक स्थिति आदि है।

प्रस्तावना - बालिका सशक्तिकरण एक महत्वपूर्ण सामाजिक घटक है। जनगणना 2011 से एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकला है कि देश में स्त्री-पुरूष अनुपात संतुलित नहीं है तथा बाल लिंगानुपात (0-6 वर्ष आये) भी कम है लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की संख्या कम है। संतुलित जनसंख्या का होना सरकार के पास एक चुनौती है। इसी कारण बालिका सशक्तिकरण एक महत्वपूर्ण विषय है।

एक सशक्त बालिका ही सशक्त महिला बन अपने परिवार, समाज और राष्ट्र के निर्माण एवं उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है इसलिए महिला सशक्तिकरण की बात अब तक बेमानी है जब तक हम बालिकाओं के सशक्तिकरण के लिए संपूर्ण प्रयास नहीं करते। बालिका सशक्तिकरण से तात्पर्य बालिकाओं के समग्र विकास से है उन्हें उचित पोषण, स्वास्थ्य देखभाल और शिक्षा के अवसर के साथ-साथ जीवन के प्रत्येक स्तर पर बिना भेदभाव के पर्याप्त अवसर तथा संसाधन उपलब्ध हो यह सुनिश्चित करना है।

भारतीय जनगणना 2011 के अनुसार पिछले 64 वर्षों में (1947-2011) प्रथम बार देश के कई राज्यों में लड़कियों की संख्या (0-6 वर्ष) 914 लड़कियां प्रति 1000 लड़कों से भी नीचे गिर गयी है। नोबेल पुरस्कार विजेता अर्थशास्त्री प्रो. अमर्त्य सेन की टिप्पणी 'लापता महिलाएँ' और प्रसिद्ध डेमोग्राफर प्रो. आशीष बोस द्वारा लापता लड़कियाँ (0-6 वर्ष) के संदर्भ में कहे गये तथ्यों ने भारत देश को सतर्क किया है। भारत में लिंगभेद की भीषण स्थिति को इस रिपोर्ट में भी देखा जा सकता है। इसके द्वारा जारी किये गये मानव विकास सूचकांक 2014 में भारत 189 देशों में 130वें स्थान पर है। विश्व आर्थिक मंच के लिंगभेद सूचकांक में भी भारत 135 देशों में 118वें स्थान पर दिखता है। देश की लगभग आधी जनसंख्या को अनदेखा करना देश के विकास में बाधक है। 2011 की जनगणना में गिरता हुआ बाल लिंगानुपात एक प्रश्नचिन्ह बनकर सामने आया है। जिसे तालिका में दिखाया गया है। भ्रूण हत्या एक जघन्य अपराध है।

तालिका

जनसंख्या और 0-6 वर्ष के बच्चों का लिंगानुपात

जनगणना वर्ष	कुल जनसंख्या का लिंगानुपात	0-6 वर्ष के बच्चों का लिंगानुपात
1961	941	976
1971	930	964
1981	934	962
1991	937	945
2001	933	927
2011	940	914

भ्रूण हत्या महिलाओं के प्रति हिंसा का क्रूरतामत रूप है, जो उन्हें उनके आधारभूत और मौलिक अधिकारों से वंचित करता है। जनसंख्या में घटता लिंगानुपात व महिलाओं की साक्षरता दर को देखते हुए कन्या भ्रूण हत्या रोकने, बेटियों को जन्म लेने का प्रकृति प्रदत्त अधिकार देने और बेटियों का भविष्य बेहतर बनाने के उद्देश्य से प्रधानमंत्री मोदीजी ने 22 जनवरी 2015 को हरियाणा के पानीपत में 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' योजना का प्रारंभ किया गया तथा उन्होंने कहा कि लोग पढ़ी-लिखी बहू घर में लाना चाहते हैं लेकिन अपनी बेटियों को शिक्षा दिलाने से पहले कई बार सोचते हैं। 2011 की जनगणना में साक्षरता दर 74 प्रतिशत रही जिसमें 82.1 पुरूष साक्षरता दर व 65.5 स्त्री साक्षरता दर है तथा पुरूष व स्त्री की साक्षरता दर का अंतर 16.7 प्रतिशत है। इस तरह महिलाओं की साक्षरता 65.5 प्रतिशत है जो हमें यह बताती है कि अभी भी लगभग 35 प्रतिशत महिलाऐं निरक्षर है तथा कितनी ही बालिकों की पढ़ाई मात्र प्राथमिक कक्षा ही हो पाती है। ग्रामीण क्षेत्र में मात्र 5 से 10 प्रशित बालिकाऐं ही उच्च शिक्षा ग्रहण कर पा रही है। सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय,.. की रिपोर्ट के अनुसार 63.5 प्रतिशत लड़कियाँ बीच में ही स्कूली शिक्षा छोड़ देती है। इस तरह बालिकाओं के अस्तित्व एवं सुरक्षा को सुनिश्चित करते हुए पक्षपाती लिंग चुनाव का

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, रेहटी, जिला-सीहोर (म.प्र.) भारत

उन्मूलन एवं बालिकाओं की शिक्षा की सुनिश्चित करने के उद्देश्य से ही 'बेटी बचाओं, बेटी पढ़ाओं' योजना का प्रारंभ हुआ है। हरियाणा प्रदेश से योजना प्रारंभ करने का कारण था हरियाला का गिरता लिंगानुपात। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार औसत राष्ट्रीय बाल लिंगानुपात 914 था परंतु हरियाणा में यह अनुपात 1000 : 836 तथा पंजाब में 1000 : 846 रहा है हरियाणा तथा पंजाब में बालिकाओं के प्रति भेदभाव चरम पर था परंतु 2011 की जनगणना में मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, उत्तराखण्ड तथा जम्मू-कश्मीर में भी लिंगानुपात में गिरावट आयी है अत: बालिकाओं के समग्र विकास के लिए 'बेटी बचाओं बेटी पढाओं' योजना का शुभारंभ हुआ।

'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' योजना–यह योजना महिला एवं बाल विकास मंत्रालय सहित परिवार कल्याण मंत्रालय एवं मानव संसाधन विकास मंत्रालय की संयुक्त पहल है। प्रथम चरण में इस योजना को निम्न लिंग बाल अनुपात वाले 100 जिलों में प्रारंभ किया गया है तथा इन जिलों में कानूनी सख्ती, सामाजिक जागरूकता आदि के द्वारा कन्या भ्रूण हत्या रोकने का प्रयास किया जा रहा है। इस दौरान अगर यह योजना सफल होती है तो आगे इसका विस्तार अन्य राज्यों में किया जायेगा। 100 जिलों के चयन के तीन मापदण्ड है–

1. राष्ट्रीय औसत से कम बाललिंगानुपात वाले ऐसे 87 जिलों का चयन जो कि 23 अलग-अलग राज्यों से होंगे।
2. आठ राज्यों से आठ जिलों का चयन जहाँ अनुपात तो राष्ट्रीय औसत के समान है परंतु बराबर गिरावट का रूख है।
3. पाँच राज्यों के पाँच जिलों का चयन जहाँ बाल लिंग अनुपात राष्ट्रीय औसत अधिक भी हो और जिन्होंने या तो अपने लिंगानुपात के स्तर को बनाए रखा अथा इसमें बढ़ोत्तरी दर्ज की। इन जिलों के चयन का कारण यह है कि इनसे सीख लेकर अन्य स्थानों पर इसे दोहराया जा सके।

'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' योजना के उद्देश्य –

1. लिंग भेद से पूर्वाग्रस्ति मनोवृत्ति को समाप्त करना।
2. बालिका की उत्तरजीविता और संरक्षण सुनिश्चित करना।
3. बालिका के लिए शिक्षा सुनिश्चित करना।
4. बालिका की पोषण स्थिति में सुधार करना।
5. बालिका के लिए संरक्षण माहौल को प्रोत्साहन देना।

सुकन्या समृद्धि योजना – इसी संदर्भ में सरकार द्वारा 'सुकन्या समृद्धि योजना' प्रारंभ की गयी है। इस योजना के अंतर्गत वर्तमान में सर्वाधिक ब्याजदर 9.2 का प्रावधान है, इसमें निवेश का लाभ आयकर में धारा 80 के तहत् छूट के रूप में भी मिलेगा। इस योजना के तहत 10 वर्ष की उम्र तक की बच्ची का खाता खोला जा सकता है। यह खाता मात्र 1000 रूपये में खोला जा सकता है। प्रतिवर्ष न्यूनतम 1000 रूपये व अधिकतम 1,50,000 रूपये तक इस खाते में जमा किये जा सकते हैं, इसमें खाता खोलने से अगले 14 वर्ष तक प्रतिवर्ष राशि जमा करनी है तथा खाता खालने की तिथि से 21 वर्ष बाद यह परिपक्त होगा। इससे पूर्व भी बालिका की आयु 18 वर्ष पूर्ण होने पर उसकी शिक्षा या विवाह हेतु 50 प्रतिशत तक राशि निकाली जा सकती है तथा विवाह हो जाने की स्थिति में खाता बंद करना होगा।

इस योजना में दो महत्वपूर्ण आकर्षक पहलू है– पहला सर्वाधिक ब्याज दर आयकर से मिलने वाली छूट तथा परिपक्वता पर भी मिलने वाली राशि भी आयकर में छूट प्राप्त होगी। इस योजना का उद्देश्य बेटियों को लेकर जो तनाव व असुरक्षा का भाव रहता है वह दूर होगा, छोटी बचत का निवेश करने को उत्प्रेरित करेगी यह बालिकाओं के भविष्य व विकास के लिए आकर्षक योजना है।

इस तरह 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' योजना का उद्देश्य जहाँ देश में कन्या भ्रूण हत्या को रोकना है, तो वही सुकन्या समृद्धि योजना के तहत् बेटियों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने का लक्ष्य निर्धारित है।

यद्यपि इस तरह की कई योजनाऐं कई राज्यों में चल रही है जैसे राजस्थान में राजलक्ष्मी योजना (जो 2000 से बंद है), सबला योजना 2010 से प्रारंभ है, जो किशोर बालिकाओं के विकास से संबंधित है। 2008 में महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा धनलक्ष्मी योजना, मध्यप्रदेश में लाड़ली लक्ष्मी योजना चल रही है। यह सभी योजनाऐं शिक्षा व वित्तीय सुरक्षा दोनों के लिए महत्वपूर्ण है। सरकार जो भी योजना चालू करती है सभी जनता के हित में होती है। इसलिए पूर्व में चल रही योजनाऐं एवं वर्तमान योजनाओं का सरलीकरण कर इनमें व्याप्त असंगतियों को दूर करना आवश्यक है क्योंकि इन योजनाओं के लागू करने व निरंतर चालू रहने में कई चुनौतियाँ आती हैं जैसे योजना की शर्ते, केवल गरीबी रेखा के नीचे के लोगों को लाभ, फंड का अभाव, तालमेल का अभाव, अवसंरचना का अभाव आदि। बालिकाओं के आर्थिक, सामाजिक और शैक्षिक सशक्तिकरण के लिए कई योजनाऐं चल रही हैं किन्तु उपर्युक्त समस्याओं के कारण इन योजनाओं का पर्याप्त लाभ नहीं मिल पाता जितना अपेक्षित है।

निष्कर्ष – किसी भी योजना की वास्तविक सफलता तभी संभव है, जब जनता खुद को उससे जुड़ा महसूस कर सके और और यह तभी होगा जब समाज अपनी बेटियों को जिंदगी और मान सम्मान की सुरक्षा के प्रति निश्चित हो सके। बेटियों के लिए अच्छा माहौल बने तभी बालिका सशक्तिकरण संभव है। लिंग भेद की समस्या, शिक्षा की समस्या के अलावा बालिकाओं के स्वास्थ्य व पोषण की समस्या भी महत्वपूर्ण है। राष्ट्रीय पारिवारिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण की तीसरी रिपोर्ट के अनुसार 47 प्रतिशत किशोरावस्था (15-19 वर्ष की आयु) बालिकाऐं कम, वजन की समस्या अर्थात जिनकी बाडी मास इंडेक्स 18.5 किग्रा. से भी कम है। 56 प्रतिशत किशोर बालिकाऐं एनीमिया की समस्या से ग्रेसित हैं।

बालिकओं का सशक्तिकरण व समग्र विकास को अनदेखा कर भारत देश विकास नहीं कर सकता है। यदि हम राष्ट्र का विकास करना चाहते हैं तो बालिकाओं को शिक्षा के माध्यम से सशक्त व आर्थिक आत्मनिर्भर बनाना होगा। शिक्षित होगी तो अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक होगी। स्वस्थ शरीर ही उन्हें मानसिक रूप से सशक्त बना सकता है। बालिकाओं की सुरक्षा के लिए कानूनों व नियमों में संबंध में जागरूकता हर बालिका व किशोरी तक पहुँचाना अति आवश्यक है। समाज, परिवार को सोच बदलना होगी दोहरी मानसिकता को समाप्त कर लड़के व लड़की के बीच का भेद मिटाना होगा। रूढ़ीवादी कुरीतियों को दूर कर उन्हें समानता का व्यवहार कर के ही बालिका सशक्तिकरण संभव है। वर्तमान में बालिकाओं की स्थिति में सुधार आया है। बालिकायें शिक्षित हो रही है उनकी साक्षरता दर भी बढ़ी है स्कूलों में नामांकन दर भी बढ़ी है। यह एक सरकारी योजनाओं का सफल प्रयास है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुरूक्षेत्र पत्रिका, मार्च 2015, जनवरी 2016
2. योजना पत्रिका, जनवरी 2016
3. जनगणना रिपोर्ट, 2011 भारत सरकार।
4. भारत का आर्थिक सर्वेक्षण, 2013-14
5. समाचार पत्र-दैनिक भास्कर, टाइम्स ऑफ इंडिया।

भारत - अमेरिका सैन्य करार (एक अध्ययन)

प्रो. अंजना सेठिया *

प्रस्तावना -भारत - अमेरिका की कहानी विदेश नीति के क्षेत्र में एक दिलचस्प कहानी है।

भारत और अमेरिका दो ऐसे राष्ट्र है जिनके संबंध हमेशा उतार-चढ़ाव के रहे है। दोनों देशों के बीच भिन्न-भिन्न सामरिक और विचाराधात्मक कारणों से समय-समय पर तनावपूर्ण संबंध रहे है, लेकिन परिस्थितियां बदलने पर दोनों देश एक-दूसरे के करीब भी आए है।

भारत और अमेरिका ने 50 साल के सबसे बड़े रक्षा करार पर दस्तखत कर दिए है। यह सैन्य करार विदेश नीति के क्षेत्र में बढ़ा बदलाव है। आजादी के बाद से कई दशकों हम भारत गुट निरपेक्ष आन्दोलन चलाकर असलग्नता की भूमिका निभाता रहा। विश्व की महाशक्ति देश अमेरिका और रूस के बीच शीत युद्ध में भी वह गुट निरपेक्ष रहा। किन्तु सोवियत संघ के विघटन के बाद एवं मौजूदा आतंकवाद से भरे माहौल में अमेरिका व नाटो देशों के साथ भारत की निकटता बढ़ रही है। इसका संकेत भारत - अमेरिका सैन्य करार में साफ दिखाई दे रहा है।

भारत और अमेरिका के बीच हुए समझौते के प्रावधान निम्न है -

1. रक्षा मंत्री मनोहर पर्रिकर और भारत के दौरे पर आए अमेरिका के रक्षा मंत्री एश्टन कार्टर ने साफ किया कि समझौते पर आने वाले कुछ हफ्ते या महीने के अंदर दस्तखत हो जाएगा और इसका मतलब भारत की धरती पर अमेरिकी सैनिकों की तैनाती नहीं है। इस रक्षा करार को लाजिस्टक्स एक्सचेंज मेमोरेंडम ऑफ एग्रीमेंट कहा गया है।
2. भारत और अमेरिका द्विपक्षीय रक्षा समझौते को मजबूती देते हुए अपने-अपने रक्षा विभागों और विदेश मंत्रालयों के अधिकारियों के बीच मेरी टाईम सिक्योरिटी डायलाग स्थापित करने को राजी हुए है।
3. दोनो देशों ने नौवहन की स्वतंत्रता और अंतर्राष्ट्रीय स्तर के कानून की जरूरत पर जोर दिया है। दक्षिण चीन सागर में चीन की बढ़ती दखलअंदाजी को देखते हुए संभवत: ऐसा किया गया है।
4. साउथ ब्लाक में प्रतिनिधि मण्डल स्तर की वार्ता के बाद दोनो देशों ने पनडुब्बी से संबंधित मुद्दों को कवर करने के लिए नौसेना स्तर की वार्ता को मजबूत करने का निर्णय किया। दोनो देश निकट भविष्य में व्हाईट शिपिंग समझौता कर समुद्री क्षेत्र में सहयोग को और बढ़ायेंगे।
5. कार्टर ने कहा कि भारत और अमेरिका रक्षा वाणिज्य एंव प्रौद्योगिकी पहल के तहत दो नई परियोजना पर सहमत हुए है। इसमें सामारिक जैविक अनुसंधान ईकाई भी शामिल है।
6. समझौते को लागू करने के लिए व्यवस्था बनाना होगी। इस परिप्रेक्ष्य में रक्षा मंत्री कार्टर और पर्रिकर आने वाले महिनों में एल.ई.एम.ओ.ए. करने को सहमत है।
7. एल.ई.एम.ओ.ए. साजे-सामान सहयोग समझौते का ही एक रूप है, जो अमेरिकी सेना और सहयोगी देशों के सशस्त्र बलों के बीच साजो सामान सहयोग आपूर्ति और सेवाओं की सुविधाऐं मुहैया कराता है। समझौते के बारे में पर्रिकर ने कहा कि मानवीय सहायता हेतु सुविधाएं मुहैया कराई जाएगी।
8. कार्टर ने कहा - अगर इस तरह की कोई स्थिति बनती है, इससे सहयोग मिलेगा। साजो सामान अभिमान का बहुत ही महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह मामला दर मामला होगा, उन्होंने कहा कि समझौते से जुड़े सभी मुद्दों का समाधान हो गया है।
9. यह कि, पहले भारत का मानना था कि साजो सामान समझौते को अमेरिका के साथ सैन्य गठबंधन के तौर पर देखा जायेगा। बहरहाल एल.एस.ए. के साथ भारत हर मामले के आधार पर निर्णय करेगा। एल.एस.ए. तीन विवादास्पद समझौते का हिस्सा था, जो अमेरिका भारत के साथ लगभग एक दशक से हस्ताक्षर करने के लिए प्रयासरत था। दो अन्य समझौते है - संचार और सूचना सुरक्षा समझौता ज्ञापन तथा बेसिक एक्सचेंज एंड को-ऑपरेशन एग्रीमेंट।
10. अमेरिकी अधिकारियों का कहना है कि साजो सामान समझौते से दोनों देशों की सेनाओं को बेहतर तरीके से समन्वय करने में सहयोग मिलेगा, जिसमें अभ्यास भी शामिल है और दोनो एक-दूसरे को आसानी से ईंधन बेच सकेंगे या भारत को कल पुर्जे मुहैया कराए जा सकेंगे।

सैन्य करार से प्रभाव -

पाकिस्तान पर प्रभाव -

- भारत - अमेरिका सैन्य करार से पाकिस्तान की नींद इसलिए उड़ गई कि अमेरिका भारत को जेट इंजन और ड्रोन तकनीक दे सकता है। इससे उसकी रक्षा तैयारियां कमजोर पड़ जाएगी। ड्रोन विमानों और अन्य अत्याधुनिक तकनीक की मदद से भारत पाकिस्तान में सक्रिय लश्कर-ए-तैयबा और जैश-ए-मोहम्मद जैसे आतंकी संगठनों पर भी निशाना साधने की स्थिति में होगा।

चीन पर प्रभाव -

- अब तक निर्गुट रहा देश गुटबाजी के दलदल में फंस सकता है।
- चीन, पाकिस्तान जैसे पड़ोसी देशा से टकराव बढ़ सकता है।
- दक्षिण चीन सागर के मुद्दे पर चीन व अमेरिका में तनाव चल रहा है। इस समझौते से चीन सागर में कार्रवाई करने की अमेरिका की क्षमता बढ़ेगी, जिससे चीन पर दबाव पड़ेगा।

भारत पर प्रभाव -

- भारत को इस समझौते से निम्न लाभ होंगे -
- भारतीय सैन्य क्षमता बढ़ेगी।
- अमेरिका के हिन्द महासागर स्थित सैन्य अड्डे का इस्तेमाल रिपेयर और

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान)शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

रिसप्लाई के लिये कर सकते है।

- सैन्य सहयोग के अलावा व्यवहारिक सहयोग को बढ़ावा देंगे और नियमित बातचीत करेंगे।
- रक्षा व्यापार को बढ़ावा मिलेगा।

अमेरिका पर प्रभाव –

- दक्षिण चीन सागर से नहीं हटने पर अड़े चीन को घेरने की कोशिश।
- अपने मित्र देश जापान व फिलीपींस के हितों की रक्षा।
- एशिया समेत दुनिया में चीन की बढ़ती दादागिरी पर नकेल।
- अफगानिस्तान में लोकतांत्रिक सरकार की मदद।

इस प्रकार भारत के साथ अब तक के सबसे बड़े कूटनीतिक व सैन्य करार से चीन को घेरने में जुटे अमेरिका को जहॉ हिंद महासागर में नया साझेदार मिल गया है वही भारत का सीमापार आतंकवाद से लड़ने का हौसला बढ़ेगा, इसका प्रभाव तत्काल देखने को मिल रहा है। दक्षिण चीन सागर पर चीन के हक के खिलाफ अंतराष्ट्रीय कोर्ट के फैसले के करीब दो महीने बाद भारत और अमेरिका ने विश्व कानून का सम्मान करने की बात कही। साथ ही आंतक के हर स्वरूप की निंदा की और आंतकियों के पनाहगारों को नष्ट करने की प्रतिबद्धता जताई।

भारत – अमेरिका सैन्य करार से भारतीय विदेश नीति में भी बड़ा बदलाव हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. राजनीति विज्ञान – नंदलाल।
2. नई दुनिया।
3. दैनिक भास्कर।
4. इन्टरनेट से प्राप्त जानकारी।
5. स्वयं के विचार।

****

भारतीय लोकतंत्र में राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया - एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

साधना डांगी *

प्रस्तावना - 21वीं सदी में लोकतंत्रीय शासन ही सर्वाधिक लोकप्रिय एवं प्रचलित शासन व्यवस्था है। लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था की सफलता जनता की राजनीतिक व्यवस्था एवं प्रक्रिया की जानकारी, विचार, आस्थाओं, प्रतिबद्धताओं, मूल्यों, सकारात्मक दृष्टिकोणों तथा सहभागिता पर निर्भर होती है। अर्थात् लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था के लिए विशेष प्रकार की राजनीतिक संस्कृति की आवश्यकता होती है और राजनीतिक संस्कृति का निर्माण समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा होता है। 'राजनीतिक समाजीकरण[1] की प्रक्रिया एक सीखने की प्रक्रिया है, जिससे व्यक्ति राजनीति में अपनी भूमिका निर्वाह के लिए तैयार किया जाता है। उसकी राजनीति में रूचि, ज्ञान, जागरूकता एवं सहभागिता का विकास होता है। समाजीकरण एक वृहत् प्रक्रिया है, जो व्यक्ति के जन्म के साथ ही प्रारंभ होकर मृत्युपर्यंत चलती रहती है। परिवार, मित्र-मण्डली, शिक्षण-संस्थान, राजनीतिक दल उसके मुख्य अभिकरण होते हैं। राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति में राजनीतिक संज्ञान, व्यवहार, दृष्टिकोण तथा मूल्यों का प्रतिपादन एवं निरंतरता होती है। साथ ही राजनीतिक व्यवस्था के मानकों, मूल्यों को आने वाली पीढ़ियों में हस्तांतरित किया जाता है। इस प्रक्रिया के माध्यम से ही नागरिकों में राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विश्वास, समर्थन, लगाव तथा मूल्यांकन की क्षमता विकसित होती है। अत: राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था का आधार तथा रक्त संचरण का कार्य करती है।

भारत में स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् संविधान द्वारा लोकतांत्रिक, लोक कल्याणकारी, समाजवादी गणराज्य को अपनाया गया, जिससे शासन व्यवस्था में बिना किसी वर्ग, जाति, धर्म, संप्रदाय तथा लिंग के भेदभाव के बिना सभी नागरिकों को अधिकाधिक भागीदारी का अवसर मिला। साथ ही जनस्वतंत्रता के साथ-साथ शासन संरचना एवं प्रक्रिया में जनता की भागीदारी, प्रतिबद्धता तथा नियंत्रण को बल मिला। जिससे एक नवीन राजनीतिक संस्कृति का विकास हुआ। वस्तुत: भारतीय लोकतंत्र में राजनीतिक एवं सामाजिक परिवेश तो परम्परागत रहा है, किन्तु राजनीतिक संस्थाऐं नवीन स्थापित की गईं, जिससे नवीन राजनीतिक शैली एवं संस्कृति विकसित हुई, जो पुरातनता एवं नवीनता दोनों के मिश्रण का प्रतिफल है। इस परिवर्तन एवं निरंतरता की राजनीतिक संस्कृति को राजनीतिक समाजीकरण के अध्ययन द्वारा ही समझा जा सकता है। अत: प्रस्तुत पत्र में भारतीय लोकतंत्र में राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया का विश्लेषणात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

भारतीय समाज एक गतिशील समाज है। परम्परागत बहुल एवं खंडित संरचनाओं वाला भारतीय समाज अपनी संसदीय लोकतांत्रिक प्रणाली पर आधारित संरचनात्मक व्यवस्थाओं के माध्यम से राजनीतिक विकास की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए आधुनिकीकरण के मार्ग पर अग्रसर हो रहा है। परिवर्तन के इस दौर में राजनीतिक समाजीकरण के सामान्य अभिकरणों के साथ व्यवस्थागत अभिकरणों द्वारा राजनीतिक-सामाजिक परिवर्तन में मुख्य अभिकर्ताओं की भूमिका का निर्वाह किया गया है। भारतीय समाज में भी राजनीतिक समाजीकरण की प्रथम सीढ़ी परिवार[2] है। यद्यपि आधुनिकीकरण, भौतिकवादी संस्कृति औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप संयुक्त परिवार व्यवस्था के बंधन ढीले हो गये किन्तु फिर भी परिवार अभी तक भारतीय समाज की महत्वपूर्ण इकाई है। आज भी राजनीति का प्रारंभिक ज्ञान व्यक्ति परिवार में ही प्राप्त करता है। इसके अतिरिक्त मित्र-मण्डली, ऐच्छिक समूह, नातेदारी की भी राजनीतिक समाजीकरण में अहम् भूमिका है। आज भी चुनाव हो या राजनीतिक चर्चा, राजनीतिक प्रक्रिया में सहभागिता सभी में इनकी अहम् भूमिका रहती है। सामान्यत: राजनीतिक व्यवस्था सामाजिक व्यवस्था पर ही अवलम्बित होती है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था का संरचनात्मक ढाँचा जाति व्यवस्था पर आधारित है। अत: यहाँ राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के संचालन एवं विकास में जाति की भूमिका अहम् है। यहाँ चुनाव क्षेत्रों का निर्माण, विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा उम्मीदवारों का चयन एवं मतदाताओं की सक्रियता तथा मतदान व्यवहार पूरी तरह जाति आधारित होता है। प्रत्याशी चुनाव प्रचार के दौरान एवं विधायक या सांसद के रुप में निर्वाचित होने के पश्चात् भी अपनी राजनीतिक सक्रियता, प्रतिबद्धता एवं व्यवहार में जाति-भक्ति का परिचय देते रहते हैं। अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए निर्वाचन क्षेत्रों को संविधान के आधार पर आरक्षित करना व सभी सरकारी नौकरियों एवं शिक्षण संस्थाओं में जातिगत आरक्षण प्रदान करने के मूल में भी सदस्यों को जाति आधारित राजनीतिक समाजीकरण का पाठ पढ़ाना है। यानि कि सत्ता प्राप्ति के लिए एवं सत्ता में बने रहने के लिए व्यवस्था में जनता का जातिगत आधारित मत प्रबंधन करना है। लोकतांत्रिक राजनीति और जाति की इस अन्योन्यक्रिया को सामान्यतया 'राजनीति में जातिवाद का नाम दिया जाता है, लेकिन दरअसल यह जातियों का राजनीतिकरण है। जातियों के राजनीतिकरण का सफल पक्ष यह है कि इसी वजह से यहाँ के संसदीय लोकतंत्र में आमजन की सक्रियता, सहभागिता एवं क्रियाशील राजनीति में बड़े पैमाने पर बढ़ी है, वहीं राजव्यवस्था को लोकतांत्रिक चेहरा भी मिला है। इस प्रकार धर्म, क्षेत्रीयता आदि भी भारतीय लोकतंत्र में समाजीकरण की प्रक्रिया के संचालन में महत्वपूर्ण है। यद्यपि संस्थागत आधार पर धर्म निरपेक्ष एवं समानता पर आधारित व्यवस्थाएं की गईं हैं। किन्तु पंथ एवं क्षेत्र का प्रभाव भारतीय जनता के मस्तिष्क से नहीं मिटा और आज भी राजनीतिक एवं सामाजिक क्षेत्र में पंथ

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

एवं क्षेत्र के आधार पर भेदभाव किया जाता है। राजनीतिज्ञ और राजनीतिक दल पंथ एवं सम्प्रदाय को राजनीतिक सफलता के लिए एक साधन के रूप में अपनाते रहे हैं।

भारतीय समाज में राजनीति एवं राजनीतिक दलों की समाजीकरण की प्रक्रिया में भूमिका परिवर्तशील रही है। प्रारंभ में एक दलीय वर्चस्व वाली व्यवस्था थी किन्तु आगे चलकर इस व्यवस्था से लोगों की बढ़ती मांगों को पूरा करना मुश्किल होने लगा तथा बढ़ती राजनीतिक चेतना एवं ज्ञान के फलस्वरूप नवीन राजनीतिक दलों का निर्माण हुआ। परिणामस्वरूप राजनीतिक सहभागिता का विस्तार हुआ तथा राजनीति के स्तर पर गठबंधन की सरकारें अस्तित्व में आई। यह राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया ही है जिसने राजनीतिक अभिजन वर्ग के एकल वर्चस्व को सामूहिक नेतृत्व गठबंधन में बदल दिया। अब जातिपरक, धर्मपरक, क्षेत्रपरक, व्यक्तिपरक नेतृत्व पर आधारित लोक लुभावनवादी जनराजनीति एवं जनराजनीतिक संस्कृति का सृजन हुआ। साथ ही व्यवस्था में लोकतंत्र के विस्तार के नाम पर उसे जाति, धर्म, साम्प्रदायिकता, क्षेत्रीयता जैसे संकीर्ण दायरों में सीमित करने की सोची-समझी राजनीतिक परम्परा शुरू हो गई। इसी परम्परा के अनुरूप व्यवस्था के सदस्यों की अभिवृत्तियों में राजनीतिक मूल्यों, आदर्शों, नैतिकता, विश्वासों, आस्थाओं, निष्ठाओं तथा प्रतिबद्धताओं की मानसिकता बनने लगी और यही राजनीतिक मूल्य लोगों की राजनीतिक प्रासंगिक अभिवृत्तियों के अभिविन्यास का पुख्ता आधार भी साबित हुई। राजनीतिक आधुनिकीकरण के दौर में सत्ता के परम्परागत स्रोतों को जातियों के राजनीतिकरण एवं धर्म के राजनीतिकरण के नाम पर नई मजबूती का आरक्षणरूपी आधार मिला।

शिक्षण संस्थाओं की राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यद्यपि भारत में शिक्षा की स्थिति संतोषजनक नहीं हैं। 2011 की जनगणना के आधार पर साक्षरता दर 74.04% है, जिसमें महिलाओं की साक्षरता दर और भी कम 65.46% हैं। भारत में शिक्षा के स्तर में उतार-चढ़ाव विविध राजनीतिक सामाजिक कारणों से देखा जा सकता हैं। किन्तु शिक्षण संस्थाओं की राजनितिक व्यवस्था एवं प्रकिया के प्रति जागरूकता तथा लोकतांत्रिक मूल्यों के पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरण में महती भूमिका है। सरकारी एवं गैर सरकारी शिक्षण संस्थानों की राजनीतिक समाजीकरण की प्रकिया में अहम भूमिका का निर्वाह किया जा रहा है।

राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के संचालन एवं विकास में जनसंचार माध्यमों की अहम् भूमिका होती हैं। वर्तमान में भारत में भी सूचना एवं तकनीकी क्रांति के परिणाम स्वरूप प्रिन्ट व इलेक्ट्रॉनिक दोनों ही मीडिया सक्रिय भूमिका अदा कर रहे हैं। 2014 के लोकसभा चुनाव तथा बाद के चुनावों में ई-मीडिया का चुनाव प्रचार प्रसार में सर्वाधिक मात्रा में प्रयोग किया गया। मोबाइल, कम्प्यूटर, इटरनेट की सुविधाओं ने शहर से लेकर ग्राम तक राजनीतिक सम्पर्क सूत्र को मजबूत बनाया है जिसमें राजनीतिक समाजीकरण की प्रकिया और तीव्र हो गई हैं।

90 के दशक के पश्चात् बढ़ती हुई जनसम्पर्क प्रक्रिया, शिक्षा के प्रसार उदारीकरण तथा भूमण्डलीकरण के कारण राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया की दिशा परिवर्तित एवं गतिशील हो गई हैं। इसमें भारतीय राजव्यवस्था के संचालन एवं विकास की प्रकृति भी प्रभावित हुई हैं। इसके विस्तार तथा तकनीकी विकास के फलस्वरूप संचार एवं ज्ञान ने भारत में राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को गति प्रदान की हैं। फलत: भारतीय लोकतंत्र वास्तविक लोकतांत्रिक स्वरूप की ओर अग्रसर हुआ है। फिर भी भारतीय लोकतंत्र में सार्वजनिक प्रदर्शन, हड़ताल, आतंकवादी घटनाएं, हिंसात्मक घटनाएं, घेराव, दंगा फसाद, भ्रष्टाचार, संकीर्णता, अपराधीकरण, आदि राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के सुचारू संचालन में बाधा के रूप में विद्यमान हैं। जिसमें आम जनता का राजनीतिक संस्थाओं, नेतृत्व एवं व्यवस्था पर विश्वास डगमगा जाता हैं। जिसमें व्यवस्था के संचालन एवं स्थायित्व को भी हानि पहुँचती है। इन चुनौतियों के कारण जनता एवं शासन के बीच अविश्वास, असंतोष, खिन्नता को बढ़ावा मिलता हैं। जिसमें भारतीय लोकतंत्र को बल एवं सुदृढता प्रदान करने वाली समाजीकरण की प्रक्रिया अवरूद्ध हो जाती हैं। जो किसी भी दृष्टि से भारतीय समाज में न तो शान्ति एवं व्यवस्था के हित में हैं, न ही भारतीय लोकतंत्र के सुचारू संचालन में है। अत: आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय लोकतंत्र के सफल एवं सुचारू संचालन तथा निरंतरता के लिए राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को सुदृढ़ बनाया जाए। इस हेतु शिक्षा का प्रसार राजनीतिक एवं सामाजिक संकीर्णता के निस्तारण तथा राष्ट्रीयता की भावना के विकास पर बल दिया जाना चाहिए। मीडिया की सकारात्मक भूमिका होनी चाहिए।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक समाजीकरण की बदलती प्रकृति की वजह से तात्विक स्तर पर भारत का एक खंडित और राजनीतिक किस्म का साजाजिक ढांचा राजनीतिकरण के जरिये तेजी से बदल रहा है, जो संसदीय लोकतंत्र में शासकों को वैधता दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। राजनीतिक समाजीकरण के इस विकसित स्वरूप के कारण व्यवस्था में राजनीतिक जनसंस्कृति का जो मॉडल सामने आया है, उसके तहत राजसता मुट्ठी भर लोगों तक सीमित न रहकर अपने विस्तारित दायरे में समाज के नये-नये तबकों को साथ खींचती जा रही है। यह नई राजनीतिक परिस्थिति इस तथ्य का खुलासा कर रही है कि भारत में राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया उत्तरोतर विकास एवं समुन्नति की ओर अग्रसर है। इस प्रकार भारतीय राजनीतिक व्यवस्था के उत्तरोतर विकास में राजनीतिकरण की प्रक्रिया पारंपरिक भारतीय समाज के आधुनिकीकरण का प्रधान कारक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आमण्ड एण्ड पावेल : द पॉलिटिकल ऑफ द डवलपिंग एरियाज, प्रिंसिकन, 1960
2. हर्बट हायमैन : पॉलिटिकल सोशलाइजेशन ए स्टडी इन द साइकोलॉजी ऑफ पॉलिटिकल विहेवियर प्रीफेस न्यूयार्क, 1959

****

जेल, प्रशासन और मानवाधिकार

डॉ. ममता राजपूत *

प्रस्तावना – किसी सभ्य समाज में मानवाधिकारों का निर्विवाद महत्व है। सृष्टि की रचना के समय से ही मानव जाति अपने अस्तित्व को बनाये रखने, जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं, सुरक्षा, सुविधाओं के प्रति सजग रही है। वर्तमान में लोकतान्त्रिक समाज की अनिवार्य आवश्यकता है – मानवाधिकार। अधिकारों के बिना मानव जीवन के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती है। किसी समाज की उन्नति का मापदण्ड उस समाज द्वारा स्वीकृत अधिकारों को समझा जाता है। अधिकार सामाजिक हित में व्यक्ति की स्वार्थ रहित मांग है, जो राज्य या समाज से की जाती है।

प्रो. लास्की ने कहा है कि 'अधिकार सामाजिक जीवन की वे परिस्थितियां हैं, जिनके बिना सामान्यत: कोई व्यक्ति अपना पूर्ण विकास नहीं कर सकता।'

मानवाधिकार ऐसे अधिकार हैं, जो प्रत्येक मनुष्य को केवल मनुष्य होने के नाते प्राप्त होने चाहिए, चाहे इसके लिए उपयुक्त कानूनी व्यवस्था की गई हो या न की गई हो। इससे स्पष्ट है कि मानवाधिकारों का विचार क्षेत्र नागरिक अधिकारों की तुलना में अत्यन्त विस्तृत है। हमारी नैतिक चेतना और सामाजिक चेतना जितनी विकसित होती जायेगी, मानव अधिकारों का विचार क्षेत्र भी उतना विस्तृत होता जायेगा।

'मानवाधिकार' शब्दावली का प्रयोग बीसवीं शताब्दी में ही प्रारंभ हुआ है। कई जगह इन्हें लोकतन्त्रीय अधिकार कहा जाता है। हालांकि 'मानवाधिकार' शब्द ही अधिक प्रचलित है। कभी–कभी इन्हें मूल अधिकारों की संज्ञा भी दी जाती है। मानवाधिकार का विचार जिस तर्क पर आधारित है, उस तर्क के आधार पर ऑमस पेन (1737–1809) ने प्राकृतिक अधिकारों को ही मनुष्य के अधिकार की संज्ञा दी है, अत: ये जन्मजात है, देय नहीं।

अधिकारों के प्रसंग में उदारवादी तथा मार्क्सवादी विचारधारा भी है। उदारवादी विचारधारा राजनीतिक नागरिक अधिकारों पर बल देती है, जबकि मार्क्सवादी आर्थिक–सामाजिक न्याय की बात करती है। स्टालिन के शब्दों में, 'वास्तव में सच्ची स्वतन्त्रता वहीं सभव है, जहां शोषण खत्म कर दिया जाऐ, बेकारी न हो, भीख मांगने की आवश्यकता न हो तथा काम, रोटी व मकान छिन जाने का भय न हो। एक गरीब, भूखे व बेकार व्यक्ति के लिए व्यक्तिगत स्वतंत्रता बेमानी है।'

जेल मानवाधिकार संरक्षण की महत्वपूर्ण इकाई होती है। समाज में अपराध करने वाले व्यक्तियों को समाज से पृथक करना आवश्यक होता है, अन्यथा ऐसा व्यक्ति अपने दुष्कार्यो से समाज को प्रभावित करेगा, जिससे समाज में अव्यवस्था का जन्म होगा। पीड़ित व्यक्ति अपने को असुरक्षित महसूस करेगा।

वर्ष 1894 में इस देश पर अंग्रेजों का अधिपत्य था, इसी वर्ष अंग्रेज शासकों ने इस देश के लिए एक 'जेल मैनुअल' तैयार किया था, जो कतिपय संशोधनों के साथ आज भी देश में लागू है।

भारतीय संविधान में यद्यपि जेल प्रशासन (शान्ति व्यवस्था विषय) राज्य व सम्वर्ती दोनों सूची में रखा गया है। जेल की स्थापना के उद्देश्यों का अवलोकन करने से पता चलता है कि समाज विरोधी कार्य करने वाले, अपराधियों तथा नियमों को तोड़ने वाले व्यक्तियों को समाज से पृथक रखा जाना आवश्यक था, जिसके लिए पृथक स्थान की आवश्यकता महसूस हुई। परिणामत: जेल की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। प्राचीन इतिहास के अवलोकन से पता चलता है कि सभी युग में जेल का अस्तित्व किसी न किसी रूप में मिलता है, क्योंकि मानव जन्म के साथ विधानों को तोड़ने लगा था। प्राचीन/वर्तमान काल में शक्तिशाली व्यक्ति तो अपने अधिकारों की रक्षा करने में समर्थ था, परन्तु कमजोर व्यक्ति जो अपने अधिकारों की रक्षा करने में असमर्थ है, उसके रक्षा/सुरक्षा का भार शासन पर है। इसी कारण प्रत्येक सरकार द्वारा प्रत्येक काल में पुलिस/गुप्तचर संगठन तथा जेल की स्थापना की जाती रही है। देश में मध्यकाल में विदेशी शासकों के अधीन रहा, जिनका उद्देश्य देश पर अधिक समय तक शासन करना था, इस कारण जेल नियमों को कठोर बनाया गया था। देश के स्वतंत्रता के उपरान्त उक्त परिस्थितियां बदली, जिस कारण समय–समय पर जेल नियमों में संशोधन किया जाता है। जेल विभाग को राज्य के गृह मंत्रालय के अधीन किया गया। प्रत्येक राज्य में (लगभग) पुलिस महानिरीक्षक कारागार का पद सृजित कर जेल नियमों में सुधार हेतु संशोधन/ प्रस्ताव तैयार किये जा रहे हैं।

भारत के राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के पूर्व अध्यक्ष श्री रंगनाथ मिश्र ने दिनांक 12 मार्च 1997 को लखनऊ में 'मानवाधिकारों की स्थिति पर विचार व्यक्त करते हुए कहा था कि 'जेलों के नियम मानवाधिकारों की परिधि में बने।' कथन के विवेचन से पता चलता है कि वर्तमान समय में प्रचलित जेल नियमों में संशोधन का संकेत है। क्या वास्तव में जेल नियमों में त्वरित संशोधन की आवश्यकता है ?

देश में वर्तमान समय में केन्द्रीय जेल, जिला कारागार, नारी शिक्षा निकेतन (नारी सुधार गृह), बाल बन्दी गृह स्थापित है। इसके अतिरिक्त तहसील में रेवेन्यु जेल, पुलिस लाईन /पी.ए.सी. वाहिनी, केन्द्रीय पुलिस बल वाहिनियों में क्वार्टरगार्ड सेल में भी बन्दी रखे जाते हैं। सामान्य रूप से जिला जेल की प्रमुख जेल होती है। अध्ययन से पता चलता है कि वर्तमान समय में देश की अनेक जेलों के भवन अत्यन्त पुराने हो चुके हैं, अनेक जेलों में बैरक की छतें खराब हो चुकी हैं, फलस्वरूप गर्मी में धूप तथा ओस व वर्षा में छतों के टपकने से बन्दियों को अत्यन्त कष्ट होता है।

जेलों में अपराधी के स्तर के अनुसार सामान्य, विशिष्ट श्रेणी प्रदान किये जाने की व्यवस्था है। स्नातक शिक्षा प्राप्त, वकील, डाक्टर, राजपत्रित अधिकारी तथा अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों को 'बी श्रेणी देने का निर्णय जेल प्रावधानों के अनुसार किया जाता है। इसी के साथ खतरनाक प्रवृत्ति के अपराधियों को एकान्त परिरोध में रखने का भी प्रावधान है। विचाराधीन

* राजनीति विभाग, ज.हॉ. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

बन्दियों तथा कम अवधि की सजा पाऐं कैदियों को जिला कारागार में रखने का प्रावधान है। आजीवन कारावास या लम्बी अवधि की सजा पाये कैदियों को केन्द्रीय कारागार में रखा जाता है। आतंकवादियों या अन्य भयानक अपराधियों को गुप्तरूप से उनके निवास स्थान / कार्य क्षेत्र से दूर रखा जाता है।

जेल में कैदियों की दशा सुधारने हेतु आवश्यक है कि उन्हें उचित मानवीय सुविधाऐं प्रदान की जानी चाहिऐ –

1. जेल में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराये जाऐं।
2. सजा पूरी होने पर कैदियों को तुरन्त रिहा कर दिया जाऐं।
3. बूढ़े, अपाहिज, बीमार तथा विकलांग कैदियों को उचित सुविधायें दी जाऐं।
4. जेल में बिजली, पानी, सफाई की व्यवस्था स्तरीय होनी चाहिए।
5. जेल की शाखायें प्रत्येक जनपद में स्थापित करके कैदियों द्धारा तैयार माल/वस्तुओं का विक्रय कराया जाना चाहिए।
6. बाल बन्दियों की शिक्षा–दीक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।
7. जेल में कैदियों के स्वास्थ्य हेतु योग का कार्यक्रम सप्ताह में 5 दिन अवश्य होना चाहिए।
8. कैदियों से मिलाई हेतु उचित तथा नि:शुल्क व्यवस्था होनी चाहिए।
9. समाज तथा देश की घटनाओं की जानकारी देने हेतु बैरक में एक समाचार पत्र उपलब्ध कराया जाना चाहिए।
10. पागल या मानसिक रूप से पीड़ित व्यक्ति को जेल में रखकर अनावश्यक भीड़/खर्च नहीं किया जाऐ, उन्हें सुधार गृह आदि में रखा जाऐ।
11. महिला बन्दियों को किसी भी दशा में पुरुष बन्दियों के साथ न रखा जाऐ।
12. आवागमन तथा देखभाल हेतु महिला पुलिस जन महिला बन्दियों की देख–रेख करे।
13. यदि महिला बन्दी गर्भवती हो या उसके साथ छोटा बच्चा हो तो उसे आवश्यक सुविधाऐ अलग से उपलब्ध कराया जाना चाहिए।
14. प्रत्येक जेल में पृथक चिकित्सालय तथा डाक्टर व अन्य स्टाफ का होना आवश्यक है।
15. गम्भीर रूप से बीमार व्यक्ति को आवश्यक उपचार की व्यवस्था होनी चाहिए। जैसी कि बहरामपुर जेल में बन्द कैदी को बाईपास सर्जरी कराने हेतु आयोग की संस्तुति पर 90 दिन की विशेष जमानत दी गयी। जेलों में निर्धारित संख्या में ही कैदी रखे जाऐं। आवश्यकतानुसार जेलों की क्षमता बढ़ाने तथा नई जेल स्थापित करने की कार्यवाही की जाऐं।

निष्कर्षत: मानवाधिकारों का संरक्षण आज विश्व के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती है। सम्पूर्ण मानव जाति शोषण, अत्याचार, उत्पीड़न एवं आतंवाद से पीड़ित है। मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए मेग्नाकार्टा बिल ऑफ राइट्स तथा मानवाधिकार घोषणा पत्र जारी हुए, लेकिन जनसाधारण के लिए मानवाधिकार आज भी मृगतृष्णा बने हुए हैं। आवश्यकता यह भी है कि प्रत्येक व्यक्ति 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की तरह समानता के आधार पर एक–दूसरे व्यक्ति को महत्व प्रदान करे और एक–दूसरे के अधिकारों की रक्षा करे, तभी मानव अधिकार सुरक्षित हो सकते हैं। इसका मूल लक्ष्य मानव जीवन और उसकी गरिमा को सुरक्षा प्रदान करना है। संविधान के अनुच्छेद 21 में प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान किया गया है। वर्तमान परिवेश में यह स्वतंत्रता इतनी व्यापक मानी जाने लगी है कि इसका अर्थ केवल 'जीने के अधिकार' तक ही सीमित नहीं रहकर 'सम्मानपूर्वक जीने के अधिकार' तक विस्तृत हो गया है। अब इसमें शिक्षा, चिकित्सा, नि:शुल्क विधिक सहायता, त्वरित विचारण, पर्यावरण संरक्षण जैसे विषय भी समाहित हो गए हैं। यही मानवाधिकार है। यदि इन्हें हम अपने जीवन में उतार लें तो मानवता के प्रति महत्वपूर्ण योगदान होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. बसन्तीलाल पावेल : पुलिस प्रशासन, मानवाधिकार, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1918, पृष्ठ–92.
2. दिलीप जाखड़ : 'मानवाधिकार', यूनिवर्सिटी बुक हाउस, जयपुर, 2001, पृष्ठ 2 व 4.
3. एम.ए. अंसारी : 'महिला व मानवाधिकार', ज्योति प्रकाशन, जयपुर।
4. मेघा पाटेकर : 'दैनिक भास्कर', अभिव्यक्ति, 2006.
5. Martinson Robert : "What Works ? Questions and Answers about Prison Reform", The Public Interest, Spring, 1974.
6. VadVadackumchery James, (1997) : The Police, The Court and Injustice, New Delhi, APH Publishing Corporation.
7. Srivastava, S.P. (1987) : The Probation System : An Evaluative Study, Lucknow, Print House.

****

भारतीय राजनीति में महिलाओं की सहभागिता

डॉ. किशन यादव *

प्रस्तावना – सृष्टि की मेरूदण्ड नारी को विश्व के किसी राष्ट्र की संस्कृति का मुख्य मापदण्ड माना गया है। ज्ञातव्य है कि विभिन्न संस्कृतियों के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान रखने वाली नारी की स्थिति सदैव परिवर्तित रही है यही अस्थिरता उसकी प्रत्येक युग के समाज व्यवस्थाकारों के लिए प्रश्न चिन्ह के रूप में चिन्तन का प्रधान विषय रही है। भारतीय साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि राजकुल की स्त्रियाँ ज्ञान, विज्ञान और ललित कला में प्रवीण होने के साथ ही राजनीति और युद्ध कला की शिक्षा प्राप्त करती थी वह गृहणी के साथ पति की सचिव भी थी, कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र के बीसवें अध्याय में वर्णित है कि स्त्रियां मौर्य दरबार का मुख्य अंग थी और राजदरबार में राजाओं के चारों ओर स्त्रियां रहती थी। मनु ने राजशासन के अन्तर्गत नारी पुरूष में कोई भेद नहीं माना प्राचीन काल से नारियाँ राजनीति में अपने पतियों को सक्रिय सहयोग देती आ रही हैं। कश्मीर के शासन क्षेत्रगुप्त की पत्नी दिद्दा ने अपने पति की मृत्यु के बाद सारा शासन भार स्वयं बड़ी कुशलता से चलाया था तथा वहाँ की प्रजा ने सुगंधा को शासन नियुक्त किया था। जैसा कि उपयुक्त कथनों से स्पष्ट है कि राजनीति का क्षेत्र स्त्रियों से अछूता नहीं था, परन्तु राजतंत्रीय व्यवस्था में सामान्य वर्ग की स्त्रियों को प्रवेश पाने का कोई अवसर नहीं था। केवल राज-परिवारों की स्त्रियाँ ही भाग लेती थी।

स्वतंत्रता से पूर्व महिलाओं को किसी भी प्रकार का राजनैतिक अधिकार नहीं था। सन् 1926 से पहले महिलायें किसी भी सभा की सदस्या नहीं हो सकती थी। सन् 1926 में केवल प्राप्त नहीं था। सन् 1935 में जब भारत का नया संविधान बना तो नारियों ने भी पुरूष के समान अधिकार की माँग शुरू कर दी, परन्तु उनकी माँग उस समय अनसुनी कर दी गयी। उनका मताधिकार, उनकी सम्पत्ति पति की स्थिति एवं शिक्षा पर निर्भर थी। 1937 के चुनाव में स्त्रियों ने सुरक्षित सीटों से चुनाव लड़ा, उस समय पूरे भारत में 41 सीटें ही उनके लिए सुरक्षित थी। श्रीमती आर.बी. सुव्वारामन राज्य परिषद् की तथा श्रीमती रेणुका राय केन्द्रीय व्यवस्थापिका की सर्वप्रथम सदस्या बनी।

यदि हम व्यवस्थापिकाओं में महिलाओं की संख्या एवं क्रिया कलापों पर दृष्टि डालें तो हम पाते हैं कि अधिकांश प्रभावशाली परिवारों की महिलायें ही सदस्य चुनकर आती है वह चाहे किसी पूर्व राजघराने की पुत्री अथवा पुत्रवधू हो अथवा किसी प्रभावी राजनीतिज्ञ की पत्नी अथवा अन्य कोई निकट सम्बन्धी। या कुछ महिलायें किसी बड़े राजनीतिज्ञ की कृपापात्र बनकर सांसद चुनी गयी अब तक समाज की आम महिला बहुत कम ही जनप्रतिनिधि निर्वाचित हो पायी हैं। राजनीतिक दलों ने भी इस बात पर बल दिया है कि महिला प्रत्याशी एक तो संख्या में कम हो तथा वह एक बड़े इलाके में अपने किसी रचनात्मक काम या उपलब्धि के कारण ख्याति प्राप्त कर चुकी हों साथ ही अमीर और उच्च घराने से सम्बन्ध रखती हो। यही कारण है कि अब तक हुए 15 लोकसभा चुनाव में अधिकतम 49 प्रतिशत महिलायें ही चुनकर आ सकी हैं। 1952 से लेकर अब तक कुछ ही महिलायें अपने प्रखर विद्वतापूर्ण बुद्धिमत्ता से राजनीतिक, सामाजिक विषयों पर सदन का ध्यान आकृष्ट करने में सफल हो सकी हैं। जैसे रेनु चक्रवर्ती, गीता मुखर्जी, उमा भारतीय, सुषमा स्वराज आदि। अधिकांश महिलाओं ने सदन जाकर एक मूकदर्शक एवं अच्छे श्रोता की भूमिका ही निभाई है।

आज चिन्ता का विषय यह है कि हम 21 वीं सदी के द्वार पर खड़े होने के बावजूद हम देश की आधी आबादी को उसका उचित हक प्रदान नहीं कर पा रहे हैं यह कम त्रासदी पूर्ण बात नहीं है कि मेक्सिको से लेकर बीजिंग तक सम्मेलन हुए तथा महिलाओं को पुरूष के बराकर हक दिलाने का प्रस्ताव भी पारित किए गये लेकिन फिर भी विश्व के अधिकांश देशों की महिलायें आज भी अपने उचित अधिकारों से वंचित हैं। अत: महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाने के लिए व्यवस्थापिकाओं में महिलाओं की अधिकाधिक उपस्थिति वांछनीय है।

इस दृष्टि से भारत में महिलाओं के लिए लोकसभा तथा विधानसभाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण सुनिश्चित करने वाले 84 वें संशोधन को महत्वपूर्ण प्रयास माना जा सकता है। महिला आरक्षण के प्रमुख प्रावधान निम्न प्रकार हैं –

1. अनुच्छेद 330 खण्ड-1 लोकसभा में महिलाओं के लिए स्थान आरक्षित रहेंगे।
2. अनुच्छेद 330 खण्ड-2 के आधीन आरक्षित स्थानों की कुल संख्या के एक तिहाई स्थान अनुसूचित जातियों या जनजातियों के लिए आरक्षित होंगे।
3. किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र में लोकसभा के लिए प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या के निकटतम एक तिहाई स्थान स्त्रियों के लिए आरक्षित रहेंगे और भिन्न-भिन्न निर्वाचन क्षेत्रों को चक्रानुक्रम द्वारा आवंटित किएं जा सकेंगे।
4. अनुच्छेद 331 के अनुसार आंग्ल भारतीय समुदाय की महिला के नाम निर्देशन के लिए आरक्षित रहेंगें, पर तीसरे निर्वाचन के बाद उस समुदाय की महिला का पद आरक्षित नहीं होगा।
5. अनुच्छेद 332 (क) प्रत्येक राज्य की विधान सभाओं में स्त्रियों के लिए स्थान आरक्षित रहेंगे।
6. 334 (क) लोकसभाओं व विधान सभाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण अधिनियम लागू होने के दिन से 15 साल के लिए किया जाना चाहिए, इसके बाद फिर समीक्षा हो।
7. दिल्ली और पाण्डिचेरी को बिल से बाहर रखा गया है, उन्हें इसकी परिधि में लाया जाऐ।

यद्यपि राजनीति में महिलाओं की संख्या पुरूषों की तुलना में काफी कम है तथापि राजनीतिक प्रशिक्षण प्रदान कर महिलाओं को राजनीति की मुख्य

* एसो. प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) बुन्देलखण्ड महाविद्यालय, झांसी (उ.प्र.) भारत

धारा से जोड़ा जा सकता है। पंचायत स्तर से ही उन्हें मौका देकर यह शुरूआत की गयी है। जब हमारी गांव की महिलाए साक्षर हो जायेगी वह अपने मानवाधिकारों की रक्षा करने में स्वयं समर्थ हो जायेगी, अगर ग्रामीण क्षेत्रों में महिला उम्मीदवारों की 33 प्रतिशत सीटें आरक्षित हो जायेगी तब वही से हमारा राजनैतिक स्तर आगे बढ़ेगा। चीन में 30 करोड़ महिलाओं को ऐसा प्रशिक्षण दिया जा रहा है। स्वीडन सरकार भी महिला प्रत्याशियों को आगे बढ़ाने के लिए उन्हें चुनाव में आर्थिक सहायता प्रदान करती है।

अत: उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि पंचायत स्तर पर महिलाओं को राजनीति में मौका देकर, उनका राजनीतिक दृष्टिकोण परिपक्व बनाया जा सकता है। स्वतंत्रता के पूर्व एवं स्वतंत्रता के बाद भारत के राजनैतिक इतिहास का अवलोकन करके हम इस ज्वलंत समस्या का निवारण कर सकते हैं। हम प्रथम स्नातक महिला श्रीमती चन्द्रमुखी बोस, क्रांतिकारी भीकाजी काया, कांग्रेस अध्यक्ष एनीबेंट, राज्यपाल सरोजनी नायडू, श्रीमती गांधी मताधिकार की सूत्रधार मागरिट कर्जिस, विजय लक्ष्मी पंडित, सुचेता कृपलानी, किरण बेदी, शकुंतला वशिष्ठ, सविता रानी आदि ख्याती प्राप्त महिलाओं से प्रेरणा ले सकते हैं जिन्होंने भारतीय राजनीति में अग्रिम एवं अद्धितीय भूमिका निभाई। श्रीमती गांधी को 'अमेरिका युनाइटेड प्रेस इन्टरनेशनल' के सर्व निष्कर्ष में भारत की प्रधानमंत्री के रूप में सर्वाधिकार महत्वपूर्ण महिला घोषित किया गया। भूतपूर्व मुख्यमंत्री सुश्री मायावती ने दलित महिलाओं में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। श्री उमा भारती, सुषमा स्वराज, ममता बनर्जी, श्रीमती राबडी देवी, श्रीमती सोनिया गांधी, वर्तमान राजनीति में सक्रिया भूमिका अदा कर रही हैं।

अत: प्राचीनकाल से आज तक महिलाओं की भारतीय राजनीति में भूमिका अद्धितीय है लेकिन वर्तमान प्रावधानों के द्धारा उन्हें हम लोकसभा एवं विधान सभाओं में उचित स्थान दिलाकर उनमें जागरूकता का संचार कर सकते हैं, पर हमारे कुछ बुद्धिजीवी वर्गो का यह विचार है कि हम पाश्चात्य देशों की बराबरी कर रहे हैं। यह आरक्षण हमारी संस्कृति में नहीं है, हम आरक्षण के द्धारा समाज में अव्यवस्था एवं वैमनस्य की भावना पैदा कर रहे है हमारा समाज नारी को आदर करता है, आरक्षण के द्धारा हम नारी और पुरूष दो भागों में बांट रहे हैं, गर ऐसा करते हैं तो हमारी संस्कृति छिन्न भिन्न हो जायेगी, जो हमारी राष्ट्रीय एकता के विपरीत होगी। यह विचार कुछ हद तक ठीक है कि हमको अपनी संस्कृति को नष्ट नहीं करना है।

अत: हमें उनकी सक्रिय सहभागिता को बढ़ाना है, आज आरक्षण के साथ ही उन वैचारिक क्रांति की भी आवश्यकता है, जो समाज में भारतीय नारी को उचित दर्जा दिला सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्राचीन भारत में नारी- डॉ. उर्मिला प्रकाश मिश्र।
2. भारत की अग्रणी महिलाऐं-डॉ. आशारानी ब्होरा।
3. अद्‌भुद भारत- मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
4. नारी प्रश्न- सरला महेश्वरी।
5. कार्यशील महिलाऐं एवं भारत- डॉ. सुभाष चन्द्र गुप्ता।
6. महिला एवं विकास- डॉ. राजकुमार।
7. भारतीय नारी और वर्तमान समस्याऐं- डॉ. आर.पी. तिवारी, डॉ. डी.पी. शुक्ला एवं भावी समाधान।

****

ऐतिहासिक व पर्यटन की दृष्टि से म.प्र. का महत्वपूर्ण धरोहर स्थल - साँची

डॉ. संदीप श्रीवास्तव *

प्रस्तावना - मध्यप्रदेश में विदिशा से लगभग 10 किलोमीटर दक्षिण और भोपाल से लगभग 45 किलोमीटर उत्तर साँची की पहाड़ी दिल्ली-बम्बई रेलवे-लाइन पर स्थित है। साँची-स्टेशन पर कई रेलगाड़ियाँ रूकती है। विदिशा और भोपाल के बीच चलने वाली बसें साँची से गुजरती है। साँची की भौगोलिक स्थिति 230, 280 उत्तर अक्षांश और 990, 470 पूर्व अक्षांश पर है।[1] जिस पहाड़ी पर साँची स्थित है, उसका बलुवा पत्थर गहरे भूरे रंग का है। यह पहाड़ी ऊँचाई में लगभग 90 मीटर है।[2] प्राचीन स्मारकों की ईंटें और मध्युगीन मूर्तियाँ बहुधा इसी पत्थर की बनी हैं।

साँची के दक्षिण में स्थित नागौरी पहाड़ी का हल्का भूरा पत्थर भी स्मारकों में लगा है। यहाँ से 7 किलोमीटर उत्तर-पश्चिम में खड़ी उदयगिरि की पहाड़ी के बादामी पत्थर से तोरणद्धार एवं कतिपय मूर्तियाँ बनायी गयी है। पहाड़ी के उत्तर-पूर्वी भाग पर साँची, पूर्व में माँची, उत्तर में कानाखेड़ा तथा नीनाखेड़ के गांव बसे हैं। 1818 में जनरल टायलर ने साँची के स्मारकों का पहली बार पता लगाया। तब तक स्तूप 1 का दक्षिणी तोरणद्धार गिर चुका था। हर्मिका का कुछ भाग मूल स्तूप पर टिका था। स्तूप 2 और 3 भी सुरक्षित दशा में थे।[3] कैप्टेन ई. फेल ने 1819 में इन स्मारकों को सुरक्षित पाया 3 वर्ष बाद अर्थात् 1822 में कुछ व्यक्तियों ने इनको क्षति पहुँचाई।

कैप्टेन ई. फेल ने बंगाल एशियाटिक सोसायटी की तीसरी जिल्द (जुलाई 1919) में साँची का विवरण प्रकाशित कराया। जनरल टायर ने इस बात की पुष्टि की है। कुल मिलाकर 900 अभिलेख साँची में उपलब्ध हुए। साँची का इतिहास भी पाषाण युग से आरंभ होता है। कानाखेड़ा और साँची गाँव की पहाड़ी की बनावट कुछ ऐसी है कि उसके उत्तरी माथे पर कई छतदार गुफाएँ बन गई है। इनमें हजारों वर्ष पहले आदिमानव रहते थे। इनके गेरू के रंग से मनुष्यकृतियाँ भरे हुये त्रिकोण, ताड़वृक्ष, घोड़े, सींगों वाले मृग, बलिवर्द, तेंदुए आदि बनाये गये हैं। गुफाओं के मस्तक पर, उनकी छतों में तथा अन्य समतल स्थानों पर ये दृश्य अंकित है।

आदिमानव ने धनुष-बाण तथा भाले का उपयोग प्रचुरता से किया। आखेट उसके भोजन-यापन का प्रमुख व्यवसाय था। इस प्रकार की गुफाएँ अधिकांशत: जलाशय या नदी के पास ही होती है। साँची की गुफाओं के नीचे विशाल पुरैनिया पोखर भी उपस्थित है। संभवत: ये पोखर अशोक के समय से हजारों वर्ष पहले से आदिमानव एवं पशु-पक्षियों को उपलब्ध था। गुफाओं के दृश्यों से ऐसा प्रगट होता है कि उनका उपयोग 17वीं एवं 18वीं शताब्दीं ई. तक होता था। आदिमानव के पाषाण - आयुध साँची के आस-पास बिखरे पड़े है।

किन्तु साँची का क्रमबद्ध इतिहास अशोक के समय से ही प्राप्त होता है। प्राचीन विदिशा नगरी के सम्पर्क में आने पर अशोक ने उसके पूर्व, पश्चिम तथा दक्षिण की पहाड़ियों पर अत्यंत रमणीय स्थान चुने और बौद्ध त्रिपिटाकाचार्यो के लिए विहारों और अस्थि पूजा के लिए स्तूप समूहों का निर्माण कराया। साँची की तीसरी शती ई.पू. में वेदसगिरि या चेतिय+गिरि[4] तथा दूसरी पहली शती ई.पू. में काकणाव[5] या काकणाय[6] कहते थे। गुप्तकाल में इसका नाम काकूना और दबोट श्री महाविहार[7] और नवीं शती ई. में बोट श्रीपर्वत पड़ा जो भवभूति के ग्रंथ मालमी माधव में उल्लिखित श्रीपर्वत[8] हो सकता है।

प्राचीनकाल में विदिशा और साँची के बीच का पहला मार्ग पुरैनिया पोखर तथा चिकनी घाटी होकर स्तूपों और विहारों तक पहुँचता था। इस मार्ग के अवशेष आज भी साँची गाँव के आस-पास विद्यमान है। दूसरा मार्ग वर्तमान सर्किट हाऊस के क्षेत्र से होता हुआ स्तूप-2 तक जाता था; फिर दक्षिण पूर्वी दिशा में मुड़कर पहाड़ी तक पहुँचता था। यह मार्ग आज भी विद्यमान है। साँची और नागौरी के बीच खेती करने के लिये एक शुंगकालीन बांध था जो आज भी सुरक्षित और विद्यमान है। महावंश के अनुसार तीसरी शती ई.पू. में अशोक उज्जैन का शासक नियुक्त हुआ था। जो पाटलिपुत्र से विदिशा आया और वहाँ के एक प्रतिष्ठित सेठ की कन्या शाक्य कुमारी देवी से पाणिग्रहण किया। उससे दो पुत्रों, उज्जेनिय और महेन्द्र तथा पुत्री संघमित्रा का जन्म हुआ। लंका जाने से पहले महेन्द्र अपनी माता से मिलने विदिशा आया। उसकी माता उसे वेदिसगिरि के विहार में ले गई। उसने अपने हाथ का बनाया भोजन पुत्र को खिलाया एवं लगभग एक महीने ठहरा और वेदिसगिरि से ही वह लंका गया। महेन्द्र की माता धार्मिक प्रवृति की थी। संभवत: इलाहाबाद के अशोक शिलालेख के 'क्षुद्र स्तम्भ अभिलेख' की दान देने वाली देवी महेन्द्र की माता ही है। संभवत: उसके आग्रह पर अशोक ने विदिशा के आस-पास बौद्ध स्मारकों के निर्माण का निश्चिय किया होगा।

साँची की पहाड़ी के शांत वातावरण और आसपास बिखरे प्राकृतिक सौन्दर्य से प्रेरित होकर उसने यहाँ स्मारकों का निर्माण करना उचित समझा होगा। दूसरा कारण ये भी हो सकता है कि विदिशा के आसपास के क्षेत्र में स्थविरवादियों की स्थिति कमजोर हो गई हो और महासांघिकों का जोर बढ़ गया हो, क्योंकि साँची के अपने स्तम्भ लेख में अशोक ने संघभेद करने वाले भिक्षु-भिक्षुणियों को कड़ी चेतावनी दी थी। हो सकता है कि बुद्ध की स्थविरवाद की सुरक्षा के लिये उसने सभी संभव उपाय किये होगे, जैसे बुद्ध के अस्थि-अवशेषों को लाकर विशाल स्तूप एवं विहारों की प्रतिष्ठा पांच

* अतिथि विद्वान (इतिहास) नवीन शासकीय महाविद्यालय, तेंदूखेड़ा, जिला - नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

सुनिश्चित स्थानों साँची, सोनारी, सतधारा, आंधरे तथा भोजपुर-पिपरिया में करना और संघभेद की चेतावनी देने वाले शिला स्तम्भ की प्रतिष्ठा इन स्तूप समूहों के केन्द्र स्थल साँची में करना क्योंकि साँची विदिशावासियों के अति निकट थी।

वैशाली से कौशाम्बी और विदिशा होकर उज्जैन जाने वाले महामार्ग (प्रतोलिका) पर साँची की पहाड़ी स्थित थी। उन दिनों अश्मक देश की नदी गोदावरी से लेकर मगध की वैशाली नगरी तक ये महामार्ग जाता था। प्रतिष्ठान, माहिष्मती, उज्जयिनी, गोनर्द, विदिशा, तुम्बवन आदि नगर इसी मार्ग पर स्थित थे। साँची के अभिलेखों में इन सभी नगरों का उल्लेख है। प्रतिष्ठान पैठान औरंगाबाद जिले में है। माहिष्मती नर्मदा पर बसी हुई महेश्वर या मांधाता नगरी है।[9] गोनद या गोनर्द उज्जयिनी और विदिशा के बीच स्थित था। बौद्धग्रन्थ महामायूरी में गोनार्द-विदिशा का उल्लेख है। सांरगपुर (जिला राजगढ़) से प्राप्त तेरहवीं, चौदहवीं शती के शिलापट्ट अभिलेख में गोनर्द के ब्रह्मदेव, सहदेव, गोविन्द आदि के दान का उल्लेख है।

विदिशा नगरी कम से कम चौथी शती ई.पू. की अवश्य रही होगी। अशोक के समय में यह एक समृद्ध नगरी थी। यहाँ से प्राप्त तांबे के एक सिक्के पर तीसरी शती ई.पू. की लिपि में वेदिस या वेदस लिखा है।[10] साँची, सोनारी, सतधारा, भोजपुर तथा आंधेर के स्तूप-समूहों के निर्माण में जनता का विशेष हाथ था। अकेले साँची के स्तूपों के अभिलेखों से पता चलता है कि लगभग 380 उपासक-उपासिकाओं, 200 भिक्षु-भिक्षुणियों, 27 श्रेष्ठी एवं वाणिक् परिवारों, 5 गाँवों के नागरिकों, 3 गोष्ठियों के सदस्यों, 5 परिवारों तथा 4 समितियों के सदस्यों ने साँची के निर्माण कार्यो में सक्रिय भाग लिया था। सहकारिता का इतना बड़ा उदाहरण देखने सुनने में बहुधा नहीं आता।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र इस बात का साक्षी है कि व्यापार-व्यवसाय मौर्यकाल में बड़ी उन्नति पर था। यह उन्नति शुंगकाल में भी सुव्यवस्थित रूप से चलती रही।[11] साँची में तीन स्तूपों का निर्माण हुआ है। इसमें एक विशाल तथा दो छोटे स्तूप हैं। महास्तूप में भगवान् बुद्ध के द्वितीय में अशोक कालीन धर्म प्रचारकों के तथा तृतीय स्तूप में बुद्ध के दो प्रमुख शिष्यों सारिपुत्र तथा महामोदग्ल्यायन के धातु अवशेष सुरक्षित हैं। अशोक के समय में निर्मित स्तूप का व्यास 60 फुट था। इस स्तूप में जिन ईटों का इस्तेमाल किया गया उनका आकार 16x10x3 इंच है।[12] लेकिन सम्पूर्ण स्तूप का व्यास 120 फुट और ऊँचाई 54 फुट के लगभग थी जिसमें हर्मिका और छत्रावली सम्मिलित नहीं है। सारनाथ की अशोककालीन हर्मिका* सादगी का ज्वलन्त उदाहरण है।[13] मौटे तौर पर इस स्तूप का सबसे प्राचीन दक्षिणी तोरण द्वार है। इसके बाद क्रमशः उत्तरी, पूर्वी और पश्चिमी तोरण द्वार आते है। दक्षिण और उत्तर के प्रवेश द्वार एक से है किंतु पूर्व और पश्चिम के प्रवेश द्वारों के स्तम्भ छोटे हैं। इन तोरण द्वारों का अलंकरण भी एक जैसा ही है। तोरण महात्मा बुद्ध के जीवन की घटनाओं तथा जातक कथाओं के चित्रों से परिपूर्ण है। उन्हें नीचे से ऊपर तक अलंकरणों से सजाया गया है। वे अपनी वास्तु की अधिक उत्कीर्ण अलंकरणों के लिये ही प्रसिद्ध है।[14] 'अलंकरण के विचार से साँची-तोरण कला सर्वोत्तम मानी जाती है।............. षड्दंत जातक, बेसंतर-जातक एवं भस्म (धातु) के लिए युद्ध का प्रदर्शन कलात्मक प्रवाह के ज्वलंत उदाहरण है। इसीलिए साँची कला को शुंगकाल की सर्वोत्कृष्ट कला समझते हैं।'[15] हर्मिका के बीच में एक यष्टि लगाई जाती है। इसी यष्टि के ऊपर तीन छत्र लगाये जाते हैं।

स्तूप के चारों ओर वेदिका (Railing) का निर्माण किया जाता है। स्तूप तथा वेदिका के बीच परिक्रमा करने वाला स्थान प्रदक्षिणा पथ कहलाता है। इस प्रकार एक स्तूप में मेधि, वेदिका, अण्ड, प्रदक्षिणापथ, हर्मिका, यष्टि, क्षत्र, तोरण आदि महत्वपूर्ण अंग होना आवश्यक है। वी.एस. अग्रवाल ने स्तूप को त्रिलोक का प्रतीक बताया है। (वी.एस. अग्रवाल - भारतीय कला, पृष्ठ क्रमांक 133) साँची के द्वितीय स्तूप का वास्तु भी महास्तूप के ही समान है। इसमें कोई तोरण द्वार नहीं है। इसकी वेदिका पर बहुसंख्यक उत्कीर्ण चित्र मिलते है। इसमें तीन वेदिकायें थी- एक भूमित्व पर, दूसरी मध्य में तथा तीसरी हर्मिका पर। महत्वपूर्ण बात यह है कि भूमित्व की वेदिका पर प्रायः वे सभी दृश्य उत्कीर्ण हैं जो महास्तूप के तोरणों पर मिलते हैं।

तृतीय स्तूप में केवल एक तोरण द्वार है, जो अपेक्षाकृत बाद में बना है। मालाधारी यक्ष मूर्तियाँ, स्तूप पूजा, बोधिवृछपूजा, चक्र, स्तम्भ, गजलक्ष्मी, नाग, अश्व, हाथी आदि अनेक दृश्यों का चित्रण अत्यंत आकर्षक एवं कलात्मक ढंग से किया गया है। इस प्रकार साँची के तीनों स्तूप सुरक्षित अवस्था में है तथा भारत के बौद्ध स्मारकों में अपना सर्वोपरि स्थान रखते हैं। यहाँ अशोक द्वारा बनवाया स्तूप विश्व का सबसे बड़ा स्तूप है।[16] साँची द्वितीय एवं तृतीय शताब्दी ई.पू. में महत्वपूर्ण बौद्ध केन्द्र था।

वर्तमान में भारत में यहीं एक ऐसा स्थल है, जहाँ बौद्धकालीन शिल्पकला के सारे नमूने विद्यमान हैं। 'यूनेस्को'* की विश्व विरासत सूची में खजुराहों समेत भारत के 27 स्मारकों[17] को शामिल किया गया है। दैनिक भास्कर जबलपुर, शुक्रवार, 29 जून 2007 पृष्ठ क्रमांक 16 में जारी सूची में साँची स्तूप को वर्ष 2005 में विश्व धरोहर रेखांकित किया गया है।[18] जबकि साँची स्थित बौद्ध स्तूप को 1989 में विश्व धरोहर के रूप में सम्मिलित किया जा चुका है।[19] साँची के आसपास के स्तूप समूहों में सोनारी के स्तूप, सतधारा के स्तूप, पिपलिया (भोजपुर) के स्तूप, आँधेर के स्तूप भी ऐतिहासिक धरोहर के रूप में महत्वपूर्ण है। साँची के सैकड़ों अभिलेख भारतीय इतिहास, भूगोल, व्यापार, व्यवसाय, धर्म, कला, संस्कृति के लिए अमूल्य स्त्रोत है। साँची का अधिकांश इतिहास और वर्णन इन्हीं अभिलेखों पर आधारित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मार्शल, सर जान एवं फुशर - 'दि मान्यूमेन्ट्स ऑफ साँची'भाग - 1, पृ.क्रं. - 11
2. मार्शल, सर जान एवं फुशर - 'दि मान्यूमेन्ट्स ऑफ साँची' भाग - 1, पृ.क्रं. - 11
3. मिश्र, भास्कर नाथ - साँची, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल (म.प्र.) 1982, पृ.क्रं. - 1
4. पाटिल, डी.आर. - 'दि मान्यूमेन्ट्स ऑफ दि उदयगिरि हिल' ग्वालियर 1948, पृ.क्रं. - 6
5. मार्शल, सर जान एवं फुशर - 'दि मान्यूमेन्ट्स ऑफ साँची' भाग - 1, पृ.क्रं. - 295
6. मार्शल, सर जान एवं फुशर - 'दि मान्यूमेन्ट्स ऑफ साँची' भाग - 1, पृ.क्रं. - 301
7 मार्शल, सर जान एवं फुशर - 'दि मान्यूमेन्ट्स ऑफ साँची' भाग - 1, पृ.क्रं. - 38
8. मार्शल, सर जान एवं फुशर - 'दि मान्यूमेन्ट्स ऑफ साँची'भाग - 1, पृ.क्रं. - 396
9. पाण्डेय, राजबली - 'हिस्टारिकल एण्ड लिटररी इन्स्क्रप्शंस', वाराणसी 1962, पृ.क्रं. 40-41
10. त्रिवेदी, एच.वी. - 'दि जर्नल ऑफ दि न्यूमिस्मैटिक सोसाइटी ऑफ इंडिया' (गोल्डन जुबिली वाल्यूम)

खण्ड – 23, वाराणसी, 1961, पृ.क्रं. 307

11. मजुमदार, आर.सी. और पुसलकर ए.डी.–'दि एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी', बम्बई 1953 द्वितीय संस्करण, पृ.क्रं. 595–605
12. मार्शल, सर जान एवं फुशर – 'दि मान्यूमेन्ट्स ऑफ साँची' भाग – 1, पृ.क्रं. – 19

* स्तूप का प्रारंभिक एवं अर्द्धगोलाकार (Hemispherical) होता है। इसमें एक चबूतरे (मेधि) के ऊपर उतरे कटोरे की आकृति का एक थूहा बनाया जाता है जिसे 'अंड' कहते है। स्तूप की चोटी सिरे पर चपटी होती है जिसके ऊपर धातु–पात्र रखा जाता है। इसे 'हर्मिका' कहते हैं। यह स्तूप का सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग होता हैं। हर्मिका का अर्थ देवसदन अथवा देवताओं का निवास स्थान होता हैं। (बी.एस. अग्रवाल–भारतीय कला, पृ.क्रं. 133)

13. साहनी, डी.आर. – 'कैटेलाग ऑफ दि म्यूजियम ऑफ आर्केओलाजी ऐट सारनाथ', कलकत्ता 1964, पृ.क्रं. – 3
14. बाथम, ए.एल. – 'वंडर दैट वाज इंडिया', औरएिण्ट लौंगमेन्स, कलकत्ता, पृ.क्रं. – 351–52
15. उपाध्याय, डॉ. वासुदेव – 'प्राचीन भारतीय स्तूप, गुहा एवं मंदिर' बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना 1989 (द्वितीय संस्करण), पृ.क्रं. – 36
16. प्रतियोगिता दर्पण –दिसम्बर 1994, पृ.क्रं. – 778

* यूनेस्को – संयुक्त राष्ट्र संघ का एक सांस्कृतिक संगठन

17. दैनिक भास्कर – जबलपुर, शुक्रवार, 29 जून 2007, पृ.क्रं. – 16
18. दैनिक भास्कर – जबलपुर, शुक्रवार, 29 जून 2007, पृ.क्रं. – 16
19. नाटाणी, प्रकाश नारायण – 'भारत का कलात्मक वैभव', अवतार पब्लिकेशन्स जयपुर (राजस्थान), 2007, पृ.क्रं.– 3

****

बुंदेलखण्ड में मराठों का आगमन एवं विस्तार

डॉ. चेतना ठाकुर *

शोध सारांश – यमुना और नर्मदा नदियों के बीच का भू–भाग जो बुंदेलखण्ड के नाम से प्रसिद्ध था, उस पर निर्भीय स्वेच्छाधारी बुंदेला शासकों का आधिपत्य था। इन्ही बुंदेला शासकों में प्रतापी राजा छत्रसाल का उल्लेख यहाँ अनिवार्य हो जाता है क्योंकि उन्होंने ही मुगल दासता का मुखड़ा उतार फेंकने का प्रयत्न कर बुंदेलों को एक छत के नीचे एकत्रित करने का प्रयास किया। इन्हीं राजा छत्रसाल के विस्तार क्रम को रोकने के लिए मुगल सम्राट द्वारा इलाहाबाद के सूबेदार मोहम्मद खां बंगश को भेजा गया। छत्रसाल और बंगश युध्द में छत्रसाल द्वारा पेशवा को सहायता के लिए विनय किया गया, इस विनय पर बाजीराव द्वारा बुंदेलो को सहायता देने से छत्रशाल बंगश नामक बला से सुरक्षित बच गया और संधि द्वारा बंगश का पुन: यमुना पर आना निषिध्द हो गया। इस सामरिक सहायता से कृतज्ञ होकर छत्रसाल द्वारा बाजीराव को पुत्रवत मानते हुए छत्रसाली राज्य में तृतीयांश दिया गया। इस प्रकार मराठों का आगमन बुंदेलखण्ड में हुआ। प्रस्तुत शोध पत्र में मराठों का बुंदेलखण्ड में आगमन और साम्राज्य विस्तार का अध्ययन किया गया।

प्रस्तावना –मराठों के आगमन के साथ ही बुंदेलखण्ड में बाजीराव को जालौन कालपी, हटा, सागर, सिरोंज, कोंच तथा हिरदेनगर प्राप्त हुए। जिसका राजस्व 33 लाख रू था।[1] पेशवा को प्राप्त छत्रसाली बंटवारे का सविस्तार उल्लेख गोविंद पंत बुंदेलयाची केफियत के अनुसार पेशवा को हृदयशाह (छत्रसाल का पुत्र) राज्य में से प्रदेश मिले थे वे निम्न है –

1. रहली, गढाकोटा, पथरिया, दमोह, बेल्हाई, अमानगंज। इन क्षेत्रों को गोविंद केशव नामक कमाविसदार के अधिकार में रखा गया।
2. कुढरी, हटा, जटाशंकर, कोटा, सिमरिया, जोधपुर, अमानगंज, व ककेरिटी क्षेत्रों को कमाविसदार केशव सोनदेव को दिया गया।
3. खुरई, पंचमहल, मोधना, केलगांव, मालथौन आदि क्षेत्रों के लिए लक्ष्मणपंत दादा को प्रबंधन दिया गया।
4. जैसिंगनगर, रणावली, ईसरवानी इन क्षेत्रों के कामाविसदार का नाम ज्ञात नहीं हुआ है। जालौन के तीन भागों के लिए गोविंद पंत बुंदेला को नियत किया गया, जो निम्न थे – (1) चुरखी, रायपुर, कनार, जालौन, कौंच खजवा गौहाणे, कटाणे और कोलिया इन क्षेत्रों का कामाविसदार में रखा गया। (2) एट मोहम्मदाबाद, उरई, सैयदनगर, कोटरा और आकोडी का दुसरा भाग गोविंद जीवाजी के कामविसदारी में रखा गया। (3)गुरसराय, सिमरिया, बेलाज, तलवड आदि को बिठ्ठलपंत काका खेर के अधिकार में दिया गया। इसके अतिरिक्त पेशवा को जगतराज (छत्रसाल के दुसरे पुत्र) के राज्य से जो प्रदेश प्राप्त हुऐं उनका विवरण निम्न है – (1) इटौरा, कालपी, हमीरपुर आदि हरी बिठ्ठल के अधिकार में रखे गऐं।(2) श्रीनगर, खडिया, कबराई, चरखारी, जैतपुर मौदहा, अजयगढ़ आदि पर कृष्णजी अन्त को नियत किया गया। (3) नरसिंहपुर और उसके 11 परगानों का बनाया गया जिनमें हटरी, बिनैका, रामगढ़, कन्हैया, सिदवई, पैठर, कुंवरपुर, शाहमुडर, मड़वरा, दूधई और मड़ियादी। इनके कमाविसदारों का नाम ज्ञात नही है।[2]

पेशवा को छत्रसाली बंटवारे में जो प्रदेश प्राप्त हुए हैं, उसका ये विवरण देखने पर स्पष्ट हो जाता है कि झाँसी का होना इसमें उल्लेखित नहीं है। जैसा कि पहले वर्णन किया जा चुका है कि केवल गोरेलाल तिवारी इस बँटवारे में पेशवा को झाँसी मिलने का उल्लेख करते है जो कि संदिग्ध है। बहरहाल झाँसी को जहाँ तक ज्ञात हुआ है वह सन् 1742 में ओरछा राज्य से मराठों द्वारा हथिया लिया गया था। पेशवा बाजीराव के पश्चात् अगले पेशवा बालाजी बाजीराव ने बंगाल अभियान पर जाते समय ओरछा के निकट अपना पडाव डाला था। उसी दौरान सन् 1742 में पेशवा ने 50 हजार रूपए खंडनगी के बदले में ओरछा के राजा पृथ्वीसिंह ने झाँसी को जागिर स्वरूप ले लिया था व मल्हाराव कृष्ण को ओरछा शासक से खंडनगी वसूल करने के लिए वहाँ नियत कर दिया। कालांतर में ओरछा राजा द्वारा खंडनगी न दिए जाने व मराठों पर आक्रामक कार्यवाही करने पर पेशवा द्वारा उसे दंड स्वरूप झाँसी के किले में बंदी बनाकर रख दिया गया। परंतु ओरछा घराने की प्राचीनता व बुंदेलों के साथ पूर्व में रहें मधुर सबंधों के कारण उसे छोड दिया गया। कालांतर में झाँसी और उसके आसपास के क्षेत्रों पर अधिकार पुष्ट हो जाने पर पेशवा द्वारा नारोशंकर को झाँसी का प्रथम सूबेदार नियुक्त कर दिया गया।[3]

उपरोक्त बंटवारे के विवरण के अवलोकन से स्पष्ट हो जाता है कि महाराजा छत्रसाल की सामरिक सहायता करने के फलस्वरूप पेशवा बाजीराव को जो छत्रसाली बंटवारें में तृतीयांष प्राप्त हुआ उसके अधिग्रहण से बुंदेलखण्ड में मराठों का आगमन हुआ।

बुंदेलखण्ड में मराठों के आगमन के पूर्व से ही बुंदेला द्वारा स्थापति रियासतें जिनमें दतिया, समथर, चरखारी आदि बडी रियासतों के साथ कई छोटी रियासतें अस्तित्व में थी। कालांतर में इन रियासतों में चल रही आंतरिक कलहों के कारण उत्पन्न अव्यवस्था का लाभ उठाने के लिए 1791 में पेशवा बाजीराव का पौत्र अलीबहादुर अपने सहयोगी हिम्मत बहादुर के पास बुंदेलखण्ड पहुँच गया।[4] यहाँ पहुँचकर अलीबहादुर ने बाँदा को अपना मुख्यालय बनाया व अपने विजय अभियान का क्रम जारी रखा। अलीबहादुर सन् 1802 तक बुंदेलखण्ड के एक बडे भू–भाग पर ज्यादा प्रतिरोध ना किए जाने से अधिकार करने में सफल हो गया। लेकिन इसी वर्ष कांलिजर के घेरे के दौरान वह मृत्यु को प्राप्त हुआ। अपनी मृत्यु के पूर्व उसने अपने द्वारा विजित क्षेत्रों पर पूना दरबार से एक व्यवस्था कराकर उक्त क्षेत्रों पर पेशवा के सर्वोच्च अधिकार में आने की घोषणा करा कर स्वीकृति प्राप्त करा ली थी।

इधर 1772 में माधवराव पेशवा का निधन हो गया। यह कहना सत्य है कि माधवराव की मृत्यु मराठों के लिए पानीपत की लडाई से अधिक घातक सिध्द हुई। उसकी मृत्यु के साथ मराठें आपसी मतभेद में उलझ गए। पेशवा के रिक्त पद को भरने में ललायीत राघोबा के स्वप्न पर उस समय पानी फिर गया जब 1774 में गंगाबाई ने एक पुत्र को जन्म दिया। इस बालक का संरक्षक

* अतिथि विद्वान (इतिहास) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

नाना फडनवीस बन गया और राज्य संभालने लगा। नाना के सरंक्षक बनने के समाचार से उद्धेलित होकर राघोबा पूना आ गया। पूना में इस समय दरबार दो गुटों में विभाजित हो गया। जिसमें एक गुट राघोबा का था, जो स्वयं पेशवा बनना चाहता था। दुसरा गुट नाना फडनवीस का था, जो राघोबा की इस लालसा की रोकथाम करने में लगा हुआ था। मराठों के इस आंतरिक कलह के वातावरण में लार्ड हेस्टिंग्ज का गर्वनर जनरल बनकर भारत में आगमन हुआ। उसने मराठों की कलह का लाभ उठाकर सालीसीट व बेसिन पाने के लियें प्रथम मराठा युध्द लड़ा जो एक तरह से अनिर्णीत रहा, परंतु यहाँ अंग्रेजों की बंबई सरकार को सालसीट व भड़ौच प्रदेश प्राप्त हो गये और राघोबा को सम्मान सहित पेंशन मिल गई। इसके उपरांत लगभग 20 वर्षो तक मराठों व अंग्रेजो के मध्य शांति बनी रही। 1798 में लार्ड वेलेजली भारत में गर्वनर जनरल बनकर आया। उसके कार्यकाल में मराठें अपने आपसी मतभेद में इतने उलझ गयें थे कि एक-दूसरे के ही शत्रु बनने लग गऐं। इसी दौरान 1800 ई. में नाना फड़नवीस का देहांत हो गया। उसके निधन पर अंग्रेज रेजिडेंट पामर ने लिखा कि 'उनके साथ मराठा शासन से बुद्धि विवेक ही चल बस'। मराठा सरदारों के मध्य आपसी क्लेश चल ही रहे थे कि पेशवा बाजीराव द्वितीय और दौलतराव सिंधिया होल्कर के विरूध्द हो गये और उसके भाई विठ्ठल जी होल्कर की हत्या करवा दी। इस समाचार से क्रोधित होकर 1802 में होल्कर पूना पर आक्रमण कर बैठा। अपनी प्राण की रक्षा के लिए पेशवा बाजीराव द्वितीय बेसिन में अंग्रेजो के सरंक्षण में चला गया। इधर वेलेजली भी इसी अवसर को तलाश रहा था क्योंकि वह मराठों को सहायक संधि के जाल में फसाना चाहता था, अत: 1802 में उसने बाजीराव द्वितीय से बेसिन की संधि कर दी। इस संधि द्वारा अंग्रेजो ने पेशवा बाजीराव द्वितीय को 1803 में पुन: पूना की गद्दी पर बैठा दिया। पेशवा ने भी अली बहादुर द्वारा विजीत मराठा बुंदेलखण्ड अंग्रेजो को प्रदान कर दिया।

उक्त संधि से मराठा सरदारों में क्रोध तथा असंतोष की भावना प्रकट हुई। इस कारण होल्कर के साथ अंग्रेजो का आमना-सामना हो गया। इस युध्द को तृतीय आंग्ल मराठा युध्द भी कहते है। द्वितीय मराठा युध्द के परिणामों पर गौर करे तो पेशवा अंग्रेजों के अधीन था, सिंधिया व भोंसले पराजित हो चुके थे, गायकवाड पहले से ही अलग था। अब मराठों में एकमात्र होल्कर ही अधीनता की परिधि में लाना बाकि रह गया था। 1804 में होल्कर पर 3 दिशाओं से आक्रमण किया गया। उत्तर में लेक ने, दक्षिण में आर्थर वेलेजली ने, और पश्चिम में कर्नल मॉनसन ने होल्कर पर आक्रमण किया। होल्कर ने सर्वप्रथम मॉनसन की सेना का सर्वनाश कर दिया। इधन आर्थर वेलेजली को मार्ग की कठिनाईयों के कारण वापिस होना पडा। उत्तर के मोर्चे से कर्नल फासेट ने बुंदेलखण्ड पर आक्रमण किया पर यहाँ उसकी सेना ने करारी मात खाई। इन सफलताओं के आवेश में आकर होल्कर ने दिल्ली पर आक्रमण किया किंतु आक्टर लोनी से जीत न सका। इसके उपरांत डींग और फारूकाबाद में भी उसे शिकस्त मिली। जिस कारण होल्कर भरतपुर चला गया। भरतपुर पर लेक ने चार बार आक्रमण किया। किंतु हर बार उसे निराश होना पडा, इन लगातार फौजी गतिविधियों से कंपनी पर ऋण बहुत बढ गया। डायरेक्टर खुले आम वेलेजली की निंदा करने लगे। पिट ने अपनी राय प्रकट करते हुए कहा कि गर्वनर जनरल ने बहुत ही नासमझी के साथ ना वाजिब काम किए और उसे किसी भी दशा में सरकार में नहीं रहने दिया जा सकता।[5]

वेलेजली के होल्कर के साथ वाले अध्याय का जो शेष रह गया था वह जार्ज बारलो ने पुरा किया। उसने 1805 में होल्कर से राजपुर घाट की संधि कर ली। इस संधि के अनुसार होल्कर ने चंबल के उत्तर की तरफ के प्रदेश पर से अपना अधिकार त्याग दिया। इसके अतिरिक्त बुंदेलखण्ड में आने वाले उसके अधीन क्षेत्रों को भी अंग्रेजो को दे दिया। 1813 में लार्ड हेस्टिंगज का आगमन हुआ, उसके शासन काल में एक बार फिर मराठों को लेकर नीतिगत निर्णय में फेरबदल हुआ। इसी के अंतर्गत पेशवा बाजीराव द्वितीय पर विरोधी होने का आरोप लगाकर उसे 1817 में नई संधि संपन्न करने के लिए विवश किया गया। इस संधि के अनुसार पेशवा को अपनी गद्दी छोडनी पडी और बुंदेलखण्ड, मालवा और उत्तर भारत के अपने सारे अधिकार अंग्रेजो को सौप देने पडे। इस अपमानजनक संधि पर हस्ताक्षर करने के बाद पेशवा बाजीराव द्वितीय ने अंग्रेजो के शिकंजे से निकलने के प्रयत्न शुरू कर दिए। इधर हेस्टिंग्ज ने पेशवा पर दबाव डालने हेतु उसे चारों तरफ से घेर लिया। इस स्थिति से निपटने के लिए पेशवा ने अप्पा साहब के साथ मिलकर पूना और नागपुर रेजिडेंटो पर आक्रमण कर दिया पर यहाँ उन्हें कोई खास सफलता नहीं मिली। इसके उपरांत फरवरी 1818 को अष्टी की लडाई में बाजीराव द्वितीय की निर्णायक पराजय हुई लेकिन उसने सर्मपण जुन 1818 में ही किया। उसके भू-भाग को अंग्रेजो के नियंत्रण में ले लिया गया।[6]

इस प्रकार पेशवा का पद सदा के लिए समाप्त हो गया। पेशवा को बिठूर की जागिर दे दी गई और 80 हजार पाउंड वार्षिक पेंशन स्वीकार हुई। पेशवा ने 32 वर्ष बिठूर में बिताए और अंतत: 1850 में मृत्यु को प्राप्त हो गयें। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि पेशवा ने अपनी मृत्यु के पहले नाना साहब को दत्तक पुत्र बना लिया था। आगे चलकर 1857 के विद्रोह के सुप्रसिध्द नेता बने थे।

पेशवा को समाप्त करने के उपरांत अंग्रेजो ने अप्पा साहब पर ध्यान दिया। अप्पा साहब ने गुप्त रूप से पिंडारियों और पठानों से संपर्क बनायें और अंग्रेजो से युध्द आरंभ कर दिया। अप्पा साहब ने इस हेतु अंग्रेजो से सीताबर्डी का युध्द एवं नागपुर का युध्द किया। पर दोनों में पराजय का मुँह देखना पडा। इसके उपरांत अप्पा साहब को आसीरगढ़ के सेनापति की सहायता मिलने से 1817 में निर्णायक आशीरगढ का युध्द हुआ। जिसमें वे हार गए। यही विषय होकर अप्पा साहब ने 1817 में संधि कर ली। यहाँ पर अप्पा साहब ने जनरल मार्शल को मंडला, सिवनी, बैतुल जिला तथा नर्मदा घाटी के क्षेत्रों को समर्पित कर दिया।[7]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुप्त भगवानदास, महाराज छत्रसाल बुंदेला, पृष्ठ क्रमांक - 97 से 101
2. गुप्त डॉ भगवानदास, झाँसी राज्य का इतिहास और संस्कृति, 1721 से 1857 ई., 2008, राजकीय संग्रहालय, झाँसी, पृष्ठ क्रमांक - 18-19
3. वही पृष्ठ क्रमांक - 26-29
4. सर देसाई जी.एस, न्यू हिस्ट्री ऑफ दी मराठाज, जिल्द तीन, पृष्ठ क्रमांक - 209-210
5. स्मिथ, दी आक्सफोर्ड, हिस्ट्री ऑफ इंडिया, पृष्ठ क्रमांक - 536
6. मिश्र द्वारका प्रसाद, मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, स्वराज संस्थान भोपाल, पृष्ठ क्रमांक - 12
7. इम्प्लीयर गजेटियर ऑफ इंडिया, वाल्युम् 1908 पृष्ठ क्रमांक -17

****

वागड़ के आदिवासियों की स्वतन्त्रता से पूर्व एवं बाद की स्थिति- एक तुलनात्मक अध्ययन

विक्रम सिंह ताबियार *

शोध सारांश – वागड़ क्षेत्र अभी भी पिछडा हुआ है। जिसके कारण इस पर विशेष ध्यान दिया जाना अति आवश्यक है। जिन आदिवासियों के पास भूमि है, उसमें सिंचाई के पर्याप्त साधन न होने से तथा वैज्ञानिक तरीके का उपयोग न कर पाने के कारण प्रति हैक्टेयर उपज कम है। स्थायी रोजगार उपलब्ध न हो पाने के कारण वागड़ के अधिकांश आदिवासी परिवार गुजरात के अहमदाबाद शहर में दैनिक मजदूरी हेतु पलायन कर रहे है।

शिक्षा के क्षेत्र में अज्ञानता, के चलते शैक्षणिक योजनाओं का पूरा-पूरा लाभ ग्रामीण छात्र-छात्राओं को नहीं मिल पा रहा है। आदिवासी समाज में अनेकों समस्यायें है, लेकिन उनका समाधान भी मौजूद है। केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा शिक्षा की मुहीम को घर-घर पहुँचा कर एवम् भ्रष्टाचार मुक्त शिक्षा को प्रत्येक आदिवासी को प्रदान की जाए, तब कही जाकर आदिवासियों का वास्तविक उत्थान हो पायेगा।

प्रस्तावना –प्राचीन वागड़ प्रदेश का विस्तार उत्तर में पारसोला सोम नदी के पार, चूंडा के सलूम्बर, मेवल के जगन गाँव कुराबड़ के आठ गाँव, छप्पन का झाडोल, परसाद, खडग के ऋषभदेव और पीपली तथा नीचली भोमट के बाबलापाड़ा, पश्चिम में गुजरात के घोड़ादार, (विजयनगर) पाल ईड़र (सांबरकाटा) के मोरी, मेघराज, देवगदाधर (सांवलाजी) और मोड़ासा, लूनावाड़ा कड़ाना के डिंगलवाड़ा, पंचमहल के झालोद, मालवा, का झाबुआ का उत्तरी भाग, पूर्व में मालवा का सैलाना घाटा, रतलाम और प्रतापगढ़ के पश्चिम भाग तक था।[1] वर्तमान में इस क्षेत्र में डूंगरपुर और बांसवाड़ा जिले आते है। जो उदयपुर, मध्यप्रदेश एवं गुजरात की सीमाओं को स्पर्श करते है।

स्वतंत्रता से पूर्व तात्कालीन समाज में अनेक बुराईयाँ व्याप्त थी, जिससे समाज को मुक्त कराना आवश्यक था। जो कि निम्नलिखित हैं –

इजारा प्रणाली – राज्य द्वारा एक निश्चित अवधि तक एक निश्चित रकम के बदले भू-राजस्व वसूली का अधिकार किसी को प्रदान करना इजारेदारी प्रथा कहलाती थी।[2]

कर्नलटॉड द्वारा लागू करवाई गई, इस तरह की व्यवस्था से यहाँ की आदिवासी जातियों में शोषण की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। चूँकि इस व्यवस्था का लाभ केवल भू-राजस्व निर्धारण करने वाले अधिकारी, कर्मचारी तथा कृपा पात्र किसानों को ही मिल रहा था।[3]

ढेका पद्धति – राज्य में राजस्व वसूली के लिये महारावल ने यह व्यवस्था की थी कि गांवों के समूह को मुकाते पर दे दिया जावे। मुकाता पद्धति का अर्थ यह है कि कोई भी सम्पन्न व्यक्ति निश्चित अवधि के लिये राज्य से गाँव के समूह अथवा सम्पूर्ण जिले को ठेके पर ले सकता था। समय के साथ-साथ मुकाता प्रणाली में अनेक दोष आने लगे। मुकाती शनैः शनैः कृषकों की आवश्यकतानुसार ब्याज पर ऋण देकर उनकी भूमि के स्वामी बन बैठे।[4]

सागड़ी प्रथा – सागड़ियों के पास कृषि भूमि, हल, बैल इत्यादि नहीं होते थे। सागड़ी अधिकांश गरीब भील थे। इनको महारावल, ठिकानेदार एवं धनीकृषक रूपये अथवा खाना देकर अपने यहाँ रख लेते थे। ठिकाना अभिलेखों से केवल यही जानकारी प्राप्त होती है कि ठिकानेदार अपने क्षेत्र की पहाड़ियों पर इनको रहने के लिए झोपड़ी बनाने की इजाजत देता था, जो माफी की जमीन होती थी। सागड़ी रहते हुए मालिक ओर सागड़ी के मध्य समझौता होता था। उस समझौते में मालिक व सागड़ी के मध्य संबंधों का स्पष्ट उल्लेख होता था। उदाहरण के लिए –

1. हम उनका सभी प्रकार का कार्य जैसे-खेती-बाड़ी, खाण्डना, पीसना, बर्तन साफ करना एवं पानी भरने का कार्य करते रहेंगे तथा ब्याज नहीं देंगे।
2. अगर हमें आवश्यकता हुई तो ठिकाने से स्वीकृति लेकर एक या दो दिन काम पर नहीं भी आ सकते। किंतु उसके लिए भी यदि ठिकाना इजाजत नहीं देगा, तब हम अनुपस्थित नहीं रहेंगे यदि अनुपस्थित होंगे तो ठिकाना प्रतिदिन आठ आने के हिसाब से हमारे खाते हमें लिख देगा।
3. यदि हम (सागड़ी) कहीं भाग जावे, अथवा काम में आनाकानी करे तो मालिक को यह अधिकार था कि वह उसकी स्थायी संपत्ति का बेचान कर मूल राशि को वसूलेगा और मृत्यु के बाद उसके पुत्र को सागड़ी रहना पड़ता था।[5]

बेगार प्रथा – भीलों से राज्य के शासकों, जागीरदारों और ब्रिटिश पोलिटिकल एजेन्टों द्वारा रात को निःशुल्क चौकीदारी के साथ-साथ शारीरिक श्रम का कार्य भी लिया जाने लगा।

रियासत के शासक पोलिटिकल एजेन्ट जंगलों में शिकार के दौरे पर जाते तो उनकी तैयारी के लिए भीलों को जबरदस्ती पकड़ कर कच्चे रास्ते ठीक करवाऐ जाते थे। मना करने पर बुरी तरह पिटाई की जाती थी। यही नहीं भील स्त्रियों को भी बेगार लेने के लिए विवश किया जाता था, कभी-कभी अवसर पाकर उनकी इज्जत तक भी खराब की जाती थी।[6]

शिक्षा के क्षेत्र में वीर सेंगा भाई एवं नानाभाई ने डूंगरपुर के रास्तापाल नामक स्थान पर एक पाठशाला की स्थापना की, शिक्षा के द्वार पुरूषों एवं महिला दोनों के लिए समान रूप से खोल दिये गए थे। लेकिन रियासती ठेकेदारों का आदिवासियों का शिक्षित होना हजम नहीं हुआ। परिणामस्वरूप 19-6-1947 ई. को रियासत पुलिस दलबल के साथ रास्तापाल पाठशाला पहुंची।

वहाँ पहुँचकर अध्यापक सेंगाभाई पर अमानवीय अत्याचार किये। इसकी सूचना नानाभाई को मिली, वे पाठशाला पहुँचे लेकिन रियायती पुलिस मानो उन्हीं का इतंजार कर रही हो, देखकर नानाभाई पर टूट पड़े। क्रूर अधिकारियों ने उनके मर्मस्थल पर इतना मारा की उनकी पाठशाला के समक्ष ही प्राण निकल गये। जब इसकी भनक 13 वर्षीया भील छात्रा काली बाई को लगी

* शोधार्थी (इतिहास) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

तो वे अपने गुरू, सेंगा भाई को बचाने हेतु दौड़ी, और हंसिये के एक प्रहार से ही रस्सी को काट दिया। यह देख सिपाहियों ने नन्हीं काली बाई पर गोलियाँ चला दी, उसने अपना जीवन अपने गुरू एवं मातृभूमि पर न्यौछावर कर दिया।[7]

मानगढ़ विभिषिका – गुरू गोविन्द गिरि महाराज के नेतृत्व में मानगढ़ क्रांति का शुभारंभ हुआ। इनका जन्म 20 दिसम्बर 1858 (मार्गशीर्ष पूर्णिमा वि.सं. 1915) को डूंगरपुर जिले के बांसिया ग्राम में श्री बेछड़दास की पत्नी श्रीमति गमली देवी के गर्भ से हुआ।

गुरू ने 1894 ई. में दशनामी अखाड़ा बूंदी के गुरू राजगिरी से दीक्षा प्राप्त की, एवं जाम्बुखण्ड (गुजरात एवं राजस्थान का सीमावर्ती क्षेत्र) को अपनी कर्मस्थली बनाया। और भगत लसोड़िया पंथ चलाया, इन्होंने अपने भक्तों को आशीर्वाद स्वरूप 'जैगुरू' का उद्घोष दिया। इनके जीवन का लक्ष्य देश की आजादी और व्यसन मुक्त, मेहनतकश समाज की स्थापना थी।

गोविन्द गुरू धूणियों की स्थापना के माध्यम से अपने विचारों का प्रचार एवं प्रसार कर रहे थे। तात्कालीन देशी रियासतों के शासक एवं अंग्रेजी हुकूमत इसे अपने विरूद्ध बगावत के रूप में देखती थी। गुरू ने मानगढ़ पहाड़ी पर अपनी धूणी स्थापित की। मार्गशीर्ष पूर्णिमा (17 नवम्बर 1913 ई.) को गुरूजी के हजारों अनुयायी वहाँ इकट्टा होने की तैयारी करने लगे। जब इसकी भनक अंग्रेजी हुकुमत एवं ठिकानेदारों को पड़ी तो वे आशंकित हो उठे, और इस सुधारवादी कार्यक्रम को कुचलने हेतु तोपों, बन्दुकों व हथियारों से लैंस सेना ने मानगढ़ पहाड़ी को चारों ओर से घेर लिया। और गोलियों की ताबड़तोड़ बौछार कर दी, देखते ही देखते लगभग 1500 आदिवासी इस भीषण नरसंहार के शिकार होकर मौत के घाट उतार दिये गए। जिनमें कई महिलाऐं भी शामिल थी।

यह नरसंहार वर्ष 1913 ई. में जलियाँ वाला बाग की घटना (1919 ई.) से 6 वर्ष पूर्व हो चुका था। दुर्गम क्षेत्र, सूचना तंत्र का अभाव, शहादत पाने वाले अधिकांश लोग गरीब, पिछड़े और भील थे तथा देशी रियासतों के उदासीन रवैये के कारण मानगढ़धाम का यह बलिदान स्थल दुर्भाग्यवश इतिहास में उपेक्षित होकर वह स्थान नहीं पा सका जिसका यह हकदार था।[8]

स्वतंत्रता के पश्चात पंचवर्षीय योजनाओं में आदिवासी विकास कार्यक्रम – प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951–1956 ई.) के तहत आदिवासियों के उत्थान की दिशा में कुछ खास नहीं किया गया। चूंकि अनुसूचित जनजातियों के लिए जो कल्याणकारी योजनाएँ बनाई गई थी वे योजना में शामिल नहीं की गई। योजना में कुल योजना व्यय 1960 करोड रू. हुआ था जिसका मात्र 1 प्रतिशत अर्थात् 19.33 करोड़ रू. ही आदिवासी विकास कार्यक्रमों पर खर्च किया गया। द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956–1961 ई.) में बहुउद्देशीय विकास परियोजनाओं की शुरूआत सामुदायिक विकास परियोजनाओं के साथ हुई। इस योजना के तहत राजस्थान में पहला प्रखण्ड बांसवाड़ा जिले के कुशलगढ़ में (बहुउदेशीय जनजाति प्रखण्ड) नाम से खुला। इस योजना में 5.84 करोड़ रूपये आदिवासी विकास कार्यक्रमों पर खर्च किऐ गए।

तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961–1966 ई.) के अन्तर्गत भारत भर में 450 जनजाति विकास प्रखण्ड खोले गए। जिसमें बांसवाड़ा एवं डूंगरपुर जिलों को शामिल किया गया। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969–1974 ई.) में राजस्थान सरकार ने 38 जनजातीय विकास प्रखण्ड चलाने का प्रस्ताव रखा। जनजाति उपयोजना क्षेत्र में इस योजना के दौरान 10.64 करोड़ रूपये की धनराशि व्यय की गई। पंचम पंचवर्षीय योजना (1974–79 ई.) इस योजना में जनजाति विकास योजना का विकास किया गया। आदिवासी बाहुल्य जिलों–बांसवाड़ा, डूंगरपुर, चित्तौड़गढ़ उदयपुर, और सिरोही जिलों की 23 पंचायत समितियों को मिलाकर 1974 ई. में 'जनजाति उपयोजना क्षेत्र' घोषित किया गया। षष्ठम् पंचवर्षीय योजना (1980–85 ई.) के तहत राज्य के जनजाति उपयोजना क्षेत्र के विकास पर 287.37 करोड़ रूपये व्यय किऐ गए। इस योजना में राजस्थान व गुजरात सरकार के सहयोग से बांसवाड़ा जिले में माही नदी पर माही बजाज सागर बहुउद्देशीय परियोजना का निर्माण कार्य चलाया गया।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985–90 ई.) के तहत आदिवासियों के विकास के लिए निम्नलिखित उद्देश्य रखे – कृषि व उससे सम्बद्ध गतिविधियों का विकास, व्यावसायोन्मुख शिक्षा को विकास, बंधुआ मजदूरी एवं ऋण बंधन व शराब बिक्री में शोषण को समाप्त करना।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992–97 ई.) के तहत निम्नलिखित उद्देश्य रखे गऐ – जनजाति उपयोजना क्षेत्र व गैर जनजाति उपयोजना क्षेत्र के मध्य विकास के अन्तराल को कम करना, आदिवासी महिलाओं में साक्षरता दर बढ़ाना, इत्यादि। इस योजना के दौरान शिक्षा पर अधिक जोर दिया गया। नवीं पंचवर्षीय योजना (1997–2002 ई.) के दौरान जनजाति विकास विभाग द्वारा रोजगार के अवसर पैदा करने व आदिवासियों में गरीबी उन्मूलन के लिए कृषि को प्राथमिकता दी गई। महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा चछठएत्रअ) भारत में लागू एक रोजगार गारंटी योजना है, जिसे 25 अगस्त 2005 को विधान द्वारा अधिनियमित किया गया। इस योजना के माध्यम से आदिवासियों की पलायन की प्रवृत्ति पर लगाम लगी, वहीं अब रोजगार भी समीप, गाँव में ही उपलब्ध हो पाने के कारण आदिवासियों के जीवन स्तर में आंशिक सुधार को देखा जा सकता है।

इसके अतिरिक्त वर्तमान में चलाऐ जा रहे जनजातीय विकास कार्यक्रम में व्यक्तिगत एवं सामुदायिक लाभ योजनाएँ निम्नलिखित हैं – (1) कृषक मेला योजना (2) सामुदायिक जलोत्थान सिंचाई योजना (3) डीजल पम्प सेट का वितरण (4) जनजाति बस्ती विद्युतीकरण (5) छात्रगृह किराया योजना (6) प्रतिभावान छात्रवृत्ति योजना (7) अनुप्रति योजना (8) पशुधन सहायक कार्यक्रम इत्यादि।[9]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सुश्री मालिनी काले, (2007) 'वाग्वर वसुधा की भक्ति धारा,' हिमांशु पब्लिकेशन उदयपुर, पृ. 3–4
2. एडमिनिस्ट्रेशन, रिपोर्ट ऑफ जोधपुर स्टेट, 1884–85, पृ. 60
3. फहरिस्त, लाल–बाग फाईल 31/ए सरक्यूलर रजिस्टर स्टेट महकमा–खास, भाग प्रथम, पृष्ठ – 250
4. मीणा, जगदीश चंद्र, (2003) 'भील जनजाति का सांस्कृतिक एवं आर्थिक जीवन,' हिमांशु पब्लिकेशन उदयपुर, पृ. 81
5. डूंगरपुर अभिलेख क्र. सं. 944 बस्ता नं. 146–1915 रा. रा. अ. बीकानेर
6. नवजीवन, 25 दिसंबर 1944 ई.
7. जोशी, श्रीमति करूणा; (2008) 'जनजातीय क्षेत्र में स्वतंत्रता आन्दोलन', राजस्थानी ग्रन्थाकार, जोधपुर, पृ. 87
8. मानगढ़ विकास फाउण्डेशन, आनंदपुरी, जिला बांसवाड़ा (राज.)
9. डॉ. सेनी, एस. के., (2012), 'राजस्थान के आदिवासी,' यूनिक ट्रेडर्स जयपुर, पृ. 34–48

****

कल्चुरी कालीन विंध्य-प्रदेश के दर्शनीय स्थल

सुभाष कुमार तिवारी *

प्रस्तावना – सुरासुरवंदित, यति मुति चर्चित, भक्त बृन्द पूजति, दिव्य ज्ञान आलोकित एवं पुष्पवारि प्रक्षालित यह विंध्य प्रदेश एक महान तीर्थ है। विंध्य धारित्री ने पुरातन काल से अपने गौरव को अक्षुण्य रखा है। रत्न गर्भा विंध्य धरा श्री और सरस्वती की आराध्य भूमि है। यहां का धार्मिक और सांस्कृतिक इतिहास विशेष महत्वपूर्ण हैं।वर्तमान विंध्य प्रदेश बघेलखण्ड तथा बुन्देलखण्ड की कतिपय रियासतों के एकीकरण का रूप है। यह सारा प्रदेश देवालयों स्तूपों मठो सर-सरिताओं एवं तीर्थ स्थलों से परिपूर्ण है।

अमरकंटक –यह एक अखिल भारतीय प्रसिद्ध हिन्दू तीर्थ है। रीवा में 160 मील और पेड्रा रोड से 16 मील दूर यह तपस्या भूमि प्राकृतिक सुषमा की अनुपम स्थली है। यहां के मंदिरों की स्थापत्य कला अति प्राचीन और ऐतिहासिक है। प्रति वर्ष भारत के विभिन्न स्थानों से हजारों की संख्या में शिव भक्त यहां शिवरात्रि को आकर अपनी भक्ति को पावनतर करते हैं। नर्मदा और सोन का उद्गम स्थल यह (आम्रकूट, अमरकंटक) तीर्थ पुराण प्रसिद्ध एवं साहित्यिक गरिमा से परिपूर्ण है। यहां के दर्शनीय देवालय, प्रपात और स्थान ये हैं- 1. कर्गेश्वर, 2. पातालेश्वर, 3. सिद्धेश्वर, 4. ओंकारेश्वर, 5. वंगेश्वर, 6. केशव नारायण, 7. माधव नारायण, 8. नर्मदा कुंड, 9. माई की बगिया, 10. कबीर चौरा, 11. कपिल धारा, 12. दुग्ध धारा, 13. पंचधारा, 14. सोनमुड़ा।

बांधवगढ़ – प्राचीन भारतीय इतिहास में इसका उल्लेखनीय स्थान है। रीवा-उमरिया सड़क पर यह रीवा से 74 मील दूर स्थित है। जाने का मार्ग कठिन है। इस गढ़ का महत्व पुराणों में विशेष रूप से वर्णित है। किसी समय यह शैवों का महान तीर्थ था। शेषावतार लक्ष्मण और उर्मिला की युगल मूर्ति यहां दर्शनीय है। यहां की शेषशायी भगवान विष्णु की विशाल मूर्ति भक्तों के लिए एक आकर्षण है।

अंधा-अंधी पर्वत – रीवा से 15 मील दूर दो सुन्दर पर्वत हैं। यहां एक सुन्दर सरोवर पहाडों को शीतल करता रहता है। कहा जाता है कि महाराज दशरथ के शब्दवेधी वाण से यहीं पर श्रवणकुमार की मृत्यु हुई थी। उसी घटना का स्मरण करने वाला श्रवण डोंगरी नामक एक तीर्थ स्थान सतना जिले में भी बताया जाता है। सोन नदी पर एक दशरथ घाट है। यह भी इसी पौराणिक कथा की ओर संकेत करता है।

गृद्धकूट – ब्यौहारी (तहसील ब्यौहारी, जिला शहडोल) के समीप यह तीर्थ क्षेत्र जटायु की राम भक्ति को आज भी उच्च स्वर में बता रहा है। मकर संक्रांति को यहां मेला भरता है। एक चट्टान पर अंकित रावण युद्ध का युद्ध चित्र भारतीय संस्कृति का उत्तम नमूना है। गिधैला नामक एक स्थान अमरपाटन तहसील में भी बताया जाता है।

मारकंडेय आश्रम – सोन नदी के किनारे (ढुअरा ग्राम, जिला शहडोल) पर स्थित यह तपस्या भूमि महर्षि मारकंडेय की साधना स्थलीय है। यहां पर भगवान शंकर का देवालय भी एक आकर्षण है। मकर संक्रांति को यहां मेला लगता है।

वाणा गंगा – यह (सोहागपुर, जिला शहडोल) स्थल महाभारत की कथा से सम्बन्धित है। कहा जाता है कि गुप्तवास के समय कुन्ती की प्यास बुझाने के लिए अर्जुन ने बाण चलाकर पाताल गंगा की धारा को इसी स्थान पर प्रकट किया था। शिवरात्रि को यहां मेला लगता है। इस गंगा के पावन जल का आचमन करके भक्त लोग आत्मिक आनन्द का अनुभव करते हैं। सोहागपुर का विराट मंदिर दर्शनीय है। मंदिर के उच्च शिखरों पर अंकित मूर्तियां शिल्प कला की अलौकिकता को प्रमाणित करती है।

चित्रकूट – भगवान् रामचन्द्र के पावन चरण रज से पवित्र भारम प्रसिद्ध यह स्थान सचमुच विंध्य प्रदेश की महती गरिमा का चिह्न है। मानिकपुर-झांसी रेलवे पर स्थित चित्रकूट स्टेशन से 8 मील एवं सतना से 160 मील दूर मन्दाकिनी नदी के तट पर अवस्थित यह तीर्थ महात्मा तुलसीदास की राम भक्ति का स्मरण कराता रहता है। भरत कूप तथा कर्वी रेलवे स्टेशनों से भी चित्रकूट जाया जा सकता है।

शारदा देवी का मंदिर – मैहर (जिला सतना) शहर के समीप कैमूर रेंज की पहाड़ी पर भगवती शारदा का यह प्राचीन एवं चमत्कारपूर्ण मंदिर देवी-उपासकों के लिए महत्वपूर्ण है। यह देवालय चन्देल-युगीन है। 360 सीढ़ियों की चढ़ाई भक्त-हृदय को उल्लसित कर देती है। पुरातत्ववेत्ताओं की दृष्टि में यह देवी-तीर्थ खजुराहो के कतिपय प्राचीनतम मंदिरों से भी पुरातन है। रामनवमी के अवसर पर यहां विशाल मेला लगता है।

बालाजी –भगवान सूर्य देव का यह (उन्नाव, जिला दतिया) प्रख्यात मंदिर हिन्दूओं का पावन तीर्थ है। दतिया से 11 मील पूर्व उन्नाव नाम एक ग्राम है। इस गांव की विभूति यही मंदिर है। झांसी से यह पुण्डस्थल 7 मील की दूरी पर स्थित है। यहां की अर्चना-वन्दना कुछ रोग से मुक्ति दिलाती है। प्रत्येक रविवार को यहां भक्तों की भीड़ लगती है।

सेंवड़ा – दतिया से 40 मील दूर यह एक प्रसिद्ध हिन्दू-तीर्थ है। सेंवड़ा के प्रपात को आज-कल लोग सनकुआ के नाम से पुकारने लगे है, जो सन्त कूप से ही बिगड़कर बन गया है। आदिकाल में प्रजापति ब्रह्मा के पुत्र सनत्कुमारदि को जब अनेक स्थानों पर तपस्या करने पर भी शान्ति न मिली, तब उन्हें उस स्थल पर तपस्या करने का उपदेश दिया गया। आज भी सनकुआ क्षेत्र में स्नान करने के लिए सहस्त्रों व्यक्ति पुण्ड पर्वो के अवसर पर यहां आते है।

भीम कुंड – बिजावर (जिला छतरपुर) से बीस मील दूर दक्षिण दिशा में यह निर्मल जल कुंड धार्मिकता का स्त्रोत है। कहा जाता है कि यह कुण्ड भीम की भारी गदा से बना था। मकर संक्रान्ति को यहां मेला लगता है।

जटाशंकर – भगवान् शिवशंकर की पावन स्मृति का चिन्ह यह स्थल बिजावर के समीप है। यहां के स्वच्छ जल से परिपूर्ण कुण्ड दशनीय है। यह

* शोधार्थी (इतिहास) श्री गुरू सदन वार्ड नं. 13 घरौला, शहडोल (म.प्र.) भारत

सलिल चर्मरोग के लिए चमत्कारपूर्ण औषधि है। छतरपुर जिले के प्रसिद्ध तीर्थो में जटाशंकर का विशिष्ट स्थान है। मकर संक्रान्ति, ग्रहण और अमावस्या को यहां मेला लगता है।

प्राणनाथ मंदिर – पन्ना–नरेश महाराजा छत्रसाल के धर्मगुरू महात्मा प्राणनाथ का यह मंदिर अपनी सुन्दरता के लिए प्रसिद्ध है। प्राणनामी धर्म के माननेवालों के लिए यह देवालय तीर्थ–तुल्य है। यह पन्ना नगर के मध्य में स्थित है और पन्ना नगर की प्रसिद्धि इस मंदिर से भी है।

पाण्डव प्रपात – पन्ना–छतरपुर सड़क पर यह सुन्दर जल–प्रपात दर्शनीय है। यहा पर कुछ गुफाएँ भी है, जो 'पाण्डव गुफाएँ' के नाम से प्रसिद्ध है। यह पन्ना का शिमला कहा जाता है। कहा जाता है कि पाण्डवों ने इसी स्थल पर तपस्या की थी और अपने गुप्त बास के दिन काटे थे। मकर संक्रान्ति को यहाँ मेला लगता है।

वृहस्पति कुंड – पन्ना नगर से करीब पच्चीस मील की दूरी पर स्थित यह कुंड पाण्डवों की स्मृति को जीवित करता रहता है। सोमवती अमावस्या को यहां मेला लगता है। इस दिन इस कुंड में स्नान करना धार्मिक महत्व रखता है। मनुष्यों का विश्वास है कि इस कुंड का जल बुद्धिवर्धक सोमवती अमावस्या को पाण्डवों ने इस कुंड में स्नान करके स्वयं को पुण्डवान् माना था।

गुर्गी– रीवा गुढ़ मार्ग पर रीवा से 10 मील दूरी पर स्थित यह स्थान एक समय धार्मिक भावनाओं की साकार मूर्ति था। यहां पर प्राप्त मंदिरों एवं मठों के भग्नावशेष वास्तु कला के सुन्दर उदाहरण है। यहां कुछ बौद्धस्तूप भी प्राप्त हुए है, जिनसे अनुमान किया जाता है कि प्राचीन काल में यह स्थान बौद्ध–तीर्थ था।

भूमरा –यह नागौद से 10 मील दूर दक्षिण की तरफ स्थित है। यहां के भारशिव–कालीन प्राचीन स्मारक दर्शनीय है।

भरहुत – भरहुत ग्राम सतना के समीप उँचहेरा से 6 मील उत्तर–पूर्व में स्थित है और वहां सतना तथा उँचहेरा के बीच स्थित लगरगवां स्टेशन से पहुँचा जा सकता है। यहां शुंगकालीन बौद्ध–स्तूप है, जिसकी रचना सॉची के विशाल स्तूप जैसी ही थी। यह एक बौद्ध–तीर्थ है।

सोनागिरि – यह एक प्रसिद्ध जैन तीर्थ है। यह दतिया (बुन्देलखंड) से 7 मील और सोनागिरि (ग्वालियर–झासी रेलवे पर) स्टेशन से 2 मील है। इस श्रवणगिरि या स्वर्णगिरि (सोनागढ़) पर 77 जैन मंदिर हैं। भगवान चन्द्रप्रभु का विशाल मंदिर दर्शनार्थियों से भरा रहता है। इस स्थान से करोड़ो मुनियों ने मुक्ति लाभ किया है। नारियल कुंड वजिनी शिला यहां दर्शनीय है। यहां चैत बदी 1 से 5 तक मेला भरता है।

द्रोणागिरि (द्रोणांचल) – छतरपुर जिला में यह एक जैन तीर्थ है। सेंधपा नामक ग्राम के समीपस्थ इस भीड़ लगी रहती है। पर्वत पर 24 जिनालय हैं। यह गिरि मुनिवर गुरु दत्त का मुक्ति स्थान है।

नैना गिरि – जिला छतरपुर में यह एक जैन तीर्थ है। यह मुनिराज श्री वरदत्त का मोक्ष–प्राप्ति स्थल हैं। पर्वत पर 25 सुन्दर जैन मंदिर हैं। कार्तिक सुदी 8 से 15 तक मेला भरता है। सेन्टल रेलवे के प्रसिद्ध स्टेशन सागर से यह पावन तीर्थ 30 मील दूर है।

पपौरा– टीकमगढ़ से कुछ ही दूर स्थित यह पवित्र क्षेत्र जैनियों का तीर्थ है। यहां 90 जिनालय है। यहां प्रति वर्ष कार्तिक सुदी 14 को मेला भरता है। यहां के जैन–मंदिर स्थापत्य स्थापत्य कला के आधार पर प्राचीन है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रीवा गजेटियर, पृ. 25,26
2. डॉ. रामकुमार सिंह, कलचुरियों का इतिहास, पृ. 6
3. गुगौरिया बी. एल., बघेलखण्ड का राजनैतिक एवं सांस्कृति इतिहास, पृ. 57, 58
4. एन. एस. बोस, हिस्ट्री ऑफ दि चंदेलान, पृ. 85,86
5. आल्हाघाट रीवा जिले में रीवा नगर के उत्तर में स्थित है।

****

A Sociological Analysis Of Widows : A Step For Empowerment

Dr. Puspanjali Padhal *

Abstract - This paper highlights on the injustice done to the widows in the Indian society -focuses on the steps taken by the Government for the amelioration of this vulnerable section - suggests to empower the widows in several ways and to make them financially independent – concludes that a positive mindset is required from all corners so that a widow can lead her life with a proper sense of human dignity.

Introduction - We are here in this world of reality as the beings of this great planet to love each other, to work for each other and to share our feelings in and amongst us. The biggest thing required from us all is to extend help and co-operation to those who really need it, who live in misery and intense suffering.

And now my heart aches when I think of the situation, the way of living led by the widows of our country. A widow is looked down upon as a poor, lonely and ostracized human being having no entity of her own. We are really doing injustice to this particular section of our society who lives a life of oppression and suppression. No positive and significant steps have been taken to support and empower the widows. A social stigma is attached to their life forever for no fault of theirs. They are treated as if they have committed some crime. Only a deep sense of hatred is there for these innocent women. They cry, they try. They hate such kind of social behavior. But no way out is there for them to come out of the dungeon.

Society as a whole does not like the widows. Widowhood means a lowering of the status of a woman within the matrimonial home even now and also with several indignities. They are despised and ill treated. They are subject to rape, murder, prostitution, forced marriage, property theft, social isolation and eviction. Thus physical and mental abuse have become the pattern of their life. Attending school is a dream for their children. They are left to the care of the road. Some of them work in factories and at times beg in the streets. Finally, they end up in committing crimes in the society. It is social loss. The society loses youth power and power of women which is there in widow mothers.

Better late than never. We should realize that the widows form an important part of productive social energy which not only our country but the whole world is losing. In general, women form half of the population of the world. But they are neglected, ignored and marginalized. In our country whatever position a woman holds, howsoever highly qualified she is, if becomes a widow, her life is doomed and her suffering is intensified by the social taboo in the name of custom , tradition and culture.

No doubt India has made a remarkable progress with the onset of globalization, yet widows are hated. Whatever a widow's age is, remarriage is a dream for her. This happens even now. It is because the sociologists and the social scientists making research on women's studies have not thought yet proper to study the life of widows so vigorously as urgently and actually needed.

Even now after marriage a woman's life is dominated by her husband and her in-laws. She does not get time to think of her own parents. Helping her parents in any form is unthinkable for her. But when her husband dies, she is declared a widow and she is left with her children to the care of the road. Even if she lives in the house, she is despised and not allowed to attend sacred functions like weddings, even of her own children.

It is observed that few humiliating words like "Those shadowy women in white" are used for the women after the death of their husbands. The abject humiliation crosses the limit when thousands of destitute widows are found dumped in the temple town of Vrindavan and the temple city of Varanasi. There they live their lives no doubt but with sheer difficulty sans freedom. They have to beg or sing bhajans for a single meal.

All over India widows suffer in one way or the other. It is just like a disease that reigns supreme in the Indian society, not limited to any particular part, corner or state of our country. It has become a matter of concern for all. It is because this social evil could not be rooted out even after so many years of our independence. Even now one can find this prevailing in eastern, western, northern and southern India.

Historically, the then province of West Bengal triggered the Indian Renaissance in the 19th century by taking remarkable steps for the upliftment of women in general.

* **Retd. Principal, Niranjan Govt. Women's College, Aska, Dist. Ganjam (Odisha) INDIA**

Raja Ram Mohan Roy abolished 'Sati' in India. As a result, a number of child widows emerged in the so called upper caste of the Bengali Society. Ishwarchandra Vidyasagar advocated widow remarriage. Brahmo Samaj accepted it. But Sanatan Dharmi Hindus rejected it outright. Even now, widow remarriage is not accepted in Bengal. Therefore, it is a tragic irony that a large number of widows go and reside in Vrindavan, the pilgrim center made by Chaitanya Mahaprabhu, a Bhakti Saint from Bengal. Widows live in Vrindavan in very poor living conditions. If one goes there and talks with them personally, the description of their day to day life is really heart-rending.

Widows in eastern and northern India have to abstain from non-vagetarian food, ironically the staple food of these regions. In some families widows take one meal a day. They have to sacrifice their hair, lest they look attractive and beautiful. They give up wearing nice clothes and jewellery. Coarse white saris they have to accept for the rest of their lives. Their movement is restricted, not given chance to socialise, not even to the weddings and celebrations of their own people. The society has taken it for granted that they are the symbol of ill-luck. Even young widows are compelled to accept this informal, unwritten law of the society in the name of tradition. It is indirectly a restriction on their sexuality to avoid their remarriage, which in turn helps in the division of family property without further problem.

The widows, wherever they live in such inhuman conditions in a pitiable way, belong to poor as well as rich families. In order to deprive them of their share of property, rich widows, irrespective of their age are often left in the ashrams, though unwillingly, by their own people.

No doubt, a remarkable improvement is seen so far as the condition of widows in Urban India is concerned. Their plight as seen in the film 'Water' and T.V. serial 'Yugant' made from Sunil Gangopadhyaya's novel Shei Shomay, (Those Times) is improved a lot after India achieved Independence.

But the sad life of widows even now in rural India is unthinkable. They are neglected, ill-treated and so prefer to take the road to pilgrim places, which, they do not know, will give them a tragic life.

According to Aarti Dhar, dignity is denied to the widows in so called holy places even after death. The Hindu (January 8, 2012) says cremation does not take place properly. Though it raised criticism, yet there is no proper remedy suggested. Inhuman practices like 'Sati' or 'widow burning' were abolished and in 1856 the British legalised widow remarriage due to the noble efforts of our social reformers. A century and a half has passed away since then. After we became free from the British yoke, economic liberalization and globalization have transformed our basic cultural system. Yet widows still lead a miserable and desolate life.

The condition of widows is seen in its worst form in many states of our country like Uttar Pradesh, West Bengal, Tamil Nadu, Maharashtra, Andhra Pradesh, Kerala, Karnataka and Himachal Pradesh. In Assam and in Odisha, the number of widows is also more. Tamil Nadu has the highest percentage of widows, divorced and separated individuals as per the survey made in 2010. Delhi has the lowest percentage fortunately.

In many parts of Southern India including Odisha, even wearing a blouse was a 'no' to the widows and they were destined to remain with shaven heads. Now I marked, the picture is remarkably improving.

I belong to the state of Odisha. Humbly I want to put forth my personal experience. My in-laws hail from a village. They stayed with me after I became their eldest daughter-in-law. No doubt my mother-in-law, a mother of seven children, was very dominating in nature. She lived for long up to the age of ninety one, twenty one years after she became a widow at the age of seventy. It is observed that she had put no restriction on herself and used to attend all social functions. Even on the occasion of marriage of my daughters and the daughters of my sisters-in-law, she used to sit very close to guide all of us. Really, we were happy as hers was a welcome stand for raising the status of widows in our society.

Thus it is observed that there is a slow but remarkable change in the attitude of our society towards the widows.

Keeping in view the precarious plight of the widows in India's tradition bound rural areas, the government started to form and implement the laws strongly to make them free from marginalisation and destitution.

Supreme Court of India appointed a seven member panel to collect data on the socio-economic condition of widows in U.P. taking note of their 'pitiable condition'. SC says that it is the need for "immediate steps for their rehabilitation and better living."

A ray of hope is created in the life of widows when UN passed a resolution in 2010 to observe 23rd June as International Widows Day. The precarious plight of the widows is felt by the whole world. It is pointed out in a global study that this social problem is acute in Asia and Africa.

The Loomba Foundation has come forward to care for widows at the global level. It is a UN Accredited charity. It aims to promote the all-round development of the widows and their children who are neglected and deserted by their kith and kin and by the society at large. It focuses on India as it has the largest number of widows, estimated to be more than forty two millions.

No doubt, Govt. of India has already taken some steps for the amelioration of widows in our society. Widow Welfare Scheme – National Social Assistance Programme or NSAP is created by our Govt. It gives a monthly pension of Rs. 300 which is not enough for them. Rupees twenty thousand is given at the time of marriage of widow's daughter. Scholarship is given to widows' children.

'Landesa' works as a partner in the states and also works with the central government and its organizations. It helps poor, rural men and women for their rights to lands and aims at improving their life in the future. It is a commendable step taken by Landesa Centre for Women's

Land Rights and their rights for inheritance of lands. A widow is vulnerable to lose her land after the death of her husband or the death of a male relative with whom she was related closely. A special programme is carried out by Landesa which designed not only a Woman's Land Rights but also ensures Land Rights of a single woman. Single, landless rural women, such as widows and abandoned women are identified. Then they are helped to receive land, training, job cards and other government services.

The states like Andhra Pradesh, Karnataka, Tamil Nadu, Kerala and Maharashtra record more divorced and widowed women than men. These five states were directed to maintain social justice so far as Property Rights of women is concerned. The law commission wants that equal treatment should be there for both man and woman in the economic and the social sphere as well. The commission feels that though effort is made in this regard, yet further reform of the Mitakshara Law of Coparcenary is needed to provide equal distribution of property both to men and women. After the death of a father, his son, his grandson and his great grandson were only eligible to be the heir for the property. Here changes are suggested in the Hindu Succession Act, 1956 so that women get an equal share in the ancestral property. Bill is amended in 2000 and 2005 focusing on the Rights conferred upon Women.

But this is not enough. Nobody is there to check whether these helps from the Govt. reach them. Corruption has crept into each and every field. So we have to take initiatives to empower them. We have to spot out such helpless widows with children in our area. We have to move to rural India where widows live a life of torture and darkness.

Widows must be empowered in different ways. For this purpose campaigns must be organized. They should be provided knowledge about their legal rights and social rights. Legal aid must be given to them freely to make them aware of their right to property and maintenance. All kinds of help should be extended to the widows suffering from HIV +ve who live a life of misery after husband's death. Steps should be taken to teach the uneducated about some basic requirements of learning, sending their children to schools, making them learn some skill according to their ability, which will enable them to earn something.

In this way we can change their attitude towards life, make them learn some skill to be financially independent, make them understand what is superstition and social stigma, what is law and human right and what is self-reliance. Leadership quality will be created in their hearts so that fear will go away from their lives forever.

NGOs, Govt. machinery, media and we all should extend a helping hand for the rehabilitation of this section of our society. As a result, they will not feel abandoned anymore. In course of time they and their children will contribute to the healthy growth of the society. In turn, society will start recognizing them and respecting them.

All these can be possible. When we all will free ourselves from the tradition-bound superstitious mindset, automatically it will change our hearts, minds and attitudes towards the widows in a positive way. Thus we can make them empowered so that even if a woman becomes a widow, she can live her life with a proper sense of human dignity.

References :-

1. Haber, W and Cohen, W.H. "Social Security Programmes: Problems and Policies."
2. Kitchlu, T.N. "Widows in India", New Delhi: Asish Publishing House, 1993.
3. Lopata, Helena. "Current Widowhood: Myths and Realities." Newbury Park, CA: Sage, 1996.
4. Ahuja, Mukesh. "Widows:Role Adjustment and Violence." New Delhi: Wishwa Prakashan, 1996.
5. Dharmalingam, B. and Murugan, K.R. (2001): Elderly Widows and their Place in the Family. *Social Welfare*, 48 (7) : 7-11.
6. Jamuna, D., Ramamurti, P.V. and Sudha Rani, N.N. "Psycho - social Aspects of Elderly Widows." 1996.
7. Kubendran, V. (2005): Widows Need Special Protective Measures. *Social Welfare*, 52 (7): 10-15.
8. Nayar, P.K. B. (Ed.). "Widowhood in India." New Delhi: The Women Press, 2006

****

Maternity Benefits Act : A Step Towards Women Empowerment

Girish Makwana * Dr. Ayushi Sule (PT) ** Dr. Shraddha Malviya ***

Abstract - To nurture the tender relation of working mother with her children, the government has provided a new amendment to the Maternity Benefit Act, 1961. This will help in social, economical, medical, emotional and all other aspects of development of women and country as whole.

Introduction - Motherhood is a best part of a women's life. It's always said that being a mother completes a women but in spite of the blessing, many women faces lots of problems in bearing and rearing of children. Today, women are proving themselves in every field of work but during the critical phase of pregnancy and post natal period they struggle in balancing between the both of her roles. To help her, the Government of India has Maternity Benefit Act for working women and recently some amendments have been passed for the betterment of the act.

The Rajya Sabha passed the much awaited amendment to Maternity Benefit Act, 1961. The amendments includes increasing maternity leave from 12 weeks to 26 weeks for two surviving children and 12 weeks for more than two children, 12 weeks maternity leave to a 'Commissioning mother' who use surrogates to bear a child and 'Adopting mother' who adopts a baby below the age of three months and mandatory provision of crèche in respect of establishment having 50 or more employees and introducing an enabling provision of 'work from home' for nursing mothers.

Union Cabinet chaired by Prime Minister Narendra Modi gave its ex postfacto approval to the bill. The act is applicable to all establishments employing 10 or more persons. The Cabinet had stated that the amendments will help approximately 1.8 million women workforce in organized sector.

The bill now go to the Lok Sabha, where the government enjoys majority, and after its passage in the lower house, the changes will be notified by the labor ministry.

Maternity Benefit Act, 1961 - The Maternity Benefit Act aims to regulate the employment of women employees in certain establishments for certain periods before and after child birth and provides for maternity and certain other benefits.

The act extends to the whole of India and is applicable to:

1. Every factory, mine, or plantation (including those belongings to Government).
2. An establishment engaged in the exhibition of equestrian, acrobatic and other performances, irrespective of the number of employees.
3. To every shop or establishment wherein 10 or more persons are employed on any day of the preceding 12 months.

The Act does not apply to any such factory/other establishment to which the provisions of the 'Employee's State Insurance Act' are applicable for the time being. But, where the factory/establishment is governed under the ESI Act , and the women employee is not qualified to claim maternity benefit under section 50 of that act, because her wages exceeded Rs. 3,000 per month (or the amount so specified u/s 2(9) of the ESI Act), or for any other reason, then such women employee is entitled to claim maternity benefit under this Act till she become qualified to claim maternity benefit under the ESI Act.

What Is Maternity Benefit?

Every woman shall be entitled to, and her employer shall be liable for, the payment of maternity benefit, which is the amount payable to her at the rate of the average daily wage for the period of her actual absence.

Period for Which Benefit Allowed - The maximum period for which any woman shall be entitled to maternity benefit shall be 12 weeks in all whether taken before or after childbirth. However she cannot take more than six weeks before her expected delivery.

Prior to the amendment of 1989, a woman employee could not avail of the six weeks' leave preceding the date of her delivery; she was entitled to only six weeks leave following the day of her delivery. However, by the above amendment, the position has changed. Now, in case a woman employee does not avail of six weeks' leave preceding the date of her delivery, she can avail of that leave following her delivery, provided the total leave period, i.e. preceding and following

*Research Scholar (Sociology) Shree Atal Bihari Vajpeyee Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA
** Student (MPT Ortho) MGM Medical College, Indore (M.P.) INDIA
*** Asst. Professor (Sociology) Shree Atal Bihari Vajpeyee Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

the day of her delivery does not exceed 12 weeks.

Who is Entitled to Maternity Benefit :

1. Every woman employee, whether employed directly or through a contractor, who has actually worked in the establishment for a period of at least 80 days during the 12 months immediately preceding the date of her expected delivery, is entitled to receive maternity benefit.
2. The qualifying period of 80 days shall not apply to a woman who has immigrated into the State of Assam and was pregnant at the time of immigration.
3. For calculating the number of days on which a woman has actually worked during the preceding 12 months, the days on which she has been laid off or was on holidays with wages shall also be counted.
4. There is neither a wage ceiling for coverage under the Act nor there is any restriction as regards the type of work a woman is engaged in.

Notice for Maternity Benefit - A woman employee entitled to maternity benefit may give a notice in writing (in the prescribed form) to her employer, stating as follows:

1. That her maternity benefit may be paid to her or to her nominee (to be specified in the notice);
2. That she will not work in any establishment during the period for which she receives maternity benefit; and
3. That she will be absent from work from such date (to be specified by her), which shall not be earlier than 6 weeks before the date of her expected delivery.

The notice may be given during the pregnancy or as soon as possible, after the delivery.

On receipt of the notice, the employer shall permit such woman to absent herself from work after the day of her delivery. The failure to give notice, however, does not disentitle the woman to the benefit of the Act.

Restriction on Employment of Pregnant Women :

1. No employer should knowingly employ a woman during the period of 6 weeks immediately following the day of her delivery or miscarriage or medical termination of pregnancy. Besides, no woman should work in any establishment during the said period of 6 weeks.
2. Further, the employer should not require a pregnant woman employee to do an arduous work involving long hours of standing or any work which is likely to interfere with her pregnancy or cause miscarriage or adversely affect her health, during the period of 1 month preceding the period of 6 weeks before the date of her expected delivery, and any period during the said period of 6 weeks for which she does not avail of the leave.

Discharge or Dismissal to be Void - When a pregnant woman absents herself from work in accordance with the provisions of this Act, it shall be unlawful for her employer to discharge or dismiss her during, or on account of, such absence, or give notice of discharge or dismissal in such a day that the notice will expire during such absence or to vary to her disadvantage any of the conditions of her services. Dismissal or discharge of a pregnant woman shall not disentitle her to the maternity benefit or medical bonus allowable under the Act except if it was on some other ground.

Other Benefits :

1. Leave For Miscarriage And Illness - In case of miscarriage or medical termination of pregnancy, a woman shall, on production of the prescribed proof, be entitled to leave with wages at the rate of maternity benefit, for a period of 6 weeks immediately following the day of her miscarriage or medical termination of pregnancy.

2. Leave For Tubectomy Operation - In case of tubectomy operation, a woman shall, on production of prescribed proof, be entitled to leave with wages at the rate of maternity benefit for a period of two weeks immediately following the day of operation.

3. Leave For Illness - Leave for a maximum period of one month with wages at the rate of maternity benefit are allowable in case of illness arising out of pregnancy, delivery, premature birth of child, miscarriage or medical termination of pregnancy or tubectomy operation.

4. Medical Bonus - Every woman entitled to maternity benefit shall also be allowed a medical bonus of Rs. 250, if no pre-natal confinement and post-natal care is provided for by the employer free of charge.

Duties of Employers - Important obligations of employers under the Act are:

1. To pay maternity benefit and/or medical bonus and allow maternity leave and nursing breaks to the woman employees, in accordance with the provisions of the Act.
2. Not to engage pregnant women in contravention of section 4 and not to dismiss or discharge a pregnant woman employee during the period of maternity leave.

Right of Employees - Important rights of an employee are:

1. To make a complaint to the Inspector and claim the amount of maternity benefit improperly with held by the employer.
2. To appeal against an order of the employer depriving her of the maternity benefit or medical bonus or dismissing or discharging her from service, to the competent authority, within 60 days of the service of such order.

Penalties for Contravention of Act by Employer :

1. For failure to pay maternity benefit as provided for under the Act, the penalty is imprisonment upto one year and fine up to Rs. 5000, the minimum being 3 months and Rs. 2000 respectively.
2. For dismissal or discharge of a woman as provided for under the Act, the penalty is imprisonment upto one year and fine upto Rs. 5000, the minimum being 3 months and Rs.2000 respectively.
3. Disentitle the woman to the benefit of the Act.

Advantages of the Act :

1. Social - This act is creating a social equilibrium between both males and females. It is promoting women empowerment as it is allowing her to work along with her personal and family responsibilities. The work of women as a house wife is underestimated and when she gets an

opportunity to work outside without any halt, it helps her to raise the level of confidence and lead her to live a self dependent life.

2. Economical - As the ratio of working women increases, this will result in an increase in work power and productivity. This leads to growth of an organization, region and the whole country as its capital is rising. This act encourages more women to work as they have various benefits to support them during their motherhood. This causes women to be economically stable and strong, causing her to take decisions for welfare of herself, family and society.

3. Emotional - The leave amendment will provide more time to mother with her child leading to more emotional bonding securing the future social relations in and among families. The more time parents spends with their children, more will be the trust and faith reducing further social fragmentation. Also when the child grows in an secured environment, it's development will be sound and secured and also when both the parents are working the child will have equal respect and place for both of them.

4. Medical - We all are aware of advantages of breast feeding. It provides immunity to the newborn and establishes a bond of trust between the mother and child. This act drives the women to work during her pregnancy also which will lead to active lifestyle which is good as more active the mother healthier will be the child. This will create a generation which will be immunologically strong and thus will add on to the capital and the amount spent over medical services will reduce facilitating the government both directly and indirectly.

The advantages are countless and cannot be framed in few points. The amendment has provided with lots of benefits securing future of the country. Many of developed countries are following maternity benefit act since a very long time. We lagged behind but at least now we have an act which is promoting women empowerment, social equilibrium, encouraging women to work and increasing the economy rate of the country thus contributing in the journey of the dream of being becoming developing to developed country.

References :-

1. www.economictimes.com
2. www.timesofindia.com
3. https://www.quora.com/Has-the-26-weeks-maternity-leave-in-India-come-into-effect
4. www.helplinelaw.com
5. www.indianexpress.com
6. Dainik Bhaskar , august 2016

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. I

जनजाति परिवारों के पलायन का सकारात्मक प्रभाव

डॉ. राजेन्द्र कुमार यादव *

प्रस्तावना - बदलते युग की बदलती आवश्यकताओं से समाज का कोई भी अंग अछूता नहीं रह गया है। विष्व के इस परिद्दष्य में बदलाव की बयार चल रही है। नये-नये आविष्कारों और टेक्नालॉजी के विकास ने जगत को परिवर्तनशील बना दिया है। इस परिवर्तन से कोई बच नहीं पा रहा है। केवल भौतिक जगत का विकास नहीं हो रहा है, अपितु सामाजिक जगत पर भी इसका प्रभाव देखने को मिल रहा है। इस विश्व व्यापी परिवर्तन से नये-नये मूल्यों की स्थापना हो रही है, नयी-नयी विचार धाराओं का जन्म हो रहा हैं। नये-नये आदर्श स्थापित हो रहे है। मिडिया जगत और संचार के अन्य साधन इन्हें तेजी से एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जा रहें है। इन सबको स्थापित करने के लिए भी अनेक शक्तियाँ कार्य कर रही है, जिसके लिए न केवल स्थापित मूल्यों का विस्थापन हो रहा है, नये-नये मूल्य इनकी जगह ले रहें है। सच तो यह है कि वर्तमान समय एक तरह से अराजकता का माहौल लग रहा है। जिससे हर कोई भ्रमित हो रहा है। क्या सच है, क्या उचित है, क्या अनुचित, क्या समाज और राष्ट्र के हित में है और क्या उपयोगी है, निर्णय करना कठिन लग रहा है। हमारी धारणायें, हमारे द्दष्टिकोण को विकसित करने में जो भी चल रहा है उसका प्रभाव हो रहा है। आये दिन टेलीविजन की बहसों, समाचार पत्रों, के लेखों समाचार पत्रों, पत्र पत्रिकाओं, और विशेषज्ञ के इनके गुण दोनों पर सार्थक बहस कर रहें है। पर लगता नहीं की अभी भी कोई सर्वमान्य हल निकल रहा है। हॉ यकिनन कुछ बातें स्पष्ट हो रही है। और इस स्पष्टता के कारण ऐसी बातें समाज में स्थापित भी हो रही है। समस्या यह है कि इसके कारण हजारों वर्षो से स्थापित हमारी संस्थाओं में भूचाल सा ला दिया है, संस्थायें विस्थापित हो रही है, संस्थाओं का स्वरूप बदल रहा है। बदलते स्वरूप के कारण उनकी भूमिका और कार्य भी बदल रहे है। हमारी संस्थाओं को नये-नये नियम बनाने पड़ रहे है, जिससे एक अस्थिरता का वातावरण निर्मित हो रहा है। इस अस्थिरता के कारण सब अस्त-व्यस्त नजर आ रहा है। संस्थाओं का पुनर्निर्माण निश्चित ही सार्थक परिणामों की ओर इशारा कर रही है। भारतीय समाज की मानसिकता भी बदल रही है। आज भी हम इससे समायोजन करने का प्रयास कर रहे है, इसके साथ समझौता करने का प्रयास कर रहे है। निश्चित है इन सब का प्रभाव बडे पैमाने पर हो रहा है, जिससे वर्तमान में तो अनेक सामाजिक समस्याओं का उदय होना प्रतीत हो रहा है। वर्तमान युग को आर्थिक युग या, भौतिकवादी युग कहा जा रहा है। जिसमें 'अर्थ' प्रभावशाली कारक के रूप में उभर रहा है। मानव इस 'अर्थ' को पाने के लिए दौड़ता चला जा रहा है। आज के युग की यह आवश्यकता बन गई है। भारतीय जनसंख्या की संरचना में बड़ी विविधता है जनसंख्या का आधार वृध्दि,जन्म दर, मृत्यु दर, तथा प्रवास इसके महत्वपूर्ण घटक है। प्रवास भी जनसंख्या के वितरण को प्रभावित कर रहा है। इसके कारण जनसंख्या घनत्व तथा ग्रामीण, शहरी जनसंख्या के अनुपात में निरंतर परिवर्तन हो रहें है। गाँवो से शहरों की और पिछले कई दशकों को प्रवास, पेशान्तरण या पलायान, निरन्तर जारी है। जो आधुनिकरण से प्रभावित होकर, शहरीकरण को जन्म दे रहा है। निरन्तर शहरों का आकर बढ़ रहा है। गरीब परिवारों,बेरोजगार युवकों के साथ-साथ जनजातीय परिवार भी शहरों की और पलायान कर रहें है।

उद्देश्य :

1. जनजातीय परिवारों के पलायन करने के कारणों को जानना।
2. पलायन के कारण हो रहे परिवर्तनों का अध्ययन करना।
3. पलायन के कारण हो रहे सकारात्मक प्रभावों का अध्ययन करना।
4. स्वयं पर, परिवार पर, आदिवासी समाज एवं अन्य समाजों पर होने वाले असर का अध्ययन।

उपकल्पना :

1. आदिवासी परिवारों के पलायन का मुख्य कारण आर्थिक है।
2. आदिवासी परिवारों के पलायन के कारणों को जानना।
3. पलायन के कारण जीवन यापन की दशाओं में सुधार आया है।
4. पलायन के कारण परिवारों का आर्थिक, सामाजिक विकास हुआ है।
5. पलायन के कारण,अंधविश्वासों,कुरीतियों, प्रथाओं, के प्रति सोच में बदलाव आया है।

शोध प्रविधि - अध्ययन के लिए अध्ययन समस्या से संबंधित विश्वसनीय आकडों, तथ्यों का होना आवश्यक है। इसके लिए सुविचार निदर्शक प्रणाली द्धारा ऐसे परिवारों का चयन किया गया। जो या तो पलायन न कर चुके है, या सेगांव तहसील (जिला खरगोन) से पूर्व में पलायन किया था। अध्ययन से संबंधित तथ्यों संग्रहण के लिए प्राथमिक तथा द्धितीयक तथ्यों का संग्रहण किया गया। जिसके लिए प्राथमिक तथ्यों के लिए साक्षात्कार अनुसूचित तथा द्धितीयक स्त्रोतों में पत्र-पत्रिका, पुस्तकों, लेखा तथा अन्य से संग्रहित तथ्यों से संग्रहण किया गया।

शोध क्षेत्र - शोध क्षेत्र खरगोन जिले में एक आदिवासी बाहूल्य तहसील है, जिसमें क्षेत्र का अधिकांश भाग पहाड़ी क्षेत्र है या पहाड़ो से भरा पड़ा है। यहां आधुनिक तथा अन्य उपयोगी संसाधनों का अभाव है। यहाँ के अधिकांश आदिवासी परिवार जो पलायन कर चुके है या निरन्तर कर रहे हैं। यद्यपि कुछ परिवार पलायन अस्थाई तौर पर करते है। कुछ अन्तराल के बाद वापस अपने-अपने निवास स्थानों पर भी लौट आते है। पलायान मुख्य रूप से बड़े शहरों की और ही हो रहा है। जिसमें मुख्यरूप से खरगोन, इन्दौर, बड़वानी,

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

बड़ौदा, खण्ड़वा तथा धार है :- अध्ययन में 50 परिवारों से तथ्य संग्रहित किये गये हैं।

तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण - पलायन के प्रभावों को जानने के लिए मुख्यरूप से उत्तरदाताओं से निम्न प्रश्न पूछे गये थे। जिनके आधार पर वर्गीकरण कर निम्न निष्कर्ष प्राप्त किये। प्राथमिक तथ्यों का संकलन साक्षात्कार अनुसूची अवलोकन के आधार पर किया गया है।

सारणी क्रमांक 01 - उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति को दर्शाया गया है

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	खेती - किसानी	06	12.0
2	मजदूरी	37	74.0
3	नौकरी	02	04.00
4	व्यवसाय या अन्य कार्य	05	10.00
5	**योग**	**50**	**100.00**

उपरोक्त सारणी के अनुसार अध्ययन में शामिल उत्तरदाताओं की कार्य करने को निम्नानुसार है। सबसे अधिक उत्तरदाता मजदूरी करते है। सबसे कम उत्तरदाता नौकरी कर रहे है। नौकरी का प्रकार शासकीय तथा अशासकीय दोनों ही है। उत्तरदाताओं की कार्य करने की स्थिति में अभी भी 74 प्रतिशत उत्तरदाता मजदूरी कर रहे है। मजदूरी में चौकीदारी बेलदारी, राजगीरी, घरों में काम करना आदि प्रमुख है।

सारणी क्रमांक 02 - उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति को दर्शाया गया है

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	आर्थिक	49	82.00
2	सामाजिक	02	04.00
3	पारिवारिक	05	10.00
4	शैक्षणिक	02	04.00
	योग		**100.00**

उत्तरदाताओं ने बताया कि पलायन का कारण आर्थिक ही अधिक है 82 प्रतिशत उत्तरदाता आर्थिक कारणों को ही प्रवास का कारण मानते है।

सारणी क्रमांक 03 - आर्थिक स्थिति में परिवर्तन

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	नगद धन	25	50.00
2	बचत	17	34.00
3	ऋण से मुक्ति	07	14.00
4	सम्पन्नता	01	2.00
	योग	**50**	**100.00**

पलायन के पश्चात् उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति सुधरी है। उसमें परिवर्तन आ रहा है। उत्तरदाताओं के पास कुछ नगद धन है तथा 34% उत्तरदाता बचत करने लगे है। मुख्य बात थी की 14% उत्तरदाता है, जो कर्ज को चुकता कर पाये है। जो ऋण साहूकारों,सेठों का या गांव के किसी व्यक्ति का था। उससे वह मुक्त हो गये या फिर मुक्त हो रहें है।

सारणी क्रमांक 04 - आर्थिक स्थिति सुधरने के कारण

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	अच्छा रोजगार	23	46.00
2	शैक्षणिक विकास	01	02.00
3	धन के अलावा अतिरिक्त आय	19	38.00
4	कर्ज से मुक्ति	07	14.00
	योग	**50**	**100.00**

जब उत्तरदाताओं से पूछा गया की आर्थिक स्थिति सुधरने का कौन सा कारण था, तो 46% उत्तरदाता अच्छे काम धंधों को मानते है। कुछ उत्तरदाता ऐसे भी थे, जो धंधे के अलावा भी अन्य कार्य करते है, जिससे उनकी आय बड़ी जिससे अब वह कर्ज से मुक्त हो रहें है। अन्य अतिरिक्त कार्य में घरों के छोटे-मोटे कार्य चौकीदारी अतिरिक्त मजदूरी आदि कार्य थे।

सारणी क्रमांक 05 - पलायन से परिवर्तन

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	आर्थिक स्थिति में परिवर्तन	29	58.00
2	शैक्षणिक विकास	11	22.00
3	धन के अलावा अतिरिक्त आय	03	06.00
4	कर्ज से मुक्ति	07	14.00
	योग	**50**	**100.00**

पलायन के कारण उत्तरदाताओं की स्थिति में परिवर्तन आ रहा है। यह परिवर्तन एक दिशा में न होकर बहुआयामी दिखाई दे रहा है। लगभग 58% उत्तरदाताओं को आर्थिक स्थिति में परिवर्तन दिखाई देता है। सामाजिक स्थिति में भी 22% उत्तरदाताओं ने माना की पलायन के बाद उनकी समाज में अधिक समाज की दृष्टि से देखा जाता है। कर्ज से मुक्ति 14% को मिली तथा समझदारी और जागरूकता को 6% लोग मानते है कि पलायान के कारण यह संभव हो पाया है।

सारणी क्रमांक 06 - पलायन के परिणाम

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	लोगों से सीख	29	58.00
2	सुविधाओं की उपलब्धता	11	22.00
3	साधनों का उपयोग	07	14.00
4	व्यापक बदलाव	03	06.00
	योग	**50**	**100.00**

पलायन के कारण अनेक प्रभाव देखने को मिल रहें है। इसके कारण सकारात्मक परिणाम देखने को मिल रहें है। अधिकांश उत्तरदाता पलायन करने के बाद अन्य लोगों से सीख ले रहें है। यह सीख जिनके ढंग/रहन-सहन तथा बच्चों के प्रति जागरूकता से संबंधित है। 58% उत्तरदाता है। जिनको जीवन जीने के साधन उपलब्ध होने लगे है तथा अनेक सुविधाओं का लाभ लेने वाले 16% उत्तरदाता है। 4% ने व्यापक बदलाव को माना है।

सारणी क्र. 07 - जीवन यापन में बदलाव

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	बीमारियों से बचाव	19	38.00
2	पौष्टिक खान-पान	16	32.00
3	बच्चों को सीख	02	04.00
4	संसाधनों में वृध्दि	13	26.00
	योग	**50**	**100.00**

पलायन के कारण आर्थिक जीवन में परिवर्तन तथा जागरूकता के कारण जीवन यापन के तरीके में बदलाव आया है। 38% लोगों ने माना कि पहले की अपेक्षा बीमारियों से बचाव हुआ है। 32% लोगों ने माना कि खान-पान में परिवर्तन आया है। साथ ही 26% लोगों ने माना की जीवन यापन के साधनों में वृध्दि हुई है।

सारणी क्र. 08 – सांस्कृतिक परिवेश में बदलाव

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	रीति रिवाजों में	21	42.00
2	मूल्य एवं आदर्शो में	02	04.00
3	परंपराओं एवं प्रथाओं में	03	06.00
4	धार्मिक कार्यो में	24	48.00
	योग	**50**	**100.00**

पलायन का सबसे अधिक प्रथा व सांस्कृतिक परिवेश में देखने को मिल रहा है। इसके कारण ऐसे परिवार शहरों की तथा मानव समाजों की संस्कृति को अपना रहें है। विशेषकर 48% लोगों ने माना धार्मिक मान्यताओं में व्यापक परिवर्तन आये है। इसके अतिरिक्त की साक्षात्कार अनुसूचि में अनेक प्रश्न थे। जिनके उत्तर सकारात्मक परिवर्तन की और संकेत कर रहे है। विशेषकर अन्य लोगों से सम्पर्क में आने के कारण समकारी में वृध्दि को स्वीकार करते है। नये–नये सम्पर्को से नये–नये मूल्यों को अपना रहें है। रहन–सहन तथा पहनावें में व्यापक परिवर्तन देखने को मिल रहा है। टी.वी.तथा मोबाईल लगभग हर उत्तरदाता के पास उपलब्ध था चाहे वह कितना भी गरीब बचा नहीं है। साहूकारी के चंगुल से मुक्त हो रहे है। तथा कर्ज से मुक्त भी हो रहे है। जिसके कारण थोडी बहुत बचत भी करने लगे है। बच्चों में शिक्षा पर खर्च होने वाले कर्ज पर परिवार ध्यान देने लगे है।

सुझाव :

1. पलायन करने वाले परिवारों के पास स्थाई रोजगार उपलब्ध नहीं होगा, अधिकांश परिवार ठेकेदारों या अन्य उद्योगपति पर निर्भर है। ऐसे में स्थाई रोजगार की आवअश्यकता है। रोजगार की ग्यारंटी होनी चाहिए।
2. पलायन करने वाले परिवारों के पास स्थाई आवास नहीं है। अभी भी अनेक परिवार झोपडियों में निवास करते है। ऐसे लोगों को स्थाई आवास की व्यवस्था शासन स्तर पर दी जानी चाहिए।
3. ऐसे परिवारों के बच्चों के लिए शासन या स्वयं सेवी संस्थाओं को शिक्षा के लिए अभिप्रेरणा देनी चाहिए।
4. **सांस्कृतिक परिवेश –**42% उत्तरदाताओं ने माना की रीति–रिवाजों में बदलाव आ रहा है। आदर्श, और मूल्य बदल रहें है, कुछ लोगों ने माना की प्रथाओं और परम्परओं में भी बदलाव आया है। विशेषकर बलि प्रथा, शादी–ब्याह तथा धार्मिक कार्यो में।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. **डॉ.ए.आर.एन.श्रीवास्तव** – जनजातीय विकास के पांच दशक, ज्ञानदीप प्रकाशन पटना,रांची, इलाहबाद –2000
2. **डॉ.मंजू गुप्ता–** जनजातियों का सामाजिक आर्थिक उत्थान – अर्जुन पब्लिशिंग नई दिल्ली।
3. **डॉ.एम.एन.वर्मा –** भीलों की सामाजिक व्यवस्था–निकूंज प्रकाशन एवं पुस्तक भण्डार–बड़वानी (म.प्र.)
4. **डॉ.जी.आर.मदन –**भारत में सामाजिक विकास – विवेक प्रकाशन दिल्ली।
5. **म.प्र.की जनजातियाँ–** समाज एवं व्यवस्था म.प्र.हिन्दी ग्रंथ अकादमी (भोपाल)

****

अनुसूचित जनजाति की सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का प्रभाव - बड़वानी जिले के संदर्भ में

डॉ. निशा जैन * रितेश मॉगरोलिया **

प्रस्तावना – ग्रामीण समाज में सड़क, बिजली, शिक्षा, स्वास्थ्य, गरीबी, बेरोजगारी, अस्पृश्यता, जीविका के साधनों का अभाव इत्यादि प्रमुख समस्याएँ विद्यमान हैं। जिनमें प्रमुख समस्या जीविका के साधनों का अभाव हैं। यह एक केन्द्रीय समस्या हैं तथा अन्य समस्याएँ इससे जुड़ी हुई हैं। ग्रामीण समाज प्रारम्भ से लेकर आज भी कृषि आधारित अर्थव्यवस्था पर आधारित हैं।

भारत की कुल जनसंख्या का 8.2 प्रतिशत भाग अनुसूचित जनजाति का हैं। भारत गाँवों का देश हैं, जिसकी 70.3 प्रतिशत जनसंख्या (सन् 2001 के अनुसार) ग्रामों में निवास करती हैं और जिसमें से लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या कृषि से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हैं अर्थात् जिनकी जीविका का साधन कृषि एवं कृषि मजदूरी हैं। वर्तमान समय में पर्यावरण में बदलाव के कारण वर्षा न होना, वर्षा कम होना, वर्षा का अधिक होना, उन्नत बीजों का अभाव इत्यादि समस्याएँ पर्यावरण में बदलाव के कारण उत्पन्न होती हैं। जिसके कारण ग्रामों में रोजगार प्राप्त नहीं हो पाता है। रोजगार संबंधी समस्या को ग्रामीण क्षेत्रों में दूर करने के लिये शासन द्वारा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (nrega) संचालित हैं, जो कि प्रत्येक ग्रामीण परिवार को 100 दिवस का रोजगार का अधिकार प्रदान करती हैं।

यदि योजना के आंकड़े देखे जाये तो पता चलता हैं कि इस योजना का सर्वाधिक लाभ अनुसूचित जनजाति ने ही प्राप्त किया है। इस योजना का प्रभाव अनुसूचित जनजाति के सामाजिक स्तर पर दिखाई देता हैं।

अध्ययन के उद्देश्य – बड़वानी जिले के अनुसूचित जनजाति के सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति पर राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (nrega) के प्रभाव का अध्ययन किया गया हैं।

शोध प्रविधि –

अध्ययन का समग्र –बड़वानी जिले के समस्त अनुसूचित जनजाति राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) से लाभवान्तित परिवार अध्ययन का समग्र हैं।

अध्ययन की इकाई –राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगां) में कार्य करने वाले अनुसूचित जनजाति परिवार के महिला एवं पुरूष अध्ययन की इकाई हैं।

निदर्शन विधि –दैव निदर्शन प्रणाली के आधार पर बड़वानी जिले के 30 ग्राम के (प्रत्येक ग्राम से 10 अनुसूचित जनजाति परिवार) का चयन किया गया हैं। इस प्रकार कुल 300 अनुसूचित जनजाति परिवारों का चयन इस विधि के माध्यम से किया गया हैं।

तथ्यों का संकलन – यह शोध पेपर शोधार्थी द्वारा प्राप्त प्राथमिक तथ्यों पर आधारित हैं।

तथ्यों का विश्लेषण –

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार ग्यारण्टी योजना के मनरेगा योजना से सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ाने सम्बन्धी विवरण

क्रमांक	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	96	32
2	नहीं	110	36.6
3	कुछ – कुछ	94	31.4
कुल		300	100 %

स्त्रोत – शोधार्थी द्वारा संग्रहित तथ्य

उपरोक्त तालिका से उत्तरदाताओं के मनरेगा योजना से सामाजिक प्रतिष्ठा बढाने सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में से मनरेगा योजना से सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ती हैं , कहने वाले, 32 प्रतिशत सदस्य हैं, मनरेगा योजना से सामाजिक प्रतिष्ठा नहीं बढ़ती हैं कहने वाले, 36.6 प्रतिशत सदस्य हैं तथा मनरेगा योजना के द्वारा कुछ-कुछ सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ती हैं, कहने वाले, 31.4 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्य हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा से सामाजिक प्रतिष्ठा नहीं बढ़ती हैं कहने वालों का प्रतिशत अधिक पाया गया हैं।

मनरेगा से सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहलुओं की मजबुती सम्बन्धी विवरण

क्रमांक	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	156	52
2	नहीं	144	48
कुल		300	100 %

मनरेगा से सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहलुओं की मजबुती सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा से सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहलु भी मजबुत हो रहा हैं, कहने वाले 52 प्रतिशत सदस्य हैं तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहलु मजबुत नहीं हो रहा हैं कहने वाले 48 प्रतिशत सदस्य हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा से सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहलु मजबुत हो रहा हैं कहने वालों का प्रतिशत अत्यधिक पाया गया हैं। जिसका प्रमुख कारण यह हैं कि इस योजना से इनकी आर्थिक स्थिति कुछ हद तक प्रभावित हैं, जिसकी वजह से शिक्षा में वृद्धि हुई हैं साथ ही इनके पहले के पहनावे में

* विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (समाजशास्त्र) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

भी अन्तर आया हैं साथ ही रहन-सहन के तरीके में भी बदलाव देखा जा सकता हैं। सांस्कृतिक परिवर्तन के अन्तर्गत हम कह सकते हैं कि इनके जो रीति-रिवाज हैं, जैसे के कुछ समय पहले जनजातीय की अपनी जातीय पहनावा होता हैं जैसे कि पुरूषो में धोती, कुर्ता, पायजामा एवं महिलाओं में नाटी, घाघरा चुनरी परन्तु वर्तमान में पैसो की आवक के कारण इनके पहनावे में भी काफी अन्तर देखने को मिलता हैं, जैसे कि यह भी अन्य समाज की तरह ही पुरूष पेण्ट, शर्ट, जिन्स, टी-शर्ट भी एवं महिलाएँ भी अन्य महिलाओं की तरह ही साड़ी ब्लाउज एवं किशोरिया सलवार कमीज पहनती हैं।

मनरेगा योजना के सकारात्मक प्रभाव सम्बन्धी विवरण

क्रमांक	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	110	36.6
2	नहीं	78	26
3	कुछ-कुछ	112	37.4
कुल		300	100 %

मनरेगा से सकारात्मक प्रभाव सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा योजना से सकारात्मक प्रभाव पड़ रहा हैं, कहने वाले 36.6 प्रतिशत सदस्य हैं, मनरेगा से सकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ रहा हैं कहने वाले 26 प्रतिशत सदस्य हैं तथा मनरेगा से कुछ - कुछ सकारात्मक प्रभाव हो रहा हैं, कहने वाले 37.4 सदस्य हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में कुछ-कुछ सकारात्मक प्रभाव पड़ रहा हैं कहने वालों का प्रतिशत अत्यधिक हैं।

मनरेगा के हितग्राही की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन सम्बन्धी विवरण

क्रमांक	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	96	32
2	नहीं	78	26
3	कुछ-कुछ	126	42
कुल		300	100 %

मनरेगा योजना के हितग्राही होने से सामाजिक स्थिति में परिवर्तन सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा के हितग्राही होने से सामाजिक स्थिति में परिवर्तन हो रहा है, हाँ कहने वाले, 32 प्रतिशत सदस्य हैं, सामाजिक स्थिति में परिवर्तन नहीं हो रहा हैं, कहने वाले 26 प्रतिशत सदस्य हैं तथा कुछ-कुछ परिवर्तन हो रहा हैं कहने वाले 42 प्रतिशत सदस्य पाये गये हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में से सामाजिक स्थिति में परिवर्तन कुछ-कुछ हो रहा हैं, कहने वालो का प्रतिशत अधिक पाया गया हैं। जिसका प्रमुख कारण यह हैं कि इससे निवास स्थान पर रहकर ही खेती मजदुरी के साथ मनरेगा में 100 दिनों का कार्य भी ग्राम में ही मिल जाता हैं। जिससे कार्य के लिये अन्य जगह नहीं जाना पड़ता हैं, जिससे इनके बच्चों की पढ़ाई में भी वृद्धि हुई हैं, साथ ही रहन-सहन, में भी वृद्धि हुई हैं।

मनरेगा के हितग्राही की सांस्कृतिक स्थिति में परिवर्तन सम्बन्धी विवरण

क्रमांक	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	98	32.6
2	नहीं	76	25.4
3	कुछ-कुछ	126	42
कुल		300	100 %

मनरेगा के हितग्राही की सांस्कृतिक स्थिति में परिवर्तन सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत सदस्यों में मनरेगा के हितग्राही होने से सांस्कृतिक स्थिति में परिवर्तन हो रहा हैं, कहने वाले, 32.6 प्रतिशत सदस्य हैं, मनरेगा के हितग्राही होने से सांस्कृतिक स्थिति में परिवर्तन नहीं हो रहा हैं, कहने वाले 25.4 प्रतिशत सदस्य हैं तथा मनरेगा के हितग्राही होने से सांस्कृतिक स्थिति में कुछ-कुछ परिवर्तन हो रहा हैं, कहने वाले 42 प्रतिशत सदस्य हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत सदस्यों में मनरेगा से सांस्कृतिक स्थिति में कुछ-कुछ परिवर्तन हो रहा हैं कहने वालें अधिक उत्तरदाता सदस्य पाये गये हैं।

मनरेगा योजना से सहायता सम्बन्धी विवरण

क्रमांक	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	व्यवसाय	78	26
2	सहायक रोजगार	98	32.6
3	धन	80	26.7
4	सभी	44	14.7
कुल		300	100%

अनुसूचित जनजाति के मनरेगा योजना से सहायता प्राप्त करने सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में व्यवसाय संबंधी सहायता का मत देने वाले 26 प्रतिशत सदस्य हैं, सहायक रोजगार सम्बन्धी सहायता का मत देने वाले 32.6 प्रतिशत सदस्य हैं, धन प्राप्त करने सम्बन्धी सहायता का मत देने वाले 26.7 प्रतिशत सदस्य हैं तथा सभी सहायता प्राप्त करने सम्बन्धी मत देने वाले 14.7 प्रतिशत सदस्य हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत सदस्य में सहायक रोजगार प्राप्त होने का मत देने वालों की संख्या अत्यधिक हैं तथा सभी प्रकार की सहायता का मत देने वालों की संख्या कम पाई गई हैं।

मनरेगा के उपयोग से शैक्षणिक स्थिति में परिवर्तन सम्बन्धी विवरण

क्रमांक	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	122	40.6
2	नहीं	76	25.4
3	कुछ-कुछ	102	34
कुल		300	100 %

मनरेगा के उपयोग से शैक्षणिक स्थिति में परिवर्तन सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा के उपयोग से शैक्षणिक स्थिति में परिवर्तन होने संबंधी 40.6 प्रतिशत सदस्य हैं, मनरेगा के उपयोग से शैक्षणिक स्थिति में परिवर्तन नही होने से सम्बन्धित 25.4 प्रतिशत सदस्य हैं तथा मनरेगा के उपयोग से शैक्षणिक स्थिति में कुछ-कुछ परिवर्तन होने से सम्बन्धित 34 प्रतिशत पाये गये हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा के उपयोग से शैक्षणिक स्थिति में परिवर्तन होने वालों की संख्या अत्यधिक पाई गई हैं तथा मनरेगा के उपयोग से शैक्षणिक स्थिति में परिवर्तन न होने सम्बन्धी सदस्यों की संख्या कम पाई गई हैं। शैक्षणिक स्थिति में परिवर्तन होने का कारण यह हैं कि इससे उन्हें कार्य करने के लिये बाहर नहीं जाना पड़ता जिसकी वजह से गॉव में रहकर ही इस योजना में काम मिल जाता है।

मनरेगा योजना से पारिवारिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने संबंधी विवरण

क्रमांक	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	126	42
2	नहीं	174	58
कुल		300	100 %

मनरेगा योजना के पारिवारिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत सदस्यों में मनरेगा योजना से पारिवारिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने की सहमती देने वाले 42 प्रतिशत सदस्य हैं, मनरेगा योजना से पारिवारिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने की असहमती देने वाले 58 प्रतिशत सदस्य हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा योजना से पारिवारिक आवश्यकताओं को पूर्ण नहीं कर पाने वालों की संख्या अधिक हैं तथा मनरेगा योजना से पारिवारिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने वालों की संख्या कम पाई गई हैं।

मनरेगा से जीविका में सहायक साधन सम्बन्धी विवरण

क्रमांक	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	250	83.4
2	नहीं	50	16.6
कुल		300	100 %

मनरेगा के जीविका में सहायक साधन सम्बन्धि विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत सदस्यों में मनरेगा के जीविका में सहायक साधन सम्बन्धी मत देने वाले 83.4 प्रतिशत सदस्य हैं तथा मनरेगा के जीविका में सहायक साधन नही होने सम्बन्धी मत देने वाले 16.6 प्रतिशत सदस्य हैं।

मनरेगा के हितग्राही योजना सम्बन्धी विवरण

क्रमांक	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	270	90
2	नहीं	30	30
कुल		300	100 %

मनरेगा के हितग्राही योजना सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा को हितग्राही योजना है कहने वाले 90 प्रतिशत सदस्य हैं तथा मनरेगा को हितग्राही योजना नहीं कहने वाले 10 प्रतिशत सदस्य हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत सदस्यों में मनरेगा को हितग्राही योजना कहने वालों की संख्या अत्यधिक हैं तथा मनरेगा को हितग्राही योजना नहीं कहने वालों की संख्या कम पाई गई हैं।

सुझाव-

- योजना के संबंध में पर्याप्त जानकारी प्रसारित की जानी चाहिए। रेडियों, दीवाल पर लिखी जानकारियां सिर्फ सतही है, इनके साथ-साथ बड़े-बड़े बोर्डो पर योजना, योजना के क्रियान्वयन, योजना के प्रावधान, न्यूनतम मजदूरी, योजना में दी गई सुविधाओं, बेरोजगारी भत्ता, आवेदन की प्रक्रिया अतिरिक्त मजदूरी, योजना में घायल, अपंग या मृत्यु होने पर चिकित्सकीय सुविधा, इलाज के लिये राशि व मुआवजा, शिकायतें व शिकायत किस अधिकारी से की जानी है आदि के संबंध में स्पष्ट व बिंदुवार जानकारी लिखकर विभिन्न दिशाओं व अनिवार्य रूप से गांव के मध्य जहां से मुख्य रूप से आवागमन होता है, लगायी जानी चाहिए। जिससे पारदर्शिता व क्रियान्वयन की निरंतरता बनी रहे।
- बगैर किसी भेदभाव के सभी हितग्राहियों को योजना का लाभ प्रदान किया जाना चाहिए।
- पंजीकरण के लिये जो फार्म इस्तेमाल में लाया जाये उसका निचला हिस्सा फाड़कर पावती के रूप में अनिवार्य रूप से दिया जाना चाहिए। तथा शुरूआती पंजीकरण के बाद भी पंजीकरण की प्रक्रिया लगातार चलती रहनी चाहिए।
- रोजगार कार्ड पर स्पष्ट रूप से उल्लेख होना चाहिए कि रोजगार कार्ड की कोई कीमत नहीं है, तथा रोजगार कार्ड के साथ एक अतिरिक्त पृष्ठ जोड़कर योजना के विभिन्न पहलुओं से संबंधित विस्तृत जानकारी होनी चाहिए।
- प्राथमिकता आधारित कार्यो/परियोजनाओं की सूची ग्राम पंचायत कार्यालय में सार्वजनिक रूप से लगा दी जानी चाहिए ताकि सभी उसे देख सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

बदलते गांवों में सामाजिक न्याय और क्षेत्रीय भाषा की भूमिका

डॉ. आनन्द कुमार खरे *

प्रस्तावना – गाँवों की बदलती दुनिया – बढ़ते शहरीकरण के बावजूद अभी भी भारत को इससे जांचा परखा जाता है कि इसके ग्रामीण क्षेत्रों में क्या कुछ घटित हो रहा है। देश की लगभग **68 प्रतिशत आबादी** गांवों में ही रहती है। पिछले कुछ समय से ग्रामीण भारत में हो रहे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक बदलावों को साफ तौर पर देखा जा सकता है। लेकिन वर्षो से ग्रामीण क्षेत्रों में कर्ज की समस्या अभी भी चिन्ता का विषय है। कर्ज में डूबे किसानों की आत्महत्या की घटनाए बदलाव और विकास के असन्तुलन को रेखांकित करती है। कृषि के लिए पर्याप्त बिजली की व्यवस्था हम अभी भी गांवों में नहीं कर पाये हैं। हालांकि यह भी सच है कि संरचनात्मक बदलाव के मामले में कुछ सकारात्मक बातें भी हुई हैं। देश के गांवों में इन बदलावों ने सामाजिक और भौतिक बुनियादी ढांचे के विस्तार पर बल देते हुए नये सिरे से इन ग्रामीण क्षेत्रों में ध्यान दिए जाने की जरूरते को रेखांकित किया है, पिछले दो दशकों में केन्द्र एवं विभिन्न राज्य सरकारों ने इन बदलावों को काफी गति प्रदान की है। **73 वां संविधान संशोधन** पंचायतों को संवैधानिक तौर पर सशक्त करने के प्रयासों का आधार बना, जिसे सभी राज्य सरकारों ने समर्थन प्रदान किया। कस्बों और छोटे शहरों से सम्पर्क मार्ग से जुड़े गांवों में विकास की खिड़की खुली तो है, लेकिन शहरों की चमक, औद्योगीकरण एवं नियमित रोजगार की तलाश में गावों से किसानों एवं युवाओं के पलायन गांवों में सामाजिक संरचना के परिदृश्य को बहुत प्रभावित किया है। ग्रामीण शहरों में मशीनों के शोर और ऊंचे होते कंकीट के जंगल में दब से गए उनके उद्देश्य और आशायें धुंधली ही हैं।

देश में लगभग 2,40,000 ग्राम पंचायतें हैं, जिनमें करीब **30 लाख** प्रतिनिधि चुने जाते हैं। इनमें **40 प्रतिशत** अनुपात महिलाओं का है यकीनन आने वाले समय में यह अनुपात कम से कम **50 प्रतिशत** होगा ग्रामीण भारत में स्वशासन की महत्वपूर्ण संस्था के रूप में ग्राम पंचायत और जिला परिषद दोनों ही भलीभांति स्थापित हो चुकी हैं। विभिन्न शोध अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि जिन गांवों में ग्राम पंचायतें मजबूत हैं वहां जनसेवा कार्य प्रणाली अधिक अच्छी और मुखर है। मनरेगा कार्याक्रमों से न केवल ग्रामीण क्षेत्रों में मजदूरी की दरों को बढ़ाने में मदद मिली है, बल्कि ग्राम पंचायतें भी अधिक सशक्त हुई हैं। क्योंकि इनके आधे कार्य स्वयं उनके द्वारा ही संचालित किए जाते हैं। राजनैतिक जागरूकता ही बाद में सामाजिक परिवर्तन और विकास का आधार तैयार करती है। आर्थिक परिवर्तन वास्तव में **पीएमजीएसबाई** अथवा प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना का परिणाम है, जिसके तहत लगभग 2.7 लाख किमी बेहतर गुणवत्ता और सभी मौसमों में काम करने वाली सड़कों का निर्माण किया गया है, साथ ही लगभग 1.5 लाख किमी सड़को की मरम्मत का कार्य भी पिछले 12 वर्षो में किया गया है।

गांवों में तेज सामाजिक परिवर्तन में महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों के विभिन्न राज्यों में तेज विस्तार का भी योगदान है। ग्रामीण महिलाओं के ये स्वयं सहायता समूह केरल और आंध्र प्रदेश में बहुत सफल रहे हैं। देश में लगभग 26 लाख महिला स्वयं सेवी समूह गांवों में कार्यरत हैं। वास्तव में केरल से कहीं अधिक आंध्र प्रदेश ने इसे विकास एवं गांवों में सामाजिक परितर्वन के माडल के तौर पर प्रस्तुत किया है। **एनआरएलएम** यानी राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन जून 2011 में शुरू किया गया, जिसका उद्देश्य 2022 तक देश में मौजूदा 3 करोड़ की संख्या के बजाय 10 करोड़ महिलाओं को इसके दायरे में लाने के लिए लगभग 90 लाख महिला स्वयं सहायता समूहों को स्थापित करना है। उत्तर प्रदेश में राजीव गांधी महिला विकास परियोजना नाम के एनजीओ ने एनआरएलएम के तहत उल्लेखनीय कार्य करते हुए एक लाख स्वयं सेवी समूहों के माध्यम से राज्य के 42 जिलों में लगभग 12 लाख से अधिक ग्रामीण महिलाओं को सदस्य बनाया है।

देश के गांवों में विकास के इन स्पष्ट संकेतों के बाद भी अभी बहुत चुनौतियां हैं। ग्राम पंचायतें अभी भी बहुत सक्रिय नहीं हैं। कोष, कार्यप्रणाली और पदाधिकारियों का अभी संवैधानिक प्रावधान के अनुसार सशक्त पंचायती ढांचे में पूर्ण हस्तांतरण शेष है। इस मामले में जो राज्य सबसे शीर्ष पर हैं, उनमें महाराष्ट्र, कर्नाटक, केरल, राजस्थान और तमिलनाडु शामिल है। पंचायती संस्थाओं विशेषकर ग्राम सभाओं को तकनीकि और संगठनात्मक क्षमताओं को मजबूत करना होगा। हमें वर्तमान समय में गांवों की ग्राम पंचायतों की जरूरतों का भी नये सिरे से आंकलन करना होगा। साथ ही स्वयं सहायता समूहों और पंचायती संस्थाओं में उचित तालमेल स्थापित करना भी अत्यन्त आवश्यक है। गांवों में बदलते परिदृश्य का आधार पंचायतों के महत्व और महिला स्वयंसेवी समूहों की क्रान्ति को कमतर नहीं आंका जाना चाहिए। गांवों में अधिक संस्थागत होने के कारण उनका दीर्घकालिक प्रभाव अधिक है। हालांकि यह संस्थायें प्रभावशाली जातियों के प्रभाव से मुक्त नहीं है। लेकिन पंचायत निकायों में गांव के कमजोर वर्गो को भी प्रतिनिधित्व मिला हुआ है। सितम्बर 2015 में ही केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय ने पहली बार भारत का **ग्रामीण विकास रिपोर्ट कार्ड** तैयार किया। इसमें ग्रामीण भारत में होने वाले विविध बदलावों और चुनौतियों का विश्लेषण पेश किया गया है। उम्मीद की जानी चाहिए कि यह पहल जारी रहेगी ताकि जमीनी स्तर के हालात से नीति **नियन्ता** भलीभॉति जुड़े रहें।

सामाजिक न्याय की जटिलता – जाति वर्ग और राजनैतिक दलों के खाचों में बटे गांवों में सामाजिक न्याय की तस्वीर अत्यन्त धुधंली है। राम राज्य और पंच परमेश्वर की न्याय व्यवस्था और सामाजिक ताने बाने ने अपना अस्तित्व खो दिया है। जबावदेही न होने के कारण देश की जटिल न्याय व्यवस्था ने ग्रामीण समाज को खोखला कर दिया है। जिला स्तर से लेकर हाई कोर्ट, सुप्रीमकोर्ट तक उलझे मुकद्दमों के पहाड़ में ग्रामीण ही पिस रहे हैं। किसी भी

* अध्यक्ष (समाजशास्त्र) डी. वी. महाविद्यालय, उरई, जालौन (उ.प्र.) भारत

कानून द्वारा असमानता, भेदभाव या अनुचित व्यवहार को बढ़ावा मिलता है। तो इससे सामाजिक न्याय की प्रक्रिया को तो आघात लगता ही है, साथ ही इससे समाज स्वयं को असुरक्षित महसूस करता है। और लोकतांत्रिक मूल्यों को भी संदेह की दृष्टि से देखने लगता है। कानून का शासन और इसको लागू करने वाला प्रशासनिक ढांचा सक्षम और संवेदनशील हो तो पीड़ित व्यक्ति को तुरन्त न्याय मिल जाता है। लेकिन यदि ऐसा नहीं है, तो आम व्यक्ति लंबित प्रकरणों के जाल में उलझा रहता है। जब कार्यपालिका और प्रशासन लगातार गैरकानूनी काम करते हैं और अपनी सनक थोपने से बाज नहीं आते हैं, तब व्यक्ति और समाज दोनों के अन्दर व्यापक रूप से सामाजिक न्याय के अभाव में असंतोष और नाराजगी घर कर जाती है। ऐसे में ही आम व्यक्ति सामाजिक न्याय की बुनियाद पर अंगुली उठाना शुरू कर देता है।

दैनिक जीवन में गहरी पैठ बना चुके भ्रष्टाचार से शायद ही किसी का सामना न हुआ हो। इस रोग की बानगी देखनी हो तो किसी भी सरकारी दफ्तर या न्यायालय में चले जाइए। अपना काम करवाने आने वाले लोगों के पास शिकायतों का अंबार होता है। मगर वे अपनी गुहार वहां किससे लगाए। अगर कोई इसकी सुनवाई के लिए बैठा भी है, तो वह शिकायतकर्ता को नियम कानून की बारीकियां समझाकर चलता कर देता है। ऐसा इसीलिए कि हमारी भ्रष्ट व्यवस्था में समय सीमा के अन्दर किसी की कोई जबाव देही तय ही नहीं है। 'जस्टिस डिलेड इज जस्टिस डिनायड' उक्ति को सही माना जाए तो देश में शायद ही किसी को समय से न्याय मिल पा रहा हो। तारीखें बांट रही हमारी वर्तमान न्याय व्यवस्था में संसाधनों व कानूनी पेचीदगियों के चलते अदालतों में लम्बित प्रकरण घटने की बजाए बढ़ते ही चले जा रहे हैं। इसमें जहाँ आम व्यक्ति पिस रहा है वहीं सामाजिक न्याय की व्यवस्था दम तोड़ रही है।

नया देश युवा पीढ़ी मगर कानून अंग्रेजीयत में रंगे अंग्रेजों के शासन काल के हैं, यह भी एक वजह है कि व्यवस्था दरकती रहती है और वक्त पर आम आदमी को संतोषजनक न्याय नहीं मिलता है। देश के कानून निर्माता नये कानून गढ़ने के फेर में पुरानी कानून व्यवस्था बदलना ही भूल जाते हैं। देश पुरातात्विक महत्व वाले कानूनों का एक दिलचस्प संग्रह बन गया है, ऊपर से नये कानून सामाजिक न्याय के रास्ते में बाधक बन जाते हैं। वैकल्पिक न्याय के मंचों की देश में कमी नहीं है मगर यह पूरा तंत्र व्यवस्था की खामियों और कानूनी पेचीदगियों में फंसकर न तो सामाजिक न्याय को तीव्र करा सका और न ही सुलभ। खास मामलों के झगड़े निपटाने के लिए बने ट्रिव्यूनल खुद लंबित मामलों के बोझ से दब गए हैं। फैसला ऊँची अदालतों से ही होता है। न्याय पंचायतों को तो हिरासत में भोजने तक का अधिकार नहीं मिला, इसलिए उनका अस्तित्व ही खत्म हो गया मगर खाप पंचायतें सजा-ए-मौत दे रही हैं। सामाजिक न्याय के लिए गांवों में मध्यस्थता एक पुरानी व्यवस्था है सरकार मध्यस्थता को कानूनी आधार भी दे चुकी है। पूर्व मुख्य न्यायाधीश ए0एस0 आनन्द ने अगली सदी को मुकदमों के बजाए सुलह, समझौते और मध्यस्थता की सदी होने का ख्वाब देखा था, जो अभी तो अधूरा ही लगता है।

खाना-पीना आना-जाना, पढ़ना-लिखना, काम-काज, नौकरी-चाकरी, मनोरंजन यानी जीवन का सब कुछ किसी न किसी कानून के दायरें में है, लेकिन कितने लोगों को समझ में आती है कानून की टेढ़ी भाषा। अंग्रेजी हो या हिन्दी अनुवाद कानून की एक भी धारा ऐसे नहीं लिखी होती कि वह पढ़ते ही समझ में आ जाए। कानूनों की दर्जनों व्याख्यायें सामाजिक न्याय की कोशिशों को पेंचदार बना देती है।

क्षेत्रीय भाषाओं का महत्व – क्षेत्रीय भाषा और बोली मानव के भावों और विचारों की मौखिक (लिखित) अभिव्यक्ति है। मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर वह दूसरों के भावों और विचारों को अधिक पूर्णता से समझ सके, इसलिए उसने भाषा और बोली का अविष्कार किया। भाषा और बोली का अन्तर भी सामाजिक है। मूलत: भाषा भी बोली का ही एक रूप है। बोली सामाजिक, साहित्यक, राजनीतिक, धार्मिक प्रतिष्ठा बन जाती है। खड़ी बोली जो मूलत: दिल्ली, मेरठ, गाजियाबाद तथा आस-पास के क्षेत्रों की जनबोली थी। आज राजनीतिक, साहित्यिक और सांविधानिक प्रतिष्ठा प्राप्त कर बोली से भाषा बन गई है। भक्तिकाल में कवियों ने ब्रजबोली में रचनाकर उसे काव्यभाषा की गरिमा दी और उसे ब्रजबोली से ब्रजभाषा बना दिया। लेकिन आज वह साहित्य की प्रधानभाषा नहीं रही और उसका स्थान खड़ी बोली ने ले लिया।

ये भाषाए और बोलियां हमारी ग्रामीण संस्कृति की संवाहिका है। हमारे आचार-विचार आस्था-विश्वास, खान-पान, वेशभूषा, संस्कार इन बोलियों ओर क्षेत्रीय भाषाओं में सुरक्षित है। क्षेत्रीय भाषाओं की शब्द संपदा किसी जाति या देश के इतिहास के ऐसे दस्तावेज हैं, जो सहस्राब्दियों तक सुरक्षित रहते हैं और इनके विश्लेषण से किसी जाति, व्यक्ति या गांवों का सांस्कृतिक इतिहास लिखा जा सकता है। क्षेत्रीय भाषाएं और बोलियां अपने स्वाभाविक विकास क्रम मे नये शब्दों को लेती जाती हैं। पुराने शब्दों को छोड़ती जाती हैं। एक समय विशेष में जिन शब्दों का प्रयोग होता था, वे शब्द क्षेत्रीय संस्कृति के विभिन्न पहलुओं की जानकारी देते हैं। सामान्य व्यक्ति चलते हुए शब्दों का प्रयोग करता है। शायद संप्रेषण के लिए यह आवश्यक भी है, क्षेत्रीय भाषा का ऐतिहासिक क्रम में अध्ययन क्षेत्रीय और ग्रामीण संस्कृति के अनेक रहस्यों को अपने में समेटे रहता है।

क्षेत्रीय भाषाएं हमारी ग्रामीण संस्कृति की संवाहिका है। इसे दो रुपों में देखा और समझा जा सकता है। भाषा का एक पक्ष संरचना का है और दूसरा उसका कथ्य पक्ष है अर्थात एक का संबध विषय वस्तु से है और दूसरे का संबध अभिव्यक्ति पक्ष है। दोनों मिलकर भाषा को पूर्णता देते है। भारत गांवों का देश है। ग्रामीण समाज की अभिव्यक्ति, हमारी लोक संस्कृति, लोक नायक, लोक संगीत, लोक नृत्य, लोक चित्रकला की सजीव अभिव्यक्ति क्षेत्रीय भाषा में ही दिखाई पड़ती है। ग्रामीण भारत में गांवों ने ही अथक परिश्रम से क्षेत्रीय भाषाओं की जीवतंता को संरक्षण दिया है, तथा सहेज कर रखा है। ग्रामीण समाज और क्षेत्रीय भाषाएं एक दूसरे की पूरक है। देश की हर काल की संस्कृति उसकी क्षेत्रीय भाषाओं के द्वारा ही सुरक्षित रहती है। गांवों में ही वास्तविक भारत की तस्वीर के दर्शन होते है। क्षेत्रीय भाषाएं सुरक्षित एवं प्रतिष्ठित रहेंगी तो राष्ट्रभाषा हिन्दी का स्थान भी ऊँचा रहेगा। देश के गांवों में आम व्यक्ति अपने अधिकार, कर्तव्य और संस्कृति के प्रति जागरुक रहे, इसके लिए क्षेत्रीय भाषाओं की भूमिका को स्वीकार करना ही होगा। हमारे रीति रिवाज, परम्पराएं एवं संस्कृति के संवर्धन हेतु एवं समृद्ध विरासत के संरक्षण हेतु ग्रामीण भारत की समस्त क्षेत्रीय भाषाओं को प्रतिष्ठा दिलाने के लिए एक जन आन्दोलन की अत्यन्त आवश्यकता है। ताकि हमारे हृदय की वास्तविक अभिव्यक्ति की माध्यम ये क्षेत्रीय भाषाएं जीवित रहें।

गांवों में सरकारों ने गरीबों के सशक्तीकरण हेतु नौकरी इतंजाम खूब किए। लेकिन उनका कौशल विकास नहीं किया जा सका, उन्हें विकल्पों और पर्याप्त मौके नहीं सुलभ कराए जा सके। लिहाजा परिदृश्य गुलाबी नहीं हो सका। हम ग्रामीण भारत की गरीबी, बेरोजगारी एवं सामाजिक सांस्कृतिक भाषायी संकट की असहायता से मुँह नहीं मोड़ सकते। विफलता यह साबित

करती है कि सफलता का प्रयास पूरे मन से नहीं किया गया। ऐसे में बाते सच होती दिखाई दे रही हैं कि गरीबों के नाम जारी होने वाला धन उनके पास पूरा नहीं पहुँचता।बिचौलिये अमीर हो रहे हैं। सम्पन्नता और विपन्नता के बीच की खाई समुद्र हो रही है। रामराज की कल्पना घूल-घूसरित होती गई। ऐसे में गांवों में वंचितों के आर्थिक, सामाजिक व मनोवैज्ञानिक उत्थान के साथ-साथ उनके सांस्कृतिक एवं क्षेत्रीय भाषाई वजूद का संरक्षण करना आज हम सबके लिए मुख्य मुद्दा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विमलेश क्रांति वर्मा - संस्कृति की संवाहक भाषा और बोलियां, राजभाषा भारती (अक्टूबर दिसम्बर 2014)
2. प्रो0 एस.सी.दुबे - इण्डियन विलेज।
3. प्रो0 एस.सी.दुबे - इण्डियन चैंजिग विलेजेस।
4. माला दीक्षित - वैकल्पिक न्याय को नहीं मिली जमीन दैनिक जागरण, कानपुर दिनांक 28.07.2010
5. आलोक शर्मा - तारीखों में उलझा न्याय, दैनिक जागरण, कानपुर दिनांक 29.07.2010

****

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ की जनजातियों का अध्ययन

डॉ. मनोज वानखेड़े *

शोध सारांश – आदिम समाज' सामाजिक व्यवस्था की सबसे प्रांरभिक अवस्था कहलाती है। सामाजिक व्यवस्था में शनैः–शनैः विकास होता गया और मानव आदिम व्यवस्था से विकास की और अग्रसर होते – होते वर्तमान अवस्था में पहुँच पाया है, लेकिन सामाजिक विकास की परम्परा में कुछ समाज काफी पीछे रह गये।जो आज भी प्रांरम्भिक अवस्था में जीवन यापन कर रहे है। जिन्हें **'जनजाति समाज'** के नाम से जाना जाता है। आधुनिकता के दौर में ये जनजातियाँ आदिम संस्कृति के समकक्ष जंगली क्षेत्रों में निवास करती है। इनकी कला, संस्कृति खानपान, रीति–रिवाजों में आदिम संस्कृति के लक्षण परिलक्षित होते है। समय के परिवर्तन के साथ आदिवासियों के सांस्कृतिक चेतना परिवर्तित हुई है और आज भी उनमें अनेक परिवर्तन दृष्टिगोचर होते है।
शब्द कुंजी – जनजातियों की जीवन शैली।

प्रस्तावना – मानव समाज का एक विशिष्ट वर्ग **'जनजाति'** है। जनजाति मानव सभ्यता का प्रारम्भिक प्रतिनिधित्व करती है। उन आदिवासियों समुदायों को' जनजाति कहा जाता है, जो सांस्कृतिक दृष्टिकोण से सभ्य समाजों की तुलना में अत्यन्त पिछड़े रहते है।

डब्ल्यू. एच.आर. रिवर्स के अनुसार – आदिम जाति एक अत्यंन्त साधारण कोटि का एक सामाजिक समुह होता है। जिसके सदस्य एक साधारण भाषा बोलते है, उसकी एक शासन प्रणाली होती है तथा सामान्य उद्देश्यों की पूर्ति के लिए तथा युद्ध इत्यादि के स्थिति में एकता का प्रदर्शन करते है।

डी. एन. मजुमदार के अनुसार – 'जनजाति' परिवारों या परिवार के समुहों के संतुलन का नाम है। इसका एक सामान्य नाम होता है, यह एक ही भू–भाग में निवास करते है, एक ही भाषा बोलते है, और विवाह, उद्योग तथा व्यवसाय में एक ही बात को निषिद्ध मानते है। एक–दूसरे के साथ व्यवहार संबध में इन्होंने पुराने अनुभवों के आधार पर कुछ निश्चित नियम बना लिये है।

जनजाति की विशेषताएँ :-

1. सामान्य भाषा 2. एक नाम 3. निश्चित भू–भाग
4. सामान्य संस्कृति 5. परिवारों का एक समूह 6. आर्थिक आत्म निर्भरता
7.नातेदारी का महत्व 8. अन्तरविवाही समूह 9. हम की भावना
10. राजनीतिक संगठन 11. सामान्य निषेध

मध्यप्रदेश में प्रमुख जनजातियां निम्न है – माड़िया, बैगा, भील, कमार , ओराव (उरावं), कोल, भारिया, साटिया, धानुक, धुरवा, पांडो, सहारिया, घसिया, गुड़ा, पनिका, सौर, कोलम, परंजा, खोड़, गदवा, बसोड़, खेरवार, भिलाला, कोरकू, बेड़िया, और कंजर।

माड़िया– माड़िया जनजाति जो कि मेना, कोरतोर तथा माड़िया के नाम से भी सुप्रसिद्ध है। बस्तर जिले के अबुझमाड़ क्षेत्र में नारायणपुर, बीजापुर, दतेंवाड़ा, आदि तहसीलों में निवास करती है। माड़िया जनजाति पुरूष प्रधान है तथा स्त्रियों को धार्मिक तथा सम्पत्ति कार्यो में भाग लेना वर्जित है। सगोत्रीय विवाह मान्य है। नियोग, छोटी बहन के साथ सम्बंध सेवा विवाह, अपहरण (राक्षस विवाह) प्रचलित है। ग्राम माता रेकमाधिया माड़िया जनजाति के प्रमुख देवता है। जनजाति के युवक युवतियां **घोटुल प्रथा** से विवाह करते है। जनजाति जो अबुझमाड़ क्षेत्र में निवासरत है, परगनों में बटी है। एक गॉव में एक ही गोत्र के व्यक्ति निवास करते है। ग्राम का प्रशासनिक कार्य जनजाति के लोग ही गॉव प्रमुख मांझी के अंतर्गत करते है। समाजशास्त्री माडिया जनजाति के गोंड जनजाति की एक उपशाखा मानते है। भेंसों के सींग को लगाकर नृत्य करने के कारण इन्हें वाइसन हार्न मीडिया भी कहते है। मछली, सुपर मुर्गी का शिकार करते है। चामेल, नगरका, कसरा, साड़िया, पराशेट, प्रमुख फसले है। ये लोग हलों से खेती न करके फावड़ों से कृषि करते है। प्रमुख शारीरिक विशेषताएं मुँह चौड़ा, होठ मोटे एवं नाक चपटी होती है। खेती में झूम पद्धति प्रचलित है। जिस पर सरकार द्वारा प्रतिबंध लगाया जा रहा है। माडिया जनजाति की भाषा गौंडी तथा हल्बी है।

बैगा – बैगा आदिवासी मध्यप्रदेश के जिलों– मंडला, शहडोल एवं बालाघाट में पाये जाते है। बैगा मध्यप्रदेश के मुल आदिवासी भी कहे जा सकते है। बैगाा शब्द अनेकार्थी है, बैगा उस जाति विशेष के सूचक है साथ ही अधिकांश मध्यप्रदेश में गुनिया और ओझा का भी पर्याय है। मंडला में बैगाओं का एक छोटा समूह बरिया बैगा कहलाता बिसवार प्रजाति के लोग जो महासमुद्र तहसील में रहते है, उच्च वर्ग के माने जाते है। बैंगा साल के वृक्षों पर निवास करते है, खेतों में हल का प्रयोग न कर वरन कुल्हाड़ी का प्रयोग करते है। झूम कृषि प्रचलित है। ये जंगल पर अपना पैतृक अधिकार मानते है। तथा धनुषबाण विद्या में पारंगत होते है। सगोत्रीय विवाह वर्जित है। बाल विवाह नहीं होते लेकिन विधवा विवाह प्रचलित है। वधुकल्प को समाज में मान्यता प्राप्त है। विवाह का प्रस्ताव लड़की पक्ष की तरफ से होता है। बूढादेव जो कि साल वृक्ष पर निवास करते है, प्रमुख देवता तथा दूल्हादेव ठाकुरदेव डाल देवता है, जिन्हें मदिरा, मुर्गे, नारियल चढ़ाई जाती है। सर्प फण भी प्रचलित है। बैगों की कोई भाषा नहीं है तथा आर्थिक और सामाजिक पक्ष से ये पिछड़े हुए है। बैगा आदिवासियों की मुख्य 7 शाखा है, जो क्रमशः बिझवार, भारोटिया, नरोटिया(या नाहर), रायमैना, कठमैना, कोंडमान, या कुंडी, गोंड वैना नाम से पुकारे जाते है। जंगली जानवरों का आखेट और मछली मारने बैगा युवकों का प्रिय मनोरजंन है।

गोड़ – मध्यप्रदेश के गोंड लगभग सभी जिलों में निवास करती है। गोंड मुलतः तेलगु द्रविड भाषा का शब्द है, जो कोण्ड का अपभ्रंश है। जबलपुर

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

मण्डला, बैतूल, छिंदंवाड़ा में निवासरत है तथा भारत की प्रमुख तथा सबसे बड़ी जनजाति है। गोडों का ऐतिहासिक महत्व भी रहा है। दुर्गावती के नेतृत्व में यह मुगलों से लड़े तथा मराठों से लोहा लिया। इनके किले जबलपुर, बैतुल, छिंदंवाड़ा, में दृष्टव्य है। गोड़ी, डोरली,(द्रविड परिवार की भाषा), हल्वी, भरती, भाषाए गौड प्रजाति में बोली जाती है। गोंडो का रंग पूर्णत: काला, कद छोटा, नाक चपटी, होती है। ये नीमों की तरह दिखते है। दूल्हादेव, प्रमुख देवता तथा बूढ़ादेव, नागदेव, नारायण ढेव, अथ देवता है। बहुविवाह, विधवा विवाह तथा वधुक्रय की प्रथा मान्य है। धुरवा डागरिया राजगोंड इनके प्रमुख वर्ग है। ये शवदाह संस्कार को स्वीकार करते है। इनका प्रमुख व्यवसाय कृषि है। ये छापामार पर विश्वास करते है।

भील – भील जनजाति जो कि मध्यप्रदेश एवं पश्चिमी राजस्थान में निवास करती है। मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले की प्रमुख जनजाति भीलों में सगोत्रीय विवाह प्रथा नहीं है तथा विधवा विवाह, वधु मूल्य प्रथा मान्यता प्राप्त है। राजपंथा प्रमुख देवता है तथा सर्प की पूजा भी प्रचलित है । पहाड़ , वन पानी के अलग-अलग देवता है। भिलाला जो कि भीली का एक जाति वर्ग है राजस्थानी राजपुतों से वैवाहिक संबध के कारण उसकी उत्पत्ति मानी जाती। भीलों की भाषा पर गुजराती, मराठी, राजस्थानी प्रभाव तथा वेशभूषा पर राजस्थानी प्रभाव देखा जा सकता है। भील गोमांसी प्रिय होते है तथा मध्यकाल में औरंगजेब के प्रभाव स्वरूप मुस्लिम धर्म अपना लिया तथा नदवी मुसलमान कहलाने लगे। संगीत प्रिय तथा तलवार धारिया और धनुषबाण प्रिय भील छापामार पद्धति में विश्वास रखते है। भील के गाँव घर दूर-दूर होते है तथा भीलों के घर में खिड़की नहीं होती। कृषि इनका प्रमुख व्यवसाय है।

भगोरिया भीलों का सबसे बड़ा पावन और पुरातन प्रण्य-पर्व है। जिसमें इनके आह्लाद, उमंग, उन्माद, व प्रेमानुभूति की उन्मुक्त अभिव्यक्ति होती है। होली के एक सप्ताह पूर्व एक विशेष मेलें के रूप में भगोरिया हाट की शुरूवात होती है, भगोरिया मेले में भील युवक-युवतियाँ खूब सज-धजकर नये-नये कपड़े पहनकर, बड़े-बड़े ढोल नगाड़े लेकर आते है। होली का पर्व भीलों के नाच-गाने मौज-मस्ती का एक सर्वोत्तम पर्व है। ऋतुराज बंसत का आह्रान इनमें असीम उन्माद आह्राद जागृत कर थिरकने को मजबूर कर देता है।

कमार – गौड़ों की एक उपजाति जो रायपुर जिले में निवास करती है। जनजातियों की संख्या की मात्रा में सबसे कम है। लोहारी पेशा वर्जित होने के कारण लकड़ी तथा बांस की पारम्परिक वस्तुओं को बनाते है। बुधराजिया तथा मकसद इनके दो वर्ग है तथा मकादिया को बन्दर का मांस प्रिय होने के कारण जाति में निम्न अवस्था को माना जाता है। दूल्हादेव तथा देवी की पूजा करते है। ये शिकारी भी होते है तथा कृषि मजदूर भी होते है।

ओरावं (उरांव)– मध्यप्रदेश से बिहार (छोटा नागपुर) तक फैली द्रविण जनजाति ओराव, रायगढ़ , सरगुजा, बिलासपुर में मिलती है। कुरत्व, खुड़ा घागंड़ा धनका , किसान नाम से प्रसिद्ध ओरावं मुस्लिम आक्रमणों के फलस्वरूप राजमहल तथा सोम नदी के सहारे दक्षिण में जा बसे। सामाजिक संगठन में गण चिन्हों तथा नृत्य के लिए प्रसिद्ध ओराव घरमा की पूजा करते है तथा सरहज, करमा इनका प्रमुख त्यौहार है। शारीरिक विशेषतओं में होठं मोटे तथा जबड़े निकले हुए, छोटा कद गहरे भूरे या काले रंग के लम्बे बाल होते है। यह हल से खेती करते है। ओरांव परिवार पिता के वंशक्रम तथा पति के स्थानिक क्रम में होते है।

कोल – रीवा, शहडोल, सतना, सीधी जबलपुर में पाये जाने वाले तथा उत्तरप्रदेश तक फैले कोल मंडारी तथा कोल वर्ग में आते है। शबरी को माँ स्वीकारने वाले कृष्ण तथा शिव को भी मानते है। रौनिया तथा रौतेले, दशौरा, थाकुरिया, कगवारिया, इनके उपवर्ग है। पर्दाप्रथा का अभाव, विधवा तथा बहुविवाह प्रचलित है।

भारिया –छिंदंवाड़ा, जबलपुर तथा बिलासपुर में रहने वाले तथा प्रजातांत्रिक सामाजिक संगठन लिए हुए भारिया सांप तथा वाद्य की पूजा करते है तथा भीमसेन इनके प्रमुख देवता है।

सारिया – मालवा की यायावर प्रजाति विवाह का कोई निश्चित सिद्धावन को न स्वीकारते , मांसाहारी , ऐशोआराम प्रिय बाजार में बैलों का प्रमुख व्यापार करते।

धानुक – संस्कृत के धनुष्क शब्द से उद्भव धानुक शब्द जिसका शाब्दिक अर्थ धनुष रखना, कविप्रधान अर्थव्यवस्था आदि विशेषता लिए हुए धानुक प्रजाति भिण्ड, मुरैना, उज्जैन, रतलाम, इन्दौर , झाबुआ, पानिया, सतना, में पायी जाती है।

धुरवा – सरगुजा, बालाघाट और बस्तर जिले में निवासरत धुरवा प्रजाति के लोग, माई दुंतेश्वरी इनकी आराध्य देवी है। बूढ़ादेव भैरवदेव, मंगा, रामदेव इनके प्रमुख देवता है। बाल विवाह वर्जित बहुपत्नि प्रथा इनमें प्रचलित है। मनोरंजन का मुख्य साधन नृत्य व गायन है।

पांडों – सरगुजा जिले में निवासरत पांडों की प्रमुख भाषा पांडो है। नवाखाई करमा, दंसई प्रमुख त्यौहार तथा दूल्हादेव, माईमाता, कंठीदाई प्रमुख देवता है। विवाह के लिए लड़के-लड़कियों की आयु 10-12 साल आवश्यक है।

सहारिया – मुरैना, गुना, शिवपुरी जिले में निवासरत तथा प्राकृतिक औषधियों के उपयोग पहचान करने में दक्ष सहारिया प्रजाति के लोगों की प्रमुख देवी दुर्गा है तथा हिन्दु देवी देवताओं की पूजा करते है।

धसियान – उड़ीसा , मध्यभारत में निवासरत धसिया प्रजाति में समान गोत्र विवाह वर्जित है। भाई बहनों की संतानों के बीच विवाह संबध मान्य है। कबीरपंथ स्वीकारने वाले अपने पंथ से बाहर विवाह करते है। दूल्हादेव प्रजाति के प्रमुख देवता है, जिनका निवास स्थान चूल्हे के पास माना गया हैं। इनका प्रमुख त्यौहार कर्मा है।

मुंडा – यह प्रजाति सरगुजा, रायपुर, बस्ती रायगढ़ में निवास करती है। प्रमुख व्यवसाय कृषि है । यह अन्तरजातीय विवाह के घोर विरोधी है तथा ऐतिहासिक मान्यतानुसार सर्पिलकार पगड़ी पहनते है।

पनिका – यह प्रजाति शहडोल तथा सीधी में निवास करती है। महिलायें श्रृंगार की शौकीन है, व्यवसाय कृषि है, प्रमुख मामले पंचायत द्वारा निपटा लिये जाते है। ये प्रजाति दो वर्गो मे बंटी होती है। कबीर पंथी और साकत प्रमुख देवी देवता हनुमान, इन्द्र, दूल्हादेव, बूढ़ीमाता, मरहीमाता, हुल्कीमाई आदि है।

सौर – यह प्रजाति छत्तीसगढ़, बुदेलखण्ड, दमोह, सागर, में पायी जाती है। सौर प्रजाति में विवाह वयस्क अवस्था में होता है लेकिन हिन्दू जाति के निकटता के परिणामस्वरूप विवाह कम उम्र में भी हो जाता है। इनके प्रमुख देवता भवानी, जिसका दूसरा नाम दूल्हादेव भी है।

कोलम – प्रमुखत: बस्तर की जनजाति कोलम कृषि, पशुपालन पर आधारित है, यह हिन्दु देवता को पूजते है। विवाह में युवती अपहरण प्रचलित है। गॉव के मध्य में देवी की स्थापना की जाती है।

परजा – ये प्रजाति मुख्यत: बस्तर में निवास करती है । ये चार भागों में विभाजित है। बड़ा परजा, बंरग जोडिया परजा, खौड परजा। परजा प्रजाति की महिलाये श्रृंगार की शौकीन होती है। चावल इनका भोज्य है। दंतेश्वरी देवी, लांडी देवी, महापुरा देवता, डूमा देवता इनके देवी देवता है।

खांड – ये प्रजाति रायगढ़, रायपुर बस्ती जिलों में निवास करती है। कुछ खांड पहाड़ी तथा कुछ मैदानी भागों में निवास करते है। धरती माता इनकी आराध्य है।

गदवा – ये प्रजाति के लोग बस्तर जिले में निवासरत है। इनका प्रमुख व्यवसाय कृषि तथा पशुपालन है। इनमें कम विवाह तथा सेवा विवाह पाया जाता है। विवाह प्रथा जिसे 'टीका कहते है, प्रजाति में विद्यमान है। गदवा जनजाति के लोग करही माता तथा ठकुराली माता की पूजा करते है। गदवा जनजाति में कृषि में झूम पद्धति प्रचलित है।

बसोड़ – विभिन्न प्रकार के हस्तशिल्प तैयार करना तथा शादी, विवाह में बाजा बजाना और बसोड़ महिलायें गाँव में ढाई का काम करती है । एक ही गोत्र , प्रथम श्रेणी के रक्त संबधियों के बीच विवाह वर्जित है।

खेरवार – यह जनजाति सरगुजा, बिलासपुर, रायगढ़ में रहती है। खेरवार लोगों की आर्थिक जीवन पद्धति खेती तथा जंगली उत्पाद पर निर्भर है। जनजाति में पेठू विवाह, विनिमय विवाह , परीक्षा विवाह प्रचलित है। इनके प्रमुख देवी देवता सूर्य, चन्द्र, दूल्हादेव, गृहदेवी तथा बूढ़ी माता है।

भिलाला – यह प्रजाति पश्चिमी मध्यप्रदेश (विशेषतः विदिशा) तथा राजस्थान में निवास करती है। यह महाराणा प्रताप को अपना वंशज मानते है। राजस्थानी भाषा रीति रिवाज में दिखाई देता है। अनामदेवी इनकी प्रमुख देवी है। इस जनजाति में विनिमय विवाह प्रथा प्रचलित है।

कोरकू – यह छिंदवाड़ा, बैतुल, होशगांबाद, पूर्वी निमाड़ क्षेत्र में अधिक पायी जाती है। ये कृषि आधारित अर्थव्यवस्था पर आधारित है। प्रेम विवाह, दृढ़ विवाह, विधवा विवाह, अन्तरविवाह आदि इनमें प्रचलित है।

बेड़िया – इस जनजाति के लोग सांसी जनजाति से घनिष्ट रूप से संबधित है। इन जनजाति के प्रमुख आपराधिक प्रवृत्ति तथा महिला वेश्यावृत्ति के काम में संलग्न है, जिनमें तेजी से परिवर्तन हो रहा है। एक ही जाति में विवाह वर्जित है। ढाकफ इनके प्रमुख देवता है, जिनको ये सूपर की बली प्रमुख त्यौहारों पर देते है।

कंजर – ये तीन प्रमुख भागों में जाट, मुल्तानी, कुचवंदिया में बटे थे। कंजरों के प्रमुख देवता देवमाता है। कंजन विवाह में गोडेला (एक विशेष प्रकार की बरही) का विशेष महत्व है, जिसमें दूल्हा बैठकर दुल्हन के साथ जीवन भर रहने की प्रतिज्ञा करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नायडु, पी.आर. – भारत के आदिवासी विकास 2008, राधा पब्लिकेशन्स, की समस्याएँ दिल्ली,110002 पृ.क्रं 38,57,65 426–454
2. शुक्ल, डॉ. हीरालाल –आदिवासी संगीत 1986, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ भोपाल अकादमी, भोपाल ।
3. Swarankar, R.C. : Indian Tribes 1995, Published By Printwell, Jaipur 17,245
4. तिवारी, शिवकुमार : मध्यप्रदेश की जनजातियां2009, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ शर्मा, डॉ श्रीकमल अकादमी, पेज.न.80–122
5. सक्सेना, सुधीर – म.प्र. में आजादी की लड़ाई 2007, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ और आदिवासी अकादमी,
6. दिक्षित, डॉ. ध्रुव कुमार – समाजशास्त्र शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, इन्दौर, पृ.क्र. ..119 – 122
7. जैन, प्रो.श्री चन्द्र – आदिवासियों के बीच किताब घर गॉधी नगर नई दिल्ली, पृ.क्र. 17,18

****

अनुसूचित जनजातीय महिलाएँ एवं पंचायती राज (सतना जिले की अमरपाटन तहसील के संदर्भ में)

विनोद कुमार शेण्डे *

प्रस्तावना – महिलाएँ समाज के लगभग आधे भाग का प्रतिनिधित्व करती है। लेकिन उनकी अब तक की राजनीतिक सहभागिता के स्तर को देखा जाए तो वह लगभग नगण्य ही है। महिलाओं के राजनीति में सक्रिय न होने के कई मूलभूत कारण है। विशेष रुप से ग्रामीण संदर्भो में राजनीतिक सहभागिता ग्रामीण सामाजिक सरंचना के कारण ही संभव नहीं हो पाई है। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम में किए गए संविधानिक प्रावधानों के पश्चात् पंचायत राज व्यवस्थाओं में कुल स्थानों के एक तिहाई स्थान महिलाओं हेतु आरक्षित किये गये है। आरक्षण के इस प्रावधान में सामान्य वर्ग के साथ अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं पिछड़ा वर्ग की महिलाओं को उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षित स्थानों में से एक तिहाई स्थान प्रदान किये गये है।

आरक्षण के प्रावधान से अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातीय महिलाऐं जैसे पिछड़े वर्ग को प्रथम राजनीतिक शक्तियों का अवसर प्राप्त हुआ। 73वें संविधान संशोधन के बाद मध्यप्रदेश में पंचायतों का गठन 1994 में संपन्न हुआ था। हांलाकि 2 अक्टूबर 1959 में ही राजस्थान के नागौर जिले में सर्वप्रथम पंचायत राज व्यवस्था लागू की गई।

राजनीति में अनुसूचित जनजाति वर्ग की महिला प्रतिनिधि बिल्कुल भी नहीं थी, महिला प्रतिनिधि को महत्व में रखते हुए आरक्षण की व्यवस्था की गई। 'लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में 73वां संविधान संशोधन अधिनियम मील का पत्थर साबित हुआ है।' जिसमें देश के सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन में संतुलन आऐ। भारतीय संविधान के 73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1993 में एक नया भाग(9) उसके अंतर्गत 16 अनुच्छेद और 11वीं अनुसूची में 29 विषयों को जोड़ा गया है, जिसमें आरक्षण की व्यवस्था की गई है।

24 अप्रैल 1993 से 73वां संविधान संशोधन अधिनियम 1993 लागू किया गया। इस अधिनियम के द्वारा महिलाओं को पंचायती राज में एक तिहाई आरक्षण प्रदान किया गया। 74वां संविधान संशोधन नगरीय संस्थाओं में महिला भागीदारी के अवसर उपलब्ध करता है, परन्तु वर्तमान में पंचायतों में महिलाओं के लिए आरक्षण को 33 प्रतिशत के मौजूदा स्तर से बढ़ाकर 50 प्रतिशत करने के उद्देश्य से सरकार ने संविधान संशोधन विधेयक 26 नवम्बर 2009 को लोकसभा में पेश किया। पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण दिया गया।

भारत एक लोकतांत्रिक राष्ट्र है। लोकतांत्रिक पद्धति का मूल आधार सत्ता का विकेन्द्रीकरण है, अर्थात् लोकतंत्र उस अवस्था में ही सफल होगा जब देश के हर वर्ग एवं व्यक्ति को शासन में भागीदारी प्राप्त हो। देश की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विकास भी उसी स्थिति में पूर्ण माना जाएगा, जब सम्पूर्ण देश विकास की प्रक्रिया में भाग ले। विशेषकर समाज के कमजोर, उपेक्षित एवं निम्न वर्ग की शासन में भागीदारी आवश्यक है। इस उपेक्षित वर्ग में अनुसूचित जनजातीय महिलाओं का एक बड़ा हिस्सा है। **पंडित नेहरु के अनुसार 'किसी भी देश की प्रगति का मूल्यांकन उस देश की महिलाओं की स्थिति से लगाया जा सकता है।'**

उद्देश्य –

1. पंचायती राज व्यवस्था में अनुसूचित जनजातीय महिला प्रतिनिधियों का आर्थिक एवं शैक्षणिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. अनुसूचित जनजातीय महिला प्रतिनिधियों की राजनीतिक भागीदारी का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि –

अध्ययन का क्षेत्र – सतना जिले की अमरपाटन तहसील को चुना गया है।

अध्ययन का समग्र – अमरपाटन तहसील में उदद्देश्यपूर्ण चयन विधि से अनुसूचित जनजातीय की महिला प्रतिनिधियों को अध्ययन के समग्र के रुप में चुना गया है।

अध्ययन की इकाई – पंचायतों में अनुसूचित जनजातीय की एक महिला प्रतिनिधि परिवार को अध्ययन की इकाई के रुप में चुना गया है।

निदर्शन – उदद्देश्यपूर्ण निदर्शन प्रणाली के आधार पर 30 अनुसूचित जनजातीय महिला प्रतिनिधि परिवारों का चयन किया गया है।

समंक संकलन की विधि –

प्राथमिक समंक – साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन एवं समूह चर्चा के माध्यम से अनुसूचित जनजातीय महिला प्रतिनिधियों से जानकारी प्राप्त की गई।

द्वितीयक समंक – पत्र-पत्रिकाओं, सरकारी अभिलेख जनगणना पुस्तिका।

आकड़ों का मूल्यांकन –

तालिका क्र. 1

(महिला प्रतिनिधि) उत्तरदाताओं की शैक्षणिक स्थिति

क्र.	शैक्षणिक स्तर	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	निरक्षर (हस्ताक्षर)	04	13.4
2.	साक्षर (पढ़ना-लिखना)	08	26.6
3.	प्राइमरी	05	16.6
4.	मिडिल	04	13.4
5.	हाई स्कूल	04	13.4
6.	हायर सैकण्डरी	03	10.0
7.	स्नातक	02	6.6
	कुल योग	**30**	**100**

* शोधार्थी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि कुल महिला प्रतिनिधियों में 13.6 प्रतिशत निरक्षर, 26.6 प्रतिशत साक्षर, 16.6 प्रतिशत प्राइमरी, 13.4 प्रतिशत मिडिल, 13.4 प्रतिशत हाई स्कूल, 10 प्रतिशत हायर सेकेण्डरी तथा 6.6 प्रतिशत स्नातक पायी गयी।

तालिका क्र. 2

महिला उत्तरदाताओं की वार्षिक पारिवारिक आय संबंधी जानकारी

क्र.	आय(वार्षिक)	महिला उत्तरदाता की संख्या	प्रतिशत
1.	रू.10000 से कम	02	6.6
2.	रू.10000-15000	08	26.6
3.	रू.15000-20000	13	43.4
4.	रू. 20000-25000	07	23.4
	कुल योग	**30**	**100**

उपरोक्त तालिका से महिला उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति का पता चलता है जिसमें 15000-20000 आय प्राप्त करने वाले 43.4 प्रतिशत तथा 20000-25000 आय प्राप्त करने वाले 23.4 प्रतिशत, 10000-15000 आय प्राप्त करने वाले 26.6 प्रतिशत तथा 10000 से कम आय प्राप्त करने वाले 6.6 प्रतिशत है जो सबसे कम है।

तालिका क्र. 3

पंचायत की बैठकों की जानकारी

क्र.	विवरण	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	13	43.4
2.	नही	17	56.6
	कुल योग	**30**	**100**

उपरोक्त तालिका में 56.6 प्रतिशत उत्तरदाताओं का कहना है कि उनको जानकारी नहीं मिलती जिसका मुख्य कारण जागरुकता का अभाव है तथा कुछ आर्थिक स्थिति की वजह से गाँव से बाहर आजीविका कार्य हेतु बाहर चले जाने की वजह से भी है।

अत: उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में महिल पंचायत प्रतिनिधियों को बैठकों की जानकारी समय पर नहीं मिल पाती हैं।

तालिका क्र. 4

पंचायतों की बैठकों की सूचना प्राप्ति पर बैठकों में शामिल होने संबंधी जानकारी

क्र.	विवरण	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	14	46.6
2.	नही	16	53.4
	कुल योग	**30**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि बैठकों की सूचना प्राप्त होने पर भी 53.4 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे है, जो बैठक में नहीं जा पाते जिसका मुख्य कारण घर के कार्य से समय नही मिलता है या मजदूरी करने जाते है जिससे बैठक में जाने का समय ही नहीं मिल पाता है।

निष्कर्ष - उपर्युक्त शोध से यह निष्कर्ष निकलता है कि अनुसूचित जनजातीय महिलाओं की आर्थिक-सामाजिक व शैक्षणिक स्थिति ठीक नहीं जिस वजह से वे पंचायत की बैठक एवं उनसे प्राप्त होने वाली जानकारियों से वंछित रहते है वे अपने घर के काम एवं मेहनत-मजदूरी करने में ही लगे रहते है। उनकी शैक्षणिक स्थिति भी पिछड़ी हुई है जिससे वे खुलकर अपनी बात भी नही रख पाती है।

सुझाव -

1. अध्ययन क्षेत्र में पाया गया कि जनजातीय महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति कमजोर बनी है, जिसे दूर कर समाज की इन महिलाओं को आगे लाने का प्रयास किया जाना चाहिए।
2. ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायतों के माध्यम से महिलाओं में जागरुकता लाने हेतु उन्हें नियमित रुप से पत्र-पत्रिकाओं एवं संचार साधनों द्वारा जानकारी उपलब्ध कराना चाहिए ताकि वे अपने अधिकारों के प्रति जागरुक हो सके।
3. महिला नेतृत्व प्रमुखत: महिलाओं के द्वारा किया जाना चाहिए ताकि वह अपनी समस्याओं को खुलकर बता सके।
4. ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराया जाना चाहिए ताकि लोगों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हो सके।

   पंचायती राजव्यवस्था में विभिन्न स्तरों पर चुनाव लड़ने वाले प्रत्याशी के लिए न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता निर्धारित की जानी चाहिए जिससे वे निर्वाचित होने के बाद वह अपने पद से संबंधित दायित्व का निर्वहन सुचारु रुप से कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. निकुंज और प्रो. जे.के. जैन; 1965 'पंचायती राज व्यवस्था एक दृष्टिकोण,' निकुंज प्रकाशन बड़वानी मध्यप्रदेश।
2. मुखर्जी, रविन्द्रनाथ (1999) - 'सामाजिक शोध व सांख्यिकी' विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, नई दिल्ली।
3. श्रीवास्तव नीता (2003) 'भारतीय महिलाओ में राजनीतिक जागरूकता' प्रकाशन - डॉ. बाबा साहेब आम्बेडकर राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान संस्थान डॉ. अम्बेडकर नगर, महू।

****

आधुनिक समाज में बढ़ते हुए सायबर क्राइम एवं उनसे सावधान रहने के उपाय - एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. उमा लवानिया *

प्रस्तावना – आधुनिक समाज का स्वरूप एक विशेष प्रकार के अनुभव, एक विशेष प्रकार की संस्कृति से है। इसमें आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक गठबंधन होता है, जो इसे एक अलग पहचान देता है। आधुनिक समाज सदैव नये अविष्कारों में संलग्न रहता है। आधुनिकता की परिभाषा समाजशास्त्रियों ने विभिन्न संदर्भो में की है। रिटजर के अनुसार 'आधुनिकता एक ऐसा बेलगाम घोड़ा है जिसे किसी भी प्रकार नियंत्रण में रखना मुश्किल है, यह चाहे तो सटपट दौड़ कर हवा से बातें कर सकता है और चाहे तो अंधेरे कुंऐ में धकेल सकता है।' आधुनिकता एक बहु आयाम वाली आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक प्रक्रिया है। जो कि समाज के सदस्यों के सम्पूर्ण जीवन को एक नवीन रूप व अर्थ प्रदान करती है। आधुनिक समाज के पक्ष हैं–

- संचार माध्यमों का विकास
- शिक्षा के स्तर में वृद्धि
- नगरीकरण
- औद्योगिककरण
- पश्चिमीकरण
- लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था
- संयुक्त परिवार के स्थान पर एकाकी परिवार
- धर्म का घटता प्रभाव

इसलिए आधुनिक सामाजिक व्यवस्था में अपराधों ने जन्म ले लिया है। अपराध मानव का व्यवहार है किन्तु सभी मानव व्यवहार में अपराध नहीं है। सिर्फ वही मानव व्यवहार अपराध है, जो सामाजिक मूल्यों के प्रतिकूल है और जिनसे समाज को हानि होती है। मनुष्य के इस प्रकार के व्यवहार, जिनका संबंध अपराध से है सार्वभौमिक है। हर एक समाज में अपराध एवं अपराधी पाये जाते है, सही कारण है कि वर्तमान युग समस्याओं का युग माना जाता है। व्यक्ति समाज एवं देश के सम्मुख कई समस्याएं है। समाज एवं देश के प्रगति पथ पर आरूढ़ होने के साथ ही नित नई सामाजिक समस्याएं भी उत्पन्न होती जा रही है। भारतीय समाज इन दिनों कई ज्वलन्त समस्याओं से ग्रस्त है। इनमें आतंकवाद, उग्रवाद, निर्धनता, बेरोजगारी, क्षेत्रवाद, भ्रष्टाचार है। इन सभी समस्याओं के अतिरिक्त आधुनिक समाज की मुख्य समस्या सायबर क्राइम है, जो समाज को जड़ से खोखला करने में लगी हुई है।

सायबर क्राइम अपराध की श्रेणी में आता है जब किसी अपराध को करने के लिए सूचना एवं प्रौद्योगिकी या संचार के किसी साधन का उपयोग किया जाता है तो उसे सायबर क्राइम कहते है सायबर क्राइम के विभिन्न रूप हैं–

- मोबाइल द्वारा किसी को अनावश्यक परेशान करना
- मोबाइल द्वारा धमकी देना।
- इंटरनेट शॉपिंग के नाम पर धोखाधड़ी
- अश्लील एस.एम.एस. भेजना
- मोबाइल कैमरे का दुरूपयोग करना
- छिपकर तस्वीर खींचना व ब्लैकमेल करना
- किसी अन्य के इंटरनेट पासवर्ड को हैक करना
- ए.टी.एम. मशीन से छेड़छाड़ करना
- मोबाइल सिम कार्ड की डुप्लीकेट प्रति बनाना
- किसी महिला से संबंधित अश्लील सामग्री इंटरनेट पर डालना
- इंटरनेट से अश्लील फिल्मों को प्रसारित करना
- क्रेडिट या डेबिड कार्ड से धोखा धड़ी करना
- क्रेडिट कार्ड या डेविड कार्ड को चुराकर उससे खरीददारी करना।
- क्रेडिट कार्ड या खाते को हैक करना
- किसी की निजी सूचनाएं कट पेस्ट करना।
- वेबसाइट हैकिंग करना

इंटरनेट पर सायबर क्रिमिनल्स से बचकर रहें। इंटरनेट हम सबकी मदद करता है, पर इसका सावधानी से इस्तेमाल करें। इंटरनेट हम सबकी जिंदगी का अभिन्न अंग बन चुका है। हम संवाद, सूचनाओं की खोज और भुगतान के लिए इसका इस्तेमाल करने लगे है। जैसे–जैसे लोग इंटरनेट का इस्तेमाल कर रहे हैं, वैसे–वैसे कुछ आपराधिक तत्व भी इंटरनेट पर आपका धन हड़पने की कोशिश शुरू कर रहे हैं। ज्यादातर लोग इंटरनेट पर अपनी महत्वपूर्ण जानकारियां आसानी से शेयर कर देते हैं। इससे बचना चाहिए।

अगर आप इंटरनेट पर थोड़ी सावधानी रखें तो कई तरह के सायबर क्राइम से आसानी से बच सकते है। कई बार सायबर क्रिमिनल किसी मशहूर वेबसाइट या एप्प से मिलती–जुलती वेबसाइट या एप्प बना लेते है। ये वेबसाइट्स असली वेबसाइट जैसी होती है। बस इसके यू.आर.एल. में थोड़ा अंतर होता है, ये वेबसाइट्स लॉगइन आईडी और पासवर्ड डालने को कहती है अगर आप डिटेल डाल देते है, तो नकली वेबसाइट्स बनाने वाला इस जानकारी से आपके एकाउंट से एक्सेस कर सकता है। नकली बैंक वेबसाइट का पता लगाने का तरीका है कि ब्राउजर का एड्रेसबार ध्यान से देखकर पता करें कि कही इसमें कोई गड़बड़ तो नही हैं। वेबसाइट एड्रेस में नाम के पहले 'https'// होता है इसका अर्थ है कि साइट सिक्योर सर्टिफिकेट इस्तेमाल करती है।

की–लॉगर एक ऐसा सॉफ्टवेयर है, जिसे कम्प्यूटर पर इंस्टॉल करने के बाद कीबोर्ड पर होने वाले हर स्ट्रॉक को रिकार्ड कर सकते है। धोखेबाज

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

व्यक्ति आपके द्धारा प्रेस की गई कीज के पूरे लॉग को एक्सेस करके पता कर सकता है कि आप किस-किस वेबसाइट पर गए है और आपने कौन सा यूजर नेम व पासवर्ड इस्तेमाल किया है, इंटरनेट कैफे पर इनकी की-लॉगर्स को इंस्टॉल करके यूजर्स की महत्वपूर्ण जानकारियां प्राप्त की जा सकती है। अतः पब्लिक कम्प्यूटर पर यूजर नेम और पासवर्ड डालने से बचना चाहिए।

अगर इंटरनेट पर ऐसा प्रोडक्ट नजर आए जिसकी कीमत असल कीमत से बहुत ज्यादा कम हो तो सावधान हो जाएं। ऑनलाइन डिस्काउन्ट मिलते है पर मूल कीमत का 80 या 90 फीसदी डिस्कांउट मिल रहा हो तो सचेत हो जाए। कई बार इन डील्स के लिए एडवांस में पूरा पैसा मांग लिया जाता है। यह भी हो सकता है कि बेचा जा रहा प्रोडक्ट चोरी का हो या इम्पोर्ट किया गया है। इंटरनेट पर कोई प्रोडक्ट खरीदना है तो विक्रेता की आई.डी. प्रूफ की कॉपी जरूर लें।

फोन पर क्रेडिट कार्ड डिटेल के बारे में ज्यादातर बैंक अपने यूजर्स को सावधान करते है कि वे फोन कॉल पर कभी भी आपके क्रेडिट कार्ड की डिटेल्स नहीं मांगते है। अगर आपके पास बैंक से कॉल आया है और आपकी बैंक डिटेल्स मांगी जा रही है, तो सावधान हो जाएं। आपके साथ धोखाधड़ी भी हो सकती है। आपको फोन पर किसी के साथ भी क्रेडिट कार्ड या नेट बैंकिंग से जुड़ी जानकारियां शेयर नहीं करनी चाहिए क्योंकि भारत में सायबर क्राइम बहुत गंभीर किस्म के होते है और एक आम आदमी के लिए यह काफी कठिन है कि वह सायबर अपराधों का मुकाबला कर सके परन्तु सायबर सिक्योरिटी के क्षेत्र में सुधार को लेकर काम करने के लिए इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, कानपुर और बाम्बे एक्सचेंज ने एमओयू पर हस्ताक्षर किए है। इस समझौते के आधार पर आईआईटी कानपुर और बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज फाइनेंशियल मार्केट में सायबर सिक्योरिटी पर रिसर्च सायबर सिक्योरिटी से जुड़ी समस्याओं से निपटने के माहौल तैयार करना सायबर सिक्योरिटी को मजबूत करने के लिए नए टूल बनाने पर एक साथ काम करेगें तथा आईआईटी कानपुर बीएसई को ऑडिटिंग सिक्योरिटी आपरेषन के लिए गाइडलाइन बनाने में मदद करेगा। इस प्रकार सायबर क्राइम से हम आज के समाज को सुरक्षित करने में सफल हो सकेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अपराध शास्त्र- रीमा खत्री
2. औरत, अस्मिता और अपराध- डॉ. निशांत सिंह
3. आधुनिक समाजशास्त्रीय निबंध-एम.एन. सिंह
4. सामाजिक समस्याएं और अपराध-प्रो. आनंद प्रकाशसिंह वैशाली प्रसाद
5. पत्रिका- 11 अगस्त 2016
6. दैनिक भास्कर अगस्त 2016

****

मध्य प्रदेश के अलीराजपुर जिले में जनजातीय कृषक परिवारों का सिंचाई परियोजनाओं पर प्रभाव

डॉ. बी. एल. पाटीदार * कैलाश डावर **

शोध सारांश – हवा के पश्चात पानी ही एक ऐसा महत्वपूर्ण प्राकतिक संसाधन है, जिसके बिना दुनिया में किसी भी जीव की कल्पना करना भी संभव नही हैं। व्यक्ति के प्राय: सभी क्रियाकलापों में पानी का उपयोग किया जाता है, जिनमें पीने व अन्य घरेलू इस्तेमाल ,कृषि तथा उघोग आदि प्रमुख हैं। विगत वर्षो में अपेक्षाकृत कमी व अनियमित वर्षा, घटते वनों ,अधिक भू-जल दोहन एंव क्रिया -कलापों से पानी की उपलब्धता में विशेष कमी आयी हैं। विशेषकर गर्मी के मौसम में यह समस्या विकराल रूप से सामने आती है। ग्रामीण क्षेत्रों में रबी की फसलों की अनियंत्रित एंव अंधाधुन्ध सिंचाई के पश्चात पेयजल का कोई स्त्रोंत उपलब्ध नहीं रह पाता था कुएं ,बावड़ियों व तालाब दिसम्बर-जनवरी के माह में ही दम तोड़ने लगते है। मार्च -अप्रैल के माह में भूजल स्तर अत्यधिक नीचे उतर जाने के कारण हेण्डपम्पों एंव नलकूप भी जवाब दे जाते हैं।

अनियंत्रित एंव तीव्र गति से बढ़ती हुई आबादी और उसका जीवन चक्र रखने के लिये हमेशा प्रयासरत कृषि तथा उघोगों में भी पानी की जल खपत बढ़ने से आगामी वर्षो से जल की उपलब्धता में और भी कमी आने की संभावना है। उसी स्थिति में पानी के इस सीमित लेकिन बेशकीमती संसाधनों के संवर्धन एंव सरंक्षण हेतु हर संभव प्रयास किया जाना जरूरी हो गया हैं। पानी की जरूरत मानवीय क्रियाकलापों के सभी क्षेत्रों में उतनी ही आवश्यकता से होना साधनों के कुशल नियंत्रण और प्रबंधन की दिशा में एक और परेशानी है। जितना पानी हम जमीन सें खींचते है,उतना तो कम पानी हमें जमीन में लोटाना ही होगा। इसका अर्थ यह हुआ है कि जहॉ भी कुएं और खास कर नलकूप खोदे जायें वहॉ की जमीन में पानी के पुर्नभण्डारण की पर्याप्त व्यवस्था की जाये।अध्ययनों से ज्ञात होता है कि बारिश में गिरने वाले पानी के लगभग 60 प्रतिशत से अधिक भाग का हम वर्तमान में कोई इस्तेमाल ही नही कर पाते एंव समस्त पानी नदी ,नालों के माध्यम से समुद्र में चला जाता है। चूंकि यह पानी कुछ ही महीनों के कुछ ही दिनों (40-50 दिनों) के कुछ ही घण्टों में बरस के निकल जाता हैं, इसलिए हम इसका पूर्ण उपयोग नही कर पाते। अगर हम से कीमती पानी को हर कदम पर रोके और उसे इकट्ठा करें, तो सकंट के समय हमारे ही काम आ सकेगाा । असली चुनौति यह है कि इस पानी को हम वही उपयोग के लिए रोके जहॉ यह पानी गिरता है, अध्ययन क्षेत्र में जल संसाधन स्तर में गिरावट आ रही है। जिसका अध्ययन प्रस्तुत शोध कार्य में करने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. जल संवर्धन योजना से खरीफ एंव रबी फसलों के उत्पादकता एंव लागत में वृद्धि 1991-2011 का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. शासकीय योजनाओं के क्रियान्वयन एंव पंरपरागत कृषि करने में आने वाली समस्याओं का अध्ययन करना।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र का चयन मध्य प्रदेश के पश्चिम भाग में अलीराजपुर जिला स्थित है ।यह 17 मई 2008 को जिले के रूप में अस्तित्व में आया है।जिले की भौगोलिक स्थित 22°-35'उतरी अक्षांश से 74°-49'पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है एवं इसका कुल क्षेत्रफल 2,68,958 हेक्टेयर पर फैला हुआ है। चयनित जिले में जोबट, भाभरा , अलीराजपुर, कट्ठीवाड़ा, सोण्ड़वा तहसीलों का अध्ययन किया किया गया, जिले का अधिकांश भू- भाग उबड़-खाबड़ ,पहाड़ी एंव अनुपजाऊ है। जिले में कुलजनसंख्या 7,28,999 निवास करती है। 2011 की जनगणना के अनुसार जिले में कुल ग्रामीण अनुसुचित जनजातियाँ 6,27,835 निवास करती है।

विधि – अध्ययन का समग्र –जिला जनजातीय परिवारों का अध्ययन करना।

अध्ययन की इकाई – अनुसुचित जनजातीय परिवार।

निदर्षन – शोध प्रपत्र के लिए आदिवासी जनजातीय बहुल अलीराजपुर जिले की जोबट,भाभरा,कट्ठीवाड़ा,अलीराजपुर,सोण्ड़वा तहसीलों का चयन उद्देश्यपूर्ण दैव निदर्शन विधि द्वारा किया गया है। चयनित जिले में कुल 551 गाँव है उनमें से अध्ययन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रत्येक तहसील से 4-4 गाँवों का चयन किया गया ,कुल पॉच तहसीलों में से 20गावों के कुल 400 कृषक परिवारों का का चयन दैव निदर्शन विधि द्वारा किया गया है। ,अध्ययन क्षेत्र में कुल गॉवो में 6,48,638 लगभग जनजातिय परिवार निवास करते है।

शोध का महत्व :

1. प्रस्तुत शोध कार्य में जनजातियों के लिए शासन ने प्रति वर्ष अध्ययन क्षेत्र में करोड़ों रूपये खर्च करती है। लेकिन सिंचाई योजनाओं में कितनी राशि का सदुपयोग हुई है यह सिद्ध हो सकेंगा।
2. जनजातियों के आर्थिक विकास हेतु जल संसाधन संरक्षण योजनाओं में आने वाली कठिनाईयों का हल सिद्ध हो सकेगा।

तथ्यों का संकलन एवं प्रस्तुतीकरण – ऑकड़ों के स्त्रोत :

प्राथमिक ऑकड़ों – का संकलन चयनित ग्रामों एवं उत्तरदाताओं से साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से अवलोकन एवं समूह चर्चा, आवश्यक उपकरणों, जिसका निर्माण शोध कार्यो की आवश्यक सामग्री को मद्दे नजर रखते हुए जल संसाधन योजनाओं से लाभान्वित कृषकों द्वारा सूचना प्राप्त किये गये है।

द्वितीयक स्त्रोत – द्वितीयक ऑकड़ों का संकलन शोध विषय से संबंधित पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं, रिपोर्ट, जनगणना पुस्तिकाओं, जिला सांख्यिकी

* प्राध्यापक एंव विभागाध्यक्ष (भूगोल) अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, निवाड़ी, जिला - टीकमगढ़ (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (भूगोल) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

कार्यालय, पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग (राजीव गॉधी जलग्रहण क्षेत्र प्रबंधन मिशन) कृषि विभाग, जल संसाधन विभाग (सिंचाई विभाग) के माध्यम से संकलित किये गये है।

विश्लेषण सारांश- ऐसे गॉव जिनमें जल ग्रहण योजना 1991-2011 में फसल उत्पादन एंव लागत में एक स्थानिक कालिक विश्लेषण से 1991-2011 की खरीफ एंव रबी की फसलों में लागत और उत्पादन में आने वाले परिवर्तन को निम्न तालिकाओं से स्पष्ट किया गया है-

मक्का- हमारे देश एंव प्रदेश में मक्का का काफी विस्तार किया गया है।यह मैदानी ,पहाडी और पर्वतीय क्षेत्रों की उपज है। अध्ययन क्षेत्र में भी अधिकांश भू-भाग पहाडी और पर्वतीय क्षेत्रों का विस्तार है, अध्ययन क्षेत्र में आदिवासी जनजातियों की मुख्य खाद्यान्न फसल मक्का हैं। किसी भी क्षेत्र में भौतिक परिस्थितियों के अनुरूप फसल का उत्पादन होता है, जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 382225 हेक्टेयर (3822 वर्ग किलोमीटर) है ,2014-15 कि जिला सांख्यिकी पुस्तिका के अनुसार क्षेत्र में मक्का 33548 हेक्टेयर बोया गया था, उसमें से उत्पादकता 2050 किलो ग्राम/ हेक्टेयर उत्पादन प्राप्त हुआ ,अध्ययन क्षेत्र में अधिकांश सर्वेक्षित कृषक परिवार जो ग्रामीण क्षेत्र के अनुसूचित जनजाति के एंव निर्धन है। क्षेत्र में मक्का का उत्पादन व लागत का विवरण तालिका क्रंमाक 01 दर्शाया गया है।

तालिका क्रंमाक : 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका कृंमाक 01 से स्पष्ट होता है कुल मक्का 6,14,740 रूपये का उत्पादन हुआ था एंव लागत 67,610 रूपये लगी थी, जिसमें सबसे अधिक उत्पादन कट्ठीवाड़ा तहसील में 2,25,740 रूपये का हुआ था ,व लागत सबसे अधिक भाभरा में 16,590 रूपये लगी थी, जबकि सबसे कम उत्पादन सोण्डवा तहसील में 88,240 रूपये एंव लागत सबसे कम जोबट में 10,230 रूपये लगी थी। मक्का का उत्पादन 2011 में 8,46,920 रूपये का उत्पादन हुई थी एंव लागत 1,26,270 रूपये लगी थी, सबसे अधिक उत्पादन कट्ठीवाड़ा में 2,94,170 रूपये हुई था व अधिक लागत जोबट में 80,620 रूपये लगी थी , कम उत्पादन सोण्ड़वा में 1,12,680 रूपये एंव लागत कम सोण्ड़वा में 9,800 रूपये लगी थी। अत: निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते है कि क्षेत्र में कुल उत्पादन में वृद्धि 2,32,180 रूपये एंव लागत 81,120 रूपये की वृद्धि हुई ,उत्पादन बढ़ने के साथ-साथ लागत भी बढ़ती गयी है।

तालिका क्रंमाक : 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

उपरोक्त तालिका क्रमांक 02 से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में उड़द का उत्पादन योजना 1991 में 6,48,840 रूपये का हुआ था एंव लागत 52,042 रूपये लगी थी, अधिक जोबट में 1,54,340 रूपये का उत्पादन हुआ था ,व अधिक लागत भाभरा में 14,180 रूपये लगी थी ,जबकि कम उत्पादन अलीराजपुर में 1,08,340 रूपये एंव कम लागत जोबट में 6,826 रूपये लगी थी। 2011 में 8,59,590 रूपये का हुआ था एंव लागत 69,734 रूपये लगी थी, अधिक उत्पादन सोण्ड़वा में 2,09,400 रूपये का हुआ था ,व लागत अधिक सोण्ड़वा में 16,830 रूपये लगी थी ,जबकि कम उत्पादन जोबट में 1,34,300 रूपये एंव लागत कम जोबट में 9,689 रूपये लगी थी।अत: निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते है कि क्षेत्र में कुल उत्पादन में वृद्धि 2,50,830 रूपये एंव लागत 19,562 रूपये की वृद्धि हुई ,उड़द का उत्पादन बढ़ने के साथ-साथ लागत भी बढ़ती गयी है।

गेहूॅं - भारत में प्राचीनकाल से गेहूॅं की खेती की जाती है। मोहनजोदडो की खुदाई व सिन्धु नदी की घाटी में 3 हजार वर्ष पूर्व गेहूॅं मिला था। देश में खाद्यान्न चावल के बाद दूसरा स्थान आता है, गेहूॅं के लिये काली मिट्‌टी ,हल्की दोमट एंव चिकनी मिट्‌टी में पैदावर अच्छी होती हैं, समतल भूमि में गेहूॅं की खेती अच्छी होती है। अध्ययन क्षेत्र में अधिकांश भू-भाग पहाड़ी ,पर्वतीय और पठारी है। लेकिन फिर भी कुछ-कुछ क्षेत्र जहॉ समतल भूमि तथा काली मिटटी का विस्तार हैं वहॉ पर कृषकों द्धारा सिचांई करके गेहूॅं का उत्पादन किया जा रहा है। जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 382225 हेक्टेयर (3822 वर्ग किलोमीटर) है ,2014-15 कि जिला सांख्यिकी पुस्तिका के अनुसार जिले में गेहूॅं 21163 हेक्टेयर पर गेहूॅं बोया गया था, उसमें से उत्पादकता 2300 किलो ग्राम/ हेक्टेयर उत्पादन प्राप्त हुआ। गेहूॅं का उत्पादन व लागत का विवरण तालिका क्रंमाक 03 में दर्ग्या गया है।

तालिका क्रंमाक : 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका कृंमाक 03 से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में गेहूॅं का उत्पादन योजना 1991 में 10,81,911 रूपये का हुआ था एंव लागत 91,558 रूपये लगी थी, उत्पादन अधिक जोबट में 2,28,100 रूपये का हुआ था ,व लागत अधिक भाभरा में 23,847 रूपये लगी थी ,जबकि कम उत्पादन भाभरा में 2,09,400 रूपये एवं लागत कम कटठीवाड़ा में 13,461 रूपये लगी थी। गेहूॅं का उत्पादन योजना 2011 में 13,81,708 रूपये का हुआ था एंव लागत 1,18,695 रूपये लगी थी, उत्पादन अधिक जोबट में 3,18,608 रूपये का हुआ था ,व लागत अधिक कट्‌ठीवाड़ा में 26,740 रूपये लगी थी ,जबकि कम उत्पादन भाभरा में 2,46,100 रूपये एंव लागत सबसे कम भाभरा में 21,246 रूपये लगी थी।अत: निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते है कि क्षेत्र में कुल उत्पादन में वृद्धि 2,99,797 रूपये एंव लागत 32,339 रूपये की वृद्धि हुई गेहूॅं का उत्पादन बढ़ने के साथ-साथ लागत भी बढ़ती गयी है।

तालिका क्रंमाक : 04 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका कृंमाक 04 के विश्लेषण से ज्ञात होता हैं कि उचित मार्ग दर्शन में 15.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उत्तर दिया, प्रभावशाली लोगों के हस्तक्षेप में 16.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उत्तर दिया ,कर्मचारियों का असहयोग पूर्ण व्यवहार में 49.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उत्तर दिया तथा जल संग्रहण संरचनाओं का निमार्ण उचित स्थान पर न होना 18.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उत्तर दिया। अत: स्पष्ट है कि शासकीय योजना के क्रियान्वयन में उचित मार्ग दर्शन में 15.5 प्रतिशत तथा प्रभावशाली लोगों का हस्तक्षेप में 16.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उत्तर दिया जो कि बहुत कम है।

तालिका क्रंमाक : 05 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका कृंमाक 05 के विश्लेषण से ज्ञात होता हैं कि में 05 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उत्तर दिया, उत्पादन में कमी, 32.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उत्तर दिया लागत अधिक आती है तथा 51.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उत्तर दिया कि दोनों समस्याएं आती है। अत: स्पष्ट है कि पंरपरागत कृषि करने से उत्पादन में कमी आती हैं क्योंकि कि पंरपरागत कृषि से सम्बन्धी सिर्फ 15.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उत्तर दिया जो बहुत कम हैं।

निष्कर्ष- अध्ययन क्षेत्र में कई कृषकों के पास जलस्त्रोंत नहीं हैं, उनके यहां फसलों की उत्पादकता में कोई वृद्धि नही हुई, परन्तु जिनके यहां जल स्त्रोंत हैं उनके यहां यद्यपि सभी फसलों में लागत बढ़ी हैं परन्तु उसके अनुपात में उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है। यह वृद्धि रबी की फसलों में अधिक हुई। अलीराजपुर जिला, जो कि प्राकृतिक संसाधनों की कमी ,गरीबी और अशिक्षा के लिये जाना जाता है,आज विकास की दौड़ में अपनी अलग ही पहचान बना रहा है। कम वर्षा वाले आदिवासी जनजातिय क्षेत्रों में जल ग्रहण योजना लागू होने से क्षेत्र में लोगों के आर्थिक जीवन स्तर में किस प्रकार के बदलाव हो रहा है यह शोध का विषय है, अध्ययन से यह तथ्य भी सामने आया कि योजना क्रियान्वयन में आने वाले दोषों को दूर किया जाए तो मिलने वाले

लाभ और भी बढ़ सकते है।

यदि क्षेत्र में वर्षा जल का समुचित संग्रहण वर्षा ऋतु में कर लिया जाये तो रबी के मौसम में कुछ फसलें ली जा सकती हैं। जिससे जनजातिय परिवारों का पलायन रूकेगा तथा वे खेती को स्थायित्व देकर अपनी सामाजिक-आर्थिक स्थिति को मजबूत करेंगे।

1991 में जनजातिय कृषकों द्वारा वर्ष में अधिंकाश एक ही खरीफ की फसल लेते थे ,वे 2011 में दो या तीन रबी एंव जायद फसल भी लेने लगे। जो क्षेत्र में सकारात्मक बदलाव का संकेतक है। सिंचाई का प्रभाव फसलों के उत्पादन एंव लागत पर भी पड़ा हैं ,क्योंकि प्रतिहेक्टेयर उत्पादन बढ़ता है, तो लागत भी बढ़ती है, जो क्षेत्र में सकारात्मक बदलाव का संकेतक है। सिंचाई स्त्रोंत जैसे-कुएँ, तालाब एंव नलकूप के जल में भी वृद्धि हुई है। शैक्षणिक स्थिति में भी वृद्धि हुई है।

सुझाव :

1. क्षेत्र में कई कृषक आज भी पुरानी विधि कृषि करते एंव शासकीय योजना के बारे में भी अच्छी जानकारी नहीं है। इसका मुख्य कारण यह हैं कि क्षेत्र में अधिकांश कृषक आज भी अशिक्षित एंव गरीब है, अगर इन कृषकों को कृषि अधिकारियों एंव जल संसाधन विभाग के अधिकारियों द्वारा समय-समय पर प्रशिक्षिण दिया जाये तों भविष्य में कृषि उत्पादन में सकारात्मक वृद्धि एंव शासकीय योजना का लाभ गरीब कृषकों को मिल सकता है।
2. क्षेत्र में और भी छोटे-छोटे कृत्रिम बांध, तालाब,स्टापडेप, परकोंलेशन टेंक, बोरी बांध आदि की संख्या बढाई जाई, तो कृषकों को प्रति हेक्टेयर उत्पादन में वृद्धि हो सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश शासन (1994-96) मध्यप्रदेश में जल ग्रहण क्षेत्र प्रबंधन, पंचायत एंव ग्रामीण विकास विभाग,राजीव गांधी जलग्रहण क्षेत्र प्रबंधन मिशन ,विकास आयुक्त कार्यालय ,द्वितीय तल, विंध्याचल भवन, भोपाल, म.प्र.
2. तिवारी ,जे.एस. (2001) जल -संभर का साझा प्रबंधन ,योजना , सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार ,संसद मार्ग ,नई दिल्ली - 110001
3. तिवारी,रजनी (2000) सिंचाई एंव जल प्रबंधन पद्धतियों का विभिन्न फसलों में प्रयोग,जल संसाधन एंव पर्यावरणीय प्रबंधन सम्पादक।
4. शुक्ल,प्रवण कुमार (2000) जल संसाधन प्रबन्धन : मनकापुर विकासखण्ड का प्रतीक अध्ययन उत्तर भारत भूगोल परिषद,गोरखपुर ,उ. प्र. वोल्यूम 38 ,नं. 192 पृ. 16-21
5 . जैने ,पी.सी. (2000) 'जल संसाधन का महत्व और उसकी बुन्देलखण्ड क्षेत्र में अधिकतम उपयोगिता' 'जल संसाधन एंव पर्यावरणीय प्रबधंन' सम्पादक तिवारी आर. पी. एंव अवस्थी, एनकृपी.एच.पब्लिशिंग ,नई दिल्ली , पृ. 87-92

तालिका क्रंमाक : 01 - खरीफ कृषि क्षेत्र (मक्का) उत्पादन व लागत

क्रं.	तहसीलों के नाम	जल संर्वधन योजना 1991		जल संर्वधन योजना 2011		उत्पादन में अंतर	लागत में अन्तर
		उत्पादन (क्वि.) रू.में	लागत (क्वि.) रू.में	उत्पादन (क्वि.) रू.में	लागत (क्वि.) रू.में		
1.	जोबट	88,980	10,230	1,12,130	80,620	23,150	70,390
2.	कट्ठीवाड़ा	2,25,740	13,670	2,94,170	11,880	68,430	1,790
3.	भाभरा	1,23,450	16,590	2,10,680	13,790	87,230	2,800
4.	अलीराजपुर	88,330	12,980	1,17,260	10,180	28,930	2,800
5.	सोण्ड़वा	88,240	14,140	1,12,680	9,800	24,440	4,340
	कुल योग	6,14,740	67,610	8,46,920	1,26,270	2,32,180	81,120

स्त्रोत : शोधार्थी द्वारा क्षेत्र सर्वेक्षण , नवम्बर-दिसम्बर 2015

तालिका क्रंमाक : 02 - खरीफ कृषि क्षेत्र (उड़द)उत्पादन व लागत

क्रं.	तहसीलों के नाम	जल संर्वधन योजना 1991		जल संर्वधन योजना 2011		उत्पादन में अंतर	लागत में अन्तर
		उत्पादन (क्वि.) रू.में	लागत (क्वि.) रू.में	उत्पादन (क्वि.) रू.में	लागत (क्वि.) रू.में		
1.	जोबट	1,54,340	6,826	1,34,300	9,689	20,040	2,863
2.	कट्ठीवाड़ा	1,36,870	11,650	1,89,730	15,600	52,860	3,950
3.	भाभरा	1,19,500	14,180	1,70,180	13,245	50,680	935
4.	अलीराजपुर	1,08,340	10,546	1,55,980	14,370	47,640	3,824
5.	सोण्ड़वा	1,29,790	8,840	2,09,400	16,830	79,610	7,990
	कुल योग	6,48,840	52,042	8,59,590	69,734	2,50,830	19,562

स्त्रोत : शोधार्थी द्वारा क्षेत्र सर्वेक्षण , नवम्बर-दिसम्बर 2015

तालिका क्रंमाक : 03 – रबी कृषि क्षेत्र (गेहूं)उत्पादन व लागत

क्रं.	तहसीलों के नाम	जल संर्वधन योजना 1991		जल संर्वधन योजना 2011		उत्पादन में अंतर	लागत में अन्तर
		उत्पादन (क्वि.) रू.में	लागत (क्वि.) रू.में	उत्पादन(क्वि.) रू.में	लागत (क्वि.) रू.में		
1.	जोबट	2,28,100	13,461	3,18,608	22,630	90,508	9,169
2.	कट्ठीवाड़ा	2,09,611	16,120	2,60,900	26,740	51,289	10,620
3.	भाभरा	2,09,400	23,847	2,46,100	21,246	36,700	2,601
4.	अलीराजपुर	2,10,200	21,400	2,69,700	25,181	59,500	3,781
5.	सोण्ड़वा	2,24,600	16,730	2,86,400	22,898	61,800	6,168
	कुल योग	10,81,911	91,558	13,81,708	1,18,695	2,99,797	32,339

स्त्रोत : शोधार्थी द्वारा क्षेत्र सर्वेक्षण , नवम्बर–दिसम्बर 2015

तालिका क्रंमाक : 04 – सर्वेक्षित परिवारों में शासकीय योजनाओं के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याएं

क्रं	तहसीलें	उचित मार्ग दर्शन का अभाव		प्रभावशाली लोगों का हस्तक्षेप		कर्मचारियों का असहयोग पूर्ण व्यवहार		जल संग्रहण संरचनाओं का निमार्ण उचित स्थान पर न होना	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	जोबट	10	12.5	11	13.5	50	62.5	09	11.25
2.	भाभरा	12	15.0	13	16.25	39	48.75	16	20.0
3.	कट्ठीवाड़ा	14	17.5	16	20.0	35	43.75	15	18.75
4.	अलीराजपुर	11	13.75	12	15.0	38	47.5	19	23.75
5.	सोण्ड़वा	15	18.75	13	16.25	37	46.25	15	18.75
	कुल योग	62	15.5	65	16.5	199	49.5	74	18.5

स्त्रोत : शोधार्थी द्वारा क्षेत्र सर्वेक्षण , नवम्बर–दिसम्बर 2015

तालिका क्रंमाक : 05 – सर्वेक्षित परिवारों में पंरपरागत कृषि करने में आने वाली समस्याएं

क्र.	तहसीलों के नाम	उत्पादन में कमी		लागत अधिक		दोनों समस्याएं	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	जोबट	14	17.5	25	31.25	41	51.25
2.	भाभरा	12	15.0	28	35.0	40	50.0
3.	कट्ठीवाड़ा	11	13.75	22	27.5	47	58.75
4.	अलीराजपुर	15	18.75	27	33.75	38	47.5
5.	सोण्ड़वा	10	12.5	29	36.25	41	51.25
	कुल योग	62	15.5	131	32.75	207	51.75

स्त्रोत : शोधार्थी द्वारा क्षेत्र सर्वेक्षण , नवम्बर–दिसम्बर

****

डूँगरपुर जिले में जनजातियों की सामाजिक-सुविधाएँ एवं विकास (1981 से 2011) (एक भौगोलिक अध्ययन भू.अ.नि.वृ. के आधार पर)

गोविन्द लाल सरगड़ा *

प्रस्तावना – जनजाति या आदिवासी शब्द का विन्यास आदि अर्थात् पुरातन तथा वासी अर्थात 'रहने वाला' या 'निवासी' के रूप में माना जाता है। अँग्रेजी में इनको 'Tribe'कहा गया है, जो लेटिन भाषा के Tribus शब्द से बना हैं। रोमन एवं ग्रीक लोग राजनैतिक विभाजन और भौगोलिक क्षेत्रों के लिए प्रयुक्त करते हैं। वास्तव में यह शब्द ऐसे लोगों के लिए उपयुक्त है, जो नैसर्गिक जीवन जीते हैं। अफ्रीका, दक्षिणी एशिया, भारत और अन्य पिछड़े देशों में इनके लिए आदिवासी शब्द ही प्रयुक्त किया जाता है। इन जनजातियों को विभिन्न नामों से भी जाना जाता है। वन्य जाति, वनीय जाति, वनवासी, वनों के आश्रय में रहने वाले, पहाड़ी लोग, पहाड़ियों पर रहने वाले, आदिम जाति, प्रारम्भिक लोग, आदिवासी तथा कई स्थानीय नामों से भी इन्हें जाना जाता रहा है।

किसी भी क्षेत्र के विकास को गति प्रदान करने हेतु सामाजिक सुविधाओं का सम्यक नियोजन एक महती आवश्यकता है। विकास प्रक्रिया में सामाजिक उत्थान के साथ ही संस्थागत परिवर्तन भी महत्त्वपूर्ण होता है। इस माध्यम से सामाजिक सुविधाओं व पद्धतियों में परिणात्मक एवं गुणात्मक परिवर्तन लाकर क्षेत्र के सामूहिक व्यक्तित्व का विकास किया जा सकता है। इस दृष्टिकोण से अध्ययन क्षेत्र में सामाजिक अवस्थापनात्मक तत्वों की उपलब्धता तथा सामाजिक परिवर्तन का अध्ययन एवं विश्लेषण करके उपलब्ध सुविधाओं में अभिवृद्धि हेतु नियोजन एवं विकास ही शोध का प्रमुख उद्देश्य है। नयी संस्थाओं के निर्माण के साथ-साथ संस्थागत सुविधाओं के सदुपयोग हेतु जनसंख्या में जागरूकता, विकासपरक सामाजिक मूल्यों का विकास भी होता है। सामाजिक सेवाओं व सुविधाओं को क्षेत्र में सही रूप में विकेन्द्रित करके अर्थ तल के विकास एवं सांस्कृतिक उन्नयन हेतु एक निश्चित दिशा प्रदान की जा सकती है।

सम्पूर्ण विकास एवं नियोजन की प्रक्रिया में सामाजिक सेवाएं एवं सुविधाएं एक महत्त्वपूर्ण अंग के रूप में अपनी भूमिका का निर्वाहन करती है। इस सन्दर्भ में 'रोडीनेली' का विचार है कि यदि आर्थिक प्रगति के साथ ही समानता एवं सन्तुलन के उद्देश्य की प्राप्ति करनी है। तो सामाजिक सुविधाओं, सेवाओं, उत्पादन गतिविधियों एवं अवधात्मक तत्वों का तर्क संगत तथा उत्प्रेरक वितरण प्रमुख समस्या के रूप में उभरता है। सामाजिक तत्व- जनसंख्या वृद्धि, घनत्व, वितरण, जातिय संगठन, साक्षरता, शिक्षण संस्थान, शिक्षा तथा स्वास्थ्य सुविधाएं व उनका स्तर, सामाजिक विकास को गति प्रदान करने वाले ऐसे संसाधन है जो ठोस आधार प्रस्तुत करते हैं इनके माध्यम से ही सामाजिक स्तरों में उत्थान किया जा सकता है।

विलियम प्लोट्जर (1944) ने डूँगरपुर में भीलों का मानव शास्त्रीय अध्ययन किया है। 'ट्राइबल रिसर्च इन्स्टीट्यूट (1955)' द्वारा राजस्थान के भीलों पर एक लघु पुस्तिका प्रकाशित की गई। **बी.आर. चौहान** ने आदिवासियों के सांस्कृतिक इतिहास को स्पष्ट करने के लिए कबीलीकरण अवधारणा विकसित की तथा उन्होंने बताया कि राजपूतों से पूर्व, राज्य विभिन्न भागों में, जनजातियों के प्रभावी नियंत्रण में था।

पी.आर. व्यास (1991) में "Social Amenities and Regional Development" नामक शोध कार्य में राजस्थान के मेवाड़ क्षेत्र के प्रादेशिक विकास को सूक्ष्म स्तर पर सुनियोजित एवं संतुलित विकास के लिए विभिन्न स्तरों पर विभाजित कर प्रदेश के लिए व्यूह रचना प्रस्तुत की है।

नाज़िम मोहम्मद एवं **सिद्दीकी** (1996) ने "Social - Economics Characteristics of Omgrant and Non-Migrant Household in Kosi Plant, Bihar" नामक शीर्षक में अपना अध्ययन प्रस्तुत किया, जिसमें स्थानान्तरित एवं पूर्व में स्थायी रहने वाली जनसंख्या के सामाजिक-आर्थिक व्यवहार पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला गया। इस कार्य के अन्तर्गत बिहार के कोसी नदी के बेसिन की जनसंख्या को केन्द्र माना है।

अध्ययन क्षेत्र का भौगोलिक परिचय (Introduction of Geographical Study Area) - राजस्थान प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टिकोण से धनी प्रदेश की श्रेणी में आता है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के दृष्टिकोण से डूँगरपुर जिला राजस्थान के **'वागड प्रदेश'** का अंग रहा है, लेकिन सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथ्यों के आधार पर यह क्षेत्र सदैव पूर्णरूप से एक भौगोलिक इकाई के रूप में अपनी अलग पहचान बनाए हुए है तथा यह क्षेत्र **'वागड प्रदेश'** के नाम से जाना जाता है। डूँगरपुर जिला राजस्थान की अरावली पर्वत मालाओं के दक्षिणांचल में स्थित विस्तृत पहाड़ी भाग में बसा हुआ है। इसकी भौगोलिक स्थिति $23^{o}20'$ से $24^{o}01'$ उत्तरी अक्षांश और $73^{o}21'$ से $74^{o}23'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। इस जिले के उत्तर में उदयपुर जिले का विस्तार है तथा दक्षिण-पश्चिम में गुजरात राज्य की लम्बी सीमा रेखा लगभग 100 किलोमीटर है, जो प्रदेश की सीमा का निर्धारण करती है। पूर्व में बाँसवाड़ा जिला स्थित है। जिले की लम्बाई उत्तर से दक्षिण में 67.5 किलोमीटर तथा पूर्व से पश्चिम में 80 किलोमीटर है। इस जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 3855 वर्ग किलोमीटर है एवं क्षेत्रफल की दृष्टि से जिले का राज्य में 26वाँ स्थान है। अध्ययन क्षेत्र के दक्षिणी-पश्चिमी में 100 किलोमीटर लम्बी सीमा रेखा, जिसमें गुजरात के दो जिले साबरकांठा व पंचमहल आते हैं। इस आधार पर अध्ययन क्षेत्र का भौगोलिक दृष्टिकोण से ही नहीं अपितु सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, दृष्टिकोण से भी विशेष महत्त्व रखता है।

जिलें में खनिजों के भण्डार में भी अग्रणीय स्थान रखता है। भू-वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अध्ययन क्षेत्र प्री-केम्ब्रियन अरावली श्रृंखला का भाग हैं यहाँ के केन्द्रीय भाग में विशेष रूप से डूँगरपुर नगर के दक्षिण-पश्चिम क्षेत्र में क्वार्ट्ज की धारियों वाला स्लेट पत्थर प्रचुर मात्रा में पाया जाता हैं, साथ ही

* शोधार्थी (भूगोल) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

यहाँ एसबेस्टोस, क्रोमाईट, मेगनेटाइट और टेल्स (स्टीटाइट्स) के महत्त्वपूर्ण सम्भाव्य स्त्रोत के रूप में अल्ट्रा बेसिक में भी दिखाई पड़ती है। खनिजों में सोप स्टोन, एसबेस्टोस, बेरिस और फ्लोराइट मुख्य है। उच्चावच की दृष्टि से जिले का अधिकांश भाग 150 से 130 मीटर (औसत समुद्र तल से) ऊँचा है। इस प्रदेश में जिले की सर्वोच्च चोटी धनमाता स्थित है जो औसत समुद्र तल से 572 मीटर (1876 फीट) ऊँचा है। अन्य पहाड़िया अमीझरा (449 मीटर), डूंगरपुर मढार (424 मीटर), रीठड़ा (415 मीटर) इत्यादि स्थित है।

अध्ययन क्षेत्र के जनजातियों की सामाजिक विकास में नदियों का विशेष महत्त्व है। नदियों से न केवल सिंचाई सुविधा उपलब्ध होती है अपितु पीने का पानी, वृक्षारोपण, वन विकास, हरे-भरे मैदानी क्षेत्रों तथा आदिवासी क्षेत्रों के लिए कृषि उत्पादन के लिए उपजाऊ मिट्टी के विकास में भी सहायक होती है। अध्ययन क्षेत्र की नदियों के अपवाह क्षेत्र प्राचीन काल से ही बहुत परिवर्तन हुए है। क्षेत्र में वर्ष पर्यन्त बहने वाली नदियों में माही नदी, सोम नदी, तथा जाखम नदी है।

उद्देश्य (Objectives) – प्रस्तुत शोध कार्य के अन्तर्गत निम्नलिखित उद्देश्यों को आधार माना गया –

1. जनजाति प्रदेश की भौगोलिक विशेषताओं (जैसे धरातलीय स्वरूप, जल प्रवाह, मिट्टी आदि) की व्याख्या प्रस्तुत करना।
2. अध्ययन क्षेत्र की जनानांकीय संरचना (जैसे- जनसंख्या वितरण, वृद्धि, घनत्व, लिंगानुपात, साक्षरता, कार्यशील जनसंख्या आदि) की व्याख्या प्रस्तुत करना।
3. अध्ययन क्षेत्र की जनजातिय सामाजिक संरचना का अध्ययन प्रस्तुत करना।
4. जनजातियों की समस्याओं को प्रस्तुत करना।

अनुसंधान विधि (Research Methodology) - प्रस्तुत शोध कार्य में विवरणात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध विधियों का प्रयोग किया जायेगा। शोध के अन्तर्गत द्वितीयक सूचनाओं व आँकड़ों को आधार रूप में प्रयोग किया जायेगा। आँकड़ों के अन्तर्गत क्षेत्र की भौगोलिक, जनसंख्या, सामाजिक विकास से संबंधित सूचनाओं आदि की जानकारी हेतु जनगणना पुस्तिका 1981, 1991, 2001, 2011 जिला पुस्तिका, डूँगरपुर विषय से संबंधित प्रकाशित - अप्रकाशित पुस्तकें, समाचार पत्र-पत्रिकाएं इत्यादि को आधार बनाया गया।

जनांनाकीय विश्लेषण (Demographic Analysis) - डूंगरपुर में वर्ष 1981 में 6,82,445, 1991 में 8,74,549, 2001 में 11,07,643 तथा 2011 13,88,552 में थी जिले की साक्षरता दर 1981 में 17.19, 1991 में 20.67, 2001 में 36.93 तथा 2011 में 48.19 तथा लिंगानुपात राज्य के औसत से अधिक रहा है। डूंगरपुर जिला अनुसूचित जनजाति बाहुल्य क्षेत्र होने के कारण यहां पर लगभग 72 प्रतिशत जनसंख्या अनूसचित जनजाति की निवास करती है। इस कारण जिले की साक्षरता दर राज्य की साक्षरता दर से अति न्यून है। वर्ष 2011 के अनुसार जिलें में कुल 21 भू अभिलेख निरीक्षक वृत है।

सामाजिक विकास – जहाँ तक सामाजिक विकास का प्रश्न है, यह मूलत: आर्थिक विकास से जुड़ा है किन्तु विशिष्ट रूप में सामाजिक विकास, सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन करने, सामाजिक सेवाओं जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य और समाज कल्याण कार्यक्रमों को चलाने एवं सामाजिक न्याय व समानता को स्थापित करने से है। सामाजिक विकास एक व्यापक अवधारणा है, इसके अन्तर्गत न केवल आर्थिक अपितु सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक में होने वाले परिवर्तनों को शामिल किया जाता है। सामाजिक विकास विशेष तौर पर सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन करने, शिक्षा, स्वास्थ्य, समाज कल्याण कार्यक्रमों को चलाने, व सामाजिक न्याय एवं समानता को स्थापित करने में महत्वपूर्ण कारक है। सामाजिक विकास को कई कारक प्रभावित करते हैं किन्तु इन कारकों को नियन्त्रित रखते हुए विकास की ओर बढ़ा जा सकता है। जिससे विकास को नये आयामों पर पहुँचाया जा सकता है।

इस अध्याय में भू. अ. नि. वृत स्तर पर सामाजिक विकास के स्तरों का विश्लेषण किया है जिससें अध्ययन क्षेत्र में सामाजिक सुविधाओं के स्थानिक वितरण कि असमानता को देखा गया है। सामाजिक सुविधाओं के स्थानिक वितरण को मापने के लिए आवश्यक है कि विभिन्न सुविधाओं के शामिल किया जाये इसके लिए 20 सूचकों का एक संयुक्त सूचकांक बनाया। जो तुलनात्मक अध्ययन व विकास के ढ़ाँचे को समझने में आवश्यक है। सामाजिक विकास के सूचकांक के अन्तर्गत जनसंख्या कि विशेषताएँ, शिक्षा सुविधाएँ एवं स्वास्थ्य सुविधाएँ आदि के 11 सूचकों, शैक्षिक विकास के 5 सूचकों व स्वास्थ्य के 5 सूचकों अर्थात् कुल 21 सूचकों के आधार पर सामाजिक विकास सूचकांक ज्ञात किया है।

सारणी 1 से स्पष्ट होता है कि सामाजिक विकास स्तर सूचकांक भिन्नता पाई गई। सारणी के अनुसार अति उच्च इस वर्ग के अन्तर्गत डूँगरपुर (0.66), गणेशपुर (0.64) एवं आसपुर (0.57) भू.अ.नि. वृतों में पाया गया है। इस वर्ग में सामाजिक विकास स्तर उच्च होने का मुख्य जिला मुख्यालय, नगरीकरण, शिक्षा में वृद्धि एवं रोजगार के अवसर, सिंचाई सुविधा आदि उपलब्ध है। अति न्यूनतम स्तर के अन्तर्गत 7 भू. अभिलेख निरीक्षक वृत क्रमश: ठाकरड़ा, सरोढा, पाडवा, कुआँ, झोंतरी, देवलखास एवं चिखली आते हैं इनमें निम्न सामाजिक विकास का कारण जिला मुख्यालय से दूरी तथा उपजाऊ भूमि में कमी तथा साक्षरता दर में कमी पाया जाना है। मध्यम स्तर के अन्तर्गत चितरी, जोगपुर, बिच्छीवाड़ा, साबला एवं सागवाड़ा तथा न्यून स्तर के अन्तर्गत पीठ, गैंजी, आंतरी, थाना, धम्बोला एवं फलौज आदि को सम्मिलित किया गया है (सारणी 1 एवं मानचित्र 1)।

वर्ष 1991 में सामाजिक विकास स्तर सूचकांक के अनुसार अति उच्च इस वर्ग के अन्तर्गत आसपुर (0.76) भू.अ.नि. वृतों में पाया गया है तथा उच्च स्तर में , डूँगरपुर, गणेशपुर, सागवाड़ा, चितरी आदि पाये गये। इन वृत्तों में पिछले दशक के मुकाबले में विकास स्तर में वृद्धि पाई गई। अति न्यूनतम स्तर के अन्तर्गत 3 भू. अभिलेख निरीक्षक वृत क्रमश: देवलखास, कुआं एवं चिखली आते हैं इनमें निम्न सामाजिक विकास का कारण जनसंख्या में वृद्धि, जिला मुख्यालय से दूरी, उपजाऊ भूमि में कमी, जनजातिय जनसंख्या में बहुलता तथा शिक्षा के स्तर में अत्यधिक कमी पाया जाना है। मध्यम स्तर के अन्तर्गत फलौज, ठाकरड़ा, जोगपुर एवं धम्बोला भू-अभिलेख निरीक्षक वृत आते हैं। सर्वाधिक भू-अभिलेख निरीक्षक वृत के न्यून स्तर के अन्तर्गत पाये गये हैं जिनमें मुख्यत: आंतरी, थाना, गैंजी, बिच्छीवाड़ा, सरोढा, पाड़वा, पीठ, साबला एवं झोतरी को सम्मिलित किया गया है (सारणी 1 एवं मानचित्र 1इ)।

सारणी 1 एवं मानचित्र 1ब से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2001 में सामाजिक विकास स्तर सूचकांक के अनुसार अति उच्च इस वर्ग के अन्तर्गत डूँगरपुर (0.94), आसपुर (0.89), गणेशपुर (0.81) तथा धम्बोला (0.75) भू.अ.नि. वृतों में पाया गया है। इन चारों वृत्तों में पिछले दशक के मुकाबले में विकास स्तर में वृद्धि हो रही है। जिसका मुख्य कारण यहां जनजातिय

निवासियों द्वारा सरकारी योजनाओं के बारे में जागरूकता रखना तथा उससे होने वाले सम्पूर्ण लाभों को प्राप्त करना है। अति न्यूनतम स्तर के अन्तर्गत दो भू.अ.नि. वृत देवलखास तथा पाडवा है तथा एवं न्यून स्तर के अन्तर्गत 7 भू. अभिलेख निरीक्षक वृत पाये गये है। जो क्रमश: आंतरी, थाना, गैंजी, चिखली, सरौढा, कुआँ, ठाकरड़ा आदि को सम्मिलित किया गया है। उच्च स्तर के अन्तर्गत मात्र 3 भू-अभिलेख निरीक्षक वृत बिच्छीवाड़ा, जोगपुर एवं साबला तथा मध्यम स्तर के अन्तर्गत फलोज, झोंतरी, चितरी, पीठ एवं सागवाड़ा को सम्मिलित किया गया है।

वर्ष 2011 में सामाजिक विकास स्तर सूचकांक के अति उच्च इस वर्ग के अन्तर्गत डूँगरपुर (0.88), गणेशपुर एवं आसपुर (0.82), धम्बोला (0.79) एवं साबला (0.75) भू.अ.नि. वृतों में पाया गया है। पिछले दशक के मुकाबले में विकास स्तर में कमी आई है। अतिन्यून स्तर के अन्तर्गत एक मात्र वृत देवलखास पाया गया। जबकि मध्यम स्तर के अन्तर्गत चिखली, जोगपुर, फलोज, झोंतरी तथा उच्च स्तर में सागवाड़ा तथा न्यून स्तर में पाडवा, थाना, आंतरी, गैंजी, सरोढा, बिच्छीवाड़ा, चितरी, ठाकरडा एवं कुआँ को सम्मिलित किया गया (सारणी 1 एवं मानचित्र 1क)।

चार दशकों (1981-2011) के सामाजिक विकास स्तर सूचकांक सारणी 2 एवं मानचित्र 2 के अनुसार सामाजिक विकास के स्तरों में विभिन्ता पाई गई। सारणी के अनुसार अति उच्च इस वर्ग के अन्तर्गत भू. अ. नि. वृत डूँगरपुर, आसपुर एवं गणेशपुर को सम्मिलित किया गया है।

सारणी 1 - डूँगरपुर जिला -
सामाजिक विकास स्तर सूचकांक (1981-2011)

क्र.स.	भू.अ.नि.वृत	सामाजिक विकास सूचकांक मूल्य				
		1981	1991	2001	2011	औसत
1	डूँगरपुर	0.66	0.68	0.94	0.88	0.79
2	आंतरी	0.30	0.33	0.26	0.26	0.28
3	फलोज	0.38	0.47	0.42	0.44	0.43
4	देवलखास	0.19	0.13	0.12	0.15	0.15
5	थाना	0.34	0.21	0.27	0.23	0.25
6	गेंजी	0.22	0.32	0.27	0.27	0.27
7	बिच्छीवाड़ा	0.43	0.25	0.55	0.35	0.39
8	सागवाड़ा	0.47	0.57	0.54	0.57	0.54
9	जोगपुर	0.42	0.53	0.56	0.42	0.48
10	चितरी	0.39	0.56	0.51	0.37	0.46
11	ठाकरड़ा	0.02	0.42	0.33	0.38	0.29
12	सरोढा	0.09	0.29	0.30	0.33	0.25
13	पाड़वा	0.12	0.21	0.13	0.22	0.17
14	आसपुर	0.57	0.76	0.89	0.82	0.76
15	गणेशपुर	0.64	0.67	0.81	0.82	0.73
16	साबला	0.46	0.37	0.66	0.75	0.56
17	धम्बोला	0.35	0.44	0.75	0.79	0.58
18	पीठ	0.20	0.27	0.52	0.54	0.38
19	झोंतरी	0.17	0.23	0.46	0.50	0.34
20	कुआँ	0.16	0.09	0.31	0.38	0.23
21	चिखली	0.12	0.06	0.29	0.39	0.35
	Mean	0.33	0.36	0.47	0.47	0.41
	S.D.	0.14	0.17	0.22	0.22	0.18
	C.V.	42.42	47.22	46.81	46.81	3.90

स्रोत - गणना (Computed)

सारणी 2 - डूँगरपुर जिला -
सामाजिक विकास स्तर सूचकांक (1981-2011)

क्र.स.	स्तर	सूचकांक मूल्य	भू.अ.नि. वृत की संख्या	प्रतिशत
1.	अति उच्च	0.67 - 0.79	3	14.28
2.	उच्च	0.54 - 0.67	2	9.52
3.	मध्यम	0.41 - 0.54	4	19.04
4.	न्यून	0.28 - 0.41	5	23.80
5.	अति न्यून	0.15 - 0.28	7	33.32
	कुल		**21**	**100.00**

स्रोत - गणना (Computed)

अति न्यूनतम स्तर के अन्तर्गत 7 भू. अभिलेख निरीक्षक वृत क्रमश: आंतरी, देवलखास, थाना, गैंजी, सरोढा, पाडवा एवं कुआं आते हैं इनमें निम्न विकास दर का कारण जिला मुख्यालय से दूरी तथा पहाड़ी व उपजाऊ भूमि में कमी, सिंचाई सुविधाओं में तथा शिक्षा के स्तर में अत्यधिक कमी पाया जाना है। मध्यम स्तर के अन्तर्गत फलौज, सागवाड़ा, जोगपुर एवं चितरी भू-अभिलेख निरीक्षक वृत आते हैं। जबकि भू-अभिलेख निरीक्षक वृति न्यून स्तर में बिच्छीवाड़ा, ठाकरड़ा, पीठ, झोंतरी एवं चिखली आदि सम्मिलित है। जबकि उच्च स्तर के अन्तर्गत मात्र 3 भू-अभिलेख निरीक्षक वृत सागवाड़ा, साबला एवं धम्बोला सम्मिलित है (सारणी 2 एवं मानचित्र 2)।

निष्कर्ष - अध्ययन क्षेत्र में सामाजिक विकास को मापने के लिए 20 सूचकों का प्रयोग करके तीन सूचकांक जनसंख्या विकास, स्वास्थ्य विकास व शैक्षिक विकास के आधार पर विकास के स्तर को मापने के जिए पाँच वर्गीकरण - अति उच्च, उच्च, मध्यम, न्युन एवं अति न्युन किये गये। संयुक्त सामाजिक विकास के स्तर में डूँगरपुर भू. अ. नि. वृत कि स्थिति प्रथम रही तथा अन्तिम स्थान पर देवलखास भू. अ. नि. वृत बना रहा। जिसका कारण अनुसूचित जनजाति बाहुल्य क्षेत्र, निम्न साक्षरता दर, स्वास्थ्य सुविधाओं में कमी, शैक्षणिक संस्थानों का वितरण व कमी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Majumdar, 1958 : "Races and Cultures of India', Bombay : Asia Pub. House, p. 367.
2. Chouhan, B.R., 1970; "Towm in Tribal Setting', Banswara National Published House, New Delhi.
3. Vyas, P.R., 1991; "Social Amenities and Regional Development', Rawat Publication, Jaipur, p. 75-80.
4. Nazim, Mohd., and Siddiqui, 1996; "Social Economic Characteristics of Migrant and Non-Migrant House Holds in Kosi Plain, Bhiar', The Geographer, Vol. 43, No. 2, p. 55-67.
5. District Handbook Census, District Dungarpur 1981, 1991, 2001, 2011.
6. www.censusindia.gov.in
7. www.censusrajasthan.gov.in
8. www.dungarpur.nic.in

जिला डूँगरपुर : सामाजिक सुविधा सूचकांक भू-अभिलेख निरीक्षक वृत अनुसार (1981-2011)

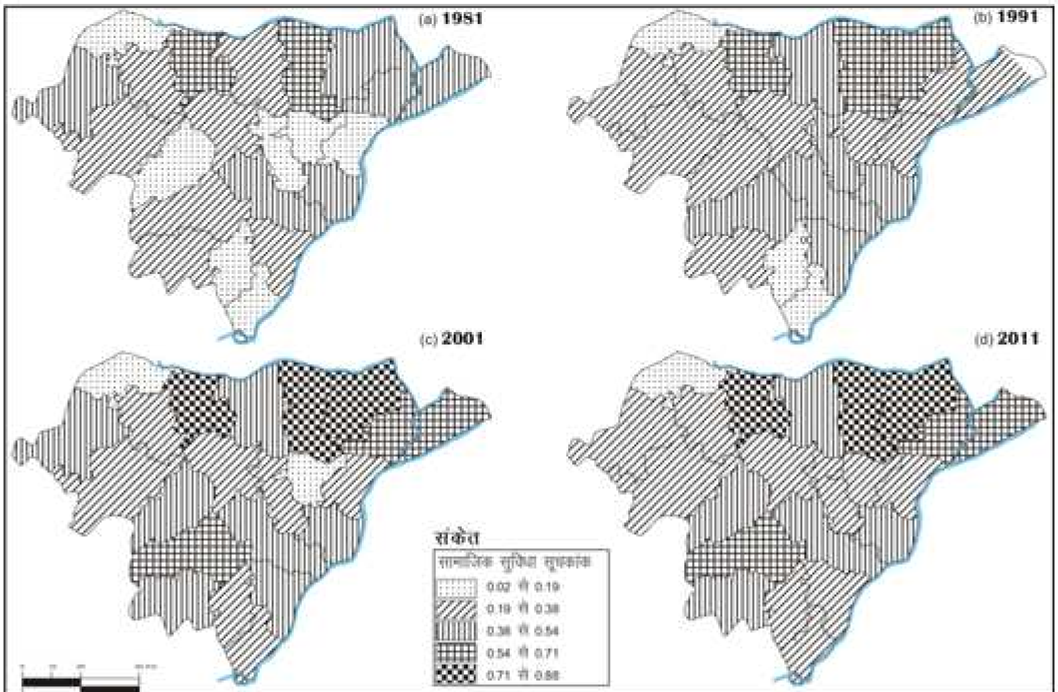

मानचित्र 1

जिला डूंगरपुर : सामाजिक विकास स्तर सूचकांक (1981-2011)

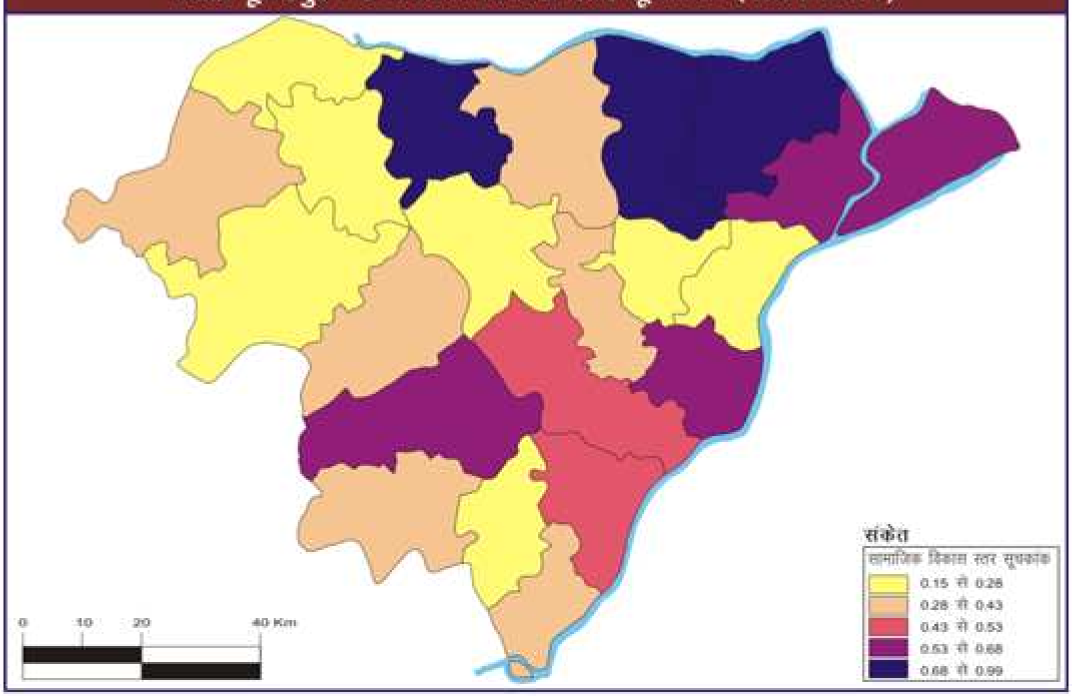

मानचित्र 2

****

मनरेगा - आत्माओं का कार्यस्थल (दमोह जिले की ग्राम पंचायत घटेरा के संदर्भ में)

डॉ. नीरज कुमार सोनी *

शोध सारांश – भारत में लागू एक रोजगार गारंटी योजना है, जिसे 25 अगस्त 2005 को विधान द्वारा अधिनियमित किया गया। यह योजना प्रत्येक वित्तीय वर्ष में किसी भी ग्रामीण परिवार के उन वयस्क सदस्यों को 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराती है जो प्रतिदिन 220 रुपए की सांविधिक न्यूनतम मजदूरी पर सार्वजनिक कार्य-सम्बंधित अकुशल मजदूरी करने के लिए तैयार हैं। 2010-11 वित्तीय वर्ष में इस योजना के लिए केंद्र सरकार का परिव्यय 40,100 करोड़ रुपए था।1

कुंजी शब्द–मृतात्माओं, सामाजिक ह्रास, विचारणीय तथ्य, संवेदनहीनता, मूल्यात्मक जिम्मेदारी।

प्रस्तावना –इस अधिनियम को ग्रामीण लोगों की क्रय शक्ति को बढ़ाने के उद्देश्य से शुरू किया गया था, मुख्य रूप से ग्रामीण भारत में रहने वाले लोगों के लिए अर्धा-कौशलपूर्ण या बिना कौशलपूर्ण कार्य, चाहे वे गरीबी रेखा से नीचे हों या ना हों। नियत कार्य बल का करीब एक तिहाई महिलाओं से निर्मित है। सरकार एक कॉल सेंटर खोलने की योजना बना रही है, जिसके शुरू होने पर शुल्क मुक्त नंबर 1800-345-22-44 पर संपर्क किया जा सकता है।[2]

शुरू में इसे राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (NREGA) कहा जाता था, लेकिन 2 अक्टूबर 2009 को इसका पुन: नामकरण महात्मा गाँधी रोजगार गारंटी एक्ट (MNREGA) किया गया।[3]

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी एक्ट 2005 – महात्मा गाँधी रोजगार गारंटी एक्ट 2006 विश्व की सबसे बड़ी रोजगार प्रदाता परियोजना का तमगा प्राप्त एक ऐसी परियोजना जिसमें रोजगार मजदूरी का विविध अधिकार आम जनता को है।

यह योजना 2 फरवरी सन् 2006 से भारत के कुछ चुने हुए जिलों (200 जिलों) में सफलतापूर्वक प्रारंभ होकर वर्ष एक अप्रैल 2008 से सम्पूर्ण भारत में लागू है। जो मजदूर संख्या व क्षेत्रीय विस्तार की दृष्टि से विश्व में प्रथम है। म.प्र. में इस परियोजना में 2.31 करोड़ मजदूर पंजीकृत है, जिन्हें वर्तमान (2015) तक 28.10 लाख करोड़ दिवस का रोजगार उपलब्ध कराया जा चुका है तथा दमोह जिले मे करोड़ों रुपए का भुगतान इस योजना के फलस्वरुप सामाजिक, आर्थिक तथा भौगोलिक विकास हेतु किया जा चुका है।

दमोह जिले में इस योजना का प्रारंभ 2006 से प्रारंभ किया गया परन्तु इस योजना का लाभ पूर्ण रुप से मजदूर वर्ग को नहीं हुआ वरन् यह परियोजना अपने भ्रष्टाचार व अनियंत्रित व्यवस्थापन के कारण मात्र शासकीय सेवकों के लिए व पंचायत प्रतिनिधियों की आय का साधन मात्र रह गयी।

कार्य – मनरेगा ग्रामीण विकास और रोजगार के दोहरे लक्ष्य को प्राप्त करता है। मनरेगा निम्न कार्य का उल्लेख करता है –

• जल संरक्षण और संचयन	• वनीकरण
• ग्रामीण संपर्क-तंत्र	• तटबंधों का निर्माण और मरम्मत
• नए टैंक, तालाबों की खुदाई, रिसाव टैंक और छोटे बांधों के निर्माण	• भूमि समतलव
• वृक्षारोपण जैसे कार्य	• बाढ़ नियंत्रण और सुरक्षाव

विषय चयन – मनरेगा एक विधियुक्त, व्यक्ति विकास में सहायक एवं देश के आधारभूत व आवश्यक विकास केन्द्रित परियोजना है, परन्तु इसके अनियंत्रित व्यवस्थायक) व अनियंत्रित क्रियान्वयन के फलस्वरुप यह परियोजना भ्रष्टाचार व सामाजिक ह्रास का कारण बनती जा रही है, जो कि आए दिन समाचार पत्रों की मुख्य खबर होती है।

क्षेत्र चयन – विभिन्न समाचार पत्रों व समाचार खबरों में मनरेगा में भ्रष्टाचार की बढ़ती समस्या से ध्यानाकर्षित होने पर शोधार्थी द्वारा दमोह जिले की जनपद पंचायत जबेरा की ग्राम पंचायत घटेरा के मजदूर परिवारों (जॉब कार्डधारी) का संक्षेप अध्ययन किया। यहां एक 10 प्रश्नों वाली प्रश्नावली के आधार पर सर्वे किया, जिसमें अधिकतम परिवारों की जानकारी संदेहास्पद पाई जाने पर शोध कार्य हेतु उक्त ग्राम पंचायत को चुना गया।

शोध विवरण सारणी 1.2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

सारणी 1.3– (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

विश्लेषण –उक्त अध्ययन में पाया गया कि ग्राम पंचायत कार्यालय से ऐसे व्यक्तियों को भुगतान किया गया जो या तो मृत थे या भुगतान के समय अक्रियाशील व शारीरिक कमजोर थे तथा कुछ मजदूर शासन (राज्य/केन्द्र) से तनख्वाह व मजदूरी एक साथ लेते थे, जो पूर्णत: भ्रष्टाचार व फर्जीवाड़े की ओर इशारा करते है।

सर्वे अनुसार अध्ययन किए गए मजदूरों में से 40 मजदूरों का विश्लेषण किया गया, जिसमें में से 42.5% मजदूरों का भुगतान फर्जी पाया गया, जबकि अन्य 50% मजदूरों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति को देखने पर मजदूरी संबंधी साक्ष्य भी संदेहास्पद पाये गये।

* भूगोल विभाग, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

इस प्रकार यदि अध्ययन में केवल उत्तर प्राप्त प्रश्नों को आधार माना जाए, तो 40 मजदूरों में से 6 (15%) मजदूरों को पूर्णत: फर्जी भुगतान किया जाना संभव है, जिसमें मृत व शासकीय कर्मचारी है। जबकि 7(17.5%) मजदूरों का जॉब कार्ड गलत फर्जी रुप से बनाकर भुगतान किया जाना पाया गया व इनका नाम ग्राम निर्वाचन पुस्तिका में नहीं है। इन्हीं फर्जी नामों में से बवलू,व पप्पू खान के फर्जी नाम पर इंदिरा आवास की राशि आहरित की गई है। जो फर्जीवाड़े का सबसे बड़ा कारनामा है व 4 (10%) पूर्ण निष्क्रिय वृद्धो को भुगतान किया जाना पाया गया।

शेष 20 (50%) मजदूरों में से कुछ आर्थिक रुप से सक्षम है, जिसमें अजीजा, फातिमा, शमीम, अनबर, राबिया, जौहरा, राम सींग, शमा, संजय आदि तथा ग्राम के अन्य जो शोध में शामिल नहीं है,जिसमें कृष्ण कुमार,जय कुमार, रहमान, दीपक जैन के नाम पर भी फर्जी भुगतान दर्शाया गया है, । अत: कुल अध्ययन किए गए 92.5% मजदूरी भुगतान भ्रष्टाचार से प्रभावित है।

इस प्रकार यह योजना मजदूरों को रोजगार उपलब्ध कराने में तो कम परन्तु भ्रष्टाचार और फर्जीवाड़े के रुप में ज्यादा विस्तार ले रही है, जिसका सीधा सा उदाहरण अध्ययन की गई यह ग्राम पंचायत की संवेदनहीनता तथा ऐसी अन्य ग्राम पंचायतें भी हो सकती है, जो शासकीय जिम्मेदारी व उत्तरदायित्व का मूल्यात्मक ह्रास सतत कर रही है।

निष्कर्ष – हम आज डिजिटल इंडिया, स्वच्छ इंडिया, उज्जवल भारत व भ्रष्टाचार रहित भारत के सपने देख रहे है, पर उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है, कि ग्राम पंचायत में एक सुनियोजित व भ्रामक जानकारी द्वारा मृत व निष्क्रिय वृद्धों तथा शासकीय कर्मचारी के साथ–साथ फर्जी जॉब कार्डो से शासकीय राशि का आहरण कर भ्रष्टाचार व फर्जीवाड़ा किया गया। यदि इस अध्ययन को सूक्ष्म रुप से किया जाता है, तो फर्जीवाड़े का प्रतिशत बढ़ सकता है। इसके साथ कुछ जिलों का मूल्यांकन व भुगतान भी संदिग्ध हो सकता है। अत: ऐसी पंचायतों की उच्च जांच व फर्जीवाड़ा पाये जाने पर उचित कार्यवाही कर भविष्य की योजनाओं के क्रियान्वयन को नियंत्रित किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. योजना पत्रिका - yojna.gov.in>hindi
2. www.nrega.nic.in
3. nrega-mp.org>districts
4. mnregaweb4.nic.in
5. www.damoh.nic.in

परिचय लिंक –

1. hhttp://www.nrega.nic.in/netnrega/home.aspx
2. hhttp://timesofindia.indiatimes.com/news/city/patna/CM-to-open-NREGA-call-centre-on-Oct14/articleshow/5077911.cms
3. hhttp://www.ptinews.com/news/310479_Union-cabinet-gives-NREGA-the-Mahatma-Gandhi-tag

शोध विवरण सारणी 1.2

क्र.सं.	जॉब कार्ड संख्या	मजदूर	स्थिति	भुगतान स्थिति
1	MP-11-006-006-001/154	स्व, जीवन	2006 के पूर्व मृत्यु	भुगतान किया गया।
2	MP-11-006-006-001/159	स्व, मुन्ना	2006 के पूर्व मृत्यु	भुगतान किया गया।
3	MP-11-006-006-001/120	स्व, इमरत	2006 के पूर्व मृत्यु	भुगतान किया गया।
4	MP-11-006-006-001/177	स्व, दुल्ली	2006 के पूर्व मृत्यु	भुगतान किया गया।
5	MP-11-006-006-001/388	रहीम	शासकीय कर्मचारी	भुगतान किया गया।
6	MP-11-006-006-001/367	आलम	शासकीय कर्मचारी	भुगतान किया गया।
7	MP-11-006-006-001/325	स्व,रुपरानी	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए। अक्रियाशील व शारीरिक कमजोर	भुगतान किया गया।
8	MP-11-006-006-001/393	स्व, नन्नी	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए। अक्रियाशील व शारीरिक कमजोर	भुगतान किया गया।
9	MP-11-006-006-001/325	स्व, चतुर सींग	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए। अक्रियाशील व शारीरिक कमजोर	भुगतान किया गया।
10	MP-11-006-006-001/181	जाहर	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए। अक्रियाशील व शारीरिक कमजोर	भुगतान किया गया।
11	MP-11-006-006-001/388	अजीजा	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
12	MP-11-006-006-001/264	मुन्नी	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।

13	MP-11-006-006-001/390	फातिमा	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
14	MP-11-006-006-001/393	शमीम	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
15	MP-11-006-006-001/393	अनबर	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
16	MP-11-006-006-001/393	राबिया	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
17	MP-11-006-006-001/159	जौहरा	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
18	MP-11-006-006-001/325	राम सींग	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
19	MP-11-006-006-001/325	सहोद्रा	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
20	MP-11-006-006-001/367	रामरानी	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
21	MP-11-006-006-001/273	संजय	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
22	MP-11-006-006-001/273	संजना	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
23	MP-11-006-006-001/52	शमा	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
24	MP-11-006-006-001/327	अशोक	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
25	MP-11-006-006-001/327	मीरा	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
26	MP-11-006-006-001/327	पंकज	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
27	MP-11-006-006-001/327	मुकेश	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
28	MP-11-006-006-001/328	उमेश	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
29	MP-11-006-006-001/367	सुनील	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
30	MP-11-006-006-001/73	हफीजा	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद पाए गए।	भुगतान किया गया।
31	MP-11-006-006-001/244	गुड्डू	फर्जी नाम	भुगतान किया गया।
32	MP-11-006-006-001/245	पप्पू खान	फर्जी नाम	भुगतान किया गया।
33	MP-11-006-006-001/226	बबलू	फर्जी नाम	भुगतान किया गया।
34	MP-11-006-006-001/160	भूरे	फर्जी नाम	भुगतान किया गया।
35	MP-11-006-006-001/388	सोनू	फर्जी नाम	भुगतान किया गया।
36	MP-11-006-006-001/388	मोनू	फर्जी नाम	भुगतान किया गया।
37	MP-11-006-006-001/390	मु.काले	फर्जी नाम	भुगतान किया गया।
38	MP-11-006-006-001/57	जीवन	सत्य पाये गये	भुगतान किया गया।
39	MP11-006-006-001/24	धरम	सत्य पाये गये	भुगतान किया गया।
40	MP11-006-006-001/74	भूपत	सत्य पाये गये	भुगतान किया गया।

सारणी 1.3– भुगतान स्थिति विवरण % में–

क्र. सं.	स्थिति	मजदूर संख्या	भ्रष्टाचार %	अन्य विवरण
1	2006 के पूर्व मृत्यु	04	10%	इन मजदूरों की मृत्यु योजना प्रारंभ होने के पूर्व होना बताया गया
2	शासकीय कर्मचारी	02	5%	इनमें एक मजदूर म.प्र. पुलिस में निरीक्षक तथा एक रेलवे में कार्यरत है
3	अक्रियाशील व शारीरिक कमजोर	04	10%	इनमें अधिकांश की उम्र 85 से अधिक व पूर्ण रुप से कमजोर मजदूर थे
4	मजदूरी संबंधी साक्ष्य संदेहास्पद	20	50%	इन मजदूरों की सामाजिक आर्थिक स्थिति अच्छी है व अन्य मजदूरों को रोजगार देने में सक्षम पाए गए
5	फर्जी नाम	07	17.5%	इस नाम से किसी मजदूर का निर्वाचन पत्र नहीं है। बबलू व पप्पू खान को फर्जी इंदिरा आवास की राशि भी दी गई
6	सामान्य	03	7.5%	इनका डाटा सत्य पाया गया
	कुल	40	92.5+7.5 = 100%	

****

नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रावधानों का वैयक्तिक अध्ययन - खरगोन जिले के सन्दर्भ में

डॉ. राजाराम आर्य *

शोध सारांश – सैद्धांतिक रूप से नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम में दो प्रावधान महत्वपूर्ण थे एक छात्र-शिक्षक अनुपात तथा दूसरा शिक्षक ट्यूशन नहीं करेंगे परन्तु इन दोनों ही प्रावधानों का क्रियान्वयन नहीं किया गया। सन् 2012 में आयोजित शिक्षक भर्ती परीक्षा उतीर्ण हजारों छात्र बेरोजगार घुम रहें है तथा आगामी परीक्षा का इन्तजार करते-करते दो वर्ष पूर्ण हो गये है ,वहीं सरकारी और गैर सरकारी स्कूल के शिक्षक बेखौफ ट्यूशन कर रहे है। कुछ प्रावधान केवल शिक्षकों पर पाबंदी लगाने के लिए ही बनाए गए जैसे छात्र को किसी भी प्रकार की गलती होने पर स्कूल से निष्कासित, अनुत्तीर्ण तथा दण्डित नहीं किया जा सकता। छात्रों को भयमुक्त करने हेतु प्राथमिक और माध्यमिक परीक्षा बोर्ड को समाप्त करना ये कुछ ऐसे नियम बनाये गये जिनके परिणाम विपरीत निकले। इस नियम का प्रभाव सबसे अधिक ग्रामीण क्षेत्रों पर पड़ा जिसमें अनुसूचित जाति , जनजाति और पिछड़ा वर्ग तथा निर्धन छात्र-छात्राएं अध्ययन करते है।शिक्षा की गुणवत्ता शिक्षक की योग्यता पर भी निर्भर करती है।

प्रस्तावना – किसी भी देश के सामाजिक-आर्थिक विकास के विभिन्न चरणों का संरचनात्मक स्वरूप जनसंख्या द्वारा ही निर्धारित होता है। जनसंख्या अपनी मात्रात्मक एवं गुणात्मक विशेषताओं के अनुसार किसी देश के लिये वरदान और अभिशाप दोनों है। जनसंख्या की स्थानिक,सामाजिक संरचना (लिंगानुपात,साक्षरता-शिक्षा,आयु धार्मिक भाषायी)आर्थिक और धार्मिक संरचना उसे एक संसाधन के रूप में विकसित करती है। विश्व में इसीलिए कुछ देशों में सीमित जनसंख्या ही असीमित संसाधन के रूप में है। इसके विपरित बहुत से देशों में इसकी अधिकता एक समस्या के रूप में है।

भूगोल के अन्तर्गत जनसंख्या का अध्ययन किसी भी देश के सामाजिक-आर्थिक तंत्र के प्रारम्भिक विकास और भावी प्रतिरूप के आकलन हेतु आवश्यक है,क्योंकि जनसंख्या अपने आप में एक महत्वपूर्ण संसाधन के साथ दूसरे संसाधनों के अविष्कार और उपयोग का कारण है।

उद्देश्य –

1. शैक्षणिक विकास में पाठ्यक्रम की भूमिका का अध्ययन करना।
2. सर्वशिक्षा अभियान के तहत लागू परीक्षा पद्धति का अध्ययन करना।
3. नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अध्ययन करना।

परिकल्पना – शिक्षा प्राप्त करना प्रत्येक व्यक्ति का संवैधानिक अधिकार है अत: संविधान निर्माताओं ने प्रत्येक व्यक्ति या समाज के 6 से 14 आयु वर्ग के बच्चों के लिए अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा का प्रावधान किया है। परन्तु संविधान लागू होने के 66 वर्षो के बावजूद हम इस लक्ष्य को अभी तक हासिल नहीं कर पाए है। अत: यह शोध का विषय है।

अध्ययन विधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए प्रतिदर्श सर्वे कर प्राथमिक आंकड़े एकत्रित किए गए तथा सारणीयन कर विश्लेषण किया गया है। साथ ही द्वितीयक आंकड़े विभिन्न विभागो से प्राप्त किए गए। साथ ही शिक्षाविदों, शिक्षकों तथा पालकों से समूह चर्चा की गई।

सम्बंधित साहित्य –

महात्मा गांधी – 'शिक्षा से मेरा अभिप्राय बच्चे के शरीर , मन और आत्मा में विद्यमान सर्वोत्तम गुणों का सर्वांगीण विकास करना हैं।'

चेस्टर बोल्स के अनुसार – 'प्राकृतिक शक्तियों के नियंत्रण और संरूपण करने तथा एक व्यवस्थित प्रवैगिक तथा न्यायपूर्ण समाज का सृजन करने में शिक्षा सभी उपकरणों में सबसे अधिक शक्तिशाली हैं। अत: शिक्षा का मात्रात्मक व गुणात्मक दोनों प्रकार का विस्तार आवश्यक है।'

अध्ययन क्षेत्र – खरगोन जिला मध्यप्रदेश के दक्षिण-पश्चिम में स्थित है, जो विंध्याचल एवं सतपुड़ा पर्वत की गोद में बसा है तथा नर्मदा नदी से पल्लवित एवं पोषित है। इसका अक्षांशीय विस्तार 21 डिग्री 22 मिनिट से 22 डिग्री 35 मिनट उत्तरी अक्षांश तथा देशान्तरीय विस्तार 75 डिग्री 35 मिनट से 76 डिग्री 14 मिनट पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है,यह जिला इन्दौर सम्भाग के अन्तर्गत आता है। जिले का क्षेत्रफल 6541.870 वर्ग किमी. है तथा 9 तहसीलों में विभाजित है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार जिले की कुल जनसंख्या 1872413 है, जिसमें 1573458 ग्रामीण तथा 298955 नगरीय जनसंख्या पायी जाती है। यहां कुल साक्षरता 64.00 प्रतिशत है जिसमें पुरूष साक्षरता 74.00 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता 53.7 प्रतिशत है

अध्ययन एवं विश्लेषण – प्रस्तुत अध्ययन एवं विश्लेषण को अधिक सार्थक, प्रमाणिक तथा विभिन्न पहलुओं के अध्ययन हेतु कुछ आधार तय करने का प्रयास किया गया है। जिससे शिक्षा जगत को एक नई दिशा मिले तथा वर्तमान संचालित योजनाओं की समीक्षा की जा कर सुधार किया जा सके।

तालिका क्रमांक – 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि खरगोन नगर के 110 उत्तरदाओं से इन प्रश्नों का उत्तर जानना चाहा तो कुछ तथ्य उभर कर आये, सर्वशिक्षा अभियान के नाम पर शिक्षा के स्तर को रसातल तक पहुंचा दिया गया, ये वही प्रश्न है, जो सर्वशिक्षा अभियान के प्रावधान है। इन्हीं प्रावधानों को आधार बनाकर छात्र-छात्राओं , पालकों, शिक्षाविद्दों , समाज सुधारकों,शिक्षकों,तथा पत्रकारों जैसे बुध्दिजीवियों का मत जानना चाहा।

कुल उत्तरदाताओं में से 90.90 प्रतिशत उत्तरदाता शिक्षा के **निजीकरण**

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

को पूरी तरह बंद करने के पक्ष में है, इनका मानना है कि शिक्षा का व्यावसायिकरण नहीं होना चाहिए। व्यवसायिकरण होने से शिक्षा एक वस्तु बनकर रह जायेगी । जिसका उदद्देश्य केवल मुनाफा कमाना होता है। निजीकरण होने से आरक्षित वर्ग तथा निर्धन परिवार निजी संस्थाओं में मंहगी शिक्षा खरीद नहीं पायेंगे । इन निजी शैक्षणिक संस्थाओं में केवल सम्भ्रांत परिवार के बच्चे ही अध्ययनरत है परन्तु अच्छी (गुणवत्ता युक्त) शिक्षा हर पालक चाहता है। इसलिए अपनी मूलभूत सुविधाओं में से कमी करके भी अपने बच्चों को इन संस्थाओं में पढ़ाने के लिए मजबूर है । अत: शिक्षा के निजीकरण पर प्रतिबंध लगना ही चाहिए। नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का औचित्य क्या रह जाता है । शिक्षा की गुणवत्ता **पाठ्यक्रम** पर भी निर्भर करती है। प्रस्तुत अध्ययन में 94.54 प्रतिशत उत्तरदाता समान शिक्षा पद्धति के पक्षधर है। इनकी मान्यता है कि मध्यप्रदेश में प्रत्येक निजी संस्था का अपना पाठ्यक्रम है, अपनी-अपनी निश्चित पाठ्यपुस्तकों एवं स्टेशनरी की दुकाने है। जहां बेरोक-टोक व्यापार चल रहा है, जो किसी से छिपा नहीं है, और पालक सरेआम छले जा रहें है । वहीं राज्य में मध्यप्रदेश माध्यमिक शिक्षा मण्डल एवं केन्द्रीय शिक्षा बोर्ड है, जिनका अलग-अलग पाठ्यक्रम एवं परीक्षा पद्धति है। ग्रामीण अंचलों के निर्धन बच्चे माध्यमिक शिक्षा मण्डल का पाठ्यक्रम ही पढ़ते है जबकि प्रतियोगी परीक्षाएं केन्द्रीय शिक्षा पाठ्यक्रम पर आधारित होती है। जहां निर्धन एवं ग्रामीण बच्चे प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाते है। अत: समान शिक्षा पाठ्यक्रम समाज एवं देशहित में सार्थक सिद्ध होगा।

नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार नियम , 2011 के तहत प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर की **परीक्षा पद्धति** स्थानीय स्तर की कर दी गई है । प्रस्तुत अध्ययन के 93.63 प्रतिशत उत्तरदाता इस पद्धति के विरूध्द अपना मत व्यक्त करते है क्योंकि इस पद्धति के लागू होने के बाद से शिक्षा की गुणवत्ता में बहुत ज्यादा गिरावट आयी है। स्थानीय स्तर की परीक्षा पद्धति लागू होने से छात्र एवं शिक्षक निर्भय एवं निश्चित हो गए है जिससे न छात्र पढ़ने की कोशिश करता है और न ही शिक्षक पढ़ाने के लिए प्रेरित होते है । अत: छात्र और शिक्षक सक्रिय रहे ऐसी परीक्षा पद्धति, बोर्ड परीक्षा पद्धति ही सहायक हो सकती है ।

उक्त अधिनियम का ही परिणाम है कि प्राथमिक स्तर से माध्यमिक स्तर तक छात्रों को **अनुत्तीर्ण** नहीं किया जा सकेगा ,फलस्परूप न छात्रों को अध्ययन की आवश्यकता है और न ही शिक्षकों ने अध्यापन की ही आवश्यकता महसूस की, जिसका परिणाम यह हुआ कि छात्र निरन्तर बिना परीक्षा उत्तीर्ण किए ही अगली कक्षा में प्रवेश कर जाता है और कक्षा 10 तक पहुंचने पर छात्र न पढ़ पाता है और नहीं लिख पाता है तथा न ही सामान्य गणित कर पाता है। ऐसी स्थिति में भविष्य में अच्छे शिक्षक, वैज्ञानिक, नेता एक आदर्श नागरिक की कल्पना नहीं की जा सकती।

तालिका क्रमांक - 02(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट होता है,शोध अध्ययन में छात्रों के नैतिक एवं चारित्रिक गुणों के विकास के लिए कुछ पैमाने तय किये गये । औसतन 88.17 प्रतिशत उत्तरदाता छात्र जीवन को **नियंत्रित** करने के लिए नितांत आवश्यक मानते है । परन्तु शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2011 के तहत छात्रों पर शिक्षकों के नियत्रंण को समाप्त कर दिया गया है। अत:शिक्षकों व्द्वारा शारीरिक दण्ड या किसी भी प्रकार का दण्ड नहीं दिया जा सकता और न ही छात्रों को अनुशासनहीनता करने या किसी प्रकार की गलती करने पर उसे मानसिक दबाव भी नहीं बनाया जा सकता यहां तक कि छात्र को अनुत्तीर्ण या निष्कासित भी नहीं किया जा सकता। अत: छात्र अनियंत्रित हो गये है, जिसके परिणाम शैक्षणिक गुणवत्ता में गिरावट आयी है। कुछ शिक्षक छात्रों को शारीरिक या मानसिक दण्ड देते है, तो उन पर मानव अधिकार का हवाला देकर दण्डित किया जाता है। जिससे छात्रों तथा पालकों का हौसला और बढ़ जाता है । यदि हम प्रचीन शिक्षा पद्धति की बात करें तो ज्ञात होता है कि उस काल में भी दण्ड का विधान था इसीलिए तो कबीरदास जी लिखते है कि -

गुरू शिष्य कुम्भ है गढ़-गढ़ काढ़े खोट,अन्दर हाथ सहार दे बाहर मारे चोट।

छात्र के अनुत्तीर्ण होने, अनुशासनहीनता या अन्य प्रकार की गलती करने पर 94.54 प्रतिशत उत्तरदाता **निष्कासित** करना उचित समझते है । वहीं 92.72 प्रतिशत उत्तरदाता शारीरिक, मानसिक या अनुशासनात्क कार्यवाही को स्वीकार करते है । बिना भय के या नियंत्रण के छात्र जीवन को सुधारा नहीं जा सकता है। यदि सद्‌चरित्र का निर्माण करना हो तो कुछ सजा का प्रावधान होना ही चाहिए ।

प्राय: समाचार पत्रों और टी.व्ही. समाचारों में देखा गया है कि शिक्षक छात्रों को मध्यान्ह भोजन की थालिया धुलवाते है,साफ-सफाई करवाते है ,कुर्सी-टेबल उठवातें है, ई.टी.व्ही.म.प्र. पर बैतुल जिले के शिक्षक ,द्वारा कुर्सी-टेबल उठवाई गयी समाचार सुर्खियों में रहा, शिकायत हुई जांच में पाया गया कि वह एक विकलांग शिक्षिका थी, यहां तक कि उनके पास भृत्य भी नहीं था। क्या हम छात्रों से किसी भी प्रकार का कोई भी कार्य नहीं करवा सकते । इन हालातों में बच्चों में अच्छे संस्कार की अपेक्षा करना बेईमानी होगी। चंद शिक्षकों व्द्वारा अमानवीय शारीरिक दण्ड देने के आधार पर शिक्षकों पर आक्षेप लगाकर नियंत्रण मुक्त कर हम स्वयं अपने भविष्य को असुरक्षित और अनियंत्रित तथा असंयमित बना रहे है।यही वजह है कि नई युवा पीढ़ी थोड़ा संकट आने पर वे विचलित हो जाती है और अनुचित कदम उठाने में कोई विचार ही नहीं कर पा रही है ।

तालिका क्रमांक - 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका में शिक्षकों के गुणात्मक सुधार हेतु कुछ आधार तय करने का प्रयास किया गया है, जिससे शिक्षा के स्तर को ओर बेहतर बनाया जा सकें। क्योंकि शिक्षक की गुणवत्ता ही छात्रों के स्तर को निर्धारित करती है। शिक्षकों को बहुआयामी होना अतिआवश्यक है जिससे कि बच्चों में अच्छे संस्कार और नैतिक एवं राष्ट्रीय मूल्यों का विकास किया जा सके। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन कहते है - 'शिक्षक उन्ही लोगो को बनाया जाना चाहिए जो सबसे अधिक बुद्धिमान हो'।

शिक्षक ही सृजन और विकास का वाहक है, हर व्यक्ति के व्यक्तित्व की आधारशीला शिक्षक व्द्वारा ही रखी जाती है। देश का नेतृत्व, आदर्श नागरिक, वैज्ञानिक, डॉक्टर, इंजिनियर, अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा के कुशल अधिकारी आदि शिक्षक की प्रवीणता पर ही निर्भर करते है। यद्यपि अधिकांश मानवीय गुण घर-परिवार और संस्कार पर ही निर्भर करते है तथापि प्रशासन भी अच्छे शिक्षक निर्मित करने के लिए प्रयासरत है

शिक्षा की तकनीक, अध्यापन की पद्धति तथा बच्चों की प्रवृति समझने में **शिक्षक प्रशिक्षण** की महत्वपूर्ण भूमिका रही है । इसीलिए शिक्षाविद्दों ने शिक्षकों के लिए डी.एड.और बी.एड. तथा एम.एड.की उपाधि का प्रावधान किया है । अत: इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए उत्तरदाताओं से शिक्षक प्रशिक्षण के संबंध में जानना चाहा,जिसमें 79.09 प्रतिशत उत्तरदाता शिक्षकों के प्रशिक्षण को अनिवार्य मानते है । अत: ऊपर उल्लेखित कारणों से शिक्षक प्रशिक्षण अनिवार्य होना चाहिए परन्तु यह प्रशिक्षण सेवा में आने के बाद भी दिया जा सकता है । इसलिए सेवा के पूर्व अनिवार्यता नहीं होना चाहिए

क्योंकि वर्तमान में हजारों निजी शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाएं चल रही है, जो मनमाना शुल्क वसुल कर रही है। अत: निर्धन छात्रों को इन संस्थाओं में प्रवेश लेना बहुत बड़ी चुनौती साबित हो रहा है।

81.81 प्रतिशत उत्तरदाता परीक्षा उत्तीर्ण करना उचित समझते है। क्योंकि **व्यापम द्वारा आयोजित परीक्षा** भी शिक्षकों को कसौटी पर कसती है जिससे योग्यता और क्षमता रखने वाले उम्मीदवार ही इस सेवा के क्षेत्र में जा सकें। अत: देश के भविष्य निर्माता को सभी गुणों में कुशल होना चाहिए।

शिक्षा में गुणात्मक सुधार हेतु शिक्षकों की **जवाबदेही** भी तय होना चाहिए। इस मत के 81.81 प्रतिशत उत्तरदाता सर्मथक है। जब तक शिक्षकों को जिम्मेदारी तय नहीं होगी तब तक शिक्षा के स्तर में सुधार होना असंभव है ,शिक्षकों को बोर्ड परीक्षा उत्तीर्ण करवाने का एक लक्ष्य दिया जाना चाहिए। जिससे शिक्षक ईमानदारी और निष्ठापूर्वक अपने कर्त्तव्य को निभाये। कुछ वर्ष पूर्व शिक्षकों का व्यक्तिगत परीक्षा परिणाम देखा जाता था तथा निर्धारित प्रतिशत से कम परिणाम आने पर शिक्षकों के विरूध्द अनुशासनात्मक कार्यवाही की जाती थी। अत: यह व्यवस्था यदि पून: लागू होती है, तो निश्चित रूप से शिक्षा के स्तर में अवश्य सुधार आयेगा।

प्राय: शिक्षकों पर आरोप लगते देखा गया है कि समय पर विद्यालय नहीं पहुंचते या देरी से पहुंचते है और निर्धारित समय के पूर्व ही लौट आते है। इस संबंध में जानना चाहा तो 81.81 प्रतिशत उत्तरदाता शिक्षकों की उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए **ई अटेंडेंस** को अनिवार्य मानते है। जिससे शिक्षक पूरे समय विद्यालय में उपस्थित रह कर अध्यापन कार्य कर सके। इस हेतु शिक्षक आवास गृह की भी व्यवस्था की जानी चाहिए। जिससे शिक्षक विद्यालयों को पर्याप्त समय दे सकें।

यद्यपि शिक्षा नीति, परीक्षा पद्धति,पाठ्यक्रम, नि:शुल्क एवं बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम के कारण शिक्षा के स्तर में गिरावट आयी है, केवल और केवल शिक्षक को नियंत्रित करने का प्रयास किया गया है तथापि शिक्षक समय का पाबंद हो,कर्मठ हो,समर्पित हो,सदाचारी एवं विनम्र हो, दृढ़ संकल्पित हो, विषय का ज्ञाता हो,त्याग और सेवा का जज्बा लिये हो,तो अवश्य ही शिक्षा के स्तर को सुधारा जा सकता है। इस प्रकार बहुआयामी शिक्षकों की कमी के कारण भी शिक्षा के स्तर में गिरावट आयी है।

विलियम आर्थर वार्ड कहते है। एक औसत दर्जे का शिक्षक बताता है। एक अच्छा शिक्षक समझाता है। एक बेहतर शिक्षक करके दिखाता है। एक महान शिक्षक प्रेरित करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गांधी – व्यक्तित्व विचार और प्रभाव।
2. डॉअर्चना मैथ्यू – शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक साधन ,रिसर्च जर्नल नवीन शोध संसार नीमच मप्र.volume ii,issue ix,jan. to march 2015 page no.31
3. डॉमधु गौतम – शिक्षक–शिक्षण एक विचार रिसर्च जर्नल नवीन शोध संसार नीमच मप्र. volume ii,issue ix, jan. to march 2015 page no.39
4. डॉमधु गौतम – शिक्षक–शिक्षण एक विचार रिसर्च जर्नल नवीन शोध संसार नीमच मप्र.volume ii,issue ix,jan. to march 2015 page no.39
5. www.education portel mp.

तालिका क्रमांक – 01 – शिक्षा में गुणवत्ता के आधार

निर्धारित मापक	कुल उत्तरदाता	हां	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत
शिक्षा का निजीकरण बंद हो	110	100	90.90	10	9.09
पाठ्यक्रम समान हो	110	104	94.54	06	5.45
प्राथ./माध्य. स्तर बोर्ड हो	110	103	93.63	07	6.36
अनुत्तीर्ण का प्रावधान हो	110	103	93.63	07	6.36

तालिका क्रमांक – 02 – छात्रों में नैतिक गुणों का विकास

निर्धारित मापक	कुल उत्तरदाता	हां	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत
छात्र को निष्कासित करने का प्रावधन	110	104	94.54	06	05.45
दण्ड का प्रावधान	110	102	92.72	08	07.2
साफ–सफाई ,बागवानी के कार्य आदि	110	85	77.27	25	22.72
औसत प्रतिशत	110		88.17		

तालिका क्रमांक – 03 – शिक्षकों में गुणात्मक सुधार

आधार	कुल उत्तरदाता	हां	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत
शिक्षक प्रशिक्षण	110	87	79.09	23	20.90
व्यापम परीक्षा	110	83	75.45	27	24.54
अनुत्तीर्ण होने की जवाबदेही	110	90	81.81	20	18.18
ई. अटेंडेंस	110	90	81.81	20	18.18

****

मानवाधिकार एवं वैश्वीकरण

महेश चन्द मीना *

प्रस्तावना –मानवाधिकार ऐसे अधिकार है, जो प्रत्येक व्यक्ति को मानव मात्र होने के नाते प्राप्त होते है भले ही उसका लिंग, राष्ट्रीयता, वर्ग, धर्म आदि कुछ भी हो। 10 दिसम्बर 1948 को वैश्विक मानव अधिकार की घोषणा की गई इसी दिन को बाद में मानव अधिकार दिवस के रूप में मनाया जाने लगा।

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 में कहा गया कि, **'व्यक्ति के जीवन स्वतंत्रता, समानता, और गरिमा से सम्बन्धित वे अधिकार मानव अधिकार कहलाते है, जो संविधान द्वारा प्रत्याभूत है'**।

वर्तमान युग वैश्वीकरण का युग है। जिसने विश्व को ग्लोबल विलेज के रूप में उभारा है। वैश्वीकरण के दौर में निजीकरण एवं उदारीकरण को बढावा दिया जा रहा है, जिससे विश्व के सभी देश समीप आते जा रहे है परन्तु दूसरी तरफ वैश्वीकरण के कारण विश्व में नई चुनौतियां सामने आती जा रही है जिसमें सबसे गम्भीर चुनौती के रूप मानव अधिकार हनन के विभिन्न रूप सामने आ रहे है। जिसमें आर्थिक अधिकार, राजनैतिक अधिकार, सामाजिक जीवन एवं समानता का अधिकार, विकास का अधिकार, जीवन का अधिकार, शुद्ध पर्यावरण में जीने का अधिकार मानव सहायता का अधिकार आदि का हनन हो रहा है।

वैश्वीकरण के कारण मानव अधिकारों के हनन की स्थिति से निपटने के लिए समय–समय पर सम्मेलन, सेमीनार, सामूहिक प्रदर्शन, आदि प्रयास किए गए हैं। अत: आज की आवश्यकता मानव अधिकार संरक्षण के लिए कुशल शासन की स्थापना, न्यायपालिका की स्वतंत्रता, एवं निष्पक्षता ही आवश्यक नहीं बल्कि इन व्यवस्थाओं को सुचारू रूप से कार्य करने के लिए व्यक्ति को अधिकारों के प्रति सशक्त एवं सजग होना पडेगा तभी यह विश्व समुदाय उपवन की भांति खिल सकेगा।

मानवाधिकार एंव वैश्वीकरण (Globalization of Human Rights) - आज चारों ओर मानव अधिकारों की चर्चा हो रही है। इस विषय पर सेमीनार और सम्मेलन आयोजित किये जा रहे हैं। जैसे–जैसे कोई समाज सभ्य और विकसित होता जाता है, वैसे–वैसे वह अपने मानवाधिकारों के प्रति भी सचेत होता जाता है। मानवाधिकार ऐसे अधिकार हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को मानव मात्र होने के नाते प्राप्त होते हैं, भले ही उसका लिंग राष्ट्रीयता, वर्ग, धर्म आदि कुछ भी हो। आज हमें जो मानवाधिकार प्राप्त है वे हमें एकदम से प्राप्त नहीं हो गये है, वरन इनकी प्रगति धीरे–धीरे हुई है प्राचीन समय में सुकरात एवं प्लेटो जैसे विद्धानो ने भी मानवाधिकारों पर अपने अमूल्य विचार व्यक्त किये। इनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के कुछ प्राकृतिक अधिकार होते है, इसलिए ये राज्य की स्थापना से पहले से ही अस्तित्व में है उस समय इन्हें ऐसे अधिकारों के रूप में माना जाता था जिस से व्यक्ति अपनी रोटी, कपडा, मकान, की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।

मध्यकाल में कहा जाने लगा कि मानवाधिकार एक सामाजिक जरूरत है और प्रत्येक व्यक्ति को ये प्राप्त होने चाहिए।

आधुनिक काल में मानव के जीने के अधिकार का दायरा विस्तृत हुआ है, मानव को लोककल्याण की अवधारणा में रहते हुए इसका विस्तृत विवेचन किया गया जिसमें स्वच्छ वातावरण में जीने का अधिकार, अमानवीयता एंव कूर व्यवहार के विरूद्ध न्याय की शीघ्र प्राप्ति होना शामिल है। इन अधिकारों की प्राप्ति के लिए राज्य अपने संविधान में इनको संरक्षण प्रदान कर रहे है। प्रथम विश्व युद के बाद राष्ट्रसंघ की स्थापना के साथ ही मानवाधिकार की अवधारणा काफी लोकप्रिय हो गयी है। इसे अन्तर्राष्ट्री स्तर पर मान्यता मिल गयी द्वितिय विश्वयुद्ध की समाप्ति के साथ ही संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना की गयी इसके कुछ समय बाद ही 10 दिसम्बर 1948 को वैश्विक मानव अधिकार की घोषणा की गयी थी इसलिए इसी दिन को बाद में 'मानव अधिकार दिवस' के रूप में मनाया जाने लगा।

मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 में मानवाधिकारो को परिभाषित करते हुए कहा गया कि 'व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता, समानता, और गरिमा से सम्बंधित वे अधिकार मानवाधिकार कहलाते है, जो संविधान द्वारा प्रत्याभूत है, अन्तर्राष्ट्रीय संधियों में उल्लेखित है अथवा भारत में न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय है'

डेविड सेलबाई के अनुसार 'मानवाधिकार विश्व के प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त है क्योंकि वे स्वयं में मानवीय है, वे उत्पन्न नहीं किए जा सकते, खरीदे नहीं जा सकते और ये अधिकार संविदावादी प्रकियाओं से मुक्त होते है।'

आर. जे. विंसेट के अनुसार 'मानव अधिकार वे अधिकार हैं, जो प्रत्येक व्यक्ति को मानव होने के नाते प्राप्त है, मानवाधिकारों का आधार मानव स्वभाव में निहित है।' इस प्रकार कहा जा सकता है कि मानव अधिकार वे अधिकार हैं। जो मनुष्य के जीवन उसके अस्तित्व और व्यक्तित्व के विकास के लिए अनिवार्य है।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग का गठन राष्ट्रपति के अध्यादेश के अन्तर्गत 27 सितम्बर 1993 को दिया गया। आयोग के कार्य एंव शक्तियों का भी उल्लेख किया गया।

मानव अधिकारों के उल्लंघन पर पीडित व्यक्ति के परिवाद पर जाँच करना। मानव अधिकारों के उल्लंघन से सम्बन्धित न्यायालय में लम्बित मामले में हस्तक्षेप करना।

राज्य सरकार के नियंत्रणाधीन किसी कारागार अथवा संस्था का निरीक्षण करना। मानवाधिकार के संरक्षण के लिए और उनकी प्रभावी कियान्विति के लिए सुझाव देना। मानव अधिकारों को अवरूद्ध करने वाले आतंक कार्यो की समीक्षा करना तथा उपचार के लिए सुझाव देना। मानव अधिकारों से सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमयों एवं संधियों का अध्ययन एवं प्रभावी कियान्विति के लिए सुझाव देना।

मानवाधिकारों के क्षेत्र में शोध करना तथा इस कार्य के लिए प्रोत्साहित करना मीडिया, सेमीनार आदि के माध्यम से समाज के विभिन्न वर्गो को मानवाधिकारो से अवगत कराना, इनकी रक्षा के उपायों के लिए चेतना जागृत करना।

* प्रवक्ता (भूगोल) राजकीय महाविद्यालय, राजगढ़, अलवर (राज.) भारत

मानवाधिकारों के क्षेत्र में गैर सरकारी स्वैच्छिक संगठन के प्रयासों को प्रोत्साहित करना मानवाधिकारों की प्रोन्नति के लिए आवश्यक कार्य करना।

वर्तमान युग वैश्वीकरण का युग है, जिसने विश्व को ग्लोबल विलेज के रूप में उभारा है। वैश्वीकरण के इस युग में निजीकरण एवं उदरीकरण को बढ़ावा दिया जा रहा है, जिससे विश्व के सभी देश समीप आते जा रहे है। परन्तु दूसरी तरफ वैश्वीकरण के कारण विश्व में नई चुनौतियां सामने आती जा रही है। जिनमें सबसे बडी एवं गंभीर चुनौती के रूप में मानवाधिकार हनन के विभिन्न रूप सामने आ रहे हैं। जिनमें आर्थिक अधिकार, सामाजिक जीवन एवं समानता के अधिकार, राजनीतिक अधिकार, विकास का अधिकार, जीवन का अधिकार, भोजन एवं शुद्ध पर्यावरण में जीने का अधिकार, मानव सहायता का अधिकार, आदि का हनन हो रहा है। वैश्वीकरण ने विकसित एंव विकासशील देशों के मानवाधिकारों को प्रभावित किया है–

वैश्वीकरण में तकनीकी का अधिक प्रयोग किये जाने के कारण विकासशील देशों के श्रमिकों पर प्रभाव पडा है। कार्य कुशल श्रमिकों को कारखानों से निकाले जाने के कारण उनके सामने आजीविका के साधनों की समस्या आ गई है। वैश्वीकरण दौर में सरकारों द्वारा अपने कार्यक्षेत्र को सीमित किए जाने के कारण सरकारी नौकरियों में कमी होती जा रही है। इस से नागरिको की सामाजिक सुरक्षा में कमी आ रही है। श्रमिको में अविश्वास की भावना बढ़ रही है जिसका प्रभाव मालिक मजदूर सम्बन्धों पर पड़ रहा है।वैश्वीकरण में अधिक मशीनरियों के प्रयोग के कारण पर्यावरण प्रदूषण की समस्या सामने आ रही है। इससे मानव के शुद्धवातावरण में जीने का अधिकार प्रभावित हो रहा है।

जीवन रक्षक दवाओं पर विदेशी कम्पनियों के आधिपत्य के कारण उनकी कीमतें गरीब जनता की पहुंच से दूर होती जा रही है। जिससे उनके जीने के अधिकार का हनन हो रहा है।वैश्वीकरण में बड़े उद्योगों की स्थापना के लिए बड़े–बड़े क्षेत्रों की आवश्यकता होती है। इसके लिए छोटे–छोटे गांव व बस्तियों को हटाया जा रहा है, जिससे उनका निवास करने का अधिकार प्रभावित होता है।वैश्वीकरण के अन्तर्गत कॉपी राईट के अन्तर्गत विकसित देशों द्वारा प्रतिदिन आवश्यकता वाली वस्तुओं पर कॉपी राईट लेने एंव उन पर एकाधिकार के माध्यम से ऊँची कीमतें वसूलने के कारण गरीब देश की जनता के अधिकार प्रभावित होते हैं।

वैश्वीकरण के कारण महिला अधिकारों पर विपरीत प्रभाव पडा है, जिसके अन्तर्गत अपने उत्पादन की बिकी बढ़ाने के लिए महिलाओं को भोग की वस्तु के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। विभिन्न प्रकार के विज्ञापनों में महिलाओं को इस प्रकार से प्रस्तुत किया जाता है। जिससे महिला अस्मिता में कमी आई है, जो कि सीधा महिला अधिकारों का हनन है।

विदेशों में कार्यरत कर्मचारियों पर अत्याचार किए जाते है। उनके साथ साथी कर्मचारियों द्वारा असमानता का व्यवहार किया जाता है। विशेषत: महिला कर्मचारियों के साथ अभद्र व्यवहार किया जाता है। वैश्वीकरण के कारण प्रत्येक देश द्वारा अन्य देशों पर स्वामित्व स्थापित करने के लिए अस्त्र–शस्त्र होड़ बढ़ती जा रही है। जिससे विश्व शान्ति के संयुक्त राष्ट्रसंघ के प्रयासों को अघात पहुंच रहा है।

वैश्वीकरण के दौर में विभिन्न देशों में विश्व शक्ति के रूप में उभरने की इच्छा बढ़ती जा रही है। जिसमें दूसरे देशों के साधनों पर स्वामित्व प्राप्त कर उस देश के स्वयं निर्णय के अधिकारों को सीमित किया जा रहा है।

वैश्वीकरण के दौर में कृषिगत देशों के अधिकारों का हनन हो रहा है क्योंकि वैश्वीकरण में सभी वस्तुओं की कीमतों के निर्धारण को बाजार अर्थव्यवस्था के आधार पर निश्चित होने के लिए छोड़ जाता है। जिससे विकासशील देशों द्वारा अपने यहां किसानों को दी जाने वाली सब्सिडी को कम किया जाना अनिवार्य होता है परिणामस्वरूप गरीब किसान उन्नत किस्मों एवं औजारों के उपयोग न कर पाने के कारण बाजार मूल्यों से प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाते है और पिछड़ते जा रहे है।

वैश्वीकरण के दौर में एक देश से दूसरे देश में खुले आवागमन के कारण रोगों से ग्रस्त व्यक्तियों के एक दूसरे देशों में जाने से जान लेवा बीमारियों का फैलाव बढता जा रहा है। जिसमें विशेषत: एच.आई.वी., एड्स जैसी असाध्य बीमारियों के रोगियों की संख्या में वृद्धि हुई है।

उदारीकरण के दौर में अमानवीय पद्धतियों के उपयोग के कारण मानव मूल्यों में गिरावट आ रही है। जिसके अन्तर्गत मानव क्लोन का निर्माण' आधुनिक संस्कृति के नाम पर भौतिकवाद को बढ़ावा दिया जा रहा है।

वैश्वीकरण के कारण बेरोजगारी में वृद्धि होने से आतंकी गतिविधियाँ बढती जा रही है। जिससे मानव अधिकारों का अतिक्रमण किया जाता है जिसमें विशेषत: महिलाओं एंव बच्चों के अधिकारों पर अधिक प्रभाव पडता है। वैश्वीकरण के कारण मानव अधिकारों के हनन की स्थिति से निपटने के लिए समय समय पर आन्दोलन, सम्मेलन, सेमीनार, सामूहिक प्रदर्शन आदि के माध्यम से मानव अधिकार संरक्षण के लिए कार्य किये गये है–

पर्यावरण संरक्षण के लिए सन् 1973 में श्री सुन्दरलाल बहुगुणा समाज सेवी के नेतृत्व में लोगों द्वारा पेड़ों की सुरक्षा के लिए पेड़ों से चिपक कर उन्हें काटने से बचाने के लिए प्रयास किया गया। धूमसिंह नेगी एवं बंसीदेवी द्वारा अन्य ग्रामीणों के साथ सर्वप्रथम पेड़ों से चिपक कर उन्हें बचाने के लिए अपने प्राण न्यौछावर किये।

नर्मदा घाटी आन्दोलन में श्रीमती मेघापाटेकर के नेतृत्व में ग्रामीणों द्वारा आन्दोलन किया गया जिसके परिणामस्वरूप सर्वोच्च न्यायालय द्वारा बांध की ऊँचाई को कम कर ग्रामीणों को सुरक्षा प्रदान की गई।
1917, 1926 और 1927 में क्रमश: भारतीय महिलासंघ, राष्ट्रीय भारतीय महिला परिषद और अखिल भारतीय महिला सम्मेलन की स्थापना की गई। ये सभी संगठन महिलाओं की सामाजिक समस्याओं और उन्हें शिक्षित करने के सरोकार से जुड़े थे।

1975–78 में अन्तर्राष्ट्रीय महिला दशक घोषित करते हुए महिलाओं के कल्याण के लिए कार्य करने के लिए विकासात्मक वित्त उपलब्ध कराये गये। 1991 में राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण हेतु की गई।

दलित से तात्पर्य समाज के ऐसे वर्ग से होता है, जो कि आर्थिक एंव राजनीतिक रूप से पिछड़ा होता है। आधुनिकता के समय में सबसे अधिक दलित वर्ग के अधिकारों के लिए भारत में सर्वप्रथम गांधीजी द्वारा प्रयास किए गए, इन्होंने हरिजन संघ की स्थापना की एवं हरिजन नामक पत्रिका भी प्रकाशित करवायी।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने भारतीय संविधान के निर्माण के समय दलितों को विशेषाधिकार प्रदान किये। संविधान में प्रथम दस वर्ष के लिए दलित वर्ग के लिए सरकारी नौकरियों में आरक्षण की व्यवस्था दलितोद्धार का ही एक भाग है।

बालक किसी भी देश का भविष्य होते हैं। अत: बालक शिक्षा एवं उनके सम्पूर्ण विकास का उत्तरदायित्व सरकार के कंधो पर आ जाता है। बाल श्रमिक के रूप में कार्य करते समय ही सबसे अधिक बाल अधिकारों का हनन होता है। वह शिक्षा प्राप्ति से वंचित रह जाता है, उसे कम मजदूरी दी जाती है, बाल विवाह कर दिया जाता है। बाल श्रमिक के रूप में कार्य करने वाली बालिकाओं का यौन शोषण किया जाता है। बाल अधिकारों के संरक्षण के

लिए देश एवं देश के बाहर भी प्रावधान किए गए हैं।

अमेरीका और अन्य विकासशील देशों में बिक्री के लिए जाने वाली कालीनों एवं अन्य हस्तकरघा के सामानों पर एक विशेष प्रकार का मार्का लगवाना होता है, जो कि इस बात का प्रमाण होता है कि इस उद्योग में बच्चे बाल श्रमिक के रूप में कार्य नहीं कर रहे हैं।

विकास के आधुनिक तरीको की सबसे प्रमुख कमी यही रही है कि इसमें विकास का अमानवीय आधार लिया गया है अर्थात विकास के कार्यो में असन्तुलित एवं अमानवीय पहलुओं को काम में लिया गया है। परन्तु विकास के अधिकार की अवधारणा के माध्यम से इस कमी को दूर किया गया है। विकास के अधिकार के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति को विकास के समान अवसर प्रदान करने एवं मानवीय केन्द्रित विकास की अवधारणा को बढ़ावा देने के लिए राज्यों को बाध्य किया गया है, इस अधिकार के अन्तर्गत व्यक्ति को जीने के लिए आवश्यक दशाऐं उपलब्ध कराने का उत्तरदायित्व सरकार का माना गया है। काम करने की परिस्थितियां उपलब्ध कराना, संसाधनों के उपयोग के समान अवसर उपलब्ध कराने का उत्तरदायित्व सरकार का माना गया है। काम करना, सहभागिता प्रदान करना आदि कार्य भी राज्य को सौंपे गए है।

प्रत्येक व्यक्ति को स्वच्छ एवं स्वस्थ वातावरण में जीने का अधिकार प्राप्त है। परन्तु वर्तमान में मानव की बढ़ती हुई अपेक्षाओं एवं आवश्यकताओं के कारण पर्यावरण प्रदूषण ही नही हुआ बल्कि इसका ह्रास भी हुआ है।

विश्व स्तर पर पर्यावरण के संरक्षण के लिए लगभग 200 अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण कानूनों का निर्माण किया जा चुका है।

मानव के जीवन के शुद्ध वातारण के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास किए जाते रहें है। जिसके अन्तर्गत सर्वप्रथम स्टॅकहोम में 05 जून 1972 में मानव पर्यावरण सम्मेलन के नाम से एक सम्मेलन का आयोजन संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में किया गया। इसी घटना के कारण प्रतिवर्ष 05 जून को विश्व पर्यावण दिवस के रूप में मनाया जाता है। पर्यावरण संरक्षण के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ द्धारा समय-समय पर काफी प्रयास किए गए है।

1. स्टॉक होम सम्मेलन, 1972 संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में मानव पर्यावरण का प्रथम सम्मेलन।
2. वियना सम्मेलन, 1985 ओजोन परत की सुरक्षा पर यह सम्मेलन आयोजित किया गया।
3. नौरोबी सम्मेलन, 1978 पृथ्वी पर मानव के आवास एवं जीवन स्तर को गुणात्मक बनाने के उद्देश्य से नौरोबी में हैबीटैट नामक संस्था बनाई गयी।
4. मॉंट्रियल सम्मेलन 1987 ओजोन परत के क्षरण के लिए उत्तरदायी रसायनों के विकल्प के रूप में मॉंट्रियल प्रोटोकॉल स्वीकार किया गया और प्रत्येक वर्ष 16 सितम्बर को ओजोन परत संरक्षण दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया।
5. पृथ्वी सम्मेलन 1992 रियोडिजेनेरों में पर्यावरण एवं विकास पर संयुक्त राष्ट्र का पृथ्वी सम्मेलन आयोजित किया गया। 21 वीं सदी में पर्यावरण को स्वच्छ रखने के लिए 179 देशों ने अपनी सहमति व्यक्त की थी।
6. पृथ्वी सम्मेलन -02, 1993- स्थानीय विकास पर संयुक्त राष्ट्र की पहली बैठक रियों सम्मेलन के प्रभावों पर विचार विमर्श करने के लिए बुलाई गई थी।
7. काहिरा सम्मेलन, 1994- इस सम्मेलन का उद्देश्य जनसंख्या में बढ़ोत्तरी की दर कम करने या स्थिर रखने, नारी शिक्षा पर जोर देने और स्वस्थ प्रजनन पर विचार करना था।
8. क्योटो सम्मेलन, 1997-जापान के क्योटो शहर में ग्लोबल वार्मिंग पर सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें ग्रीन हाउस गैसों की कटौती के लिए क्योटों प्रोटोकॉल जारी किया गया।
9. पेइचिंग महिला सम्मेलन, 1995 महिलाओं एवं बालिकाओं का जीवन स्तर बढ़ाने का एजेण्डा तैयार करने महिलाओं के हित में भूमि अपरदन व वनसम्पदा की क्षति को रोकने का आह्वान, गरीबी हटाने पर व्यापक सहमति आदि।
10. अटलांटिक सम्मेलन 1998-ओजोन छेद में 02 करोड 50 लाख किलो मीटर की बढोतरी पर चिन्ता जताई गई।
11. सिएटल सम्मेलन, 1999- विश्व व्यापार संगठन की पर्यावरण व सामाजिक नीतियों की आलोचनाओं पर विचार-विमर्श किया गया।
12. सम्मेलन सन् 2000 जीन संशोधन फसलों के व्यापार में सावधानी बरतने के लिए बायोसैफ्टी प्रोटोकॉल जारी किया गया।
13. बॉन सम्मेलन, 2001- क्योटो प्रोटोकॉल की दृष्ट भूमि में जूलाई माह में जर्मनी के बॉन में विश्व मौसम परिवर्तन सम्बन्धि सम्मेलन आयोजित किया गया।
14. जोहान्सबर्न सम्मेलन, 2002 - जिसमें पर्यावरणीय प्रदूषण को रोकने के उपायों पर विचार - विमर्श किया गया।

अत: आज की आवश्यकता मानवाधिकार संरक्षण के लिए कुषल शासन की स्थापना, न्यायपालिका की स्वतंत्रता व निष्पक्षता, मानवाधिकार आयोग की सक्षमता, तथा लोगों में राजीतिक चेतना जगाना ही आवश्यक नहीं है, बल्कि इन व्यवस्थाओं को सुचारू रूप से कार्य करने के लिए व्यक्ति को अधिकारों के प्रति सशक्त और सजग होना पड़ेगा। तभी यह विश्व समुदाय एक उपवन की भाँति खिल सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः-

1. डॉ. मधु मंजरी दुबे, मानव अधिकार, सत्र 2004, पृ.-163
2. प्रो. आर.पी. जोशी, मानव अधिकार एवं कर्त्तव्य, सत्र- 2006 पृ.- 344,345
3. प्रो. मधुसूदन त्रिपाठी , भारत में मानवाधिकार सत्र-2008 पृ.- 18-19
4. प्रकाश नारायण नाटाणी, मानव अधिकार एवं कर्त्तव्य, सत्र 2007, पृ.-322
5. मधुमुकुल चतुर्वेदी, भारतीय संविधान मे व्यक्ति की गरीमा एवं मानव अधिकार, सत्र 2003. पृ.- 85,86
6. राजस्थान पत्रिका, सोमवार, 22 नवम्बर 1999
7. इण्डिया टुडे, 01 दिसम्बर, 1999 .

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. I

दक्षिणी राजस्थान में वर्षा की प्रवृत्ति, कृषि भूमि उपयोग का वर्गीकरण एक भौगोलिक विश्लेषण 2010-11

राजेन्द्र कुमार मेघवाल *

शोध सारांश – दक्षिणी राजस्थान में आज भी वर्षा की अनिश्चितता, विरलता, अनियमितता के कारण कृषि भूमि उपयोग में परिवर्तनशीलता देखने को मिल रही है। जिसका प्रभाव फसल प्रारूप पर पड़ रहा है। वर्षा ऋतु में अधिकांश जल व्यर्थ बहकर चला जाता है, उस व्यर्थ जल का प्रभावी उपयोग कृषि के अन्तर्गत किया जा सकता है। कृषि के विकास में उर्वरकों का उत्पादन बढ़ाना, प्रयोग में वृद्धि, गोबर और हरी खाद के उपयोग को प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता है। किस मिट्टी किस खाद की कितनी मात्रा की आवश्यकता है, इसका तकनीकी ज्ञान अधिकांश किसानों को नहीं है। उन्नत बीजों से अच्छी उपज की आशा की जा सकती है। दक्षिणी राजस्थान में विशेषकर बाँसवाड़ा, डूँगरपुर, प्रतापगढ़ जिलों में मुख्य जीविकोपार्जन का साधन कृषि है, जो मुख्य रूप से वर्षा की प्रवृत्ति से प्रभावित रहती है। क्षेत्र में विषम भौगोलिक परिस्थितियों में जनसंख्या पहाड़ी, ढालू, असिंचित एवं कम उर्वरता वाली कृषि भूमि पर छोटे-छोटे खेतों में कृषि फसलों का उत्पादन करते हैं।

प्रस्तावना –राजस्थान के दक्षिण भाग में स्थिति भीलवाड़ा, चित्तौड़गढ़, राजसमंद, उदयपुर, डूंगरपुर, बांसवाड़ा एवं प्रतापगढ़ (2008) वाला यह क्षेत्र दक्षिणी राजस्थान के नाम से जाना जाता है। इस क्षेत्र को मेवाड़ के नाम से भी जानते हैं। क्षेत्र के पूर्व में मालवा, पश्चिमी एवं उत्तरी सीमा पर अरावली पर्वतमाला फैली हुई है। क्षेत्र में बनास, माही एवं साबरमती नदियों का अपवाह तंत्र है। इस क्षेत्र से मध्य प्रदेश, गुजरात राज्यों की सीमा लगती है। अध्ययन क्षेत्र का विस्तार 23^0 1' 10'' उत्तरी अक्षांश से 26^0 1' 15'' उत्तरी अक्षांश तथा 73^0 1' 10'' पूर्वी देशान्तर से 75^0 43' 30'' पूर्वी देशान्तर तक स्थित है। क्षेत्रफल 47397 वर्ग किलोमीटर है। जनसंख्या सेन्सस 2011 के अनुसार 1,22,36,014 है। जो राजस्थान की कुल जनसंख्या (6,86,21,012) का 17.83 प्रतिशत हिस्सा है। क्षेत्र की पूर्व से पश्चिम की चौड़ाई 240 किलोमीटर है। जबकि उत्तर से दक्षिण की लम्बाई 210 किलोमीटर है। अध्ययन क्षेत्र में 2011 के अनुसार 54 तहसीलें सम्मिलित हैं। **(मेप देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

कृषि भूमि उपयोग – अध्ययन क्षेत्र में कृषि के परम्परागत उपकरणों का ही प्रयोग किया जा रहा है क्योंकि यहाँ पर उबड़-खाबड़ धरातल होने के कारण खेतों का आकार बहुत छोटा है तथा ग्रामीण क्षेत्र में आधुनिक कृषि तकनीकी ज्ञान के अभाव के कारण यहाँ पर कृषि चकबन्दी प्रणाली का अभाव है। साथ ही साथ मिट्टी की उत्पादन क्षमता का भी ह्रास हो रहा है। जिसके पीछे मुख्य कारण क्षेत्र के किसानों की उदासीनता रही है। जिन क्षेत्रों में कृषि के लिए अतिरिक्त भूमि उपलब्ध नहीं है, वहाँ गहन कृषि द्वारा उर्वरकों, रासायनिक खाद, उन्नत बीजों, कीटनाशकों, जैविक खाद, हरी खाद (गोबर खाद) का अधिक प्रयोग करके क्षेत्र में कृषि के उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। साथ ही फसलों की सघनता का अध्ययन प्राकृतिक दशाओं, सामाजिक, आर्थिक क्रियाओं से प्रभावित एवं निर्धारित होता है। वर्षा की प्रवृत्ति के फलस्वरूप कृषि भूमि उपयोग, जोत क्षेत्र पर क्या प्रभाव पड़ा है, इसका अध्ययन किया गया है। वर्षा की प्रवृत्ति धनात्मक रहती है, तो कृषि जोत क्षेत्र बढ़ेगा।जिसमें खरीफ की फसलों का उत्पादन बढ़ेगा साथ ही भूमिगत जल स्तर ऊँचा रहने से रबी की फसलों का जोत क्षेत्र भी बढ़ेगा, क्योंकि भूमिगत जल स्तर ऊँचा रहने से सिंचाई की पर्याप्त सुविधा मिल जायेगी। कभी-कभी अतिवृष्टि होने से खरीफ की फसलों में मक्का, उड़द, ज्वार, अरहर की फसलों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा लेकिन साथ ही साथ चावल की फसलों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा क्योंकि चावल की फसल के लिए उसकी जड़ों में हमेशा पानी की आवश्यकता रहती है। रबी की फसलें विशेषकर गेहूँ, जौ एवं चना का जोत क्षेत्र भी बढ़ेगा, क्योंकि गेहूँ की फसल के लिए सिंचाई की पर्याप्त आवश्यकता होती है, जिसके लिए भूमिगत जल स्तर का ऊँचा रहना अतिआवश्यक है। वर्षा की प्रवृत्ति नकारात्मक रहती है, तब भी खरीफ की फसलों के साथ-साथ रबी की फसलों का जोत क्षेत्र तो घटेगा ही साथ ही साथ क्षेत्र की आर्थिक क्रियाएँ भी प्रभावित होगी।

यह पूरा क्षेत्र बनास नदी का प्रवाह क्षेत्र है, इसकी समुद्रतल से ऊँचाई 150 मीटर से 300 मीटर के मध्य है, ढाल पूर्व दिशा की ओर है। यह मैदानी भाग कहीं पूर्ण समतल है, तो कहीं कटा-फटा है। सम्पूर्ण क्षेत्र में जलोढ़ मृदा का जमाव है, जो कृषि पैदावार के लिए उपयुक्त है। यह क्षेत्र माही नदी का प्रवाह क्षेत्र है जो मध्य प्रदेश से निकलकर इस प्रदेश से गुजरती हुई खम्भात की खाड़ी में गिरती है। यहाँ पर धरातल असमतल एवं कहीं छोटी-छोटी पहाड़ियाँ हैं। पहाड़ियों के मध्य संकीर्ण घाटियाँ हैं।

अध्ययन के उद्देश्य – दक्षिणी राजस्थान में वर्षा की विषमता, विरलता, विविधता एवं अनियमितता का कृषि भूमि उपयोग पर पड़ने वाले प्रभावों ज्ञात कर दीर्घकालीक योजनायें बनाने में मदद मिल सकेगी।

1. दक्षिणी राजस्थान में वर्षा की प्रवृत्ति का विश्लेषण करना।
2. अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि उपयोग के प्रारूप का अध्ययन करना।

विधि तंत्र – वर्तमान शोध कार्य दक्षिणी राजस्थान के 7 जिलों के अंतर्गत 54 तहसीलों को आधार मानकर किया गया है। आंकड़ों का संकलन द्वितीयक

* शोधार्थी (भूगोल) यू.सी.एस.एस.एच., एम.एल.एस.यू., उदयपुर (राज.) भारत

स्त्रोतों से किया गया है। आंकड़े जिला भू-अभिलेख, तहसील स्तर से लेकर राजस्व विभाग अजमेर, जिला सांख्यिकी रूपरेखा, अध्ययन में मुख्यतया द्वितीयक समंक का प्रयोग किया गया है। जो विभिन्न सरकारी प्रतिवेदनों भारत एवं राजस्थान सरकार के कृषि विभाग, राजस्व विभाग से प्राप्त किये हैं। सांख्यिकी उपागम द्वारा आंकड़ों का संकलन भू-राजस्व विभाग, सभी जिला मुख्यालय, जिला सिंचाई विभाग, मौसम विभाग, राजस्व विभाग अजमेर, योजना भवन जयपुर, जिला सांख्यिकी रूपरेखा से प्राप्त किये हैं।

दक्षिणी राजस्थान में वर्षा की प्रवृत्ति – अध्ययन क्षेत्र में विगत दशकों में वनों का अन्धाधुंध, अनियन्त्रित कटाई के कारण वर्षा की प्रवृत्ति पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। प्रदेश की सामाजिक व्यवस्थाएं भी कृषि जोत के आकार को लघु करती जा रही है। खातेदार की कृषि भूमि का बिखराव भी मानव श्रम व समय का उचित उपभोग करने में बाधक है। वर्तमान समय में कृषि प्रारूप का गहन विश्लेषण कर भविष्य की दीर्घकालीन योजनाएं बनाई जा सकती है।

दक्षिणी राजस्थान में औसत वार्षिक वर्षा की प्रवृत्ति 1981 से 2011

क्र.सं.	**वर्ष**	**औसत वर्षा (से.मी.)**	**घनात्मक/ ऋणात्मक**
1.	1981	65.12	– 0.97
2.	1982	51.92	– 14.17
3.	1983	82.56	16.47
4.	1984	68.25	2.16
5.	1985	57.80	– 8.29
6.	1986	48.21	– 17.88
7.	1987	43.85	– 22.24
8.	1988	63.11	– 2.98
9.	1989	66.82	0.73
10.	1990	87.73	21.64
11.	1991	63.53	– 2.56
12.	1992	76.66	10.57
13.	1993	63.31	– 2.78
14.	1994	99.21	33.12
15.	1995	47.08	– 19.01
16.	1996	67.76	1.67
17.	1997	65.22	– 0.87
18.	1998	66.73	0.64
19.	1999	43.42	– 22.67
20.	2000	39.99	26.10
21.	2001	63.33	– 2.76
22.	2002	38.77	– 27.32
23.	2003	65.80	– 0.29
24.	2004	63.99	– 2.10
25.	2005	82.55	16.46
26.	2006	127.24	61.15
27.	2007	64.26	– 1.83
28.	2008	58.44	– 7.65
29.	2009	64.54	1.55
30.	2010	85.60	19.51
31.	2011	65.99	– 0.01
	औसत	2048.79/31 =66.09	घनात्मक 12 वर्ष एवं ऋणात्मक 19 वर्ष

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में विगत 31 वर्षो की औसत वार्षिक वर्षा का विश्लेषण किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि 12 वर्ष (38.71 प्रतिशत) में घनात्मक वर्षा हुई है तथा 19 वर्ष (61.29 प्रतिशत ऋणात्मक वर्षा की प्रवृति ज्ञात हुई। इससे कह सकते हैं कि क्षेत्र में आज भी वर्षा की विरलता, अनिश्चितता, अनियमितता देखने को मिल रही है। जिसका मुख्य कारण जनाधिक्य में वृद्धि, कृषि भूमि का आवासीय भूमि में परिवर्तन तथा पेड़-पौधों, वनस्पतियों का अतिक्रमण एवं कटाई होना है।

कृषि भूमि उपयोग –

कृषि भूमि उपयोग का वर्गीकरण :-

(1) वन क्षेत्र

(2) कृषि अयोग्य भूमि

2.1 गैर कृषि उपयोग भूमि

2.2 बंजर एवं अकृषित भूमि

(3) अन्य अकृषित भूमि

3.1 स्थायी चरागाह तथा अन्य गोचर भूमि

3.2 वृक्षों के झुण्ड तथा बाग आदि से युक्त भूमि

3.3 बजंर

(4) पड़त भूमि

4.1 अन्य पड़त भूमि

4.2 चालू पड़त (एक वर्षीय)

(5) वास्तविक बोया हुआ कुल क्षेत्र (दूपज घटाकर)

(6) समस्त बोया हुआ क्षेत्र

(7) एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र (दूपज क्षेत्र)

अध्ययन क्षेत्र दक्षिणी राजस्थान में 2010-11 कृषि भूमि उपयोग के आंकड़ों का विश्लेषण करने से ज्ञात हुआ कि क्षेत्र में कुल भौगोलिक क्षेत्र 4893568 हैक्टेयर है। जिसमें से वन 893279 (18.25%), गैर कृषि उपयोग भूमि 334156 (6.83%), बंजर एवं अकृषित भूमि 784580 (16.03%), स्थायी चारागाह तथा अन्य गोचर भूमि 403663 (8.25%), वृक्षों के झुण्ड तथा बाग आदि से युक्त भूमि 2804 (0.06%), बंजर कृषि योग्य खाली भूमि 536899 (10.97%), अन्य पड़त भूमि 234467 (4.79%), चालू पड़त एकवर्षीय 78573 (1.61%), वास्तविक बोया हुआ क्षेत्र 1625147 (33.21%), समस्त बोया हुआ क्षेत्र 2511551 (51.32%), एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र 900904 (18.41%) है।

अध्ययन क्षेत्र में राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार 33% भाग पर वन क्षेत्र होना चाहिए।जबकि अध्ययन क्षेत्र में 18.25% है जो (-14.75) ऋणात्मक प्रतिशत को दर्शाता है। कृषि योग्य खाली पड़ी भूमि का प्रतिशत भी 10.97 है, जिसको कृषि की नवीन विधियाँ अपनाकर तथा वर्षा के जल का संग्रहण कर क्षेत्र में भूमिगत जल स्तर को ऊँचा करके कृषि योग्य खाली पड़ी भूमि को कृषि योग्य बनाना जिससे क्षेत्र में खाद्यान्नों, अनाजों, दालें रबी एवं खरीफ की फसलों की पैदावार बढ़ायी जा सके। अध्ययन क्षेत्र में वास्तविक बोया गया क्षेत्र 33.21 प्रतिशत है। जिसको बढ़ा कर 50 से 70% तक किया जा सकता है। यह तभी संभव है जब क्षेत्र में निवास करने वाले कृषक जीवन निर्वाहक मजदूर, मुख्य श्रमिक आदि मानव संसाधन जब पड़त तथा कृषि योग्य खाली

पड़ी भूमि का उपयोग कृषि उपजों के उत्पादन में करने लगेंगे तब स्वत: ही क्षेत्र में खाद्यान्नों के उत्पादन की समस्या का स्थायी समाधान मिला सकेगा। नवीन कृषि विधियाँ, उपकरण, संकर किस्म के बीजों का प्रयोग, हार्वेस्टर, ट्रेक्टर, डीजल इंजन, थ्रेसर आदि कृषिगत तकनीकी उपकरणों का प्रयोग जब पहाड़ी उबड-खाबड़, पठारी एवं कठोर धरातलीय भूमि में कृषि की फसलों के उत्पादन के रूप में ग्रामीण क्षेत्र में होना चाहिये। जिससे वहाँ के किसानों के द्वारा उत्पादित अनाजों को, मिश्रित जिन्सों को मण्डियों तक पहुँचाया जा सके। अध्ययन क्षेत्र में निवास करने वाले किसानों भविष्य उज्ज्वल एवं भावी विकास की योजनाओं का स्थायी समाधान मिल सके।

निष्कर्ष – अध्ययन क्षेत्र में आज भी भौगोलिक, जलवायु, उच्चावच, धरातलीय ढाल, मिट्टी की उपजाऊपन, जलोढ़ एवं काली मिट्टी का क्षेत्र होने के कारण यहाँ पर हर जिले में फसलों में परिवर्तनशीलता एवं प्रारूप में बदलाव देखने को मिल रहा है। यदि हम खाद्यान्नों का अध्ययन करें तो ज्ञात होता है कि क्षेत्र में गेहूँ, चावल, ज्वार, बाजरा, मक्का, तिलहन आदि फसलें अधिक क्षेत्र में बोई जाती है। जो वर्षा की प्रवृत्ति पर निर्भर रहती है। जिन फसलों में पैदावार कम हो रही है या कम क्षेत्र में बोई जा रही है, उनका क्षेत्र बढ़ाने के लिए आधुनिक तकनीकी, संकर किस्म के बीज कृषि उपकरण हार्वेस्टर, थ्रेसर एवं रासायनिक खाद फास्फोरस, पोटास, नाईट्रोजन, डी. ए. पी. एवं जैव रासायनिक खाद, गोबर, सड़ी-गली पत्तियां आदि का प्रयोग अधिक करके क्षेत्र में सभी फसलों का सामंजस्य या समन्वय या तालमेल बनाया जा सकता है जिससे क्षेत्र के लोगों का आर्थिक एवं कृषि भूमि उपयोग का अधिकतम अनुकूलतम उपयोग हो सके जिससे रबी की फसलों का जोत क्षेत्र बढ़े ताकि व्यर्थ बह रहे पानी का भी समुचित उपयोग हो सकेगा और इसी पानी से रबी की फसलों के लिए पर्याप्त मात्रा में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो जायेगी और क्षेत्र में खरीफ के साथ-साथ रबी की फसलों का क्षेत्र तो बढ़ेगा ही और भूमिगत जल स्तर भी ऊँचा रहेगा जिससे भविष्य में सिंचाई की समस्या का स्थायी समाधान हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. S. L. Kayastha & M. B. Singh (1979) : An analysis of rainfall and production of wheat in the drought prone Gwalior – Chambal regions of M.P.
2. कटियार बी. एस. 1987 : 'भारतीय मानसून और इसकी सीमाएँ' नई दिल्ली, अन्तर भारत प्रकाशन
3. क्रिचफील्ड हॉवर्ड जे. (2000) : 'सामान्य जलवायु विज्ञान' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी' ।
4. शुक्ला, जे. (1987) : मानसून की अंतरवार्षिकी परिवर्तनशीलता
5. स्वामीनाथन एम. एस. (1987) : 'मानसून की भविष्यवाणी, चेतावनी एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रभाव' ।
6. युवा जावदे (1987) : 'वर्षा तापमान का वर्तमान दृश्य' ।

वेबसाइट –

1. http://en/wikipedia.org/wiki/meteorology
2. www.weatherbase.com
3. http//www.absc.net.au/science/slab/elmino/story.html.
4. http//www.cia.gov/library/publication/the world face book

****

दक्षिणी राजस्थान में कृषि गहनता का वितरण (2010-11 से 2012-13) - एक भौगोलिक विश्लेषण

लक्ष्मीनारायण माली *

प्रस्तावना – कृषि भूमि मानव का आधारभूत संसाधन है। भारत प्राचीनकाल से ही कृषि प्रधान देश रहा है। कृषि ग्रामीण जीवन की आधार शिला है तथा अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। कृषि राष्ट्रीय आय का मुख्य स्रौत रही है। वर्ष 1960-61 में 51.3 प्रतिशत 1665-66 में 54.5, 1989-90 में 39.9 प्रतिशत तथा 2007-08 में 19.8 प्रतिशत राष्ट्रीय आय कृषि से प्राप्त हुई है।

भारत के सकल घेरलू उत्पाद में कृषि का योगदान 17.8 प्रतिशत था वहीं भारत के विदेशी व्यापार में कुल निर्यात में 76006 करोड़ रुपये था, जो कुल निर्यात का 12.2 प्रतिशत था। भारत में कृषि भूमि क्षेत्रफल अन्य देशों के मुकाबले उच्चतम स्तर पर है। जहां भारत में कुल भूमि के 47.8 प्रतिशत भूभाग पर कृषि कार्य होता है। वहीं विश्व के अन्य देशों जैस- रूस में 10.8, संयुक्त राज्य अमेरिका में 16.3 प्रतिशत, कनाडा 4.3, जापान 14.9, चीन 11.8 व म्यांमार में 24 प्रतिशत भूमि कृषि के अन्तर्गत है।

भारत की तरह राजस्थान राज्य में भी कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। राज्य में 222.1 लाख सकल कृषि क्षेत्रफल है जो कि रिर्पोटिंग क्षेत्र का 54.8 प्रतिशत भाग कृषि व सहायक क्रियाओं का है। वहीं कुल कृषि क्षेत्रफल में राज्य का प्रथम उत्तर प्रदेश व द्वितीय महाराष्ट्र के बाद तृतीय स्थान आता है। दक्षिणी राजस्थान के सन्दर्भ में अध्ययन किया जाये तो इस भाग में 2001 के अनुसार उदयपुर, चित्तौड़गढ़, राजसमंद, डुंगरपुर, बाँसवाड़ा में कुल क्षेत्रफल 36942 वर्ग किमी. है, जो राज्य के कुल क्षेत्रफल का 10.71प्रतिशत भाग है। इस क्षेत्र की जनसंख्या 8957324 है। यह राज्य की जनसंख्या का 7.6 प्रतिशत है।

दक्षिणी राजस्थान में प्रतिकाश्तकार भूमि 1971 में 0.85 हेक्टर थी, जो 1991 में 0.71 हैक्टर व 2001 में घटकर 0.65 हेक्टर तक पंहुच गयी है। यह आंकड़े स्पष्ट कर रहे हैं कि निरन्तर उपलब्ध कृषि भूमि कम होती जा रही है। जनसंख्या का आकार व खाधान्न आवश्यकता बढ़ती जा रही है।

यदि अध्ययन क्षेत्र में कुल सिंचित क्षेत्र का विश्लेषण किया जाये तो राज्य में 1966 में कुल सिंचित क्षेत्र 20 लाख 80 हजार हैक्टर था, जबकि अध्ययन क्षेत्र में 2 लाख 30 हजार हैक्टर भाग सिंचित था जो कुल राज्य के सिंचित क्षेत्र का 11 प्रतिशत था। वर्ष 2008 में राज्य में जहां कुल सिंचित क्षेत्र 62 लाख 45 हजार हैक्टर पंहुच गया जबकि अध्ययन क्षेत्र में यह बढ़कर मात्र 3 लाख 76 हजार हैक्टर था जो राज्य के कुल सिंचित क्षेत्र का मात्र 6 प्रतिशत था।

राज्य का दक्षिणी भाग अपना विशिष्ठ स्थान है। क्योंकि यह क्षेत्र प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है व रोजगार व उद्योग धन्धे कृषि से जुड़े हुऐ हैं। कृषि विकास की नई नीति बनाने व वर्तमान कृषि उत्पादकता का मूल्यांकन करने की आवश्यकता है। यदि समय रहते इन स्थितियों का समाधान नहीं किया गया तो राजस्थान राज्य में भी पंजाब, छत्तीसगढ़ व छत्तीसगढ़ व पश्चिमी बंगाल की भांति कृषि के आर्थिक रूप से फायदेमंद न होने व कर्ज के भार में कृषक आत्महत्या का रास्ता अपनाने लगेंगे। देश के कृषि राज्यमंत्री ने संसद में बयान दिया है कि 1995 से 2011 के बीच 290470 किसानों ने आत्महत्या की है। यह संख्या औसतन 1700 प्रतिवर्ष है। देश में हर 3 घण्टे में कहीं न कहीं कोई किसान आत्महत्या कर रहा है।

प्रस्तुत शोध कार्य दक्षिणी राजस्थान के फसल प्रतिरूप को स्पष्ट करेगा वहीं क्षेत्र विशेष का कृषि भूमि उपयोग व फसल प्रारूप किस प्रकार का है? व अध्ययन क्षेत्र में कौन-कौन से कारक प्रतिरूप को प्रभावित कर रहे हैं, उनका विश्लेषण किया जायगा। प्रमुख फसलों की उत्पादकता व संयुक्तत फसल उत्पादन के स्तर के स्तर के साथ गैर जनजाति तहसीलों व जनजाति तहसीलों के मध्य तुलनात्मक अध्ययन किया जायेगा। जिसमें कृषि उत्पादन में वृद्धि कर कृषि का विकास किया जा सके। फसल उत्पादकता स्तर पर अध्ययन के फलस्वरूप दक्षिणी राजस्थान के उन क्षेत्रों का ज्ञान होगा जो आसपास के क्षेत्रों की तुलना में कम उत्पादन कर रहे हैं। इससे कम मध्यम व उच्च उत्पादकता की कोटिया निर्धारित की जायेगी है। जिससे प्रादेशिक असमानताओं को दूर करने एवं योजनाओं के निर्माण में सहायता मिलेगी।

उद्देश्य –

1. दक्षिणी राजस्थान की कृषि गहनता का तहसील स्तर पर निर्धारण करना।
2. दक्षिणी राजस्थान के कृषि गहनता के पिछड़ी तहसीलों की पहचान कर निवारण के उपाय खोजना।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत शोध में अध्ययन क्षेत्र राजस्थान का दक्षिणी भाग है। जिसमें उदयपुर, चित्तौड़गढ़ राजसमंद, डुंगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़ जिले शामिल किये गये हैं। यह क्षेत्र 230 1' 11 से 260 1' 15 उत्तरी अक्षांश व 730 1' 10 से 750 43' 30 पूर्वी देशान्तर तक विस्तृत है। इस क्षेत्र में 47397 वर्ग किमी. क्षेत्र तथा 38 नगर व 10038108 व्यक्ति निवास करते हैं। अध्ययन क्षेत्र की पूर्वी सीमा पर मध्यप्रदेश राज्य स्थित है वहीं पश्चिमी सीमा पर गुजरात राज्य स्थित है तो उत्तरी भाग में पाली, अजमेर, भीलवाड़ा सीमा बनाते हैं। क्षेत्र के दक्षिणी भाग में गुजरात व मध्यप्रदेश संयुक्त रूप से सीमा निर्धारित करते हैं। अध्ययन क्षेत्र में जहां अरावली पर्वतमाला का दक्षिणी भाग स्थित है जहां उच्चतम शिखर 'गुरूशिखर' स्थित है वहीं बासवाड़ा व डुंगरपुर में छप्पन का मैदान का विस्तार मिलता है। भोराठ का पठार व लसाड़िया का पठार भी इस क्षेत्र के उत्तरी भाग में अवस्थित है। तो बनास, साबरमती, माही जैसी प्रमुख

* शोधार्थी (भूगोल) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

नदियां इस भाग में बहती है। कृषि उपजों के रूप में मक्का, मुगफली, अफीम, चावल, गेंहू का उत्पादन होता है।

स्पष्ट है कि शोध का अध्ययन क्षेत्र विविधताओं से युक्त है। व राजस्थान का दक्षिणी भाग में विस्तृत एवं महत्वपूर्ण भौगोलिक क्षेत्र है। दक्षिणी राजस्थान में मुख्यत: छ: जिलों को सम्मिलित किया गया है। उदयपुर, डुंगरपुर, चित्तौड़गढ़, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़, राजसमंद। भोराठ का पठार उदयपुर के उत्तर पश्चिम में कुंभलगढ़ व गोगुन्दा में फैला हुआ है तो दक्षिण में माही नदी के अपवाह तंत्र से बांसवाड़ा, डुंगरपुर, प्रतापगढ़ जिला लाभान्वित हो रहे हैं। अध्ययन क्षेत्र में 6 जिलों की 46 तहसीलें शामिल हैं।

जिला	तहसीलें
उदयपुर	मावली, गोगुन्दा, झाड़ोल, गिर्वा, वल्लभनगर, लसाड़िया, सलुम्बर, सराड़ा, खेरवाड़ा, कोटड़ा, ऋषभदेव
राजसमंद	भीम, आमेट, कुम्भलगढ़, राजसमंद, रेलमगरा, नाथद्वारा, देवगढ़
बांसवाड़ा	घाटोल, बांसवाड़ा, बागीदोरा, कुशलगढ़, गढ़ी।
डुंगरपुर	डुंगरपुर, आसपुर, सागवाड़ा, सीमलवाड़ा।
चित्तौडगढ़	निम्बाहेड़ा, चित्तौड़गढ़, भदेसर, गंगरार, बड़ीसादड़ी, डूंगला, बेगू, कपासन, राशमी, रावतभाता।
प्रतापगढ़	छोटी सादड़ी, धरियावद, अरनोद, पीपलखूंट, प्रतापगढ़

विधि तंत्र वे आँकड़े – प्रस्तुत शोध में 3 वर्ष 2010-13 के आँकड़ों के औसत को आधार मानकर

कृषि गहनता ज्ञात की गई है जिसमें निम्न सूत्र का प्रयोग किया गया है।

$$\text{कृषि गहनता} = \frac{\text{कुल फसल क्षेत्र}}{\text{शुद्ध बोया गया क्षेत्र}} \times 100$$

प्रस्तुत शोध में द्वितीयक आँकड़ों का प्रयोग किया गया है जो निम्नलिखित स्त्रोतों से प्राप्त हुए है

1. जिला सांख्यिकी रूपरेखा।
2. भू-अभिलेख कार्यालय।
3. कृषि विभाग की सारणियों से।

कृषि गहनता – कृषि गहनता से आशय उस फसल क्षेत्र से है, जिस पर वर्ष में एक फसल के अतिरिक्त अन्य कई फसलें उगायी जाती है। शुद्ध कृषि क्षेत्र (Not area Sown) तथा दुहरी या अनेक फसल क्षेत्र को मिलाकर कुल फसल क्षेत्र (Total Cropped Area) का सम्बोधन होता है। किसी भी क्षेत्र में शुद्ध बोया गया क्षेत्र की अपेक्षा कुल फसल क्षेत्र का अधिक होना, कृषि गहनता की मात्रा को प्रदर्शित करता है। कृषि गहनता वह सामयिक बिन्दू है, जहाँ भूमि, श्रम, पूंजी तथा प्रबन्ध का सम्मिश्रण सर्वाधिक लाभप्रद सिद्ध होता है। क्योंकि भूमि एक स्थायी कारक है, मानवीय श्रम की अधिकता है तथा बेरोजगारी भी अधिक है। कृषि जीवन निर्वाह का एक माध्यम मात्र है फार्म आकार छोटा है और कृषि उद्यम का रूप धारण नहीं कर पायी है। वास्तव में यहाँ कृषि गहनता सिंचाई साधन, बीज, खाद तथा मशीनों की उपलब्धि पर आधारित रहती है। यही कारण है कि भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में बड़े फार्मों की अपेक्षा छोटे आकार के फार्मों में कृषि गहनता अधिक होती है क्योंकि कृषक, पारिवारिक श्रम तथा अन्य लागतों का भरपूर प्रयोग करता है। इस प्रकार, कृषि गहनता संकल्पना का प्रादुर्भाव एक ही खेत में एक ही वर्ष में एक से अनेक फसलों की उत्पादन मात्रा से होता है। कृषि गहनता की गणना निम्न सूत्र के आधार पर की जाती है।

$$\text{कृषि गहनता} = \frac{\text{कुल फसल क्षेत्र}}{\text{शुद्ध बोया गया क्षेत्र}} \times 100$$

दक्षिणी राजस्थान में कृषि गहनता का वितरण
(2010-11 से 2012-13)

कृषि गहनता(प्रतिशत में)	श्रेणी	तहसीलों की संख्या
180.9-166.61	उच्चतम	7
152.32-166.61	उच्च	12
138.3-152.32	मध्यम	14
123.74-138.03	न्यूनतम	10
123.74-109.45	अतिन्यूनतम	3
	कुल	46 कुल तहसीलें

दक्षिणी राजस्थान में कुल 46 तहसीलें है, जिनमें सर्वाधिक कृषि गहनता छोटी सादड़ी 180.66 प्रतिशत रही है, जबकि न्यूनतम कृषि गहनता छोटी सरवन तहसील 109.45 रही है। सारणी 1 द्वारा स्पष्ट है कि दक्षिणी राजस्थान में उच्चतम स्तर 180.9-166.61 वर्ग के अन्तर्गत 7 तहसीलें क्रमशः छोटी सरवन निम्बाहेड़ा, चित्तौड़गढ़, बेगू, बड़ी सादड़ी, भदेसर, आसपूर शामिल है। तो उच्च कृषि गहनता वर्ग में जो 152.32 से 166.61 तक है उसमें दक्षिणी राजस्थान की 12 तहसीले क्रमश: घाटोल, गढ़ी, देवगढ़, पीपलखूट रावतभाटा, सागवाड़ा, प्रतापगढ़, राजसमंद, गंगरार, अरनोद, कपासन, सलूम्बर, धरियावद है।

दक्षिणी राजस्थान में फसल गहनता के अन्तर्गत मध्यम श्रेणी में 138.3 से 152.32 के वर्ग में 14 तहसीलें शामिल होती है। जिसमें प्रमुख है- मावली, गोगुन्दा, रेलमगरा, नाथद्वारा, वल्लभनगर, भीम बाँसवाड़ा, डूँगला कुम्भलगढ़, बागीदौरा सराड़ा, सज्जनगढ़ एवं बड़गाँव है। वही निम्न गहनता वर्ग के अन्तर्गत 10 तहसीले झाडोल, लसाडिया, सीमलवाड़ा, डूँगरपुर, राशमी, गिर्वा, कुशलगढ़, आमेट, ऋषभदेव शामिल की जाती है।

अन्तिम अतिनिम्नवर्ग में मात्र 3 तहसीलें खेरवाड़ा, कोटड़ा, व छोटी सरवण है।

यदि हम मोटे रूप में कृषि गहनता के वितरण को जिला स्तर पर अध्ययन करें तो पाते है कि चित्तौड़गढ़, बाँसवाड़ा व प्रतापगढ़ की तहसीलें सर्वाधिक उच्च्तम व उच्च गहनता वर्ग में स्थान बना रही है जबकि उदयपुर, डूँगरपुर जिले की तहसीलें निम्न से अति निम्न वर्ग में आ रही है।

भौगोलिक दृष्टि से कृषिगहनता वितरण का अध्ययन करने पर स्पष्ट हों जाता है कि दक्षिणी राजस्थान का उत्तरीपूर्वी भाग में गहनता अधिक है क्योंकि वहाँ सिंचाई के साधन, बीज, उर्वरक तथा मशीनों की उपलब्धता तथा यदि दक्षिणी राजस्थान की औसत गहनता देखें तो हम पाते है कि यह 153.55 प्रतिशत है। सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में केवल 21 तहसीलें ही अध्ययन क्षेत्र के औसत से अधिक गहनता रखती है, जबकि शेष 25 तहसीलें औसत गहनता से भी कम प्रतिशत रखती है जो एक शोचनीय प्रश्न है।

उपाय –

1. सिंचाई की उपलब्धता में वृद्धि की जाये।
2. उत्तम बीज, मशीनीकरण, यन्त्रों का उपयोग, ऊवरकों को उपयोग बढ़ाया जाय।
3. वित्तीय सहायता व अनुदानों में वृद्धि।
4. शोध को बढ़ावा।

5. कृषकों को शिक्षित किया जाये।
6. कृषि योग्य भूमि में वृद्धि करने हेतु अन्य भूमि को भी कृषि योग्य बनाने के प्रयास किये जाय।

निष्कर्ष – उपरोक्त निष्कर्ष से स्पष्ट है कि दक्षिणी राजस्थान में कृषि गहनता का वितरण बिखरा हुआ है उस पर सिंचाई, उर्वरक, कृषकों की शिक्षा का स्तर, वर्षा की अनिश्चिता सहित, आर्थिक, सामाजिक कारक प्रभावित कर रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 'कृषि भूगोल' – माजिद हुसैन।
2. 'कृषि भूगोल' – अलका गौतम।
3. 'कृषि भूगोल' – बी.एल. शर्मा व पलक भारद्धाज।
4. 'कृषि भूगोल' – आर.सी. तिवारी।
5. 'कृषि भूगोल' – बृज भूषण सिंह।

****

जनजातीय उपयोजना क्षेत्र में शैक्षणिक विकास- डूंगरपूर जिले का एक अध्ययन

बिन्दिया सोनी * डॉ. पलक भारद्वाज **

प्रस्तावना – यह सर्वमान्य है कि शिक्षा आर्थिक उन्नति एवं सामाजिक सम्मान के लिए आवश्यक है। भारत में शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन के रूप में देखा जाता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार के लिए शिक्षा की उपलब्धता करवाने को प्राथमिकता दी गई। इस हेतु विभिन्न योजनाओं द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में कई प्रयास किये जा रहे हैं। केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा जनजातियों की विद्यालय व महाविद्यालय स्तर की शिक्षा से सम्बन्धित, कई योजनाएं चलाई जा रही है। केन्द्र सरकार की राष्ट्रीय स्तर पर सामान्य कार्यक्रम के अन्तर्गत विद्यालय स्तर पर जनजातियों के लिए नि:शुल्क शिक्षा, नि:शुल्क पाठ्य पुस्तकें व शिक्षा का उचित वातावरण प्रदान करने के लिये कई योजनाएं चलाई जाती हैं।जिन योजनाओं का क्रियान्वयन एवं नियन्त्रित राज्य सरकार जनजाति आयोग करता है।

विभिन्न योजनाओं के संचालन या क्रियान्वयन व सुविधाओं कि उपलब्धता के बावजूद भी यह कहा जा सकता हैं कि समाज का यह वंचित वर्ग इन योजनाओं का पूर्ण लाभ नहीं ले पा रहा हैं। इसका प्रमुख कारण योजनाओं का उचित ढंग से प्रसारित न किया जाना है। कुछ दशकों से अनुसूचित जनजातियां सभी क्षेत्रों में विकास की ओर अग्रसर हुई है परन्तु यदि वस्तुस्थिति देखें तो अभी तक भारत में अनुसूचित जनजातियों के शिक्षा संबंधी आँकडे बहुत निराशाजनक रहे हैं। भारत देश के कुछ हिस्सों मे गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा आज भी चुनौतिपूर्ण मुद्दा या विषय है। भारत के संविधान में अनुसूचित जनजातियों के लिये विशिष्ट प्रावधान है। धारा 46 के अनुसार राज्य के कमजोर वर्गो के लोगों को और विशेष रूप से अनुसूचित जनजातियों को शिक्षा और आर्थिक हितों से लाभान्वित करना चाहिये और उनकी सामाजिक अन्याय तथा सभी प्रकार के शोषण रक्षा करनी चाहिए। 2009 में 6 से 14 वर्ष आयु के बच्चों को शिक्षा का मौलिक अधिकार प्रदान करता है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य – जनजातीय विकास नीति – प्रथम पंचवर्षीय योजना में जनजातियों के लिए कोई स्पष्ट योजना नही थी परन्तु सामुदायिक विकास दृष्टिकोण के माध्यम से अतिरिक्त वित्तीय संसाधन जुटाने पर जोर दिया गया। यही दृष्टिकोण द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान भी जारी रहा। तृतीय पंचवर्षीय योजना के दौरान जनजातीय विकास हेतु एक अन्य कार्यनीति विकसित की गई। जिसमें उन सामुदायिक विकास खण्ड जिनमें जनजातीय जनसंख्या दो तिहाई या उससे अधिक थी, को जनजातीय विकास खण्ड में बदल दिया गया। चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक जनजातीय विकास खण्ड की देश में संख्या 504 हो गई परन्तु यह कार्यनीति पूर्णत: सफल नहीं मानी गई है क्योंकि इन जनजातीय विकास खण्ड के बाहर रहने वाली देश की 60 प्रतिशत से ज्यादा जनसंख्या को इस नीति का लाभ नहीं मिल पाया।

जनजातीय उपयोजना क्षेत्र–जनजातीय लोगों के त्वरित सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए प्रो. एस. सी. दुबे की अध्यक्षता में शिक्षा और समाज कल्याण मंत्रालय द्वारा 1972 में गठित एक विशेष समिति द्वारा जनजातीय उपयोजना कार्यनीति विकसित की गई। जिसे पहली बार पांचवीं पंचवर्षीय योजना में अपनाया गया और तब से यह कार्यनीति जारी है।

अनुसूचित क्षेत्र–राज्य के सन्दर्भ में स्थित 5 जिलों की 23 तहसीलों को मिलाकर अनुसूचित क्षेत्र निर्मित किया गया है। जिसमें जनसंख्या सघन आवास है। 2011 की जनगणनानुसार इस क्षेत्र की जनसंख्या 57.34 लाख है, जिसमें 41.88 लाख अनुसूचित जनजाति है, जो इस क्षेत्र की ज.स. का 73.17 प्रतिशत है। अनुसूचित क्षेत्र में सम्मिलित 5 जिलों में बांसवाड़ा, डूंगरपूर जिले, उदयपुर (7पूर्ण तहसीले तथा गिर्वा तहसील के 123 गांव–अधिसूचना के पश्चात अनुसूचित क्षेत्र में सम्मिलित इस मूल गांवों से वर्ष 1991–2001 एवं 2001–2011 के बीच टुटकर कर बसे नवीन राजस्व ग्रामों एवं जनगणना कस्बे सहित व गोगुन्दा तहसील के 52 ग्राम),प्रतापगढ़ जिले(प्रतापगढ़,अरनोद, धरियावाद व पीपलखूंट तहसीलें)तथा सिरोही जिले की आबूरोड़ तहसील का आबूरोड़ ब्लॉक सम्मिलित है। इस क्षेत्र में आवासित जनजातियों में भील, मीणा, गरासिया, डामोर प्रमुख हैं।

अध्ययन क्षेत्र का भौगोलिक परिचय–अध्ययन क्षेत्र डूंगरपुर जिला राजस्थान राज्य के दक्षिण में स्थित राज्य का तीसरा सबसे छोटा जिला है। जिसका क्षेत्रफल 3770 वर्ग किमी. है। अक्षांशीय विस्तार $23^{0}21$‘ से $24^{0}01$‘उतरी अक्षांश तथा देशान्तरीय विस्तार $73^{0}21$‘ से $74^{0}23$‘पूर्वी देशान्तर है। इसके उत्तर में उदयपुर, उत्तर पूर्वी में प्रतापगढ़, पूर्व व दक्षिण पूर्व में बांसवाड़ा तथा दक्षिण–पश्चिम में गुजरात राज्य से सीमा बनाता है। डूंगरपुर जिला भौगालिक दृष्टि से विविधता युक्त है। एक तरफ उत्तर–पूर्व में जंगल व उबड़–खाबड़ भूमि है तो दक्षिण–पश्चिम में कछारी मृदा के उपजाऊ मैदान है। इस क्षेत्र में ‘दक्षिणी–राजस्थान की गंगा’ कही जाने वाली माही व उसकी सहायक सोम नदी प्रवाहित होती है। यहां का अधिकांश धरातल पथरीला एवं पहाड़ी है। डूंगरपुर जिले की जलवायु शुष्क है। यहां सामान्यत: वर्षा 76.107 मिलीमीटर होती है। इस क्षेत्र की मृदा अधिकांश लाल–लोमी मृदा है। इसके अलावा दक्षिणी–पश्चिमी भाग में कछारी मृदा भी मिलती है। वन वम्पदा की दृष्टि से यह जिला धनी है किन्तु यह क्षेत्र औद्योगिकी दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। सोपस्टोन, ग्रीन मार्बल, ग्रेनाइट, युरेनियम, फ्लोर्सपार आदि खनिज के भण्डार यहाँ पाये जाते हैं।

* शोधार्थी (भूगोल) मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** व्याख्याता (भूगोल) एस.एम.बी. राजकीय महाविद्यालय,नाथद्वारा (राज.) भारत

जनगणना 2011 के अनुसार डूंगरपुर जिले की कुल जनसंख्या 13,88,552 है, जो राज्य की कुल जनसंख्या का 2.02 प्रतिशत है। यहां का जनसंख्या घनत्व 368 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. है। इस जिले की कुल जनसंख्या का 93.60 प्रतिशत ग्रामीण तथा 6.39. प्रतिशत नगरीय क्षेत्र में निवास करती है। डूंगरपूर जिले का लिंगानुपात 2011 जनगणना के अनुसार 100 पुरूषों पर 984 महिलाएँ है। यहाँ की साक्षरता दर 49.09 प्रतिशत है जिनमें पुरूष साक्षरता दर 59.70 प्रतिशत है तथा महिला साक्षरता दर 38.41 प्रतिशत है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र में जनजाति उपयोजना क्षेत्र में शैक्षणिक विकास के स्तर को मध्य नजर रखते हुए निम्नांकित शोध उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं –

1. अध्ययन क्षेत्र में शैक्षिक संस्थाओं का विवरण प्रस्तुत करना।
2. अध्ययन क्षेत्र में साक्षरता की प्रवृत्तियों का अध्ययन करना।
3. अध्ययन क्षेत्र में शैक्षिक विकास हेतु सरकार के प्रयासों का मूल्यांकन करना।
4. अध्ययन क्षेत्र डूंगरपूर जिले में साक्षरता दर की वृद्धि हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

अध्ययन विधि– प्रस्तुत शोधपत्र द्वितीयक स्त्रोतों के आंकडो पर आधारित है, आंकड़ों का संकलन जनगणना रिपोर्ट 2001, 2011 से तथा शैक्षणिक संस्थाओं संबंधित आंकडे जिला सांख्यिकी रूपरेखा 1993, 2001, 2011 तथा आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय के विभिन्न प्रकाशनों एवं जनजातीय उप–योजना क्षेत्र संबंधी आंकडे सम्बन्धित कार्यालयों से प्राप्त किये गये है।

डूंगरपूर जिले में शैक्षणिक विकास का स्तर –

प्राथमिक शिक्षा का स्तर –डूंगरपूर जिले में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में 1991 से 2011 की समयावधि के दौरान वृद्धि रही। जिले में 1991 में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 743 थी जो वर्ष 2001 में 30.69 प्रतिशत वृद्धि के साथ 971 हो गई। वर्ष 2001 से 2011 तक प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 94.13 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई जिससे इनकी संख्या बढ़कर 1885 हो गई।

उच्च प्राथमिक शिक्षा का स्तर – डूंगरपूर जिले में उच्च प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में वर्ष 1991 से 2001 के दौरान वृद्धि दर्ज की गई परन्तु यह वृद्धि प्राथमिक विद्यालयों की तुलना में कम थी। वर्ष 1991 में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 207 थी जो वर्ष 2001 के दौरान 64.25 प्रतिशत बढ़कर प्राथमिक विद्यालय की संख्या 340 हो गई। वर्ष 2001 से 2011 तक जिले में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में 87.25 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की जिससे यह संख्या बढ़कर 637 हो गई।

शैक्षणिक संस्थाओं की संख्या

स्तर	**1991**	**2001**	**2011**
प्राथमिक विद्यालय	743	971	1885
उच्च प्राथमिक विद्यालय	207	340	637
माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक विद्यालय	78	115	300
महाविद्यालय	2	4	13
कुल शैक्षणिक संस्था	**1030**	**1430**	**2835**

जिला सांख्यिकी रूपरेखा

माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक शिक्षा का स्तर –अध्ययन क्षेत्र में माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक विद्यालयों की संख्या में वर्ष 1991 से 2001 की अवधि में दौरान वृद्धि हुई। वर्ष 1991 में माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक विद्यालयों की संख्या 78 थी। जो 2001 में 47.44 प्रतिशत बढ़कर 115 हो गई। वर्ष 2001 से 2011 तक माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक विद्यालय की संख्या में 160.84 प्रतिशत बढ़कर यह विद्यालयों की संख्या 300 हो गई।

उच्च शिक्षा स्तर – अध्ययन क्षेत्र डूंगरपूर जिले में 1991में महाविद्यालयों की संख्या 2 थी जो बढ़कर वर्ष 2001 में 4 हो गई। जिले में 1991 से 2001 की तुलना में वर्ष 2001–2011 की समयावधि के दौरान महाविद्यालयों की संख्या में अधिक वृद्धि हुई तथा तथा वर्ष 2011 में महाविद्यालयों की संख्या बढ़कर 13 हो गई।

सकल नामांकन का स्तर – डूंगरपूर जिले में 1991 में विद्यालयों में सकल नामांकन की संख्या 86441 था जो 2001 में 62.92 प्रतिशत के साथ 140831 हो गया। वर्ष 2001 से 2011 की समयावधि के दौरान विद्यालय के सकल नामांकन में 11.35 प्रतिशत ऋणात्मक वृद्धि दर्ज की गई। डूंगरपूर जिले में विद्यालय में सकल नामांकन में छात्र व छात्राओं का प्रतिशत 1991 में क्रमश: 68.33 प्रतिशत तथा 31.67 प्रतिशत था। वर्ष 2001 में छात्र के नामांकन में कमी दर्ज की गई तथा छात्र का सकल नामांकन में 55.44 प्रतिशत तथा छात्राओं के नामांकन में वृद्धि दर्ज की गई तथा छात्राओं का सकल नामांकन में 44.56 प्रतिशत रहा। वर्ष 2001 से 2011 में सकल नामांकन में छात्र व छात्राओं दोनो नामांकन में वृद्धि दर्ज की गई। 2011 में छात्र व छात्राओं का सकल नामांकन में नामांकन प्रतिशत क्रमश: 52.22 प्रतिशत व 47.78 प्रतिशत है।

डूंगरपूर जिले में अनुसूचित जनजातियों का शैक्षिक स्तर – भारत एवं राजस्थान में अनुसूचित जनजाति तथा गैर अनुसूचित जनजातियों की साक्षरता दर में तथा ग्रामीण एवं नगरीय परिप्रेक्ष्य में पर्याप्त अन्तर है। वर्ष 2011 जनगणना आँकडों को देखने से स्पष्ट होता है कि सम्पूर्ण भारत में ही जनजातियों की गैर जनजातियों के साक्षरता स्तर की तुलना में साक्षरता स्तर निम्न है। राजस्थान में तो यह अन्तर और भी अधिक दृष्टिगत होता है।

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार राजस्थान की साक्षरता दर 66.1 प्रतिशत है। राजस्थान, बिहार व अरूणाचल प्रदेश के बाद राजस्थान तीसरा न्यूनतम साक्षरता दर वाला राज्य है। डूंगरपूर जिले की साक्षरता दर 49.09 प्रतिशत है जो राजस्थान की साक्षरता दर की तुलना में काफी कम है। राजस्थान व डूंगरपूर जिले की पुरूष व महिला साक्षरता दर की तुलना की जाए तो हमें अधिक अन्तर देखने को मिलता है। राज्य में पुरूष व महिला साक्षरता दर क्रमश: 79.2 तथा 52.1 प्रतिशत जबकि डूंगरपूर जिले में पुरूष साक्षरता दर 59.70 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 38.41 प्रतिशत है कि राज्य की साक्षरता दर से तुलनात्मक रुप से कम है।

उपरोक्त आँकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि डूंगरपूर जिले में अनुसूचित जनजातियों में पुरूषों की तुलना में महिला साक्षरता दर काफी कम है। डूंगरपूर जिले की अनुसूचित जनजातियों की साक्षरता दर (53.01 प्रतिशत) की तुलना राजस्थान की साक्षरता दर (66.1 प्रतिशत) से की जाए तो ये काफी कम है। जिले में सर्वाधिक अनुसूचित जनजातीय साक्षरता दर डूंगरपूर पंचायत समिति (56.91प्रतिशत) में है तथा न्यूनतम आसपुर पंचायत समिति (48.29प्रतिशत) में है।

जिले में अनुसूचित जनजातीय साक्षरता दर में अगर महिला साक्षरता दर की बात की जाए तो महिला साक्षरता दर (39.37प्रतिशत) पुरूष साक्षरता दर (66.85प्रतिशत) से कम है। जिले में अधिकतम अनुसूचित जनजातीय महिला साक्षरता दर डूंगरपूर पंचायत समिति (42.53) तथा

न्यूनतम सिमलवाड़ा पंचायत समिति (35.74 प्रतिशत) में है।

सुझाव – जनजाति उपयोजना क्षेत्र में केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा संचालित व प्रायोजित विभिन्न योजना संचालित की जा रही है परन्तु इन योजनाओं का समुचित तरीके से क्रियान्वयन नहीं किया जा रहा है। जिसके कई कारण उत्तारदायी है जिनमें से राजनैतिक और क्षेत्रीय विभिन्नताएं प्रमुख बाधक रहती है। अध्ययन क्षेत्र डुंगरपूर जिला दक्षिणी राजस्थान का जनजातीय बहुल क्षेत्र है, जो कि विशेष भौगोलिक परिस्थितियों वाला क्षेत्र है। जिले अधिकांश भू-भाग उपत्यकाओं से घिरा हुआ है। जिससे यहाँ की सामाजिक व आर्थिक क्रियाएँ अत्यधिक रूप से प्रभावित होती है। क्षेत्र के शैक्षिक विकास के लिए विभिन्न सरकार योजनाओं के सफल क्रियान्विति हेतु स्थानीय प्रशासकों को प्रदेश की भौगोलिक दशाओं से सुपरिचित होना आवश्यक है। इसके साथ ही स्थानीय नागरिकों और प्रशासकों के मध्य समन्वय होना जरूरी है। अत: सरकार व जनप्रतिधियों को विकास की मूल भावनाओं को मध्य नजर रखते हुए योजनाओं के सफल क्रियांवयन हेतु प्रयास करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जनगणना रिपोर्ट 2001, 2011
2. जिला सांख्यिकी रूपरेखा 1993, 2001, 2011
3. राजपूत, के.एस. (2010), 'जनजातीय समाज में शिक्षा, जागरूकता एवं विकास' Tribe, Vol. 42, No. 2, (2010), माणिक्य लाल वर्मा जनजाति शोध संस्थान, उदयपुर (राज.)
4. माथुर, प्रताप (1992), 'गरीबी उन्मूलन एवं विकास योजनाओं का जनजातियों के जीवन और संस्कृति पर प्रभाव :डूंगरपुर जिले की सीमलवाड़ा पंचायत समिति का सामाजिक एवं आर्थिक मूल्यांकन' माणिक्य लाल वर्मा जनजाति शोध संस्थान, उदयपुर (राज.)

****

कृषि आधुनिकीकरण का पर्यावरण पर प्रभाव (इन्दौर जिले की साँवेर तहसील के संदर्भ में)

धर्मेन्द्र सिंह चौहान *

प्रस्तावना – कृषि मानव का एक प्राचीनतम व्यवसाय है। भूमि को जोतने, फसल को उगाने और काटने, पशुओं को पालने और पशुधन को बढ़ाने के विज्ञान अथवा कला को कृषि के नाम से जाना जाता है।

कृषि तथा मानव का संबंध दीर्घकालिक है, जिसका विकास तो लेखन कला के पूर्व हुआ था, परंतु आज 'सुपर टैक्नोलॉजी के युग में भी बना हुआ है।' भोजन एवं आवास का स्त्रोत होने के साथ ही कृषि अन्य कार्यों के विकास में भी सहायक हैं। कई उद्योगों के लिए कृषि कच्चे मालों का स्त्रोत हैं, जैसे–सूती, ऊन एवं जूट वस्त्रोद्योग, शक्कर उद्योग, फल एवं सब्जियों पर आधारित उद्योग, रबर उद्योग आदि। यही कारण है कि औद्योगिक क्षेत्रों में औद्योगिक विकास की संभावनाएँ बढ़ जाती है, जहाँ कृषि उन्नत होती है। कृषि के विकास के साथ ही यातायात तथा व्यापार जैसे आर्थिक कार्य भी विकसित होते हैं। कृषि केवल प्राकृतिक कारकों का परिणाम नहीं है, अपितु मानव निर्मित दशाएँ भी इसके प्रतिरूप को निश्चित करने में महत्वपूर्ण है।

भू–श्रमिकों खेतों का आकार, क्षेत्रफल एवं वितरण कृषि श्रमिकों की उपलब्धि, कृषि के उपयोग में आने वाले औजार, सिंचाई की सुविधा, बाजार की स्थिति, यातायात के साधन एवं कृषि के दृष्टिकोण सभी कृषि भूमि उपयोग को प्रभावित करते हैं। वर्तमान शताब्दी में वैज्ञानिक तथा तकनीकी ज्ञान के प्रयोग द्वारा प्राकृतिक अवरोधों पर नियंत्रण पाने का प्रयास जारी है। जैसे–सिंचाई, रासायनिक उर्वरक कीटनाशकों का प्रयोग, उन्नत बीज, यंत्रीकरण तथा स्वचालित मशीनों का उपयोग आदि इसमें सम्मिलित हैं। अत: कृषि भूमि विकास की योजनाएँ उत्पादन में कारगर सिद्ध हो सकती है।

शोध समस्या का चयन – वर्तमान समय आधुनिकीकरण का है, इसमें कृषि क्षेत्र भी पीछे नहीं है। परंतु कृषि विकास के साथ ही पर्यावरणीय संकट पैदा हो रहा है। कृषि में नये–नये प्रयोगों से न केवल मानव समुदाय प्रभावित हो रहा है वरन् पशु समुदाय एवं वनस्पति समुदाय को भी खतरा पैदा हो गया है। शोध क्षेत्र में अंधाधुंध तरीके से रासायनिक तत्वों का प्रयोग किया जा रहा है। जिससे आने वाले समय में भूमि बंजर भी हो सकती है। अत: यह शोध का विषय है।

अध्ययन का उद्देश्य –

1. अध्ययन क्षेत्र में कृषि कार्य हेतु उपलब्ध साधनों का आँकलन किया गया।
2. कृषि के आधुनिक तरीकों का अध्ययन किया गया।
3. कृषि के आधुनिकीकरयण से लाभ का अध्ययन किया गया।
4. आधुनिक कृषि से उत्पन्न पर्यावरण समस्याओं का अध्ययन किया गया।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र में इंदौर जिले की साँवेर तहसीलें के 20 ग्रामों को दैव निर्दशन पद्धति से शोध हेतु चुना गया तथा प्रत्येक ग्राम से 10 कृषक परिवारों को लिया गया। इस प्रकार, 200 उत्तरदाताओं से प्राथमिक आँकड़ों का संकलन साक्षात्कार, अनुसूची, समूह चर्चा के माध्यम से किया गया। द्वितीयक आँकड़ों का संकलन जिला सांख्यिकी, भू–अभिलेख विभाग, कृषि विस्तार अधिकारी, जल संसाधन विभाग, मंडी कार्यालय से लिया गया।

अध्ययन क्षेत्र का परिचय – सन् 2011 के अनुसार सांवेर क्षेत्र की जनसंख्या 171292 है। जिसमें से ग्रामीण कृषक जनसंख्या 87819 है। क्षेत्र का भौगोलिक क्षेत्रफल 64348 हेक्टेयर, कुल ग्राम 126 औसत वर्षा 608 मिमी. (2015) है। शुद्ध बोया गया क्षेत्र 55184 हेक्टेयर है, द्विफसली क्षेत्र 47013 हेक्टेयर एवं पड़त भूमि 818 हेक्टेयर हैं। अध्ययन क्षेत्र ने बोयी जाने वाली प्रमुख खरीफ फसलों में सोयाबीन, मक्का, ज्वार, सब्जियाँ, अरहर, तिल, मूँगफली आदि है। रबी की फसलों में गेहूँ, चना, आलू, जौ, सरसों, राई, लहसून, प्याज प्रमुख है। जायद की फसलों में प्याज, उड़द, मूंग आदि प्रमुख है। साँवेर तहसील मालवा के पठार के अंतर्गत आने वाला उपजाऊ क्षेत्र है। यहाँ मिट्टी प्रमुखत: भूरी एवं काली है। क्षेत्र में प्रमुख रूप से क्षिप्रा एवं गंभीर नदी बहती है, जो क्रमश: कांकरी बर्डी इंदौर तथा जानापाव मानपुर (महू) से निकलती है। अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई का प्रमुख स्त्रोत कुंआ एवं ट्यूबवेल है।

अध्ययन क्षेत्र के चयनित ग्राम – बरलाई जागीर (वीएलसी कोड 99), अजनोद (80), रतनखेड़ी (53), धतुरिया (41), कछालिया (146), पाडल्या हैदर (74), सोलसिन्दा (87), पोटलोद (145), मगरखेड़ी (82), कुड़ाना (31), पाल कांकरिया (55), कदवाली बुर्जुग (122), बालरिया (4), कमल्या खेड़ा (40), कायस्थ खेड़ी (27), जामोदी (77), बघाना (67), कजलाना (94), गुरान (139)

अध्ययन क्षेत्र का मानचित्र –

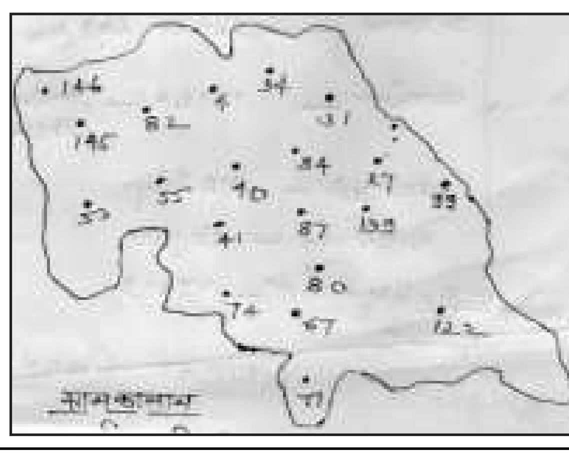

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

शोध अध्ययन –

1. अध्ययन क्षेत्र में कृषि कार्य हेतु आधुनिक साधनों की उपलब्धता–

साधन	कृषक परिवारों की संख्या/प्रतिशत	प्रतिशत
ट्रेक्टर	130	65
थ्रेशर मशीन	150	75
हायरवेस्टर	20	10
सिंचाई पंप	200	100
स्प्रिंगलर पाईप	120	60
ट्रिप सिंचाई	75	37.5
खाद डालने की मशीन	90	45
आलू बोने की मशीन	100	50
लहसून बोने की मशीन	120	60
प्याज का पौधा लगाने की मशीन	60	30
खरपतवार/कीटनाशक दवाई	140	70
डालने की मशीन		
वेयर हाऊस सुविधा	120	60
कोल्ड स्टोरेज सुविधा	80	40
स्वयं बिजली ट्रांसफार्मर खुद का	110	55

उपरोक्त प्राथमिक आँकड़ों के अनुसार आधुनिक साधनों में तीव्र गति से वृद्धि हुई है। मात्र दो या तीन साधन ऐसे हैं, जिनकी उपलब्धता 50 प्रतिशत से कम है। अन्य साधन 50 प्रतिशत से अधिक उपलब्ध हैं।

रासायनिक खाद का उपयोग –

रासायनिक खाद	उपयोग करने वाले परिवारों की संख्या	प्रतिशत
सूपर फॉस्फेट	160	80
इफको	180	90
यूरिया	190	95
डी.ए.पी	150	75
पोटाश	140	70
सल्फर	120	60
फास्फोरस	130	55
जिंक	150	75

शोध प्राप्त उपरोक्त आँकड़ो में 80% परिवार सुपर फॉस्फेट, 90% इफको, 95% यूनिया, 75% डी.ए.पी., 70% पोटाश, 60% सल्फर, 65% फॉस्फोरस, 75%जिंक का प्रयोग अपनी कृषि में करते हैं।

खरपतवार नाशक दवाई का उपयोग –

विकल्प	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	160	80
नहीं	20	10
कभी–कभी	20	10
योग	200	100

कीटनाशक दवाई का उपयोग –

विकल्प	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	170	85
नहीं	20	10
कभी–कभी	10	5
योग	200	100

उपरोक्त तालिकाओं के अनुसार 80% कृषक खरपतवार नाशक दवाई का प्रयोग करते हैं तथा 85% कृषक कीटनाशक दवाई का प्रयोग करते हैं। कभी–कभी प्रयोग करने वाले कृषकों का प्रतिशत 10% तथा 5% है।

कृषि आधुनिकीकरण से लाभ –

विकल्प	आवृत्ति	प्रतिशत
उत्पादन में बढ़ोतरी	100	50
समय की बचत	50	25
भूमि सुधार	20	10
आर्थिक लाभ	15	7.5
श्रम की बचत	15	7.5
योग	200	100

उपरोक्त अध्ययन के अनुसार 50% कृषक आधुनिकीकरण को उत्पादन में बढ़ोतरी का कारण मानते हैं। 25% इसे समय की बचत बताते हैं। 10% कृषकों को मानना है कि आधुनिक यंत्रों से भूमि सुधार हुआ है तथा 15% कृषक इससे मानवीय श्रम की बचत एवं आर्थिक लाभ मानते हैं।

कृषि आधुनिकीकरण से उत्पन्न पर्यावरणीय समस्याऐं –

विकल्प	आवृत्ति	प्रतिशत
पर्यावरण प्रदूषण	100	50
वनोन्मूलन	20	10
पशु–पक्षियों की प्रजातियों का विलुप्त होना	20	10
बीमारियों का प्रकोप	40	20
मानवीय धन की कमी	20	10
योग	200	100

उपरोक्त अध्ययन के अनुसार 50% कृषक आधुनिकीकरण को पर्यावरण प्रदूषण का कारण मानते हैं। जिसमें वायुप्रदूषण, जलप्रदूषण, मृदा प्रदूषण प्रमुख है। 10% कृषक यह मानते हैं कि कृषि में रासायनिक तत्वों के प्रयोग में बहुत से पशु–पक्षियों की प्रजातियाँ विलुप्त हो गयी हैं, जो मित्र कीट या अन्य रूप में कृषकों की सहायता करती थी। 40% कृषक मानते हैं कि रासायनिक तत्वों के शरीर में जाने से दमा, अस्थमा, कैंसर, लकवा, मोटापा, गैस, हाइपरटैंशन, हार्ट अटैक, हाई ब्लड प्रेशर, सिरदर्द, सर्दी–जुकाम जैसी घटक बीमारियों का प्रकोप बढा है। 20% कृषकों का मानना है कि आधुनिक यंत्रों के प्रयोग के कारण ग्रामीण बेरोजगारी बढ़ी है तथा लोगों में कृषि कार्य के प्रति उदासीनता एवं आलस्य ने जन्म लिया है।

कृषि आधुनिकीकरण का पर्यावरण पर प्रभाव – खाद्य समस्या का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष कृषि है। विश्व जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ भोजन की मांग भी बढ़ती जाती है। विकसित राष्ट्रों में मशीनीकरण उर्वरकों का उपयोग कृषि की प्रति एकड़ ऊपज में वृद्धि करता जा रहा है।

भू–वैज्ञानिकों का मत है कि भारत में प्रति वर्ष 76,000 वर्गफीट भूमि एवं लगभग 6 अरब टन मिट्टी का कटाव होता है, जो अपने साथ पौधों के लगभग 90 लाख टन प्रमुख उर्वरक तथा पोषक तत्वों को बढ़ाकर ले जाता है। आगामी 20 वर्ष तक यही स्थिति रही तो एक तिहाई कृषि भूमि पूर्णत: नष्ट हो जाएगी। भारत में पशुओं की संख्या दिन पर दिन बढ़ने से अनियंत्रित चराई हो रही है, इसमें चरागाहों की भूमि आवरण रहित अथवा नग्न हो जाती है तथा मिट्टी का कटाव भी बढ़ जाता है।

उर्वरकों से समस्याएँ – रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग आधुनिकी कृषि का परिचायक है। इनका अत्यधिक उपयोग मृदा के उपजाऊपन को कम करता है तथा भूमि क्षरण को बढ़ाता है। पौधे को मुख्यत: तीन पोषक तत्वों नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटेशियम की विशेष आवश्यकता होती है।

मृदा परीक्षण तथा पौधों की आवश्यकतानुसार सूक्ष्म पोषक तत्व भी दिए जाते हैं। इन तत्वों की पूर्ति हेतु फसलों को यूरिया, फास्फेट्स, पोटाश आदि उर्वरक दिए जाते हैं। यदि वे उर्वरक आवश्यकता अनुरूप सन्तुलित मात्रा में दिए जाए तो लगभग प्राप्त होता है, अन्यथा लगातार अधिक मात्रा में इनके प्रयोग से मिट्टी की प्राकृतिक उर्वरकों के उपयोग से फसलों का एकांगी विकास होता है तथा पौधे बीमारी के शिकार हो जाते हैं। भारत के संदर्भ में इन उर्वरकों का अध्ययन किया जाए, तो ज्ञात होगा कि भारतीय अर्थव्यवस्था की जीवन रेखा, कृषि उर्वरकों के कारण आज मृत्यु रेखा में परिवर्तित होती जा रही है। दिन-दूनी रात-चौगुनी जनसंख्या वृद्धि के कारण खाद्यान्नों, दलहनों, तिलहनों, सब्जी, फल-फूल, चारा आदि की पूर्ति के लिए रासायनिक उर्वरकों एवं कृषि रसायनों का प्रयोग कृषकों की मजबूरी बनता जा रहा है। यह मजबूरी कृषि योग्य मृदा को सिर्फ बदतर ही नहीं बना रही बल्कि वह सभी प्रकार के कृषि उत्पादों, वायु, जल एवं पर्यावरण को भी प्रदूषित कर रही है। आज मानव में जटिल से जटिली बीमारियाँ इन्हीं खाद्यान्नों तथा दूध के सेवन से हो रही है।

कीटनाशकों के दुष्परिणाम – फसलों, सब्जियों, फूलों तथा फलों में लगने वाले कीट बीमारियों से रक्षा के लिए रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग कृषि में किया जाता है। इसके गंभीर दुष्परिणाम होते हैं। कीटनाशक रसायनों के अंतर्गत विभिन्न प्रकार के कीटनाशक सम्मिलित है, जैसे-फफूंदी नाशक, खरपतवार नाशक, सूक्ष्म कीटनाशक, कृषिनाशक श्रमक, रोड़ेप्टिसाईड्स इत्यादि।

निष्कर्ष –

1. शोध क्षेत्र में कृषि कार्य में संलग्न कृषकों के पास पर्याप्त मात्रा में आधुनिक कृषि यंत्र उपलब्ध हैं, जिससे समय एवं श्रम की बचत होती है।
2. औसत रूप से क्षेत्र का लगभग 80 प्रतिशत कृषक वर्ग रासायनिक खाद एवं दवाईयों का उपयोग करता है।
3. शोध क्षेत्र में कृषक आधुनिक कृषि के कारण कर्ज में डुबता जा रहा है।
4. शोध में एक विचारणीय बिन्दु सामने आया वह यह कि 20 ग्राम में से 15 ग्राम में कैंसर पीड़ित की संख्या 50 थी जो कि आने वाले समय के लिए खतरा पैदा कर सकता है।
5. आधुनिक यंत्रों द्वारा वनों की कटाई भारी मात्रा में की गई, जिसके कारण वन संपदा का ह्रास हुआ है।
6. कृषि आधुनिकीकरण से पर्यावरण प्रदूषण बढ़ा है। वायुमण्डल में रासायनिक तत्वों का प्रभाव बढ़ा है।
7. मृदा की फसल उत्पादन की एक सीमा होती है, उससे अधिक प्राप्त करने की लालसा में क्षेत्र के कृषक भूमि की उत्पादकता का निरंतर ह्रास कर रहे हैं।
8. अनेक पक्षियों की प्रजातियाँ तथा वे कीट जो किसान मित्र कहे जाते हैं।
9. क्षेत्र के 80 प्रतिशत कृषक उत्पादन बढ़ोतरी से तो खुश हैं किंतु मृदा की निरंतर घटती उत्पादन क्षमता से चिन्तित भी है।

सुझाव –

1. कृषि क्षेत्र में जैविक कृषि को बढ़ावा देने की आवश्यकताहै। जिससे आर्थिक बचत के साथ-साथ पर्यावरणीय समस्याओं से छुटकारा पाया जा सकता है।
2. शोध क्षेत्र में कृषि अनुसंधान करने की पर्याप्त आवश्यकता है।
3. भंडारण क्षमता, कोल्ड स्टोरेज, विपणन साख समितियाँ आदि को बढ़ाने हेतु कार्य-योजना तैयार करनी चाहिए।
4. वर्तमान समय में सबसे बडी चुनौती है कि कृषकों को रासायनिक खादों तथा दवाईयों के अंधाधुंध प्रयोग से रोका जाए।
5. शासन को चाहिए कि कीटनाशकों की दुकानों की जाँच कर नकली माल बेचने से रोका जाए।
6. जैविक प्रशिक्षण कार्यक्रम हर ग्राम में चलाया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अवस्थी, नरेन्द्र मोहन : 'संसाधन और पर्यावरण' (2005), म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पेज नं. 1, 19
2. खत्री, हरीश कुमार (2013) : 'भारत का भूगोल', कैलाश पुस्तक सदन भोपाल, पेज नं. 54, 57, 112, 117
3. कुमार, प्रमीला : 'कृषि भूगोल' (2005), म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पेज नं. 42-44
4. ओम प्रकाश : 'मृदा संरक्षण के सिद्धांत' (2001), राम पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ, पेज नं. 1-5
5. जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, जिला इंदौर (वर्ष 2011, 2015)
6. www.indianformer.com
7. www.census2011.com

****

A Study Of Social Support Among Working Women In Relation To Period Of Marital Life

Dr. Mamta Barman *

Abstract - Social support is a concept that is generally understood in an intuitive sense, as the help from other people in a difficult life situation. It is the physical and emotional comfort given to us by our family, friends, co-workers and others. Educated girls and married women have been entering into various kinds of jobs. With multiplicity of roles and rigid expectations her behavior becomes very complex in terms of 'expected' and actual' conduct, and women need a flexible approach to life and work. Therefore in the present study an attempt has been made to explore the impact of period of marital life in relation to social support among married working women. 75 married women working in BSNL were selected. Social support scale for working women (Arora, M. and Kumar, R. 1992) was used. Findings of the study reveal that there is an impact of period of marital life on social support of married women working in BSNL.
Key word - Social Support, Period of Marital Life working women.

Introduction - Increased opportunities in education and employment has improved the status of a women. In the present day urban societies of India, marriage and work for educated women has great importance and sociological interest. So, the married women's coming out of the four walls of their homes to seek gainful employment.

Various studies have found out that today economic necessity is not the only reason for their seeking jobs. There are various other socio-psychological motivations behind it, e.g. to use their talents, to achieve a position or an individual status of their own, to be economically independent, to make their contribution to society, to satisfy their ambition of having a career and so forth.

This emerging trend of educated married women's taking up employment is liable to affect her entire personality and the marital and family relationship. Now she has two roles to perform, one of a housewife and the other of a wage-earner. Bothe these roles make demands on her time and energy and she is quite often torn between the conflicting pulls of the dual role. This may cause imbalance between the two roles much depends on the nature of work and the working condition of the work place and the social support she receive from different persons within and outside the family.

Social support is the expression of liking, admiration, respect, love and agreement as well as the provision of direct aid and assistance. People don't need too many sources of support to reduce stress. Selective few relationship are more than enough to maintain well being. It may come from work environment or formal institutions or informal in the form of help. Cobb, 1976 defines social support as 'the individual belief that one is care for and loved, esteemed and valued, and belongs to a network of communication and mutual obligations.

The major objective of the study is to examine the effect of period of married life on social support among married working women. It was hypothesized that, "there will be no impact of period of marital life on social support among married working women."

Method - 75 married women working in BSNL were selected for the study. Social Support Scale for working women developed by Arora, M. and Kumar, R. (1992) was administered. Responses were to be given on a seven point scale ranging from not at all (score=0) to too much (score=6). The total member of items in the questionnaire are 38. Alpha coefficient of the scale was calculated for actual and expected social support and was found to be respectively 0.98 and 0.90.

Table : Comparative results of Social Support among BSNL employees in relation to period of marital life

Period of Marital Life	N	Mean	S.D.
<10	21	183.33	27.90
10-20	39	169.64	36.52
>20	15	142.33	35.64

From the results presented in the above table it is clear that there is impact of period of marital life on social support of married female employees of BSNL. The value of 'F' ratio is 6.39 which is more than 3.13 the minimum value for significance at 0.05 level. Hence the hypothesis is rejected here.

Thus, from the above results it may be concluded that there is an impact of period of marital life on social support of married women working in BSNL. Those period of marital life is below ten years need more social support in comparison

***Asst. Professor (Psychology) Govt. P.G. College, Narsinghpur (M.P.) INDIA**

to other groups of marital life.

Social support may satisfy human needs for affection, approval, social contact and security. It also reduces interpersonal tension and generally having often positive effects in the work environment which may directly reduce stress. It provides regular positive experiences in the social net work. Lock (1976) found that supportive working conditions and supportive colleagues reduce stress. Anderson (1991) examined how social networks function as support systems and their effectiveness in buffering the effects of organizational stress.

Status of a women as a whole has improved. Husband being educated realize the fact that the wife has to put extra time and energy in the job and home and so they are willing to share in the household tasks and thus lesser the burden of their wives. Nag and Vaish (1977) revealed that the employed wives being subjected to dual demand of home as well as work have role expectations from their husbands involvement in household chores compared to the non-employed wives. The husbands of employed wives expect less from them as compared to non-employed wives.

Due to the changed situation, among the educated urban couples, more so among the educated working wife couples, both husband and wife are more conscious for the duties and obligations of others and their own privileges. It is very essential that attitudes of both men and women have to be changed to wards female workers. She has the 'right to enter' and has actually started erning, working in various job and professions.

References:-

1. Antony, M.J. (1989); Women's Rights. Hindi Private Limited Delhi.
2. Berk, S.F. (1980); Women and Household Labour. Sage Publication California.
3. Dak, T.M. (1988); Women and work in Indian Society. Discovery Publishing House Delhi.
4. Lin,N; Ye, X., (1999); Social Support and depressed Mood. Journal of Health and Social Behaviour. Vol. 40 Pg. 344-359

Summary ANOVA table

Source of Variations	**d.f.**	**Sum of Squares**	**Mean Square**	**F-Ratio**	**'P' Value**
Between Groups	2	14924.01	7462.01	6.39	<0.01
Among Groups	72	84028.97	1167.07		

Degrees of freedom – 2,72 Minimum value at 0.05 level – 3.13

Minimum value at 0.01 level – 4.92

****

टी.वी. के पारिवारिक सीरियलों का कामकाजी एवं गृहिणी महिलाओं पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव (भोपाल नगर के सन्दर्भ में)

ममता व्यास *

प्रस्तावना - आज विश्व की आधे से अधिक जनसंख्या की आदतों में टेलीविजन और उसके कार्यक्रमों की चर्चा करना एक आम बात है। आज टी.वी. वो सशक्त माध्यम है जिसकी पहुंच जन-जन तक हो गयी है। माना कि ये सब आधुनिक तकनीकी कारणों से संभव हुआ है, लेकिन जन साधारण में सूचनाओं, शिक्षा तथा मनोरंजन का सबसे प्रभावशाली माध्यम टी.वी. ही है। इन सभी कार्यक्रमों के पीछे सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिदृश्य है। यह सही है कि सांस्कृतिक भिन्नता है, लेकिन टी.वी. सभी के पास पहुँच चुका है। विभिन्न स्तरों में अंतर गरीब-अमीर, शहरी-ग्रामीण ,महिला, युवा पुरुषों तथा बच्चों तक इसकी पहुँच है। वर्तमान में सामाजिक भूमिका स्वीकार की गई है। यह भूमिका सकारात्मक और नकारात्मक दोनों हैं।

भारत में, एक अनुमान के मुताबिक लगभग 5-8करोड़ लोग टी.वी. देखते हैं, जिनमें सभी आयु वर्ग और शहरी तथा ग्रामीण दोनों सम्मलित हैं। एक करोड़ से अधिाक लोग टी.वी. कम्युनिटी सेट्स के जरिए जानकारियां प्राप्त करते हैं। कुल मिलकर लगभग तीस करोड़ लोग टी.वी. देखते हैं। एक तथ्य यह भी है कि लगभग 70करोड़ लोग ऐसे है, जो टी.वी. नहीं देखते हैं या टी.वी. से वंचित हैं।

वर्तमान सन्दर्भों में टी.वी. एक जन माध्यम है। नियमित रूप से टी.वी. के कार्यक्रमों और जानकारियां उच्च, मध्य तथा निम्न वर्ग को एक साथ एक समय में प्राप्त हो रही हैं। जब लोगों की आर्थिक स्थितियों में सुधार आएगा तो निश्चित रूप से ज्यादा से ज्यादा लोगों तक इस माध्यम की पहुँच होगी, लेकिन इस समय यह माध्यम सामाजिक रूप में शहरी लोगों के लिए अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।

टीवी पर प्रसारित किये जाने वाले कार्यक्रम ज्यादातर उच्च मध्यम वर्ग के लोगों के लिए हैं। टीवी में जिस प्रकार के कार्यक्रम प्रसारित जा रहे हैं। वे ज्यादातर संभ्रान्त वर्गों को ध्यान में रखकर बनाये जा रहे हैं केवल समाचार और समाचारों से सम्बंधित कार्यक्रम ही सामान्य लोगों के लिए हैं। इन कार्यक्रमों से सबसे ज्यादा महिलायें और बच्चे प्रभावित हो रहे हैं।

इस संचार माध्यम ने लोगों के व्यक्तिगत जीवन में घुसपैठ की है, लोगों के निजी जीवन में भी इसकी ताकझांक से बच नहीं पाया है। मानव व्यवहार का अध्ययन करने वाले मनोवैज्ञानिकों ने इस विषय पर कई सारे शोध कई परीक्षण किये हैं।

भारत के सन्दर्भ में देखे तो भारत में सेटेलाईट टेलीविजन के आगमन ने दर्शक वर्ग को काफी प्रभवित किया। दूरदर्शन के नीरस कार्यक्रमों से ऊबे मध्यम वर्ग के दर्शकों को काफी सारे विकल्प मिल गए थे। महिलाएं और बच्चों ने इसे अपने जीवन की सबसे जरुरी चीज बना लिया। भारतीय परिवारों ने इन चैनलों को सर आंखों पर बिठाया। कार्टून्स, हिंदी फ़िल्में, देशी धारावाहिक और कार्यक्रम। लेकिन इस मीठे जहर ने हमारे समाज में चुपके से हमारे परिवारों में धीरे-धीरे अपना जाल बिछाया है। कार्टूनों में हिंसा दिखाई जाती है, पारिवारिक धारावाहिकों में अंतर्कलह अंतर पारिवारिक अफेयर्स और हिंसा परोसी जा रही है। खलनायिकाओं की क्रूरता और चालें महिलाओं और बच्चों को प्रभावित करती हैं।

जीवन की आपाधापी और बाजार द्वारा पैदा किए तनाव की वजह से थके-मांदे लोग खासकर महिलाएं इन सीरियलों में पलायन खोजते हैं। इन सरियलों का बच्चों पर भी घातक प्रभाव पड़ रहा है। ये धारावाहिक ऐसे अकल्पनीय परिवारों का निर्माण अपनी स्क्रिप्ट और कहानियों में कर रहे है, जिनकी कल्पना आम जनजीवन में नहीं की जा सकती। हैरानी के बात यह है कि स्वयं स्त्रियाँ भी इन घटिया और षड्यंत्र चरित्रों को अपने ऊपर फिल्माएँ जाने से कतई परेशान नहीं दिखती हैं। इन सीरियलों में ग्लैमर की चकाचौंध तो दिखती है, लेकिन भारतीय स्त्री की जो कुंठाए मानवीय तकलीफे, आर्थिक अक्षमताएं और दबाव हैं, उन पर बहस कोई धारावाहिक नहीं करता।

टी.वी. के पारिवारिक धारावाहिकों का सर्वाधिक दुष्प्रभाव वैवाहिक संबंधों पर पड़ रहा है। घर में आने वाली, नयी नवेली दुल्हन अपनी ससुराल में सास-ससुर, जेठ-जेठानी, देवर-देवरानी और पति की तुलना और उनका आंकलन अपने प्रिय टी.वी. सीरियल से करने लगती है। जिसका प्रभाव उनके अंतर्वैयक्तिक संबंधों में खींचतान के रूप में बाहर आता है।

महिलाओं की जीवन-शैली, रहन-सहन व्यवहार यहां तक कि भाषा भी प्रभावित हो रही है। टीवी धारावाहिकों ने परिवार को एकल व्यक्ति के रूप में बांटने का काम किया है, ये धारावाहिक स्त्री और परिवार के रूप को विद्रूप करके दिखाते हैं। स्त्री कामकाजी हो या ग्रहणी उसके जीवन में टीवी सीरियलों का प्रभाव बखूबी देखा जा रहा है ।

पूर्व में इस विषय पर कुछ अध्ययन किये गए जिनका विवरण इस प्रकार है :-

नीलम अहिरवार (2005-2008)'महिलाओं पर टी.वी., धारावाहिकों का प्रभाव'-उपरोक्त शोध के परिणाम बताते हैं कि ज्यादातर महिलाएं, धारावाहिकों को फेमिली और फैशन , ग्लैमर के कारण पसंद करती हैं, जी-टी.वी., स्टार प्लस, कलर्स को क्रमश: 24%, 32%, एवं 55%महिलाएं पसंद करती हैं।

इन टी.वी. धारावाहिकों का 48% महिलाओं की मनोस्थिति पर फर्क नहीं पड़ता है, जबकि 32% महिलाएं प्रभावित होती हैं। वे धारावाहिकों को

* शोधार्थी, श्री सत्य सांई यूनिवर्सिटी आफ टेक्नोलॉजी एंड मेडिकल साइंस, सीहोर (म.प्र.) भारत

68% महिलाएं समय व्यतीत करने के लिए देखती हैं।

राकेश गौतम (1994-95) **'केबिल टी.वी. का प्रभाव'-** केबिल टीवी के धारावहिकों का महिलाओं एवं बच्चों पर बहुत असर पड़ता है। केबल टी.वी. के चैनलों पर बच्चों को जो कुछ भी दिखाया जा रहा है, उस पर उनके माता-पिता का सख्त नियंत्रण होना चाहिए।

जयप्रकाश चौकसे (फिल्म समीक्षक) मुंह में च्युंगम और दिमाग में रबर की तरह फैलते हुए सीरियलों ने मध्यम वर्ग का जीवन ही बदल दिया। उसका इतिहास बोध गया, सौन्दर्य बोधा नष्ट हो गया और भ्ष्टाचार को उसने जीवन का अनिवार्य अंग स्वीकार करते हुए व्यवहार के साथ सदाचार को भी अलविदा कह दिया।

सुनिधि जैन(2008-2009) बालिका वधु जैसे धारावाहिकों की बढ़ती लोकप्रियता टी.वी. धारावाहिक किसी भी देश की संस्कृति और समाज को समझने का महत्वपूर्ण साधन होते हैं। धारावाहिक न केवल दर्शकों का भरपूर मनोरंजन करते हैं वरन विभिन्न विषयों पर स्पष्ट विचार भी दर्शकों में सहज रूप से संचारित करते हैं। यकीनन ये धारावाहिक महिलाओं की मानसिक स्थिति, सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक स्थिति पर प्रभाव डालते हैं।

उद्देश्य :

1. कामकाजी एवं गृहणी महिलाओं की मानसिक स्थिति, सामाजिक स्थिति पर टीवी धारावाहिकों के प्रभाव का मनोवैज्ञानिक अध्ययन करना।
2. कामकाजी एवं गृहणी महिलाओं के वैवाहिक संबंधों पर टीवी के धारावाहिकों के प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएं :

1. कामकाजी एवं गृहणी महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर टीवी के पारिवारिक धारावाहिकों का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. कामकाजी एवं गृहणी महिलाओं के वैवाहिक संबंधों पर टीवी के पारिवारिक धारावाहिकों का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

अध्ययन विधि - शोधा में सम्पूर्ण जनसंख्या को सम्मिलित किया जाना संभव नहीं हो पाता। अत: सम्बंधित जनसंख्या के कुछ अंशों का चयन कर उसे शोध प्रक्रिया में समाहित किया गया है।

न्यादर्श - प्रस्तुत शोध में भोपल जिले की 100 महिलाओं का चयन किया गया। जिनमें 50 कामकाजी एवं 50 गृहणी महिलायें चुनी गयी। शोधार्थी द्वारा उपकरण के रूप में स्व-निर्मित प्रश्नावली का निर्माण किया गया जिसमें महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य, समाजिक मनोवैज्ञानिक व्यवहार सम्बन्धी प्रश्न पूछे गए।

अध्ययन की परिसीमाएं -प्रस्तुत शोध कार्य हेतु निम्नांकित परिसीमाएं निर्धारित की गई है:

1. प्रस्तुत शोध के अंतर्गत भोपाल क्षेत्र की100 महिलाओं का चयन किया गया।
2. 50 कामकाजी महिलाएं एवं 50गृहणी महिलाएं चयनित की गयी।

उपकरण - प्रस्तुत अध्ययन में स्वनिर्मित प्रश्नावली को शामिल किया गया जिसमें 20 प्रश्न शामिल थे।

निष्कर्ष - इस शोध के परिणाम बताते हैं कि कामकाजी एवं गृहिणी महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर टीवी के पारिवारिक धारावाहिकों का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया क्योंकि महिला कामकाजी हो या गृहणी अपनी व्यस्ततम दिनचर्या में से कुछ समय मनोरंजन के लिए अवश्य निकालती है, लेकिन यह कुछ समय का मनोरंजन उनके मानसिक स्वास्थ्य को अधिक प्रभावित नहीं कर पाता है। महिला कामकाजी हो या गृहिणी सामाजिक और आर्थिक स्थिति में वह सोच-समझकर ही सामंजस्य रखती है। कब कहाँ सामाजिक होना है, कब उसे एकांत चाहिए, यह निर्णय टी.वी. के धाारावाहिक नहीं वह स्वयं तय करती है।

सुझाव - महिलाओं की मानसिक, सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक स्थिति एवं वैवाहिक संबंधों पर प्रभाव जानने के लिए व्यापक न्यादर्श के साथ प्रांतीय एवं राष्ट्रिय स्तर पर अध्ययन किया जाना चाहिए। इससे निष्कर्ष प्रभावशाली एवं विश्वसनीय होंगे।

शहरी एवं ग्रामीण महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक आर्थिक भाषाई एवं वैवाहिक संबंधों पर अध्ययन किया जाना चहिये।

महिलाओं को आपस में बातचीत गोष्ठियां करनी चाहिये जिनमें समसामयिक प्रसंगों पर चर्चा हो।

महिलाएं अपना सारा समय व्यर्थ के टी. वी. धारावाहिकों में खर्च करने के बजाय घर के काम जैसे घर की साजसज्जा, सिलाई, बुनाई या पठन पाठन में लगाएं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अहिरवार नीलम (2005-2008) 'महिलाओं पर टी.वी. धारावाहिकों का प्रभाव' माखन लाल पत्रकारिता यूनिवर्सिटी भोपाल, वाल्यूम नं-138
2. गौतम राकेश (1994-95)'केबल टी.वी. का प्रभाव एक अध्ययन 'माखन लाल पत्रकारिता युनिवर्सिटी भोपाल', वाल्यूम नं, 09
3. गौड़ संजय आलेख 'सेटेलाईट टीवी का पदापर्ण' पत्रिका समाचार पत्र।
4. शर्मा राकेश 'दूरदर्शन एवं संचार क्रांति के बढ़ते ख़तरे' (स्वदेश अख़बार 18.11.09
5. समाचार पत्र, पत्रिकाएं एवं इंटरनेट की सामग्री।

****

Gender Bias and Patriarchal effect in Mahesh Dattani's 'Tara'

Dr. Shweta Singh Baghel *

Abstract - In the present paper, it is proposed to study mainly Mahesh Dattani 's Tara with the reference to the Gender bias in Indian social system.The drama produced after independence show that the western culture has been partly assimilated by Indians. In this study, therefore an attempt will be made to scrutinize Mahesh Dattani's drama to show how he is conscious of the social system and that have come up in the contemporary India. The study is based on the hypothesis that Mahesh Dattani's drama effectively depicts the gender discrimination and social consciousness of modern India. Today's modern Indian drama highlights on the some current social issues and the real life problems. Tara not only brings up gender issues and the liberty fixed to women in a patriarchal society, but also deals with gender biases and prejudices which influence the lives of girl child even amongst middle class educated society.
Keywords- enderbias,discrimination,prejudices,socialconsciousness,exploitation.

Introduction - Tara is the most touching two – act stage play by Mahesh Dattani. Tara is predominantly a play about gender discrimination and about the tendency of Indian society where Indian parent's preference is for a male child over a female one. Dattani has presented the reality of Indian society in which woman always playing second fiddle to man. Tara gives us a glimpse into the modern Indian society which claims to be liberal and advanced in thought and action. As a social thinker and observer Dattani has put the idea of gender discrimination as a social issue of Indian society.

Mahesh Dattani is one of leading and contemporary playwrights in English. As a director, actor, and writer, in 1986, he produced first play ' Where There's a Will' There are several plays written by him as "Tara","NightQueen", "Final Solutions", "Dance like a Man"and many more. His plays deal with the social and gender issues. One of his films "Dance like a Man" has won the award for the best picture in English awarded by the "National Panorama". His plays focus actual life problems and sometimes cause controversy. Dattani's plays are about the marginalized sections of our society: minorities, women, gays, and hijras (eunuch).

"Tara" is a play deals with the theme of gender discrimination and social consciousness in modern society. "Tara"is not only the story of Tara but it is the story of every girl child born in society whether urban or rural. Tara is a touchy play which shows the partiality towards the male child in highly educated and an upper middle class Bangalore society. The story of the play is about the twins who are born with three legs and blood supply to the third leg was from the girl baby. Father, mother of the twins and doctor decided to fix the third leg on to the male baby's body so as to make male baby complete. The decision was taken to make male child physically fit and complete was not on the basis of medical ground but was influenced by the grandfather, a politician. Male domination reflected in the role of grand father who donates all his property and wealth to the male child. In our society, male child is considered as an asset and female child the liability. This is mainly due to certain misconceived religious beliefs and the problem of dowry. This discrimination against the girl child by family members shows attitude and mentality of the society. It is tragic that the mother is also support in the act of attaching the third leg to the boy's body. It is our cultural heritage that boy is always superior to girl. The common method of obtaining higher death rate for girl children than boys is neglecting the girl child during early childhood.

"Tara" is a play that raises questions to the society that treats the children of the same womb in two different ways. It is a play about two children, joined together at the hip. One is a boy and the other is a girl, they can be divided only surgically. The partiality and injustice starts here. It shows that a woman herself is the enemy of women. The mother prefers the male child and thus strengthens the chain of injustice. The first thought behind selecting the male child is, he will carry forward the family name. It is an example of child abuse prevalent in the Indian society. Girl is an unwelcome intrusion, the cause of sorrow when she is born, a burden for parents who have to amass dowry. Every girl child born in an Indian family suffers from some kind of exploitation and if there is a boy child in the family, the mistreatment is very much noticeable as consciously or unconsciously all the privileges are offered to the son. This is because getting dowry is regarded as a male privilege.

*A.P.S University, Rewa (M.P.) INDIA

This play raises a few questions of discrimination, i.e. religious prejudice, gender discrimination. This play is not only deals with gender issues and the treatment of girl child in a male dominated society, but also deals with gender biases and prejudices which still affect the mother daughter relationships in Indian families.Lives of several girl-children even amongst educated, urban families are involved in this discrimination. "Tara" is a play in two acts. It sets in London with, Chandan, a dramatist who is remembering his childhood days in the company of his sister Tara. He wants to write a story about his childhood but he has to write Tara's story. The play revolves around two twins. The play reveals a conflict between Indian families. and their traditional patriarchal mentality which has always favored a boy child to a girl child. Chandan wants to twist his grief into drama by writing about his sister's childhood. Even after their unjust and manipulated partition, which is made against the law of nature, they are emotionally united. They share the same agony, which Chandan tries to describe by writing autobiographical drama. The root problem of discriminatory treatment being meted out to girls lies in the status of women in society. Dattani has presented the strange reality of women playing a secondary role to man. Male are seen as the providers and the role of the girls are neglected. This dirty practice is still present in some parts of India. The drama also suggests supremacy of Mr. Patel when he insists that proper division should be made in the gender roles. Tara's parents are educated even then they had made such discrimination. Bharati's father can also be considered responsible for this catastrophe. Bharati had been influenced by her father's decision Bharati is scared about the prospect of her daughter; she says:"It's all right while she is young. It is all very cute and comfortable when she makes witty remarks. But let her grow up. Yes, Chandan the world will tolerate you. The world will accept you-but not her! Oh! ....when she sees herself at eighteen or twenty, thirty is unthinkable and what about forty and fifty! Oh God! (349).

She also tries to show her love by the act of donating kidney to Tara, which ultimately turns useless. Dattani establishes that mother and daughter relationship proves secondary to the orders of patriarchy. Mr. Patel represents of male prejudice and domination.. He holds the supreme position in decision making of the family. Bharati has to follow his decision. She has to accept whatever is given to her. She had favoured Chandan at the time of operation. Patel makes Bharati responsible for everything and gets an escape from his responsibilities. Doctor represents supreme position in the play. He operates the twins, but he has done an unjust operation under the pressure of Bharati's father and Mr.Patel .Tara was deprived of the leg,. Dattani appropriately shows that in this society it is an annoyance to be a girl. In India the male of the species is considered and treated as the first sex. This reflect worldwide phenomenon. Dattani highlights the real face of our political leader. He managed doctor is another part of corruption. Manipulation for monetory consideration or at times due to political influence has ceased to surprise many. There is a gross negligence of child patients in India. Tara realizes the real story of her physical disability during her life time. She made responsible to her mother.she cannot accept the truth. Even though she is more intelligent, and she is discouraged from the beginning of day of her life. Parents had not given proper support to Tara. This made her lose interest in life. Further, she refuses to go to college. It is significant that discrimination with Tara continues, even after her death. Chandan, who was fascinated in writing a story about his own tragedy, apologizes to Tara for doing this, "Forgive me, Tara .Forgive me for making it my tragedy." (380).Mahesh Dattani revealed the issue of gender discrimination in this play. The social norms, economic values and cultural elements have been answerable for the inequality against the girl child. Tara is a victim of this social system, which controls the minds and actions of the people. In Indian society, woman is variously presented as a mother, wife, daughter and sister even goddess. Manusmruti and Dharma shastras have laid down specific rules for the conduct of women. The women were treated to secondary position in all walks of life. The literacy rate of women has improved. Now a day, they are given secondary status in household, offices, social and public places. Women are exploited and harassed in Indian society. Woman is subject to violence and harassment everywhere.

Is mother-daughter relationship affected by pateriarchy?It is a big question raised by Dattani.Tara is killed because she is a girl and not wanted.

Woman are not made to think or decide but are made to submit to the wishes of man.This man can be a father,husband,brother or a son,who ever he is at the end,they have an identity.But a mother,a wife,a sister and a daughter at last turn out to be only 'women',submitting to their wills and losing to their own identity.We have to think about this serious issue and find out the solution.that is what Dattani wants to us.

References :-

1. Dhawan, R.K.,Flowering of Indian Drama. Prestige Books, New Delhi, 2004.
2. Dattani, Mahesh, Collected Plays, Penguin, New Delhi,2000.
3. Elizabeth Ray,Frenk Mirror and Grotesque Image.The Hindu,15 March 2002.
4. Mee, Erin, A Note in the Play, Collected Plays, Mahesh Dattani, Penguin Books, New Delhi.
5. Subramanyam, Lakshmi(Ed.), Muffled Voices: Women in Modern Indian Theatre, New Delhi, Shakti , 2002.
6. www.mapsofindia.com

****

Presentation Of Urban Life In Anita Desai's Novels

Dr. Vishal Sen *

Abstract - This paper is an attempt to study the presentation of urban life in the novels of Anita Desai. It serves a comprehensive study and analysis of her fiction. The major thematic issues of Desai's novels are existential predicament, marital discord, female psyche, alienation, identity crisis, rootlessness and meaninglessness are framed in metropolitan settings. Approximately all Desai's novels take place in city life atmosphere. The suffering souls in the forms of the characters in these novels lead a meaningless, futile and hollow life. This paper intends to present the afflicted lives of these gloomy people in urban surroundings.

This paper also aims to find out and describe the psycho-existential problems of Desai's characters. The portraits in Desai's novels feel themselves in existential dilemma. The confrontation among the contrary pulls takes place.
Keywords - Existential predicament, marital discord, female psyche, urban surroundings.

Introduction - Anita Desai is a novelist of city life. She has projected the sorrowful and afflicted situations in metropolitan surroundings. Almost all her novels are the evidences of urban life description. In-fact this city life presentation is the result of Anita Desai's own visits to many Indian and foreign metro cities. The subjects of her novels revolve around the city atmosphere only. The characters in her novels, suffer from problems and predicaments in metropolitan milieu. She has portrayed the Indian cities like Bombay, Calcutta, Delhi, Lucknow and foreign cities like London, Berlin, Venice, New York, Cairo, Paris, Massachusetts and Mexico etc.

The characters in her novels lead afflicted and miserable lives. Desai's major novels picture gloomy and tragic atmosphere. The tales of her novels portray a deprived sphere. The humdrum and monotonous metropolitan atmosphere becomes the eye witness of suffering characters. The city life becomes an overbearing presence. The absurdity and meaninglessness of metropolitan settings are presented through Desai's novels. The portrayals in her novels are stifled by the perpetual dominance of urban places. Such sketches are paralysed and ultimately they remain devoid of niceties of life. Urban life projection is a global problem, projected by Anita Desai.

Presentation of urban life - The fictional world of Anita Desai is coloured by the urban life description. The tales of her novels take place in metropolitan surroundings. The novelist has presented afflictions, sorrows, gloom, sufferings, miseries and predicaments of the characters in her fiction in urban settings.

Due to such problematic conditions like the existential dilemma, incompatible temperaments of husband and wife, lack of set culture such characters feel themselves marginalised or alienated. Her novels display a realistic view of the city culture with sick hurry and divided aims.

In literature, metropolitan scenes and settings are pictured like Joyce's Ulysses. Kafka's Dublin is a limitless labyrinth.

Dickens projects the degradation of culture in urban life. The automated existence urban life of city has proved a main theme in the modern literature. Herbert George Wells and Fritz Long also paid attention on mechanical existence of city life dwellers.

Anita Desai highlights the symbolic revelation of the metropolitan manners of life, attitudes and temperaments. The portraits in her novels suffer from the hollow and futile existence. Their journey continue from nowhere to nowhere in urban settings. Infact this novelist had herself stated that her novels are the exact presentations of meaninglessness, rootlessness and shapelessness of the characters. Projection of metropolitan surrounding in Desai's novels has become an authentic treatment. She pictures the characters of her novels in a socially dynamic, economically uncertain and psychologically tense metropolitan milieu.

Through city life description, isolation, disappointment and unfortunate spiritual predicaments of modern men in urban milieu are underlined by Desai. These gloomy portrayals, who are compelled to feel themselves lonely, forlorn, dismayed, anguished and fighting against identity crises to prove their identity. Such characters also feel that they are caged in urban traps. They encounter the contrary pulls, involved in their afflictions.

Anita Desai projects the dislocations of normal life, morbidity of temperament and existential dilemma of the portraits of her novels. Identity crisis is also found out in her fiction. Desai's portraits feel a sense of alienation, loneliness and pessimism.

Cry, the Peacock is the maiden venture of Anita Desai, in which she has portrayed the tensed city life atmosphere

* P.G.T. (English) Sendhwa Public School, Sendhwa, Distt. Barwani (M.P.) INDIA

of Delhi and Lucknow. Maya, the central character becomes the victim of emotionless and rigid urban life. Marital discord between Maya and her husband Gautama, late night parties, cabaret dancers etc. add vain glory of city life. In Voices in the City, the monster city of Calcutta makes the portraits of this novel frustrate and disappointed. Through the characters of Nirode, Monisha and Amla, Anita Desai has described the corrosive effects of city life of Calcutta upon an Indian family. Nirode's oedipus complex, his father's death, his mother's affair with other man, Monisha's failure in marriage, Amla's failure in love represent decadent city culture.

Bye Bye Blackbird is another novel of Anita Desai in which locale is London.The strange metropolitan settings of London are painted. Due to terrible atmosphere of city, the characters like Dev, Adit and Sarah feel suffered. Dev and Adit suffer due to racial discrimination. Sarah due to the failure of her inter-racial marriage. Identity crisis is the ultimate output for all these gloomy souls. The decreasing life of Bombay is projected in Desai's next fiction, Where Shall We Go This Summer?. Sita, the protagonist feels offended in mild and passive Bombay. The crowded surroundings of Bombay increase the problems of Sita. Due to her marital discord, she becomes a frustrated and lonely character, searching for her identity.

In Clear Light of the Day, Anita Desai has underlined the uncontrollable and wild urban settings of Old Delhi. Due to the horrors of riot, suspense, sensation and terrorist activities in Delhi during the partition of 1947, all the characters confront severe problems. Bim's parents lived separately. Raja, Bim's brother leaves the family and starts living with other people.

The metropolitan scary atmosphere of Berlin, Venice, Bombay and Calcutta is presented in Baumgartner's Bombay. Hugo Baumgartner, a German comes to India to seek his identity. Zigzagging between Bombay and Calcutta, Hugo finds himself avoided and unacceptable everywhere. He is pitch forked in India from Germany via Venice. The city milieu is devoid of human warmth. Desai has portrayed the urban settings of Delhi in her another novel, In Custody. Chandni chowk and other places of Delhi are detailed like colourful and noisy atmosphere of sari and food lanes etc.

Conclusion - The foregoing study of urban life in some of Anita Desai's novels leads us to draws certain inferences. It unfolds the psychological description of her portraits in urban settings through her novels. The urban life atmosphere of many Indian and foreign cities, painted in her novels is indeed a realistic one. Due to such fatal urban settings, the lives of the modern people, presented in her novels encompass defect, disappointment, disillusionment. We can easily find that the final destination of these characters comprises anxiety, alienation, existential anguish and identity crisis. The city life atmosphere in these novels accelerates the problems of such portraits like marital dissonance, female psyche, existentialism, alienation etc. The modern urban settings make these deadly problems worse.

Suggestions and findings - Anita Desai has painted negative pictures of urban life. It is in requirement of this depiction of oppressive urban life. One of the findings through this research paper is the continuous state of identity crisis, rootlessness, isolation, distress and despair etc. The output is absurdity and meaninglessness of the lives of metropolitan dwellers. The contemporary relevance of the city life suffering people is really up to the mark. Urban life in Desai's novels is found out as a decisive factor for family people. The characters finally become the victims of malignant and apathetic influence of the metropolitan life.

References :-

1. Acharya, Santa. Problem of Self in the Novels of Anita Desai. (New Delhi : Prestige Books, 1991).
2. Bande, Usha. The Novels of Anita Desai : A Study in Character and Conflict.(New Delhi: Prestige Books, 2008)
3. Belliappa, Meena. The Fiction of Anita Desai. (Calcutta : Writers' Workshop, 1971).
4. Dodiya, Jaydip Sinha. Critical Essays on Anita Desai's Fiction. (New Delhi : Ivy Publishing House, 2007).
5. Gopal, N.R. A Critical Study of the Novels of Anita Desai. (New Delhi : Atlantic Publishers, 1999).
6. Prasad, Madhusudan. Anita Desai : The Novelist. (Allahabad: New Horizon, 1981).

****

References of Bible in Select Poems of Dylan Thomas

Dr. Indira Parmar *

Abstract - The research paper highlights the Biblical references in '*Light Breaks where no Sun Shines', ' The Force that through the Green Fuse Drives the Flowers'* and *'A Refusal to Mourn the Death by Fire of a Child in London'*. This research paper is about the Biblical Symbols and imagery in Dylan's poetry. There is Biblical myth of genesis in it along with myths of resurrection and rebirth. Sun in the poem, 'Light Breaks where no Sun shines' is a symbol of light and life. The Force that through the Green Fuse Drives the Flowers the imagery in the poem emphasizes the explosive nature of this power. The last poem A Refusal to month the Death by fire of a child in London is written in memory of a child victimized by the Second World War.
Keywords - Bible, paradox, genesis, sun, obscurity, darkness, creation, destruction.

Introduction - Dylan Thomas is a metaphysical poet. Dylan Thomas is a challenging poet. His poems are marked by aestheticism and obscurity. It is very difficult for a common man to understand his poems. The reader needs an interpretation and a dictionary to grasp the meaning of his poems. Similarly the Bible is very difficult to understand.

Dylan Thomas was a neo-romantic poet. He was surrealist, Freudian and apocalyptic. He is neo-romantic as his poems were the perfect examples of neo-romanticism with their violent natural imagery, sexual and Christian symbolism and emotional subject matter expressed in a singing rhythmical verse. The only shared interest of Apocalyptic may be the desire to express the deep and hidden side of Man's nature.

Dylan Thomas is a womb tomb poet. His poems are about birth, death, creation and destruction. The Bible Consists of sixty six books in total, with 39 in Old Testament and 27 in the New Testament. The text were mainly written in Biblical Hebrew with some portion in Biblical Aramaic. There is a combination of darkness and light in the first stanza. There was chaos, God produced light. Then Creation took place so the light broke even before the sun was created.

"Light breaks where no sun shines,
Where no sun runs, the waters of the heart.
Push in their tides." [1]

God first created light (day) and darkness (night) then sky, earth, sea, plants, the sun, the moon, birds, animals and in the last human beings. So the whole universe was completed. By the seventh day god finished what he had been doing and stopped working. Then god commanded:
"Let there be light"- and light appeared god was pleased with what he saw. Then he separated the light from the darkness and he named the light "day" and the darkness "night". [2]

Genesis-1:3-4-5

Sun in the first line of the poem is a Biblical symbol of light and life. Sunshine cheers us. Sunshine warms us. The sun has power to heal.
"So god made the two larger lights, the sun to rule over the day and the moon to rule over the night" [3]

Genesis- 1:16

The light of life breaks in the dark womb, and so there is light where there was no light before. The male sperms are called "broken" because they break away from the male body and they are 'ghosts' for they represent the very essence or soul of life. They carry the light of life in their heads.

"And broken ghosts with glow worms in their heads,
The things of light
Fire through the flesh where no flesh decks the bones" [4]

Stars in the second stanza symbolize womb. The stars in Bible represent those who radiate light spiritual instruction. The acts of creation and procreation are paralleled by the dawn of consciousness or insight which is first localized in the brain.

Blood means the life of flesh and sacrifice. Blood in the last stanza occurs. Blood flowing through the veins of the body nourishes it like the sun nourishing the plants. When we gain blood consciousness, we are led to spiritual insight. This is a difficult phrase which has taxed the brain of great critics. This phrase might refer to new life in the growing embroyo. This poem is about god always loving us, even when we have sinned he loves us. Light often symbolizes hope, so this poem is saying when you have lost all faith there is always hope so never give up.

*Govt. P.G. College, Barwani (M.P.) INDIA

The poem 'The Force that through the Green Fuse Drives the Flowers.' is complicated. Since the poem is about contrast change and paradox. The first three lines contrast the creative and destructive forces that surrounded man. Thomas' imagery emphasizes the explosive nature of this power. The green fuse is obviously the flowers' stem, yet the word "fuse" gives the connotation of explosive growth rather than gentle development.

"The force that through the green fuse drives
the flower Drives my green age, that blasts the roots of trees.
Is my destroyer and I am dumb to tell the crooked rose
my youth is bent by the same wintry fever." [5]

This force is at work not only in green nature but also in the green age or boyhood of the poet. The colour green symbolizes life, growth and prosperity in Bible.

"And to every beast of the earth and to every fowl of the air and to everything that creepeth upon the earth, where in (there is) life (I have given) every green herb for meat, it was so and god saw everything that he had made and behold (it was)." [6]

Genesis - 1:30-31

The poem a '*Refusal to Mourn the Death by Fire of a Child in London*' abounds in Biblical references and imagery- "beast", "Zion", "grave", "humble", "pray", "salt". The diction used in the poem seems to suggest some Biblical patterns of construction, like "let pray", "enter again", "shall not", "is come", and "blaspheme down".

The occasion for this elegy is that death of a little girl in one of the air raids on London during World War II. The creation and destruction of the world are illustrated by the image of sea.

"Never Until the mankind making,
Bird beast and flower,
Fathering and all humbling darkness
Is come to the sea tumbling in harness" [7]

The expression "the last light breaking "may be an allusion to the book of revelation 6:12-13, where one can find the images of the falling stars as a signal representing the end of the world, ambiguously linking the death of the individual with the death of the human race.

Dylan Thomas was a poet of great artistic integrity. He was a highly original and distinct poetic personality. Light breaks…in the poem the light often symbolizes hope, so this poem is saying when you have lost all faith there is always hope so never give up. This poem is about god always loving us even when we have sinned he loves us. Nature bursts out with creative activity and flowers bloom in the poem. The force that through….In the poem a Refusal to Mourn …the poet seems to also say that after the physical death the individual has to face the truth of his own existence the judgment.

References:-

1. The World Poetry Archives Classic Poetry Series, Poem Hunter Com 2004, P.61.
2. Good News Bible, Genesis 1:3-4-5, Today's English version, Bangalore, The Bible Society of India. 2003. P.4.
3. Ibid Genesis 1:16, P.4.
4. World Poetry Archives Classic Poetry Series Poem Hunters Com. 2004, P.61.
5. Ibid. P.85.
6. The Holy Bible, Genesis 1: 30-31 Authorized King James Version, Waynesborom Literature, P.1.
7. The World Poetry Archives Classic Poetry Series, Poem Hunter Com 2004.P.10.

****

Verbal Literature Of Madhya Pradesh

Dr. Kala Joshi *

Introduction - There has always been a kind of literature before written literature came into being, which may be conveniently termed as 'Verbal literature'. Though very difficult to be equated with the conventional forms, the existing types of oral literature have, otherwise, influenced the written forms, to a considerable extent. Verbal literature has always served as a source of interesting insight in the lives of the people. Being a major part of the folkloristic material, the oral literature of Madhya Pradesh is not an excep-tion in this regard.

In Bundelkhand, the Alha still continues to hold its impact on the people because of its theme and the captivating art of narration. Originally, this narrative was composed in Bundel-khand dialect and attributed to the poet Jagnik. It has kept up to the full the stereotype episodic sequences which move around the two characters, Alha and Udal. . Throughout Bundelkhand, this narrative of semi-literary texture is sung with gusto, zeal and an extolling voice.

The famous incident of Hardaul's sacrifice has created several songs around his character. In "fact, these songs neither sing of any struggle nor mention any courtship or elopement. They are simply connected with domestic affairs and especially endowed with a belief that Hardaul Lala was a god-like person. His self-sacrifice to save the honour of his brother's wife gave a magical touch and a kind of meaningfulness to the incident."

Hardaul was'a brother of Raja Jujharsingh (1626-35) of Orchha, who suspected him, without cause, -of criminal intimacy with his wife, and made him drink a cup of poison. His unhappy end roused public indignation and he was in time deified, This form of worship is universal throughout Bundelkhand, and has even spread to Punjabi[1].

Among Bhils of Madhya Pradesh, there are such songs still current which bear traces of age-old reminiscences. These songs are legendary in content and are recited by the village sorcerer (bhopd) of the community. Incidentally, the cluster of these songs includes the famous love tale of Usha" Aniruddha of Hindu mythology. In the Bhili dialect, it is entitled Okhan Androop. The story of Dhola-Maru also finds a place in Bhil folklore. Under the category of the Mandol songs of the Bhils, there is a ballad about Kasumar Damar, who seems to have been a favourite leader in the past. In this narrative, a reference about King Bhoj of Dhar occurs at many places. Interestingly enough, the legend of Kasumar Damar describes how the Bhils were uprooted from some place in times of famine, and came to settle in the jungles around Dhar district.

Songs attributed to the river Mahi are pure ballads which have been deeply absorbed in the Bhil folklore.

Kaludi ne Bhuri dhawedawe Gujaredi
Kaludi ne Bhuri dhawedawe
Maudi ne Baudi pani salya O Gujaredi
Haudi ne Baudi pani salya[3]. .

The language o£ the song is mixed Bhili where *S' is pronounced as *H' and 'ch* as 's' It is nearer corrupt Gujarati, coloured by malwi expressions.

The narrative about Bhartrahari, the philosopher-king who renounced his kingdom to lead a life of renunciation in quest of the eternal, has certain overtones of the Gopichander gan of Bengal. The ballad is widely sung by wandering minstrels of the Nath cult The Malwi version of the song-Pingla Jhurapo relates to the dialogue between Raja Bhartrahari and his wife, Rani Pingla, who entreats her husband not to renounce the world and leave her.

Of recent origin is the Lay of Prince Chain Singh of Nar-singhgarh. It is a short ballad describing how the prince fought against the Britishers in 1827 at Sehore, and finally how he met his tragic death along with his two companions, Haidar Khan and Bahadar Khan. The Dhargardi is again worthy of reference here. This ballad sings of the episodes of the mutiny around Dhar, a small town near the famous monuments of Mandu, and relates some historical deeds of Bakhtawar Singh of Amzera, who was later hanged by the Britishers at Indore. A peculiar narrative called Balabau is widely sung to a plaintive tune by the womenfolk of the countryside of Malwa. Like some of. the gypsy folk-songs of the West, the Balabau is close tc the motif of the 'foundation sacrifice', which was probably in practice in the early times. In Malwa, it is said that the song acquired its name three hundred years ago after the village Balon of Shajapur district. In Nimad, too, we find an identi-cal song. There is a belief that childless women are blossomed if they worship the lake of this village. The song is also treated as a song' that brings rains.

It is through the words of the folk-songs that we screen the minds of the society which loves to keep centuries-old milieu via certain motifs and sentiments of the folkloristic sphere. Though conscious about the fast-changing world

*H.O. D (Hindi) Shri Atal Bihari Vajpai Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

around, this society, in a way, is more rigid in the inner folds of its thought process. Changes do occur in respect" of values affecting economic life, but not in the very roots of human emotions that are knitted with ritualistic and traditional things. The stylistic behavior and the elements of the interdependent relationships in folklore hardly vanish unless a devastation of a big amount of any civilization takes place or, at least, a bulk of human habi-tants merges into population of a different setting,

Fortunately, no such change ever occurred in Madhya Pradesh. Neither the people frequently moved out of their regions nor did rural settlements witness incidents and upheavals. They never bothered about the surface happenings. Their basic attitude remained un-interfering, and for a long time they attuned to the popular saying, Kou Narap Hou Hame Ka Hani— whosoever be the king, it matters us nothing! It is, therefore, the folk-songs of Madhya Pradesh that represent the true picture of the traditional patterns of the life of the people.

The beauty tradition of the Malwa woman dates back to Rupmati who belonged to Sarangpur which is the heart of Malwa. And the opiate tradition too dates back to her. Baz Bahadur is the first recorded victim of the narcotic, that is, the Malwa woman. And the songs that their love story made echo and re-echo today from the silvery Narbada, across the fertile valley of Nimad, over the Rewa kund and the ancient water works of Mandu to the battle-field and folk-songs of Sarangpur run like leit-motif through life in Malwa. But times have changed. The leisure so necessary for dalliance has vanished but the narcotic still exists in the eyes and breath of a thousand Roopmatis and takes toll of a thousand Baz Bahadurs[4].

The twin reflections once abode
In those delighted eyes of mine
That now, bereft of all thy love unpeopled pine[5].

Songs associated with the time of delivery usually describe anxiety and restlessness of the woman. A Malwi song narrates:

Kulbahu leans at the door frame
Anguished with pain she asks
Who will take care of me?
My father-in-law is a royal dignitary
My mother-in-law is a store—never empty
Who will take care of me[6]?
her-in-law is asleep in the verandah
My little dewats is in his coloured palace
Wake, wake sister-in-law
There is pain in my belly
Send for the mid-wife[7].

The series of marriage-songs start with invocation to Ganpati or Vinayak, the elephant-headed god. These songs describe the arrival of the god at the bride's or the bridegroom's house. He comes viewing the activity of the vicinity. In Malwi songs he is shown as accompanying the women to the astrologer's house and helping them in buying clothes and ornaments.

Branches of betel shrubs went up to Udaipur
Whereupon climbed the little bride.
Close' went her father and asked,
"Say my. daughter, which type of bridegroom would you like
to have?"
Don't find out a tall husband,
He would be named a bamboo;

Lullabies are everywhere very much common in theme. They are fresh with feelings and blessings for the child. They trans-port the simple joy of the mother to the child who rather cares for the soothing refrains which put him to sleep under her soft caresses

Halo re nana hul re
The cap of my child is ever new,
His father is far away in the next province, staying in a castle of Gujarat."
The night is dark and cloudy.

On the occasion of Diwali, the Bhils of Alirajpur and Jhabua recite the Heeda, the legendary song that involves the riddle in the opening lines. Dr Durga Bhagwat has named this kind of a trait as 'stylistic catch'. The Heeda is not an exception even to the general motif of the folk-songs that carry question-imbibing answers. But the. more glaring types of the Bhil riddles are Ptti or Phili and Addi. Here are two illustrations:

Aankad bankad lakri
ghadwaryo asi ghadi
jo legyo Lanka tor.
A twisted piece of wood, hit so far that it destroyed Lanka.
Galu galu ne galya pase karu ne.

When a son-in-law arrives at his father-in-law's place for the first time in Malwa and Nimad villages to fetch his wife, he is also con-fronted with all sorts of riddles and riddle-songs. These riddles and songs excel in verbal beauty and epigrammatic utter-ances. Many of them flicker with the contents of the old Prakelikas.

At marriage occasions or ceremonial gatherings women amuse themselves by singing the Parsi (or the Pyali) or reciting composi-tions addressed to male members, especially to the son-in-law or. his father, for suitable answers. Failing to answer, one is condi-tioned to pay a double fine or extend a sumptuous dinner. Male members are ridiculed by fantastic remarks in Malwa: Jo barta ni buze, wu gam balai (one who does not answer my riddle is a low-caste being); Chatar samjhi jaye, murdkh phiri phiri jaye (the wise knows my riddle, the fool turns away); Jo buze wu maradj ganwar gota khaye (one who answers my riddle is a potent man, the gawky floats* in vain); Buzo mahari parsi ni to hatvgharki nor (respond to my riddle or else be deprived of your wife); Nar hari ne thannejajo log kai kega (what a shame it would be when you would report to the police about the loss of your wife) and Jo barta ni buze wu bhata men ko toto (one who fails to respond is like the stone of a heap).

I n a filled tank, a deer stands {talav bharyo, haran khadyo) is a Malwi riddle, the answer to which is an oil-lamp. The Nimadi counterpart to this riddle isi Aso kaso pavano maya, ghar masuto angna pav (What a strange guest, he sleeps in thei house stretching his legs up to the courtyard). More

interesting parallels are as follows: 'A small bird soaks up a pool'; 'the champa blossoms in a small tank'; 'with one ear of a corn the house is full', etc.

An oil-lamp is a widespread subject. It is a popular symbol which frequently appears in folk poetry.

On special auspicious occasions like religious undertakings, ceremonies connected with fulfilment of vows, ceremonies like marriage, child-birth, etc., the taboo is ceremonially broken, Hemchandra in his work Desinammala describes a special festive occasion, the Laya, on which the newly-weds have to utter each other's names ceremonially. The name-riddle is a device which helps and decorates the utterance of the name. It is a maze of words and the name to be uttered hangs some-where in it. This riddle does not give a single well-knit image like the recreative middle. No compactness* of structure is expected. The maze-like arrangement helps the superstition that the name hidden in it, though obvious to those who are close by, should not be heard and caught by the God of Death. On the ceremonial occasions, however, the name utterance forms an essential feature of the ritual[9].

The taboo for uttering name-s and its ceremonial breaking is, of course, an interesting aspect of folklore. In this context the custom of giving a newly-wed bride another name on her arrival at the husband's house should be looked into. For a period of one or two years in the peasant class of Malwaand Nimad, and to a certain extend in Bundelkhand, the taboo is observed not to call a child by his proper name.

The Kalgi-turra of Nimad is worthy of notice as it is a category of riddle-weaved poetry. When the Kalgi-turra contest is ar-ranged the singers are divided into two parties— the Kalgi-group (representing the Prakrti) and the Hurra-group (the Purusha aspect). Or the parties may be named as Shiva and Shakti. In the contest one party flings some theological or cosmological questions at the other party to answer back in verse-form. Question-imbibed folk-songs in this contest clearly include the riddle element in a diffused form. The ritualistic bearing of such songs is very direct. Songs portraying conversation between husband and wife or lovers often reveal the traits of the riddle.

References :-

1. Imperial Gazetteer, 1908, p. 37
2. Ibid, pp. 101-02
3. Ibid, pp. 101-02
4. "Malwa Sketches" by Rao Raja R.G. Rajwada, Jayaji Pratap, Madhya Bharat Inauguration Number, Gwalior.
5. Translation of a poem known to be compossed by Roopmati, quoted from the Lady of the Lotus by I.M. Crump., London, 1926
6. Ibid, p 7
7. Ibid, p 7
8. The Blue Grove, p. 177
9. The Riddle in Indian Life, Lore and Literature, p. 52

****

भारतीय संस्कृति के गौरव रहीम और इकबाल का साहित्यिक अवदान

डॉ. अमित शुक्ल * डॉ. अनीता ठाकरे **

शोध सारांश – रहीम मुसलमान थे तथा जीवनांत तक इस्लाम धर्म के अनुयायी रहे फिर भी उन्होंने अपना अधिकांश काव्य राम कृष्ण तथा अन्य देवी देवताओं की भक्ति से सम्बंधित लिखा। इससे यह सिद्ध होता है कि ये देवी देवताओं किसी सम्प्रदाय विशेष के लिए न होकर समूचे भारत व समूचे विश्व के लिए हैं। हिन्दू धर्म एवं संस्कृति का रहीम को अपार ज्ञान था। उनका हृदय साम्प्रदायिकता की संकुचित भावना से अत्यंत ऊपर उठ चुका था न केवल भारत बल्कि समूचे विश्व को रहीम की उदारता से आज भी सबक लेना चाहिए रहीम ने अपनी रचनाओं द्धारा भारतीय संस्कृति के गौरव को उजागर किया। विश्व बन्धुत्व व सांस्कृतिक एकता की दृष्टि से रहीम की रचनाएँ विश्व बन्धुत्न की भावना से अत्यंत महत्वपूर्ण है। **जहाँ रहीम** के काव्य भारतीय संस्कृति के धरोहर हैं, वहीं भारतीय मुसलमान महाकवि **इकबाल** अखण्ड भारत के महान पुरुषों का गुणमान किया है। ब्राहाण वंश के पुत्र इकबाल के पितामह इस्लाम धर्म ग्रहण कर चुके थे परन्तु इकबाल ने अपने काव्य में बारम्बार अपने ब्राम्हण होने पर गर्व किया हैं। उनकी कृति 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दुस्तान हमारा' में प्राचीन संस्कृति का न केवल परिलक्षित किया गया हैं वरन् भारत के अमर रहने का कारण भी माना है।

शब्द कुंजी – संस्कृति, भावात्मक एकता, जाति, सांस्कृतिक एकता, धर्म, सम्प्रदाय ।

प्रस्तावना –भारतवर्ष एक विशाल देश है जहाँ अनेक जाति, धर्म व सम्प्रदाय के व्यक्ति निवास करते हैं, अनेक भाषा बोलते हैं, व अनेक प्रकार की वेश-भूषा धारण करते हैं। भारतवर्ष में विभिन्न धर्मों को मानने वाले व्यक्ति शताब्दियों से साथ-साथ रहते चले आ रहे हैं, लेकिन सभी में एकता और भ्रातृत्व भावना का पूर्णतया विकास जैसा होना चाहिए वैसा 21वीं सदी में इस वर्तमान युग में भी नहीं दिखाई दे रहा हैं। अब भी आए दिन साम्प्रदायिक दंगे, आतंकवाद का भयावह रूप देश के वातावरण को विक्षुब्ध बना देता हैं। देश के इस तरह के वातावरण को सुधारने के लिए बुद्धिजीवियों और साहित्यकारों के प्रयत्न की अत्यंत आवश्यकता महसूस की जाती है ऐसे भ्रातृत्व भावना, भावात्मक एकता व सांस्कृतिक एकता का प्रसार करने वाले महापुरूषों के जीवनचरित्रों को उजागर करके प्रस्तुत करना देश के लिए बड़े पुण्य की बात हो सकती हैं। देश की सांस्कृतिक, राष्ट्रीय व भावात्मक एकता की भावना का प्रसार करने के अनेक शासकों, सन्त सूफी एवं भक्त कवियों तथा महात्माओं ने अनेक स्तुत्य प्रयत्न किए हैं।[1] आज के वर्तमान समय के साम्प्रदायिक तनाव और हिंसा के इस दौर में इस बात पर विश्वास कर पाना मुश्किल हो सकता है कि चार सौ साल पहले इसी भारतभूमि पर एक ऐसा मुसलमान मनस्वी पैदा हुआ था जिसकी तुलना महाकवि केशवदास ने गंगा जी के नीर और रामचन्द्र जू के तीर से की थी –

'अमित उदार अति पावन विचारि चारू,
जहाँ तहाँ ओदारियों गंगा जी के नीर सों,
खलन के घालिबो को खलक के पालिबो को
खानखाना एक रामचन्द्र जी के तीर सो।।' [2]

भारत में केवल एक पीढ़ी पुराना यह मुसलमान जिस प्रकार भारतीय संस्कृति और जीवन में रच-बस गया और जिस तरह यहाँ की धर्म, प्राण हिन्दू जनता ने उसे भारतीय स्मृति में अमर स्थान प्रदान किया उससे यह आश्वस्ति मिलती हैं कि साम्प्रदायिक असहिष्णुता उस देश की नियति नही हो सकती। यह मनस्वी थे, अब्दुर्रहीम खानखाना-अकबर के यशस्वी मंत्री, सेनापति और तुर्की, फारसी, अरबी, संस्कृत, हिन्दी के प्रख्यात विद्धान और जनप्रिय कवि। उन्होंने भारतीय संस्कृति को उसकी समग्रता में सहज स्वीकार किया था। इस समग्रता में मिथक, दर्शन, भक्ति, ज्योतिष, कवि रुढ़ि, लोकव्यवहार, पशु-पक्षी, वनस्पति समेत ग्राम्य जीवन सभी कुछ समाहित था। उन्होंने धर्म सम्प्रदाय की दीवारे तोड़ी हिन्दू देवी देवताओं की सहज भाव से स्तुति की और चतुर्दिक प्रेम पयस्विनी प्रवाहित की। उन्होंने राम और रहीम में कोई भेद नही माना। इसीलिए जहाँ वे अपने ज्योतिष ग्रंथ **खैट कौतुक जातकम्** का प्रारम्भ खुदा का नाम लेकर करते हैं **'करोम्यब्दु लरहीमो वहो खुदाताला प्रसादत**:, वहीं बरवै नायिका भेद का मंगलाचरण करते हैं सरस्वती वंदना से **– बंदौ देवी सरदवा पद कर जारि।** रहीम ने मुख्यत: दोहा और 'बरवै' जैसे दो पंक्ति के छोटे छंदों में रचना की हैं। पहली पंक्ति में वे कोई प्रस्थापना करते हैं और दूसरी ओर उसे नष्ट करने के लिए कोई दृष्टांत देते हैं। यह दृष्टांत प्राय: हिन्दू मिथक से जनजीवन और प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षण से लिया गया होता हैं और इतना सटीक होता हैं कि बात सहज ही। चेतना में गहरे बैठ जाती हैं। इस संप्रेषणीयता ने ही रहीम के दोहों को जातीय स्मृति में अक्षुण्ण स्थान प्रदान किया हैं। चिरपरिचित कथाओं को कथाओं के अन्तर्सम्बंध को वे ऐसे कोण से देखते-दिखाते हैं कि उसमें एक नया अर्थ उजागर हो उठता हैं। उनका बांकपन उनकी भंगिमा देखते ही बनती हैं। अगर देखा जाए तो रहीम ने भारत की एकता में सहायक अनेक महत्वपूर्ण आदर्शों की रचना की। फारसी भाषा का ज्ञान कराने के लिए रहीम ने वाल्मीकी रामायण का फारसी में अनुवाद करवाया। रहीम मुसलमान थे तथा जीवनांत तक इस्लाम धर्म के अनुयायी रहे फिर भी उन्होंने अपना अधिकांश काव्य राम कृष्ण तथा अन्य देवी देवताओं की भक्ति से सम्बंधित लिखा। इससे यह सिद्ध होता है कि ये देवी देवता किसी सम्प्रदाय विशेष के लिए न होकर समूचे भारत व समूचे विश्व के लिए हैं। हिन्दू धर्म एवं संस्कृति का रहीम को अपार ज्ञान था। उनका हृदय

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (हिन्दी) स्कूल शिक्षा विभाग, छिंदवाड़ (म.प्र.) भारत

साम्प्रदायिकता की संकुचित भावना से अत्यंत ऊपर उठ चुका था न केवल भारत बल्कि समूचे विश्व को रहीम की उदारता से आज भी सबक लेना चाहिए रहीम ने अपनी रचनाओं द्धारा भारतीय संस्कृति के गौरव को उजागर किया। विश्व बन्धुत्व व सांस्कृतिक एकता की दृष्टि से रहीम की रचनाएँ विश्व बन्धुत्न की भावना से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। जात-पांति, ऊँच-नीच के भेदभाव को दूर करने तथा नारी महात्म्य एवं स्वातंत्र्य की दृष्टि से उनकी रचना 'नगर शोभा' का विशेष महत्व है। भारत की सांस्कृतिक एकता तथा नीति एवं उपदेश सभी दृष्टियों से रहीम काव्य अत्यंत उपयोगी हैं। वर्तमान युग में आधुनिकीकरण तथा पाश्चात्य प्रभाव से विकसित होने से हमारी आस्था प्राचीन तथा मध्यकालीन ग्रंथों के पठन-पाठन में कम होती जा रही हैं। इससे नूतन सांस्कृतिक काव्यों का निर्माण भी अवरुद्ध हो गया हैं। ऐसी स्थिति में मध्यकालीन सांस्कृतिक काव्यों के अध्ययन की आवश्यकता तथा उत्तरदायित्व बहुत बढ़ जाता हैं। रहीम का काव्य भारत देश से ईर्ष्या-द्धेष मिटाने, सहृदयता, एकता और मेल-जोल का वातावरण बनाने, सच्ची धर्म निरपेक्षता का प्रसार करने और सच्चे मानव धर्म की स्थापना करने में अत्यंत सहायक सिद्ध होगा। भाषा के क्षेत्र में, सांस्कृतिक क्षेत्र में, कविता के क्षेत्र में, सामाजिक क्षेत्र में और अन्य सभी क्षेत्रों में मानवतावादी दृष्टिकोण रखकर सबका समन्वय करना ही उनका महान लक्ष्य रहा हैं। रहीम अनेकों भाषाओं के विद्धान थे। उन्होंने कई भाषाओं में कविता लिखी फिर भी उन्होंने अधिकांश काव्य-ग्रन्थ संस्कृत तथा हिन्दी में ही लिखे हैं। रहीम ने संस्कृत और फारसी तथा संस्कृत और हिन्दी मिश्रित समन्वयात्मक भाषा शैली का प्रयोग करके अपने समकालीन समाज में भाषायी एकता लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया। भारतीय मुसलमान रहीम के मन में भारतीय संस्कृति के प्रति अटूट आस्था थी। उन्होंने इस देश की संस्कृति को जीवन से अलग किसी आदर्श विशेष का अनुसरण करने वाली संस्कृति न मानकर पवित्र आचरण और उदान्त मूल्यों को महत्व देने वाली संस्कृति के रुप में ग्रहण किया। धर्म साहित्य एवं भाषा सभी के अन्तर्गत समन्वय एवं संयोजन ढूढ़ना ही उनका लक्ष्य था उनकी इस प्रवृत्ति का परिणाम यह हुआ कि रहीम अपने समय में भारतीय सामाजिक संस्कृति के उदात्त मूल्यों के सशक्त व्याख्याता बन सके। उनका उदार और विशाल मानवतावादी दृष्टिकोण 21वीं सदी के वर्तमान समय में आज भी अनुकरणीय हैं।[3]

जहाँ रहीम के काव्य भारतीय संस्कृति के धरोहर हैं वहीं भारतीय मुसलमान महाकवि **इकबाल** अखण्ड भारत के महान पुरुषों का गुणमान किया है। ब्राहाण वंश के पुत्र इकबाल के पितामह इस्लाम धर्म ग्रहण कर चुके थे। परन्तु इकबाल पे अपने काव्य में बारम्बार अपने ब्राम्हण होने पर गर्व किया हैं। उनकी कृति 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दुस्तान हमारा' में प्राचीन संस्कृति का न केवल परिलक्षित किया गया हैं वरन् भारत के अमर रहने का कारण भी माना हैं। उर्दू, फारसी, अंग्रेजी दर्शन व अर्थशास्त्र के ज्ञाता कानूनविद इकबाल की विचारधारा प्रारंभिक दौर में भले ही संकुचित रही हो परन्तु समय के साथ इसमें विस्तार होता गया। गहन अध्ययन ने उनके विचारों में विश्व बंधुत्व का भाव जगा दिया। इसी कारण वे सम्पूर्ण मावनजाति के उत्थान एवं भलाई का पैगाम देते रहे। इकबाल के काव्य और शायरी को पढ़ने से यह महसूस होता हैं कि वे एक भावुक कवि हैं। भावुकता एवं काव्य का चोली दामन का साथ हैं। कविमन अपनी बाहय गतिविधियों से प्रभावित हुए बिना कैसे रह सकता हैं। उसके अंतर्मन में विचारों की लहरें उठती ही रहती हैं। जो भारतीय परिप्रेक्ष्य में आध्यात्म वेदान्त से रूबरु होकर एकेश्वरवाद में लीन हो जाती हैं। व्यक्ति से समूह बनता हैं और समूह से समाज निर्मित होता हैं। भारतीय समाज को संरचना में किसी एक व्यक्ति या समूह का भाग न होकर मिश्रित रोल रहा। यहाँ के इतिहास पर विहंगम दृष्टि डाली जाए तो आर्यो के आने से वैश्वीकरण के वर्तमानयुग तक विभिन्न जाति सम्प्रदाय एवं धर्मो के समावेश ने इस देश को संस्कृति सभ्यता एवं भाषा से परिचित किया। भारतीय संस्कृति की यह विशेषता रही कि हर आने वाली संस्कृति इसमें समाहित होती गई। इसी कारण संसार के किसी भाग या देश में ऐसी महान विभूतियां एवं संस्कृति नहीं मिलती इसी विशेषता ने इकबाल से 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दुस्तान हमारा' जैसी राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत रचना लिखवाई।[4] इकबाल की नजर में सभी कलाएँ मानव जाति की सेवा एवं समग्रता का एक माध्यम हैं। काव्य उसी की एक शाखा हैं, यही कारण रहा कि उन्होंने ईश्वर से बार-बार प्रार्थना की हैं मेरे काव्य में प्रभाव हो क्योंकि प्रभाव के बिना हर चीज निरर्थक हैं। इकबाल हमेशा मानव सेवा एवं सुधार के लिए बेचैन रहते हैं। प्रारम्भिक दौर में यह दर्द उनकी शायरी में देश प्रेम के रुप में उभरा और यूरोप प्रवास के दौरान उनके चिंतन मनन में विचारों को परिवर्तित किया। जो सम्पूर्ण मानव जाति की उत्कृष्टता एवं भाईचारा का संदेश बन संसार में फैला। विचार, कल्पना, एवं भावनाओं का समागम उनकी काव्य शैली को उत्कृष्टता प्रदान कर गया। उनकी वैचारिक योग्यता पूर्ण आत्मआंकलन हैं। स्वयं की पहचान व्यक्ति को पूर्णता प्रदान करती हैं। अपनी योग्यताओं का सामायिक प्रयोग कर सांसारिक पृष्ठ पर अलग छाप निर्मित करने वाला मृत्युपरान्त भी अपने कार्यो से न केवल अमर हो जाता हैं। बल्कि उसके द्धारा किए गए सद्कार्य आने वाली नस्लों के लिए पथ प्रदर्शक का कार्य करते हैं। ऐसी ही महान विभूतियां जिन्होंने इकबाल को प्रभावित किया श्री रामचन्द्र जी, स्वामी रामतीर्थ, गुरुनानक देव, शंकराचार्य, श्री कृष्ण जी, अकबर, अकबर इलाहाबादी, टीपू सुल्तान, राजा भृतहरि, अमीर मीनाबाई, अली शाह कलंदर, पोरस, जोगिंदर पाल, ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती, निजामुद्दीन ओलिया, अमीर खुसरों अल्ताफ हुसैन हालो, सरसैय्यद युजुद्दिन आलीफ सानी, शिबली जहांगीर, गालिब, शेरशाह सूरी, मिर्जा दाग, महात्मा गांधी, फैजी आदि इकबाल के विचार में यह वो महान हस्तियां हैं, जो अपने कर्मो से ईश्वर के निकट पहुचे हैं। इसलिए इकबाल ने लिखा-'खुदी को कर बुलंद इतना कि हर तकदीर से पहले खुदा बन्दे से पूछे कि बता तेरी रजा क्या हैं। इस प्रकार इकबाल के काव्य में गौतम बुद्ध जैसी पवित्र हस्तियों का वर्णन भी मिलता है। बुद्ध की शिक्षा समानता इकबाल की लेखनी को शक्ति प्रदान करती हैं, जावेदनामा में भी इकबाल ने बुद्ध को दोबारा सराहते हुए उनकी स्तुति की हैं।[5] उनके काव्य संकलन बांगेदरा मे हिन्दू वेदान्त के प्रकाण्ड पण्डित स्वामी रामतीर्थ का जिक्र आया है, स्वामी जी के अध्यात्म और वेदान्त पर निष्ठा से इकबाल ने प्रभावित होकर एक कविता रची जिसका शीर्षक स्वामी रामतीर्थ रखा। हिन्दू दर्शन की महता को स्वीकारोक्ति 'राम' कविता में हुई हैं। उसने जीवन के दर्शन को एक शांतिप्रिय मानवप्रेमी कवि एवं विचारक के रुप में अपनी शायरी को विश्वपटल पर रखा, उनके संदेश की जड़े सतत प्रयास दृढ़ निश्चय मानव जाति से प्रेम पर आधारित हैं। इकबाल की मशहूर कृति जावेदनामा हैं, जो उन्होंने जीवन दर्शन को समर्पित की हैं। इस कृति में आकाश के उस पार इकबाल एवं भर्तहरि की आत्मा का मिलन एवं वार्तालाप दर्शाया हैं 'मानवीय इच्छाओंकी पूर्णता और अपूर्णता से उपजे सुख-दु:ख को भी परिभाषित किया है।[6] इसी काव्य में शंकराचार्य जी का भी वर्णन मिलता हैं। एक ओर भारतीय ईश्वर ज्ञानी विश्वामित्र जिन्हें इकबाल ने (जहाँ दोस्त संसार के प्राणियों के मित्र) कहकर पुकारा हैं वार्तापाल दर्शाया हैं और इन्हीं की वाणी से समस्त एशिया महाद्धीप की उन्नति की खबर दी गई

हैं। इकबाल को जिन पात्रों ने प्रभावित किया उनमें श्री कृष्ण जी भी हैं, 'असरार खुदी के प्रथम भाग में उन्हें एशिया का प्रथम मानव प्रेमी और बुद्धिमान व्यक्तित्व करार देते हुए उनके उपदेशों के महत्व का गुणगान किया हैं। इकबाल के विचार से इश्क किसी कार्य को पूर्णता देने की लगन का नाम हैं और सतत् प्रयास से ही मंजिल मिलती हैं, परन्तु इसके लिए स्वयं पर विश्वास भी जरुरी हैं, जिस व्यक्ति में ये सारी विशेषताएँ एकत्र हो जाती हैं। वह संसार में महान्तम् व्यक्तित्व का धनी हो जाता हैं फिर वह किसी भी देश या धर्म को मानने वाला हो। इसलिए इकबाल के इन महान विभूतियों को बिना भेदभाव के अपनी शायरी में समझाया। इन विभूतियों में सभी धर्म, सम्प्रदाय के लोग सम्मिलित हैं। पश्चिमी संस्कृति से इकबाल नाराज ही रहे वो पाश्चात्य संस्कृति की अच्छाइयों को आत्मसात करने के विरुद्ध नही हैं, परन्तु इसके धीरे-धीरे पड़ने वाले बुरे प्रभावों से डरते थे कि यह हमारी भारतीय संस्कृति की पहचान ही न खत्मकर दे, इसीलिए उन्होंने अपने भारतीय महापुरुषों के शानदार कार्यो का गुणगान करके मर्द पीढ़ी को जागृत करने का कार्य किया हैं। इस प्रकार भारतीय संस्कृति व भावात्मक एकता को कायम रखने में इकबाल के साहित्य का भी बड़ा योगदान रहा।

निष्कर्ष यह है कि रहीम व इकबाल, साहित्यकारों का साहित्य भारत की एकता, अखण्ड़ता के लिए कभी भुलाया नहीं जा सकता। उन्होंने जनमानस को अपनी कलम के माध्यम से आवाज दी और जीवन की सच्चाई को कलमबद्ध किया। साहित्य के लिए दिये गये रहीम व इकबाल के योगदान का यह देश ऋणी रहेगा और उनका साहित्य युगों-युगों तक देश के लिए प्रासांगिक रहने के साथ आने वाली पीढ़ी के लिए प्रेरणा स्त्रोत है।[7]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी अनुशीलन भारतीय हिन्दी परिषद इलाहाबाद पृष्ठ , 64, 65
2. जावेदनाम- डॉ इकबाल।
3. जनसत्ता समाचार पत्र नई दिल्ली, 09.10.09 पृष्ठ, 5
4. नवभारत टाइम्स समाचार पत्र नई दिल्ली, 06.05.07 पृष्ठ, 4
5. साहित्य अमृत ,साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक,मासिक, सितंबर 2015, आसफ अली रोड नई दिल्ली ,पृष्ठ, 52
6. आजकल, साहित्य और संस्कृति मासिक , जनवरी 2014प्रकाषन विभाग ,सूचना भवन, लोदी रोड नई दिल्ली पृष्ठ, 43
7. स्वयं का सर्वेक्षण एवं निष्कर्ष।

****

नारी मन का चित्रण - पटाक्षेप- मालती जोशी

डॉ. संध्या खरे *

प्रस्तावना - आधुनिक काल में जैनेन्द्र साथ कहानी में एक नया प्रकार मनोवैज्ञानिक कहानियों का आया। ऐसे कहानीकारों में एक प्रमुख नाम मालती जोशी का भी है। इनकी कहानियां भी मनोवैज्ञानिक वर्ग की है। पारिवारिक जीवन खासतौर पर नारी जीवन की समस्याओं की विवेचना मालती जोशी की कहानियों में नजर आती है।

मालती जोशी की कहानी पटाक्षेप में नारी मन की ईर्ष्या-द्धेष, हीन भावना, छिन्द्रावेषण की प्रवृत्ति के साथ-साथ नारी की सह्वदयता का चित्रण एक ही नारी पात्र में बड़ी खूबी के साथ किया गया है। पटाक्षेप कहानी दो भाइयों और उनकी पत्नियों उनके बच्चों तथा उनके पास-पड़ोस की कहानी है। छोटा भाई सुशील उच्च शिक्षा हेतु कम्पनी की ओर से जर्मनी गया है। उसकी नव विवाहिता पत्नी पहले मायके व बाद में जेठानी पद्मा, जेठ तथा उनके बच्चे विभा, शुभा के पास अपने नन्हे बच्चे पीयूष के साथ रहती हैं। जेठानी के प्रयास से वह समाज शास्त्र में एम.ए. कर रही है। सब सामान्य गति से चल रहा है कि अचानक छवि के जीवन में गौतम साहब जो विवाहित है, आते दिखते हैं। पति सुशील से लम्बा वियोग, छवि के मन, आशा-उमंगों का मारता जा रहा है।[1]

गौतम की घुसपैठ छवि के जीवन इतनी बढ़ी कि वह सुशील से दूर हो जाए इससे पहले गौतम का स्थानान्तरण वहां से बिसालपुर हो जाता है।[2] और छवि तथा सुशील के सम्पर्क को पुनर्जीवित करने हेतु पद्मा व उसके पति मिलकर अपनी सारी आर्थिक सामर्थ्य लगाकर उसे जर्मनी भेजने निश्चय कर लेते है।[3]

मालती जोशी की कहानी पटाक्षेप में मुख्य नारी पात्र पद्मा तथा गौंण नारी पात्र के रूप में छवि का चरित्र दिखाई देता है। पद्मा के पिता का अल्पआयु में निधन हो गया था और पिता के निधन के साथ ही ममतालु मां भी तिरोहित हो गई थी। शेष रह गई थी मां के स्थान पर एक प्रधान अध्यापिका, जिसके कठोर अनुशासन की कारा में केवल पद्मा व उसकी बहिन रमा ही नहीं बल्कि सब छात्रायें रहती थी।[4]

इस अति अनुशासन, कस्बाई वातावरण, संकुचित दृष्टिकोणों के मध्य विकास होने के कारण अपने दाम्पत्य जीवन में भी पद्मा इस आतंक से मुक्त नहीं हो पाती।[5] इस आंतक से भी बढ़कर पद्मा के मन में किशोर अवस्था में शेखर दा के प्रति उसका मूक किन्तु असफल प्रेम है, जिसने पद्मा के चरित्र को अनेक विसंगतियों को भर दिया है।[6]

पद्मा का यह गहन मूक अनुराग तब तीव्र, कुंठा, हीन बोध व विक्षोम में बदल जाता है जब इन्हीं शेखर दा से उसकी छोटी बहिन रमा प्रेम विवाह कर लेती है।[7] और तब से पता नहीं क्यों उसके मन में हमेशा एक डर-सा रहता है कि कोई मुझे गलत न समझ ले।[8]

यह विवाह कहीं गहरे तक पद्मा के मन में आघात करता है, उसका आत्मविश्वास पूरी तरह से डगमगा जाता है। पद्मा के पति उसके इस मूक प्रेम को पकड़ कर भी पद्मा को दोष नहीं देते।[9] बस इतना ही कहते है-'तुम्हारे स्वभाव की विसंगतियां खुद तुम्हारी कहानी कहती रही है। तुम्हारी व्यथा में डूबी आंखें, खोया हुआ आत्मविश्वास, तुम्हें हरदम कोंचता तुम्हारा हीन बोध, मुझे प्रसन्न रखने के तुम्हारे हास्यास्पद प्रयास, मुझे खो देने का तुम्हारा तर्कहीन भय सभी कुछ मेरे सामने था।'[10]

ये पक्तियां पद्मा के आंतरिक एवं बाह्यय व्यक्तित्व का पूरा चित्र-सा खींच देती हैं। असफल प्रेम कुंठा ही मानो पर्याप्त नहीं थी कि ऊपर से बीमारी के कारण पद्मा का सौन्दर्य भी फीका पड़ गया। पुत्र की कामना भी दबानी पड़ी और केवल पुत्रियों पर संतोष करना पड़ा।[11]

आम नारी मन की ये सारी कुंठायें पद्मा की अच्छाई और उनके चिड़चिड़े स्वभाव के मध्य उसे हिंडोलो की भांति झुलाती रहती हैं। अच्छे या बुरे किसी एक बिन्दु पर उसे स्थिर नहीं होने देती। वह निरंतर संशकिन, भयभीत, हीनभाव से ग्रसित रहती है। उसे प्रत्येक व्यक्ति अपने विरूद्ध षडयंत्र-सा करता प्रतीत होता है। वह नये सिरे से सारे षडयंत्रों को समाप्त करने के, अपने को अच्छा साबित करने के प्रयास मे जुट जाती है।[12] पद्मा स्वयं कहती है कि पता नहीं क्यों मन में हमेशा एक डर-सा रहता है कि कोई मुझे गलत न समझ ले।[13]

स्वयं को अच्छा साबित करने के प्रयास में पद्मा अपनी सामर्थ्य से अधिक परिश्रम करके पति, बच्चों और देवरानी सबका मन जीतने का प्रयास करती है[14] किन्तु जब श्रेय प्राप्ति का अवसर आता है, तब अपनी ही किसी कुंठाजनित कटूक्ति से वह इस अवसर को खो देती है। अपनी यह कटूक्तियां स्वयं उसके मन को इतना सालती है कि पुन: वह क्षुब्ध होकर इस सबका दोष दूसरों पर डालने के लिए व्यग्र हो उठती है।[15]

जब-जब उसका हीन बोध उसे झुलसाता है, उसका अक्स क्रोध अपनी प्रधान अध्यापिका कठोर मां, बहिन रमा, पति पर, बच्चों पर, देवरानी छवि और छवि को घर में लाकर पद्मा का महत्व कम करने वाले देवर सुशील पर, यहां तक की पड़ोसियों, पड़ोसी बच्चों और पद्मा की कविता श्रवण न करने के दोषी गौतम साहब पर उतरने लगता है।[16]

जहां कहीं पद्मा को पुरूष स्त्री के मध्य आकर्षण दिखता है, तत्काल उसे अपना असफल मूक प्रेम याद आ जाता है और तत्काल वह प्रतिशोध की अग्नि से सुलग कर नाना आरोप लगाने के प्रयास करने लगती है। उसका तर्क है कि वह अल्ट्रा मार्डन नहीं, रूढिवादी ही सही पर संस्कारी मन है उसका।[17]

अपने प्रेम पात्र शेखर दा के अपनी ही बहिन के प्रति आकर्षित होकर विवाह कर लेने के बाद ही पद्मा के मन में आदि अंतहीन ईर्ष्या का जन्म होता है। समय के साथ-साथ यह छिपी ईर्ष्या और प्रबल रूप धारण करती

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

जाती है। वह स्वयं स्वीकारती है कि-'जिस व्यक्ति से मैं मन ही मन द्वेष करती हूँ उसे दु:खी देखकर संतोष होता है। इनके बास की एक बड़ी प्यारी-सी लड़की थी, उतने ही सम्पन्न घर में ब्याही गई। पिछले साल सुना उसे कैंसर हो गया सुनकर दु:ख होना चाहिऐ था पर नहीं हुआ।'[18]

पद्मा के चरित्र के माध्यम से मालती जोशी ने एक आम नारी के मन में छुपे ऐसे ढेर संवेगो, मनोवेगों को बाहर निकाला है, जिनकी ओर हमारा ध्यान तक नहीं जाता है। छवि और गौतम के अनैतिक संबंध के प्रतीक पत्र के मिलने पर पद्मा को ईर्ष्याजन्य संतोष का अनुभव होता है[19]

इस स्थिति का सटीक वर्णन मालती जोशी के शब्दों में देखिये-पद्मा से मनोभाव उनकी लेखनी में ज्यों के ज्यों प्रकट होते दिखते है - 'अपने मन को खूब ठोक बजा कर देखा छवि वाली बात से मन दु:ख कितना हुआ बल्कि एक गहन तृप्ति का एहसास हुआ। छवि की कच्ची उम्र, दूधिया रंग, विदेश में ट्रेनिंग लेने वाला पति, भरा पूरा परिवार यहाँ तक की नन्हा पीयूष सबके प्रति मन में एक सूक्ष्म सी ईर्ष्या थी।'[20]

पटाक्षेप में गौण नारी पात्र है छवि, जिसके व्यक्तित्व का वर्णन अभी हमने पद्मा के मुँह से सुना है। छवि के चरित्र को मालती जोशी ने ज्यादा विस्तार नहीं दिया है। ऐसा प्रतीत होता है मानो पद्मा के चरित्र का पूर्ण विकास प्रस्तुत करने के लिये ही छवि के चरित्र की रचना की गई हैं। किंतु अपनी संक्षिप्त भूमिका में भी छवि पर्याप्त प्रभाव डालती है।

एक कम उम्र, नासमझ, भावुक, कोमल काया व स्वभाव की लड़की जो अचानक कालेज छात्रा से विवाहिता बनी है, और पत्नी के दायित्व में रम भी न पाई थी कि शीघ्र ही मातृत्व एक बोझ की तरह उसके ऊपर आन पड़ा। वह भी तब, जब उसका पति परदेश जा चुका है। छवि के सौभाग्य चिन्ह व मातृत्व दोनों उसके मन में गहराई से प्रविष्ट हो सके उसके पूर्व ही प्रोषित पतिका विरहिणी नायिका का भाव उसके जीवन में आ जाता है।

पति के परदेश गमन हेतु न तो उसकी राय ली गई, न उससे पूछा गया। वह निरूद्धेश्य कभी मायके कभी ससुराल के मध्य समय काटती है। छवि के हृदय की उदासीन अवस्था की चरम सीमा तब दिखती है जब वह न तो सुशील के पत्र के प्रति उत्सुकता दिखाती है, न पत्रोत्तर देने का उत्साह उसे है।[21]

निराशा के ऐसे क्षणों में वह गौतम, जिसे छवि मि0 सरेस, गोंद की शीशी जैसी उपाधियॉ प्रदान करती है, भी उसे अपना-सा लगने लगता है। गौतम से प्राप्त संरक्षण, सहयोग, अधिकार भाव, प्रेमभाव उसे गौतम के प्रति कृतज्ञ बना कर गौतम की ओर आकर्षित करने लगता है। यह आर्कषण गहन हो कर छवि व सुशील के मध्य दरार से पड़े इससे पूर्व गौतम चला जाता है व छवि की विदेश गमन की तैयारी होने लगती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-5
2. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-43
3. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-55
4. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-66
5. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-28
6. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-30
7. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-35
8. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-43
9. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-56
10. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-67
11. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-54
12. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-37
13. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-43
14. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0-64
15. प्रतिदान - मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0,

प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली–110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0–62

16. प्रतिदान – मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली–110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0–07
17. प्रतिदान – मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली–110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0–56
18. प्रतिदान – मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली–110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0–54
19. प्रतिदान – मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली–110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0–47
20. प्रतिदान – मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली–110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0–55
21. प्रतिदान – मालती जोशी, संस्करण सन् 1982, मूल्य 3.00 रू0, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि0, जी0टी0बी0 रोड, शाहदरा, दिल्ली–110032, मुद्रक : आई0बी0सी0 प्रेस, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ क्र0–34

****

वैश्विक समरसता में सन्त साहित्य की उपादेयता

डॉ. कमलेश सिंह नेगी *

शोध सारांश – आज पूरे संसार में विश्व संस्कृति, विश्व समाज, विश्व नागरिकता, विश्व ग्राम जैसी अवधारणाएं प्रतिफलित हो रही हैं। राष्ट्रीयता की दीवार खड़ी करके एक राष्ट्र अपने को सीमाबद्ध कर लेता है। इससे उस राष्ट्र में नैतिक चेतना और विश्व-प्रेम का विकास नहीं हो पाता है। व्यक्ति और राष्ट्र का आदर्श ही मानवता का आदर्श है। मनुष्य को मनुष्य से, राष्ट्र को राष्ट्र से मिलाना ही वैश्वीकरण है। यही वैश्वीकरण 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का पर्याय है। आज यह स्पष्ट हो गया है कि वर्तमान समस्याएं विश्वव्यापी हैं। संसार का कोई भी राष्ट्र दूसरों से पृथक रहकर अपना कल्याण नहीं कर सकता है। या तो हम सब साथ-साथ ही विनाश के गर्त में जा गिरेंगे। जैसा कि हम देख रहे हैं कि नाटो सेनाएं या अन्य विकसित और विकासशील देश मिलकर कर रहे हैं। वैश्विक समरसता स्थापित करने के लिए हमारे संतों ने अनेकों आदर्श प्रस्तुत किए हैं, जिनका विवेचन प्रस्तुत शोधपत्र में किया गया है।
शब्दकुंजी– वैश्विक, समरसता, राष्ट्र, धर्म, जाति, वर्ग, सन्त, हिन्दू, मुस्लिम आदि।

शोधप्रविधि – सन्त साहित्य की कविताओं का अध्ययन एवं विश्लेषण।
अध्ययन क्षेत्र – हिन्दी साहित्य का सन्त साहित्य।
अध्ययन सामग्री – पुस्तकें, कवियों से चर्चासार एवं स्वयं का विश्लेषण।
उद्देश्य – वर्तमान परिप्रेक्ष्य में क्षेत्रवाद, भाषावाद, जातिवाद, धार्मिक उन्माद, आतंकवाद, नक्सलवाद जैसी समस्याओं का हल भारतीय संस्कृति के पुरोधा सन्त कवियों की वाणियों में खोजकर जन सामान्य के लिए उनकी कविताओं को प्रस्तुत करना है।

विषयवस्तु – संत कवियों ने अपनी रचनाओं के द्वारा वैश्विक समरसता लाने के लिए विश्व-एकता और विश्व-सहयोग का जो आदर्श प्रस्तुत किया है, वही आज वैश्विक समस्याओं का समुचित हल है। संत कवियों ने अपनी साहित्यिक चेतना से न केवल तत्कालीन समय और समाज को ही जीता, अपितु अतीत और आगत, पौर्वात्य एवं पाश्चात्य विचार एवं समाज पर भी विजय हासिल की। 'संत कवियों की काव्य अनुभूत सच्चाईयों को आधुनिक जीवन के समानान्तर इतना परिचित और आत्मीय देखकर इस तथ्य की सच्चाई और भी प्रमाणित हो जाती है।'[1] संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 2002 को 'शान्ति की संस्कृति' का वर्ष घोषित कर मनुष्य की भीतरी इच्छा को अभिव्यक्ति दी। बंधुता का भाव चहुँ ओर फलित हो रहा है। किसी भी व्यक्ति से जाति, लिंग, धर्म, भाषा देशीय सीमाओं के इतर भेद-भाव नहीं किया जा सकता है। इसी तथ्य का उद्घाटन करते हुए सन्त कबीर ने लिखा है-

'कबीरा खड़ा बाजार में, सबकी चाहे खैर।
न काहू से दोस्ती, और न काहू से बैर।।'[2]

मूलरूप से वैश्वीकरण एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। मनुष्य की व्यक्ति-चेतना से विश्व चेतना की ओर यात्रा, जो पहले गिने-चुने योगियों तक सीमित थी, अब एक सामूहिक यात्रा का रूप धारण कर रही है। इसे ही वैश्वीकरण कहा जाता है। इसके साथ राष्ट्र राज्य की सत्ता का ह्रास राष्ट्रों के बीच पारस्परिक निर्भरता की वृद्धि भी जुड़ी हुई है। सन्तों के साहित्य के अध्ययन से आत्मजिज्ञासा के प्रश्नों का समाधान मिलता है। यही आत्म जिज्ञासा एक विशाल पथ का निर्माण करती है। सन्त रविदास ने इसी तथ्य को उद्घाटित करते हुए अपनी लेखनी से लिखा है-

'तू मोहि देखे हौं तोहि देखों, प्रति परस्पर होई।
तू मोहि देखे तोहि न देखों, यह मति बुधि सब खोई।।'[3]

अब उसकी जिज्ञासा का विषय व्यक्ति विशेष को अनुप्रमाणित करने वाला आत्म या आत्मतत्व न होकर समग्र मानवता का सांस्कृतिक आत्म है, जिसकी चेतना-परिधि में युग-युग का सौन्दर्य बोध, नीतिबोध अध्यात्मिक बोध एवं इन सबसे सहचरित्र और उन्हें दृष्टि की एकता में बांधने वाला, जीवन-विवेक समाहित रहता है। 'मानव के कार्य एकाकी न होकर सामूहिकता का परिणाम होते हैं।'[4]

दुनिया में आज छोटे-से-छोटे काम से लेकर बड़ी-बड़ी परियोजनाएं सामूहिक प्रयासों से ही सफल होती हैं। आज एक देश के पास मानव संसाधन है, तो दूसरे देश के पास पूंजी। तीसरे देश के पास तकनीक है, तो चौथे देश के पास विचार। इसे उदाहरण के तौर पर समझे जैसे एक छाता उद्योग में एक नहीं, अनेक लोगों का योगदान होता है। छाते का कपड़ा के लिए कपास को किसान पैदा करेगा। पूंजीपति आर्थिक सहयोग करता है। इंजीनियर मशीनों को बनाता है। मजदूर परिश्रम करते हैं। दुकानदार बने हुए छाते को उपभोक्ता तक पहुंचाता है। इस प्रकार मनुष्य जन्म से लेकर मृत्यु तक अपने आप को समाज के सन्निकट पाता है। जिसका निर्माण उसके पूर्वजों द्वारा किया गया है। अत: सामूहिकता की प्रवृत्ति स्वाभाविक है। छोटे से छोटा जीव भी सामूहिक प्रयासों से बड़े से बड़ा काम कर देता है। विश्व में होने वाले परिवर्तन को दृष्टि में रखकर सन्त कवियों ने पर्यावरण के परिवेष में भी चिन्तन किया है। मनुष्य के भीतर का पर्यावरण हो-मानसिक-आत्मिक आयामों का या बाहरी पर्यावरण हो, सांसारिक-भौतिक आयामों का दोनों ही कबीर की वाणी में चिन्ता के विषय हैं। पेड़-पौधों, पत्तों में छ: सौ वर्ष पूर्व प्राण तत्व के होने की, मनुष्यों की भांति सांस लेने दुख, सुख तथा पीड़ा मानने की अवधारणा कबीर ने व्यक्त की और उन्हें नष्ट न करने की बात कही। बकरी और पौधे के दृष्टांत के माध्यम से उन्होंने कहा –

'बकरी पाती खात है, वाकी काढ़ी खाल।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) चन्द्रशेखर आजाद शासकीय स्नातकोत्तर अग्रणी महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.) भारत

जो नर बकरी खात हैं, तिनको कौन हवाल।।'[5]

वैश्वीकरण ने राष्ट्रों के अंधविश्वास की धारणा को ध्वस्त किया। ऐसे राष्ट्रवाद की आलोचना की जो अपनी आड़ में घृणित तथा कुत्सित कार्यों को बढ़ावा देते हैं। यह मनुष्य की विचार शक्ति को कुण्ठित करके उसे अधम तथा दूषित शक्तियों का दास बना देते हैं। हमें अपनी एकता के आध्यात्मिक आदेश में गहरा विश्वास होना चाहिए। यह संसार मानवीय पहलुओं के विकास के लिए हैं, केवल राजनीतिक अथवा अन्य संगठनों के विकास के लिए नहीं। 'वैश्वीकरण की दृष्टि राष्ट्रीयता की धारणा का अतिक्रमण करके विश्वात्मा एवं विश्व-एकता की अनुमति तक प्रसारित है। राष्ट्रीयता की एक दीवार खड़ी करके एक राष्ट्र अपने को उसमें कूप मंडूक की तरह बंदी बना डालता है। इससे राष्ट्र में नैतिक चेतना और विश्व प्रेम का विकास नहीं हो पाता।'[6] एक वर्ण द्वारा नियंत्रित समाज की धर्मान्धता का ही एक परिणाम जातिगत कट्टरता छूत-छात की भावना और समुद्र यात्रा निषेध आदि में दृष्टिगत हुआ। सन्त कबीर के साहित्य में ऐसे बीज संग्रहित हैं, जो सम्पूर्ण मानवता की जमीन को उपजाऊ बनाने की क्षमता रखते हैं। उस पर समतावाद की फसल लहलहायेगी। अहंकार में डूबी मानवता को सचेत करते हुए कबीर लिखते हैं –

'जहाँ अहं तहाँ आपदा, जहाँ संषय तहाँ शोक।
कहें कबीर कैसे मिटैं, चारों दीरघ रोग।।'[7]

सामाजिक परिस्थितियों पर हम दृष्टिपात करें तो पाते हैं कि भारतीय समाज के साथ-साथ वैश्विक समाज में अनेक कुप्रथाएं उत्पन्न हो गयी हैं। जाति-पांति, छुआछूत, वर्णभेद, वर्गभेद नश्लीय हिंसा जैसी समस्याएं पुन: उसी विकराल रूप में उभरती हुई दृष्टिगोचर होती हैं जैसे कि मध्यकाल में थी। ऐसी समस्याओं से आज के समाचार पत्र भरे पड़े रहते हैं। सामाजिक समरसता इस समय के समस्त कार्य व्यापार का केन्द्र बिन्दु रहा। समाज सुधारकों, राजनीतिज्ञों तथा संतों की दृष्टि सामाजिक उत्थान पर केन्द्रित रही।[8]

संत साहित्य में समाज-संस्कृति के आधार पर विभिन्न धार्मिक बाह्याचारों और कर्मकाण्डों की नि:सारता का प्रतिपादन करते हुए सन्तों ने मानव मुक्ति के मार्ग को प्रशस्त किया है। अपने आर्थिक हितों के लिए पुरोहितों ने धार्मिक अनुष्ठानों को जटिल से जटिलतर बना दिया। इतना ही नहीं आम जनता में अनेकानेक अन्धविश्वासों का प्रचार किया। जिससे जनसामान्य गरीब, दलित, पिछड़ी, आदिवासी जंगलों में रहने वाले समाज के लोग इन अन्धविश्वासों के प्रति इतना समर्पित हो गया कि धर्म का मूल स्वरूप ही तिरोहित हो गया। उस समय पुरोहितों एवं मुल्लाओं जैसे धर्माधिकारियों ने सत्ता से भी गठजोड़ किया। इसका परिणाम यह हुआ कि सामान्य जन उपेक्षित रहा और उसका शोषण प्रारम्भ हुआ। सन्त कवियों ने मानव चेतना को अवरूद्ध करने वाले सभी कर्मकाण्डों, बाहरी आडम्बरों का खण्डन किया।[9]

संत मत का मानवीय रूप यह है कि मनुष्य से बड़ा किसी धर्म को नहीं मानता। इसलिए कबीर नाम कबीरा जाति जुलाहा तो कहते हैं लेकिन अपने धर्म मुसलमान या हिन्दू होने को कहीं भी प्रचारित नहीं करते बल्कि कहते हैं- 'ना हिन्दू ना मुसलमान'।[10] आज भी सत्ता ने एक ओर यदि दिल्ली की केन्द्रीय शक्ति को विघटित किया है, तो दूसरी ओर 'वोट' की राजनीति के कारण नई-नई सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं। जिसका मिला जुला परिणाम हमारे सामने आया है। भारतीय समाज की जैसी विस्फोटक स्थिति आज है कदाचित ही कभी रही होगी। राजनैतिक गलियारों में जातिवाद का नंगा-नाच, धार्मिकता अधार्मिकता की कुत्सित प्रवृत्ति, भौतिक सुखों को प्राप्त करने की अमानवीय प्रतिस्पर्धा और उसी के समानान्तर चलने वाले देशी-विदेशी धार्मिक संस्थाओं के कुचक्र आज पुन: भारतीय राजनीति के साथ वैश्विक राजनीति को विघटन के कगार पर लाकर पटक रहे हैं। तथाकथित राजनैतिक लोगों के निहित स्वार्थों के कारण आज व्यक्ति का विवेक इतना कुंठित हो गया है कि वह अपनी बात के अतिरिक्त किसी की बात सुनने को तैयार नहीं। उसका अज्ञान उस पर इतना हावी हो चुका है कि मरणोन्मुख तत्व ही उसे संजीवनी प्रतीत हो रहे हैं। विष ही उन्हें अमृत जान पड़ रहा है –

'नीम कीट जस नीम पियारा।
विष को अमृत कहत गंवारा।।'[11]

अज्ञानता के मोह-पाश में उलझकर राजनीति में संलिप्त होकर लोगों ने अपनी सुधि-बुद्धि भी खोदी है। मिथ्या को सत्य मान बैठा है। इसीलिए हम देख रहे हैं कि चारों तरफ लड़ाई-झगड़े, दंगे-फसाद हो रहे हैं। सन्त कबीर ने इस पर सटीक शब्दों का प्रहार करते हुए ठीक ही लिखा है –

'सपने में तोहि राज मिल्यो है, हाकिम हुकुम दोहाई।
जाग पड़े जब लाव न लस्कर, पलक खुले सुधि पाई।।'[12]

सन्त कवि अन्धानुकरण के विरोधी थे। किसी चीज को समझे बिना उसे ढोने का प्रतिरोध करना चाहते थे। पुस्तकीय ज्ञान के भार से दबे जा रहे पण्डित को वे 'खर, गंवार' से अधिक और समझते भी क्या? 'खर' को बोझा ढोने से काम, उसे क्या मालूम कि पीठ पर पत्थर लदा है या चन्दन जैसा दुर्लभ पदार्थ। परख के अभाव में, दृष्टि के बिना पराग की गंध का मूल्यांकन जैसे एक गंवार व्यक्ति नही कर सकता उसी प्रकार व्यावहारिक ज्ञान के बिना शास्त्र को युगीन दृष्टि से समझ पाने एवं उससे युग की समस्याओं का समाधान निकाल लेने की क्षमता तो बड़े-बड़े शास्त्रज्ञों में भी नहीं हो सकती। यह कहना कि संत कवि पंडितों के विरोधी थे, अनर्गल प्रलाप से अधिक कुछ नहीं है। सच तो यह है कि न वे पण्डितों के विरोधी थे, न मुल्लाओं के समर्थक। वे समान रूप से उन सभी के विरोध में खड़े हुए थे जो समाज को गुमराह करके जड़ता की ओर ले जा रहे थे। यथा-

'जिन कलमा कलिमाहिं पढ़ाया।
कुदरत खोज तिनहुँ नहि पाया।।'[13]

आर्थिक दृष्टि से संतों के समय और आधुनिक काल की वैश्विक परिस्थितियों में पर्याप्त अन्तर दृष्टिगोचर होता है। ब्रिटिश शासन-तंत्र की स्वार्थपरक नीति ने भारतीय लघु एवं कुटीर उद्योग धन्धों को नष्ट करके आर्थिक स्थिति को दयनीय बना दिया गया। भारत अंग्रेजों का व्यापारिक केन्द्र था। भारत के कच्चे माल से उन्होंने अपने देश की औद्योगिक समृद्धि का विकास किया। भारतियों की आकांक्षा व्यक्त करते हुए पट्टाभि सीतारमैया ने लिखा है कि – इस देश का सारा कच्चा माल यहां से जाकर विदेशों से तैयार वस्तुओं के रूप में भारत आता है। यदि हम स्वतंत्र होते तो अन्य विदेशी लोगों या देश के समान हम भी अपनी औद्योगिक वृद्धि सुनिश्चित कर सकते थे। कई विदेशी ताकत जिन्होंने भारत पर आक्रमण किया। तत्पश्चात भारत के शासकों की आपसी फूट के कारण वे यहां की सामाजिक अस्थिरता का फायदा उठाकर यहां की समृद्ध आर्थिक परम्परा का हिस्सा बन गये, लिहाजा भारत का धन, सम्पत्ति विदेशियों ने यहां के शासकों से लूटकर यहीं रखकर उस पर अपना आधिपत्य स्थापित किया। आर्थिक दृष्टि को केन्द्र में रखकर अगर सभी विदेशी ताकतों, शक्तियों का मूल्यांकन करें तो मुश्लिम शासन प्रणाली ज्यादा ठीक रही।

निष्कर्ष – नि:सन्देह सन्तों ने समाज में समरसता स्थापित करने का भरसक प्रयास किया। इतना ही नहीं तत्कालीन भारतीय समाज का इन्होंने गहराई से अध्ययन भी किया। समाज में व्याप्त समस्याओं को समूल नष्ट करने का बीड़ा उठाया। सामाजिक समानता और एकता का नारा जैसा मध्यकालीन

सन्तों ने दिया वैसा ही तत्समान परिस्थितियों में आधुनिक कालीन सन्तों ने भी लगाया। विषयक्षेत्र में भिन्नता होते हुए भी उनका कार्य भी वैश्विक सामाजिक समरसता स्थापित करना था। आज सम्पूर्ण विश्व आतंकवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद, जातिवाद, नस्लवाद, की समस्या से जूझ रहा है। इन समस्याओं से अगर हमें निजात पाना है तो भारतीय सन्तों के इन्हीं विचारों को हमें आत्मसात करना होगा, तभी हम वैश्विक समरसता स्थापित करने में कामयाव होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कबीर साहित्य की प्रासंगिकता–सं. विवेकदास, कबीरवाणी प्रकाशन केन्द्र, वाराणसी संस्करण सितम्बर, 978, पृष्ठ–100
2. कबीर की चिन्ता – डॉ. बलदेव वंशी, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली–2 प्रथम संस्करण – 2002, पृष्ठ–51
3. मानव–मुक्ति और सन्त साहित्य–अजैब सिंह, संजय प्रकाशन दिल्ली–2, प्रथम संस्करण–2008, पृष्ठ–50
4. वैश्वीकरण में नागरिकता–वंदना वोहरा, ओमेगा पब्लिकेशन्स नयी दिल्ली–2, प्रथम संस्करण – 2007,पृष्ठ–51
5. कबीर की वाणी – बलदेव वंशी, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली–2, प्रथम संस्करण – 2002, पृष्ठ–30
6. वैश्वीकरण में नागरिकता – वंदना वोहरा, ओमेगा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली–2, प्रथम संस्करण 2007,पृष्ठ–16
7. कबीर की वाणी – बलदेव वंशी, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली–2, प्रथम संस्करण – 2002, पृष्ठ–50
8. आधुनिक हिन्दी कविता पर कबीर का प्रभाव–डॉ. मनोरमा प्रकाश, राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली–02 प्रथम संस्करण 1992, पृष्ठ–126
9. मानव मुक्ति और सन्त–साहित्य– अजैब सिंह, संजय प्रकाशन, दिल्ली–02, प्रथम संस्करण 2008,पृष्ठ–149
10. भक्ति काव्य और वर्तमान समय –सं. रतन कुमार पाण्डेय, अनंग प्रकाशन दिल्ली–53, प्रथम संस्करण 2002, पृष्ठ–100
11. कबीर साहित्य की प्रासंगिकता–सं. विवेकदास, कबीरवाणी प्रकाशन केन्द्र, वाराणसी संस्करण सितम्बर 1978, पृष्ठ–139
12. कबीर की चिन्ता – डॉ. बलदेव वंशी, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली–2 प्रथम संस्करण – 2002,पृष्ठ–55
13. कबीर साहित्य की प्रासंगिकता–सं. विवेकदास, कबीरवाणी प्रकाशन केन्द्र, वाराणसी संस्करण सितम्बर 1978, पृष्ठ–140

****

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीयता के स्वर

डॉ. गायत्री वाजपेयी *

प्रस्तावना – हिन्दी साहित्येतिहास में आधुनिक काल को जागरण काल की संज्ञा प्रदान की जाती है। यह वह कालावधि है, जहाँ साहित्य में राष्ट्रीयता की भावना का उत्कृष्ट दिग्दर्शन साहित्य सर्जकों द्वारा किया जा रहा था। प्रत्येक रचनाकार कमोवेश अपनी रचनाओं में जहाँ अतीत के गौरव में गीत गा रहा था, तो वहीं दूसरी ओर वर्तमान परिदृष्य से क्षुब्ध हो रोष को वाणी दे क्रान्ति का आह्वान कर रहा था। आधुनिक युग के सर्वाधिक चर्चित एवं क्रान्ति धर्मा कवि रामधारी सिंह दिनकर के रचना संसार में भी जहाँ देश प्रेम की भावनाएँ प्रबल रूप में व्यक्त हुई है, तो वहीं स्वातन्त्र्योत्तर काल की विषमता पूर्ण स्थितियों तथा दबी कुचली जनता का दु:ख दैन्य मुखरित है। राष्ट्रीय चेतना ही उनके काव्य का प्रमुख स्वर है, प्रस्तुत शोधालेख में इसी को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है।

राष्ट्रीय कवि के रूप में ख्यात दिनकर के काव्य में राष्ट्रीयता के स्वर अपने प्रखर रूप में गुंजायमान हैं। क्रान्ति के समर्थक कवि दिनकर अपनी ओजस्विता, उग्रता, आवेग एवं आवेशमयता के लिए विख्यात हैं। विश्व वेदना उनकी वेदना है, भावुकता उनकी कविता का लक्षण है। उनकी ही वाणी में राष्ट्र की वाणी मुखरित है। 'चक्रवाल' की भूमिका में उन्होंने लिखा है–'कवि मानवता का वह चेतन यंत्र है, जिस पर प्रत्येक भावना अपनी तरंग उत्पन्न करती है जैसे भूकम्प मापक यंत्र में पृथ्वी के अंग में कहीं भी उठने वाली सिहरन आप से आप अंकित हो जाती है। सच पूछिए तो हम कवि उसी मात्रा में होते हैं, जिस मात्रा में हम भावुक होते हैं और कवि हम तभी तक रहते हैं जब तक भावुकता हम में शेष रहती है।'[1]

दिनकर का समग्र काव्य युग का प्रतिबिम्ब है तथा राष्ट्रीय भावों से आपूरित है। पराधीनता की बेडियां, अंग्रेजी शासकों की गुलामी ने उनके मन मस्तिष्क को उद्वेलित कर दिया। देश की दुर्दशा, शोषण एवं विदेशी शासकों के अत्याचारों ने उनकी चेतना को झकझोर दिया। समसामयिक परिस्थितियों ने चिंतन की दिशा परिवर्तित कर दी उनकी काव्यगत चेतना राष्ट्रीयता की ओर उन्मुख हो गई। वे कहते हैं– 'राष्ट्रीयता मेरे व्यक्ति के भीतर नहीं जन्मी उसने बाहर से आकर मुझे आक्रान्त किया।'

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीयता पर चर्चा करने से पूर्व राष्ट्रीयता शब्द पर विचार करना समीचीन होगा। यद्यपि राष्ट्र एवं राष्ट्रीयता शब्दों पर प्राचीन ग्रन्थों में विषद विवेचन हुआ है। इसी आधार पर राष्ट्र एक ऐसा जन समुदाय है, जिसका अपना एक निश्चित भूभाग, वेशभूषा, रीति रिवाज, बाह्यशक्तियों से स्वरक्षा की अनुभूति, अपनी भूमि के प्रति समर्पण एवं अगाध श्रद्धा की भावना होती है तथा अपने राष्ट्र के प्रति श्रद्धा, मानसिक ऐक्य एवं राष्ट्र रक्षा की भावनाओं से आपूरित रहना ही राष्ट्रीयता है। राष्ट्रीयता यथार्थत: एक आध्यात्मिक भावना है, जो निश्चित भूभाग में अवस्थित जातियों में प्रखर रूप में आन्दोलित रहती है। इसके साथ ही यह एक मनोवैज्ञानिक भावना भी है, जो समयानुरूप दृढ़तर होती जाती है। जे. हालैण्ड रोज ने राष्ट्रीयता को अन्त: चेतना से सम्बद्ध करते हुये उसे अनुभूति का विषय माना है।[2] वहीं डॉ. अवध नारायण त्रिपाठी ने लिखा है कि 'राष्ट्रीयता का अर्थ किसी देश की भौगोलिक सीमा के भीतर निवासित जन समूह की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक चेतना के समुचित रूप से है। राष्ट्रीयता एक ऐसी भावना है, जो देश की जनता को संगठित करती है। गुलामी के दिनों में स्वतंत्रता की चेतना फूँकती है, मुक्ति संग्राम में मर मिटने का आह्वान करती है और कवियों तथा रचनाकारों को राष्ट्र जाति और धर्म की रक्षा के लिए आन्दोलन जगाने और राष्ट्र पर सर्वस्व समर्पण की भावना भरने वाली रचनाएँ लिखने का प्रोत्साहन देती है।[3] राष्ट्रीयता का यही स्वरूप दिनकर की काव्य रचनाओं में दृष्टिगत होता है। उनके काव्य में राष्ट्रीयता की अभिव्यक्ति विविध रूपों में हुई है। अपने हृदय में आप्लावित राष्ट्रीय प्रेम की सुर सरिता से कवि सम्पूर्ण विश्व को सिक्त कर देना चाहता है। भारत भूमि के हिमकिरीट हिमालय को एक तपस्वी के रूप में प्रस्तुत करते हुये 'हिमालय' शीर्षक कविता में उसे जगाते हुये कहता है –

तू मौन त्याग कर सिंहनाद
रे तपी! आज तप का न काल।
नव युग शंखध्वनि जगा रही,
तू जाग जाग मेरे विशाल।[4]

राष्ट्रीय ध्वज हमारी अस्मिता का प्रतीक है। कवि राष्ट्रीय ध्वज के प्रति श्रद्धा भाव प्रकट करते हुए अपने राष्ट्र प्रेम को इन शब्दों में प्रकट करता है –
मंगल मूर्ति तिरंगा प्यारा झण्डा ऊँचा रहे हमारा।

बल, बलिदान, विजय का साका
सखा शूरता निर्भयता का,
जनता की यह राजपताका,
जन जन की आंखों का तारा, झण्डा ऊँचा रहे हमारा।[5]

इस राष्ट्रीय ध्वज की रक्षा ही भारतीय जन का प्रथम कर्तव्य है। इसकी रक्षार्थ प्राणोत्सर्ग भी अभीष्ट है क्योंकि परतन्त्रता से बढ़कर कोई दु:ख नहीं है। परतन्त्रता तो वह विषैली नागिन है, जो मानवता का समूल भक्षण कर लेती है। कवि परतन्त्रता की भीषण विभीषिका से परिचित कराते हुये लिखता है –

यह है परतन्त्रता देश का रूधिर पीने वाली,
मानवता कहता तू जिसको उसे चबाने वाली।

स्वतन्त्रता की रक्षा एवं परतन्त्रता की मुक्ति हेतु जातीय एकता की जडें दृढ़ से दृढ़तर होना आवश्यक हैं इसीलिए कवि देशवासियों को साम्प्रदायिक सद्‌भाव की प्रेरणा प्रदान करते हुऐ कहता है–

ओ बदनसीब, इस ज्वाला में आदर्श तुम्हारा जलता है।
समझायें कैसे तुम्हें भारतवर्ष तुम्हारा जलता है।
जलते हैं हिन्दू मुसलमान भारत की आँखें जलती हैं।

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाराजा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

आनेवाली आजादी की लो दोनों पांखें जलती हैं।
ये छुरे नहीं चलते छिदती जाती स्वदेश की छाती,
लाठी खाकर भारतमाता बेहोश हुई जाती है।[6]

जातिगत भेदभाव और साम्प्रदायिक विद्वेष के कारण ही भारत विदेषियों से पदाक्रान्त हुआ है। अत: यह धार्मिक विभेद देश की प्रगति में बाधक ही नहीं अपितु घातक भी हैं। कवि 'रश्मिरथी' में जातिगत भेदभाव की संकुचित सीमाओं को महत्त्वहीन निरूपित करते हुए गुणों की सर्वोत्कृष्टता पर बल देता है। कवि की मान्यता है कि व्यक्ति की प्रगति जाति से नहीं अपितु उसके गुणों से होती हैं –

बडे वंश से क्या होता है खोटे हों यदि काम ?
नर का गुण उज्ज्वल चरित्र है नहीं वंश धन धाम।[7]

कवि घोषणा करता है कि जहाँ गुणों को नहीं वरन जाति को आदर एवं सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, वह देश एवं समाज विखण्डित हो जाता है और प्रगति के मार्ग स्वत: अवरूद्ध हो जाते हैं। कवि के शब्दानुसार–

धंस जाये वह देश अतल में, गुण की जहाँ नहीं पहचान,
जाति गोत्र के बल से ही, आदर पाते जहाँ सुजान।[8]

कवि भारतीयता के प्राचीन आदर्श, 'वसुधैवकुटुम्बकम' की धारणा में आस्था रखता है। विश्व प्रेम की उदात्त भावना से उनकी राष्ट्रीय चेतना जुड़ी हुई है। उनकी दृष्टि में भावनात्मक एकता ही सर्वोपरि है। वे कहते हैं– 'उत्तर को आर्यो का देश और दक्षिण को द्रविड़ों का देश समझने का भाव यहाँ कभी नहीं पनपा, क्योंकि आर्य और द्रविड नाम से दो जातियों का विभेद यहाँ हुआ ही नहीं था। समुद्र से उत्तर और हिमालय से दक्षिण वाला विभाग यहाँ हमेशा से एक देश माना जाता रहा है।' कवि दिनकर की यही विचारानुभूति ही उनकी काव्याभिव्यक्ति है। वे कहते हैं –

जाति जाति रटते, जिनकी पूँजी केवल पासंड,
मैं क्या जानूँ जाति ? जाति है ये मेरे भुजदण्ड।[9]

भारतीय जनमानस की दयनीय स्थिति, असहायावस्था, गरीबी एवं लाचारी उनके संवेदनशील हृदय को व्यथित कर देती है, जो मजदूर एवं किसान दिन–रात परिश्रम करते हैं उन्हें तन ढ़कने को कपड़ा व उदर पोषण के लिए भोजन भी सुलभ नहीं होता वहीं एक वर्ग ऐसा भी है, जो कर्तव्य विमुक्त हो अपने ही सुखोपभोग के साधन जुटाने में संलग्न है। कवि अपनी 'हाहाकार' कविता में किसान की दयनीय दशा को इन शब्दों में प्रकट करते हैं –

मुख में जीभ शक्तिभुज में, जीवन में सुख का नाम नहीं है,
वसन कहाँ ? सूखी रोटी भी मिलती दोनों याम नहीं है।
बैलों के ये बन्धु वर्ष भर क्या जाने कैसे जीते हैं ?
जुबाँ बंद बहती न आँख गम खा शायद आँसू पीते हैं।[10]

कवि को मानव–मानव के बीच होने वाला यह अन्याय कदापि स्वीकार नहीं है। उनका भावुक हृदय किसानों एवं मजदूरों के प्रति केवल दयार्द्र ही नहीं है अपितु उनके साथ हो रहे अन्याय व शोषण के विरूद्ध संघर्षरत भी है–

हटो व्योम के मेघ ! पन्थ से स्वर्ग लूटने हम आते हैं,
दूध दूध! ओ वत्स ! तुम्हारा दूध खोजने हम जाते हैं।[11]

अन्याय एवं अत्याचार के विरूद्ध लड़ना कवि अपना धर्म समझता है। अनाचार के प्रतिकार एवं अधिकार प्राप्ति हेतु कवि क्रान्ति का आह्वान करता है। राष्ट्रीयता की ओजस्वी वाणी में कवि क्रान्ति की ज्वाला सुलगा कर शोषण व अत्याचार को भस्मीभूत कर देना चाहता है –

क्रान्ति धात्रि कविते ! जाग उठ
आडम्बर में आग लगा दे
पतन पाप पाखंड जले
जग में ऐसी ज्वाला सुलगा दे।[12]

1962 में साम्राज्यवादी चीन ने जब भारत पर आक्रमण किया तब कवि के हृदय में प्रतिशोध की ज्वाला भड़क उठी। मातृभूमि की रक्षार्थ कवि ने जनशक्ति का आह्वान करते हुए देशवासियों को प्राणोत्सर्ग हेतु प्रेरित किया–

जातीय गर्व पर क्रूर प्रहार हुआ है,
मां के किरीट पर ही यह बार हुआ है।
अब जो सिर पर आ पड़े, नहीं डरना है,
जनमें हैं तो दो बार नहीं मरना है।
कुत्सित कलंक का बोध नहीं छोड़ेगे।
हम बिना लिए प्रतिशोध नहीं छोड़ेगे।[13]

देश भूमि पर आत्मार्पण करने वाले वीरों का कवि ने अत्यन्त की गौरव के साथ स्मरण किया तथा नवजवानों को स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए आत्माहुति देने के लिए उत्तेजित किया। भारत माता के वीर सपूतों की कीर्ति गाथा का गायन करते हुये कवि ने अपने श्रद्धा सुमन इन शब्दों में प्रस्तुत किए–

कल्पने ! धीरे धीरे बोल ! पग–पग पर सैनिक सोता है,
पग–पग सोते वीर, यह गह्वर प्राचीन अस्तमित गौरव का खंडहर है।[14]

कवि पर गांधीवादी विचारधारा का प्रभाव भी परिलच्छित है। गांधी जी के अछूतोद्धार आन्दोलन से प्रभावित होकर ही कवि ने 'बोधिसत्व' कविता लिखी। पूर्व में गांधी जी की अहिंसात्मक नीतियों के प्रति उनका विरोध भले ही रहा है परन्तु एक व्यक्ति विशेष के रूप वे उस महान आत्मा के प्रति सदैव श्रद्धावनत रहे हैं। उनके सिद्धान्तों एवं आध्यात्मिक शक्ति के प्रति वे नत हैं। 'बापू' शीर्षक कविता में वे लिखते हैं–

पर तू इन सबसे भिन्न ज्योति, जेता जेता से महीयान,
कूटस्थ पुरुष ! तेरा आसन सबसे ऊँचा सबसे महान।[15]

गांधीवाद से प्रभावित होकर ही कवि मानवतावाद विश्वबंधुत्व, नारी जागरण, हरिजन सेवा, साम्प्रदायिक सद्भाव एवं शान्ति समर्थक भावनाओं की अभिव्यक्ति कर सका है। दिनकर की 'कुरूक्षेत्र' एवं 'कलिंग विजय' कविताओं में गांधी जी की शान्ति एवं समाजवादी नीतियों का पूर्ण समर्थन दृष्टिगत होता है। वे सदैव असत्य, अन्याय, अधर्म व असमानता के विरोध का समर्थन करते रहे हैं। अपने उदारतावादी दृष्टिकोण के कारण ही वे कहते हैं, इस भूतल पर सुख शान्ति तब तक सम्भव नहीं जब तक सभी को न्यायोचित सुख सुलभ नहीं होगा –

न्यायोचित सुख सुलभ नहीं चैन कहाँ धरती पर तब तक ?
शांति कहाँ इस भव को जब तक मनुज मनुज का यह
सुख भोग नहीं सम होगा, शमित न होगा कोलाहल।
संघर्ष नहीं कम होगा।[16]

क्योंकि समान सुख और समान सुखोपभोग का अधिकार मानव मात्र को प्रकृति द्वारा ही प्रदत्त है। अन्याय व अत्याचार का जाल तो मनुष्य ने अपने वैयक्तिक स्वार्थ के लिए फैलाया है, जो कवि को कदापि स्वीकार नहीं है। 'कुरूक्षेत्र' में मनुष्य की इस आत्मकेन्द्रित मनोवृत्ति की भर्त्सना करते हुए वे लिखते है –

राजतन्त्र द्योतक है नर की मलिन हीन प्रकृति का,
मानवता की ग्लानि और कुत्सित कलंक संस्कृति का।[17]

कवि की दृष्टि भारतीय चिन्तन एवं दर्शन के अनुकूल है। राष्ट्रीय

भावनाओं से ओतप्रोत कवि का हृदय न केवल समस्याओं को उपस्थित करता है वरन् उनका समाधान भी प्रस्तुत करता है। वे निर्भान्त-राष्ट्रीय कवि थे उन्होंने अपने आप को युगीन छायावादी प्रभाव से मुक्त रखा तथा यथार्थ के धरातल पर काव्य सृजन कर युगीन परिस्थितियों का चित्रण किया। उन्होंने स्वमति को युगगति के साथ कदमताल करते हुये चलाया। यही कारण है कि वे जन कवि हैं और उनका काव्य जन काव्य है। उनके काव्य में विश्वबंधुत्व सहअस्तित्व, सहिष्णुता, समन्वयवादिता एवं मानवकल्याण की ऐसी स्त्रोतस्विनी प्रवाहित हो रही है जिसमें अवगाहन कर संतृप्त जनमानस सुखषान्ति का अनुभव करता है। मानवीय मूल्यों के प्रतिस्थापन की कामना हेतु कवि का मन व्यग्र है वह ऐसे समाज की स्थापना करना चाहता है जहाँ द्वेष, ईर्ष्या, घृणा, शोषण, उत्पीड़न आदि अमानवीयताओं के लिए कोई स्थान न हो, सर्वत्र सुख, शान्ति एवं प्रेम का ही साम्राज्य हो। 'चक्रवाल' में कवि की पुनीत भावनाएँ इन शब्दों में प्रकट हुई हैं -

मैं भी सोचता हूँ जगत से कैसे उठे जिज्ञासा,
किस प्रकार फैले पृथ्वी पर करुणा, प्रेम, अहिंसा,
जियें मनुज किस भांति परस्पर होकर भाई भाई,
कैसे रूके प्रवाह क्रोध का कैसे रूके लड़ाई।
पृथ्वी पर हो साम्राज्य स्नेह का जीवन स्निग्ध सरल हो
मनुज प्रकृति से विदा सदा का दाहक द्वेष गरल हो।[18]

निःसन्देह दिनकर युग सृष्टा ही नहीं वरन् भविष्य द्रष्टा भी हैं वे अपनी प्रखर काव्य रश्मियों से सम्पूर्ण जगत को प्रकाशित कर रहे हैं। उनके ही शब्दों में-

मर्त्य मानव की विजय का तर्य हूँ मैं।
ऊर्वशी! अपने समय का सूर्य हूँ मैं।
अन्ध तम के भाल पर पावक जलाता हूँ।
बादलों के सीस पर स्पन्दन चलाता हूँ।[19]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रामधारी सिंह दिनकर : चक्रवाल,भूमिका, पृ. 14
2. J Holland Rose : Nationality in History Page ,147
3. डॉ. अवध नारायण तिवारी : राष्ट्रीय कवि दिनकर और उनकी साहित्य साधना, पृ. 41
4. रामधारी सिंह दिनकर : चक्रवाल (हिमालय), पृ. 6-8
5. रामधारी सिंह दिनकर : प्राण भंग तथा अन्य कविताएँ (ध्वज वंदना), पृ. 118
6. रामधारी सिंह दिनकर : सामधेनी (हे मेरे स्वदेश), पृ. 29
7. रामधारी सिंह दिनकर : रश्मिरथी प्रथम सर्ग, पृ. 07
8. रामधारी सिंह दिनकर : रश्मिरथी द्वितीय सर्ग, पृ. 17
9. रामधारी सिंह दिनकर : रश्मिरथी प्रथम सर्ग, पृ. 04
10. रामधारी सिंह दिनकर : चक्रवाल (हाहाकार), पृ. 49-50
11. पूर्वानुसार, पृ. 40
12. रामधारी सिंह दिनकर : रेणुका (कस्मै देवाय), पृ. 31
13. रामधारी सिंह दिनकर : परशुराम की प्रतीक्षा, पृ. 8
14. रामधारी सिंह दिनकर : इतिहास के आँसू (मगध महिमा), पृ. 13
15. रामधारी सिंह दिनकर : बापू, पृ. 9
16. रामधारी सिंह दिनकर : कुरूक्षेत्र, पृ. 17
17. रामधारी सिंह दिनकर : कुरूक्षेत्र सप्तम सर्ग, पृ. 187
18. रामधारी सिंह दिनकर : चक्रवाल (अहिंसा और शान्ति), पृ. 194
19. रामधारी सिंह दिनकर : उर्वषी तृतीयांक, पृ. 41

****

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस पर केन्द्रित बाल उपन्यासों का कथ्यशिल्प परक अध्ययन

डॉ. अलका दर्शन श्रीवास्तव * आशा कनेल **

प्रस्तावना – बाल उपन्यास के लेखन का प्रारंभ बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में माना जाता है। यह हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं के उन्नयन का प्रारंभ काल था। इस अवधि में अन्य प्रकार के उपन्यासों की भाँति बाल उपन्यास भी लिखे जाने लगे थे। बालकों के लिए लिखे जाने वाले साहित्य को हालांकि अधिक प्रोत्साहन नहीं दिया जा रहा था, फिर भी बाल रुचियों को बढ़ावा देने की प्रतिज्ञा कर लिखने वाले बाल साहित्यकारों की भी कमी नहीं थी। बड़ों के लिए बड़े आकार के उपन्यास लिखे गए, तो बालकों के लिए छोटे कलेवर वाले उपन्यास लिखे गये।

'भारतीय स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व हिन्दी बाल उपन्यासों के लेखन की गति मन्द रही। लोगों की इस ओर रुचि कम रही, परन्तु नव चेतना जागरण के साथ ही बाल उपन्यासों को भी एक पृथक विधा के रूप में पहचान प्राप्त हो गई।'[1]

बाल उपन्यास लेखकों ने बाल स्वभाव बाल रुचियों के अनुरूप विभिन्न उपन्यासों का लेखन किया। बाल उपन्यास लेखकों ने नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के जीवन के विभिन्न घटनाओं को बाल उपन्यास के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कई बाल उपन्यास देशप्रेम, राष्ट्रीय भावना पर लिखे गये।स्वतन्त्रता संग्राम के वीर नायक शहीद भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव, चन्द्रशेखर आजाद और नेताजी सुभाषचन्द्र बोस आदि के जीवन को उपन्यासकारों ने अपने उपन्यास का मुख्य विषय बनाया।

बाल उपन्यासकारों जिनमें श्री शिवकुमार गोयल, उत्तमचन्द्र मल्होत्रा, आनंद विद्यालंकार और डॉ. सुभाष रस्तोगी आदि ने नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के जीवन को केन्द्रित कर अपने उपन्यास की रचना की।

इन उपन्यासों में नेताजी के जीवन में घटित होने वाली घटनाओं को उनकी राष्ट्रीय चेतना, समाज सेवा और देश–प्रेम की भावना आदि से बच्चों को प्रेरित करने के लिए बाल उपन्यासों की रचना की।

एक रात भीषण जाडे में माँ ने बालक सुभाष को रजाई ओढ़ा दी और सो गई। उनकी आँखें खुली तो देखा कि सुभाष फर्श पर नंग–धडंग़ आँखें बन्द किये पालकी लगाए बैठा है। माताजी ने कहा– 'अरे शिब्बू, भीषण जाडे में तू यह क्या कर रहा है ?'

शिब्बू ने कहा –'माँ, तुमने ही तो बताया था कि शिवजी पहाड़ों पर बर्फ में बैठकर तप करते थे। क्या हमें अपने देवी–देवताओं की तरह तप नहीं करना चाहिए?'प्रभावती ने बेटे की भोली बातें सुनकर गद्गद हो कर उसका मुँह चूम लिया।'[2] इस बाल उपन्यास में लेखक ने बालक सुभाष के बचपन का वर्णन किया हैं।

सुभाष बाबू के बचपन के इस चित्र को प्रस्तुत करते हुए श्री गोयल ने बाल मन का बहुत सुन्दर ढंग से उकेरा है। बालक सुनी हुई घटनाओं को अपने स्तर पर अनुकरण करने का प्रयास करता है, बालक की इसी मनोवृत्ति का चित्रण लेखक ने अपने बाल उपन्यास में किया है। इस उपन्यास से सुभाष की धार्मिक भावना का पता चलता है। इस बाल उपन्यास में शिवकुमार गोयल ने नेताजी के सम्पूर्ण जीवन की घटनाओं को सरल भाषा में प्रस्तुत किया है। लेखक ने बच्चों की मन: स्थिति के अनुरूप प्रवाहमयी वाक्यों का प्रयोग किया है। घटनाओं की तारतम्यता के कारण बालकों कि रुचि बनी रहती है।

'मैं चाहता हूँ कि आप लोगों में से कुछ लोग महान बनें–परन्तु महान आप अपने लिए नहीं बल्कि भारत माता को महान बनाने के लिए महान बनें।' [3] इस उपन्यास में नेताजी की धार्मिक प्रवृत्ति पर प्रकाश डाला गया है। अरविन्द घोष के इस उपदेश से आप लोग महान बनें और महान अपने लिए नहीं वरन् भारत–माता को महान बनाने के लिए बनें।' यही उपदेश के जीवन का मुख्य उद्देश्य बन गया।

प्रस्तुत बाल उपन्यास में लेखक ने नेताजी के व्यक्तित्व के सभी महत्वपूर्ण पक्षों को उद्घाटित किया है। लेखक ने इस उपन्यास के माध्यम से समाज को एक नयी दिशा देने का प्रयास किया है। सामान्य हिन्दी का प्रयोग करते हुये लेखक ने नेताजी सुभाष के जीवन की प्रेरक घटनाओं को इस उपन्यास के माध्यम से बालकों तक पहुँचाने का प्रयास किया है, जिससे बच्चों में देश प्रेम की भावना जाग्रत हो सके।

इस उपन्यास में लेखक ने सुभाष के जीवन को सरल और सादा जीवन बताया है। सुभाष समय बर्बादी और फिजूल खर्च के सख्त विरोधी थे। वे जब इंग्लैण्ड में भारतीय छात्रों को समय बर्बाद करते तथा फिजूलखर्ची करते देखते तो बहुत दुखी होते थे। सुभाष चाहते तो वे भी अंग्रेज स्त्रियों के साथ भोग–विलासपूर्ण जीवन का आनंद ले सकते थे, लेकिन उन्होंने इन चीजों को अपने पास भटकने तक नहीं दिया।उन्हें सिर्फ अपने देश की आजादी का जुनून था।

नेताजी सुभाष नारी जाति का बहुत सम्मान करते थे। इन पंक्तियों में लेखक ने भारतीय वीर नारियों की वीरता का उदाहरण प्रस्तुत कर बच्चों को प्रभावित करने का प्रयास किया लेखक अपनी बातों को पाठकों के समक्ष उदाहरण के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

'जैसा चाहे समझो। मैंने अपना मत स्पष्टत: ही प्रकट कर दिया है। शिवाजी,शिवाजी,हमारा शिवाजी! शिवाजी ही हमारा महान आदर्श होना चाहिये-हमारा लक्ष्य, हमारा पथ-प्रदर्शक और अग्रणी नेता होना चाहिये। आप साहित्यिकों का कर्तव्य है कि शिवाजी के जीवन और आदर्शों का प्रतिपादन करो और उनका प्रचार करो।'[4]

इस बाल उपन्यास में नेताजी का अपने मित्र से शिवाजी के विषय में चर्चा का वर्णन किया गया है। जिस प्रकार शिवाजी ने विपरीत परिस्थितियों में मराठा सेना को संगठित कर औरंगजेब को नाको चने चबवाये।उसी प्रकार सुभाष भी मुर्दा भारत वासियों में जान फूँककर ब्रिटिश शासन का अन्त कर देगे। इससे सुभाष का मातृभूमि के प्रति अथाह प्रेम प्रदर्शित होता है।

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने शुद्ध हिन्दी भाषा का प्रयोग किया है। एक मित्र द्वारा प्रश्न किये जाने पर नेताजी द्वारा दिये गये जवाब का वर्णन किया गया है। नेताजी ने शिवाजी को आदर्श मानने पर बल दिया है। अपने साहित्यकार मित्र को दिये सन्देश से उन्होंने सम्पूर्ण साहित्य जगत को भी यह प्रेरणा दे दी है कि साहित्य वो रचा जाये जो नयी पीढ़ी में राष्ट्र भक्ति पैदा कर सके।

'इसीलिये उसी रात उन्होंने दो पत्र लिखे-एक अपने बड़े भाई को तथा दूसरा अपने एक अंतरंग मित्र को। इन पत्रों में उन्होंने कलकत्ता से काबुल तक की अपनी यात्रा का सम्पूर्ण विवरण अंकित किया। बड़े भाई को लिखे पत्र में उन्होंने अपनी पूज्यमाता से अपने इस प्रकार से पलायन के लिये क्षमा मांगी और लिखा-सम्भव है जीवन में अब पुन: आपकी पदधूलि सिर पर लेने का अवसर न प्राप्त हो।'[5]

सुभाष में न केवल देश-प्रेम की भावना जागृत थी, अपितु अपनी माता, भाई तथा मित्रों के प्रति भी हृदय में अगाध श्रद्धा और स्नेह था। काबुल छोड़ने से पहले की रात उन्होंने पहले पत्र में अपनी यात्रा का वर्णन मित्र को तथा दूसरा पत्र अपने भाई को लिखा।

इन पंक्तियों में लेखक ने सुभाष को सच्चा देश भक्त बताया है। सुभाष को अपनी जन्म भूमि की स्वतन्त्रता अपने प्राणों से भी प्रिय थी। लेखक ने भावनात्मक वाक्यों का प्रयोग कर सुभाष द्वारा लिखे पत्रों के भावों को बच्चों तक पहुँचाने का प्रयास किया है। ताकि बच्चों में देश के प्रति अटूट श्रद्धा एवं प्रेम की भावना जाग्रत हो सके। 'चार बजने में कोई दस मिनट थे कि रहमत खाँ आ गया। उसको अकेला देखकर मैंने पूछा- 'कहाँ है बोस बाबू?'वह सामने दरिया के दूसरे किनारे खडे है।'उसने जवाब दिया और साथ ही उस तरफ हाथ का इशारा किया, जहां बोस बाबू खड़े थे, लेकिन मैं उन्हें देख न सका।

मेरी दुकान के पास ही काबुल दरिया बहता था। मैंने उसके हाथ के इशारे की तरफ बड़े गौर से नजर दौड़ाई, मगर दरिया की दूसरी तरफ बोस बाबू की शक्ल का कोई आदमी नजर नहीं आया। मैंने दुबारा पूछा - 'कहां हैं ?'उसने दूर एक पठान की तरफ इशारा करते हुए कहा- 'वह खड़े हैं।' मगर उसके जवाब से मेरी तसल्ली नहीं हुई।

मेरी खामोशी से रहमत खाँ पर यह जाहिर हो गया कि मैं उनको पहचानने में नाकामयाब रहा हूँ। वह कहने लगा-'बोस बाबू की पोशाक और शक्ल बदली हुई है। आप यहाँ से नहीं पहचान सकते। अभी साथ चलते हैं, मैं आपको मिलवा दूंगा।'[6]

इस बाल उपन्यास में लेखक ने सुभाष के बदले हुए वेश का वर्णन किया हैं। नेताजी वेश बदलकर देश छोड़कर अफगानिस्तान पहुँच गये। वहाँ उन्हें छिपने के लिए जगह नहीं मिल रही है। इस उपन्यास में लेखक ने सुभाष के मौलवी रूप का वर्णन किया है। सुभाष ने अपना वेश इस प्रकार बना लिया था कि उन्हें उनके परिचित ही नहीं पहचान पा रहे थे। लेखक स्वयं भी नहीं पहचान पाया। सुभाष ने अपना नाम जियाउद्दीन रख लिया था।

प्रस्तुत बाल उपन्यास में लेखक ने नेताजी के जीवन की उन घटनाओं का वर्णन किया है, जो उनकी आँखों के समक्ष घटित हुई। उपन्यास की भाषा सरल हिन्दी होने के कारण बच्चों को उपन्यास का भाव अच्छी तरह समझ में आ जाता है।

इस बाल उपन्यास से बच्चों में देश भक्ति की भावना जाग्रत होगी। प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक एवं नेताजी की पहली मुलाकात का वर्णन हुआ है।

नेताजी इस बात को अच्छी तरह से जानते थे कि अंग्रेज देश को आसानी से स्वतन्त्र नहीं करेंगे। इसलिए सुभाष अन्य देशों की मदद चाहते थे। सुभाष दूरदर्शिता के साथ कुशल कार्यनीति एवं रणनीति में माहिर थे। वे किसी भी कीमत पर देश को स्वतंत्र कराना चाहते थे।

'बेटा सुभाष, इस समय कैसे आए?'जाजपुर में हैजा फैला हुआ है ना।'

'हाँ, यह तो कई दिनों की बात है! बल्कि आज भी अखबार में वहाँ की चिन्ताजनक हालत पर खबर छपी है।'

'मैं जाजपुर जाना चाहता हूँ।'आश्चर्य चकित हो बाबू वेणी माधव ने कहा, 'तुम वहाँ जाकर क्या करोगे?'

'मरीजों की सेवा।''तुम अभी इस योग्य नहीं हो कि हैजा जैसी संक्रामक बीमारी में जाकर सेवा-कार्य कर सको।'

'मैं अपने-आपको इस योग्य पाता हूँ कि सेवा कर सकूँगा, इसी लिए जाजपुर जाने का निश्चय किया है।'

'मैं तुम्हें जाजपुर जाने की इजाजत नहीं दे सकता।'

'और मैं घर पर सुख चैन से भी नहीं रह सकता मेरा निश्चय अटल है।'[7]

प्रस्तुत पंक्तियाँ नेताजी सुभाष और बाबू बेनीमाधव के बीच हुई वार्तालाप की है। इन पंक्तियों में नेताजी जाजपुर में जाकर हैजा रोगियों की सेवा करना चाहते थे परन्तु बेनीमाधव उन्हें इस खतरनाक बीमारी से दूर रहने की हिदायत देते हैं। लेकिन सुभाष के दृढ़ संकल्पी होने के कारण बेनी माधव को सुभाष की बात मानना ही पड़ती है और सुभाष जाजपुर जाने का फैसला कर लेते है।

'भारत से अंग्रेजों को हटाने के लिए मैं अपनी जान तक देने को तैयार हूँ।'

'लेकिन तुम्हारी मौत से भारत की आजादी नहीं मिलेगी। तुम्हारा प्रयास पत्थर से सिर टकराने की तरह होगा।'

'मैं अपने सिर को फौलाद बनाऊँगा ताकि पत्थर को चूर-चूर कर सकूँ।'

'बेटा!'

'खामोश होकर बैठ जाने से क्या यह संभव हो सकेगा?'

'नहीं, तुम्हें समय का इन्तजार करना होगा। अभी तुम्हारे पढ़ने का समय है। तुम बहक कर अपना अनिष्ट मत करो।'

'बाबूजी समय किसी का इन्तजार नहीं करता। मरने वाले जाजपुर में सैकड़ो मर गए और समय अपनी गति से चलता रहा। मैं अपनी पढ़ाई जारी रखूँगा, किन्तु भारत को विदेशी दासता से मुक्ति कैसे मिले इसके लिए भी रास्ता ढूँढ़ता रहूँगा।'[8]

प्रस्तुत पंक्तियाँ बालक सुभाष एवं अपने प्रधानाध्यापक बाबू बेनीमाधव के बीच हुये वार्तालाप की है।

नेताजी कहते हैं कि भारत से अंग्रेजों को हटाने के लिए में अपनी जान तक दे दूँगा। लेकिन बेनीमाधव उसे बताते हैं कि जान देने से आजादी नहीं मिलेगी।सुभाष अपने आप को फौलाद बनाकर पत्थर रूपी अंग्रेजों को चूर-

चूर कर देना चाहते हैं।

बेनीमाधव सुभाष को देश की आजादी के लिए सही समय का इंतजार करने को कहते हैं। इस पर नेताजी कहते हैं कि समय किसी का इंतजार नहीं करता है।

लेखक के अनुसार सुभाष का जीवन किसी भी देश और समाज के लिए एक जलती हुई मशाल है, जो बेचैनी और तड़पन हम सुभाष के जीवन में आजादी के लिए पाते हैं, वह सचमुच आदर्श है। लेखक ने भाव प्रवण भाषा का प्रयोग कर बच्चों के लिये आकर्षक एवं रोचक बना दिया है। लेखक ने इस बाल उपन्यास के माध्यम से गागर में सागर भरने का प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शुचिता सेठ– समकालीन हिन्दी बाल साहित्य, संस्करण –2011, पृ. 44
2. शिवकुमार गोयल– नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, संस्करण –2004, पृ. 7
3. डॉ. सुभाष रस्तोगी– नेताजी सुभाषचंद्र बोस, संस्करण –2003, पृ. 19
4. आनन्द विद्यालंकार हरिश्चन्द – नेताजी सरहद पार, पृ. 20
5. वही, पृ. 105
6. उत्तमचन्द मलहोत्रा –नेताजी जियाउद्दीन के रूप में, संस्करण–1946, पृ. 15
7. वही – पृ. 78
8. अ.अ. अनन्त– क्रांति का देवता, पृ. 8–9

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. I

समकालीन कविता - विषय और व्याप्ति

निधि जैन *

प्रस्तावना – कविता हिन्दी की सबसे प्राचीन विद्या है और मानव के ह्रदय के समान अमर भी है। कविता में गंभीर से गंभीर विषय को ऐसे कलात्मकता के साथ व्यक्त किया जाता है कि वो काव्य का रूप ले लेता है अत: कवि के माध्यम से विषय और अधिक गंभीर व महत्वपूर्ण होकर जन-जन तक पहुंचता है। कवि युगदृष्टा है। वो अपने युग से प्रभावित हुये बिना नहीं रह सकता, अपने समय में चलने वाली विचारधाराएँ, मान्यताएँ, घटनायें, दर्शन, ज्ञान-विज्ञान, प्राकृति, संस्कृति, राजनीति, समस्यायें, युद्ध, शान्ति समाज की विसंगति, हिंसा, प्रेम, विश्वशान्ति, आदि सभी 'कुछ' को अपनी कविताओं के माध्यम से जन-मानस के बीच में रखते हुए समाज को जागृत करता है।

इसी विषय में डॉ. अमरनाथ सिन्हा लिखते हैं कि – 'काव्य का विषय चाहे वास्तविक जीवन का उल्लास हो, या कल्पनिक जीवन का विषाद, वह प्रत्येक दशा में मानव जाति के क्रियाकलाप से ही समृद्ध रहेगा।'(1)

आगे इरशाद कामिल अपने पुस्तक में लिखते हैं कि 'वास्तव में आठवें दशक में विचार कविता और समकालीन कविता के तार कुछ इस प्रकार उलझे कि इनको अलगाने की प्रक्रिया और प्रयास व्यर्थ का कार्य अनुभव हुआ। उक्त नाम इस कविता को समकालीन कविता से पृथक करने के उद्देश्य से शायद उतना नहीं रखा गया था।जितना यह रेखांकित करने के लिए उछाला गया कि समकालीन कविता विचार प्रधान कविता है'। (2)

समकालीन अर्थात् आज के समय को साथ लेकर चलने वाला एक समय को हम सहज भाषा में समकालीन कह सकते हैं। 'समय' साहित्य का पोषण है। साहित्य में समय का अर्थ समाज की अन्त:स्थिति और सम-सामाजिकता की मन:स्थिति है। अत: एक काल में विभिन्न समय हो सकते हैं। (3)

आज के समय की जीन पद्धति, जीवन संघर्ष, आज के समय के उत्पीड़न, भौतिक, भोगवाद, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक, आज की जीवन शैली, उत्पीड़न के आयाम, नारी संघर्ष, नारी उन्नति, दलित चेतना, अन्तर्राष्ट्रीय क्रियाकलाप, बाजार, मीडिया, आदि-आदि सभी विषयों को लेकर कवियों ने जो कलम चलाई है,उसे हम समकालीन कविता के अन्तर्गत लेते हैं।

अर्थात आज की कविता जो कि सम-सामायिक, समाज ओर सामाजिकता के भीतर बहुत गहरे तक पैठी हुई है। (4)

समकालीन कविता में राजनीतिक आक्रोश की कमी के साथ-साथ कविता के विषयों में संस्कृति का समावेश हुआ है। आज की कविता में संस्कृति से जुड़ने में उसे बचाये रखने की कोशिश मिलती है। मानव जीवन का ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं छूटा है, जिसपर आज कविता नहीं लिखी गई है। समकालीन कवियों ने अगर अपनी कविताओं के माध्यम से प्रेम को उजागर किया है, तो वर्तमान व्यवस्था के खिलाफ नफरत भी व्यक्त किया है। एक तरफ अगर परम्पराओं को बचाने की गुहार है, तो दूसरी तरफ नारी मुक्ति, नारी उन्नति का भी उल्लेख है। इसी तरह समकालीन कविताओं के बारे में यह कहना मुश्किल है कि सभी ने राजनीतिक कविता लिखी है, परन्तु यह कहा जा सकता है कि सभी कवियों में राजनीतिक जागरूकता थी। अत: हम कह सकते है कि समकालीन कविता गुटविहीन राजनीति कविता है।

समकालीन कवि और उनकी कवितायें – कवि समाज जीवित है और कवि को सभी जन-मानस की अपेक्षा अधिक संवेदनशील माना जाता है। इसलिए उसकी कलम समाज के हर छोटे से छोटे कोनों में भी पहुंच जाती है। समकालीन कवियों में प्रमुख है, जगदीश गुप्त, जगदीश चतुर्वेदी, श्याम परमार, सौमित्र मोहन, मोना गुलाटी, परेश, धूमिल, राजीव सक्सेना, लीलाधर जगूड़ी, कुमार विकल, रमेश गौंड़, श्री त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल, डॉ. महेन्द्र भटनागर, डॉ. रामविलास शर्मा आदि-आदि कवियों ने वैयक्तिक महत्वाकांक्षा और कल्पना के स्थान पर भविष्य के शोषणहीन स्वस्थ समाज की कल्पना को अपना विषय बनाया।

समकालीन कवियों का विषय व व्याप्ति – समकालीन कवियों में हर विषय पर कविता लिखी है, अत: समकालीन कविता का विषय बहुत व्यापक है।

डॉ. विशम्भरनाथ उपाध्याय के अनुसार 'समकालीन कविता में जो हो रहा है' – का सीधा खुलासा है। इसे पढ़कर वर्तमान काल का बोध हो सकता है। (5)

श्री त्रिलोचन जी मानव की दयनीय स्थिति का चित्र खींचते हुए लिखते हैं कि –

इन दिनों मनुष्य का महत्व कोई नहीं है
मुल्य गिर गया है अब मनुष्य का।
सिंधु में बिन्दु का जो स्थान है
वह भी स्थान नहीं है, मनुष्य का ।। (6)

इन पंक्तियों में कवि ने पूँजीवादी सभ्यता पर प्रहार किया है।

इसी प्रकार केदारनाथ अग्रवाल ने अपना 'मजदूर' कविता में तथा डॉ. महेन्द्र भटनागर ने अपनी 'मिल मजदूर' नामक कविता में मजदूरों की निर्धनता उनकी लाचारी व कठोर परिश्रम का वर्णन किया है आज के समय का मजदूर का जीवन कंकड़ पत्थर से भी बदतर है।

पर मैंने कल पथ पर देखी
यह दलित मानवों की टोली
थी जिनकी आह कराहों में मेरी
परवशता की बोली
उनकी भी हाहाकारों पर देता था कोई
ध्यान नहीं
अपने सूखे जर्जर तन में लगते थे
मेरे हम जोजी ।(7)

किसान वर्ग का चित्रण करते हुए कवि कहते हैं कि आज के समय में

* शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

जिस भूमि के लिए किसान अपने प्राण दे देता है, वह भूमि भी उसकी अपनी नहीं हो पाती जैसे कि -

तेरे पुरखों के स्वेद-कणों से जिसका
कण-कण युग-युग से सिंचित होता आया
वह भूमि अपरिचित निष्क्रिय की 'अपनी' है
तू मर-मिट कर भी उसके लिए 'पराया' है।[8]

इसी प्रकार डॉ. रामविलास शर्मा असंतोष के बीज बोकर क्रान्ति लाना चाहते हैं।

'बोना महातिक्त वह बीज असंतोष का
काटनी है नये साल फागुन में फसल जो क्रान्ति की।[9]

श्री त्रिलोचन साम्राज्यवाद, सामंतवाद और व्यक्तिवाद को समाप्त करने के लिए सम-सामायिकता पर अपनी व्याप्ति देते हुए कहते हैं कि -

तुम बढ़ो जिस तरह दीप्त ज्वाला, कर दग्ध रूढ़ि का अंतराल
साम्राज्यवाद, सामंतवाद, और व्यक्तिवाद, जो बांध रहे गति जीवन की
कर उन्हें न तुम सामाजिक स्वातंत्र्य साम्य को करा स्पष्ट
होवे स्वतंत्र नारी-नर, हो सामंजस्य अमरतर।[10]

इसी प्रकार कवि मिलिंद सन् 1942 ई. की क्रांति को आज की भावना के साथ जोड़कर राष्ट्र प्रेम को कई प्रतीकों के माध्यम से उजागर करते हुए कहते है कि -

जब तक अंतिम भारतवासी जीवित बचे आत्मबलि-रण में
और रक्त का अंतिम कण हो बाकी उसके आहत तन में,
तब तक उसके सुदृढ करोकृ में झंडा रहे राष्ट्र का प्यारा,
है स्वतंत्र सब भारतवासी, भारतवर्ष स्वतंत्र हमारा।[11]

आगे बालश्रम, बाल उत्पीड़न पर कवि राजेश जोशी कोहरे, सड़क को प्रतीक बनाकर अपनी व्याप्ति देते हुए लिखते हैं कि-

'कोहरे से ढकी सड़क पर
सुबह-सुबह
बच्चे काम पर जा रहे हैं।
हमारे समय की सबसे
भयानक पंक्ति है यह
भयानक है इसे विवरण की तरह
लिखा जाना
लिखा जाना चाहिये इसे एक सवाल की तरह
काम पर क्यों आ रहे हैं बच्चे?
भयानक है लेकिन इससे भी
ज्यादा यह
कि सारी चीजें है हस्बमामूल ...[12]

मानव जीवन के विभिन्न प्रतीकों को स्पर्श करते हुए समकालीन कवियों ने अपनी कविता में हर विषय पर व्यापक प्रकाश डाला है। इसमें कोई शक नहीं कि कवि को अकेलेपन का संत्रास भी झेलना पड़ा है। जैसे कि फिराक गोरखपुरी लिखते हैं कि -

'न साथी है न मंजिल का पता है
जिन्दगी बस रास्ता ही रास्ता है।[13]

समकालीन कविता में हम देखते हैं कि बोलचाल की भाषा में भी जीवन के कटू यर्थात को रखा गया है। जैसे कि ममता मालपाणी जी पुरूष वर्ग के प्रति आक्रोश व नारी की पीड़ा को समेटती हुए कहती है -

'जिस तरह
पनी का कोई आयाम नहीं होता
उसी तरह आदमी का
कोई ईमान नहीं होता'[14]

आज की ढुलमुल नीतियों के कारण योजनायें इतनी लम्बी खिंच जाती है कि वे महत्वहीन ही हो जाती है और बेचारी जनता वैसी की वैसी रह जाती है ऐसी स्थिति को स्पष्ट करते हुए समकालीन कवियों ने अपने ही नये प्रतीक गढ़े है जैसे कि ये पंक्तियों से स्पष्ट है -

संसद के कंघी आकार के होने की प्रक्रिया में
सरकार के सिर पर बाल नहीं है।
यह समसामायिक व्यवस्था के खिलाफ प्रतिक्रिया है।[15]

अत: हम निष्कर्षतय: यह देखते हैं कि समकालीन कविता में आज कवियों के लिए प्रेम जिन्दगी की हकीकतों से जुझते हुये उसकी शिद्दत को बनाये रखने जैसा कठिन कार्य है। समकालीन हिन्दी कविता 'समय और समाज' के लेखक इरशाद कामिल जी नारी पर लिखते है कि समकालीन कवि द्वारा चित्रित लड़की महत्वाकांक्षी संघर्षरत् और मजबूरियों से घिरी हुई है। प्रेम के संबंध में आज लगभग प्रत्येक कवि का अपना अलग नजरिया है।

आज का कवि दैनिक जीवन के अनुभवों, समस्याओं, पोषक, शोषक, दृश्य, अदृश्य, पतन, उत्थान, गावं, शहर, देश-विदेश, सभी प्रकार के आत्मिक अनुभवों को बिम्बों-प्रतीको के माध्यम से जान-जन के करीब लाने का प्रयास करता है।

अत: समकालीन कविता सामान्य दैनिक अनुभवों के प्रति विशेष दृष्टिकोण रखते हुए लिखी कवितायें है।[16] जिसमें मानव जीवन के हर विषय की व्यापक-व्याप्ति हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सौन्दर्य काव्य शास्त्रीय आयाम, डॉ. अमरनाथ सिन्हा, पृ.नं.179
2. समकालीन हिन्दी कविता (समय और समाज), इरशाद कामिल, पृ.नं.69
3. समकालीन हिन्दी कविता- इरशाद कामिल, पृ.नं. 255
4. समकालीन कविता - इरशाद कामिल, पृ.नं. 173
5. इरशाद कामिल- समकालीन कविता, पृ.नं. 69
6. आधुनिक हिन्दी कविता की दार्शनिक पृष्ठभूमि लेखक- डॉ. प्रेमचंद्र अग्रवाल, पृ.नं.185
7. आधुनिक हिन्दी कविता की दार्शनिक पृष्ठभूमि, पृ.नं. 187
8. नवयुग के गान श्री जगन्नाथ प्रसाद मिलिंग, पृ.नं. 7
9. रूप-तरंग-डॉ. रामविलास शर्मा, पृ.नं. 16
10. कविता की दार्शनिक पृष्ठभूमि लेखक डॉ. पद्मचंद्र अग्रवाल, पृ.नं.190
11. बलिपथ के गीत जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद, पृ.नं. 90
12. शोध आलेख, एवं वार्ता-संकलन (1982 से 2012) तक डॉ. सुषमा दुबे पृ.नं. 82,83
13. नई कविता की जीवन्तता-डॉ. सुषमा दुबे, पृ.नं. 105 से उद्धत।
14. शोध आलेख एवं वार्ता- संकलन- डॉ. सुषमा दुबे (दो कविता संकलन : दर्द के दो दस्तावेज, हर रात -ममता मालपाणी पृ.नं. 119
15. समकालीन हिन्दी कविता - कामिल, पृ.नं. 87
16. इरशाद कामिल जी - समकालीन हिन्दी कविता, पृ.नं. 255

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. I

रेणु की कहानियों में किरदारों का नायकत्व

डॉ. रत्नेश विष्वक्सेन *

शोध सारांश – हिन्दी कथा साहित्य में प्रेमचंद के बाद रेणु उन महत्वपूर्ण कथाकारों में से है, जिन्होंने ग्रामीण जीवन का चित्रण उसकी संपूर्ण भंगिमा को व्यक्त करते हुए किया है। आँचलिकता की विशिष्टता शिल्प और संवेदना दोनों ही दृष्टियों से उनकी कथा-चेतना को नवीन परंतु परिचित आयाम देती है। प्रेमचंद के पात्रों में जितनी दीनता है, उसके विपरीत रेणु के पात्रों में एक अदम्य उल्लास है, जो अभाव के चरम क्षणों में भी अपनी मुस्कुराहट नहीं छोड़ता। रेणु की कहानियाँ पढ़ते हुए आपको कुछ याद रहे या न रहे उनके चरित्र जरूर याद रह जाते हैं। गोधन, करमा, हिरामन, बिरजू की माँ वास्तव में नायकत्व की किसी भी संभ्रांत अवधारणा को तोड़कर आम आदमी के नायकत्व को स्थापित करते हैं। ग्रामीण संस्कृति की पूरी संरचना को जितनी बेबाकी से रेणु अपनी कहानियों में व्यक्त करते हैं, वह अन्यत्र दुर्लभ है।

शब्द कुंजी – ग्रामीण जीवन, आँचलिकता, विशिष्टता, नायकत्व, आम आदमी।

प्रस्तावना – फणीश्वर नाथ रेणु हिन्दी कथा साहित्य में अपनी जिस विशेष पहचान के कारण जाने गये वह उनकी आँचलिकता थी, जिसमें अँचल की समस्त विशिष्टताएँ यथा, भाषा, बोली, गीत-संगीत, पर्व-त्योहार, सभी उभरकर आयें। 1954 में आया उपन्यास मैला आँचल हिंदी कथा साहित्य में बदले हुए शिल्प का विशेष उदाहरण बना। प्रेमचंद की प्रातिनिधिकता को तोड़ते हुए अँचल की विशिष्टता का यह शिल्प हिंदी जगत को बहुत भाया।

'फणीश्वर नाथ रेणु की कहानियाँ हमें एक ऐसे हिंदोस्तान की अंतर्यात्रा पर ले जाती है, जो अभाव, अज्ञानता, अँधविश्वास, मजबूरी और बेबसी से घिरा है, लेकिन इस सबके बावजूद, बल्कि साथ-साथ जिसमें भरपूर रस-रंग और फड़क के साथ जीने-की ललक है। यह ललक ही रेणु की रचना-भागीदारी का उद्‌गम-स्थल-गोमुख है।'[1] रेणु अपनी कहानियों में ग्रामीण जीवन की जो प्रस्तुति करते हैं, वह उसकी अच्छाईयों बुराईयों के साथ जो आम आदमी का उत्सवधर्मी उपस्थिति है, वह नायाब है। उनके चरित्रों में थकान नहीं, उनके पात्रों में हताशा नहीं बल्कि उन्हें फूंक कर जीवन को अपने तरीके से बना लेने में है।

'रेणु की अदम्य मानवीय संवेदना उसे अपने लोगों के इतने करीब, बल्कि उनके इतने भीतर ले जाती है कि द्वैत कतई नहीं रहता और तब उनकी पीड़ा, उनकी हताशा, उनकी आशा और उनके सपने रेणु की निज की मनमाटी में घुल जाते हैं और जब वह इस माटी से मूरतें गढ़ता है, तो उन उदास मूरतों को धूसरित चेहरों पर असह्य पीड़ा, अपने समय की कड़वाहट, विषमताओं का विद्रूप और साथ ही कल की आशा की नन्हीं-सी मुस्कान भी होती है। रेणु के थके-हारे पात्र भी 'फेनुगिलासी' बोली बोलते हैं।'[2] यह बात रेणु की कहानियों के संदर्भ में सटीक है। हम उनकी कुछ महत्वपूर्ण कहानियों और उनके पात्रों के माध्यम से इस बात को आगे बढ़ा सकते हैं कि 'रेणु के थके-हारे पात्र भी फेनुगिलासी' बोली बोलते हैं। उनकी एक कहानी है 'पंचलैट'। पेट्रोमेक्स को गाँव वाले पंचलेट या पंचलाइट बोलते हैं। महतो टोली के पंचों ने पेट्रोमेक्स रामनवमी के मेले में खरीदा है। गाँव में आठ पंचायतें हैं। हरेक जाति की अलग-अलग 'सभाचट्टी' है। गाँव में उत्सव का माहौल है। सब एक जगह जुटे हैं। बच्चे-बड़े-बूढ़े सभी पेट्रोमेक्स के आसपास दरी बिछाकर बैठे हैं। अगनु महतो इस पंचायत के प्रतिनिधि हैं। सब कुछ ठीक है लेकिन जैसे ही जलाने की बारी आती है, सबको सांप सूंघ जाता है क्योंकि किसी को जलाने नहीं आता। दूसरे से मदद लेने पर खिल्ली उड़ेगी इस डर से किसी अलग पंचायत से मदद लेना भी शान के खिलाफ है। इधर मुनरी को देखकर सिनेमा का गीत गाने वाला गोधन गुलरी काकी की शिकायत के बाद पंचायत के फैसले के कारण कैद है। कहानी आगे बढ़ती है। मुनरी को यह पता है कि गोधन को पेट्रोमेक्स जलाने आता है, पर भरी सभा में वह बोले तो कैसे? वह संकेत से अपनी सहेली कनेली को यह बताती है। कनेली भरी पंचायत में जब यह बताती है कि गोधन जानता है पंचलैट बालना तब पंचों के बीच कानाफूसी होती है कि उसका हुक्का-पानी बंद कर दिया है हमने। पर जाति की इज्जत का सवाल है। निर्णय होता है कि गोधन को बुलाया जाय। गुलरी काकी उसे मना कर लाती है। गोधन आता है पर कहता है कि ऐसी ही दंड जुर्माना भुगत रहा हूँ ,कुछ बिगड़ गया तो लेने के देने पड़ जाएँगे। खैर किसी तरह से वह तैयार होता है। वह इसपिरिट माँगता है, तो एक बार फिर सन्नाटा छा जाता है। पर गोधन कहता है कि गरी के तेल से भी यह काम हो जाएगा। मुनरी दौड़कर गरी का तेल लाती है। 'पंचलैट की रेशमी थैली में धीरे-धीरे रोशनी आने लगी। गोधन कभी मुँह से फूँकता कभी पंचलैट की चाबी घुमाता। थोड़ी देर बाद पंचलैट से सनसनाहट की आवाज़ निकलने लगी और रोशनी बढ़ती गई; लोगों के दिल का मैल दूर हो गया। गोधन बड़ा काबिल लड़का है।'[3]

गोधन यहाँ नायक हो गया। लोगों की नजर में उसका सम्मान बढ़ गया। अपने एक हुनर से उसने दुश्मन को भी अपना मुरीद बना लिया। गुलरी काकी ने उसे अपने यहाँ रात के खाने पर बुलाया। मुनरी उसकी दिवानी हो गयी। 'सरदार ने गोधन को बहुत प्यार से पास बुलाकर कहा-तुमने जाति की इज्जत रखी है। तुम्हारा सात खून माफ़। खूब गाओ सलीमा का गाना।'[4]

इस कहानी में हम देख सकते हैं कि रेणु ने किस तरह ग्रामीण जीवन में नायकत्व का आख्यान रचा है। गोधन सचमुच एक हीरो है और समाज का प्रत्येक सदस्य उसको अपनी प्रतिष्ठा से जोड़कर देख रहा है। दूसरी कहानी 'लाल पान की बेगम' पर दृष्टि डालें तो ग्रामीण जीवन की सरलता और सदाशयता का अनूठापन नजर आएगा। बिरजू की माँ को मेला देखने जाना

* सहायक प्राध्यापक (हिंदी) राँची कॉलेज, राँची (झारखण्ड) भारत

है। उसका पति अपने बैलों को लेकर टप्पर वाली गाड़ी के इंतजाम में गया है। मखनी फुआ टोकती है तो बिरजू की माँ को गुस्सा आता है। शाम हो गयी है अभी तक उसका पति गाड़ी लेकर नहीं आया। वह शंका से भर उठती है। इधर मीठी रोटी बनने के लिए शकरकंद उबल गया है और चंपिया सहुआइन के यहाँ से गुड़ लेकर नहीं लौटी है। गुस्सा आक्रोश बनकर छा जाता है। जंगी की पतोहू और गाँव की और औरतें बिरजू की माँ को लाल पान की बेगम कह कर निंदारस का लाभ उठा रही है। चंपिया लौटती है तो माँ से मार खाती है और बिरजू शकरकंद खाने की जिद में पहले ही पीट गया है। रात होने को आयी पर बिरजू का पिता अभी तक नहीं आया है। चंपिया बताती है कि गाँव में गाड़ी का इंतजाम नहीं हो पाया तो बप्पा दूसरे गाँव गया है। गुस्से से बिरजू की माँ घर में अंधेरा कर चंपिया और बिरजू दोनों को लेकर अपने कमरे में सोने चली जाती है। सभी हताशा और निराश से भरे हैं, मेला देखने की आस लगभग टूट गई है। अचानक बैलों की घंटियाँ सुनाई पड़ती है। चंपिया चुपके से देखती है तो खुशी से चहकने लगती है क्योंकि साथ में टप्पर वाली गाड़ी भी है। बिरजू का पिता देखता है कि घर में अँधेरा है, तो आश्चर्य में पड़ता है। वह बताता है कि अभी मेला शुरू होने में वक्त है जल्द सब तैयार हो जाए। घर का माहौल धीरे-धीरे खुशनुमा होने लगता है।

इधर मीठी रोटी पकाने के लिए बिरजू की माँ मखनी फुआ को बुलाती है। वह मँगटीका पहनकर तैयार होती है। बाहर निकलते ही बिरजू को जंगी की पुतोहू, राधे की बेटी सुनरी और लरेना खवास की माँ की बहू का ख्याल आता है क्योंकि वह भी मेला नहीं गई है। तीनों जो बिरजू की माँ को लाल पान की बेगम और भक् भक् बिजली बत्ती कहकर चिढ़ाती है वह साथ बैठकर मेला जाती है। 'जंगी की पुतोहू, लरेना की बीबी और राधे की बेटी सुनरी तीनों गाड़ी के पास आईं। बैल ने पिछला पैर फेंका। बिरजू के बाप ने एक भद्दी गाली दी-'साला! लताड़ मारकर लँगड़ी बनाएगा पुतोहू को।' सभी ठठाकर हँस पड़े। बिरजू के बाप ने घूंघट में झुकी दोनों पुतोहुओं को देखा। उसे अपने खेत की झुकी हुई बालियों की याद आ गई।'[5] सभी गाते बजाते मेले जाते हैं। जिस सलीमा के गीत गाने से बिरजू की माँ चंपिया से चिढ़ती है वह खुद ही उसे गाने के लिए कहती है। 'बिरजू की माँ ने अपनी नाक पर दोनों आँखों को केन्द्रित करने की चेष्टा करके अपने रूप की झाँकी ली, लाल साड़ी की झिलमिल किनारी, मँगटिक्का पर चाँद.............बिरजू की माँ के मन में अब और कोई लालसा नहीं। उसे नींद आ रही है।'[6]

इस कहानी में रेणु ने सुथरे ढंग से जीवन के पक्ष को उद्घाटित किया है। हर चरित्र स्वयं में विशिष्ट है और जीवन की लालसाओं के साथ, अपनी स्वाभाविक उपस्थिति के साथ जीवंत है।

कहानी 'आदिम रात्रि एक महक' का करमा हो या फिर तीसरी कसम का गाड़ीवान हिरामन इनकी सरलता और स्वाभाविकता बरबस पाठकीयता को मोह लेती है। करमा न जाने कितने स्टेशन मास्टर के साथ रह चुका है। घोष बाबू से लेकर गोपाल बाबू तक। वह सबकी विशेषता से परिचित है। लावारिस वह ट्रेन के डब्बे में मिलता है। तब से वह अपनी जिंदगी स्टेशन पर गुजारता है। एक दिन गोपाल बाबू के साथ उनके साथ जाते-जाते स्टेशन पर चलती ट्रेन से उतर जाता है। वह वयस्क हो गया है। उसे युवा मन की गंध लुभा लेती है। आदिम महक उसे बेचैन करने लगती है। उसके पास कुछ भी तो नहीं है, पर फिर भी अलमस्ती के झोंके में वह जिंदगी की सरस व्याख्या करते जाता है।

हिरामन गाड़ीवान है। वह दो कसम खाता है पहला कि चोर बजारी का समान नहीं लादेगा और दूसरा बाँस की लदनी नहीं करेगा। तीसरी कसम खाने के पहले हीराबाई के साथ पूरी कहानी है। मेले तक पहुँचने के पूर्व हीरामन की जिंदगी न जाने कितनी हलचलों का पा लेती है। मेले में कई घटनाएँ घटती है। दोनों के बीच अकथनीय प्रेम विकसित होता है। मेला खत्म और हीराबाई लौट जाती है। वह तीसरी कसम खाता है। 'हिरामन के होंठ हिल रहे हैं। शायद वह तीसरी कसम खा रहा है - कंपनी की औरत की लदनी..................।'[7] हिरामन एक ऐसा किरदार है जो निरंतर अपनी बेबसी में भी अनंत संभावना को बचा लेता है। जीवन के उल्लास को अभावों के बीच भी चुरा कर अपने जीने के लिए रख लेता है।

निष्कर्ष - हम फणीश्वरनाथ रेणु की कहानियों में गोधन, गुलरी काकी, मुनरी, लाल पान की बेगम, मखनी फुआ, चंपिया, जंगी की पुतोहू, बिरजू, करमा, गोपाल बाबू, घोष बाबू, हिरामन, हीराबाई, लालमोहर, पलट दास जैसे किरदारों के बहाने एक स्वस्थ नायकत्व से परिचित होते हैं। हिंदी कथा साहित्य एवं विशेषकर कहानियों के किरदारों की स्वाभाविक संरचना में रेणु बेमिसाल है। रेणु के थके हारे पात्र भी 'फेनुगिलासी बोली बोलते हैं' का मोहन गुप्त द्वारा दिया गया वक्तव्य इतना सटीक है कि उसके बाद कुछ भी शेष नहीं रह जाता।

इस तरह रेणु की कहानियों के किरदार अभावों के बीच भी जीवन के खुशनुमा प्रसंगों का साक्ष्य बन जाते हैं। रेणु के किरदार वे नायक है जिन्हें सबसे ज्यादा स्वयं पर भरोसा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रतिनिधि कहानियाँ - रेणु-राजकमल-2015 दसवीं आवृत्ति-भूमिका।
2. वही, भूमिका
3. वही-पृ0-43
4. वही-पृ0-44
5. वही-पृ0-60
6. वही-पृ0-61
7. वही-पृ0-145

****

हिन्दी कथा साहित्य में नारी चेतना

डॉ. ओ. एस. परिहार *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्रानुसार समय की माँग है कि व्यक्ति और समाज के सामने उपस्थित विभिन्न समस्याओं के समाधान की बात सोचते समय यह भुला न दिया जाए कि नारी चेतना आज की महत्ती आवश्यकता है। नारी सशक्तिकरण को लेकर जो जागरूकता दिखाई दे रही है, उसका प्रभाव हिन्दी साहित्य पर भी हुआ है। परिणामस्वरूप महिला साहित्यकारों में अपने साहित्य के माध्यम से भी नारी को 'अबला' नारी से 'सबला नारी' के रूप में अभिव्यक्त किया है। नारी को पुरूष की तुलना में अक्षम और अयोग्य समझने की धारणा आज हर क्षेत्र में गलत सिद्ध हो रही है, अर्थात् यह साहित्य का ही प्रभाव है कि, जिसने नारी को समाज में सम्मान एवं इज्जत से जीने का मार्ग प्रशस्त्र कराया।

प्रस्तावना – 'उठो नारी, नए युग का तुम्हें निर्माण करना है,
नए युग के भवन की स्नेह रस से नींव भरना है।
नए निर्माण से पहले, पुराना क्रम बदलना है,
हुआ जीवन जहाँ बरबाद, उस पथ से निकलना है,
पुरानी रूढ़ियों को छोड़ने, बिलकुल न डरना है,
उठो नारी, नए युग का तुम्हें निर्माण करना है।
कंगूरे और दीवारें बहुत से लोग, गढ़ लेंगे,
शिलाओं पर लिखे आलेख, पढ़ लेंगे,
भवन की नींव में तुमको, बनी रसधार झरना है,
उठो नारी, नए युग का तुम्हें निर्माण करना है।

भारत सरकार ने देश में महिलाओं की स्थिति सुधारने का लक्ष्य हासिल करने के लिए वर्ष 2001 में महिला सशक्तिकरण हेतु राष्ट्रीय नीति जारी की। भारतीय संविधान की प्रस्तावना, मूल अधिकार, मूल कर्तव्य और राज्य के नीति–निर्देशक तत्वों में लिंग समानता का सिद्धांत अंतर्निहित है। संविधान में न केवल महिलाओं को बराबरी का दर्जा दिया गया है, बल्कि इसमें राज्यों को इस बात के भी अधिकार दिये गये हैं कि वे महिला हितों के लिए आवश्यक कदम भी उठा सकते है। भारत में महिलाओं के बराबरी के अधिकार को सुरक्षित करने के प्रति वचनबद्ध अनेक अंतर्राष्ट्रीय संधियों व मानवाधिकार समझौतों का अनुमोदन भी किया है। इनमें 1993 की महिलाओं के प्रति सभी तरह के भेदभाव को समाप्त करने की संधि, 1985 की नैरोंबी प्रगतिशील रणनीति संधि, 1995 की बीजिंग घोषणा व प्लेटफार्म फॉर एक्शन संधि, 1975 की मैक्सिको कार्य योजना और संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा स्वीकृत 21 वीं शताब्दी के लिए लिंग समानता और विकास व शांति पर घोषणा पत्र शामिल है। पिछले तीन दशकों में सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक समानता को बढ़ाने वाले कदमों या उपायों के जरिए महिलाओं के सशक्तिकरण की आवश्यकता और मूलभूत मानवाधिकारों तक महिलाओं की पहुँच, पोषण व स्वास्थ और शिक्षा में सुधार के बारे में जागरूकता बढ़ी है। वर्तमान में भले ही नारी का कार्यक्षेत्र घर ग्रहस्थी तक ही सीमित कर दिया गया हो परन्तु प्राचीनकाल में वैसा नहीं था। प्राचीन काल में नारियों ने पुरूष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर सहयोग किया और ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में विकास के साथ–साथ समाज, राजनीति, धर्म, कानून, संगठन आदि उन्नति में पुरूष की सच्ची सहचरी बनकर रही। उसे प्रेरणा देती रही, जिससे कि उसकी, क्षमता, प्रतिभा और योग्यता से मिलकर अनंत गुना प्रभावशाली हो जाती है। रामायण में से सीता के चरित्र को निकाल दिया जाए तो रामायण में बाकी कुछ नहीं रहता। द्रोपदी, कुंती, गांधारी आदि नारी का चरित्र निकाल देने पर महाभारत की महत्ता ही क्या रह जायेगी ? वैसे तो नारी को अबला कहा जाता है, पर आसुरी उत्पातों के कारण देवतागण जब घबरा उठे तो असुरों का संहार करने में मातृशक्ति दूर्गा ही समर्थ हुई थी। नारी को किसी भी श्रेष्ठ दिशा में आगे बढ़ने से रोकना अपनी व्यक्तिगत हानि तो है ही, पर समय और आज की माँग को देखते हुए सोचा जाए तो सामाजिक अपराध भी कहना पड़ेगा। वर्तमान में नारी पर अब भी परम्परागत ढंग से लगे हुए प्रतिबंद्ध जिम्मेदार है। नारी किसी भी राष्ट्र, समाज व परिवार की धुरी होती है परन्तु **'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते तत्र देवता:'** जैसे वचन का पालन करने वाले भारत देश में परम्परावादी राष्ट्र में आज भी महिलाओं की स्थिति में कोई क्रांतिकारी परिवर्तन नही हुआ है। पूर्वाग्रहों और विषमताओं के फलस्वरूप नारी को 21वीं शताब्दी में विभिन्न समस्याओं से होकर गुजरना पड़ता है। भारत के कुछ हिस्सों में आज भी महिलाओं को वस्तु की तरह बेचा जाता है, उनके शरीर का सौदा किया जाता है। इस तरह की समस्याओं के तेजी से बढ़ने का कारण यह है कि आज का सभ्य शिक्षित समाज यह सब होते हुए चुप रहता है, परन्तु आज की नारी हर क्षेत्र में प्रगति कर रही है। शिक्षा, प्रशासन, विज्ञान, राजनीति, अंतरिक्ष, खेल, हर क्षेत्र मे प्रमुख है और विश्व में सर्वोच्च पद प्रतिष्ठा पा रही है अर्थात पिछले पन्ने की औरतें समाज के अगले पन्ने पर जगह पा गई है।

साहित्य मानव और समाज को सुंदर एवं श्रेष्ठ बनाने की साधना है। वह मानव समाज को एक नई दिशा और दशा प्रदान करता है। साहित्यकार के अंतर गमन से उभरे शब्द व्यक्ति और समाज दोनों को आंदोलित और उद्वेलित कर देते हैं। मैक्सिन गोर्की ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास 'माँ' में अपनी अभिव्यक्ति में कहा कि 'मुझे ऐसा साहित्य दो, जिसे एक बार पढ़ लेने पर व्यक्ति का चैन, शुकून और नींद हराम हो जाए उसके मस्तिष्क के सूक्ष्म तार झन झना उठे। साहित्य में ऐसा दहकता हुआ सत्य हो जो तंद्रा और तमस को जला ड़ाले, जिससे लोग अपना **सर्वस्व** को तैयार–तत्पर हो उठें।' हिन्दी कथा साहित्य की बात करते हैं तो 'मृदुला गर्ग' के कठगुलाब' में स्मिता और अभिना की

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, मण्डलेश्वर, जिला – खरगोन (म.प्र.) भारत

बातचीत नारी के बदलते तेवर को व्यक्त करती है- 'मुझे यह पुरातन औरत नुमा छल प्रपंच पसंद नहीं। दो टुक बात कहने का साहस हो तो मुझसे दोस्ती करना वरना अपना रास्ता माप।' मृदुला गर्ग यहाँ स्पष्ट करना चाहती है कि स्त्री का षरीर उसकी अपनी मिल्कियत है। उसकी देह पर उसका अधिकार है। वह चाहेगी तभी पुरूष उसका उपभोग कर सकता है।

अगर सावित्रीबाई फुले को प्रथम महिला शिक्षिका, प्रथम शिक्षाविद् और महिलाओं की मुक्तिदाता कहें तो कोई भी अतिशयोक्ति नहीं होगी, वो कवयित्री, अध्यापिका समाजसेविका थी। सावित्रीबाई फुले बाधाओं के बावजुद स्त्रियों को शिक्षा दिलाने के अपने संघर्ष में बिना धैर्य खोए, आत्मविश्वास के साथ डटी रहीं। सावित्रीबाई फुले ने अपने पति ज्योतिबा के साथ मिलकर उन्नीसवीं सदी में स्त्रियों के अधिकारों के लिए संघर्ष किया। ज्योतिबा उनके मार्गदर्शन, संरक्षक, गुरू, प्रेरणा स्त्रोत तो थे और किसी की परवाह ना करते हुए आगे बढ़ने की प्रेरणा देते रहे। सावित्रीबाई फुले ने केवल शिक्षा के क्षेत्र में ही नहीं बल्कि स्त्री की दशा सुधारने के लिए भी महत्वपूर्ण काम किया। सावित्रीबाई फुले और ज्योतिबा ने 1873 में सत्यशोधक समाज की स्थापना की। 1893 में सास्वाड़ में आयोजित सत्यशोधक सम्मेलन की अध्यक्षता सावित्रीबाई फुले ने ही की थी वहां उन्होंने ऐसा भाषण दिया कि दलितों, महिलाओं और पिछड़े-दबे लोगों में आत्म-सम्मान की भावना का संचार हुआ। सावित्रीबाई प्रतिभाषाली कवियित्री भी थीं। उन्हें आधुनिक मराठी काव्य की अग्रदूत भी माना जाता है। वे अपनी कविताओं और लेखों में सामाजिक चेतना की हमेशा बात करती थी।

अन्य देशों की नारियाँ साहित्य, कला, समाज सेवा, व्यापार और बौद्धिक कार्यों में बड़ी तीव्रता से आगे बढ़ रही है। पर भारतीय नारी के संबंध में ऐसा नहीं कहा जा सकता। संविधान ने उसे समानता के अधिकार दे रखे है, उसे आगे बढ़ने में कोई कानूनी बाधा भी नहीं है। अमेरिका तथा इंग्लैंड आदि पाश्चात्य देशों में जिन संवैधानिक सुविधाओं और अधिकारों को देने के लिए अब विचार किया जा रहा है, वे अधिकार भारतीय नारी को आरंभ से ही प्राप्त हैं। फिर भी भारतीय नारी की प्रगति यात्रा उन देशों की तुलना में रूकी हुई है। महात्मा गांधी ने पुरूष की इस प्रवृत्ति की और संकेत करते हुए लिखा है-'औरतों का अधिकांश समय पुरूषों की सेवा में महज उनके मनोरंजन और वासनापूर्ति में व्यतीत हो जाता है। मेरी समझ में यह एक दासता है। पुरूष की बर्बरता की क्रूर निशानी है। आज वक्त आ गया है कि इस बर्बरता के अज्ञान रूपी अंधकार से छूटकर वे ज्ञान और प्रकाश की ओर आएँ।' नासिरा शर्मा की 'शाल्मनी' एक स्थान पर कहती है 'मैं पुरूष विरोधी न होकर अत्याचार विरोधी हूँ। मेरी नजर में नारी मुक्ति और स्वतंत्रता समाज की सोच, स्त्री की स्थिति को बदलने में है।' यह संघर्षशील नारी, बदल गई स्थितियों में पुराने मूल्यों की पड़ताल करती है। स्वतंत्रता के बाद जब नारी अस्मिता के स्वर तेजी से उभरे तो नारी जीवन को नया आयाम मिला। इस दौर की लेखिकाओं में निरूपमा सेवती, मंजुला भगत, सूर्यबाला, मृणाल पांडे आदि उल्लेखनीय हैं जिनकी रचनाओं में पारंपरिक ढाँचा टूटता नजर आया। आत्माभिव्यक्ति के साथ नारी जीवन की विभिन्न स्थितियों का वर्णन उनके लेखन में मिलता है।

भारतीय संदर्भ में तो स्थिति यह है कि यहाँ स्त्रियाँ पुरूषों पर ही निर्भर रहती हैं। पुरूष को अपने निर्वाह के लिए व्यस्त तो रहना पड़ता ही है, स्त्रियों का बोझ भी ढोना पड़ता हैं प्रख्यात विचारक बर्ट्रेंड रसेल का यह कथन भारत के संबंध में सत्य है-'स्त्रियाँ मित्रों की तरह पुरूष का हाथ पकड़ती हैं और पुरूष पर बोझ की तरह लद जाती हैं।' प्रभा खेतान का 'छिन्नमस्ता' इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। चित्रा मुद्गल के शब्दों में 'नारी चेतना की मुहिम स्वयं स्त्री के लिए अपने अस्तित्व को मानवीय रूप में अनुभव करने और करवाने का आन्दोलन है कि मैं भी मनुष्य हूँ और अन्य मनुष्यों की तरह समाज में सम्मानपूर्वक रहने की अधिकारी हूँ।' उनका 'आवाँ' उपन्यास स्त्री चेतना को अभिव्यक्ति देता, समय से मुठभेड़ की पड़ताल है। मैत्रेयी पुष्पा की 'फैसला' कहानी स्त्री का वह तेवर और पहचान है, जो पुरूष वर्चस्व के आतंक तले कभी अभिव्यक्ति नहीं पा सका, लेकिन अब उभर रहा है। समय आ गया है कि उसे पदच्युत किया जाए और नारी को वहाँ अवसर दिया जाए। नवयुग में नारी को विलास सामग्री, रमणी, बंदी, दासी, अपंग, असहाय, पराश्रित और पददलित स्थिति में पड़ी कराहती हुई नहीं देख सकते। हमारा स्वप्न है कि नारी अगले दिनों अपना स्वाभाविक स्थान प्राप्त करेगी, इतना ही नहीं, वर्तमान भाव-संकट को दूर करने के लिए नेतृत्व की बागडोर उसके हाथ में सौंपी जाए। नारी को पुरूष जैसा नहीं बन जाना चाहिए कालचक्र अब इसके विपरीत घूमने जा रहा है, जिसमें समाज को मातृसत्ता के नेतृत्व की आवश्यकता पड़ेगी। हमें इसी दिशा में सोचना और स्वयं को गढ़ना चाहिए तभी 21वीं शदी-उज्ज्वल भविष्य का सपना साकार हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. युग निर्माण पत्रिका नवम्बर 2012
2. चन्द्रशेखर डॉ. ममता, 2004, मानव-अधिकार और महिलाएँ, म.प्र.हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल
3. दंबग दुनिया, संपादकीय, 2 जनवरी 2016 पृष्ठ 04

****

बदलता सामाजिक परिवेश और नारी

डॉ. रश्मि प्रीति गुरू *

प्रस्तावना – मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में रहता है। समाज में रहते हुए वह सबसे पहले अपने विकास के लिए प्रयास करता हैं। मनुष्य का स्वतंत्र व्यक्तित्व क्यों न हो लेकिन उसके लिए समाज अनिवार्य हैं। समाज की प्रगति के साथ–साथ मनुष्य की भी वैचारिक प्रवृत्ति होती है। इसलिए कई बार मानव इतिहास को संघर्ष और विजय का इतिहास कहा जाता हैं। विकास की इस परम्परा के कारण समाज हरदम परिवर्तित होता रहता हैं और इस प्रकार मानव और मानवीय समाज का रूप बदलता रहता हैं।

समाज के विकास के पीछे मनुष्य की महत्वाकांक्षा भी काम करती है। यही कारण है कि आदि मानव से लेकर आज जो समाज में विकास हुआ हैं, उसके पीछे मनुष्य का आर्थिक विचार दिखाई देता हैं। नारी और पुरुष समाज में परिवार रूपी रथ के दो पहिये माने जाते हैं। नारी और पुरुष से मिलकर ही मानव समाज की उत्पत्ति होती है।

समाज में नारी हमेशा पुरुष की दासी के रूप में रही हैं। कभी उसे गुलामों की तरह बेचा, खरीदा गया, तो कभी उसे युद्ध में जीतकर दासी की तरह उपयोग किया गया और कभी अपने स्वार्थ के कारण निर्जीव वस्तु की तरह उसे पर–पुरुष को भेंट किया जाता रहा। लेकिन इन परिस्थितियों में भी नारी के अंदर की महत्वाकांक्षा जागी और उसने अपने स्वाभिमान के लिए आवाज उठायी परन्तु उसकी आवाज को हमेशा दबाया गया।

अपने आदिम युग से लेकर हर युग में नारी ने पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर चलने का प्रयत्न किया। समाज में बदलाव की प्रक्रिया में उसने अपने विकास और संघर्ष को समाने रखा हैं। बदलते सामाजिक परिवेश में नारी की चर्चा आजादी के बाद के परिवेश के संदर्भ में की गई हैं।

भारतीय समाज और परिवार से संघर्ष करती नारी हमारे सामने दिखाई गई हैं। 'सांस्कृतिक परिवेश और नारी' के अन्तर्गत सांस्कृतिक गतिविधियों में पहल करती नारी को दिखाया गया हैं। 'पारिवारिक परिवेश और नारी' के अन्तर्गत आदिकाल से ही नारी को हिन्दु समाज का प्रमुख आधार परिवार को ही माना जाता रहा है। आरंभ में हिन्दु समाज संयुक्त परिवार में रहता आया हैं। परिवार का आधार पुरुष और नारी दोनों ही बराबर रहे हैं। जैसे–जैसे समय बदलता गया, वैसे–वैसे संयुक्त परिवार का विघटन होते गया। आधुनिक काल आते–आते संयुक्त परिवार लगभग टूट सा गया। 'डॉ. प्रभा वर्मा ने लिखा है' कि आधुनिक शिक्षा के फलस्वरूप जागृति की एक नई लहर आई। इस परिवर्तन के साथ–साथ ही संयुक्त परिवार विघटन की प्रक्रिया आरंभ हो गई।

बदलते सामाजिक परिवेश के पीछे कुछ विद्धानों ने आधुनिक शिक्षा को भी जिम्मेदार माना हैं परन्तु आधुनिक शिक्षा नारी–पुरुष संबंधों में दरार का कारण नहीं है। बल्कि नारी का अपने अधिकारों के प्रति जागरुक हो जाना हैं। परिवार के विघटन का कारण आर्थिक मुद्दे भी रहे हैं। पारिवारिक झगड़े इस विघटन में सहायक हुए हैं। आधुनिक शिक्षा, नवीन दृष्टिकोण, अन्य देशों से संपर्क आदि ने इस प्रथा को चुनौति दी हैं। अर्थ की बढ़ती महता ने इस पारिवारिक मूल्यों को स्वार्थ में बना दिया हैं। संपत्ति अधिपत्य की भावना ने रक्त संबंधों को भी विषाक्त बना दिया हैं।

आज जो संयुक्त परिवार टूटने की स्थिति में खड़े हैं, वे कभी समाज की आधारभूत एक इकाई के रूप में रहे हैं। सामाजिक संस्था में परिवार का स्थान सर्वोपरि रहा है। सन् साठ का समाज बड़ी तीव्र गति सोच बदला, इस बदलाव में समाज की नारी घर की चार दीवारी को तोड़कर अपनी मुक्ति के लिए उभरकर सामने आई। नारी जागरण के रूप में नारी ने सबसे पहले शिक्षा के रुप में अपना कदम आगे बढ़ाया फिर स्वरोजगार के क्षेत्र में आगे बढ़ी है। साठोत्तरी समाज में जो पारिवारिक बदलाव दिखाई देता हैं। उसका कारण समाज में आधुनिकता का समावेश होना भी है।

बदलता सामाजिक परिवेश और नारी की चेतना में जो बदलाव आया हैं, वह नारी स्वतंत्रता को दर्शाता है। किसी भी समाज के विकास की कसौटी नारी को माना जाता है। 'किसी भी समाज के सुसंस्कृत होने की कसौटी नारी हो सकती है। इस तरह साहित्य में नारी समाज की उन्नति का प्रतीक बन जाती है।' पाश्चात्य देशों से संपर्क एवं शिक्षा के प्रसार ने नारी स्वतंत्रता की भावना को प्रोत्साहित किया है।

'पारिवारिक परिवेश और नारी शिक्षा' नारी शिक्षा का उद्देश्य नारी को जागरूक और आत्मनिर्भर बनाने के लिए किया गया। शिक्षित नारी ने अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता दिखाई और इस कारण वह परिवार की परम्परागत मान्यताओं को तोड़कर स्वतंत्र रूप से परिवार के परिवेश बदलने में सहायक हुई हैं।

आरंभिक काल में नारी केवल भोग की वस्तु मानी जाती थी परन्तु आधुनिक शिक्षा ने और सामाजिक परिवर्तनों ने नारी की दशा में परिवर्तन उपस्थित कर दिये आज की नारी परिवार के साथ राष्ट्र कार्यो में संलग्न हैं। स्त्री की आर्थिक स्वतंत्रता उसका स्वावलम्बन बन गई है। आर्थिक स्वतत्रंता ने नारी को स्वाभिमान की भावना से परिचित कराया है। समाज में नारी ने सामाजिक गतिविधियों में भोग लेकर सामाजिक परिवेश को बदला सामाजिक स्वतंत्रता के कारण आज नारी परंपरा के सामने एक विद्रोही के रूप में खड़ी है। आधुनिक युग में नारी शिक्षा ने नारी को समाज में ऊपर आने की प्रेरणा दी है।

बदलता सामाजिक परिवेश और नारी के अंतर्गत समाज का स्वरूप बड़ी तेजी से चल रहा है, इस बदलाव का दुष्परिणाम सामने आया वह समाज का टूटना था। समाज की कई विचारधाराओं, मान्यताओं, रीतिरिवाजों को युवा पीढ़ी ने विखण्डित कर दिया है। सामाजिक परिवेश में जो परिवर्तन आ रहे हैं, वह विघटन की कगार पर हैं। अन्य विघटनों की अपेक्षा व्यक्ति विघटन सबसे महत्वपूर्ण दिखाई देता है। व्यक्ति विघटन के साथ सारे विघटन जुड़े

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) ए. एस. सी. एस. ए. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, निवाडी , जिला – टिकमगढ़ (म.प्र.) भारत

होते हैं। बाल अपराध, हत्या, आत्महत्या, पागलपन, कलह, तनाव, बेकारी, निर्धनता, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता आदि को बढ़ावा मिलता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राजनीति के क्षेत्र में तीव्रता के साथ परिवर्तन आया हैं। 'इंदिरा गांधी राजनीति के सर्वोच्च शिखर पर बैठी जो देश की नारियों के लिए एक आदर्श बनकर आयी। आज हमारे देश के प्रत्येक राजनीतिक क्षेत्र एवं प्रशासनिक क्षेत्रों में नारियों ने अपना अधिकार जमाया है और राष्ट्र के विकास में सहयोग कर रही हैं।

मैत्रीय पुष्पा ने अपने उपन्यासों में नारी का राजनैतिक प्रवेश विस्तृत रूप से चित्रित किया हैं। उपन्यास 'चाक' की सारंग नैनी और 'इदन्नम' की मंदा अपने पति, परिवार और समाज से संघर्ष करते-करते राज्यसभा के सदस्य का चुनाव लड़ने तक पहुँचती हैं और सफलता भी मिलती हैं।

आजादी के बाद हमारे देश की नारी राजनीति में अपनी उपस्थिति तो दर्ज कराती ही हैं और अन्य क्षेत्रों में भी अपने महत्वपूर्ण योगदान द्धारा स्मरण की जाती हैं। आज हमारे देश की नारी पुरुषों के बराबर चलने में सक्षम हैं।

नारी शिक्षा के कारण युगों से त्रस्त भारतीय नारी पुरुष की दासता से मुक्त हुई हैं। आधुनिक शिक्षा के प्रचार प्रसार ने नारी के अंदर स्वाभिमान की भावना को जन्म दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. रेखा कुलकर्णी : 'हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी' चन्द्रलोक प्रकाशन, किदवाई नगर, कानपुर, पृ. 130, वही पृ. 131।
2. डॉ. मंजू शर्मा : साठोत्तरी महिला कथाकार, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 19, पृ. 20, पृ. 21
3. उर्मिला गुप्ता : 'हिन्दी तथा साहित्य के विकास में महिलाओं का योग राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 19 एवं पृ. 20, पृ. 21
4. डॉ. प्रभा वर्मा : हिन्दी उपन्यास सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप, क्लासिकल पब्लिकेशन, करमपुरा, नई दिल्ली, पृ. 233, पृ. 234, पृ. 237

****

प्रेमचंद के कथा साहित्य में ग्रामीण जीवन

डॉ. शबनम खान *

प्रस्तावना – प्रेमचंद्र का जन्म बनारस के निकट लमही गाँव में हुआ था। उनका बचपन गाँव में ही व्यतीत हुआ था। सरकारी नौकरी करते समय सब डिप्टी इन्सपेक्टर ऑफ स्कूल्स हो जाने पर प्रेमचन्द को गाँव-गाँव का दौरा कराना पड़ता था। इतनी व्यवस्तता के बावजूत उन्होंने अपनी जन्मभूमि लमही से आजीवन सम्बन्ध बनाए रखा। अपना ग्रीष्मावकाश वे प्राय:अपने गाँव में ही व्यतीत करते थे। इस प्रकार ग्रामीण जीवन से प्रेमचंद का घनिष्ठ एवं निकट का सम्बंध था। नगरीय जीवन का बाह्य आडम्बर एवं छल-कपट प्रेमचंद के सरल मन पर कभी अपना प्रभाव नहीं जमा पाया।

प्रेमचंद के हृदय में भारत के दीन-हीन किसानों को प्रति सच्ची सहानुभूति थी। भारतीय किसानों के कष्टों, विवषता एवं आर्थिक दुर्दशा से वे परिचित थे। इसलिए उन्होंने अपने उपन्यासों और कहानियों में नगरीय जीवन की समस्याओं के साथ-साथ ग्रामीण जीवन की समस्याओं को भी अभिव्यक्ति प्रदान की है। उनके 'प्रेमाश्रम' और 'गोदान' उपन्यासों को तो कृषक जीवन का महाकाव्य ही कहा जाता है। इन दोनों उपन्यासों में कृषक जीवन अपनी समस्त विशेषताओं के साथ उभर कर आया है। 'कर्मभूमि' उपन्यास में नगर के साथ-साथ गाँवों में भी आंदोलन होता है। 'वरदान', 'सेवा सदन' और 'कायाकल्प' उपन्यासों में भी प्रेमचंद ने प्रासंगिक रुप से ग्रामीणों की समस्या पर विचार किया है। ग्रामीण जीवन की समस्याओं को ध्यान में रखकर ही प्रेमचंद ने अनेक कहानियों की भी रचना की। प्रेमचंद ने ग्रामीण जीवन का सूक्ष्मता से निरीक्षण किया था। गहन चिन्तन और मनन के बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि किसान की आर्थिक दशा में सुधार किये बिना उसकी कोई भी समस्या नहीं सुलझ सकती। इसलिए उन्होंने अपने उपन्यासों और कहानियों में भारतीय-कृषक की आर्थिक दशा का विशद चित्र अंकित करते हुए उन कारणों पर भी प्रकाश डाला है, जिन्होंने किसान को इस दुर्दशा में पहुँचा दिया है।

'वरदान' उपन्यास की विरजन मझगाँव में जाकर रहती है। वहाँ रहते हुए उसे भारतीय ग्रामों की वास्तविक दशा और कृषकों की दरिद्रता का परिचय प्राप्त होता है। इस संबंध में वह कमलाचरण को अपने पत्र में लिखती है-'क्या सुनती थी और क्या देखती हूँ ? टूटे-फूटे फूस के झोपड़े, मिट्टी की दीवारें, घरों के सामने कूड़े-करकट के बड़े-बड़े ढेर, कीचड़ से लिपटी भैंसें, दुर्बल गायें ये सब दृश्य देखकर जी चाहता है कि कहीं चली जाऊँ। मनुष्यों को देखो तो उनकी शोचनीय दशा है। हड्डियां निकली हुई है। वे विपत्ति की मूर्ति और दरिद्रता का जीवित चित्र है। किसी के शरीर पर एक बेफटा वस्त्र नहीं है और कैसे भाग्यहीन कि रात-दिन पसीना बहाने पर भी कभी भरपेट रोटियाँ नहीं मिलती।'[1]'कर्मभूमि' में हरिद्वार के निकट चमारों की बस्ती के किसान लगान चुकाने से इंकार कर देते है। सलीम इस इलाके का सरकारी अफसर है। लाला समरकान्त की प्रेरणा से वह प्रत्येक गाँव का दौरा करके किसानों की आर्थिक दशा की जाँच करता है और तब उसे अनुभव होता है कि 'उनकी दशा उससे कहीं हीन है, जितनी वह समझे बैठा था। पैदावार का मूल्य लागत और लगान से कहीं कम था। खाने-कपड़े की भी गुंजाइश न थी, दूसरे खर्चो का क्या जिक्र। ऐसा कोई बिरला ही किसान था, जिसका सिर ऋण के नीचे न दबा हो।'[2]

'प्रेमाश्रम' तो कृषक-जीवन का ही महाकाव्य है। इसमें प्रेमचंद ने कृषकों की आर्थिक दशा पर, विस्तार से प्रकाश डाला है। लखनपुर गाँव के सभी किसानदीन-हीन दशा में जीवन व्यतीत कर रहे है। सुक्खू चौधरी गाँव में सबसे अधिक सम्पन्न समझा जाता है। उसको छोड़कर गाँव में किसी के घर दोनों समय चूल्हा नहीं जलता।'[3] डपटसिंह के पुत्र की मृत्यु होने पर उसके घर में कफन तक के लिए पैसे नहीं निकलते।'[4] मायाशंकर सदिच्छा से प्रेरित होकर अपने इलाके का दौरा करता है। दौरा करने के बाद उसे कृषकों की यथार्थ दशा का परिचय प्राप्त होता है, उसने देखा कि 'चारों तरफ तबाही छाई हुई थी। ऐसा विरला ही कोई घर था, जिसमें धातु के बर्तन दिखाई देते हो। कितने ही घरों में लोहे के तवे तक न थे। मिट्टी के बर्तनों को छोड़कर झोपड़े में और कुछ दिखाई न देता था। न ओढ़ना, न बिछौना, यहाँ तक की बहुत से घरों में खटिया तक न थी और वह घर ही क्या थे। एक-एक, दो-दो छोटी कोठरियाँ थी। एक मनुष्य के लिए और एक पशुओं के लिए। उसी एक कोठरी में खाना, सोना, बैठना-सब कुछ होता था .... जो किसान बहुत सम्पन्न समझे जाते थे, उनके बदन पर साबित कपड़े तक न थे। उन्हें भी एक जून चबेना पर ही काटना पड़ता था। वह भीषण के बोझ से दबे हुए थे .... कितने ही ऐसे गाँव थे, जहाँ दूध तक मयस्सर न होता था।[5]

'गोदान' के होरी के जीवन पर दृष्टिपात करने से कृषक जीवन के अभाव, विवषता और दयनीय आर्थिक दशा का यथार्थ परिचय प्राप्त होता है। होरी दिन भर कड़ी मेहनत करता है, लेकिन घी-दूध उसे अंजन लगाने को भी नहीं मिलता था। इस आर्थिक अभाव के कारण ही छत्तीस वर्ष की अवस्था में ही उसकी पत्नी धनिया के सारे बाल पक गए हैं, चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ गयी हैं, आँखों से भी कम सूझने लगा है। धनिया के तीन पुत्र बचपन में ही मर गए थे। उसे इस बात का दु:ख जीवन भर बना रहता है कि वह उनके लिए एक धेले की भी दवा नहीं मंगवा पाई थी।[6] माघ के दिनों में जब शरीर में चुभने वाली शीतल वायु चलती है और पानी भी पड़ता है, तब होरी खेतों की रखवाली के लिए मडैया बनाकर वहीं रात्रि व्यतीत करता है। ठण्ड के निवारण के लिए उसके पास यथेष्ट वस्त्र भी नहीं है। जाड़ा चारों ओर से आक्रमण करता है और होरी विवश होकर 'बैवाय फटे पैरों को पेट में डाल कर और हाथों को जाँघों के बीच में दबाकर और कम्बल में मुँह छिपाकर अपनी ही गर्म साँसों से अपने को गर्म करने की चेष्टा कर रहा था। पाँच साल हुए यह मिर्जई बनवाई थी। धनिया ने एक प्रकार से जबरदस्ती बनवा दी थी, वहीं जब एक बार काबुली से कपड़े लिए थे, जिसके पीछे कितनी साँसत हुई कितनी गालियाँ खानी पड़ी और कम्बल तो उसके जन्म से भी पहले का है। बचपन में अपने बाप के साथ वह

* प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

इसी में सोता था, जवानी में गोबर को लेकर इसी कम्बल में उसके जाड़े काटे थे और बुढ़ापे में आज वहीं बूढ़ा कम्बल उसका साथी है, पर अब वह भोजन को चबाने वाला दाँत नहीं, दुखने वाला दाँत है। जीवन में ऐसा तो कोई दिन नहीं आया कि लगान और महाजन को देकर कभी कुछ बचा हो।'[7]

प्रेमचंद की 'पूस की रात' कहानी भी भारतीय कृषक की आर्थिक दशा का सजीव चित्र है। इस कहानी का हल्कू मर-मर कर खेतों में काम करता है, लेकिन फिर भी वह अपनी आय से पूरा लगान भी नहीं चुका पाता। 'पेट भरने के लिए उसे मजदूरी करनी पड़ती है। मजदूरी में से पैसा-पैसा काटकर वह कम्बल के लिए तीन रुपये जमा करता है। ये तीन रुपए भी उसे बाकी चुकाने के लिए जमींदार के कारिन्दा को देने पड़ते हैं। पूस की अंधेरी रात में शीत उसे इतना निस्पन्द बना देता है कि खेत के चरे जाने की आहट पाकर भी वह निश्चेष्ट बैठा रहता है।'[8]अन्तत खेती के नष्ट हो जाने पर उसे यह सोचकर प्रसन्नता ही होती है कि रात की ठंड में खेत में नहीं सोना पड़ेगा।

निष्कर्ष –निष्कर्ष रुप में कह सकते है कि कृषकों की इस दुर्दशा के लिए वे परिस्थितियाँ उत्तरदायी हैं, जिनमें वह जीवन यापन करता है। 'प्रेमाश्रम' का प्रेमशंकर कृषकों का सच्चा हितैषी है। वह कृषकों की दशा में सुधार करना चाहता है, इसलिए उनकी आर्थिक दुर्दशा पर वह निरन्तर विचार किया करता हैं। गहन चिन्तन और मनन के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि 'उनकी दरिद्रता का उत्तरदायित्व उन पर नहीं, बल्कि उन परिस्थितियों पर है, जिनके अधीन उनका जीवन व्यतीत होता है और वह परिस्थितियाँ क्या है ? आपस की फूट, स्वार्थपरता और एक ऐसी संस्था का विकास, जो उनके पाँव की बेड़ी बनी हुई है। लेकिन जरा और विचार करें तो यह तीनों टहनियाँ एक ही शाखा से फूटी हुई प्रतीत होगी और यह वहीं संस्था है, जिसका अस्तित्व कृषकों के रक्त पर अवलम्बित है।'[9] यह संस्था है-जमींदारी प्रथा, जिसके लिए मूल रुप से युगीन शासन व्यवस्था उत्तरदायी है। इस प्रकार प्रेमचंद ने ग्रामीण जीवन का यथार्थ चित्र बड़ी सफलतापूर्वक प्रस्तुत करते हुए संकेत कर दिया है कि कृषकों की दशा में सुधार करना आवश्यक है। उनके अनुसार किसानों की दुर्दशा का मूल कारण जमींदारी प्रथा है, इसलिए प्रेमचंद इस प्रथा का उन्मूलन करना आवश्यक समझते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रेमचंद, वरदान, पृ.68
2. प्रेमचंद, कर्मभूमि, पृ.359
3. प्रेमचंद, प्रेमाश्रम, पृ.51
4. प्रेमचंद, प्रेमाश्रम, पृ.168
5. प्रेमचंद, प्रेमाश्रम, पृ.433
6. प्रेमचंद, गोदान, पृ.09
7. प्रेमचंद, गोदान, पृ.122
8. प्रेमचंद, पूस की रात, पृ.163 मानसरोवर भाग-1
9. प्रेमचंद, प्रेमाश्रम, पृ.218

****

हिन्दू धर्म और रहीम

डॉ. सारिका मिश्रा पाण्डेय *

प्रस्तावना –सम्राट अकबर जो कि धार्मिक सहिष्णुता तथा उदारता के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने धार्मिक कट्टरता को समाप्त किया। उनकी इस नीति के कारण हिन्दू और मुसलमानो में आपसी प्यार बढ़ा। परिणाम स्वरूप पारस्परिक सहयोग एंव सद्भाव का वातावरण तैयार हुआ और पीढ़ी को धार्मिक कटुता से मुक्त एक खुले वातावरण में जीने का अवसर मिला। रहीम ऐसे ही वातावरण की उपज थे। वे जन्म से मुसलमान तो थे ही और जीवन भर इसी धर्म का पालन करते रहे। रहीम ने स्वयं के इस्लाम धर्म के उत्थान के लिए बहुत प्रयत्न किए। लेकिन अकबर के संरक्षण में पलेबढ़े होने के कारण उनमें धार्मिक कट्टरता की भावना नहीं आई। रहीम पारस्परिक सद्भाव और सहयोग के समर्थक थे। भले ही उन्होंने मुसलमानों के उत्थान के भरसक प्रयास किए लेकिन उन्हें हिन्दू-धर्म संस्कृति के प्रति बहुत लगाव था। उनकी हिन्दू धर्म के प्रति गहरी आस्था का ही परिणाम था कि उन्होंने हिन्दू धर्म ग्रंथों का अध्ययन भी किया। जब हम रहीम के श्लोकों को पढ़ते हैं, तो हमें ऐसा प्रतीत होता है, कि कवि स्वयं भगवान राम और कृष्ण की मूर्ति के चरण-कमल में हाथ जोड़कर अपने उद्धार हेतु प्रार्थी हैं।

मोहन जीवन प्यारे, कस हित कीन।
दरसन ही कों तरफत, से दृग मीन।
भजि मन राम सियापति, रघुकुल ईस।
दीन बन्धु दुख टारन, कौसल धीस।
प्रकट खम्भ ते राख्यो जिन प्रहलाद।

इसकी तरह ही न जाने कितने बरवै है, जिनके द्वारा उनका सगुण विश्वास और हिन्दुत्व प्रेम स्पष्ट रूप से उद्‌धाटित होता है।

नाथजी के मंदिर के दर्शनों से सम्बद्ध भक्तमाल में उद्धृत दो पदों से ऐसा प्रतीत होता है, कि कवि मानों सुषुप्ति अवस्था में बैठा हुआ मुरली मनोहर पीताम्बरधारी कमलनयन मनमोहन कृष्ण की मधुमय छवि का छक-छक कर रसपान कर रहा हो। भगवान के रूप वर्णन की आसक्ति, उनके विशाल नयनों का आकर्षण, रहीम की आत्मा को झकझोर रहें हैं, यह आकुलता पूर्ण पदावली देखते ही बनती है –

छवि आवन मोहन लाल की।
काछे काछनि कलित मुरली कर, पीत पिछौरी साल की।
वकं तिलक केसर के कीने, दुति मानो विधु भाल की।
विसरत नाहिं सखी मो मन तें चितवनि नयन बिसाल की।।
या सरूप निरखै सोई जाने इस रहीम के हाल की।

इन पदों को पढ़कर भक्त शिरोमणि सूरदास का स्मरण हो आना स्वाभाविक है। वैसी ही आसक्ति, वैसी ही ललक, वही निष्ठा और वही विनम्रता पूर्ण आकुलता साथ ही भाषा का सौकुमार्य, सारल्य एवं प्रवाह। नीति, भक्ति, निष्ठा तथा काव्य-गरिमा आदि से एक साथ आपूरित, वैष्णवी परंपरा की एक झलक इस प्रकार है –

बडेन सों जान पहचान कै रहीम कहाँ
जो पै करतार ही न सुख देनहार है।
सीतहर सूरज सों नेह कियो याही हेत,
ताहू पै कमल जारि डारत तुषार है।
क्षीर निधि माँहि धस्यौ, शंकर के सीस वस्यो,
तऊ न कलंक नस्यो, ससि में सदा रहै।
बड़ी रिझबार है, चकोर दरबार है,
कलानिधि सो यार तऊ चाखत अँगार है।

रहीम के काव्य में महाभारत, रामायण तथा पुराणों इत्यादि से सम्बद्ध अनेक संदर्भ विद्यमान है। तीनों का एक-एक उदाहरण प्रस्तुत है।

'राम न जाते हिरण संग, सीय न रावण साथ।
जे रहीम भावी कतहुं होति, आपुने हाथ।
रहीम दुरदिन के परे, बड़ेन किए घटि काज।
पाँच रूप पाँडव भए, रथवाहक नलराज।'
'माँगे घटत रहीम पद कितो करो बढ़ि काम।
तीन पैर बसुधा करी, तऊ बावनै नाम।'

इस प्रकार रहीम के काव्य में रहीम की हिन्दू परंपराओं, रीति-रिवाजों और धर्म ग्रंथों के प्रति गहरी आस्था व्यक्त होती है। रहीम ने अपनी आस्था और ज्ञान का प्रयोग बहुत अच्छी तरह से किया। उनकी तरह अन्य मुसलमान कवि इस कार्य में उतने सफल नहीं हो पाये। रहीम के काव्य का आद्योपान्त अध्ययन कर लेने पर उनके काव्य में ऐसा कोई स्थान नहीं दिखता जहाँ हिन्दुत्व के प्रति किसी प्रकार की अनास्था या अशुद्धि प्रकट हो। शास्त्रीय अन्तर्कथाओं, घटनाओं एवं तथ्यों को वे कुछ इस प्रकार प्रकट करते है जिससे उनका हिन्दुत्व-प्रेम तो प्रकट होता ही है, साथ में संस्कृत कवियों जैसी पुनीत मौलिकता भी दीख पड़ती है –

'जे गरीब पर हित करें, ते रहीम बड लोग
कहाँ सुदामा बापुरो, कृष्ण-मिताई जोग।'
'बडे दीन को दुख सुने, लेन दया उर आनि।
हरि हाथी सों कब हुति, कहु रहीम पहिचानि।'

रहीम के काव्य में दिव्यता, निष्ठा दिखाई देती है। हिन्दुओं के काव्य में इतनी दिव्यता और निष्ठा बहुत कम कवियों में दिखाई देती है। मुसलमान होते हुए उन्होंने हिन्दी और हिन्दुत्व की जितनी सेवा की है। उसके लिए सभी हिन्दू उनके ऋणी है। अत: यह मुसलमान कवि इस कार्य के लिए आदर का पात्र है।

रहीम के कुछ फारसी मिश्रित संस्कृत श्लोकों को भी उनके काव्य में देखा जा सकता है।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) सैंट पॉल इंस्टीट्यूट ऑफ प्रोफेशनल स्टडीस, इन्दौर (म.प्र.) भारत

ग्रंथ का प्रारंभिक छंद है–

'करोम्यब्दुल रहीमोऽहं खुदाताला प्रसादतः।
परसीयपदैर्युक्तं खेटकौतुकजातकम्।
मंगलाचरण के बाद आया श्लोक है–
फारसी पद मिश्रित ग्रंथाः खलु पंडितैः कृता पूर्वेः।
संप्राप्य तत्पदपथं करवणि खेटकौतुकं पद्यम्।'

मंगलाचरण के पश्चात सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरू, शुक्र, शनि नक्षत्रों के भावफल के बारह–बारह श्लोक दिये है। इसके बाद राहु का भाव फल बारह श्लोकों में तथा केतु का एक छंद में दिया गया है। इसमें वर्णित योग और उनके फल ज्योतिष–ग्रथों से प्रमाणित होते है। इसका प्रकाशन ज्ञान सागर प्रेस, बम्बई से हो चुका है।

खानखाना और गोस्वामीजी में परस्पर बहुत स्नेह था। एक दिन एक निर्धन ब्राहमण की बेटी के विवाह के लिए तुलसीदास ने उसे कुछ पंक्तियाँ लिखकर रहीम के पास पहुँचा दिया –

सुरतिय नरतिय नागतिय, सब चाहत अस होय।

खानखाना ने ब्राहमण को बहुत सा धन देकर उस पंक्ति की पूर्ति करने तुलसी के पास भेजी –

गोद लिए हुलसी फिरै, तुलसी सो सुत होय।।

जागीर छिन जाने पर रहीम के पास कुछ नहीं बचा। याचक फिर भी घेरे रहते थे। एक ने घेरा तो उसे रीवा नरेश के पास निम्नलिखित दोहा लिखकर भेजा।

चित्रकूट में रमि रहे, रहिमन अवध–नरेस
जा पर विपदा पड़त है, सो आवत यहि देस।।

रीवा नरेश ने याचक को एक लाख रूपये दिये।

इस तरह के अनेक किस्से रहीम की दानशीलता के लिए प्रसिद्ध है। उनकी दानशीलता के लोकाख्यान हिन्दुस्तान में ही नहीं, अरब और ईरान तक फैल गये थे।

इसी प्रकार 'रहीम की भक्ति' निराली एवं अनुपम भक्ति है। ऐसी भक्ति तुलसी नहीं कर सकते क्योंकि उसके इष्ट जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक एक है। काम पीड़ित तुलसी, भक्ति की ओर अग्रसित होकर जो अमरकाव्य लिख गए है, उसकी प्रेरणा रत्नावली थी किन्तु रहीम, जो स्वयं का खजाना थे, जो इस्लाम के अनुयायी थे, इतने महान थे कि, भारतीय भक्तिधारा में स्वप्रेरणा से राममय, प्रेममय हो गए उनके भक्ति के दोहे संख्या में कम अवश्य है– महत्ता को महिमामंडित करते हैं, उसे आत्मसात करने की प्रेरणा देते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रहीम ग्रंथावली – विद्यानिवास मिश्र , गोविन्द रजनीश प्रकाशन (दिल्ली 1996)
2. भारतीय नीति काव्य परंपरा और रहीम – डॉ. बालकृष्ण शर्मा 'अकिंचन' प्रकाशन (दिल्ली 1973)
3. रहीम रत्नावली – पं. मायाशंकर याज्ञिक (बनारस 1928)
4. हिन्दी नीति काव्य – डॉ. भोलानाथ तिवारी (आगरा)

****

ग्लोबल वार्मिंग और पर्यावरण प्रदूषण

डॉ. रशीदा खान *

प्रस्तावना – आज पूरे विश्व के सामने ग्लोबल वार्मिंग की समस्या बनी हुई है। बढ़ते हुए तापमान के कारण मानव जीवन उथल-पुथल हो गया है। क्योंकि बढ़ते तापमान के कारण जलवायु में परिवर्तन होने लगा है। मानव ने अपने विलासितापूर्ण जीवन के लिये पृथ्वी का अत्यधिक दोहन किया है। जिसकी वजह से अनेक प्रकार की समस्या उत्पन्न हो रही है। ग्लोबल वार्मिंग के बढ़ते प्रकोप से आमजन परेशान है। निरन्तर बढ़ता तापमान हमारी दिनचर्या को प्रभावित कर रहा है।

वैज्ञानिकों का मानना है कि इस प्रकार से ग्लोबल वार्मिंग होती रही तो गंगा नदी सूख जायेगी, जिसके कारण हजारों गांव व शहर बर्बाद हो जायेंगे। हिमालय पर्वत के ग्लेशियर पिघल जायेंगे।

ग्लोबल वार्मिंग का अर्थ – वायुमण्डल में उपस्थित कार्बन डाईऑक्साइड गैस पृथ्वी के तापमान को बढ़ाने वाली प्रमुख गैस है, इसके अलावा मिथेन, क्लोरोफ्लोरो कार्बन, नाइट्रस आक्साइड, हेलोन आदि गैसों की भूमण्डलीय तापमान वृद्धि में भूमिका होती है, यह गैसें दीर्घ तरंगी पार्थिक विकिरण को वायुमण्डल से बाहर जाने से रोक लेती हैं। परिणामस्वरूप तापमान बढ़ने से ताप संतुलन बिगड़ जाता है। भूमण्डलीय तापमान में इस विधि को ही वैज्ञानिक शब्दावली में ग्लोबल वार्मिंग कहा जाता है।

भूमण्डल के निरंतर बढ़ते हुए तापमान को 'ग्लोबल वार्मिंग' या वैश्विक ऊष्णता भी कहा जाता है। ग्लोबल वार्मिंग वर्तमान समय की प्रमुख विश्वव्यापी पर्यावरणीय समस्या है।

ग्लोबल वार्मिंग के कारण – विश्व के तापमान में निरंतर वृद्धि के लिये निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं –

ग्लोबल वार्मिंग का मुख्य कारण ग्रीन हाउस गैसें हैं। प्राकृतिक रूप से पाई जाने वाली ग्रीन हाउस गैसें पृथ्वी को निरंतर गर्म रखती हैं। वायु मण्डल में इनका प्रभाव बढ़ जाता है और यह गैसें कई दशकों तक वायुमण्डल में विद्यमान रहती हैं।

ओजोन परत में छिद्रीकरण – ओजोन परत में छिद्रीकरण से तात्पर्य वायुमण्डल की ओजोन नामक विशिष्ट गैस की कमी हो जाने से है। मानवीय क्रियाकलापों के द्वारा उत्सर्जित हानिकारक रसायन के कारण ओजोन के विनाश से ओजोन परत पतली हो जाती है, जिसे ओजोन छिद्रीकरण कहते हैं। ओजोन परत में छेद होना ग्लोबल वार्मिंग का मुख्य कारण माना जाता है।

निर्वनीकरण – उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में वनों की अंधाधुंध कटाई को भी ग्लोबल वार्मिंग का कारण माना जाता है। जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के साधन वनों की कटाई ने विकट पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न कर दी हैं। आवास एवं कृषि योग्य भूमि में विस्तार के कारण उष्ण कटिबंधीय वनों का तीव्र गति से ह्रास हुआ है। निर्वनीकरण द्वारा वानस्पतिक आवरण में आ रही कमी के कारण वनस्पति द्वारा कार्बन डाईआक्साइड गैस का पर्याप्त अवशोषण नहीं हो पा रहा है, जिसके कारण पृथ्वी की सतह का तापमान बढ़ता जा रहा है।

ग्रीन हाउस गैसों में वृद्धि – ग्लोबल वार्मिंग के लिये मुख्यतः कार्बन डाईआक्साइड, मिथेन, नाइट्रस आक्साइड, क्लोरोफ्लोरो कार्बन, हेलोन इत्यादि गैसें उत्तरदायी हैं। यह गैसें वायुमण्डल में ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करती हैं। परणामस्वरूप पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है।

ग्लोबल वार्मिंग का प्रभाव – ग्लोबल वार्मिंग वर्तमान शताब्दी की सबसे विकट पर्यावरणीय समस्या है। इसके कारण पृथ्वी के वातावरण पर निम्न प्रभाव पड़ सकते हैं –

1. पृथ्वी के तापमान में वृद्धि के कारण जमीन की उर्वरक शक्ति घटने की आशंका है, परिणामस्वरूप फसल उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। पृथ्वी के कई हिस्सों में एक ही मौसम लंबे समय तक बना रहेगा।
2. वैश्विक ऊष्णता के कारण जैव विविधता के नष्ट हो जाने की आशंका है। कई जीव जन्तु और वनस्पतियां जलवायु में परिवर्तन के कारण विलुप्त हो जायेंगी।
3. तापमान में निरंतर वृद्धि के कारण ध्रुवीय क्षेत्रों तथा पर्वतीय हिमनदों के पिघलने से समुद्री जलस्तर के ऊपर उठने की आशंका है। परिणाम स्वरूप समुद्र तटीय क्षेत्रों का जलमग्न होगा, बड़ी संख्या में जनसंख्या का विस्थापन होगा।
4. तापमान वृद्धि का प्रभाव समुद्री जीवों पर भी पड़ेगा।
5. ग्लोबल वार्मिंग के कारण प्राकृतिक आपदाओं का प्रकोप बढ़ेगा।
6. तापमान बढ़ने के कारण मानव स्वास्थ्य को भी खतरा।
7. वैश्विक तापमान के कारण हिमनद निरंतर पिघल रहे हैं, बाढ़ आने की आशंका है।

पर्यावरण प्रदूषण – प्रकृति में ऐसी कई घटनाएँ होती रहती हैं जिससे पर्यावरण में असंतुलन पैदा होता है। असंतुलन पैदा करने वालों में मानव का सबसे बड़ा हाथ है। मानव सभ्यता के निरंतर विकास में नित नये भौतिक सुख-सुविधाओं के उपायों को ढूंढने तथा उन्हें पाने में पर्यावरण का असंतुलन अवश्यंभावी है किन्तु यही असंतुलन मानव तथा प्राणी जगत के जीवन पर विपरीत प्रभाव डाल रहा है।

वायु प्रदूषण – आज से 5000 वर्ष पूर्व जब सर्वप्रथम मनुष्य ने आग जलाना सीखा तो उसी दिन वायु प्रदूषण का बीजारोपण हो चुका था। जनसंख्या वृद्धि और आवश्यकताओं की क्रमशः वृद्धि होने लगी जिससे वायुमण्डलीय प्रदूषण की समस्या का परिणाम हमारे समक्ष आने लगा। वायु प्रदूषण एक ऐसी स्थिति जब भौतिक रासायनिक और जैविक परिवर्तन के कारण हवा, जल और धरातल अपनी गुणवत्ता खो देते हैं तथा जीवधारियों के लिये पर्यावरण लाभकारी होने के बजाय हानिकारक होने लगता है, जिससे जीवन में प्रगति रूक जाती है और जीवन दूभर होने लगता है।

वायु प्रदूषण वर्तमान समय की औद्योगिक एवं तकनीकी सभ्यता की

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

एक ऐसी देन है जो कि न केवल पारिस्थितिक तंत्र को असंतुलित बना कर हानिकारक प्रभाव उत्पन्न कर रहा है अपितु मानव एवं अन्य जीवों तथा वनस्पति आदि के संकट का कारण भी बनता जा रहा है। इस प्रदूषण के कारण वनस्पति जीव जन्तुओं और मानव स्वास्थ्य पर भी प्रभाव पड़ता है।

प्रदूषित हवा से बचने के लिये व्यक्ति कितने भी प्रयास कर ले कहीं से भी सेंध लगाकर ये प्रदूषित हवा नुकसान पहुंचाने चली आती है। ऐसे समय में मुझे जुबैर रिज़वी की ये पंक्तियां याद आती हैं –

ये किसने ताज़ा हवाओं के पर कतर डाले।
बड़े यकीन से खोली थी खिड़कियाँ हमने।

जल प्रदूषण – जल प्रकृति का दिया हुआ सर्वाधिक मूल्यवान उपहार है, जिसके बिना जीवन की कल्पना करना संभव नहीं। मानव सभ्यता का विकास जल की पर्याप्त आपूर्ति पर निर्भर करता है। जल के अभाव में मानव सभ्यता का अस्तित्व संभव नहीं है।

आदि काल से ही मानव द्वारा जल का प्रदूषण किया जाता रहा है, किन्तु वर्तमान समय में तीव्र जनसंख्या वृद्धि व औद्योगिकीकरण के कारण विद्यमान जल को प्रदूषित करने की गति और तीव्र हो गई है, मानव के विभिन्न क्रियाकलापों के कारण जब जल के रासायनिक भौतिक एवं जैविक गुणों में ह्रास होता है, तो इस प्रकार के जल को प्रदूषित जल कहा जाता है। अतः स्पष्ट है कि जब जल की भौतिक रासायनिक अथवा जैविक संरचना में इस प्रकार का परिवर्तन होगा तो वह जल किसी प्राणी की जीवित दशाओं के लिये हानिकारक एवं अवांछित हो जाएगा तभी वह जल प्रदूषित जल कहलाता है। जल प्रदूषण तीन प्रकार का होता है –

1. भौतिक जल प्रदूषण।
2. रासायनिक जल प्रदूषण।
3. जैविक जल प्रदूषण।

जल प्रदूषण का प्रभाव अत्यधिक व्यापक और हानिकारक होता है क्योंकि प्रत्येक जीवन मानव, पशु, पक्षी एवं जीव जन्तु ही नहीं अपितु वनस्पति एवं कृषि का अस्तित्व भी इसी पर निर्भर करता है जैसे ही जल प्रदूषित होता है इसका दूषित परिणाम सभी को भुगतना पड़ता है। वास्तव में भोजन चक्र को जल नियंत्रित करता है। प्रदूषित जल से अनेक प्रकार की बीमारियां फैलती हैं जैसे – हैजा, टाइफाईड, डायरिया आदि।

पृथ्वी पर उपलब्ध जल में से 25 प्रतिशत जल ही स्वच्छ है जबकि कुल जल की मात्रा 14 अरब है।

धार्मिक आस्था की प्रतीक यमुना नदी का वजूद खतरे में है। बढ़ते प्रदूषण के चलते यमुना का पानी जहरीला हो गया है, नदी में घुले तरह–तरह के रसायन कई तरह की बीमारियां फैला रहे हैं। नदी के पानी को जांचने के बाद जानकारों का मानना है कि पानी से कैंसर जैसी बीमारियां पनप रही हैं। यमुना में सबसे अधिक प्रदूषण फैलाती है देश की राजधानी दिल्ली, इसकी वजह है यहां उद्योग धंधे और घरों से निकलने वाला कचरा।

ध्वनि प्रदूषण – ध्वनि प्रदूषण श्रवण विज्ञान के नाम से भी जाना जाता है। ध्वनि की तीव्रता को मापने के लिये एक इकाई निश्चित की गई है जिसका नाम 'वेल' है। ध्वनि का मापन बैरोमीटर नामक यंत्र से किया जाता है।

वैज्ञानिकों के अनुसार ध्वनि की तीव्रता अस्पतालों के आसपास 40 डेसीबल, आवासीय क्षेत्रों में 50 डेसीबल तथा अधिक भीड़भाड़ युक्त सड़कों पर 75 डेसीबल से अधिक नहीं होना चाहिये।

ध्वनि प्रदूषण के स्त्रोत – प्राकृतिक, जैविक, कृत्रिम कलकारखाने, घरेलू मनोरंजन, सामाजिक तथा धार्मिक कार्य, राजनैतिक गतिविधियों आदि के कारण प्रदूषण होता है। अगर मनुष्य चाहे तो प्रदूषण से मुक्ति पा सकता है बशर्ते वह नियमों का पालन करे।

आज अनेक विश्व संगठन, क्षेत्रीय संगठन एवं राष्ट्रीय सरकार इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं क्योंकि यह ऐसी समस्या है जिसका संबंध संपूर्ण मानव जाति एवं जीव जगत से है। इसके लिये संगठित होकर उपाय करना आवश्यक है।

अतः पर्यावरण प्रदूषण रोकने के लिये हमें गंदगी पर नियंत्रण, बढ़ती हुई आबादी पर रोक, पेड़ पौधों का अधिक रोपण, वनों की दिशा इस ओर मोड़नी चाहिये ताकि पर्यावरण को दूषित होने से बचाया जा सके तथा मानव, अन्य जीव जन्तुओं एवं पेड़ पौधों का अस्तित्व कायम रह सके। अंत में बस इतना ही –

गुजरो जो बाग से तो दुआ मांगते चलो,
जिसमें खिले हैं फूल वो डाली हरी रहे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. मिलिन्द कोठारी – पर्यावरण शिक्षा – पृ.सं. 152
2. राज एक्सप्रेस – पृ.सं. 6
3. कृतिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका – पृ.सं. 176
4. ग्लोबल वार्मिंग ज्योग्राफी पर्यावरणीय रसायन।

****

उदात्त विचारों के धनी हरिवंशराय जी बच्चन

डॉ. सरोज जैन *

प्रस्तावना –कुछ रचनाकारों के लिए अपनी रचना का सम्मान उतने मायने नहीं रखता जितना अपनी स्वाभाविकता और पाठकों की पसंद। डॉ. हरिवंशराय बच्चन इसी श्रेणी के कवि/ साहित्यकार रहें है। उनकी लोकप्रिय कृति 'मधुशाला को कई प्रबंद्धजनों ने स्तरीय रचना नहीं मानकर खारिज कर दिया किंतु पाठकों ने इसे बाद में पसंद किया ।[1]

हिंन्दी जगत के यशस्वी साहित्यकार हरिवंशराय बच्चन का जीवन बड़ा ही संघर्ष पूर्ण रहा। इनका जन्म 27 नवम्बर 1907 में इलाहाबाद में हुआ। प्रयाग विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में एम.ए. किया तथा कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से विलियम्स बटलर वीट्स पर पी–एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अध्यापन किया बाद में भारत सरकार के विदेश मंत्रालय में हिंदी विशेषज्ञ और अन्तर राज्य सभा के मनोनीत सदस्य रहें। 1926 में गवर्नमेंट कॉलेज में शिक्षा प्राप्ति के दौरान आर्थिक स्थिति इतनी खराब थी कि वह शाम को आठ से दस रूपये कमाने के लिए ट्यूशन करते थे। संघर्ष के मार्मिक दिन पहली पत्नी श्यामा के साथ बीते 1936 में श्यामा जी का निधन हुआ। अपना पढ़ाई का खर्च निकालने के लिए उन्होंने न केवल ट्यूशन का सहारा लिया बल्कि विषम परिस्थितियों में लेखन को भी ढाल बना लिया था। 1927 में इंटर की परीक्षा तथा 1929 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से पाश्चात्यदर्शन, अंग्रेजी साहित्य व हिन्दी लेकर बी.ए. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की । इसी बीच देश में स्वतंत्रता आंदोलन जोर पकड़ रहा था बच्चन जी कॉलेज छोड़ कर महात्मा गांधी के साथ सत्याग्रह आन्दोलन में कूद गए और इसीलिए 1938 में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की । इलाहाबाद में उनकी समाज सेवा व देश के प्रति समर्पण की भावना से अभिभूत होकर नेहरू जी ने उन्हें सहारा दिया और दिल्ली के मंत्रालय में कार्यालय के दस्तावेज का अंग्रेजी से हिन्दी अनुवाद करने संबंधी कार्य करने का अवसर प्रदान किया। बच्चन जी ने इस कार्य को अपनी सेवा निवृत्ति के समय तक बखूबी निभाया। मृणाल पाण्डे के अनुसार बच्चन जी ने बहुत कष्ट देखे थे बहुत संघर्ष किया था और महाकवि निराला की ही तरह आंसुओं को भीतर ही भीतर पीकर उनकी ऊर्जा और सौन्दर्य में अपनी कविता को सोना बनाया था। जाहिर इस कष्ट साध्य प्रक्रिया से वही कलाकार गुजर सकता जिसके भीतर दुर्धर्ष जिजीविषा मौजूद हों।

हरिवंशराय बच्चन की प्रमुख कृतियाँ है मधुबाला, आकुल अंतर, बंगाल का काल, खादी के फूल, धार के इधर उधर, मधुशाला, निशा निमंत्रण, प्रणय पत्रिका, मधुकलश, एकांत, संगीत, सतरंगिनी, मिलन यामिनी, बुद्ध और नाचघर, त्रिभंगिया, बहुत दिन बीते, आरती और अंगारे, तथा जाल समेरा, हलाहल।

सहजता और संवेदनशीलता उनकी कविता का विशेष गुण है। यह सहजता और सरल संवेदना कवि की अनुभूति मूलक सत्यता के कारण उपलब्ध हो सकी । बच्चन जी ने बड़े साहस, धैर्य और सच्चाई के साथ सीधी–सादी भाषा और शैली में सहज कल्पना शीलता और जीवंत प्रतिबिम्बों से सजाकर संवारकर अनूठे गीत हिन्दी को दिए।

बच्चन की सर्वाधिक चर्चित पुस्तक 'मधुशाला बीसवीं सदी की सर्वाधिक लोकप्रिय पुस्तकों में से एक है। इस पुस्तक ने हिन्दी की कई पीढ़ियों को प्रभावित किया। आलोचकों ने मधुशाला को धर्मनिरपेक्षता का प्रतीक बताया । इसकी प्रसिद्ध पंक्ति है मंदिर मस्जिद बैर बढ़ाते, मेल कराती मधुशाला।

इसमें मदिरा को एक प्रतीक के रूप में लिया गया है। जिसमें मधुशाला एक जीवन और रात एक उत्सव है। मधुशाला के माध्यम से जीवन के मूल सिद्धांतों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें मधुशाला कभी समाज का कभी देश का कभी आजादी का, कभी अकेलेपन का सूचक बन जाती है, मधुशाला की अद्‌भुत लयात्मकता उसे एक ऐसा महागीत बनाती है, जिसे उसकी लय में खोकर ही गाया जा सकता है। बच्चन ने झूमना और झूमकर गाना सिखाया। नैतिकता के बंधनों को तोड़ा। मनुष्य को आजाद और उड़ना सिखाया। श्री सुधीश पचौरी के शब्दों में– मधुशाला पहला आधुनिक गीत है। हरिवंशराय बच्चन ने छियानवे साल लंबी जिंदगी देखी। हिन्दी में इतना लंबा जीवन अपने आप में रिकार्ड है पहले बच्चन अपनी मधुशाला में जिए यह भी युगांन्तरकारी वक्त रहा। फिर वे एक बड़े आत्मकथाकार के रूप में ख्यात हुए फिर वे अपने पुत्र अमिताभ की कीर्ति पताका फहराते रहे।[4] उनके अनुसार 'मधुशाला पहला आधुनिक महागीत है उसमें आजादी, आजाद स्पेस की कामना, अनंत छवियां है लहरे है सर्वतोन्मुखी मस्ती है। यह मस्ती बच्चन की मधुशाला को उर्दू की कविता के एक बड़े हिस्से से जोड़कर चलती है वह फारसी कविता खासकर उमर खय्याम के 'उन्मद भाव से जुड़ती है। बच्चन पर खय्याम प्रभाव रहा लेकिन बच्चन ने और भी बहुत कुछ लिखा। उनकी कविता में सामान्य मनुष्य की परेशानियां, दृढ़ताएं संघर्ष और प्रेम की कामना विद्यमान है।[5]

हरिवंशराय बच्चन जी ने सन् 1968 में ही दो चट्टानों पर साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला। तीन खंडों में उनकी आत्मकथा क्या भूलूं क्या याद करूं बसेरे से दूर नीड़ का निर्माण हिन्दी की श्रेष्ठ आत्मकथा मानी जाती है। दशद्धार से सोपान तक भी उनकी प्रसिद्ध पुस्तक है। बच्चन जी ने लोकप्रिय होते हुए भी कभी लोकप्रियता पाने की कोशिश नहीं की उनमें अगाध पांडित्य झलकता था। इसीलिए वे अपनी हर मुहिम में सफल रहे। हिंदी की सेवा करते हुए उन्होनें अपनी लेखनी से अपने आलोचकों को जो जबाब दिए वह अविस्मरणीय है।[6]

19 जनवरी 2003 को कालजयी रचनाकार डॉ. हरिवंशराय बच्चन के निधन से हिन्दी कविता का सूर्य अस्त भले ही हो गया हो परंतु अपनी अमर

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

रचनाओं के रूप में हिन्दी भाषा और साहित्य में उनका योगदान सदैव अविस्मरणीय रहेगा। उन्होंने सीधे सरल शब्दों को कविता के पात्र में मधुशाला की एक ऐसी रसधारा बहाई जिसकी छलछलाहट से जनमानस सराबोर हो गया। मधुशाला और बच्चन जी एक दूसरे के पर्याय बन गए। जहां मधुशाला है वहां बच्चन है और जहाँ बच्चन है वहाँ मधुशाला है। छायावाद की रहस्यमता और प्रगतिवाद की सूक्षता वाली दो धाराओं के बीच जो कोमलकांत पदावली वाली सहज सरल रसमय काव्यधारा बहाई उसकी प्रेरणा उन्हें प्रयाग के त्रिवेणी संगम की समन्वयवादी वैचारिकता से मिली होगी। उन्होंने अपनी कविता में लिखा है 'गाता हूं अपनी लय भाषा सीख इलाहाबाद नगर से' जब उन्होंने अपनी आत्मकथा दशद्वार से सोपान तक लिखी तो प्रख्यात पत्रकार व साहित्यकार डॉ. धर्मवीर भारती ने उसे हिन्दी के हजार वर्षो के इतिहास में ऐसी पहली रचना बताया जिसमें किसी ने अपने बारे में इतनी बेबाकी, साहस और सद्भावना से कह दिया हो हिन्दी जगत ही नहीं संपूर्ण विश्व साहित्य बच्चन की उस साहित्यिक प्रतिभा से गौरवान्वित रहेगा। जिसमें हिन्दीके माध्यम से विश्वभर के साहित्य को एक सूत्र में बांधने का साहसिक प्रयास किया। विदेश मंत्रालय के हिन्दी विशेषज्ञ के रूप में उन्होंने विश्व में अपने आपकों हिदुस्तान के राजदूत की भूमिका में प्रस्तुत किया। उन्होने हिंदी को भारतीय जनता की आत्मा की भाषा माना और आजीवन हिंदी साहित्य के कोष को समृद्ध करने में लगे रहे। 'तू क्यों बैठ गया है पथ पर बैठ न चलने वालों के दल में आज तमाशा बनकर' जैसी कविताओं के माध्यम से भारतीय जनमानस को सतत् प्रगति शील रहने का प्रभाव शाली संदेश दिया निश्चय ही उनकी कृतियां विश्व साहित्य और जनजीवन को अमरत्व का संदेश देने वाली कालजयी कृतियां है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुमार पल्लव, नई दुनिया दैनिक समाचार पत्र दि. 20.1.3
2. मृणाल पाण्डे हिन्दुस्तान दैनिक समाचार पत्र दि.20.01.3
3. संपादकीय नवभारत दैनिक समाचार पत्र 20.01.03
4. सुधीषपचौरी दैनिक भास्कर दैनिक समाचार पत्र 20.01.03
5. वही
6. शिवानी हिन्दुस्तान दैनिक समाचार पत्र 20.01.03
7. संपादकीय नवभारत दैनिक भास्कर दि. 2801.03

****

श्रीकृष्ण 'सरल' के काव्य में गाँधी दर्शन की अभिव्यक्ति

डॉ. दीपक कुमार गुप्ता *

प्रस्तावना – जिस समय श्रीकृष्ण 'सरल' जी का जन्म हुआ। वह वर्ष महात्मा गांधी के नेतृत्व में असहयोग आन्दोलन का वर्ष था। देश की राजनीति में महात्मा गाँधी की प्रतिष्ठा थी। लेकिन दूसरी ओर क्रांतिकारी भी लोकप्रिय हो रहे थे। महान क्रांतिकारी शिवराम राजगुरू के निकट से दर्शन करने के लिए बालक सरल ने बहुत बड़ा मूल्य चुकाया था। उन्हें गोरे सिपाहियों ने लातों और घूसों से पीटा था, और बूटों से ठोकर लगाई थी। उसी समय से उनके मन में क्रांतिकारियों के प्रति लगाव उत्पन्न हो गया था। फलस्वरूप उन्होंने अपना समस्त लेखन क्रांतिकारियों और शहीदों को समर्पित करके लिखा, लेकिन ऐसा कतई नहीं हैं कि वे गाँधी के विचारों एवं सिद्धान्तों से सहमत नहीं थे। यह इस बात से सिद्ध होता है कि उन्होंने गाँधी जी पर एक खण्डकाव्य महात्मा गाँधी की रचना की साथ ही 'स्मृति पूजा' काव्य संकलन भी उन्होंने गाँधी जी को श्रद्धांजिल अर्पित करने के उद्देश्य से लिखा इस बात को उन्होंने संपादकीय में लिखा भी है– 'स्मृति–पूजा मेरी ग्यारह रचनाओं का संग्रह है जो भारत के राष्ट्रपिता पूज्य महात्मा गाँधी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए समय समय पर लिखी गयी हैं.....आज दिवगंत महात्मा हमारे बीच नहीं है, पर उनकी पावन स्मृति हमारे लिए पूजा का आधार बन गई है। मेरे ये गीत श्रद्धांजलि के उद्देश्य की कहाँ तक पूर्ति कर सके यह आपके सोचने का विषय है पर इनको लिख कर मुझे बहुत संतोष हुआ है।'

सरल जी के विचार से गाँधी जी मानव के रूप में देवता थे। देवताओं के समान उन्होंने दीन–दुखियों की सच्चे मन से सेवा की उन्होंने एक स्थान पर लिखा भी–

'वह मानव का जिसमें
देवों का देवत्व ढला था
पीड़ित दीन दुखी दलितों का
जिसमें प्यार पला था।
जिसके नयनों में अंकित थी
अंतर की परिभाषा
तूफानों में जो प्रकाश पथ
की देता था आभा।'

साथ ही सरल जी ने यह भी व्यक्त किया कि गाँधी जी के मन में किसी भी प्रकार की अभिलाषा या इच्छा नहीं थी, वे तो सिर्फ दूसरो को देते आए लेने की इच्छा उनके मन में कभी पैदा ही नहीं हुई। गाँधी जी के निधन पर श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए जब उन्होंने कामना की, कि स्वर्ग में उनका स्वागत स्वर्गवासियों द्वारा होना चाहिए। तब वे देवराज को सम्बोधित करते हुए लिखते है–

'देवराज! क्यों चिंतित हो तुम
इंद्रासन न छिनेगा
यह त्यागी त्रिभुवन का वैभव
तृण के सदृश्य गिनेगा
यह तो राज्य बांटता आया
स्वयं नहीं अभिलाषी
अर्द्ध नग्न रह स्वयं कोटि तन
ढँकने का अभ्यासी'

सरदार भगत सिंह महाकाव्य में भी सरल जी ने गाँधी की चर्चा की है। इससे यह सिद्ध होता है कि क्रांतिकारियों कि बात करने वाले सरल जी गाँधी जी एवं उनके सिद्धान्तों को भूले नहीं है। वस्तुत: सरल जी यत्र तत्र अपने काव्यों में गाँधी जी की अभिव्यक्ति देते रहे है। सरदार भगत सिंह महाकाव्य में सरल जी ने गाँधी को राजनीति में प्रवेश को एक आंधी के समान माना है। वे कहते हैं–

'भारत के सौभाग्य–गगन पर घिरे जब काले,
घोर निराशा के तम ने जब अपने डेरे डाले,
उठी एक तब प्रबल आत्म बल की लहरा का आंधी
युग ने उसे पुकारा कह कर जन अधिनायक गाँधी।'

गाँधी जी के आदर्श एवं सिद्धांत – सरल जी अपने काव्य में गाँधी जी द्वारा अपनाए गए आदर्शो एंव सिद्धांतों को अभिव्यक्त कर लोगों के सामने यह उदाहरण प्रस्तुत किया कि यदि लोग अपने आदर्श एवं सिद्धांत बनाकर किसी कार्य में मेहनत एवं लगन से जुट जाए तो उसे सफलता अवश्य मिलती है। यहाँ हम सरल जी द्वारा अपने काव्य में अभिव्यक्त गाँधी दर्शन को देखेंगे–

नेतृत्व की क्षमता – यह निर्विवाद सत्य है कि गाँधी जी में अद्भुत नेतृत्व क्षमता थी। उनके एक इशारे में सारा जन समूह एक झण्डे के नीचे आ जाता था–

'गाँधी के झण्डे के नीचे जन समूह घिर आया,
जनता ने दानव से लडने नया अस्त्र था पाया।
युग नायक ने कहा–हरा सकते है हम पशु–बल को
दृढ करना होगा हमको अपने ही अन्तस्तल को।'

सत्य, अहिंसा और प्रेम जीवन के तीन अस्त्र – गाँधी जी ने अपने जीवन में सत्य, अहिंसा और प्रेम को प्रेरक माना। गाँधी जी मानते थे कि सत्य, अहिंसा और प्रेम के बल पर हम किसी भी शत्रु पर विजय प्राप्त कर सकते हैं और ऐसा हुआ भी। गाँधी जी ने सत्य को ही ईश्वर माना है–

'सत्य स्वयं ईश्वर है जिसके हो अभीष्ट प्रिय दर्शन
सत्य ध्येय हो इस जीवन का है यह तत्व चिरन्तन।
ईश्वरत्व है सत्य सत्य ही उर का अलंकरण है,
आत्म ज्ञान का सत्य शाश्वत पावन पुरश्चरण है।'

और अहिंसा के बारे में गाँधी जी कहते है–

'और अहिंसा–दया दृष्टि का यह पुण्य प्रकाशन,
जी न दुखायें किसी जीव का, करें सदा हित चिन्तन।

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बुढार, जिला–शहडोल (म.प्र.) भारत

वीरो का है धर्म अहिंसा, यह पर्याय न भय का,
सह-जीवन का दृष्टिकोंण यह तप है परम सदय का।'

प्रेम के सम्बन्ध में गाँधी जी के विचार देखिए-

'प्रेम पुण्य आलोक हृदय का प्रेम साँस सँसृति की,
प्रेम आत्मा की छाया है, यह प्रेरणा सुगति की।
प्रेम पूर्ण व्यवहार शत्रु को भी है मित्र बनाता,
विश्वासों की नींव प्रेम है, यह आनन्द प्रदाता।'

गाँधी जी मानते थे कि सत्य अहिंसा एवं प्रेम के संगम से आजादी को प्राप्त कर सकते है-

'अत: चाहते यदि हम पाना फिर अपनी आजादी,
यह सिद्धांत हमें पालन करना होगा बुनियादी।
सत्य अहिंसा और प्रेम से शत्रु विजय हो सकती,
नीति यही जो चिन्ह कलुश के पल भर में धो सकती।'

असहयोग एवं बहिष्कार की नीति - गाँधी ने देश की आजादी के लिए अंग्रेजी शासन से असहयोग एवं बहिष्कार की नीति को अपनाने के लिए लोगों को प्रेरित किया। जिससे अंग्रेजी शासन की नींद हराम हो जाये ओर वे देश छोडकर चले जायें-

'पद सेवा सम्मान आदि का बहिष्कार करना है,
सभी विदेशी उपकरणों को नमस्कार करना है।
डटे रह हम दृढ निश्यच से असहयोग के पथ पर
डटे रहे हम दृढ निश्चय से कर संगठन परस्पर।'

गाँधी जी के असहयोग एवं बहिष्कार की नीति रंग लाई और लोंगों ने-

'फेंक दिये तमगे उतार सबने नौकर शाही के,
प्रस्तुत सभी हो गये चलने पीछे उस राही के।
असहयोग के साथ सभी ने बहिष्कार अपनाया,
छोड.-छोड़ पद्वियाँ और पद, सबने रोब जताया।'

इस असहयोग में युवा बूढ़ों के साथ बच्चे भी सहयोग दे रहे इन बच्चों में सरदार भगतसिंह भी शामिल थे-

'असहयोग मे योग दे रहा पूरा बाल जगत था,
शान्त क्रांति के महा-समर में कूदा वीर भगत था।
तड़प रहे थे प्राण, देश को बंधन मुक्त कराने,
तड़प रहे थे प्राण देश में सौख्य सुधा बरसाने।'

उपवास भी एक साधन - गाँधी जी ने अपने हृदय को शुद्ध करने के लिए उपवास पर बल दिया। वे मानते थे कि जब तक हमारा हृदय शुद्ध न होगा तब तक हमारे विचारों में परिवर्तन नहीं होगा और हम देश हित के बारे में नहीं सोच पायेगें। साथ ही हमारे उपवास को देखकर शत्रु के अन्त:करण में भी अपने आप परिवर्तन होगा-

'साधन है उपवास आत्म पीडन से उर-शोधन का,
साधन है उपवास हमारे उर के उद्बोधन का।
इन सब का परिणाम शत्रु के भावों का परिवर्तन
इन सब का परिणाम हमारे लिए विजय का अर्जन।'

वस्तुत: यह सिद्ध होता है कि श्रीकृष्ण 'सरल' का सम्पूर्ण काव्य जहाँ एक ओर क्रांतिकारियों पर समर्पित था तो वहाँ दूसरी ओर वे गाँधी जी से भी प्रभावित थे। हाँ इतना हम कह सकते है कि उन्होने गाँधी जी पर कम लिखा किन्तु वे गाँधी के विचारों एवं सिद्धांतों से पूर्ण सहमत थे। उन्होंने गाँधी जी पर जो भी लिखा वह पूर्ण रूपेण उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करने के उद्देश्य से ही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राष्ट्र-भारती -श्रीकृष्ण सरल पृ0 . 162-163
2. शहीदों की काव्य कथाएँ- श्रीकृष्ण सरल पृ0 05-6
3. श्रीकृष्ण सरल-कु. गोमती शनकुशल पृ0 177-178
4. स्मृति पूजा 'भूमिका'-श्रीकृष्ण 'सरल'
5. सरदार भगतसिंह-श्रीकृष्ण सरल पृ0 177-180

****

भक्तिकाव्य की मूलचेतना जनवादी चेतना ही है

डॉ. पारसमणि गुप्ता *

प्रस्तावना –समग्र भक्ति आन्दोलन तथा भक्तिकाव्य की मूलचेतना मानवतावादी और जनवादी चेतना ही है। मानवतावादी चेतना से अलग रखकर भक्तिकाव्य एवं भक्ति आंदोलन की कल्पना नहीं की जा सकती है।

इस काल के दो प्रमुख कवि सूर और तुलसी को ही मूल में रखा जाए तो उनकी कालजयी रचनाओं के पीछे यही मानवतावादी चेतना है, जो आज भी उनकी रचनाओं को प्रासंगिक बनाए है।

तुलसी अपने इष्ट के आलम्बन से इस चेतना को मुखरित करते है। उनकी इष्ट के प्रति पुकार में यह चेतना तन में रक्त की तरह प्रवाहित है। उनकी रचनाओं में अभिव्यक्त सुख, दु:ख, हर्ष उल्लास, शोक, तनाव एक जन की पुकार बनकर व्यथा कथा के रूप में व्याप्त है। सूर तथा अन्य युगीन कवियों की कविता में जब हम लोक जीवन की अभिव्यक्ति को देखते है, तो भक्ति काव्य की जीवंतता और शक्ति का स्त्रोत केन्द्रित होते दिखायी देता है। यह लोक जीवन की वह गहराई है, जो उसे चिर स्थायित्व प्रदान करती है। इन कवियों ने लोकजीवन को खुली ऑखों से देखा है और उसका गहराई से चित्रण किया है। भक्ति का आलम्बन भले ही ईश्वर हो किन्तु उनका जो मनुष्य धर्म है उसका आलम्बन यह सामान्य जन ही रहा है। मनुष्य से और लोक जीवन से जुड़ने की बातें तो बहुत लोग करते है। लोक हृदय को पहचानने का विश्वास लोगों को हो लेकिन मनुष्य से लोक और मनुष्य की खरी संवेदनाओं से जुड़ना और संसार को उसकी समग्रता में आत्मसात् करना हर व्यक्ति के वश में नहीं है। सूरदास और तुलसीदास तथा कुछ भक्त कवियों में यह सामर्थ्य, यह निष्ठा तथा आस्था थी। फलत: वे अपने को शक्ति के उस जीवन्त स्त्रोत से जोड़ सके, जो सैकड़ों वर्षो के बाद भी आज उन्हें जिंदा बनाए हुए हैं। उनकी कविता एक मिसाल हैं। अन्य कवियों के साम्प्रदायिक आशयों को तथा दार्शनिक निरूपणों को यदि ध्यान न दिया जाए तब भी काव्य रचना लोकजीवन के सौन्दर्य का जो अक्षय भंडार है। मानवीय हर्ष, विवाद और मानवीय जीवन की समग्रता का आख्यान उसमे है। लोकपीड़ा और लोक के उल्लास के जो स्वर उसमें है, उसी के बल पर सहृदय के मन पर गहरी छाप छोड़ने मे समर्थ हैं।

सूर–तुलसी काव्य मे आत्मसम्मान अपने आराध्य के अलावा किसी के समक्ष नत नहीं, बडे से बड़े सम्राटों की गुलामी को ठोकर मारना, प्रलोभनों के समक्ष दीन नहीं होना,साहस के साथ उन्हें ठुकराना, व्यवस्था तथा स्थापित सत्ता से केवल समझौता नहीं करती। उसकी अनीति,अन्याय, अनाचार तथा अहंकार की धज्जियॉ उड़ाती है। इन कवियों को आसानी से आश्रय मिल सकते थे। बडे-बड़े आश्रयों को ठोकर मारकर इन्होंने भक्ति के गीत गाए। ये आराध्य के लिए समर्पित थे। साधारणजन के प्रतिनिधि थे। मनुष्य को हेय नहीं माना, लोक और उसकी पीड़ा की सच्चाई के प्रति जो सदा सजग रहे। तभी तो तुलसी ने कहा–

'परहित सरिस धरम नहीं भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।।'

गोस्वामी तुलसीदास ही हैं जिन्होंने मानव जीवन का प्रखर यथार्थ बोध किया है। समूचे मध्यकाल मे अकाल पर लिखने वाले तुलसी ही थे, जिन्होंने मनुष्य के जीवन की हर प्रकार की आग से, पेट की आग को बड़ा माना और सामान्य जन की पीड़ा की नब्ज को पहचाना। कविता में यदि एक ओर ईश्वर को मनुष्य के रूप मे अवतार लेते, भाँति-भाँति की लीलाएँ करते और मनुष्य की भाँति सांसारिक सुख दुख भोगते चित्रित किया, तो दूसरी ओर मनुष्य मे ऐसे गुणों का निर्देशन भी किया है, जो उसे ईश्वर के समकक्ष प्रतिष्ठा दे सकें। इस भक्ति कविता में संसार को असार और माया मानते हुए मोक्ष की सद्गति का आख्यान है, किन्तु जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य के समग्र संस्कारों और भावों की स्थिति भी उनमें है। भक्ति कविता में पाया जाने वाला यह अन्तर्विरोध मध्यकालीन धार्मिक मानसिकता का प्रतिफल है, जिसके गहरे निशान सूर और उनके समानधर्माओं में है। वे अपने नितांत मानवीय तथा लौकिक संदर्भो में ही हमारे लिए प्रासंगिक है। ये मानवीय लौकिक संदर्भ ही सूर तथा अन्य संत और भक्त कवियों की रचना को एक प्रगतिशील अर्थवच्ता प्रदान करते है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. हिन्दी साहित्य का मध्यकाल–डॉ. ईश्वरदत्त शील।
2. रामचरित मानस–गोस्वामी तुलसीदास।
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास–डॉ. नगेन्द्र।
4. हिन्दी साहित्य–युग और प्रवृत्तियॉ–डॉ. शिवकुमार शर्मा।

****

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. I

ऋग्वैदिक देवता एवं प्रकृति

मधुबाला मीणा *

प्रस्तावना – 'वेद' शब्द विद् (जानना) धातु से बना हैं, इसलिए 'वेद' का अर्थ है – 'ज्ञान'। वेद चार हैं – ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद। चारों वेदों में सर्वाधिक प्राचीन एवं सम्मानित वेद ऋग्वेद ही है। ऋग्वेद का अर्थ – ऋचाओं वाला वेद। 'ऋचा' का ही पर्याय है– मन्त्र। 'मन्त्र' का अर्थ है– किसी देवता की स्तुति या प्रशंसा में प्रयुक्त होने वाला पद्यमय वाक्य। इन पद्यों के माध्यम से ही देवों के द्वारा प्राकृतिक उपदेश दिये गये है जो वर्तमान के कलुषित वातावरण में उपयोगी सिद्ध होंगे।[1]

ऋग्वेद का विभाजन दो प्रकार से किया जाता है–

1. मण्डल, अनुवाक्, सूक्त और मन्त्र।
2. अष्टक, अध्याय,वर्ग एवं मन्त्रों के रूप में।

प्रथम विभाजन के अनुसार सम्पूर्ण ऋग्वेद दश मण्डलों में विभक्त हैं। प्रत्येक मण्डल अनुवाको में व अनुवाक सूक्ता में व सूक्त मन्त्रो में विभक्त है। ऋग्वेद में कुल सूक्तो की संख्या 1028 है, प्रथम एवं दशम् मण्डल में सर्वाधिक सूक्त 191 हैं। द्वितीय विभाजन के अनुसार सम्पूर्ण ऋग्वेद (अष्टक) में व अष्टक अध्यायों में, अध्याय वर्गो में तथा वर्ग को मन्त्रों में विभक्त किया गया है। वस्तुत: ऋषि बड़े ही निष्ठावान एवं तप:शील मानव थे। समाधिस्थ अवस्था में इन्होंने अपने परिवेश का अतिक्रमण कर मन्त्रों के दर्शन किय। अत: ऋषियों को वेद मन्त्रों का स्त्रष्टा नहीं दृष्टा कहा गया– ऋशय: 'मन्त्रदृष्टार:'। ऋग्वेद के प्रत्येक मन्त्र का दृष्टा कोई न कोई ऋषि है।

वैदिक वाङ्मय के प्राचीनतम इस ग्रन्थ में आर्यो के धर्म, दर्शन, ज्ञान, विज्ञान, कला तथा साहित्य विषयक उपलब्धियों का एकमात्र यही स्त्रोत है इसके सम्बन्ध में मेक्समूलर का कहला है कि महीतल पर जब तक गिरि व सरिताऍ विद्यमान है, तब तक ऋग्वेद की महिमा बनी रहेगी–

'यावत्स्थास्यन्ति गिरय सरितष्च महीतले।
तावदृग्वेदमहिमा लोकेषु प्रचरिष्यति।।'[2]

ऋग्वेद भाषा एवं भाव की दृष्टि से अन्य वेदों से अधिक मूल्यवान है, इसकी महत्ता गूढ़, दार्शनिक विचारों की दृष्टि से भी कम नहीं है, प्राचीन गृन्थों में इसकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की गई है। तैत्तिरीय संहिता के अनुसार तो जो यज्ञानुष्ठान सामवेद एवं यजुर्वेद के अनुसार किया जाता है,वह शिथिल है, किन्तु ऋग्वेद के द्वारा विहित विधान दृढ़ होता हैं–

'यद वै यज्ञस्य साम्ना यजुषा क्रियते
शिथिलं तत्, यद ऋचा, तद् दृढ़मिति।'

इसी क्रम में ऋग्वेद के विषय का विवेचन करने पर सर्वप्रथम यह देवताओं की स्तुतियों का विशाल संग्रह है, जिनको लक्ष्य कर सूक्त सृष्टि हुई है, उन्हें देवता कहते है। निरूक्तकार **यास्क** ने देवता की व्युत्पत्ति इस प्रकार बतलायी है– **'देवो दानाद् द्योतनाद् दीपनाद् वा।'** (दैवतकाण्ड 1.5)3 अर्थात सम्पूर्ण पदार्थो को देने वाले, लोकों में भ्रमण करने वाले तथा प्रकाशित होने वाले 'देवता' कहते हैं। ये देवता तीन प्रकार के हैं–

1. पृथ्वी स्थानीय
2. अन्तरिक्ष स्थानीय
3. द्युस्थानीय

पृथ्वी स्थानीय देवताओं में प्रमुख है– अग्नि
अन्तरिक्ष स्थानीय में प्रमुख हैं– इन्द्र तथा वायु
द्यु स्थानीय प्रमुख देवता है – सूर्य[4]

अग्नि, इन्द्र,वरूण,विष्णु आदि की स्तुति में अधिक मन्त्र कहे गये।, देवियों में उषा की अधिक स्तुति की गई है, जिसमें काव्य की सुन्दर छटा प्रदर्शित है, इसके अतिरिक्त सविता, पूषा, मित्र, विष्णु, रूद्र, मरूत, पर्जन्य आदि ऋग्वेद के प्रमुख देवता हैं। देवताओं को प्रसन्न करने के लिए मन्त्रों की आवश्यकता होती है और मन्त्र तभी देवताओं को प्रसन्न करता है जब वह छन्दोबद्ध हो, सम्पूर्ण ऋग्वेद छन्दोमय है।[5] विद्धान ने वैदिक छन्दो के उद्‌भव का श्रेय देवों को दिया है यथा– गायत्री का जन्म अग्नि से, उष्णिक का जन्म सूर्य से, अनुष्टुप का जन्म सोम से, वृहती का जन्म बृहस्पति से तथा विराट का जन्म मित्रावरूण से माना है। इन्द्र ने त्रिष्टुप का आविष्कार किया क्योंकि इसी छन्द में इन्द्र की सर्वाधिक प्रशंसा की गई हैं।[6]

ऋग्वेद के विषय वर्णय के इस क्रम में जब देखा जाये तो जिन्हें हम देवता के रूप में स्तुति कर रहे है, वो सभी प्रकृति के तत्व है, इन्हीं तत्वों यथा **'क्षितिजलपावकगगनसमीरा'** से मिलकर हमारा शरीर बना है, जो पूर्णतया प्रकृति को समर्पित है। यहाँ प्रमुख देवताओं का स्वरूप देखते है, जो पूर्णतया प्रकृति को संरक्षित रखने का सन्देश देते है–

1. अग्नि – अग्नि प्रमुख पार्शिव देव है, ऋग्वेदीय देवताओं में इनका प्रमुख स्थान है क्योंकि ये यज्ञ के आधार स्वरूप हैं।[7] ऋग्वेद के लगभग 200 सूक्तों में इसकी प्रख्याति हैं। अग्नि को देवताओं का 'मुख' कहा गया है। शरीर के सारे अंगो का पोषण मुख के द्वारा होता हैं, उसी प्रकार मनुष्य को सारे देवताओं की अनुकम्पा प्राप्ति अग्नि के द्वारा ही सम्भव है, ये गृहस्थों के देवता हैं, अतिथियों के प्रथम अतिथि हैं। निरन्तर घृत के निषेचन के द्वारा अग्नि देदीप्यमान ज्वाला के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित होते हैं। पृथ्वी पर अग्नि रूप में आकाश में विद्युत रूप में तथा स्वर्ग में सूर्य रूप में ये ही विद्यमान रहते हैं। अग्नि के स्वरूप व आकृति का सम्बन्ध निम्न है– यह एक ज्वालामय मस्तक है, जो सभी दिशाओं की ओर उन्मुख है। इसको विभिन्न पशुओं के साथ समीकृत किया हैं, कही इन्हें वृषभ, बछड़ा और कहीं अश्व एवं पक्षी के समान बतलाया गया है। इसकी ज्वालाओं को जिह्वा, दाँत, पीठ, केश, दाढ़ी, जबड़ा कहा गया है। घी की आहुतियों के कारण वह घृतपृष्ठ है। अग्नि को देवताओं का सन्देशवाहक, उन्हें बुलाने वाला तथा ऐश्वर्यों का स्वामी कहा गया है। अग्नि देव उपासकों के लिए धन,वीर सन्तान एवं अन्न प्रदान करे ऐसी कामना की गई है यथा–

'स न: स्तवान आभर गायत्रेण नवीयसा

* व्याख्याता (संस्कृत) राजकीय महाविद्यालय राजगढ़, अलवर (राज.) भारत

रयिं वीरवतीमिषम्।। [8]
अग्निना रयिमश्नवत्, पोषमेव दिवे दिवे।
यशसं वीरवत्तमम् ।।' [9]

अग्नि उपासकों का सदैव कल्याण करता है, वह समस्त प्राणियों को जानता हैं, इसलिए वह 'जातवेदा' नाम से प्रख्यात है। विशेष रूप से वह सन्तान, गार्हस्थ्य मंगल तथा सौख्य समृद्धि को देने वाला है। अग्नि का पूजन भारोपीय काल में भी मान्य और प्रतिष्ठित था, क्योंकि भारतीयों में यह अग्नि पूजन प्रचलित था।

2. वरूण – देवताओं के क्रम में वरूण का महत्वपूर्ण स्थान है।[10] वरूण के व्यक्तित्व में मानवात्वारोपण को भौतिक की अपेक्षा नैतिक क्षेत्र में अधिक पूर्ण विकास हुआ है, वरूण प्राणियों एवं देवों के राजा हैं। साथ ही आकाश में उड़नें वाले पक्षियों के मार्ग को, समुद्र में चलने वाली नौकाओं तथा विशाल उन्नत एवं वायु के व्यापक मार्ग को जानता है, वरूण प्रजाओं से युक्त चैत्र से फाल्गुन तक के बारह महीनों को जानता है और जो वर्ष के साथ उत्पन्न होता है। वरूण को प्रकृति के नियमों का महान अधिपति बतलाया गया हैं। वैदिकोत्तरकालीन पुराकथा शास्त्र में वरूण एक भारतीय नेपचून अथवा समुद्र के देवता कहलाते हैं। वरूण शब्द का अर्थ है 'परिवृत करने वाला' पापियों को अन्धकार की भाँति आच्छादित करने वाला।

3. इन्द्र –इन्द्र ऋग्वेद काल के सर्वाधिक प्रिय एवं राष्ट्रीय देवता हैं।[11] ऋग्वेद का यह मन्त्रांष – 'यो जात एव प्रथमो मनस्वान् देव:' [11A] जो मनस्वी देवता उत्पन्न होते ही प्रथम हो गया इस बात को धोतित करता है कि इन्द्र समस्त देवताओं में प्रथम स्थान रखता है। मन्त्रों की संख्या की दृष्टि से इन्द्र के प्रति सर्वाधिक मन्त्र समर्पित हैं, लगभग 250 सूक्त इन्द्र की स्तुति से सम्बन्धित हैं जो समस्त ऋग्वेद का चतुर्थांश हैं। यह प्रमुखत: आकाशीय गर्जन का देवता हैं। दैत्यों से जल की मुक्ति अर्थात वर्षा इनके पुराकथा शास्त्रीय सारतत्व का निर्माण करता है। ऋग्वेद में देवताओं के नेता के रूप में इन्द्र ऐतिहासिक भूमिका निभाते हैं। इन्द्र देवों में सर्वश्रेष्ठ होने से 'देवेश' व देवेन्द्र कहलाते है। घोड़े, गाय, गांव और रथ जिसकी आज्ञा में हैं, जिसने सूर्य और उषा को उत्पन्न किया हैं, जो जल के नेता हैं, वह इन्द्र हैं–

'यस्याश्वास: प्रदिशि यस्य गावो
यस्य ग्रामा: यस्य विश्वे रथास:।
य: सूर्य य: उषसं जजान
जे अपां नेता स जनास इन्द्र: ।।''[12]

इन्द्र को जल वर्षा करने वाला देव कहा गया हैं। अनेक उषाओं को प्रवाहित किया हैं। इन्द्र ने वृत्र का वध करके जल–धाराओं को प्रवाहित किया है। इन्द्र के गुणों में प्रमुखत: भौतिक संसार का प्रभुत्व एवं प्राकृतिक श्रेष्ठता का भाव लक्षित होता है।

4. क्षेत्रपति –'क्षेत्रपति' का रक्षक देवता के रूप में महत्वपूर्ण स्थान है।[13] 'क्षेत्रपति'' का विग्रह है– 'क्षेत्रस्य पति: इति क्षेत्रपति :'' अर्थात खेतों का रक्षक देवता। जिस प्रकार सांसारिक जीवन में मनुष्य अपने मित्र. की सहायता से विजय प्राप्त करता है, उसी प्रकार 'क्षेत्रपति' की सहायता से प्राणी सर्वत्र विजय प्राप्त करता हैं। इस देवता का ऋग्वेद में पशु अथवा अश्व प्रदान करने एवं आकाश, पृथ्वी, पौधों तथा जलों को मधु से परिपूर्ण करने के लिए आवाह्न किया गया है। इनके ऋषि वामदेव हैं, वे प्रार्थना करते हैं कि आप हमारी गायों तथा अश्वों को पुष्ट करें तथा हमें देने योग्य धन देकर हमारा कल्याण करें – **'गामश्वं पोशयित्वा स नो मृलातीदृशे।''**[14] और कहा गया है कि वे हल चलाने वाले पशुओं को सुखी रखें। मनुष्य भी सुख–पूर्वक हल चलाएँ। हल की फाल सुखपूर्वक खेतों को खोदें, रस्सियाँ सुख से पशुओं को बांधे, पशुओं पर चावुक का प्रयोग निर्ममतापूर्वक न किया जाए। यथा –

'शुनं वाहा: शुनं नर: शुनं कृषतु लाङ्गनम्।
शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिंग्य:।।''[15]

सूक्त में 'सीता' अर्थात हल से जोती गई भूमी की भी स्तुति की गई हैं क्योंकि उसी से सभी प्रकार की शास्त्र सामग्री उत्पन्न होती है, यथा –

'अर्वाची सुभगे भव सीते वन्दामहे त्वा।
यथा न: सुभगाससि यथा न: सुफलाससि।।''[16]

अन्तिम मन्त्र में ऋषि ने कामना की है कि 'हलों के फाल, बैल आदि हम लोगों के लिए सुख पूर्वक भूमि को खोदें, कृषि कर्म करने वाले किसान सुख को प्राप्त करें। बादल जलों को सुखपूर्वक वर्षा करें, कृषि कर्म करने वाले स्वामी एवं भृत्य सुखी हो । इस प्रकार क्षेत्रपति सूक्त कृषि, किसान, कृषि के विविध साधन आदि के सम्बन्ध में है। सभी के लिए इसमें मंगल कामना की गई है तथा खेतों से फसल प्रचुर मात्रा में सुख–पूर्वक हो ऐसी प्रार्थना की गई है। पौराणिक कथा की भी इंगित किया है कि महाराज दषरथ को सीता हल के फाल से भूमि को जोतने पर मिली थी।

5. विश्वेदेवा – 'विश्वेदेवा' अर्थात् 'सम्पूर्ण देव समूह'। ऋग्वेद[17] में लगभग 40 ऐसे सूक्त हैं जिसमें एक सूक्त में अनेक देवताओं की स्तुतियाँ की गई है, कोई एक सूक्त एक देवता विशिष्ट का न होकर अनेक देवताओं से सम्बन्ध होता है, तो उसे विश्वेदेवा: कहा जाता हैं, इन्हे सर्वदेव भी कहते हैं। एक मन्त्र का भाव है कि अपने जीवन–यज्ञ का सम्पादन करते हुए प्राणी स्वयं अनुभव करने लगता है कि अकेला ही अग्नि देव अनेक रूपों में प्रदीप्त किया जाता हैं। अकेला सूर्य सम्पूर्ण संसार के जन्म–मरण के चक्र का संचालन करता हैं, एक ही उषा सम्पूर्ण संसार को अपनी ज्योति से चमत्कृत करती हैं। एक ही ब्रह्म सम्पूर्ण संसार में व्याप्त है यथा–

'एक एवाग्निर्बहुधा समिद्ध:
एक: सूर्यो विश्वमनु प्रभूत:।
एकैवाषा सर्वामिद विभाति
एकं व इदं बभूव सर्वम्।।''[18]

ये मन्त्र वस्तुत: एकेश्वरवाद की ओर ध्यान आकर्षित करता हैं। इस सूक्त में मानव– जीवन के देवों की प्रारम्भ में बात कहकर फिर देवों के देव परमेष्वर की सर्वोत्कृष्टता का उल्लेख किया गया हैं।

6. प्रजापति (हिरण्यगर्भ) – ऋग्वेद के सृष्टिवाद सम्बन्धी दार्शनिक विचारधाराओं में 'हिरण्यगर्भ'सूक्त का विशेष स्थान है ऋग्वेद[19] के दशम मण्डल का 121 वाँ सूक्त है, जिसके देवता हिरण्यगर्भ रूप 'क' है।

इस सूक्त में 10 मन्त्र हैं। हिरण्य गर्भ ने अकेले ही अकाश एवं पृथ्वी को धारण किया है अर्थात सर्वशक्तिमान था। अमरता एवं मृत्यु को प्रजापति की छायां कहा हैं। संसार के द्विपाद् व चतुष्पाद् सभी का वह स्वामी है–

'ये ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पद:
कस्मै दवाय हविषा विथेभम।।'

पंचम मन्त्र में आकाश को उच्च बनाने वाला, पृथिवी को दृढ़ करने वाला, स्वर्ग को स्थिर करने वाला तथा सूर्य को आकाश में स्थापित करने वाला प्रजापति ही बताया गया है, आकाश में जल को उत्पन्न करने वाला भी वही है। उत्तर कालीन साहित्य में यह प्रमुखत: ब्रह्म कह व्यक्तिगत उपाधि हैं।

7. संज्ञान – 'संज्ञान सूक्त' ऋग्वेद संहिता के दशम मण्डल का अन्तिम सूक्त हैं,20 इसमें केवल चार मन्त्र है किन्तु उनका उद्देश्य मानव समाज में एकता स्थापित करना है जिस प्रकार प्राचीनकाल में एक मत से रहने वाले

देवजन सेवनीय कार्यो के भाग को मिलाकर व एक स्थान पर बैठकर करते थे, उसी प्रकार स्रोताओं को करने की प्रेरणा दी हैं। चतुर्थ मन्त्र में समानता एवं एकता की बात कही गई है, यथा–

'**समानी व आकृति: समाना हृदयानि व:।**
समानमस्तु वो मनो यथा व: सुसहासति।।'[21]

अर्थात आप सबके संकल्प भाव एक जैसे हो, सबके हृदय समान हो, सबका मन समान हो जिससे सब मिलकर एक स्थान पर रह सकें तथा एकता के सूत्र में बँधकर कार्य कर सकें। यदि इस प्रकार की भावना सम्पूर्ण राष्ट्र के नागरिकों में उत्पन्न हो जाए तो राष्ट्र पूर्णरूपेण सुसंगठित होकर कार्य कर सकता हैं। वर्तमान में भारत जैसे राष्ट्र में जहाँ जाति,भाषा, विचार आदि को लेकर अनेक मतमातान्तर हैं, वहाँ इस सूक्त का अत्यधिक महत्व हैं। भावनात्मक एकता की दृष्टि से ये मन्त्र विशिष्ट महत्व के हैं।

8. विष्णु – ऋग्वेद के प्रथम मण्ड़ल के 154 वें सूक्त में विष्णु की स्तुति की गई हैं, 22 ऋषि दीर्घातमा द्वारा 6 ऋचाओं में यह स्तुति की गई है। ऋग्वेद से अधिक आर्य देवतओं ने विष्णु शब्द 'विष्लृ व्याप्तौ' धातु से बना हैं, जिसका अर्थ है – तीनों लोकों को प्रकाशित करने वाला। विष्णु को संसार का रक्षक एवं अनन्त शक्ति–सम्पन्न कहा गया हैं। पार्शविक शाक्ति की अपेक्षा उनकी बौद्धिक शक्ति प्रबल हैं, इसलिए वह सब देवताओं में सबसे अधिक चतुर हैं। चतुर होने के कारण ही समुद्र मंथन के समय अमृत–पान के सम्बन्ध में देवों–दानवों की लड़ाई को दूरकरने के लिए मोहिनी रूप धारण किया था।

विष्णु का अर्थ है– क्रियाशील। पुराणों के अनुसार विष्णु लोक को गोलोक कहा गया हैं। वृहदारण्यक उपनिषद के अनुसार विष्णु वह शक्ति हैं, जो इन्द्रियों और आत्मा को उनके कर्मो के अनुसार नियुक्त करती है, इस प्रकार विष्णु शरीर के अधिष्ठाता देवता हैं।

निष्कर्ष रूप से भारत वर्ष की अमूल्य सम्पत्ति के रूप में जिन वेदों का महत्व विश्व में निरपवाद रूप से स्वीकार किया हैं उस समय हमारा समाज ग्राम–प्रधान, कृषि–प्रधान तथा एक समृद्ध, वैचारिक रूप से विकसित और सुशासित जन समूह था। ऋग्वेद काल में नारियों को समाज में वही प्रतिष्ठा दी जाती थी जो कृषि और पशुपालन सबसे बड़े आर्थिक कार्य बतलाये गये हैं। प्रत्येक ऋतु में विशेषकर फसल काटने के अवसरों पर यज्ञों और महोत्सवों के वर्णन तथा मनोविनोदों के उल्लेख मिलते हैं।[23] अन्न का महत्व ऋग्वेद में विस्तार से वर्णित हैं, इसमें वर्ण व्यवस्था की मनोवैज्ञानिकता, माता–पिता, गुरू एवं अतिथि का सम्मान, कर्मपरायणता आदि के विषय मानव को उच्छृंखलता की ओर जाने से रोकते हैं। हवन आदि याज्ञिक क्रियाएँ अन्तरिक्ष में व्याप्त होकर वर्षा के रूप में पुन: पृथ्वी पर जल, अन्न आदि की वृद्धि करती हैं। मानव–कल्याण की दृष्टि से अत्यधिक महत्व का विषय प्रतीत होती हैं। वैदिक सूक्तों[24] में वर्णित राजधर्म, राष्ट्र धर्म, समाज व्यवस्था, अध्यात्म आदि के विषय आज भी विश्वमानव के कल्याणार्थ पर्याप्त प्रशस्य हैं। वैदिक यज्ञवाद दिव्य शक्तियों से मानव कल्याण का शुभाकांक्षी कहा जा सकता है। प्रकृति प्रेम की अगाध भावना मानव को प्रकृति से जोड़ती हैं। वेदोक्त कर्मवादी दृष्टिकोण भी मानव के लिए अत्यधिक उपादेय कहा जा सकता हैं। ऋग्वेद में मानव के लिए निश्छल एवं सरल धर्म का प्रतिपादन किया गया हैं। इस प्रकार ऋग्वेद के प्रमुख देवता अग्नि, वरूण, इन्द्र, क्षेत्रपति, विश्वेदेवा, प्रजापति, संज्ञान, विष्णु इत्यादि सभी पूर्णतया प्रकृति का ही रूप है जो प्राचीन समय में अन्न,धन,पुत्र,जल, इत्यादि प्रदान करते थे वर्तमान में भी अग्नि प्रथम देवता माना जाता है इन्द्र को वर्षा का देवता माना जाता हैं। विष्णु को पालनकर्ता माना जाता हैं। इस प्रकार ऋग्वैदिक देवताओंका प्रकृति से अविनाभाव (प्रगाढ़) सम्बन्ध हैं। जो वर्तमान के पर्यावरणीय असन्तुलन को रोकने के लिए अति आवश्यक है, इसलिए तन–मन–धन को स्वस्थ्य रखने के लिए प्राचीन संस्कृति के मूल तत्व (वेदों) की और लौटना होगा, उनके देवताओं को पूजना होगा। तभी हमारी प्रकृति अपनी खोई हुई रंगत प्राप्त कर सकेगी व हम सभी स्वस्थ्य व दीर्घायु होगें।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. शर्मा, विश्वनाथ – ऋक् सूक्तावलि पृ0सं0 – 1
2. ओझा, श्रीकृष्ण – वैदिक सूक्त कुसुमांजलि पृ0सं0 – 3,4
3. यास्क–निरूक्त –दैवतकाण्ड – 1.5
4. शर्मा, विश्वनाथ – पूर्वोक्त – पृ0सं0 –2
5. ओझा, श्रीकृष्ण – पूर्वोक्त – पृ0सं0 –5
6. ऋग्वेद –2.12.1,2,3,4,7,8,9
7. ऋग्वेद – 1.12
8. तदैव – 1.12.11
9. तदैव – 1.1.3
10. तदैव – 1.25
11. तदैव – 2.12
11(A)तदैव – 2.12.1
12. तदैव – 2.12.7
13. तदैव – 4.57
14. तदैव – 4.57.1
15. तदैव – 4.57.4
16. तदैव – 4.57.6
17. तदैव – 8.58
18. तदैव – 8.58.2
19. तदैव – 10.121
20. तदैव – 10.191
21. तदैव – 10.191.4
22. तदैव – 1.154
23. शास्त्री, देवर्षि कलानाथ – संस्कृत साहित्य का इतिहास –संस्करण–2009 पृ0सं0 – 24, 27
24. त्रिपाठी, रामनारायण – भारतीय संस्कृति के मूल तत्व – संस्करण द्वितीय–2005, पृ0सं0 – 254

****

मानसिक स्वास्थ्य में योग की भूमिका

सन्जू यादव *

प्रस्तावना – स्वास्थ्य मनुष्य की अमूल्य निधि है। इसी पर मनुष्य की प्रसन्नता, खुशहाली, समृद्धि एवं क्रिया कलाप निर्भर होते हैं। स्वस्थ रहना सबसे बड़ा सुख है। कहावत भी है– **'पहला सुख निरोगी काया'** व्यक्ति तभी अपने जीवन का पूरा आनन्द उठा सकता है, जब वह शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ रहे। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है। इसलिए मानसिक स्वास्थ्य के लिये भी शारीरिक स्वास्थ्य अनिवार्य है। महाकवि कालिदास रचित कुमारसम्भव् में भगवान शिव ने कहा है कि–**'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्'**

अर्थात् यह शरीर ही धर्म का श्रेष्ठ साधन है, अत: शरीर स्वस्थ होने पर ही कार्यों को सफलता पूर्वक सम्पादित किया जा सकता है। स्वस्थ व्यक्ति ही अपने भाग्य का निर्माण कर सकता है। स्वास्थ्य वह ठोस आधार है जिस पर व्यक्ति, समाज, देश तथा राष्ट्र का भाग्य निर्भर होता है, परन्तु स्वास्थ्य क्या है । इस संबंध में अनेक विचार हैं, जो एक प्रकार का भ्रम उत्पन्न कर देते हैं।

स्वास्थ्य का अर्थ एवं परिभाषा – स्व में स्थित हो जाना स्वास्थ्य है अर्थात् अपने स्वरूप को पहचानना अपने कर्त्तव्यों का पालन करना तथा मानव मूल्यों को आत्मसात करना स्वस्थ व्यक्ति के लक्षण हैं। आयुर्वेद में स्वस्थ व्यक्ति की परिभाषा अत्यन्त व्यापक रूप से वर्णित है, मात्र रोग रहित रहना ही स्वस्थता नहीं है अपितु जिस व्यक्ति के दोष एवं अग्नि सम हो आत्मा, इन्द्रिय, एवं मन प्रसन्न हो तभी उसे स्वस्थ मानते हैं।[1]

आयुर्वेद के अनुसार शरीर की समस्त क्रियाएं तीन कारणों से होती है, वात, पित्त तथा कफ। इन्हीं कारणों के कारण सभी कार्यों का प्रादुर्भाव हुआ है। यदि ये कारक समुचित रूप से कार्य करते रहें, साथ ही साथ यदि अन्न का पाचन ठीक से होता रहे, सातों धातुओं की साम्यवस्था बनी रहे तथा मल का निष्कासन ठीक प्रकार से होता रहे एवं मन प्रसन्न रहे तो वह व्यक्ति स्वस्थ है।[2]

यहाँ कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाओं का उल्लेख कर रहे हैं–

प्लानिंग कमीशन[3] – स्वास्थ्य एक सकारात्मक कल्याण की दशा है। जिसमें व्यक्ति मानसिक तथा शारीरिक क्षमताओं का सामंजस्य पूर्ण ढंग से विकास करके जीवन की पूर्ण समृद्धता तथा पूर्णता का आनन्द लेता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन[4] – स्वास्थ्य केवल अपंगुता की अनुपस्थिति ही नहीं है बल्कि एक पूर्ण शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक कल्याण की स्थिति है।

यदि हम उपरिलिखित परिभाषाओं का विश्लेषण करें तो स्वस्थ व्यक्ति वह है, जो रोग रहित हो, व्यक्तित्व में समरूपता तथा सामंजस्यता हो, जैविकीय, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक क्षमताओं का समुचित समन्वय हो तथा अन्तर्निहित तथा बाह्य शक्तियों में संतुलन हो।

स्वास्थ्य के अंग – यदि हम विश्व स्वास्थ्य संगठन की परिभाषा का अवलोकन करें तो ज्ञात होता है कि स्वास्थ्य के तीन प्रमुख अंग है–

1. शारीरिक स्वास्थ्य
2. मानसिक स्वास्थ्य एवं
3. सामाजिक स्वास्थ्य।

योग चौथे अंग को विशेष महत्त्व देता है, वह है आध्यात्मिक स्वास्थ्य।

शारीरिक स्वास्थ्य से तात्पर्य शारीरिक क्रियाओं की समानता तथा शारीरिक अंगों की सापेक्ष कार्यात्मकता से होता है, यदि शरीर के बाह्य तथा आन्तरिक अंग सामान्य रूप से काम करते रहते हैं, तो शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा माना जाता है।

मानसिक स्वास्थ्य एक मानसिक स्थिति है जिसमें व्यक्ति अपने दिन प्रतिदिन कार्यों के करने में कोई कष्ट अनुभव नहीं करता है, अपने आपको सुरक्षित समझता है तथा व्यक्तित्व संगठित होता है। सारांश में कहा जा सकता है कि मानसिक स्वास्थ्य व्यक्ति की वह मानसिक स्थिति है जो व्यक्तित्व की सम्पूर्ण समन्वित क्रिया को दर्शाती है।[5]

सामाजिक स्वास्थ्य वह दशा है, जो व्यक्ति की सामाजिक पर्यावरण से समायोजन की स्थिति तथा सम्बन्धों को स्पष्ट करती है। सामाजिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति अपने कार्यों का सही सम्पादन करता है, दूसरों का मान सम्मान करता है, परिस्थितियों से उचित समायोजन करता है तथा सद्भावना, प्रेम, सहानुभूति एवं त्याग से ओत–प्रोत होता है।[6]

आध्यात्मिक स्वास्थ्य वह अवस्था है जो व्यक्ति को ईश्वरीय सत्ता से सम्बन्ध स्थापित करते हुये जनकल्याण की ओर अग्रसित होने की स्थिति स्पष्ट करती है। आत्मा ईश्वर का अंश है। अत: व्यक्ति जब तक अपने को ईश्वर का अंश मानता है अर्थात् प्रकृति के बनाये नियमों का पालन करता है, तभी तक पूर्ण स्वस्थ रहता है।

मानसिक स्वास्थ्य अर्थ एवं परिभाषा – यह सर्वविदित है कि शरीर के विभिन्न तंत्रों के कार्यो का समन्वय तथा अन्तर्सम्बन्ध मस्तिष्क के द्वारा स्थापित किया जाता है। यदि मस्तिष्क में विभिन्न प्रकार की सूचनाऐं एवं संवेदनाऐं सही रूप में पहुँचती हैं। तथा उनकी व्याख्या सही रूप में होती है, तो परिस्थिति के अनुरूप प्रत्युत्तर होते हैं, लेकिन वर्तमान समय में अनेकानेक समस्याओं तथा जटिलतम परिस्थितियों के कारण न तो संवेदनाऐं तथा सूचनाऐं मस्तिष्क में सही रूप से पहुँचती हैं और न ही उनकी व्याख्या पक्षपात रहित सम्भव होती है। इस कारण मन–मस्तिष्क में सदैव असमंजस की स्थिति बनी रहती है। यह असमंजस की स्थिति जब बढ़ जाती है, तो तनाव उत्पन्न कर देती है। आज इसी कारण से व्यक्ति मानसिक तनाव से दिनोंदिन ग्रसित होता चला जा रहा है। परिणामस्वरूप वह शरीर तथा मन से रोग जटिलता में फंसता चला जा रहा है।

मानसिक स्वास्थ्य व्यक्ति के सम्पर्णू व्यक्तित्व की समन्वित क्रिया है। व्यक्ति में बहुत सी प्रेरणा, लालसाऐं, इच्छाऐं तथा रूचियाँ होती हैं, जिनकी

* शोधार्थी (संस्कृत) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

पूर्व अभिव्यक्ति एवं उचित समन्वय आवश्यक होता है। इस आधार पर मानसिक स्वास्थ्य के लिये तीन बातें प्रमुख हैं- क्षमताओं की पूर्ण अभिव्यक्ति, शक्तियों में एकीकरण तथा मूल एवं अर्जित प्रेरणाओं का सामान्य लक्ष्य की ओर गमन।[7]

मानसिक स्वास्थ्य के संदर्भ में महत्वपूर्ण विद्वानों के विचार निम्नलिखित हैं-

क्लीन, डी.पी. – मानसिक स्वास्थ्य एक दशा है, जिसमें मधुर एवं सन्तोषप्रद सम्प्रेरणात्मक व्यवहार के तरीके होते हैं। उसमें योग्य तथा अयोग्य मूल प्रवृत्तियों में, क्षणिक इच्छाओं तथा दीर्घकालीन उद्देश्यों तथा व्यक्तिगत आदर्शों एवं उपलब्धियों के तथ्यों में कम से कम संघर्ष होता है।

विश्वस्वास्थ्य संगठन – मानसिक स्वास्थ्य का संबंध केवल व्यक्ति से ही नहीं होता अपितु व्यक्ति के समुदाय से भी होता है, जिसमें वह रहता है। समाज जिसका समुदाय एक भाग होता है तथा सामाजिक संस्थाऐं जो उसके अधिकांश जीवन को निर्देशित करती हैं। जीवन शैली, कार्य पद्धति, धनोपार्जन के तरीके, व्यय के तरीके, प्रसन्नता प्राप्त करने के तरीके जिनमें स्थायित्व तथा सुरक्षा निश्चित होती है।[9]

सरटोरियस, एन. – मानसिक स्वास्थ्य व्यक्ति तथा उसकी चारों तरफ की दुनियां के बीच संतुलन की स्थिति, व्यक्ति तथा संबंधित दूसरों के बीच समरसता की स्थिति, आत्मा की वास्तविकताओं तथा दूसरे लोगों की वास्तविकताओं एवं पर्यावरण के मध्य सह अस्तित्व की स्थिति है।[10]

यौगिक दृष्टि में मानसिक स्वास्थ्य – भारतीय विचारधारा में व्यक्ति का अस्तित्व आत्मा पर निर्भर है, न कि मन पर। यहाँ मन का अस्तित्व आत्मा के उपकरण से अधिक कुछ भी नहीं है। जीवन का चरम ध्येय यहाँ अपने वास्तविक स्वरूप आत्म तत्व की उपलब्धि है। इसी को मोक्ष, मुक्ति, निर्वाण, आत्म साक्षात्कार, भगवद प्राप्ति जैसे विविध नामों से विवेचित किया गया है। यौगिक दृष्टि से यही स्थिति व्यक्ति के अस्तित्व की पूर्णावस्था है। इसी अवस्था में व्यक्ति को मानसिक रूप से पूरी तरह स्वस्थ कहा जा सकता है।

योग दर्शन में मानसिक स्वास्थ्य की समस्या पर आत्यान्तिक रूप से विचार किया गया है, जिसका आधुनिक विज्ञान वर्तमान में ठीक से कल्पना तक नहीं कर पाया है। महर्षि पतञ्जलि ने इस स्वस्थ मन:स्थिति को उपलब्ध करने का सुव्यवस्थिति राजमार्ग निर्धारित किया है, जो अष्टांग योग के नाम से प्रख्यात है। इसमें मानसिक स्वास्थ्य की आदर्श स्थिति को समाधि के रूप में परिभाषित किया गया है और इस तक पहुँचने के विविध सोपानों पर समग्र दृष्टि से विचार किया गया है। चित्तवृत्ति के निरोध की चरमावस्था समाधि है और यौगिक दृष्टि से यही मानसिक स्वास्थ्य की सामान्य अवस्था है। इससे पूर्व चित्तवृत्तियों की विभिन्न अवस्थाओं के अनुरूप हम मानसिक स्वास्थ्य के विविध स्तरों का विवेचन कर सकते हैं। 11 योगदर्शन अनुसार चित्त की पांच अवस्थाऐं हैं[7]-

1. मूढ, 2. क्षिप्त, 3. विक्षिप्त, 4. एकाग्र और 5. निरूद्ध। इनका वर्णन निम्नवत् है।

चित्त की मूढ़ावस्था – यह चित्त की वह अवस्था है, जिसमें तमोगुण प्रधान रहता है। इस अवस्था में रजस और तमस दबे रहते हैं। अत: मनुष्य निद्रा, तन्द्रा, आलस्य, मोह, भय, भ्रम एवं दीनता की स्थिति में पड़ा रहता है। इस अवस्था में व्यक्ति की सोच-विचार की शक्ति कुन्द पड़ी रहती है। परिणामस्वरूप वह किसी भी व्यक्ति को ठीक से नहीं देख सकता। वह समझ ही नहीं पाता कि क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिऐ। काम, क्रोध, मोह, लोभ के वशीभूत होकर वह सब तरह से अवांछनीय और नीच कर्म करता है। यह अवस्था मानवीयता से पतित व्यक्ति, मादक द्रव्यों का सेवन किऐ हुए उन्मत एवं नीच मनुष्य की होती है। इस अवस्था में तमस प्रबल रहता है। जिससे यह स्थिति अधम मनुष्यों की मानी जाती है। इस प्रकार इस तरह से विचलित व्यक्ति की मानसिक स्थिति मानसिक एवं रूग्ण होती है।[12]

चित्त की क्षिप्तावस्था – यह चित्त की रजोगुण प्रधान दशा है। जिसमें सत्व और तमस दबे रहते हैं। इस अवस्था में चित्त अति चंचल रहता है, जो निरंतर अपने सुख साधनों के पीछे भागता रहता है। यह मन की बहिर्मुखी स्थिति है, जिसमें चित्त विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों द्वारा सब तरह दौड़ता रहता है। अत: इन्हीं के अनुरूप मानव सुख-दु:ख, हर्ष-विषाद, चिंता एवं शोक के कुचक्र में उलझा रहता है। इस अवस्था में चित्त रजोगुण प्रधान होता है किन्तु गौणरूप से सत्व और तमस भी उसके साथ में रहते हैं। उनमें जब तमस सत्व को दबा देता है तो अज्ञान, अधर्म, अवैराग्य, अनैश्वर्य में प्रवृत्ति होती है। इस तरह इस अवस्था में धर्म-अधर्म, राग-वैराग्य, एश्वर्य-अनैश्वर्य में प्रवृत्ति होती है। प्राय: साधारण संसारी मनुष्य की यही स्थिति होती है।

व्यक्ति का व्यवहार यदि इस स्थिति में सांमजस्य पूर्ण है, तो उसे स्वस्थ एवं सामान्य कहा जायेगा। किन्तु इस अवस्था में व्यक्ति विविध प्रकार के मानसिक विकारों से आक्रान्त रहता है। यौगिक दृष्टि से यह स्थिति मानसिक स्वास्थ्य की स्थित से बहुत दूर है और उसे योग की सर्वथा अनुपयुक्त दशा माना जाता है।[13]

चित्त की विक्षिप्तावस्था – इस अवस्था में सत्व गुण की प्रधानता रहती है तथा अन्य दोनों गुण रजस व तमस दबे रहते हैं।[14] इसमें व्यक्ति ज्ञान, धर्म वैराग्य और ऐश्वर्य की तरह प्रवृत होता है। इस अवस्था में काम, क्रोध, मोह, आदि गौण हो जाते हैं। सांसारिक विषय भोगों के प्रति रूचि नहीं रहती है एवं व्यक्ति निष्काम कर्म में प्रवृत्त हो जाता है। किन्तु चित्त की स्थिरता स्थायी नहीं रहती। बीच-बीच में रजस के उभार के कारण आंशिक अस्थिरता एवं चंचलता आ जाती है।

इस अवस्था में एकाग्रता प्रारम्भ हो जाती है और यहीं से समाधि का प्रारम्भ होता है। इस चित्त की अवस्था वाला मनुष्य सुखी, प्रसन्न, उत्साही, धैर्यवान, दयालु, वीर्यवान, क्षमाशील और उच्च विचार वाला तथा श्रेष्ठ होता है।

आधुनिक मान्यताओं की दृष्टि से इस अवस्था तक पहुँचा व्यक्ति अधिकांश कसौटियों पर सर्वथा सामान्य एवं मानसिक रूप से स्वस्थ ही माना जायेगा।[15]

चित्त की एकाग्र अवस्था – चित्त की इस अवस्था में चित्त विशुद्ध रूप हो जाता है और रजस एवं तमस तो नाममात्र के ही रह जाते हैं। अत: रजोगुण एवं तमोगुण के विक्षेप रूक जाने से वृत्तियों का प्रवाह एक ही दिशा में बना रहता है,तथा सतोगुण की प्रधानता के कारण चित्त निर्मल स्फटिक मणि के समान पवित्र और स्थित हो जाता है तब उस अवस्था को एकाग्र अवस्था कहते हैं।[16]

इस अवस्था में पूर्व में अनुभूत बाह्य विषयों के संस्कार अवश्य बने रहते हैं जो कभी-कभी आकस्मिक रूप से जागृत होकर साधना में विध्न उपस्थित करते रहते हैं, किन्तु प्राय: चित्त एकाग्र ही रहता है। समस्त विषयों से हटकर एक ही विषय पर ध्यान लग जाने के कारण यह समाधि के लिये उपयुक्त अवस्था है।

इस समाधि से विषयों का यथार्थ ज्ञान, क्लेशों की समाप्ति, कर्मबन्धन का ढीला पड़ना तथा निरोधावस्था पर पहुँचना, ये चार कर्म सम्पादित होते हैं। इस अवस्था में साधक को अणु परमाणुओं से लेकर महत तत्त्व पर्यन्त समस्त विषयों का साक्षात्कार (यथार्थ ज्ञान) प्राप्त हो जाता है।[17] चित्त की

इसी अवस्था को सम्प्रज्ञात समाधि भी कहते हैं। यह अवस्था योगियों की होती है।

निरूद्ध अवस्था – इस अवस्था में चित्त की सम्पूर्ण वृत्तियों का निरोध हो जाता है। चित्त में स्थिरता पूर्ण रूप से स्थापित हो जाती है। एकाग्र अवस्था में साधक को आत्मा और चित्त के भेद का साक्षात् हो जाता है। योगी की यह स्थिति 'विवेक ख्याति' है, किन्तु विवेक ख्याति भी चित्त की एक वृत्ति है। अत: इसका भी निरोध आवश्यक है। इस उच्चतम सात्विक का निरोध वैराग्य द्वारा किया जाता है और साधक चित्त की निरूद्ध अवस्था में पहुँचता है। इसमें चित्त आत्मा स्वरूप में स्थित हो जाता है, जिसमें अविद्या आदि पांच क्लेश नष्ट हो जाते हैं। इसको असम्प्रज्ञात समाधि अथवा निर्बीज समाधि भी कहते हैं।

निष्कर्षत: इन पाँच अवस्थाओं में तीन योग (समाधि) के लिये नितांत अनुपयोगी हैं, परन्तु अन्तिम दो अवस्थाओं में योग का उदय होता है। इनमें सत्व की प्रधानता रहती है, अत: इनमें कोई रोग उत्पन्न नहीं होता है। विविध मानसिक रोग मन की मूढ़ एवं क्षिप्त अवस्थाओं में उदभूत होते हैं, आधुनिक मनोविज्ञान में प्रथम तीन अवस्थाओं का अध्यन हुआ है। मानसिक स्वास्थ्य की समग्र संकल्पना इसी सीमा में बंधे रहने से संभव नहीं है। समग्र मानसिक स्वास्थ्य का उदभ्व चित्त की अन्तिम दो अवस्थाओं से उद्भूत हुआ है, जिसे आधुनिक मनोविज्ञान असामान्य श्रेणी में विभाजित करता है। इस तरह यौगिक दृष्टिकोण मानवीय अस्तित्व पर समग्रता से विचार करता है और अपनी यौगिक क्रियाओं द्वारा मानवीय चेतना के गहनतम स्तरों का उपचार करते हुये समग्र मानसिक स्वास्थ्य का पथ प्रशस्त करता है।[18]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. समदोष: समाग्निश्च समधातुमलक्रिया:। प्रसन्नात्येन्द्रियमन: स्वस्थ इत्यभिधीयते।। सु. सू. 15.42
2. अन्नमशिंत त्रेधा विधयते तस्य य: स्थविष्टो धातु स्तत्पुरीषं भवति। यो मध्यमस्तन्यांस योऽणिष्ठस्तन्मन:। छन्दोग्य उप. 9.15
3. Planning Commission, Govt. of India, First Five Year Plan 1950-1955
4. WHO. 1948
5. चिकित्सा उपचार के विविध आयाम, वाङ्मय, खण्ड–40, श्री राम आचार्य शर्मा पृ. 3:15
6. Culture an Mental Disorders, Ralph LInton, P. 637
7. योग साइकोलोजी, स्वामीराम, पृ. 103
8. Klein D.B. - Mental Hygiene, Henry Holt & Co. New York. 1955, P.5
9. W.H.O. - Mental Health and Mental Illness in the world of today, Fearture series, 7, April, 1959
10. Sartoriues, N.W.H.O. Bulletin, 61 (i) 1983, P.5
11. योग एवं मानसिक स्वास्थ्य, सुरेश वर्णवाल, पृ. 34
12. योगदर्शन, आचार्य श्री राम शर्मा, पृ. 14
13. भरतीय दर्शन की रूपरेखा, हरेन्द्र प्रसा सिन्हा, पृ. 335
14. भारतीय दर्शन, बलदेव उपाध्याय, पृ. 264
15. योग दर्शन,आचार्य श्रीराम शर्मा, पृ. 14
16. योग दर्शन,आचार्य श्रीराम शर्मा, पृ. 14
17. भरतीय दर्शन की रूपरेखा, हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, पृ. 336
18. भारतीय दर्शन, आचार्य बलदेव उपाध्याय, पृ. 294

****

भारतीय चित्रकला में पहाड़ी शैली एक सुंदर अध्याय - (1700 ई. से 1900 ई. तक)

डॉ. यतीन्द्र महोबे *

प्रस्तावना - 20 वीं शताब्दी के आरम्भ में हिमाचल और पंजाब में ऐसे बहुमूल्य चित्रों का पता चला जिसने भारतीय चित्रकला में एक सुंदर अध्याय जोड़ दिया। इस शैली में अंकित मानवाकृतियाँ उन्नत एवं श्रेष्ठ है।

'मैटकाफ सबसे पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने कांगड़ा में पहाड़ी चित्रों की खोज की थी। उसके बाद 20 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में श्री आनंद कुमार स्वामी ने इन चित्रों की आगे खोज की।'[1]

राजपूत शैली की खोज का श्रेय सर्वप्रथम डॉ. आनंद कुमार स्वामी को ही जाता है। उन्होंने इसे दो भागों में विभक्त किया है। प्रथम राजस्थान से प्राप्त चित्र कृतियाँ, दूसरी पंजाब के पहाड़ी राज्यों में प्राप्त चित्रकृतियाँ। नवीनतम मान्यताओं के आधार पर राजस्थानी और पहाड़ी कला में लगभग 200 वर्ष का अंतर है, जब राजपूत शैली पतनोमुखी थी, उस समय पहाड़ी शैली विकास की ओर अग्रसर थी। 'पहाड़ी शैली का आरम्भ 18 वीं शताब्दी से होकर पचास वर्ष में ही अपनी पूर्णता पर पहुँच जाता है। यह शैली मुगल शैली से बहुत प्रभावित रही, परन्तु फिर भी उसमें एक ऐसा ओज है, जो मुगल शैली के किसी चित्र में नहीं।'[2]

पहाड़ी शैली के अंतर्गत गुलेर, कांगड़ा, बसोहली, चंबा, कुल्लू आदि शामिल हैं। यहाँ की मानवाकृतियाँ अपूर्व सौंदर्य और कलात्मकता लिये हुए है। इन चित्रों में वैष्णव धर्म संबंधी विषय प्रमुख है। काव्यों पर आधारित चित्र इस शैली में प्रचुरता से प्राप्त होते हैं, रीतिकालीन कवियों में सूरदास, तुलसीदास, केशव, मतिराम, देव और बिहारी सतसई आदि के काव्य प्रमुख है। बसोहली, कांगड़ा गुलेर आदि की मानवाकृतियों में रंग एवं रेखाओं में भिन्नता इनकी अपनी विशेषताओं को दर्शाती है।

पहाड़ी शैली के चित्रकार के लिए कृष्ण-कथा बहुत ही रोचक विषय रहा। चित्रकार ने कृष्ण जीवन पर चित्रण कार्य किया। चित्र में कृष्ण रूपी मानवाकृति एवं पृष्ठभूमि में सुंदर पहाड़ी दृश्य, अटूट लावण्यता को प्रकट करता है। पौराणिक कथाओं एवं महाकाव्यों जैसे रामायण, महाभारत, भागवत्-पुराण, कृष्ण लीला, गीत-गोविंद आदि विषयों में सुंदर मानवाकृतियों का चित्रण हैं। विशेष रूप से नारी आकृति चित्रण इतने सुंदर रूप से किया गया है कि देखते ही बनता है। साथ ही नायक-नायिका तथा उनके व्यक्ति चित्र (शबीह), शिकार दृश्य, स्नानरत दृश्य और त्यौहार जैसे-होली, प्रेम कहानियाँ, मधु-मालती और नल-दम्यति आदि विषय बड़े ही भावनात्मक एवं सौंदर्यात्मक रूप में चित्रित हैं।[3]

पहाड़ी शैली में चित्रकार ने मानवाकृतियों में भावाभिव्यक्ति के उच्च स्तर को दिखाने में सफलता हासिल की है। यहाँ की नारी एवं पुरूषाकृतियों की वेशभूषा मुगल शैली से मिलती-जुलती है, लेनिक समय-समय पर इसमें बदलाव इसकी मौलिकता को बनाये रखता है।

कांगड़ा शैली-संसार प्रसिद्ध कांगड़ा शैली में सुंदर एवं भावपूर्ण मानवाकृतियाँ का जन्म 18 वीं शताब्दी के अंत में हुआ। इन मानवाकृतियों को अंकित करने वाले चित्रकार तो वही थे, जिन्होंने गुलरे के चित्रों की रचना की, इनमें कुछ मुगल चित्रकार थे, जो भागकर यहाँ शरण में आये थे। राजा संसार चंद (1775-1823 ई.) के संरक्षण में इन कलाकारों ने जिस ईमानदारी और सच्ची लगनशीलता का परिचय दिया, यहाँ की मानवाकृतियों में लक्षित भावाभिव्यक्ति को देखकर समझा जा सकता है। कार्य के प्रति सच्ची लगन कांगड़ा शैली की सुंदरता एवं प्रसिद्धि का प्रमुख कारण था।

'मानव संवेदना को महसूस करते हुए पहाड़ी चित्रकार ने चित्र में हर रूप को संयोजित कर अपनी उच्च स्तर की तर्कशक्ति एवं तकनीक का परिचय दिया है। कांगड़ा के कलाकार ने सुंदर काव्य रचना के माध्यम से मानवाकृतियों को विषय के अनुरूप अद्‌भुत रूप से संयोजित किया है, जो प्रशंसनीय है। साथ ही इन मानवाकृति को वातावरण के अनुकूल प्रदर्शित करने के लिए, पत्तियों एवं लताओं का सुंदर एवं सजीव अंकन किया गया है। इस शैली में पृष्ठ भूमि को गुलाबी, पीले, सफेद एवं मानव आकृति की वेशभूषा को रंग-बिरंगी रंगतों में चित्रण कर विषय को चिरस्थाई बनाने की कोशिश सफल हुई है।'[4]

'कांगड़ा शैली की मानवाकृतियाँ विश्वभर में सुंदरतम् लघुचित्रों में अंकित मानी जाती है। इस शैली की एक प्रमुख विशेषता यह है कि व्यक्ति चित्रण बड़ा सजीव है, जो भी हाव-भाव चेहरे पर प्रदर्शित हैं, उनमें कलाकार पूर्ण रूपेण सफल हुआ है, आंतरिक भावों का इतना सुंदर चित्रण अन्य कहीं नहीं मिलता।'[5]

कांगड़ा शैली में नारी आकृतियाँ बहुताय मात्रा में चित्रित की गयी हैं। ये नारी आकृतियाँ बहुत प्रभावशाली एवं सजीव हैं। स्त्री आकृतियों का शारीरिक सौंदर्य कोमल व छरहरे बदन का है, इनकी आँखें धनुषाकार (भाव से परिपूर्ण) चेहरा गोल, अंगुलियाँ कोमल, लयदार तथा सुंदर बनाई गई हैं। यहाँ के चित्रकार ने इन नारी आकृतियों के चित्रण कार्य में भारतीय परम्परा का ध्यान बखूबी रखा है। इनके चेहरे तथा अंग-प्रत्यंग में भारतीयता की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। सुंदर वेश-भूषा, बालों की बनावट तथा सुंदर आभूषणों से सुसज्जित नारी का बड़ा मनमोहक चित्रण हुआ है। वस्त्र सज्जा के अंतर्गत स्त्रियों को लहंगा-चोली एवं पारदर्शी चुनरी में चित्रित किया गया है। वहीं पुरूषों को अंगरखा पजामा तथा पगड़ी बांधे दिखाया गया है। कहीं-कहीं मुगल प्रभाव भी झलकता है। कांगड़ा शैली के मुख्य नायक श्री कृष्ण को जहाँ कहीं चित्रित किया गया है, उन्हें पीले परिधान पहने दिखाया है।

कांगड़ा शैली के चित्रकारों ने नारी चित्रण के अंतर्गत 'नायिका भेद' को बड़ी कुशलता से अंकित किया है। नायिका-भेद में नायिकाओं को विभिन्न रूप एवं भाव में प्रदर्शित किया है। इसमें कलाकार ने नायिका के विभिन्न रूपों

* सहायक प्राध्यापक (चित्रकला) शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

को दिखाया है, जिसमें नायिका अलग-अलग भाव एवं अर्थ को स्पष्ट कर रही हैं। इन रूपों के अंतर्गत स्वाधीन पतिका, उत्का, वासक सज्जा, अभिसन्धिता, खण्डिता, प्रोषित पतिका, विप्रलब्धा, अभिसारिका आदि है।

1. **स्वाधीन पतिका –** यह वह नायिका है, जिसका पति प्रेम करता है, तथा उसका जीवन साथी है।
2. **उत्का –** वह नायिका है, जिसका प्रेमी वायदा करके भी निश्चित समय पर नहीं आता।
3. **वासक सज्जा –** नायिका को अपने प्रेमी की प्रतीक्षा में दरवाजे पर खड़े हुए दर्शाया है।
4. **अभिसन्धिता –** यह वह नायिका है, जो अपने प्रेमी के प्रेम से असंतुष्ट हैं और अविश्वास के कारण उससे लड़ती है।
5. **खण्डिता –** यह नायिका वह है, जिसका पति रात को उसके पास न आकर किसी और स्त्री के साथ रात्रि भर रहता है, और सुबह आता है, जिससे नायिका बहुत दुखी होती है।
6. **प्रोषित पतिका –** जिसका पति किसी व्यापार से बाहर गया हुआ है। वर्षा होने वाली है और नायिका उसके सकुशल लौट आने की प्रार्थना करती है।
7. **विप्रलब्धा –** यह वह नायिका है, जिसने रात भर अपने प्रेमी की प्रतीक्षा की और निराशा से अपने जेवर तोड़कर फेंकती है।
8. **अभिसारिका –** यह नायिका अपने प्रेमी से मिलने अंधेरी रात में जाती है।[6]

'कांगड़ा शैली का एक चित्र अभिसारिका नायिका का बड़ा ही सुंदर चित्रण है। 1830 ई. का निर्मित यह चित्र श्रीमती सुमती मोरारजी कलेक्शन, बाम्बे में सुरक्षित है। इसमें नायिका अपने प्रेमी से मिलते जाती है। अंधेरी रात में बिना किसी की परवाह किये नायिकाओं को जाते हुए चित्रित किया है, उसका प्रेमी बांये हाथ की ओर दूर एक प्रकाशयुक्त कमरे में बढ़े प्रदर्शित हैं, नायिका ने कोबरा नाग को पैरों से कुचल दिया है। कोबरा नायिका को फूंकार मार रहा है। नायिका नीले दुपट्टे तथा लाल वस्त्र धारण किये बड़ी सुंदरता से चित्रित है।'[7]

'18वीं शताब्दी के अंत तथा 19वीं शताब्दी की शुरूआत में व्यक्ति चित्रों में काफी बदलाव दिखाई देता है। कांगड़ा के कलाकारों ने व्यक्ति चित्र में त्रि-आयामी प्रभाव तथा रेखाओं में गति का समावेश कर उसे उच्च स्तर का बना दिया है। इसका एक अच्छा उदाहरण 19 वीं शताब्दी में रामदया द्वारा बनाया गया रेखा चित्र है। जिसमें कलाकार ने सोने चाँदी का कार्य करने वाले (सुनार) व्यक्तियों के समूह को रेखांकित किया गया है।'[8] सशक्त रेखाओं से निर्मित इस कलाकृति में मानवाकृति को त्रि-आयामी प्रभाव से युक्त चित्रित किया गया है। और सभी आकृतियों का मुख प्रदर्शन भिन्न-भिन्न हैं। मुखाकृति में यथार्थता के गुण स्पष्ट रूप से झलकते हैं।

उपरोक्त भिन्न-भिन्न रूपों में प्रदर्शित नायिका बड़े ही सुंदर ढंग से सजीवता पूर्वक चित्रित है, कांगड़ा शैली की मानवाकृति का यह रूप अद्वितीय है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि कांगड़ा शैली मानवाकृति अंकन में कितनी बेजोड़ थी। इस शैली में व्यक्ति चित्रों का निरंतर विकास दिखाई देता है।

बसोहली शैली– बसोहली जम्मू राज्य के कथुआ या कटुआ नामक जिले में हैं, सर्वप्रथम बसोहली चित्रों का उल्लेख आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया की वार्षिक रिपोर्ट में सन् 1918-19 में हुआ।

डॉ. कुमार स्वामी ने लिखा है कि- प्रारम्भ में यह स्थानीय लोक कला से प्रभावित थी। जम्मू एक सम्पन्न और वैभवशाली राज्य होने के कारण यहाँ से प्राप्त चित्रों को जम्मू शैली कहा गया। बाद में इसे जम्मू के बजाय बसोहली शैली कहा जाने लगा।

बसोहली शैली लोककला एवं मुगल कला की मिली-जुली प्रतिक्रिया थी। यहाँ की मानवाकृतियों में जो चेहरा निर्मित किया गया है, वह यहाँ की स्थानीय लोककला से मेल खाती है। इन मानवाकृतियों में पुरूषों के वस्त्र मुगल शैली के हैं। बसोहली शैली में मुगल प्रभाव आने का कारण, चित्रकारों पर औरंगजेब का अत्याचार था। औरंगजेब चित्रकला का दुश्मन अर्थात दुष्ट शासक था। फलस्वरूप वहाँ के चित्रकार अपनी जीविका चलाने हेतु यहाँ वहाँ भागे। ज्यादा से ज्यादा चित्रकार पंजाब की पहाड़ी और जम्मू की ओर रवाना हो गए।

बसोहली चित्रकला का सबसे बड़ा संरक्षक व प्रवर्तक राजा हिन्दपाल का पुत्र 'कृपालपाल (1678-1699) था। जिसके संरक्षण में बसोहली शैली का सर्वोत्तम विकास हुआ। बसोहली शैली के चित्रों के विषय धार्मिक थे, जिसमें वैष्णव धर्म प्रमुख था। यहाँ रामायण, महाभारत, भागवत, गीत-गोविंद और रसिक प्रिया आदि पर चित्र रचनायें हुईं तथा इन विषयों में मानवाकृतियों का नया रूप सामने आया। बसोहली शैली की मुख्य विशेषता मानवाकृतियों में अंकित आँखे हैं, जो पद्माकर (कमलाकृति) कानों को स्पर्श करती हुई बनाई गई है, एवं अद्वितीय है। इन नेत्रों में भावों का समावेश पूर्ण रूप से परिलक्षित होता है। इन मानवाकृतियों की हस्त मुद्रायें विभिन्न हाव-भाव अभिव्यक्त करती हुई चित्रित हैं। बसोहली में नारी आकृतियाँ सुकोमल तथा ओजपूर्ण बनाई गई हैं। यहाँ की मानवाकृतियों में गति एवं लय प्रदर्शित करने में चित्रकार सफल हुआ है। जिसके कारण इसमें सजीवता का भाव झलकता है। सन् 1800 ई. में बना 'राम और परशुराम मिलन' का दृश्य बड़ा ही सुंदर एवं मार्मिक है। चित्रों में स्थानीय कला का पुट देखने मिलता है।

बसोहली शैली में सम्राटों तथा संतों के अनेक व्यक्ति चित्र अंकित हुए जिसमें ढामथाल के संत नारायण स्वामी का जहाँगीर की उपस्थिति में विष के छः प्याले पीने के बाद कोई प्रभाव न हुआ तो सातवाँ प्याला हाथी को पिलाया गया तो हाथीं तुरंत मर गया। इस संदर्भ में चित्र में बसोहली शैली में चित्रित जहाँगीर और नारायण स्वामी की आकृतियाँ तात्कालीन हैं। इनकी अभिव्यक्ति की शैली बसोहली है। इस शैली में बना राजा धीरज पाल का व्यक्ति चित्र उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त इस शैली में राजा संग्राम पाल तथा उनके पुत्र हिन्दल पाल आदि के व्यक्ति चित्र भी उपलब्ध हैं।

'बसोहली शैली में नारियों का रूप कुछ पुरूषत्व लिये हुए है, जो काग़ज़ में नहीं है, नारी का शारीरिक सौंदर्य बसोहली की अपेक्षा कांगड़ा में पूर्ण रूप से परिलक्षित होता है। तुलनात्मक दृष्टि से बसोहली की मानवाकृतियाँ, कांगड़ा की मानवाकृतियों से कम श्रेष्ठ है। देखने में यहाँ के चित्र मानव प्रेम तथा रोमांच से ओत-प्रोत है परन्तु उसमें अधयात्मिकता छुपी हुई है। नायक कृष्ण को परमात्मा का प्रतीक तथा नारी को आत्मा माना है, ये नारी परमात्मा से मिलने कितने कष्ट उठाती है। यह चित्रण आनंद दायक है।'[9]

पहाड़ी शैली में चित्रकार ने मानवाकृतियों में भावाभिव्यक्ति के उच्च स्तर को दिखाने में सफलता हासिल की है। यहाँ की नारी एवं पुरूषाकृतियों की वेशभूषा मुगल शैली से मिलती-जुलती है, लेनिक समय-समय पर इसमें बदलाव इसकी मौलिकता का बनाये रखता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लोकेश चन्द्र शर्मा - भारती की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास, पृ. 116

2. डॉ. प्रेमशंकर द्विवेदी / राधाकृषणन भारद्वाज – भारतीय चित्रकला में व्यक्ति चित्रण, पृ. 45
3. प्रमोदा गनपते – ए गाइड टू द इंडियान मिनियेचर पृ.14
4. शांतिलाल नागर – मिनियेचयर पेंटिंग ऑन द होली रामायण, पृ. 08
5. लोकेश चन्द्र शर्मा – भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास, पृ.126
6. लोकेश चन्द्र शर्मा – भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास।
7. एम.एस. रन्धावा – कांगड़ा पेंटिंग ऑन लव,
8. आनन्द कुमार स्वामी – राजपूत पें टिंग, पृ.23
9. प्रेमशंकर द्विवेदी / राधाकृष्णन भारद्वाज – भारतीय चित्रकला में व्यक्ति चित्रण, पृ.76
10. लोकेश चन्द्र शर्मा – भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास, पृ. 135–136
11. लोकेश चन्द्र शर्मा – भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास, गोयल पब्लिकेशन हाऊस, मेरठ, उत्तरप्रदेश, वर्ष 2005
12. डॉ. प्रेमशंकर द्विवेदी/राधाकृष्ण भारद्वाज – भारतीय चित्रकला में व्यक्ति चित्रण, कला प्रकाशन, वाराणसी, वर्ष 1996
13. Randhawa,M.S.- Kangra Painting on love,Publication Division, Ministry of Information & Broadcasting Govt.of India,New delhi,1994
14. Coomarswamy,Ananda – Rajput Painting, B.R. Publishing Corporation,Delhi-110052,2003
15. Nagar ,Shanti Lal – Miniature Painting on The Holy Ramayana, B.R.Publishing Corporation,Delhi-110052,2001
16. Ganpate ,Pramod – A Gaid to the Indian Miniature, Published by National Museum,Jampath,New Delhi,1997

पुरूष मुखाकृतियों में शैलीगत भिन्नताएं – पहाड़ी शैली

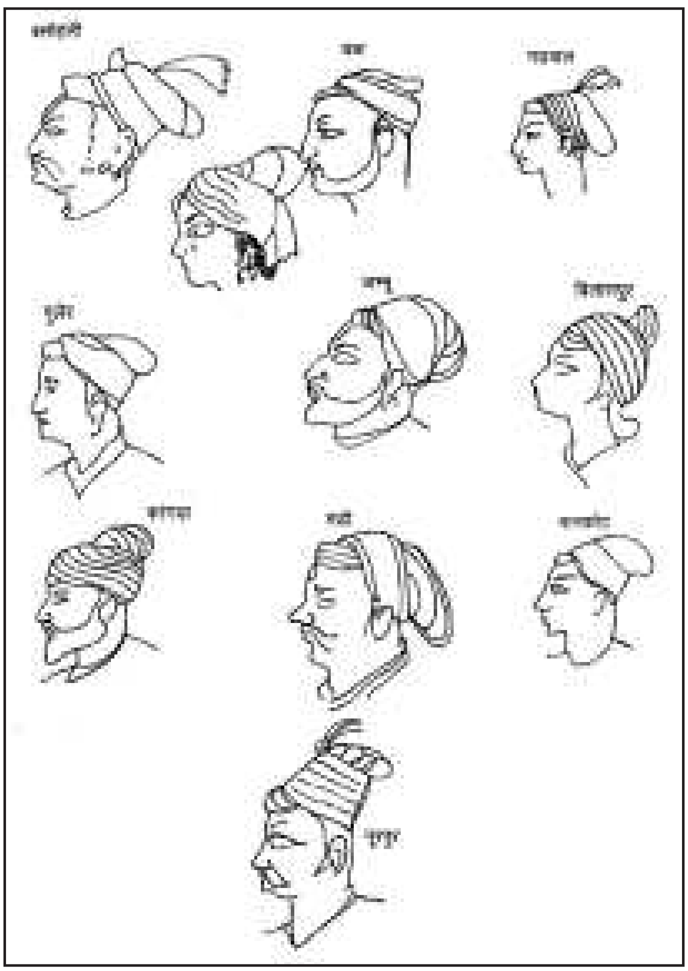

नारी मुखाकृतियों में शैलीगत भिन्नताएं – पहाड़ी शैली

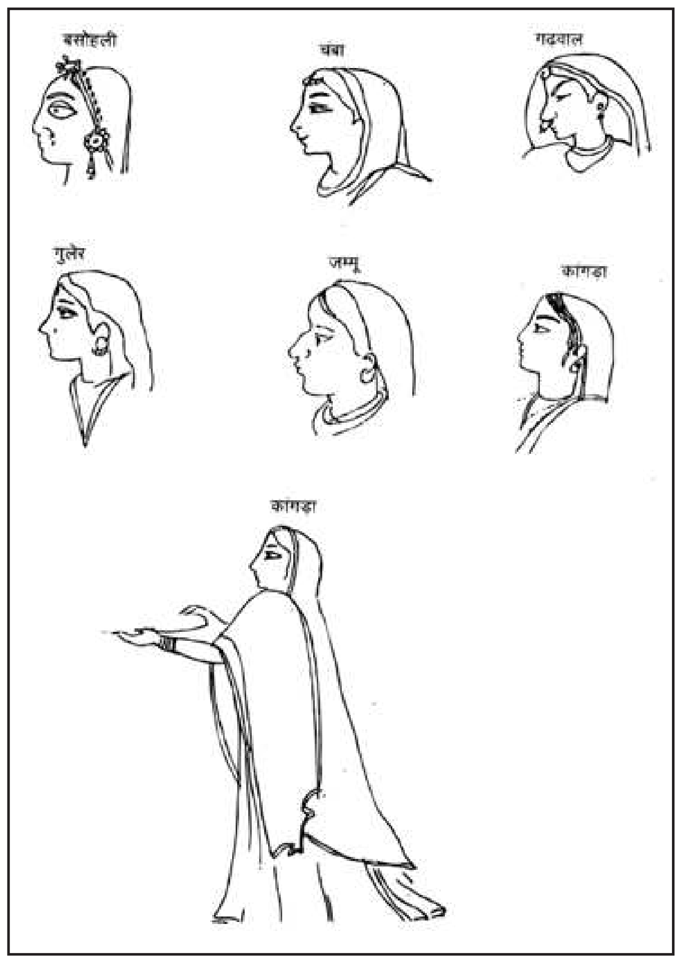

****

रवींद्रनाथ टैगोर की चित्रात्मक रूपसंपदा में अनुठा रंगाच्छादन

शालिनी रानी *

प्रस्तावना – टैगोर की **चित्रात्मक रूपसंपदा में रंगों का वही महत्व है, जो शरीर में हृदय का** हैं। 'रंग' अग्नि और जल की भांति एक अनिवार्य वस्तु हैं। इसकी सौम्यता का प्रभाव क्षणिक न होकर स्थायी होता हैं। टैगोर की चित्रात्मक रूपसपंदा का जब हम आस्वादन करते है, जब हमें यहाँ रेखाओं की गत्यात्मकता, रूपों की विविधता व रंगों की अद्‌भुत सौम्यता सर्वाधिक आकर्षित करती है। उनके चित्रात्मक रूपजगत का आस्वाद करते औचक जगता है कि वहाँ मौन गुंजरित हैं।**(देखिए चित्र सं.–1)**

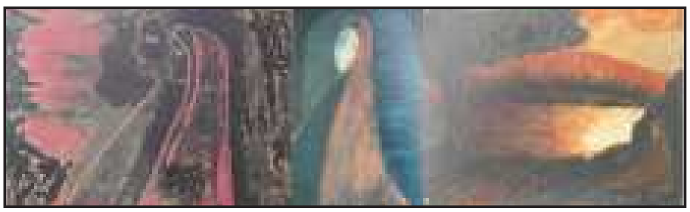

चित्र सं.–1 **चित्र सं.–2** **चित्र सं.–3**

दृश्य की अनंत संभावनाओं के आख्यान लिए हुए। रंगाच्छादन में संवेदनाओं की राग सरीखी है। उनके चित्रों में आकृतियाँ है, तो अर्थ के गुढ़ रहस्यमीय आग्रह से मुक्त हैं। मानो किसी अर्थ में उन्हें व्यंजित नहीं किया जा सकता और किया भी जा सकता है। वह केवल चित्र नहीं अंतर्मन संवेदनओं के दृश्यलेख है क्योंकि यहाँ रंगों की सौम्यता है, रेखओं की अद्‌भुत गत्यात्मकता है और आकारों की अनुठी अनुभूतियाँ की विविधता हैं। जब उनके चित्रों का आस्वादन करते है तो लगता है कि चित्रफलक पर रंगों की सत्ता हैं। पूर्ण चित्रफलक रंग की गहराई को अपने में समाए है, परन्तु औचक लगेगा कि रंग में से ही दूसरा रंग झाँकता है**(देखिए चित्र सं.–2)** अनूठे किसी प्रकाश का सर्जन करते हुए हम में जैसे बसने लगते है। यही उनकी कलाकृतियों की बड़ी विशेषता हैं। यहाँ अँधेरे से तेज प्रकाश निकलता हैं।**(देखिए चित्र सं.–3)** यहाँ दृश्य में बड़ी अदृश्य की सत्ता हैं और वास्तव में यह सत्य है कि मन–मस्तिष्क पर प्राय: उस अदीठे का ही तो प्रभाव पड़ता है, जिसमें दृश्यमान (दिखे) का अर्थ छुपा होता हैं। टैगोर के रंगों में ऐसे ही अनदिखे अर्थों का रहस्य छुपा है जहाँ हमें उनके अधिकतर चित्रों में गहरें अँधकार से एक तेज प्रकाश की उपस्थित मिलती हैं। अँधकार एक प्राथमिक स्त्रोत है जहाँ प्रकाश के होने पर रंगों की अनुभूति होती है। **मानो अंधेरा अज्ञान है, मानव मन का उदासी का प्रतीक भी और तीव्र प्रकाश ज्ञान और जीवन में नवाचार का संकेत हैं।** अवश्य ही टैगोर को कलाकृतियों में रंगों की सौम्यता इसी अर्थ में मौन की अभिव्यक्ति है। रंग, रेखायें, टेक्सचर और विभिन्न आकार मिलकर बिंबो और रूपकों का जो जो लोक टैगोर की चित्राकृतियाँ रचती है उसमें सौन्दर्य जैसे रंगों की सौम्यता से ध्वनित या प्रवाहित होता हैं।

रंगाच्छादन में वह चित्रफलक पर मोहक व विस्मय रूपाकार रचते थे, रंगों को कई बार पोतने की बजाय, लगता है जैसे फलक पर रंगों को बिखेर दिया हो। उनके अमूर्त चित्रों में भी एक सुरम्य लय रंगों से उपस्थित हैं। धूसरित रंगों की आभा भी सर्वथा नई दृष्टि में देखने वाले को सम्मोहित करती हैं। लगता यह भी है कि उनके चित्र संगीत की ध्वनियों के रूपान्तरण हैं। वहाँ पर रंग और रेखाओं पर अनुठा मेल हैं। सच यह भी है कि चित्रभूमि पर उनके रूपबंध अनंत को इंगित है, उनमें जीवन की अद्‌भुत अनुगूंज है। एक रंग दूसरे में मिलकर सर्वथा नई दृष्टि देते हैं। रंगों से निकलती रेखाएँ, एक दूसरे में समाती रेखाएं और परस्पर घुलते रंग सब सुगठित संयोजन व संतुलित है। उन्होंने अनेक चित्रों में अधिकांशत: **बहुवर्णीय रंग योजना को अपनाया** है।**(देखिए चित्र सं.–4)** विशेष रूप **से काला, भूरा, बैंगनी, लाल, नारंगी, नीला, पीला व हरा रंग** प्रयोग में लिया है। कुछ व्यक्ति चित्र**(देखिए चित्र सं.–5)** व दृश्य चित्र**(देखिए चित्र सं.–6)** एक वर्णीय रंग योजना में भी चित्रित किए हैं जहाँ **गहरे श्याम रंग की अधिकता** मिलती हैं।

चित्र सं.–4 **चित्र सं.–5** **चित्र सं.–6**

रंगों में एक विशेष प्रकार का चमकीलापन है **(देखिए चित्र सं.–7,8)** जो **प्राचीन भारतीय रंगों से साम्यता रखता** है। वे **द्रव्यमिश्रित रंगों को पसंद करते व स्याही का भी प्रचुर मात्रा में प्रयोग** करते। रंग नहीं मिलने पर वे **फूलों की पंखुड़ियों को दबाकर रंग** के काम में लेते। वे रंगाकन पद्धति सामग्री से अधिक आंतरिक प्रेरणा को अधिक महत्व देते थे। नंदलाल बोस ने लिखा है कि '**जर्मनी में बनी नाना प्रकार की चमकदार स्याही रवंद्रनाथ को प्रिय थी। हमारे देश में चटक रंगों के प्रति वैसी ही रूझान है जैसी पश्चिमी देशों में अचटक रंगों के प्रति। योरोप में पहली बार जब रवीन्द्रनाथ के चित्रों की प्रदर्शनी हुई तो इन विविध और चटक रंगों के व्यवहार ने दर्शकों को विमुग्ध भी किया था और विस्मय में भी डाला था। इसके ऊपर रवींद्रनाथ के रंगों का संयोजन में कहीं कोई दुर्बलता नहीं नजर पड़ती थी। अनेक चित्रों की पृष्ठभूमि में उन्होंने दो गहरे रंगों का उपयोग पास–पास किया है–गाढ़े नीले रंग की बगल में उससे भी गहरी कालिमा। तथापि रंगों के कुशल संयोजन के फलस्वरूप सर्वत्र चित्र के विभिन्न स्तरों को स्पष्टता प्राप्त हुई हैं, कहीं इसने चित्र को बिगाड़ा नहीं हैं।**'[1]यह सब एक कुशल कलाकार

* कला शिक्षिका (चित्रकला) उच्चतम माध्यमिक विद्यालय, वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

ही कर सकता हैं।

चित्र सं.-7 चित्र सं.-8 चित्र सं.-9

आरंभ में टैगोर ने रंगों को बड़े सीमित भाव से लगाया हैं। यानि आरंभ के चित्रों में रवीन्द्रनाथ रेखाओं के द्वारा बने चित्रों में अलग-अलग टोन देने के लिए या प्रकाश का असर पैदा करने के लिए रंग भरते थे। फिर तो उन चित्रों में रंगों का खेल बड़े जोरों के साथ आरम्भ हुआ। रंग डालने के पीछे, कुछ ऐसा भी ख्याल रहा होगा कि उससे चित्र में वास्तविता का अंश आ जाता है। ऐसे समय उन्हें जर्मन पेलीकन रंगीन स्याहियों ने आकर्षित किया। कभी-कभी चित्र **ने 'पोत' निर्माण के लिए टेंपरा वाले रंग भी लगाये गए।**

श्रीपत राय (जिन्होंने 1937-38-39 में गुरूदेव के श्रीचरणों में बैठकर उनको तल्लीनता से चित्र आँकते स्वयं देखे हैं।) ने टैगोर के वर्ण की सौम्यता के बारे में अपने विचार कुछ इस प्रकार प्रकट किए हैं **'वे काली स्याही का उपयोग कर रहे थे। काले के विविध पुट उनकी कृतियों में मिलते हैं। वे रेखांकन का अभ्यास कर रहे थे। पर अचानक किसी देवी धुति की भांति उनके मानस पटल पर रंग आच्छादित हो गए-गहन नील, वैजयन्ती और रतनार, हल्दी और केसरिया रंग। इतने पारदर्शी रंग, जल रंग के चित्रकारों में भी दुर्लभ है। जलमिश्रित रंगों का वे पारदर्शी तत्व ही लेते हैं। भले एक लेप के ऊपर दूसरे लेपन से निचला रंग भी अपनी पूरी दृढ़ता के साथ चों न झांकता हो।'**[2]

श्रीपत राय ने यहाँ उनकी वर्ण सौम्यता का एक विशेष गुण बताया जो है '**पारदर्शिता**' क्योंकि रंगों की पारदर्शिता ही टैगोर के चित्रों का प्रमुख गुण है।(देखिए चित्र सं.-4,6,7)

देवी प्रसाद जी ने रवीन्द्रनाथ के चित्रों में रंग प्रवेश की स्थिति पर चर्चा करते हुए बताया है कि 'उनके आकारों में रंग की प्रचंड़ता नहीं थी, हाँ रंग की ओर उनकी रूचि उग्र थी। इस उग्रता का कारण अनिपुणता नहीं था, क्योंकि वे तो अपनी चित्रकला की 'अनिपुणता' को लगभग हमेशा ही संपूर्ण रूपांतरित करने में सफल हो गए थे। इसीलिए यह कहना उचित होगा कि रंग के बारे में उनकी रूचि विशेष प्रकार की थी। इसी विशेषता से उनके अनेक प्रकृति चित्र निकले, खासतौर पर सूर्यास्त और सूर्योदय के रंजित आकाश के सामने वृक्षों के 'सिंलुएट' इत्यादि। कुछ चित्र तो रंगों से भरपूर हैं और कुछ एक या दो रंग वाले, पर इन सभी में कमाल की पारभासिता का गुण है और वास्तविकता की दृष्टि से अलौकिक।'[3](देखिए चित्र सं.-9,10,11,12)

चित्र सं.-10 चित्र सं.-11 चित्र सं.-12

टैगोर ने **सूर्योस्त व सूर्योदय** का बहुत सा वर्णन अपने शब्दजगत में भी किया जो कुछ तो उनके पत्रों में भी प्राप्त होता है किंतु यहाँ हमें एक वित्रित बात यह मिलती है कि **टैगोर ने लाल रंग का वर्णन सीमित किया है लगभग ना के बराबर।' टैगोर ने बंगाली शब्द रंगा (Ranga)का प्रयोग किया है जो कि एक व्यापक अर्थ को सूचित करता है और जिसमें लाल रंग भी सम्मिलित है किंतु विशेष लाल रंग नहीं।** जान पड़ता है कि रवींद्रनाथ ने रंगा शब्द का प्रयोग एक स्पष्ट वर्णक्रम शब्द के रूप में किया जिसमें लाल वर्ण भी आता हैं। हमें ऐसे तथ्य प्राप्त नहीं होते जहाँ स्पष्टत: रूप से यह सूचना दे सके कि पीला व नीला शब्द का प्रयोग उन्होंने पृथकता से किया हो सूर्योस्त के उनके वर्णनों में हमें उनेक पृथक-पृथक रूप दृश्य संघटक प्राप्त होते है। जिनमें भावनात्मक प्रवृत्ति के साथ कल्पनिय एवं साथ दार्शनिक परितृप्ति भी प्राप्त होती हैं।

'बंगलादेश का सन्-सन् करता जनहीन मैदान और उसके प्रांतवर्ती पेड़-पौधों के बीच सूर्यास्त कितना सुंदर लग रहा था, उसका वर्णन मैं किसी भी तरह नहीं कर पा रहा हूँ-यहाँ कैसी तो एक विराट शांति और कोमल करूणा व्याप्त है-हमारी इस अपनी पृथ्वी के साथ और इस बहुदूरवर्ती आकाश के साथ कैसा तो एक स्नेहभारविनत मौन म्लान मिलन हो रहा है! अनंत के बीच जो एक विराट, अखंड चिर विरह-विषाद का भाव रहता है, वह इस सांध्यकालीन परिव्यक्त पृथ्वी के ऊपर कैसी तो एक उदासी इस आलोक में अपने को ईषद्-ईषद् व्यक्त किए दे रही है-सारे जल, थल और आकाश में कैसी तो एक़ मुखर भाषा से परिपूर्ण नीरवता व्याप्त है।' थोड़े से निविष्ट चित्त से स्थिर होकर यदि प्रयास करें तो जगत् के सारे आलोक और रंग की विशाल हॉर्मनी को मन-ही-मन विपुल संगीत में अनूदित कर सकते हैं।' (2 सिंबर, 1892)4(देखिए चित्र सं.-8)

यहाँ दो बातें हमें मुख्यत आकर्षित करती है, जो केवल पत्र में ही नहीं बल्कि उनके दृश्यचित्रों में भी अंकित है-**एक तो 'जनहीन मैदान' (देखिए चित्र सं.-13,14,15)** अर्थात **टैगोर के अधिकतर दृश्य चित्रों में प्रकृति है लेकिन जनहीनता के साथ।** और दूसरा पीछे हमने बताया कि रंगों के साथ 'मौन गुंजरित' है, ऐसे ही यहाँ भी मौन गुंजरित है। उदासी का माहौल अपने में रहस्यों को लिए है और एक बात रंगों को पृथ्क रूप से नाम नहीं लिया है, पूर्ण वर्णन में रंगों की अनुभूति होती है लेकिन विशेष नाम शब्दों के साथ नहीं।

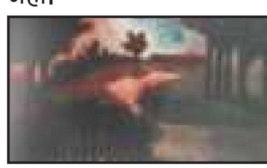 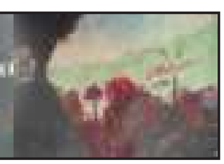

चित्र सं.-13 चित्र सं.-14 चित्र सं.-15

रोमां रोला ने टैगोर के रंग विषय में कहा है कि **'टैगोर संवर्ण विषय पर वार्ता होती थी, लेकिन वे लाल रंग के प्रति बहुत ही कम संवेदनशील थे। इटली में टैगोर को लाल पोस्ता के फुलो के खेतो में फिरना बिल्कुल भी आकर्षित नहीं लगता था, वे प्राय: ग्रामीण क्षेत्रों में फैले हुए प्रकाश का परिग्रहण करना पसन्द करते थे। जबकि, वे नीले और बैंगनी रंग के विविध शेड को देखने में असीम आनन्द प्राप्त करते थे। हरे रंग की विभिन्न शेड उनके लिए विभिन्न अलग-अलग रंग होते थे वे यह समझ नहीं परते थे कि व्यक्ति कैसे इन सब को एक नाम से पुकारते हैं।'**5,6

जैसे यहाँ रोमन रोला जी ने बताया ऐसे ही यहाँ उनके एक पत्र में देखिए जो कि सूर्योस्त का वर्णन में हैं-

'पश्चिम दिशा में एक स्थान पर इकट्ठे गुच्छेदार छोटे-छोटे मेघों

ने सुनहल होकर एक नई शोभा ही धारण कर ली है। कितनी तरह कर रंग चतुर्दिक फुट उठा था, मेरे जैसे सुविख्यात रंगरेज (Colou-Blind) के लिए उसका वर्णन करने बैठना धृष्टता होगी। केवल आकाश में ही नहीं पद्मा के जल और बालू की चर पर भी एकाएक रंगों का इंद्रजाल लग गया था। फिर पद्मा का नीला-नीला जल उत्तरी हवा से आगे-पीछे धीरे-धीरे कंपित-सिहरित हो रहा था-इसलिए पूरी नदी में सूर्यरश्मियों के सारे वर्णों एवं आभा का इतना अचरज भरा स्पंदन हो रहा था, कि मेरे मन में विस्मय की सीमा नहीं रही।'सब स्थिर जगहों के जल में परिष्कृत सोने का लावण्य एकदम मसृण, तरल, उच्छल, कोमल, निर्मल हो गया था-चारें ओर विचित्र रंगों के विचित्र नृत्य के बीच-बीच में वही स्थिर, विषण्ण सूर्य की निश्चल आभा अपूर्व संदुर हो उठी थी। उसके बाद फिर से रेतीली चर के ऊपर भी सूर्योस्त की विचित्र तूलिका मानो फेर दी गई हो।' फिर कई स्थानों पर समतल रंत सन्-सन् कर रही है, उन सब तरंगों के कारण लहरदार पर्त-दर-पर्त सिकुड़ी हुई बालू पर पड़ी हुई अनेक रंगों की चिकनी आभा ठीक ऐसी लग रही है, जैसे एक विशाल साँप की अनेक रंगों की केंचुल पड़ी हुई हो।.घूमते-घूमते क्रम से इतने विचित्र रंग धीरे-धीरे कब विलीन हो गए, सिर्फ ज्योत्स्ना की इकरंगी शुभ्रता से समस्त जल-थल आकाश मंडित हो गए।(14 दिसंबर 1894)'7(देखिए चित्र सं.-13,14)

यहाँ भी यह बात स्पष्ट है कि पूरे वर्णन में **नीला, स्वर्ण, श्वेत रंगों व अन्य वर्णो का स्वंतत्र रूप से पृथक-पृथक नाम** लेने से बचा गया है और एक विशेष बात सूर्योस्त की आभा में कहीं भी लाल रंग को अंकित तक नहीं किया गया हैं। यह सब आश्चर्यजनक तथ्य हैं।

कुछ विद्वानों ने टैगोर के रंग विषय पर उन्हें **अंशत: वर्णीय (कलर ब्लाइंड) भी** बताया है। यह तथ्य कहाँ तक सही है और कहाँ तक नहीं इसके लिए कोई विशेष साक्ष्य प्राप्त नहीं हैं लेकिन उनकी चित्रात्मक रूपसंपदा में व साथ ही **शब्द रचनाओं में ऐसे कुछ यत्र-तत्र तथ्य प्राप्त होते है, जहाँ टैगोर कुछ रंगों के प्रति विचित्र प्रस्तुति करते हैं।** एक तो यह है कि **वे लाल रंग के प्रति बहुत कम संवेदनशील थे।** चित्रों में भी लाल रंग का प्रयोग कुछ अलग हैं। दूसरा उपरोक्त पत्र में भी वे **स्वयं को कलर ब्लाइंड बोल रहे है** हलांकि यह हँसी मजाक में ही प्रतीत होता हैं इस विषय से संबंधित कुछ तथ्य निम्न प्रकार प्रस्तुत हैं-**'केतकी कुशरी डायसो ने बताया कि डॉ. बोस ने एक लेख उनको दिया जो उन्होंने एक ब्रिटिश दृष्टि वैज्ञानिक आर. डब्लू. पिकफोर्ड के साथ लिखा था- शीर्षक 'रवींद्रनाथ टैगोर की चित्राकृतियों में वर्णदृष्टि एवं सौन्दर्यात्मक समस्या' (Colour Vision and Asthetic Problems in pictures by Rabindranath Tagore) केतकी कुशरी ने आगे कहा कि 'इस लेख को पढ़कर, मैंने अपने जीवन में पहली बार यह जाना कि संभवत: टैगोर को एक अंशत: वर्ण दृष्टिदोष था जो एक प्रकार से रक्तवर्णोंधता (Protanopia) हैं, इस में प्रकाश की तंरग दैर्ध्य को हम देखते है जैसं लाल रंग आँखों से गुम हो जाता है और वहाँ लाल और हरे रंग के प्रत्यक्ष अवबोधन में भ्रम हो जाता है। यह कोई बिमारी नही बल्कि केवल एक आनुवांशिक रूप से यह दशा पायी जाती हैं।' फिर यहाँ से प्रभावित हो केतकी कुशरी डायसों ने रार्बट डायसों व सुशोभन अधिकारी के साथ मिलकर एक पुस्तक लिखी जिसका अनुवादित शीर्षक है 'टैगोर के रंग रवींद्रनाथ टैगोर की कला और लेखों में प्रयुक्त वर्ण : एक अध्ययन'। यह पुस्तक मूलत: बंगाली भाषा में हैं। यहाँ सुशोभन अधिकारी ने टैगोर की वर्णन्धता से सम्बिन्ध एक अनुच्छेद छिन्नपत्रावली में खोजा जहाँ टैगोर हँसी मजाक में स्वयं को कहते हे 'एक प्रख्यात वर्णान्ध (Colour Blind) व्यक्ति8**

इसी विषय से सम्बन्धित हमें **स्टेला क्रेमरिश** के लेख में पाते है कि '**यह सर्वसम्मत है, टैगोर के शब्दों ने ही, कि वह अंशत: वर्णीय (कलर ब्लाइंड) थे, 'योंकि लाल व हरे रंग उन्हें एक ही तरह से प्रभावित करते थे। लेकिन फिर भी उनके चित्रों में लाल व हरे रंग का प्रयोग संयुक्त प्रभाव छोड़ता है।(देखिए चित्रफलक सं.-3, 15)** जब वह एक ही चित्र में एक दूसरे का प्रतिकार करते हैं तब उनकी तीव्रता और रंगत भिन्न-भिन्न होती है। 'या यह उनके चित्रों की रंग संगति थी। जिसने इन रंगों में विनोद पैदा किया? उन्होंने इन रंगों का पूरे अधिकार के साथ प्रयोग किया। चाहे रंगीन स्याही का प्रयोग हो, जिसे वह बतौर लेखक भी प्रयोग करते थे या जल रंगों अथवा फलों के रसों से स्वयं तैयार किए गए रंगों का प्रयोग हो। वह निर्भीक रूप से एक मौलिक रंगकार थे।'[9]

यहाँ क्रेमरिश ने यह सत्य कहा कि वे एक निर्भीक मौलिक रंगकार थे और यह भी **लाल व हरा रंग का प्रयोग संयुक्त प्रभाव रूप में किया।** अर्थात टैगोर को लाल व हरा भले ही विचित्र प्रभावित करता हो लेकिन उनके चित्रों में रंगों की प्रस्तुति अपने आप में मौलिक व अद्‌भुत हैं। इस तरह अतंत: हम कह सकते है कि भले ही कुछ विद्वानों ने टैगोर को अंशत: वर्णांध बताया हो लेकिन फिर भी हमें टैगोर की चित्रात्मक रूपसंपदा के साथ उनके शब्द संसार में भी रंगों के साथ उनकी अभिव्यक्ति अद्‌भुत व अतुल्य है। रंगों की सौम्यता उनके चित्रों में अपनी मौलिकता रखती है और एक विशेष बात यह है कि टैगोर के चित्रों में हमें तीव्र प्रकाश की जो उपस्थिती मिलती है। जो कि इसके लिए उन्होंने ब्राइट रंगों का प्रयोग किया हैं।**(देखिए चित्रफलक सं.-3,7,12)टैगोर के चित्रों में रंग उज्जवल है हालांकि ब्राइट रंगों को हम राजपूत पेन्टिग, पहाड़ी पेन्टिग, अपभ्रंश कला और या मातिस, हुसैन इत्यादि की कलाकृतियों में भी प्राप्त करते है, लेकिन टैगोर के रंगों की उज्जवलता इनसे भिन्न प्रकार की है।** जैसे **सौमिक नन्दी माजूमदार** ने टैगोर रंग विषय पर चर्चा करते हुए कहा कि 'यदि हम मातिस, हुसैन, राजपूत या पहाड़ी पेन्टिगस में रंगों की ब्राइटनैस देखते है तो वहाँ सभी रंग ब्राइट है लेकिन टैगोर की रंग पद्धति में ऐसा नही है यहाँ मुख्यत अंधेरे से निकजता हुआ प्रकाश है जैसे किसी नाटयशाला में मंच पर पीछे अंधेरा रहता है और केवल मुख्य किरदार या दृश्य पर प्रकाश होता है। अर्थात अंधेरे के साथ रंगों की तीव्रता हैं। दूसरे जैसे उनके दृश्य चित्रों में गहरे अंधकार से तीव्र रोशनी निकलती हुई मिलती है मानो यह किसी उदास मानव में उम्मीद की कोई किरण हो। या फिर जैसे अंधकार रूपी अज्ञान हृदय में ज्ञान की किरण के समक्ष हो। ऐसा ही उनके चित्रों में रेगों की ब्राइटनैस से प्रतीत होता है।'[10]**(देखिए चित्रफलक सं.-3,8,13,14)** अंतत टैगोर की चित्रात्मक रूपसंपदा में रंगों की उज्जवता उनकी सौम्यता अपने आप में अद्‌भुत हैं और साथ ही भिन्न रंग पद्धति भी हैं।

अशोक मित्र ने टैगोर के रंग विषय में कहा कि **'वे जानते थे, कि रंग इनके (चित्रों के) प्राचुर्य को कम नहीं करता है। यह सब उन्हें रेगों के साथ नये प्रयोग करने को प्रेरित करता था। उन्होंने वाकय् में जबरदस्त प्रभावी उपादानों की रचना की है और यह नवाचार जो कि रंगों में अभिगृहीत उद्दीप्त आभा से दिखाई पड़ता है व यह तेज और कम्पायात्मान दीप्ति अनुभवी ज्ञान से पहले सभंवत कभी नहीं प्रकट हो सकती थी।'**[11]

इस प्रकार टैगोर एक निर्भीक मौलिक रंगाकार थे, जिसका प्रमाण उनके रंगों की सौम्यता में व उनके अनुठेरंगाच्छादन में पूर्णत स्पष्ट दिखाई पड़ता हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. Bose, Nandlal, on Guruder's Art, The Visva Bharati Quarteerly, V-26, 3&4, Tagore Centenary, Visva Bhararti Santiniketan, p. n. 141
2. राय, श्रीपत, रवींद्रनाथ ठाकुर की चित्रकला, सौमित्र मोहन, समकालीन कला, प्रवेशांक 1982, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली, पृ.सं.49
3. प्रसाद, देवी, रवींद्रनाथ ठाकुर : शिक्षा और चित्रकला, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, पृसं.-58
4. Roy, Supria, Sushoban Adihikary, Rabindranath Tagore : His work of Art, Niyogi Books, New Delhi, 2014, p.n.-54
5. Bhunia, Dr. Janjeswar, Colour Vision Problems in the Paintings by Rabindranath Tagore, 70th AIOC Proceedings, Cochin 2012 www.alosedu.org/uploads/comprehnive-2012.pdf p.n-460
6. Som, Sovon, Tagore's Painting : Versification in Line, Niyogi Books, New Delhi, 2011, p.n.- 81
7. चौधुरी, इंद्रनाथ, रवींद्रनाथ टैगोर रचनावली, खण्ड 40 छिन्नपत्रावली, भाग 2, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2013, पृ.सं.135-36
8. Dyson, Ketaki Kushari, Rabindranath Tagore and his World of Colours, http://www.parabaas.com/rabindranath/articles/pketaki2.html
9. क्रैमरिश, स्टेला, रवींद्रनाथ ठाकुर के चित्रों की रूपभाषा, सौमित्र मोहन, समकालीन कला, प्रवेशांक 1982, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली, पृ.सं.45
10. शान्तिनिकेतन में प्रो.सौमिक नन्दी मजूमदार से की गई बातचीत के दौरान
11. Mitra, Ashok, Four Painters, New Age, Kolkata, 1965, p.n. -64

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. I

अमृता शेरगिल के आंतरिक मन की उदासी एवं संवेदना में डूबे चित्र-फलक

करूणा *

प्रस्तावना - अमृता शेरगिल की कला परिपक्वता और गहराई लिए हुए है। सिर्फ 28 वर्ष की छोटी सी उम्र का कमाल है। उनके व्यक्तित्व का प्रभाव ही ऐसा मोहक था कि वह अपनी संवेदनीय दृष्टि की चमक जिधर भी डालती उनकी कलाकृतियों में वह रूप बनकर खिल उठता। अमृता शेरगिल देखने में जितनी सुन्दर थी, उनकी जिंदगी का हर पल धड़कता था, उनकी आवाज व चरित्र में गम्भीरता थी। यही सौंदर्य व गम्भीरता उनकी कलाकृतियों में उनके रंगों में यही जिन्दगी की धड़कन उनके व्यक्ति रूपों व आकारों की तटस्था उनकी कृतियों की उदासी में घुलकर भारतीय कला को एक ऐसा नया मोड़ देती है, जो अनदेखा नहीं किया जा सकता।

छायाचित्र 1

अमृता शेरगिल ने अपनी कृतियों को स्वतंत्रता से चित्रित किया। उनकी कृतियों में सत्यता का प्रतीकात्मक रूप है। अमृता शेरगिल को गुजरे हुए 103 साल हो गये लेकिन आज भी जब हम दिल्ली में मौजूद नेशनल गैलरी ऑफ मॉडर्न आर्ट में अमृता शेरगिल की कलाकृतियों वाले हॉल में जाते है, तो उनकी कलाकृति जिन्दगी के नजदीक लाकर खड़ा कर देती है। उस दोपहर एक उदासी अलग- अलग रंगों में चमक रही थी। हर कैनवास पर अकेलापन बिखरा हुआ था। हालांकि अकेलेपन की उस संवेदना में कुछ चेहरे ऐसे थे, जो जुगनू की तरह टिमटिमा रहे थे। जैसे उन मासूम चेहरों ने समूची धरती का अवसाद अपने अंदर समेटकर हंसने की कला सीख ली हो। ठहरी हुई फिज़ाओं ने इस एहसास को और घनीभूत कर दिया था। रंगों की उदासीन संवेदना में इन आँखों ने मेरा स्वागत किया था। उन आँखों ने उदासी के भाव को कुछ कम किया। ये आँखे थी अमृता शेरगिल की। उन बड़ी- बड़ी हिरणी जैसी आँखों में एक सम्मोहन था। एक ऐसा रहस्मय आकर्षण, जिसमें फंसने के बाद समय का भान समाप्त हो जाता हैं। पाश्चात्य परिवेश में रहते हुए, भारतीय समाज की आत्मा व पहाड़ी आँचलों में बसने वाले जन-जीवन से पीड़ित मानवता की उदासीन संवेदना को अपनी कला में विशेष स्थान देने वाली कोई ओर नहीं बल्कि प्रथम आधुनिक भारतीय महिला कलाकार 'अमृता शेरगिल' थी **(देखिए छायाचित्र 1)**।

अमृता का संवेदनीय जीवन भले ही त्रासद बीता लेकिन उन्होंने उदास दुनिया के सच्चे सपनों के अद्‌भुत भावों की अभिव्यक्ति को अपनी कलाकृतियों में उजागर किया। उन्होंने भारतीय ग्राम्य जीवन की आत्मा के बुनियादी तत्वों को उदासी, हताशा और अभावों के माध्यम से चित्रित किया है। उन्होंने पहाड़ी आंचलों में बसने वाले सीधे सरल स्वभाव वाले ग्रामीणों को आत्माभिव्यक्ति का माध्यम बनाया **(देखिए चित्रफलक 1 पहाड़ी महिलाएँ)**, तथा कुरूपता में भी अद्‌भुत रूप से सुन्दर दुबले पतले सांवले रंग वाले शरीर को दर्शाया है। उनकी उदास संवेदना भरी आँखों का उन पर पड़ने वाले प्रभाव को कैनवास पर उतारा है। अमृता की कलाकृति उनके व्यक्तित्व की संरचना है। उनको उदासी भरा वातावरण अपनी ओर आकर्षित करता रहा। यही अमृता की कलाकृतियों में मूल विशेषता विद्यमान है। अमृता की कल्पना के उड़ान में बने उनके तमाम चित्र जो भारतीय समाज की उदासीन संवेदना में आ कर बनाऐ वह एक व्यापक संवेदना, विवाद और करूणा की जीती-जागती तस्वीर हैं।

पहाड़ी महिलाएँ

अमृता की कला में भारतीय सामान्य जनजीवन की निष्काम - समर्पितवृत्ति का दर्शन हैं। 'अमृता की शख्सियत में पिता की तरफ से नफासत, बौद्धिकता और दृढ़ता आई तो माँ के हिस्से से उसे गहरी संवेदनशीलता और उदासी मिली। बाद में यही उदासी और अकेलापन उसकी रचनाओं में बार-बार सामने आया। रचनाकार के रूप में अमृता अपनी माँ की अनुकृति थी तो एक आम इंसान के रूप में अपने पिता की कॉर्बन कॉपी। आगे चलकर अमृता के जीवन को इन्हीं दो प्रवृत्तियों के बीच सजना-संवरना, बनना और बिगड़ना था। अमृता का जीवन हर मामले में असामान्य था और इसके सबूत बचपन से ही मिलने लगे थे। अमृता के जीवन में स्वतंत्रता के लिए जो आग्रह दिखता है वह उसके व्यक्तित्व का खास पहलू हैं। **रवींद्रनाथ ठाकुर ने गीतांजलि में लिखा है-**'जहाँ दिमाग भय से मुक्त हो/जहाँ सिर गर्व से उठा हुआ हो/जहाँ ज्ञान पर किसी का एकाधिकार न हो/स्वतंत्रता के उस स्वर्ग में मेरे प्रभु/मेरा देश जागृत हो।' अमृता का जीवन स्वतंत्रता के इस उद्घोष को कम उम्र में ही सार्थक करने लगा था। उनके मासूम हाथों ने जब कूची थामी थी। तब उनकी

* रिसर्च एसोसिएट (चित्रकला) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

उम्र महज पाँच साल ही थी। तब शायद ही किसी ने सोचा होगा कि आगे चलकर इन हाथों से भारतीय कला की धारा बदल देने वाली तस्वीरें उकेरी जाएंगी।'[1] एक ओर बुडापेस्ट की संपन्न सांस्कृतिक संवेदना में अमृता का पालन-पोषण हो रहा था और दूसरी ओर पूरा यूरोप विश्वयुद्ध की त्रासदी झेल रहा था। **अमृता का जन्म प्रथम विश्वयुद्ध से ठीक एक साल पहले 1913 में हुआ था।** हालांकि यह विश्वयुद्ध 1918 में समाप्त हो गया था, लेकिन युद्ध के असर से अमृता का बाल मन त्रासदी की उदासीन संवेदना से अछूता नही रहा। अमृता की शख्सियत और संवेदनीय रचनाओं में जो अकेलापन व अवसाद दिखता है। उसके पीछे युद्ध में फैली तबाही भी एक बड़ा कारण हैं। यह महज एक संयोग हो सकता है, लेकिन सच हैं। पहले विश्वयुद्ध के समय अमृता का बचपन विकसित हो रहा था, और दूसरे विश्वयुद्ध के वक्त अमृता के अंदर का कलाकार विकासशील था। अमृता के जीवन के दोनों छोर पर उदासीन संवेदना की प्रेतछाया थी। कहने की जरूरत भी नहीं है कि अमृता का मनोजगत इन उदासीन संवेदना की गहराई से प्रभावित हुआ था।

अमृता कहती है -बहुत से कलाकार भारत की गरीबी को अपनी कलाकृतियों का हिस्सा नहीं बनाते, व उदासीन संवेदना से पीड़ित परिवारों की दयनीय दशा को छिपाते हैं, परन्तु यही तो भारतीय समाज की सुन्दरता है। जिसे अमृता ने बदसूरती के अंदर विचित्र खूबसूरती कहकर संबोधित किया था। जो जीवन दूसरों की नजरों में खुरदुरा व अनगढ़ था, अमृता को उसी में सच्चे सौंदर्य की प्राप्ति होती थी। अमृता शेरगिल ने भारतीय सुन्दरता के इस पक्ष को अपनी कलाकृतियों में विशेष स्थान दिया हैं। **'सन् 1936 में आर. सी. टंडन के नाम लिखे एक पत्र में अमृता ने इस बात को रेखांकित किया है कि क्यों मुझे विचित्र किस्म के तथाकथित 'असुन्दर' मॉडल, उदासी का माहौल पसंद है। दुनिया जिन चीजों को सुन्दर मानती है मेरे लिए वे सुन्दर नहीं हैं। मेरे भीतर कुछ ऐसा है कि मैं उदास दिखने वाली चीजों से जुड़ जाती हूँ। 'प्रसन्न' चीजें मुझे आकर्षित नहीं करती हैं। पर इस उदासी की दुनिया की अभिव्यक्ति अधिक जटिल हैं-उसे पकड़ना आसान नहीं है। इसके अलावा बहुत लोग भारतीय जीवन का सुखी रूप चित्रित कर रहे हैं, तो क्या मुझे दूसरे हिस्से को चित्रित करने का अधिकार नहीं है?'**[2] अमृता ने अनेक रूपों में मानव चरित्र और समाज की सम्पूर्ण कलात्मक चेतनता का निर्माण किया हैं। उन्होंने अपना समस्त जीवन सामाजिक संघर्ष की उदासीन संवेदना में झाँक दिया। उनके चित्रों में चित्रित आकृतियों की असहाय, निरीह, उदास तथा घुटन भरे दैनिक जीवन का जीता-जागता प्रतिबिम्ब है, जो दर्शक के अंतर्मन को भाव-विभोर कर देता हैं।

कभी-कभी सोचकर आश्चर्य होता है कि अमृता की करूणामय प्रतिभा का आकलन उनकी मृत्यु के बाद किया गया। वह उनके समसामायिक समीक्षकों, कलाकारों ने पहले क्यों नहीं किया जो उनकी आत्मा को और भी तृप्ति प्रदान करती। **उनके शब्दों में -'मैं अपनी कला की सराहना सुनने को तरस रही हूँ सही अर्थो में भूखी हूँ।'**[3] अमृता ने अपनी कृतियों में अपने वर्तमान समय को वास्तविक रूप दिया। सबसे अधिक उन्होंने भारतीय ग्राम्य जीवन के भविष्य की आत्मीयता को सौम्यता व वास्तविकता के साथ चित्रित किया। उनकी कलाकृतियों में भारतीय जीवन की उदासी का भविष्य समा गया। सच्चे अर्थों में कला का उद्देश्य यही होता है कि वर्तमान के जरिये भविष्य की संरचना करना। अमृता ने यह कार्य अपनी कलाकृतियों के जरिये किया। अन्यथा आज अमृता की कलाकृतियों को भारतीय कला में जो पहचान व सम्मान मिला वह कब का मर चुका होता। अमृता जब भारत में आयी थी तो उनके आस-पास गरीबी उदासी की दुनिया थी जिससे एक संवेदनशील कलाकार का बचकर निकलना मुश्किल था। उन्होंने अपनी कलाकृति में ऐसी संवेदनशील दुनिया का चित्रण किया जिनकी आँखों की अंतहीन उदासी दर्शकों के मन को झकझोर कर रख दे। अमृता की इस उदासी से न तो उनकी **'सफेद वस्त्र में दो महिला'** 1935 बच सकी **(देखिए चित्रफलक-3) 'दक्षिण भारतीय ग्रामीण बाजार जाते हुए' (देखिए चित्रफलक-4)**, न ही बचपन की उमंगो से भरी **'ग्रामीण बालिकाएं'**1941 **(देखिए चित्रफलक-5)**। अमृता की ज्यादातर कृतियों में आकृतियाँ कुछ विशिष्ट लम्बी, पतले-पतले हाथ-पैरों वाली, विशाल नेत्रों, मोटे होठ युक्त चित्रित हैं। अमृता की कृतियों में आकृतियों का समूह मिलता है लेकिन वे एक-दूसरे के साथ होते हुए भी साथ नहीं होते। हरेक का अकेलापन उसके अपने साथ होता है और वह उसी अकेलेपन में डूबे रहते है।

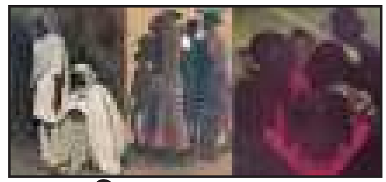

चित्रफलक-3, 4, 5

अमृता ने भारतीय कला को एक ऐसी अनुभूति का एहसास दिया जो होते हुए भी न होने का आभास कराती है। उदासी में डूबी रहती है। ऐसी भारतीय संसार की उदासी का चित्रण किया, जिसकी अद्वितीयता को लांघ पाना अभी तक सम्भव नहीं हो पाया। अमृता ने अपनी कृतियों में सदा अनछुए विषयों का चुनाव किया। अमृता ने अपनी कलाकृतियों में मिनियेचर चित्रकला की परम्परा का पालन किया है **(देखिए चित्रफलक-6 'हाथी विचरण'**1940**)** और उनकी कुछ कृतियों में मुगल शैली का प्रभाव परिलक्षित होता है **(देखिए चित्रफलक-7 'ग्रीन पूल में हाथियों का स्नान य**1938**)**। भारत के ग्रामीणों के उदास थके चेहरे वीरान आँखों में ठहराव सदियों का धैर्य उनके चित्रों को अवसाद की एक महागाथा में अकृतिमूल्य अध्याय बन गये है। उनकी आकृतियों में जीने की कोई आकांक्षा न हो ऐसी प्रतीत होती है। उनका कलात्मक संसार जनता के दु:ख-दर्द से जुड़ा था।

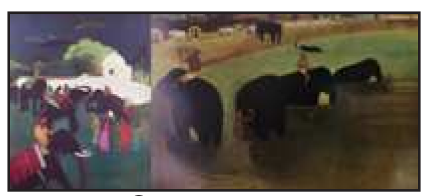

चित्रफलक-6, 7

'तरूणाई के स्वप्न तो सुहाने होते ही हैं और उस कलाकार के जो फ्रांस में वैभव और सम्पन्नता के बीच पली हो, स्वप्नों के बारे में सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि उसने भारत के बारे में क्या-क्या सोचा होगा, कैसी-कैसी आशाएं और आकांक्षाएं संजोई होगी? लेकिन अमृता को यहाँ आकर जब यह लिखना पड़ा, तो कितनी वेदना रही होगी उनके मन में! **अमृता ने लिखा- 'सुंदर हरे-भरे मैदानों में धीरे-धीरे चलते-फिरते काले शरीर, दु:खी चेहरे, अत्यंत कृश, दुबले-पतले स्त्री और पुरूष-ऐसे दिखाई देते है, जैसे छायाचित्र चल रहे हों और उनके ऊपर एक अकथनीय उदासी का साम्राज्य छाया हो।'** अमृता की कल्पना की उड़ान तो यथार्थ से टकराकर चूर-चूर हो ही गई, साथ ही इसकी उदासी के अकथनीय साम्राज्य

ने अमृता को आकर घेर लिया। वह उनके समूचे कृतित्व और व्यक्तित्वपर हावी हो गई। अमृता की कोई सी भी कलाकृति उठा लीजिए, वह इसी अकथनीय उदासी और व्यापक संवेदना से ओत-प्रोत मिलेगी। सच्चाई तो यह है कि अमृता के मन की करूणा और मर्माहत विषाद की तीव्रतर अनुभूति ही उनके चित्रों में अपना रूपाकार ले बैठी है। बड़ी-बड़ी आँखों की अनिश्चितता और भय से ग्रस्त पुतलियां, सहज और निष्प्रभ आकृतियाँ, चुपचाप किसी नियति को स्वीकारता-सा विवश वातावरण-इतना बोझिल और अवसाद भरा है कि मन पर अपना करूण प्रभाव छोड़े बिना नहीं रहता'[4]।

चित्रफलक-8

अमृता की कलाकृतियों में जैसे-जैसे प्राणियों का अकेलापन, उदासी, अभाव, निर्धनता बढ़ती गई वैसे-वैसे उनकी कलाकृतियों की सार्थकता और भी घनीभूत होकर उभरती रही। अमृता की कृतियों की उदासी व अकेलापन मानव जीवन से पशुजगत में धीरे-धीरे व्याप्त हो गया। उनकी कलाकृति ऊँट, हाथी, गाय, भैंसे, घोड़े **(देखिए चित्रफलक-8 'दो हाथी'1940)** आदि इसी उदासीन संवेदना में डूबे जीवन्त फलक है।

अमृता अपनी कलात्मक प्रतिभा के कारण एक किवंदति बन गई। उनका अपने माध्यम तैलचित्र पर असाधारण अधिकार था। जो उनकी तुलिका को चित्रफलक पर आसानी से एंद्रिकता के साथ बहने देता है। उनकी रंगीन तूलिका से उनके आंतरिक मन का दर्द और गहरी उदासीनता अभिव्यक्त होती है। अमृता ने जो भी कृति बनायी उनमें गजब की ऊष्मा है जो उनके विविध रंगीन जीवन से आयी थी। उन्होंने भारतीय गांवों के साधारण लोगों का चित्रण कर उन्हें दैनिक क्रियाकलापों में व्यस्त दिखाकर उनके भीतरी संसार का अद्भुत चित्रण किया। उनकी रेखाओं व रूपागारों में नाटकीय बदलाव आया। भारतीय देश व भारतीय लोगों ने अमृता पर गहरा प्रभाव डाला। उनकी कृतियों के रंग यात्रा के या पर्यटन विभाग के ही रंग नहीं थे बल्कि उनमें भारतीय लोगों के उदासीन जीवन के रंग थे। सर्दी की हल्की धूप में चमकते पीले भूरे रंग थे और सांवले उदास चेहरे वाले दुबले-पतले स्त्री और पुरूष थे। यह निर्विवाद सत्य है कि अमृता की कृतियों के रंगों के अलौकिक संयोजन और विषय-वस्तु ने कलाकारों एवं कला प्रेमियों के आंतरिक मन की गहराई को स्पर्श किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 विश्वदीपक, 'रंगों में गुनगुनाती एक उदास धुन', श्रीवास्तव, आलोक, अहा!जिंदगी, वर्ष 9, अंक 12, अगस्त 2013, जयपुर भास्कर परिसर, पृ.सं.-72
2 भारद्धाज, विनोद, 'उदासी में छिपे जिंदगी के सच्चे सपने', मिश्र, नीलाभ, आउटलुक, वर्ष 5, अंक 8, अगस्त 2013, पृ.सं.-71
3 नंदन, कन्हैयालाल, अमृता शेरगिल, पराग प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, जनवरी 1987, पृ.सं.-105
4 चंदिकेश, जगदीश, 'टुटे सपनों की उड़ान', सोतिया, सुभाष, आजकल, वर्ष 58, अंक 3, पूर्णाक 681, जुलाई 2001, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, पृ.सं.-12

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. I

लालचन्द मारोठिया का प्रकृति संसार

प्रो. किरन सरना * पारूल बापलावत **

प्रस्तावना – 'कलाकार की रचनाधर्मिता उसे नित नूतन प्रयोग के लिए बाध्य करती है, यह प्रयोग, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश के समीक्षात्मक अध्ययन से उत्प्रेरित होते हैं और चिन्तन की प्रयोगाशाला में पककर अभिव्यक्ति के उत्कर्ष को प्राप्त करते हैं। सृजन की इस प्रक्रिया में कलाकार अपनी अभिव्यक्ति के लिए माध्यम की खोज करता है। चित्रकला प्रारम्भ से ही भाव सम्प्रेषण का सफल माध्यम रही है और चित्रकार उसका संवाहक। आधुनिक चित्रकार लालचन्द मारोठिया आधुनिक चित्रकला के ऐसे संवाहक है, जो भाव सम्प्रेषण की निरन्तर प्रक्रिया में एक सजग प्रहरी के समान तपस्यारत है।'[1] और उनकी यह सजगता उन्हें नवीन सृजन की और बाध्य करती है। जिसके कारण वे सौन्दर्यात्मक अनुभूतियों काबड़ी ही तल्लीनता से अपने भीतर आत्मसात् कर पाते हैं। 'लाल चन्द मारोठिया का जन्म जिन परिस्थितियों में हुआ और प्रारंभिक विकास हुआ वे अपने आप में इतनी विविधतापूर्ण है कि निश्चय ही उसकी आँच में तपकर कोई विराट व्यक्तित्व ही निकल सकता था।'[2] श्री लालचन्द मारोठिया का जन्म 8 सितम्बर 1949 को जयपुर में हुआ। कला सृजन की प्रेरणा बाल्यकाल में अपने चचेरे भाई श्री नारायण जी मारोठिया से मिली। ये अचेतन मन की इच्छाएँ कलाकार की कल्पना का आधार बनी। 'मारोठिया की कला सृजन की प्रेरणा का स्त्रोत प्रकृति भी रही। डूँगरपुर जिले के सुप्रसिद्ध वेणेश्वर मेले के अवसर पर उछलती कूदती, मचलती, उफनती, नदी ओर उसकी तरंगों, लहरों की प्रफुल्लता में गोल-मटोल हुए छोटे-छोटे सालिगराम किनारों को तोड़ती, वृक्षों की जड़ों को समेटती हुई नदी ने लालचन्द मारोठिया के मन में भूदृश्यांकन का बीजांकुर किया और विषय वस्तु के साथ तादात्म्य स्थापित कर उसे रंगों और रेखाओं के माध्यम से एक लयात्मक अभिव्यक्ति दे हर कृति को अनूठा व बेजोड़ बना दिया।'[3]

इस प्रकार कला की अथक पिपासा ने ही मारोठिया को अनेक विषयों व तकनीकों में कार्य करने की प्रेरणा प्रदान की आपने किसी एक विषय व तकनीक में बँधकर कार्य नहीं किया अपितु एक के पश्चात् दूसरे विषय की खोज में निरन्तर एक सजग प्रहरी की भाँति तपस्यारत रहे। उनका स्नेह संवलित स्वप्निल संसार व स्नेह सात्विक जीवन व वृहद अनुशीलन उनकी कृतियों में पारदर्शी रूप में प्रतिफलित हुआ है। उनके द्वारा चित्रित धार्मिक, सामाजिक, ऐतिहासिक चित्रों में एक भाव भीनापन है। जो उनके विराट व्यक्तित्व का ही प्रतिबिम्ब का एक अंश है। 'धार्मिक पौराणिक कथाओं, प्रसंगों से चुने विषयों को लालचन्द मारोठिया जीते हुए रंगों और रेखाओं का ओजमय रूप सिरजते है। कृष्ण शिव और समस्त देवी-देवताओं से जुड़े आख्यानों के चित्रफलक में वह प्रसंग या उससे जुड़ी कथा पूरी तरह से वहाँ नहीं होकर भी दृश्य में उसकी अनुगूँज चित्र देखने के बाद बची रह जाती है। देवी-देवताओं के प्रसंग के अंतर्गत उनके इन चित्रों में उस वातावरण को भी जैसे पकड़ा गया है, जिसकी मन कल्पना करता है। परन्तु कैनवास पर उनके चरित्र कथ्य को जीवन्त करते दृष्य से परे की संवेदना की भी अनुभूति कराते हैं।'[4]

राधा-कृष्ण – प्रस्तुत चित्र कलाकार द्वारा 1982 में एक्रेलिक रंग द्वारा निर्मित चित्र है। चित्र में कृष्ण को नायक व राधा को नायिका के रूप में प्रेम के भावों को रूप में अंकित किया गया है। राधा श्री कृष्ण की प्रेमिका है। चित्र में कलाकार ने राधा को भाव अनुभूति की चरम अवस्था में चित्रित किया है। जहाँ सब कुछ मिट जाता है, रह जाता है सिर्फ वह जो श्रीकृष्ण है, राधा मय होकर प्रेम की सर्वोच्च कल्पना राधा को समाहित है। राधा और कृष्ण के प्रेम के द्वारा व्याकुलता रसनागरता को लोक जीवन में प्रतिबिम्बित किया गया है। कलाकार की कला में राधा का रूप गौरवपूर्ण, प्रेम की पराकाष्ठा को समर्पित अद्वितीय नारी का वह रूप है, जो प्रेम को सम्पूर्णता प्रदान करता है। प्रेम जो सृजन का आधार है, उद्दाम ऊर्जा है जीवन की। कृष्ण और राधा के सहज, सरल और उन्मुक्त प्रेम को उमंग के साथ अपनाया गया है। यह प्रेम समष्टि के चित् में निरन्तर एक अनादि, अनन्त प्रेम की आकुलता भरता रहता है। कृति के भवनों में दृष्य परिपेक्ष्य का प्रयोग किया गया है। चित्रों की पृष्ठभूमि या चित्रों के मुख्य भाग में योजना को ठोस स्वरूप प्रदान करने के लिए भवन को सफेद व गुलाबी रंग में चित्रित किया गया है।(चित्र संख्या 1)

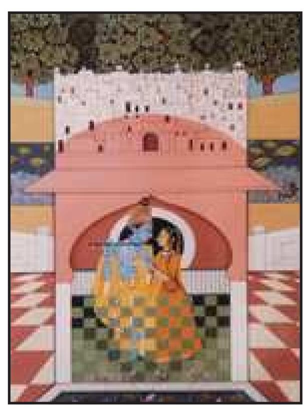

(चित्र संख्या 1)

एक कलाकार समाज का सृ41ष्टा व द्रष्टा दोनों होता है, यही कारण है कि समाज का कोई भी अंश उसकी तूलिका से अछूता नहीं रह पाता है। चित्रकार मारोठिया ने भी अपने चित्रों में समाज का यथार्थ चित्र खींचा है। मारोठिया ने मानवीय संवेदना का सचित्रण अपनी प्रस्तुत कृति दो भिक्षु के

* प्रोफेसर (दृश्यकला विभाग) वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली (राज.) भारत
** शोधार्थी (कला संकाय) वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली (राज.) भारत

माध्यम से किया है। कृति में मटमैले, भूरे, काले हल्के नीले रंग का प्रयोग कर भिक्षु वर्ग की लाचारी उदासीनता, निर्धनता को समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है। (चित्र संख्या 2)

(चित्र संख्या 2)

लालचन्द मारोठिया के ऐतिहासिक चित्रों में हमें भारतीय इतिहास की गौरव गाथा के दर्शन होते हैं। 'लालचन्द मारोठिया राजस्थान के इतिहास, लोक विश्वास व लोक आस्थाओं से जुड़ चरित्रों के जीवंत चितराम को कैनवास पर उकेरते हैं। ऐतिहासिक चरित्रों का कैनवास पर रूपान्तरण करते लालचन्द मारोठिया के बहुतेरे चित्रों में से एक है पद्मिनी का जौहर। ऐसा ही राजस्थानी प्रेमाख्यानों पर उनकी लैला-मजनू की कलाकृतियाँ हैं। जिनमें उन्होंने पारम्परिक चित्र शैलियों में लोक का मेल करते हुए रंग-रेखाओं के सर्वथा नए संदर्भ दिए हैं।'[5]

लैला मजनू - प्रस्तुत चित्र में एक लोक गाथा की सृष्टि हुई जिसमें प्रेम की ज्योति प्रदीप्त है। नायक नायिका के हृदय से प्रस्फुटित सरल, निश्चल प्रेम जनमानस को भी सरोबार कर रहा है। विरह की मार्मिक अभिव्यक्ति इस गाथा की प्रमुख विशेषता है। सम्पूर्ण चित्र को अनेक भागों में संयोजित करने की चेष्टा की है। हरा, गुलाबी, नीला, पीले गेरू रंग का पूर्ण संयोजन है। (चित्र संख्या 3)

(चित्र संख्या 3)

मारोठिया के प्रकृति प्रेम को परिलक्षित करती उनकी रेखाचित्रों की श्रृंखला है। 'मारोठिया ने स्याह सफेद रेखाचित्रों में निराशा, स्त्रियों की स्थिति और विवशता तांत्रिक जाल, सूरज और अंधेरा, जीवन-संघर्ष, वृक्ष आदमी और मशीन आदि रेखांकनों में सधी हुई रेखाओं के माध्यम से विविध प्रतीकों का उपयोग करते हुए मारोठिया के रेखाकंनों में सरल और सहज ढंग से जीवन के उन सभी पहलुओं को सशक्त अभिव्यक्ति दी है।'[6] आपने अपने रेखाचित्रों के माध्यम से समाज में नारी की वास्तविक स्थिति को अपने चित्रों में परिभाषित किया है।

रेखाचित्र - प्रस्तुत रेखाचित्र के माध्यम से कलाकार ने नारी की वास्तविक स्थिति को अपने चित्रों में परिभाषित किया है। मछली को बन्धनों से जकड़ी हुई प्रदर्शित कर अपने मनोवेगों के सन्ताप को पूर्ण विराम दिया है। कृति में नारी के जीवन के संघर्ष की वेदना को संवेदना की सुकुमारता को बड़ी ही सौन्दर्यात्मक रूप में चित्र सृजन का माध्यम बनाया है। नारी को मत्स्य स्त्री रूप में चित्रित कर दिखाने का प्रयास किया है कि आज कि नारी परतन्त्रता के बन्धनों में बँधी हुई शोषण व पीड़ा का शिकार हो रही है। (रेखाचित्र संख्या-1)

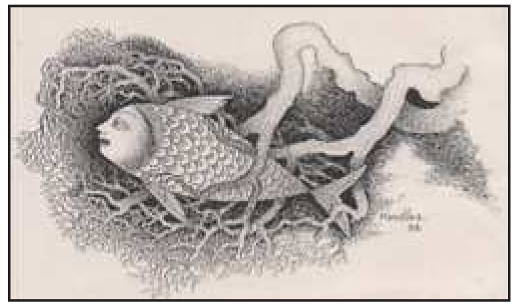

(रेखाचित्र संख्या-1)

प्रकृति व जीवन को एक साथ चित्रित करते हुए मारोठिया ने रंगों व लयात्मक रेखाओं में विभिन्न प्रजातियों के पक्षियों को अपनी ही शैली में विकसित कर संयोजित किया है। नदी, पर्वतों, पेड़ों प्राकृतिक दृश्यों के साथ पक्षियों को संयोजित कर मारोठिया के पक्षियों पर आधारित संयोजन इतने सौंदर्यपूर्ण बन पड़े हैं कि दृष्यगत होते ही बनते हैं। कभी नदी के किनारे, तालाब के किनारे, कभी पर्वत के नीचे, कभी पेड़ के ऊपर, कभी आसमान में स्वच्छन्द रूप से विचरण करते, प्रजनन करते, कभी अपने घौसलों से निकलकर जाते हुए अनन्त रूपों व मुद्राओं में प्राकृत दृश्यों के साथ विभिन्न प्रजातियों के पक्षियों को मारोठिया ने अत्यन्त सौन्दर्य पूर्ण रूप में संयोजित किया है।

प्रस्तुत चित्र में विभिन्न प्रकार के पक्षियों की विभिन्न मुद्राओं व क्रिया कलापों का जलरंगों में सूक्ष्म अवलोकन शक्ति और सशक्त स्मृति के पुनरावर्तन के प्रभाव से अंकित किया है। कृति में जहाँ पक्षियों के नाना प्रकार एवं आचरण है। वहीं प्रकृति की ऋतुओं को भी यथेष्ट अवसर मिला है। कृति में बगुले जल में तैर रहे हैं तो कहीं आपस में चोंच मिला रहे हैं। कृति में पक्षियों के आपसी प्रेमालाप का मोहक दृष्य देखने को मिल रहा है। जल रंग पारदर्शिता व कोमलता लिए हुए हैं। पक्षियों का उड़ना या वृक्षों पर बैठा समूह दूरी का आभास कराता दृष्टिगत हो रहा है। (चित्र संख्या 4)

(चित्र संख्या 4)

लालचन्द मारोठिया के दृश्य चित्रों की शृंखला हमें कल्पना लोक के अद्‌भुत सौन्दर्य की सर्जना करते प्रतीत होते हैं। जहाँ 'प्रकृति जीवन की श्वासों से स्पन्दित होती प्रतीत होती रही है। एक ओर उनके चित्रों में मानव जीवन की गहन अनुभूति है, तो दूसरी ओर प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण भी है। उनके प्रकृति चित्रण के नियमित व्यापारों में मानवीय भावनाओं की छाया स्पष्ट रूप से परिलक्षित हुई है। उनके चित्रों में प्रकृति समस्त मानवीय जीवन में एकाकार किए हुए हैं।'[7]

प्रस्तुत चित्र में जलरंगों की पारदर्शिता स्वच्छन्द स्पन्दन करते हुए प्रकृति के सौन्दर्य को कल्पनातीत भावों के रूप में प्रस्तुत किया है। कृति में हरे व पीले रंग का सामंजस्य कलाकार की दक्ष तूलिका की ओर संकेत कर रहा है। प्रस्तुत दृश्य चित्र में तनों का आपसी स्पर्श प्रकृति के अंत रंग रूपों को उद्‌घाटित करता प्रतीत हो रहा है। साथ ही सम्पूर्ण दृष्य चित्र में कलाकार ने जलरंग की मौलिकता को अति संतुलित, संगठित रूप में दर्शाया है। जिसके कारण सम्पूर्ण दृश्य चित्र में सौन्दर्यात्मकता की तीव्र अनुभूति प्रतीत हो रही है। हरे रंग की हरीतिमा व पीले रंग का मार्मिक सामंजस्य पूर्ण स्पर्श दे कृति में पतझड़ के आगमन की ओर संकेत देर रहा है। (चित्र संख्या 5)

(चित्र संख्या 5)

इस प्रकार लालचन्द मारोठिया की रचनात्मकता हेतु उनकी अथक पिपासा ने उन्हें विभिन्न विषयों का सृजन करते हुए प्रकृति व उसके वातावरण और उसके स्वभाव को अपनी तूलिका का विषय बनाया है। आपके धार्मिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, प्राकृतिक, पक्षी चित्रण, में प्रकृति अपने अनन्त रूपों में आ बसी है। उनके चित्रों में व्यवहार के विषय से लेकर प्राकृतिक विषय तक के संदर्भ आ जाते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. कला दीर्घा, अप्रैल 2010, वर्ष 10, अंक 20, पृ.सं.85, नट रंगाभिनय की त्रिवेणी : गोपाल मधुकर चतुर्वेदी, डॉ.नीरू, सम्पादक – अवधेश मिश्र, प्रकाशन उत्कर्ष प्रतिष्ठान, गोमती नगर, लखनऊ।
2. मेहता नरेश, हिन्दी उपन्यासों के विकास में नरेश मेहता का अवदान, प्रकाशन 35 क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2009, पृ.सं. 35
3. कला किरण त्रैमासिक कला पत्रिका मई–जुलाई 1999, प्रेमचन्द गोस्वामी
4. कला दीर्घा, अक्टूबर 2014–15, अंक 29, पृ.सं.85, रंग रेखाओं का मोहक छंद, एन के मिश्र की कला, डॉ.राजेश कुमार, सम्पादक अवधेश मिश्र, प्रकाशन, उत्कर्ष प्रतिष्ठान, गोमती नगर, लखनऊ।
5. कला दीर्घा, अप्रैल 2014, वर्ष–14, अंक 29, पृ.सं.20, चित्रों में शब्द संवेदना के संस्कार कन्हैया लाल वर्मा की कला, डॉ.राजेश कुमार व्यास सम्पादक अवधेश मिश्र प्रकाशन, उत्कर्ष प्रतिष्ठान, गोमती नगर लखनऊ।
6. इतवारी पत्रिका 28–11–82, मारोठिया के चित्र, रामकुमार
7. माथुर वाणी, प्रसाद का सौंदर्य दर्शन, बाफना प्रकाशन चौड़ा रास्ता, जयपुर, संस्करण–1971, पृ.सं.93

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. I

प्रकृति के वातायन में सौंदर्य का राग रचते जगमोहन माथोड़िया

प्रो. किरन सरना * प्रिया बापलावत **

प्रस्तावना – प्रकृति अनादिकाल से मानव की संगनी रही है, तभी मानव और प्रकृति का पुरातन संयोग है, जिसके कारण दोनों ही एक दूसरे पर मुग्ध रहे हैं। आदिकालीन मानव कन्दराओं से ही उसने जीवन की शुरूआत की तथा अपने जीवन के अनेक पड़ावों को पूरा किया। 'इस तथ्य को सभी स्वीकार करते हैं कि प्रकृति के प्रेरक नैसर्गिक स्वरूप को देखकर व्यक्ति आदिकाल से ही सृजन के लिए प्रेरित होता रहा है। प्रागैतिहासिक काल में मनुष्य द्वारा बनाये गये पशु–पक्षियों के चित्रों के पीछे भी प्रकृति की ही प्रेरणा थी।'[1] प्रकृति के प्रति उसका सौन्दर्यात्मक दृष्टिकोण होने के कारण ही उसने अपने निवास स्थलों, पर्वतों और गुफाओं में वन्य जीवों के चित्र उकेरे। तथा शिकार चित्रों की प्रेरणा भी उसे प्रकृति से ही प्राप्त हुई। यही कारण है कि आरम्भ से ही उसने नदी, पहाड़, पेड़–पौधे और फूलपत्तों को अपनी तूलिका का विषय नहीं बनाया अपितु पशु–पक्षियों के साथ–साथ मानवाकृतियाँ बनायी तथा वे भी प्रकृति का अनुसरण करने वाली थी।

हड़प्पा और मोहनजोदड़ों की खुदाई से हमें सिंधुकाल की सभ्यता से अनेक कलात्मक उदाहरण प्राप्त होते हैं, उनसे इस तथ्य की पुष्टि होती है कि प्रागैतिहासिक काल से जब मनुष्य ने इतिहास काल की सीमा में प्रवेश किया तब भी वह नैसर्गिक चित्रण को नहीं भूल पाया तथा अपनी विभिन्न अभिव्यक्तियों में उसने प्रकृति की मनोरम छटा को बिखेरा।

मौर्यकाल, शुंगकाल गांधार (मथुरा) और गुप्त काल में बनी विशुद्ध भारतीय परिवेश की प्राचीन मूर्तिकला इस तथ्य का प्रमाण है कि सभ्यता के ऊषा काल में मनुष्य प्रकृति के अधिक निकट आया और उसने जीव जन्तुओं तथा लता बेलों से अपने भव्य मूर्ति फलकों को सुशोभित किया तथा बुद्ध काल की सभी कलाएँ प्रकृति के अनुपम स्वरूप से सुसज्जित व आच्छादित रही।

'वन्य जीवों, पेड़, पौधों, लता–बेलों तथा फल–फूलों का श्रेष्ठ और प्रभाव स्वरूप हमें अजंता, बाघ, व ऐलोरा जैसे प्राचीन कला के अद्वितीय केन्द्रों में देखने को मिलते हैं।'[2] जहाँ कलाकार ने प्रकृति के नैसर्गिक सौन्दर्य को बड़े ही रूचिकर रूप में अपनी कलाकृति में चित्रित किया है। अजंता के गुफा चित्रों में हमें प्रकृति के मनोरम संसार की झाँकी अनेक चित्र फलकों में दृष्टिगत होती है। जो दर्शक के चित्त पर सौन्दर्यमयी अमिट छाप छोड़ते हैं।

'जब हम मध्यकाल की लघु चित्रकला पर दृष्टिपात करते हैं तो हम पाते हैं कि प्रकृति जैसे कला की सहचरी बनकर प्रत्येक लघुचित्र का एक अंग बन गई। शांत, सघन तथा मुगल काल में बने लघुचित्रों को देखने से पता चलता है कि प्राकृतिक उपादानों पेड़, पहाड़, नदी नालों तथा पक्षियों से युक्त इस शैली के चित्रों में भी कलाकारों में प्रकृति से पर्याप्त प्रेरणा ग्रहण कर उसे चित्रफलक पर उतारा। जहाँगीर की भाँति मुगल चित्रकला के आश्रयदाता तथा दरबारी चित्रकार भी प्रकृति के प्रति पर्याप्त आकर्षित एवं सम्मोहित थे। इन चित्रकारों में अनेक जीवों व पशु–पक्षियों का स्वतंत्र अंकन किया।

'जब हम राजस्थानी लघुचित्र शैलियों में बने चित्रों पर दृष्टिपात करते हैं तो पाते हैं कि इस काल के कलाकारों को प्रकृति के ओर भी निकट पाते हैं उदयपुर, जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, किशनगढ़ और कोटा बून्दी आदि शैलियों में बने अनेकानेक चित्रों का आधार प्रकृति को बनाया गया। जिसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण राजस्थान की लघु चित्र शैलियों में 'बारहमासा' तथा राग रागिनियों के चित्र है। इन चित्रों का सीधा सम्बन्ध प्रकृति से है।'[3] यहाँ मानव और प्रकृति के भावपूर्ण सम्बन्धों को कलाकार ने आकर्षक व सौन्दर्यपूर्ण अभिव्यक्ति दी है।

इस प्रकार भारतीय चित्रकला के इतिहास में आरम्भ से ही प्रकृति व प्राकृतिक दृष्यों ने अपनी अहम् भूमिका दर्ज करायी है।भारतीय कला में भी चित्रकारों ने प्रकृति के प्रति अपने अटूट व अविरल प्रेम को दर्शित कर नवीन अध्याय की शुरूआत की। नन्दलाल बसु, रामकिंकर बैज, यामिनी राय, विनोद बिहारी मुखर्जी से लेकर, अमृता शेरगिल, हुसैन, सूजा, रज़ा, रामकुमार, आरा से होता हुआ वह जोगेन चौधरी, मनजीत बावा, अर्पिता सिंह, माधवी पारेख आदि कलाकारों ने प्रकृति के विराट स्वरूप को अपने कैनवास पर संजोया है। 'हमारे यहाँ 'आधुनिक' कला आन्दोलन की शुरूआत हुई और कलाओं की भाषा में किसी प्रकार का आधुनिक और नया विन्यास जरूरी माना जाने लगा तो उस विन्यास का आलम्बन प्रकृति की और ग्राम्य परिवेश की छवियाँ ही बनी। आखिरकार नन्दलाल बसु हो या यामिनी राय या रामकिंकर बैज और विनोद बिहारी मुखर्जी हो या अमृता शेरगिल और हुसैन सब के कामों में प्रकृति और ग्रामीण परिवेश कई प्रकार से आकार पाता रहा है।'[4] तथा आज के समकालीन कलाकार भी अपनी परिकल्पना तथा संवेदना व भावनाओं से प्रकृति की ऐसी मनोरम झाँकी प्रस्तुत करते हैं जो मानव और प्रकृति के मध्य अटूट संबंध का परम्परागत स्मरण कराते है।

राजस्थान ना केवल शूरवीरों की कर्मस्थली रही है अपितु अपनी प्राकृतिक छटा व कला के कारण विश्व प्रसिद्ध रहा है। 'शूरवीरता के साथ ही कला शिल्प भी यहाँ की पवित्र जननी व आनन्दमयी माटी के कण–कण में समायी हुई है। शिल्प व कला को यहाँ के चितेरों ने युगों–युगों से अपनी सजीव कल्पनाओं, कला सृजक शक्ति, अंगुलियों के अद्भुत जादू व तूलिका से उन्हें तराश कर निर्जीव व प्राण माध्यमों में अपनी लगन व साधना के बल से कला को जीवन्त लिए अपनी श्रम साध्य मेहनत के कला मंत्र से प्राण फूँकर उसे सुन्दर आकर्षण मनमोहक ही नहीं अपितु सजीव कलाकृति का रूप दिया है।

* प्रोफेसर (दृश्यकला विभाग) वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली (राज.) भारत
** शोधार्थी (कला संकाय) वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली (राज.) भारत

'प्राचीन काल से ही राजस्थान में चित्रकला की अविरल धारा बहती आयी है। जिसके कारण राजस्थान के चितेरों की कला कृतियाँ दर्शक को बरबस ही सम्मोहित व आकर्षित तो करती आ रही है, मन को एक अलौकिक आनन्द भी प्रदान करती है तथा दर्शक उसे कलाकृति की कला तरंगों से मोहित होकर उसमें बंधकर उसी में खो जाता है।'[5] राजस्थान में ऐसे अनेक कलाकार हुए है, जिन्होंने प्राकृतिक सौन्दर्य को अपने तूलिका का विषय बनाया है। जिसमें राजस्थान के प्राकृतिक कलाविद् चित्रकार रामजैसवाल का नाम अग्रणी है, जिन्होंने प्रकृति से सीधा संवाद कर उसे अपने चित्रों में जीवंत रूप प्रदान किया है। आपकी कृतियों में प्रकृति की अद्‌भुत छटाएँ देखने को मिलती है, जो दर्शक के मन को भाव-विभोर किये बना नहीं रह पाती तथा इसी श्रृंखला में राजस्थान के प्राकृतिक चित्रकार सुरेश राजोरिया है। 'जो राजस्थान के समकालीन चित्रकारों में प्राकृतिक चित्रण के लिए विशिष्ट स्थान रखते हैं। आप पर आरम्भ से ही प्रकृति के विराट सौन्दर्य का ऐसा प्रभाव पड़ा कि जो आपके तूलिका द्वारा सृजित हुआ वह चेतना स्पन्दन और जीवन्त व्यगत्यात्कता का प्रतीक बन गया।'[6] लाल चन्द मारोठिया की भी गणना राजस्थान समसामयिक वरिष्ठ चित्रकारों में की जाती है, जिनके चित्रों में प्रकृति जुड़े आत्मीय संगीत को सुना जा सकता है आप मूलत: प्राकृतिक चित्रकार है जिन्होंने दक्ष तूलिका द्वारा अपनी कृतियों में प्रकृति की वैविध्यिताओं को चित्रित करते पेड़-पौधों का अद्‌भुत लोक रचा है। इस प्रकार राजस्थान में अनेक ऐसे प्राकृतिक चित्रकार हुए हैं। जिन्होंने प्रकृति को अपने चित्रों का विषय बनाया है। तथा प्राकृतिक छटा को अपनी कृतियों में संजोते हुए उसे देश के कौने-कौने तक बिखेरा है।

इसी क्रम में चित्रकार माथोड़िया जी आज भी प्रकृति के रहस्यों को खोजने में निरन्तर संलग्न है। आरम्भ से ही प्रकृति ने आपको प्रभावित किया चटक रंगों के माध्यम से प्रकृति का निरूपण ये सीधे-सीधे ढंग से करते हैं। आप दृश्य चित्र की रचना करते समय जब कैनवास के सामने बैठते हैं,तो दृश्य, चित्र आभास की पूर्वानुभूति से कैनवास पर सजीव हो उठती हैं, मानों सामने बैठकर हूबहू बनाया गया है। अब तक आपने लगभग 30 प्राकृतिक चित्रों का सृजन किया है। जिनको आपने जल रंग, तैल रंग व ड्राई पेस्टल द्वारा साकार अभिव्यक्ति दी है। जगमोहन माथोड़िया के प्रकृति चित्र जल व तैल रंगों की अपनी शक्ति का आभास पैदा करते हैं। उन्मुक्त स्ट्रोकों से परिप्रेक्ष्य व संयोजन का चित्रांकन बड़ी ही सौम्यता के साथ करते हैं। कुछ प्राकृतिक चित्रों में आड़ी-तिरछी रेखाओं के प्रयोग के सहारे इन चित्रों में एक मूर्त अमूर्त संसार का दिग्दर्शन होता है। रेखाओं की गति छाया प्रकाश के कुछ बिम्ब, वनस्पति, ग्राम्य जीवन के कुछ अति परिचित से आंचलिक संदर्भ आपके चित्रों के विषय के रूप में दृष्टिगत होते हैं।

ज्यामितीय एवं गतिशील घुमावदार चित्रों में उनका आधुनिकीकरण के प्रति आसक्ति का संकेत स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इन रेखाओं में गोलाकार घुमाव दृश्य बिम्बों के सौंदर्य व लावण्य में वृद्धि करता है, तो कहीं रेखाओं का घनत्व पेड़ों की संरचना करता है। इस प्रकार आपके चित्रों में बादलों से आच्छादित आकाश है। धरती के पानी और आकाश को विभाजित करने वाली एक क्षितिज रेखा है।

लैण्डस्कैप I - आपके द्वारा चित्रित लेण्डस्केप I नामक कृति में यह प्रभाव ओर भी स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। जहाँ कलाकार ने घुमावदार रेखाओं द्वारा कृति को नवीन रूप में ढाला है।

कलाकार द्वारा इस दृश्य चित्रण को तैलरंग में चित्रित किया गया है। प्रकृति की विविधता और अनन्ता को चित्रकार ने एक ही फलक पर संयोजित किया है। भू दृश्य में ज्यामितीय आकृतियों द्वारा अनन्त दूरी का आभास कराया गया है। कृति में अनेक झोपड़ियों को ज्यामितीय आकारों में चित्रित किया है, जो कलाकार की विविध सोच का परिचायक है। कृति में विविध रेखाओं का प्रयोग सशक्त रूप से किया है और साथ ही रंगों के धुंधलेपन से दूरी का आभास दृष्टिगत होता है। कृति में प्रकाश व रंगों के धुंधलेपन से प्रकृति के वास्तविक सौंदर्य से साक्षात्कार हो रहा है। सम्पूर्ण कृति ज्योमेटिक ड्राइंग, आइनेमेट्रिक एवं प्रोसपेक्ति व्यू से रचित है। इस विद्या में जो दूरी उत्पन्न होती है, उसे स्पष्ट रूप से देखा जा सकता हैं। जगमोहन माथोड़िया द्वारा चित्रित किये गये लैण्डस्कैप से सम्पूर्ण ग्रामीण दृश्य की मनोरम झाँकी प्रस्तुत की है। जिसे देखकर दर्शक का प्रकृति के प्रति आकर्षित होना स्वाभाविक है। (चित्र संख्या 1)

(चित्र संख्या 1)

आपने ने कुछ प्राकृतिक चित्रों का सृजन अपने कल्पना लोक के आधार पर किया है, तो कुछ को प्रत्यक्ष देखकर। आपने अपनी कल्पना के आधार पर **लैण्डस्कैप** II का चित्रण किया है जिसे देखकर दर्शक को आत्म उल्लास की अभिव्यक्ति होना स्वाभाविक है।

लैण्डस्कैप II - प्रस्तुत चित्रण में सौन्दर्यानुभूतियों से पूर्ण प्रकृति के विभिन्न पहलूओं से एक संवेदनात्मक सम्प्रेषणीयता को स्थापित किया गया है। कृति में रेखांकन की बारीकी, आत्मीय सजग और हमारे जीवन के आस पास की विधिताओं से भरी लय की एक ऐसी दुनिया का दृष्य प्रस्तुत करता है जिसकी कल्पना करना बेहद जटिल है। डॉ. माथोड़िया आरम्भ से ही प्रकृति प्रेमी रहे हैं। जिन्होंने अपने भावों की संलिष्टता को प्राकृतिक स्वरों के साथ चित्रफलक पर अत्यन्त सहज भाव से उतारा है। कलाकृति में लम्बवत, सीधी पड़ी, वक्र आदि रेखाओं द्वारा ग्रामीण दृश्य को सरल व सहज रूप में चित्रित किया है जो दर्शक की दृष्टि को विस्तार रूप दे रहा है। कलाकार ने पहाड़ों के बादलों से आच्छादित कर कृति को धूसर रंगों में चित्रित किया है। जो प्रभाववादी प्रवृत्ति के अनुरूप रंग, प्रकाश टैक्सचर के साथ वातावरण के धुंधलेपन में विलीन होते दृष्टिगत होते हैं।

अत: जितनी सहजता कलाकार की रेखाओं से प्रकट हो रही है उससे कहीं अधिक तरलता सम्पूर्ण भू-दृश्य में दृष्टिगत हो रही है। (चित्र संख्या 2)

(चित्र संख्या 2)

अतः जगमोहन माथोड़िया के प्राकृतिक दृष्टिकोण का अध्ययन करें तो एक बिन्दु मुख्य रूप से हमारे सामने आता है और वह यह है कि आपकी प्रकृति के साथ गहरी आत्मीयता व जुड़ाव है। जिसके कारण आपने समकालीन कलाकारों से बिलकुल भिन्न अद्‌भुत संसार की रचना की है, जहाँ रंगों का अनन्त सागर है एवं प्रकृति का मौन संवाद है।

'इसीलिए कि वे कैनवास पर प्रकृति का चित्रणअपने तई बुनते हैं, खास बात उनके चित्रों की यह है कि उसमें रंगों का सुमधुर गान है। गत्यात्मक प्रवाह में रेखाओं की जीवंतता है, उनके चित्रों में गुजरते यह अहसास भी होता है कि वहाँ कल्पनाओं को पंख दिए गए हैं। उनके बरते रंगों में शांति, सौम्यता के साथ प्रकृति प्रदत्त सौन्दर्य के भाव निर्मित होते हैं। इसीलिए कलाकृतियों को देखते मन में सुकून होता है सांगीतिक सौन्दर्य के भाव जो वहाँ है।'[7]

'अतः माथोड़िया जी की सौन्दर्य विधायिनी दृष्टि ने प्रकृति के कण-कण में सन्निहित सौंदर्य को बड़ी सूक्ष्मता के साथ देखा ही नहीं है वरन् उसे अपनी उल्वण कल्पना के द्धारा आकारित भी किया है।'[8]

'इस प्रकार कला एवं कलाकार का प्रकृति से अन्योन्याश्रित सम्बन्ध रहा है। कला एवं प्रकृति सौन्दर्य के वे आयाम है, जो कलाकार की कल्पना से चित्रतल पर स्वरूप प्रदान करते हैं, कलाकार के मन में कला के प्रति अनुराग ही उसकी प्रकृति पर निर्भर है। कलाकार अपनी तूलिका से कलाकृति में उन विधाओं को अनुस्यूत करता है। जिनसे प्रकृति की आभा स्पष्ट हो। कलाकार कलाकृति की रचना में सौन्दर्य को समाहित करने के लिए प्रकृति के मूल सौन्दर्यात्मक तत्वों को अनुस्यूत करता है। कलाकृति में प्राकृतिक सौन्दर्य ही कलात्मक परिणति है।'[9] अतः कलाकार का सौन्दर्यात्मक दृष्टिकोण या प्रवृत्ति प्रकृति से ही प्रेरणादायक होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. गोस्वामी, डॉ. प्रेमचन्द्र - रूपप्रद कला के मूलाधार, अनंत पब्लिकेशन्स, जयपुर, संस्करण-2002, पृ.सं. 34
2. वही, पृ.सं. 34
3. वही, पृ.सं. 34
4. शुक्ल, प्रयाग - कला में प्रकृति, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2007, पृ.सं. 157
5. कुमावत, चिरंजी - जो महसूस किया वही चित्रों में उतारा, दैनिक नवज्योति, 3 जून, 1997
6. शर्मा, हरविशव - सुरेश चन्द्र राजोरिया, प्रकाशन राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, संस्करण-1999, पृ.सं.5
7. व्यास, डॉ. अरूणा - प्रकृति दृश्यों का चितराम कला दीर्घा, सम्पादक अवधेश मिश्र, प्रकाशन उत्कर्ष प्रतिष्ठान, लखनऊ, अप्रैल 2013, वर्ष 13, अंक 26, पृ.सं. 36
8. शर्मा, डॉ. अंजू - निराला की सौन्दर्य चेतना, दिनमान प्रकाशन, चर्खेवालान, दिल्ली, संस्करण-1990, पृ.सं.124
9. मावड़ी, मोहन सिंह - भारतीय कला सौन्दर्य, तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2002, द्धितीय संस्करण-2008, पृ.सं. 53, 54

****

The Effectivness Of The Jigsaw Methods Of Co-Operative Learning Versus Conventional Method Of Learning

Dr. Manorama Mathur * Khushboo Mathur **

Abstract - An attempt has been made by the investigator to study the comparison of the effectiveness of Jigsaw method of cooperative learning versus conventional method of learning on achievement of statistical concepts. In the present study pre-test /post test control group-experimental designs was employed with a sample of 60 students of class IX of the same school. It involved two groups of students'30 each i.e., experimental groups (E) and control group (C) from south Delhi. Experimental group was taught in cooperative learning setting involving JIGSAW method and the control group was taught through conventional method. Self made tools - achievement test of statistics [pre and post test], self made assignments were used. The result of the study revealed an extremely significant difference between the post scores of experimental group and control group. The achievement of experimental group was found higher in concept of statistics than the students in the control group. Thus it may be inferred that JIGSAW method of learning is effective in the learning of concept of statistics as compared to the conventional mode in terms of academic achievement.

Introduction - Education is a wide concept which has a strong effect upon pupil's success. Education is a never ending process of inner growth and development and its period stretches from cradle to the grave. Education is the only means by which a society can adjust with its needs. Through education the members of a society learn the skills to enrich transmit and transform the cultural heritage as well as existing social and scientific knowledge for the continuous advancement of a society.

Human endeavours to explore the universe and foster social, cultural and economic needs have resulted in a widespread educational system on profound basis of knowledge, learning and expertise. Today, a nation with a superior educational system is superior to others and indeed dominant in very many respects.

Our on-going classroom teaching is totally teacher dominated and content centered. Here, the teachers are regarded as repositories of subject knowledge and their role is simply to pour into the open, empty and willing minds of students their vast reservoir of Knowledge. They do not trust that their students would learn on their own. They think that they must tell them what to learn and provide all the structure for the learning to take place. This learning structure is highly individualistic. It encourages individual and competitive learning in place of group and co-operative learning. Here, the students are tempted to learn more and more in order to gain good grade, divisions, certificates and appreciations by excelling their own peers.

Co-operative learning is one of the recommended teaching-learning techniques in which students achieve learning goals by helping each other in a small social setting. Cooperative learning says no to such practices. Many educators of modern age have recognized "Cooperative Learning" as a beneficial teaching learning technique for different subjects. Education itself has been regarded as social adjustment of an individual in a society. It is more elaborate than group work activity.

Cooperative learning has several techniques for promoting an educational experience that facilitates students to move beyond standard classroom parameters (Fantuzzo, Ginsburg-Block, Miller, & Rohrbeck, 2003). Some teaching techniques introduced in support of co-operative learning out of which Jigsaw is a successful teaching strategy in which small teams, each with students of different levels of ability, use a variety of learning activities to improve their understanding of a subject.

Jigsaw method was founded by Aronson, Stephan, Sikes, Blaney and Snapp in 1978. In the originally designed Jigsaw method, students are assigned to six-member team to work on academic material, broken down into sections, each team member reading his or her assigned section. Members of different teams who have studied the same sections meet in 'Expert groups' to discuss their sections. According to Aronson (2008), there are ten steps as considered important in the implementation of the jigsaw classroom:

1. Students are divided into a 5 or 6 person jigsaw group. The group should be diverse in terms of ethnicity, gender, ability, and race.
2. One student should be appointed as the group leader.

*Professor, Miranda College of Education, Bangalore (Karnataka) INDIA
**M.Ed. Student , Aravali College of Advanced Studies in Education, Faridabad (Haryana) INDIA

This person should initially be the most mature student in the group.

3. The day's lesson is divided into 5–6 segments (one for each member)
4. Each student is assigned one segment to learn. Each student should only have direct access to its own segment.
5. Students should be given time to read over their segment at least twice to become familiar with it. Students do not need to memorize it.
6. Temporary expert groups should be formed in which one student from each jigsaw group joins other students assigned to the same segment. Students in this expert group should be given time to discuss the main points of their segment and rehearse the presentation they are going to make to their jigsaw group.
7. Students come back to their jigsaw group.
8. Students present their segment to the group. Other members are encouraged to ask question for clarification.
9. The teacher needs to float from group to group in order to observe the process. Intervene if any group is having trouble such as a member being dominating or disruptive. There will come a point that the group leader should handle this task. Teachers can whisper to the group leader as to how to intervene until the group leaders can effectively do it themselves.
10. Assignment on the material should be given at the end so students realize that the sessions are not just for fun and games, but that they really count.

Statement Of The Problem - A comparative study of the effectivness of the jigsaw methods of co-operative learning versus conventional method of learning learning in achievement of statistical concepts

objectives- The main objective of the present study is to compare the effectiveness of Jigsaw method of cooperative learning versus conventional teaching method in achievement of statistical concepts.

1. To find out the pre test scores of students.
2. To find out the post test scores of experimental group and control group.
3. To compare the pre test scores and post test scores of experimental group and control group.

Method

Sample - - In the present study pre-test,/ post-test control group-experimental design was employed with 60 students of class IX of the same school. It involved two groups of students'30 each i.e., experimental group (E) and control group (C) from south Delhi. Experimental group was taught in cooperative learning setting involving JIGSAW method and the control group was taught through conventional mode.

Tools :

1. self made achievement test of statistics[pre and post test]

2. self made assignment.

Result :

Objective 1: To find out the pre test scores of students.

Table no. 1

Variable	N	Mean	S.D.
Pretest	60	29	9.1

Objective 2: To find out the post test scores of experimental group and control group.

Table no. 2

Sample	N	Mean	S.D
Experimental group	30	38.83	10.21
Control group	30	31.2	9.01

Objective 3: To compare the pre test scores and post test scores of experimental group and control group.

Ob. 3.1 The mean difference (Mx) of pretest and post test scores in experimental group

Table no. 3

Variable	N	MEAN	Mean difference (Mx)
Pre test scores	60	29	9.83
Post test scores	30	38.83	

. Ob. 3.2 The mean difference (My) of pretest and post test scores in control group

Table no. 4

Variable	N	MEAN	Mean difference (My)
Pre test scores	60	29	2.20
Post test scores	30	31.2	

Ob 3.3 The computed t-value of the mean difference of experimental group and control group.

Table no. 5

Group	N	Mean dif -ference	S.D	t-Value	Signific -ance
Experime-ntal Group	30	9.83	10.21	3.07	Signific -ant at both the levels
Control Group	30	2.20	9.01		

For df = 58

$t_{0.05} = 1.99$, $t_{0.01} = 2.64$,

Above table indicated that the mean difference obtained from pre test and post tests of experimental group and control group is 9.83 and 2.20 respectively.

The t-ratio is calculated to be 3.07 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (i.e. 1.99) and 0.01 level of significance (i.e. 2.64) therefore it seems to be significant at 0.05 level and 0.01 level.

Major findings - There is an significant difference between the post scores of experimental group and control group. Students in the experimental group secured higher in concept of statistics than the students in the control group.

The t-ratio value revealed a significant difference between the experimental group and control group in relation to their

achievement in statistical concepts. Thus it may be inferred that JIGSAW method of learning is effective in the learning of concept of statistics as compared to the conventional mode in terms of academic achievement.

Conclusion - In the conventional method the text book as the main teaching tool alone is insufficient to meet the need of the students as they find it difficult to visualize the concept and to grasp information that is presented either verbally or in text. In order to achieve effective instructions instructor need to create and enjoyable learning environment and one of the method is Jigsaw technique of co-operative learning.

Working in cooperative groups, students learn valuable social skills, use higher-order thinking and rehearse and practice new concepts, processes and information cooperat -ive learning strategies like jigsaw are effective with younger children in pre-school centre and primary classrooms as well. In addition jigsaw promotes students' motivation , encourages group processes, fosters social and academic interaction among students and rewards successful group participation in the learning of school subjects. It assumes that children learn better in a non-competitive anxiety-free cooperative environment rather than in a competitive stressful environment as available in the traditional classroom situations.

References :-

1. Bertucci, A., Conte, S., Johnson D. W., & Johnson, R. T. (2010). The impact of size of cooperative group on achievement, social support, and self-esteem. *Journal of General Psychology. July-sep;137(3)*, 256-72.
2. Fantuzzo, J., Ginsburg- Block, M., Miller, T., & Rohrbeck, C., (2003). Peer-assisted learning interventions with elementary school students: A meta-analytic review. (Electronic version) *Journal of Education Psychology, 95 (2),* 240-257.
3. Kaul, Pallavi (2010). The effect of learning together techniques of cooperatives learning method on students achievement in mathematics. *Edutracks,* 9(12),28-31.
4. Perkins, D. V., & Saris, R . N. (2001). A "Jigsaw Classroom" technique for undergraduate statistics courses. *Teaching of Psychology*, 28, 111–113.
5. Sharma, Hemant Lata, and Sharma, Savita (2008). Cooperative learning: Highway to learning to live together. *Indian Journal of Teacher Education Anweshika*, 5(1), 78-94.

****

शिक्षा अधिकार अधिनियम - समस्याऐं एवं परिवर्तन

नीलिमा पहारे *

प्रस्तावना - किसी भी देश का भविष्य उसकी वर्तमान शिक्षा प्रणाली तथा उसकी नीति, योजनाओं पर निर्भर रहता है, विश्व में प्रत्येक देश सबसे ज्यादा आशंकित और महत्वकांक्षी अगर किसी क्षेत्र के प्रति होता है तो वह उस देश की शिक्षा होती है। अक्सर शिक्षा के क्षेत्र को हर समाज में हल्के ढंग से लिया जाता है और समझा जाता है कि शिक्षा का कार्य केवल शिक्षित नागरिकों को तैयार करना मात्र होता है, किंतु यह भ्रमात्मक है और प्रगति के लिए भयानक साबित हो सकती है। शिक्षा वह क्षेत्र है जो देश को भविष्य के नेतृत्व के लिये योग्य नागरिक प्रदान करता है, यह नेतृत्व समाज, राजनीति, अधिकता, उद्योग, विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में होता है। ये क्षेत्र बिना उचित शिक्षा के नेतृत्वविहीन, देश की खुशहाली, स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता को प्रभावित कर सकते है।

राष्ट्र का विकास - उसके निवासियों की शिक्षा पर निर्भर है। स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में भारत ने अपने नवनिर्माण के लिए शिक्षा प्रसार की आवश्यकता का अनुभव किया, क्योंकि स्वतंत्रता प्राप्ति के समय 6 से 11 वर्ष वाले केवल 30 प्रतिशत बच्चे प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। अत: देश की राष्ट्रीय सरकार ने प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क सार्वभौमिक तथा अनिवार्य बनाने का निश्चय किया। इस उद्देश्य से स्वतंत्र भारत के संविधान की 45वीं धारा में स्पष्ट रूप से 10 वर्ष के अंदर सभी बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क एवं अनिवार्य बनाने की धोषणा की गयी है।

प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क और अनिवार्य बनाने हेतु प्रयास - इस आंदोलन को सर्वप्रथम (1911-1922) तक श्री गोखले के द्वारा चलाया गया। साथ श्रीमती एनीबेसेंट ने 1917 में कलकत्ता कांग्रेस में 1870 में इंग्लैंड की शिक्षा व्यवस्था जो कि भारत से मिलती जुलती थी बताया। इसी वर्ष एक 'शिक्षा विधान' पास हुआ और प्राथमिक शिक्षा सभी बच्चों के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य बना दी गई। सन् 1900 तक हमारे देश की शिक्षा की प्रगति 'नौ दिन चले अढ़ाई कोस की चल रही थी।

जनता इस नीति से असंतुष्ट थी श्री गोपाल कृष्ण गोखले ने जो केन्द्रीय धारा सभा के एक सदस्य थे। 19 मार्च 1910 को संपूर्ण देश में प्राथमिक शिक्षा को 'नि:शुल्क और अनिवार्य बनाने के लिये तीन प्रस्ताव रखे शिक्षा विभाग, बजट के साथ शिक्षा विकास की तालिका, शिक्षा विकास की नियमित व्यवस्था की जाये। इस बिल का मूल उद्देश्य प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाना इस बिल की योजनाऐं 6 से 10 वर्ष तक के बालकों के लिए बनाई गयी थी।

नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार बनाए जाने का प्रस्ताव-दिनांक 9-10 अगस्त 1996 को हुए राज्यों के शिक्षा मंत्रियों तथा राज्यों के शिक्षा सचिवों के सम्मेलन में इस संकल्प पर चर्चा की गई थी। सम्मेलन में इस संकल्प के महत्व को ध्यान में रखा गया तथा सरकार से यह अनुरोध किया गया कि सरकार इस प्रस्ताव के वित्तीय, प्रशासनिक, कानूनी तथा शैक्षिक पहलुओं पर विचार करें। सम्मेलन में यह सिफारिश की गयी कि इन सभी पहलुओं पर विचार करने के लिए राज्यों के शिक्षा मंत्रियों की एक समिति गठित की जाय। तदनुसार मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने केन्द्रीय मानव संसाधन विकास राज्य मंत्री की अध्यक्षता में राज्यों के शिक्षा मंत्रियों की एक समिति गठित की गयी थी।

नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009- इस नियम का संक्षिप्त नाम नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 है, यह उस तारीख से लागू होगा जो केन्द्रिय सरकार अधिसूचना द्वारा निश्चित करें।

नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार - छह से चौदह वर्ष की आयु के प्रत्येक बच्चे को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार होगा।

उपधारा(1) के प्रयोजन के लिये कोई बालक किसी प्रकार की फीस या ऐसे प्रभार या व्यय का संदाय करने के लिए राजी नहीं होगा, जो प्रारंभिक शिक्षा लेने और पुरी करने से उसे निवारित करें।

1. ऐसे बालकों जिन्हें प्रवेश नहीं दिया गया है या जिन्होंने प्रारंभिक शिक्षा पुरी नहीं की उनके लिए विशेष उपबंध।
2. अन्य विद्यालयों में स्थानांतरण का अधिकार
3. समुचित सरकार, स्थानीय अधिकारी एवं माता पिता के कर्तव्य।
4. नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा के लिए विद्यालय के उत्तरदायित्व व सीमाऐ।
5. प्रवेश के लिए आयु का सबूत।
6. प्रवेश से इंकार न करना।
7. बालक को शरीरिक दंड या मानसिक उत्पीड़न का प्रतिषेध।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम - 12 अप्रैल 2010 को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा के रूप में लागू हुआ। इसके अंतर्गत 6 वर्ष से 14 वर्ष के बालकों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा देना आवश्यक किया गया। यह अधिकार केन्द्र एवं राज्य सरकार की मिली जुली रिस्पान्सलिबीटी थी कि सभी बालकों को प्राप्त हो। नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा RTE को मौलिक अधिकार के रूप में धारा 21। को 86 वें संशोधन के बाद, 2005 में बिल पास होने के बाद अगस्त 2009 मे रिवाइस होने के बाद यह 1 अप्रैल 2010 को लागू हुआ।

शिक्षा आयोग(1964-66) भारत के भाग्य का निर्माण इस समय उसकी कक्षाओं में हो रहा है।

नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार -

अ छह: वर्ष से चौदह वर्ष की आयु के प्रत्येक बच्चे को प्रारंभिक शिक्षा पुरी होने तक किसी आसपास के विद्यालय में नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार होगा।

ब नि:शक्तता से ग्रस्त किसी बालक को उक्त अधिनियम(समान अवसर

* शोधार्थी, फैकल्टी ऑफ एजुकेशन, पेसीफिक अकेडमी ऑफ हायर एजुकेशन एंड रिसर्च यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत

अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) 1995 की धारा 2 के संबंध के उपबंधो के अनुसार नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करने का अधिकारी होगा।

स छह वर्ष से अधिक आयु के बालक जिन्होंने प्रारंभिक शिक्षा पुरी नहीं की उसे उसकी आयु के अनुसार समुचित कक्षा में प्रवेश दिया जायेगा।

द जहाँ किसी विद्यालय में प्रारंभिक शिक्षा पुरी करने की व्यवस्था नही है वहाँ प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण करने के लिए किसी अन्य विद्यालय में स्थानांतरण कराने का अधिकार होगा।

इ इन प्रारंभिक विद्यालयों में प्रवेश लेने के लिए बालक को स्थानांतरण प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करने में विलंब पर प्रवेश से इंकार करने के लिए आधार नहीं होगा।

माता पिता के कर्तव्य-

अ प्रत्येक माता-पिता या संरक्षक का यह कर्तव्य होगा कि वह आस-पास के विद्यालय में कोई प्रारंभिक शिक्षा के लिए अपनी यथा स्थिति का प्रवेश कराए या प्रवेश दिलाए।

ब प्राथमिक शिक्षा के लिए तीन वर्ष से अधिक आयु के सभी बालकों आरंभिक देखभाल और शिक्षा की व्यवस्था करना।

स्थानीय अधिकारी के कर्तव्य-

अ प्रत्येक बालक को नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध करवाना।

ब दुर्बल वर्गो के बालकों और अलाभित समूह के बालको के प्रति पक्षपात न हो।

स प्रत्येक बालक द्वारा प्राथमिक शिक्षा में प्रवेश, उपस्थिति और पूरा करना सुनिश्चित करना।

द अधिकारी द्वारा विद्यालय भवन, शिक्षण सामग्री, शिक्षण कर्मचारी उपलब्ध करवाना।

इ प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध करवाना,अच्छी क्वालिटी की प्राथमिक शिक्षा सुनिश्चित, पाठ्यचार एवं पाठ्यक्रमों शिक्षकों की प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध करवाना आदि।

विद्यालय एवं शिक्षकों के उत्तरदायित्व - कोई भी विद्यालय उसमें प्रविष्ट सभी बालकों को नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्रदान करेगा। विद्यालय उसमें प्रवेश कराए गये बालकों के ऐसे अनुपात को जो इस प्रकार प्राप्त उसकी अनुदान, आवर्ती व्यय से है, न्यूनतम पच्चीस प्रतिशत के अधीन रहते हुए नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध करवाना। कोई भी विद्यालय पहली कक्षा में आसपास के दुर्बल वर्ग और अलाभित समूह के बालकों को उस कक्षा के बच्चों की कुल संख्या के कम से कम पच्चीस प्रतिशत की सीमा तक प्रवेश देगा और नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उसके पूरा हाने तक प्रदान करेगा।

कोई भी विद्यालय या व्यक्ति किसी बच्चें को प्रवेश देते समय कोई प्रति व्यक्ति फीस संग्रहित नहीं करेगा और बच्चे और माता-पिता अथवा संरक्षक को किसी प्रक्रिया के अधीन नहीं रखेगा और अगर रखता है, तो वह जुर्मने के रूप मे दंडनीय होगा।

प्राथमिक शिक्षा में प्रवेश के प्रायोजनों के लिए किसी बालक की आयु, जन्म आदि दस्तावेजों से विहित की जाये किसी बच्चें की आयु का सबूत न होने के कारण किसी विद्यालय में प्रवेश से इंकार नहीं किया जाएगा। किसी बालक को शैक्षणिक वर्ष के आरंभ में निश्चित अवधि के भीतर किसी विद्यालय में प्रवेश दिया जायेगा। किसी बालक को प्रवेश से इंकार नहीं किया जायेगा, प्रवेश प्राप्त बालक को किसी कक्षा में रोका या निष्कासित नहीं किया जायेगा।

बच्चे को किसी प्रकार का शरीरिक दंड या मानसिक उत्पीड़न नहीं किया जाएगा।

विद्यालय पूर्ण मान्यता प्राप्त होना चाहिऐ जो सारे मानकों को पूर्ण करता हो। विद्यालय में भिन्न विद्यालय स्थानीय प्राधिकारी ऐसे विद्यालयों में प्रवेश प्राप्त बालकों के माता-पिता या संरक्षक, शिक्षकों के निर्वाचित प्रतिनिधियों से मिलकर बनने वाली एक विद्यालय प्रबंध समिति का गठन किया जाऐ ऐसी समिति में पचास प्रतिशत सदस्य स्त्रियाँ होगी। विद्यालय प्रबंध समिति विद्यालय के कार्य-कारण को मानीटर करना, विद्यालय विकास योजना तैयार करना, सिफारिश करना, समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी अथवा अन्य स्त्रोतों से प्राप्त अनुदानों के उपयोग को मॉनीटर करना एवं उनका पालन करवाना।

शिक्षकों की नियुक्ति और अर्हताएँ - केन्द्रीय सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा शिक्षा प्राधिकारी द्वारा यथा न्यूनतम अर्हताऐं है। शिक्षक के लिए पात्र होगा। जहाँ किसी राज्य में अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रम या उसमें प्रशिक्षण प्रदान करने वाली पर्याप्त संस्थाऐं नहीं है या न्यूनतम अर्हताऐं रखने वाले शिक्षक संख्या में नहीं है वहाँ शिक्षक के रूप में नियुक्ति के लिए अपेक्षित न्यूनतम अर्हताओं को पाँच वर्ष की एसी अवधि के लिए शिथिल कर सकेगीं एवं पाँच वर्ष के भीतर शिक्षक ऐसी न्यूनतम अर्हताएं अर्जित करेगा।

शिक्षकों के कर्त्तव्य -विद्यालय में उपस्थिति में नियमितता और समय पालन, पाठ्यक्रम संचालित करना व पूरा करना, प्रत्येक बालक की शिक्षा ग्रहण करने के सामर्थ्य का निर्धारण करना, उसी अनुसार अतिरिक्त शिक्षण यदि कोई हो तो जोड़ना, माता पिता एवं संरक्षकों के साथ नियमित बैठके करना, बालक की उपस्थिति, नियमितता, शिक्षा ग्रहण करने का सामर्थ्य, शिक्षण में की गयी प्रगति आदि की जानकारी से अवगत कराना। कोई शिक्षक/शिक्षिका प्रायवेट ट्यूशन या प्रायवेट शिक्षण क्रियाकलाप में स्वयं को नहीं लगाऐगा/लगाएगी।

छात्र शिक्षक अनुपात- पहली कक्षा से पांचवी कक्षा पर शिक्षकों की संख्या साठ छात्रों के होने पर शिक्षकों की संख्या दो होगी। इस प्रकार प्रत्येक बीस छात्रों की संख्या बढ़ने पर एक शिक्षक अनिवार्य रूप से बढ़ाना होगा। अर्थात् छात्र-शिक्षक अनुपात (प्रधान अध्यापक को छोड़कर) चालीस पर एक शिक्षक होगा।

छठवीं से आठवीं कक्षा के लिए कम से कम प्रति कक्षा एक शिक्षक और विषयों जैसे विज्ञान और गणित, सामाजिक अध्ययन भाषा के लिए प्रत्येक हेतु एक-एक शिक्षक हो। इसी प्रकार अंश कालीन शिक्षक कला, स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा, कार्य शिक्षा आदि के लिये भी शिक्षक हो। एक शैक्षणिक वर्ष में निर्धारित देवसों और शिक्षण घंटों की संख्या हो जो दो सौ बीस कार्य दिवस या एक हजार शिक्षण घंटे हो।

बालक के अधिकार का संरक्षण- नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा के बालक के अधिकार से संबंधित किसी विषय की जांच करते समय वही शक्तिया होगी जो उक्त बालक अधिकार संरक्षण आयोग द्वारा समानुदेशित की गयी हो अगर अधिनियम के अधीन किसी बालक के अधिकार के संबंध में कोई शिकायत है, तो व्यक्ति स्थानीय प्राधिकारी को लिखित में शिकायत कर सकेगा जिसका समाधान तीन मास की अवधि में करना होगा।

शिक्षा के अधिकार अधिनियम के अंतर्गत गरीब एवं वंचित वर्ग के बच्चों के साथ उचित न्याय तभी हो सकता है, जब शिक्षकों को पढ़ने की तड़प परन्तु शिक्षकों को प्राप्त अधिकार अधूरे है. शिक्षक अपने कौशलों एवं

ज्ञान का प्रयोग अपनी योग्यता आदि का प्रायोगिक उपयोग नहीं कर पाते हैं बालकों की शिक्षा सुनिश्चित हो तभी उनके साथ हम न्याय कर पायेगे कुछ आवश्यक बातें-

1. हमारे देश की ग्रामीण जनता को जागरूक करना उन्हें प्राप्त होने वाली सुविधाओं की जानकारी देना।
2. विद्यालयों में ग्रामीण परिवेश के अनुसार शैक्षिक योजनाऐं को लागू करना स्कूलों में सामान्य सुविधाओं, खेलकूद की सामग्री कह व्यवस्था हो।
3. शिक्षा की गुणवत्ता के नवीन मानदंड बनाने होंगे इस हेतु प्रभावी कदम उठाये जाने चाहिए।
4. वंचित समूह के सम्पन्न परिवारों के बच्चे भी अच्छे निजी स्कूलों में आवेदन करते है, इसलिए वंचित समूह हेतु आय की सीमा का निर्धारण किया जाये।
5. निजी स्कूलों के वातावरण एवं भूषा की परेशानी से वंचित वर्ग के बालकों को समस्या हो सकती है उन्हें मानसिक तनाव कुंठा आदि हो सकते है। इस हेतु भी सार्थक प्रयास आवश्यक है।
6. सूचनाओं के आदान प्रदान हेतु अचित संचार तकनीकी का प्रयोग किया जाए।
7. प्रबंध समितियों के गठन एवं उनकी उचित बैठकों के द्धारा शिक्षा के गुणात्मक सुधार एवं समसयाओं पर मुक्त विचार होना चाहिए।
8. शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार, आवश्यकताओं, नीतियों शोध परिणामों पर आधारित हो।

समय-समय पर चिंता प्रकट की गयी है कि हमारी शिक्षा का स्तर उत्तरोत्तर नीचे गिर रहा है। इस संदर्भ में विशेषकर प्राथमिक स्कूलों को ढोषी ठहराया जाता है और कहा जाता है कि इस स्तर पर बच्चों की सर्वांगीण उन्नति के लिए पर्याप्त प्रयास नहीं किए जा रहे हैं, इसमें कोई संदेह नहीं कि जब तक नींव दृढ नहीं होगी भवन भी अस्थिर ही रहेगा इसलिए शिक्षा स्तर की नींव, जिसका आधार प्राथमिक स्तर पर ही निर्भर होता है को सुदृढ़ बनाए बिना शिक्षा के अन्य स्तरों में लाना बहुत ही कठिन कार्य होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. रेणु त्रिपाठी डॉ. अर्पणा त्रिपाठी : भारत में प्राथमिक शिक्षा आयेगा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली प्रथम संस्करण, 2010
2. जे.सी. अग्रवाल : भारत में प्राथमिक शिक्षा, विद्या विहार, नई दिल्ली संस्करण 2010
3. मिश्रा महेन्द्र कुमार : शिक्षा सिद्धांत एवं आधुनिक भारत की शिक्षा डॉ. महेन्द्र कुमार मिश्रा, यूनिवर्सिटी बुकहाउस लि जयपुर संस्करण 2008
4. डॉ. सत्यप्रकाश पचौली : शिक्षा के आयाम, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2012
5. Dr. Rajiv Kumar (Associate Professor), Dept. of Teacher education , S.V. College Aligarh (UP) Article, Right to education act : Challeuges & Remedies.
6. भारतीय आधुनिक शिक्षा एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली जुलाई 2011
7. रमाकर रायज,दा जनवरी 2012
8. प्राथमिक शिक्षण, शैक्षिक संवाद की पत्रिका, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् जुलाई 2011
9. भारत सरकार 2009, भारत का राजपत्र, निःशुल्क और अनिवार्य बालशिक्षा का अधिकार अधिनियम, नई दिल्ली

****

माध्यमिक शिक्षा मण्डल, म.प्र., भोपाल से मान्यता प्राप्त विद्यालय एवं केन्द्रीय विद्यालय के हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की आपदा प्रबंधन शिक्षा के प्रति जागरूकता का अध्ययन

डॉ. आर. के. अरोरा * अंजना पाटनवाला **

शोध सारांश – हमारा देश अत्यधिक आपदा सम्भावित देश है। समाज में जागरुकता उत्पन्न करने, सहायता एवं महत्वपूर्ण सूचना पहुँचाने में शिक्षक एवं विद्यार्थी सक्रिय भूमिका अदा कर सकते हैं। जब भी कोई आपदा आती है, तो उस स्थान विशेष के विद्यालय आश्रय स्थल बन जाते हैं। तथा अध्यापक एवं विद्यार्थी सहायक की भूमिका का निर्वाह करते हैं। अत: विद्यालयों को आपदा के समय त्वरित प्रतिक्रिया एवं व्यवहारिक प्रशिक्षण देने की आवश्यकता है। इसी महत्वपूर्ण उद्देश्य के ध्यातव्य ही केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा वर्ष 2003 से विद्यालयीन पाठ्यचर्या में आपदा प्रबन्धन विषय शुरु किया गया है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में माध्यमिक शिक्षा मण्डल, म.प्र., भोपाल से मान्यता प्राप्त विद्यालय एवं केन्द्रीय विद्यालय के हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की आपदा प्रबंधन शिक्षा के प्रति जागरूकता का अध्ययन किया गया। प्रयुक्त सांख्यिकीय तकनीक एवं प्रदत्तों के विश्लेषण पश्चात् ज्ञात हुआ कि माध्यमिक शिक्षा मण्डल, मध्यप्रदेश, भोपाल से मान्यता प्राप्त हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की अपेक्षा केन्द्रीय विद्यालय के हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों में आपदा प्रबन्धन शिक्षा के प्रति जागरुकता अधिक पायी गयी है।

प्रस्तावना – मानव जाति अत्यन्त समन्वित पारिस्थितिकीय श्रृंखला का एक अंग है। इस श्रृंखला में से किसी एक भी कड़ी को क्षति पहुँचाने वाले मानवीय कार्य से समूचे संतुलन को खतरा पैदा हो जाता है। पर्यावरण में होने वाले इसी प्रकार के असंतुलन के कारण प्राकृतिक आपदाओं में बढ़ोत्तरी होने लगी है। आपदाओं का दुष्परिणाम अतिकष्टकारी होता है। जिससे प्रभावित समुदायों को जानमाल और आजीविका के साधनों की इतनी व्यापक क्षति होती हैकि इन इलाकों के विकास की रफ्तार ही थम जाती है और वे तरक्की की दौड़ में कई दशक पीछे रह जाते हैं। इन्हीं आपदाओं को रोकने के लिये आपदा-प्रबंधन की आवश्यकता हुई।

भारत का 60 प्रतिशत से अधिक भू-भाग भूकम्प संभावित, 12 प्रतिशत बाढ़ संभावित, 8 प्रतिशत चक्रवात संभावित तथा 70 प्रतिशत से अधिक कृषि योग्य भूमि अकाल संभावित है। रासायनिक अपशिष्ट, आगजनी, आतंकवाद, सड़क दुर्घटना आदि से भी सर्वाधिक क्षति होती है। अत: भारत सरकार ने आपदा प्रबंधन में शमन, रोकथाम एवं प्रत्युत्तर हेतु समुदाय में जागरूकता एवं अभिवृत्ति के विकास को मुख्य कार्य माना है। अब आपदा-प्रबंधन को न केवल जीवन के एक अंग के रूप में बल्कि आवश्यक जीवन रक्षा कौशल के रूप में मान्यता देने का समय आ गया है।

इसी उद्देश्य के ध्यातव्य केंन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा एवं माध्यमिक शिक्षा मण्ड़ल, मध्यप्रदेश, भोपाल द्वारा विद्यालयीन पाठ्यचर्या में आपदा प्रबंधन विषय प्रारम्भ किया गया है। विद्यार्थी ही देश के भावी नागरिक, स्वयं सेवक एवं आपदा प्रबंधक है। उन्हें आपदाओं का सामना करने में समर्थ बनने के साथ-साथ बेहतर आपदा प्रबंधक भी बनना है और बहुमूल्य मानवता को बचाना है।

हाईस्कूल स्तर पर विद्यार्थियों में आपदा-प्रबंधन पाठ्यक्रम के उद्देश्यों यथा-आपदा से आशय, आपदा के प्रकारों का ज्ञान, प्राकृतिक एवं मानव निर्मित आपदाओं की समझ, आपदा-प्रबंधन की पूर्व तैयारी, जागरूकता, जीवन रक्षा हेतु व्यावहारिक समझ एवं कौशल, प्राथमिक उपचार, आपदा आने पर क्या करें तथा क्या न करें की समझ, विद्यालयों में आपदा प्रबंधन योजनाओं की तैयारी, स्थानीय स्तर पर आपदा प्रबंधन पाठ्यक्रम की सैंद्धान्तिक एवं व्यावहारिक बोधगम्यता को जानने हेतु विद्यार्थियों में आपदा प्रबंधन शिक्षा के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना आवश्यक है।

समस्या कथन – 'माध्यमिक शिक्षा मण्डल, म.प्र., भोपाल से मान्यता प्राप्त विद्यालय एवं केन्द्रीय विद्यालय के हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की आपदा प्रबंधन शिक्षा के प्रति जागरूकता का अध्ययन'

उद्देश्य

- माध्यमिक शिक्षा मण्ड़ल, मध्यप्रदेश, भोपाल से मान्यता प्राप्त विद्यालय के हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की आपदा-प्रबंधन शिक्षा के प्रति जागरुकता का अध्ययन करना।
- केन्द्रीय विद्यालय के हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की आपदा-प्रबंधन शिक्षा के प्रति जागरुकता का अध्ययन करना।
- माध्यमिक शिक्षा मण्ड़ल, मध्यप्रदेश, भोपाल से मान्यता प्राप्त विद्यालय के हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों एवं केन्द्रीय विद्यालय के हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की आपदा-प्रबंधन शिक्षा के प्रति जागरुकता की तुलना करना।

परिकल्पना – माध्यमिक शिक्षा मण्ड़ल, मध्यप्रदेश, भोपाल से मान्यता प्राप्त विद्यालय एवं केन्द्रीय विद्यालय के हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की आपदा-प्रबंधन शिक्षा के प्रति जागरूकता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

शोध अध्ययन विधि –

* प्राचार्य, रॉयल कॉलेज ऑफ टीचर एज्युकेशन, रतलाम (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, पेसीफिक एकेडमी ऑफ हायर एज्यूकेशन एण्ड रिसर्च यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत

शोध विधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि प्रयुक्त की गयी है।

परिसीमन – प्रस्तुत शोध अध्ययन मन्दसौर शहर तक सीमित रखा गया है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन माध्यमिक शिक्षा मण्डल, म.प्र., भोपाल से मान्यता प्राप्त विद्यालय एवं केन्द्रीय विद्यालय के हाईस्कूल स्तर की कक्षा 10 वीं तक सीमित रखा गया है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन में याद्दच्छिक विधि के अन्तर्गत सोद्देश्य तकनीक के माध्यम से न्यादर्श का चयन किया गया है। इस न्यादर्श विधि द्वारा माध्यमिक शिक्षा मण्डल, म.प्र., भोपाल से मान्यता प्राप्त अशासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, महिला मण्डल, मन्दसौर एवं केन्द्रीय विद्यालय मन्दसौर के कक्षा 10 वीं के क्रमश: 50-50 विद्यार्थियों का चयन किया गया है।

न्यादर्श का तालिका प्रस्तुतीकरण निम्नानुसार है –

क्र.	विद्यालय का नाम	विद्यार्थियों की संख्या	कुल विद्यार्थी
1.	अशासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय , महिला मण्डल, मन्दसौर (म.प्र.)	50	100
2.	केन्द्रीय विद्यालय मन्दसौर (म.प्र.)	50	

शोध उपकरण –आपदा प्रबन्धन शिक्षा के प्रति विद्यार्थियों की जागरुकता के मापन हेतु शोधार्थी द्वारा स्वनिर्मित जागरुकता मापनी को न्यादर्श पर प्रशासित कर प्रदत्तों को संकलित किया गया है।

सांख्यिकीय तकनीक – संकलित प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन, 'टी' परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण एवं विवेचना – परिकल्पना के आधार पर आँकड़ों से प्राप्त परिणामों को निम्न तालिका में दर्शाया गया है –

तालिका – 01 (देखे)

'टी' मूल्य की तालिका में 0.01 विश्वास स्तर पर 98 वर्ष का मान 2.63 होता है। उपर्युक्त न्यादर्श में 'टी' का मान 10.88 है, जो सारणी मान से बहुत अधिक है, इसलिये शून्य परिकल्पना अमान्य की जाती है। अत: कहा जा सकता है कि माध्यमिक शिक्षा मण्डल, मध्यप्रदेश, भोपाल से मान्यता प्राप्त हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की अपेक्षा केन्द्रीय विद्यालय के हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों में आपदा प्रबन्धन शिक्षा के प्रति जागरुकता में सार्थक अन्तर पाया गया।

इसका मुख्य कारण यह हो सकता है कि केन्द्रीय विद्यालयों में कक्षा 8 वीं से ही आपदा प्रबन्धन को अनिवार्य विषय के रुप में पढ़ाया जाता है तथा आपदा से सम्बन्धित पाठ्योत्तर क्रियाएँ भी करवायी जाती हैं, जबकि माध्यमिक शिक्षा मण्डल, म.प्र., भोपाल से मान्यता प्राप्त विद्यालयों में कक्षा 10 वीं में सामाजिक अध्ययन विषय के अन्तर्गत केवल एक ईकाई में आपदा प्रबन्धन शिक्षा की विषय वस्तु को पढ़ाया जाता है। विद्यालय स्तर पर कोई व्यवहारिक एवं प्रायौगिक गतिविधियां नहीं करवाई जाती है। इसलिये इन विद्यार्थियों में आपदा प्रबन्धन शिक्षा के प्रति निम्न जागरुकता हो सकती है।

शोध निष्कर्ष –प्रस्तुत शोध अध्ययन पश्चात् कहा जा सकता है कि माध्यमिक शिक्षा मण्डल, मध्यप्रदेश, भोपाल से मान्यता प्राप्त हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की अपेक्षा केन्द्रीय विद्यालय के हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों में आपदा प्रबन्धन शिक्षा के प्रति जागरुकता अधिक पायी गयी।

शैक्षिक निहितार्थ –

- माध्यमिक शिक्षा मण्डल, म.प्र., भोपाल द्वारा भी केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की तरह आपदा प्रबन्धन पाठ्यक्रम को एक पृथक विषय के रुप में हाईस्कूल स्तर पर सम्मिलित किया जा सकता है। जिससे विद्यार्थियों में आपदा प्रबन्धन के प्रति जागरुकता को बढ़ाया जा सके।
- केन्द्रीय विद्यालयों एवं माध्यमिक शिक्षा मण्डल, म.प्र., भोपाल से मान्यता प्राप्त हाईस्कूल स्तर के विद्यालयों में लागू आपदा प्रबंधन पाठ्यक्रम की तुलनात्मक जानकारी भावी आपदा प्रबंधन पाठ्यक्रम निर्माण में सहायक सिद्ध होगी।
- शोध अध्ययन के निष्कर्ष, आपदा प्रबन्धन कार्यक्रमों की योजना निर्माण में सहायक सिद्ध होगें।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. Kumar,A.: Disaster Management- Recent Approaches, Anmol Publications, 2007.
2. Sharma,R.A.: Educationl Research, R. Lal Book Depot, Meerut, 2006.
3. Sharma,R.A.: Advanced Statistics in Education and Psychology, R. Lal Book Depot, Meerut, 1985.
4. Together, Towards A Safer India-Part II, A Supplymentary Text Book in Geography for Class IX, Published by The Secretary, CBSE, Delhi, 2006
5. Together, Towards A Safer India-Part III, A Supplymentary Text Book in Geography for Class X, Published by The Secretary, CBSE, Delhi, 2006
6. A Text Book in Social Science for Class X, Published by MP Text Book Corporation, Bhopal, 2014
7. National Policy on Disaster Management-2005

तालिका – 01

अशासकीय उ.मा.वि. महिला मण्डल, मन्दसौर एवं केन्द्रीय विद्यालय मन्दसौर के कक्षा 10 वीं के विद्यार्थियों की आपदा प्रबंधन शिक्षा के प्रति जागरुकता विषयक मध्यमान, प्रामाणिक विचलन का तुलनात्मक विवरण एवं 'टी परीक्षण

न्यादर्श	न्यादर्श का आकार	मध्यमान	मानक विचलन	'टी मान	0.01 स्तर पर
अशासकीय उ.मा.वि. महिला मण्डल, मन्दसौर (म.प्र.)	50	19.92	4.43	10.88	2.63
केन्द्रीय विद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.)	50	28.98	3.87		

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. I

विभिन्न अवस्थाओं में संज्ञानात्मक विकास

बालेन्द्र श्रीवास्तव * डॉ. एम. के. तिवारी **

प्रस्तावना - संज्ञानात्मक विकास - मनुष्य प्रकृति का महत्वपूर्ण अंग होता है इसलिए मनुष्य का प्रकृति से प्रभावित होना स्वाभाविक है। प्रकृति मनुष्य को सब कुछ सीखाती है। प्रकृति से ही मनुष्य की समझ एवं अनुभव का विकास होता है जिससे अनेक प्रकार की जानकारियाँ प्राप्त होती है, यह जानकारी या ज्ञान संज्ञान के रूप में परिणित तब होता है जब इसके लिए बालक द्वारा विभिन्न अवस्थाओं में परिस्थिति के अनुसार उचित प्रयास किया जाए। संज्ञानात्मक विकास के लिए बालक के साथ-साथ प्रकृति के अन्य सहयोगी जैसे- शिक्षक, विद्यालय, समाज, परिवार आदि की विशेष भूमिका होती है।

संज्ञानात्मक विकास का अर्थ- संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं के अंतर्गत बच्चे का चिंतन, बुद्धि तथा भाषा में परिवर्तन आता है। इन तीनों परिवर्तनों में संवेदन, प्रत्यक्षीकरण, प्रतिमाधारण, समस्या-समाधान, चिंतन, प्रक्रिया, तर्क-शक्ति जैसी महत्वपूर्ण प्रक्रियाएँ शमिल होती है। इस प्रकार संज्ञानात्मक विकास से तात्पर्य बालाकों में संवेदी सूचनाओं को ग्रहण करके उस पर चिंतन करने तथा क्रमिक रूप से उसे इस लायक बना देने से होता है जिसका प्रयोग विभिन्न परिस्थितियों में करके वे तरह-तरह की समस्याओं का समाधान आसानी से कर सकता है। संज्ञानात्मक विकास ही बालक के समग्र जीवन को नियंत्रित एवं संतुलित करता है, यह विकास एवं संतुलन जीवन भर चलता रहता है।

विभिन्न अवस्थाओं में संज्ञानात्मक विकास - संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया सभी बालकों की सभी अवस्थाओं में समान रूप से नहीं पायी जाती। संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया में पर्याप्त अंतर देखा जाता है। किसी बालक का संज्ञानात्मक विकास तीव्र गति से होता है, किसी बालक का संज्ञानात्मक विकास सामान्य गति से होता है, तो कुछ बालकों का संज्ञानात्मक विकास मन्द गति से होता है। बालक जैसे- जैसे विभिन्न अवस्थाओं में प्रवेश करता है उसका संज्ञानात्मक विकास क्रमश: होता रहता है। उसके कार्य और योजनाएँ भी भविष्य के लिए बनती जाती है। बालक किसी योजना या कार्य को बहुत देर तक करने के योग्य बन जाता है।

बालक के जीवन के प्रथम मास में इन्द्रिय ज्ञान का विकास प्रारम्भ होता है और वह ज्ञानेन्द्रिय अवयवों के उपयोग को सीखता है। आयु के प्रथम दो वर्षों में वह इन्द्रियों की सहयाता से समन्वेषण की दृष्टि प्राप्त करता है, बालक प्रथम दो वर्षों में धीरे-धीरे भाषा का प्रयोग करना भी सीख लेता है। सबसे पहले बालक मौखिक प्रतीकों और ध्वनि संकेतों का प्रयोग करना सीखता है, जो विशिष्ट वाक्य अथवा भावना के प्रतीक स्वरूप होते है। यह अस्पष्ट, तोतली सूत्रात्मक एवं प्रतिकात्मक भाषा होती है, फिर धीरे- धीरे शब्दों को स्पष्ट रूप से बोलना सीखता है। ये प्राय: वे ही वाक्य होते है, जो उनके परिवार के सदस्य बोलते है। बालक उनका अनुकरण कर उन्हें मात्र दुहराता है।

तीसरे वर्ष के आरम्भ में बालक अपने आस पास की वस्तुओं में अधिक रूचि लेना प्रारम्भ कर देता है। वह बड़ा जिज्ञासु बन जाता है और ऐसे प्रश्न करता है-'यह किसने किया? यह क्या है? यह यहाँ क्यों रखा गया?' 'बालकों द्वारा सर्वाधिक प्रयोग में लाये जाने वाला वाक्य यह क्या है?' होता है।

इसी प्रकार 5 वर्ष से 13 वर्ष तक और 13 वर्ष से 19 वर्ष तक के बालकों में विभिन्न प्रकार के विकास और रूचियाँ देखी जाती है। जैसे 5 और 12 वर्ष के उम्र में बालक दूसरों का रूप धारण करना, बड़े लोगों की तरह व्यवहार करना आदि खेलों में अधिक दिलचस्पी लेता है। इस प्रकार के अनुकरणात्मक खेलों में उसकी अभिरूचि अधिक होती है। उसका मन उन्हीं में रमता है, किन्तु किशोरावस्था में वह रोमानी खेलों में दिलचस्पी लेने लगता है।

यद्यपि संज्ञानात्मक विकास के विषय पर जीन पियाजे, वायगोतस्की एवं ब्रूनर जैसे विद्धानों ने अपना-अपना विचार व्यक्त किया लेकिन उपर्युक्त विषय पर जीन पियाजे का सिद्धांत आज भी प्रासंगिक है। पियाजे के अनुसार मानव शिशु शुरूआत में संज्ञानी जीव नहीं होते इसके बजाय अपनी बोधात्मक एवं गत्यात्मक गतिविधियों के द्वारा मनोवैज्ञानिक ढांचे, अनूभवों से सीखने के संगठित तरीके, जिनके द्वारा बच्चे ज्यादा प्रभावशाली ढंग से खुद को अपने पर्यावरण के अनुकूल ढाल पाते हैं बनाते और निखारते है। इन ढांचों को विकसित करते समय बच्चें बहुत गहन रूप से सक्रिय रहते है। चूँकि पियाजे का मानना था कि बच्चें उनकी दुनिया के लगभग समस्त ज्ञान को उनकी अपनी गतिविधयों के द्वारा खोजते या निर्मित करते है। अत: पियाजे के सिद्धाँत को संज्ञानात्मक विकास तक ले जाने वाला रचनात्मक मार्ग कहा जाता है।

1. संवेदी पेशीय अवस्था(Sensory Motor Stage) (0-2 वर्ष)- इस अवस्था में शिशुओं में अन्य क्रियाओं के अलावा शारीरिक रूप से चीजों को यहाँ से वहाँ करना, वस्तुओं की पहचान करने की कोशिश करना, किसी चीज को पकड़ना और प्राय: उसे मुँह में डालकर उसका अध्ययन करना आदि प्रमुख है। इस अवस्था के अंत तक विचार करने और कल्पना करने की क्षमता का विकास हो जाता है। यह अवस्था मुख्यत: छह उप-अवस्थाओं से होकर गुजरती है-

पहली अवस्था -'प्रतिवर्त क्रियाओं की अवस्था'- यह अवस्था जन्म से 30 दिन तक की होती है। इस अवस्था में बालक केवल प्रतिवर्त क्रियाएं करता है। इन प्रतिवर्त क्रियाओं में चूसने का प्रतिवर्त सबसे प्रबल होता है।

दूसरी अवस्था -'वृत्तीय प्रतिक्रियाओं की अवस्था'- यह अवस्था 1 महीने से 4 महीने की अवधि तक होती है। इस अवस्था में शिशुओं की प्रतिवर्ष

* व्याख्याता, डाईट शाजापुर, शोधार्थी, पहेर विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** प्राचार्य, मेवाड़ कन्या शिक्षा महाविद्यालय, चित्तौडगढ़, राजस्थान (राज.) भारत

क्रियाएं उनकी अनुभूतियों द्धारा कुछ हद तक परिवर्तित होती है।

तीसरी अवस्था –'गौण वृत्तीय प्रतिक्रियाओं की अवस्था'–यह अवस्था 4 से 8 महीने की अवधि तक होती है। इस अवस्था में शिशु वस्तुओं को उलटने–पुलटने तथा छूने पर अपना अधिक ध्यान देता है।

चौथी अवस्था–'गौण स्कीमेटा के समन्वय की अवस्था'– यह अवस्था 8 से 12 महीने की अवधि तक होती है। इस अवधि में बालक लक्ष्य तथा उस पर पहुँचने के साधन में अंतर करना प्रारम्भ कर देता है।

पाँचवी अवस्था –'तृतीय वृत्तीय प्रतिक्रियाओं की अवस्था'– यह अवस्था 12 से 18 महीने की अवधि तक होती है। इस अवधि में बालक वस्तुओं के गुणों को प्रयास एवं त्रुटि विधि से सीखने की कोशिश करता है।

छठवीं अवस्था – 'मानसिक संयोग द्धारा नये साधनों की खोज करना'– यह अवस्था 18 से 24 महीने की अवधि तक होती है। इस अवस्था में बालक वस्तुओं के बारे में चिंतन प्रारम्भ कर देता है।

2. पूर्व–संक्रियात्मक अवस्था(Pre-operational Stage)(2–7वर्ष)– यह वह अवस्था होती है, जो प्रारंभिक बाल्यावस्था की होती है। इस काल में बालक घटनाओं और वस्तुओं को प्रतीकों के द्धारा प्रस्तुत करने की विधियों को विकसित कर लेता है। इस स्तर पर बालक आत्मकेन्द्रित रहता है।

3. मूर्त–संक्रिया अवस्था(concrete-operational stage) (7–11 वर्ष)– इस अवस्था में बालक स्थूल वस्तुओं के आधार पर आसानी से मानसिक संक्रियाएँ करके समस्या का समाधान कर लेते है। बालक वस्तुओं के विषय में तार्किक चिंतन करने योग्य हो जाते है। बालक अपने चारों ओर के वातावरण के साथ अनुकूल समायोजन करने में सक्षम होता जाता है।

4. संप्रत्यात्मक चिंतन की तैयारी का काल(the period of preparation for conceptual thought)(11–12वर्ष)– संप्रत्यात्मक चिंतन की तैयारी के प्रारम्भिक काल में बालक खेलने में लगा रहता है। उसकी भाषायी योग्यता का विकास प्रारम्भ हो जाता है। वह अनुकरण का प्रयोग सीख लेता है तथा अपने वातावरण का मुल्यांकन तथा पुनर्मूल्यांकन करता है।

5. औपचारिक प्रक्रिया का काल अथवा ज्ञानात्मक चिंतन का काल (the phase of cognitive thoght) (12–17वर्ष) – इस अवस्था में किशोरों का चिंतन अधिक लचीला और प्रभावी हो जाता है। उसके चिंतन में पूर्ण क्रमबद्धता आ जाती है। इस प्रकार इस अवस्था में बालक इस योग्य हो जाते है कि वह समस्या विशेष को संभव तरीके से समाधान कर सके इस अवस्था की प्रमुख विशेषता यह है कि किशोर अमूर्त चिंतन द्धारा तार्किक चिंतन का भी परिमार्जन कर लेते है।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि संज्ञानात्मक विकास को सर्वोत्तम बनाने में विविध प्रकार के बाधक तत्वों जैसे– नियंत्रण, तनाव, कठिन अधिगम गतिविधियों, पूर्वाग्रहों, विरोधी विचारों, नकारात्मक व्यवहार, नकारात्मक वातावरण, दंड, संवेगात्मक अस्थिरता आदि का पृथकरण करने का प्रयास करना चाहिए। साथ ही साथ संज्ञानात्मक विकास को सर्वोत्तम बनाने में विविध प्रकार के तत्वों जैसे– अभिप्रेरणा, पृष्ठपोषण, स्वतंत्रता, सकारात्मक दृष्टिकोण, आत्मविश्वास, सृजनात्मकता, निर्देशन एवं परामर्श, बालकेन्द्रित गतिविधियाँ, समानता आदि का समावेश करने का प्रयास करना चाहिए। जिससे कि प्रत्येक बालक के समक्ष एक ऐसा वातावरण उत्पन्न हो जो कि उसके संज्ञानात्मक विकास के लिए उपयोगी सिद्ध हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भटनागर सुरेश, बाल विकास एवं बाल मनोविज्ञान(2006), आर लाल बुक डिपो, मेरठ
2. पाठक पीडी, शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा
3. माथुर डॉ. एसएस, शिक्षा मनोविज्ञान आगरा पब्लिकेशन्स, आगरा2
4. शर्मा श्रीमती आरके, सामाजिक, सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में संज्ञान एवं अधिगम, राधा प्रकाशन मंदिर प्रा. लि.
5. piaget, j., inhddar, B.the psychology of the child (1967), new York, basic book

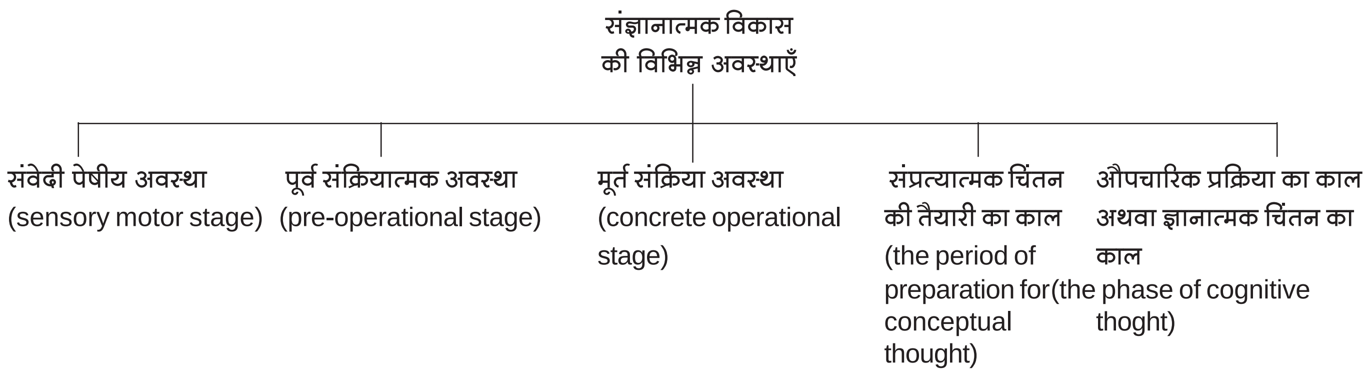

****

योग्य शिक्षकों के निर्माण में सम सामयिक चुनौतियाँ

डॉ. उदय कालभंवर *

प्रस्तावना – अध्यापन सभी कलाओं में कठिन और सभी विज्ञानों से गहन है, क्योंकि उसका माध्यम मिट्टी, पत्थर, कागज या कैनवास नहीं है, बल्कि जीता जागता परिवर्तनशील दिमाग है। एक महान शिक्षक एक महान कलाकार होता है इस भौतिकतावादी जमाने में अध्यापन व्यवसाय प्रतिभाशाली या शिक्षण कार्य के प्रति पूरी तरह से समर्पित युवक/युवतियां बहुत कम ही आते है। अच्छे अकादमिक रिकार्ड वाले युवक-युवतियॉ प्राय: उन व्यवसायों में जाना पसंद करते है, जहां उन्हें अधिक वेतन, सुविधाऐं एवं अधिकार मिलते है। कई उत्साही और लगनशील युवा अध्यापकों को उनके प्रशासकों और वरिष्ठ साथियों से स्वीकृति, सुरक्षा और सहानुभूति नहीं मिलने पर उनका मन मुरझा जाता है कालेज या स्कुल में नए अध्यापक को अध्यापन व्यवसाय के प्रति आकर्षित और समर्पित करने के लिए उनके मन को जीतना और उनमें व्यवसायिक निष्ठा विकसित करना आवश्यक है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए पहली आवश्यकता है उन्हें स्वीकृति, सम्मान, और सुरक्षा प्रदान की जाऐ। कई बार नए भर्ती शिक्षकों को प्राचार्य उसे सीधे-सीधे कक्षा में पढ़ाने भेज देते है और अन्य कुछ अरुचिकर कार्य भी उन्हें सौंप दिऐ जाते है। जैसे कभी उन्हें फीस वसुलने बैठा दिया जाता है, कभी अरेन्जमेंन्ट के पीरियड लेने, कभी फर्नीचर गिनने और कभी प्रयोगशाला के केमिकल्स और उपकरण गिनने लगा दिया जाता है।

इमर्सन ने अपने ग्रंथ 'द स्कालर' में लिखा है कि शिक्षक की सज-धज और वेश-भूषा से बढ़कर तो उसके मुंह से निकला हुआ। एक ज्ञान का शब्द होता है किन्तु स्थिति इसके विपरीत है, कक्षाओं में सन्नाटा है और छात्रों को ज्ञानपूर्ण शब्द सुनने को नहीं मिलते है। शिक्षा के द्वारा हम ऐसे युवाजन तैयार करना चाहते है, जो जीवन के हर क्षेत्र में नेतृत्व और विशेषज्ञता प्रदान कर सके तो इसका सीधा मतलब है कि उसे पढ़ाने वाले शिक्षकों में नेतृत्व, विशेषज्ञता और नैतिकता के साथ मानवीय मूल्य पहले से ही समाहित हो आज की अत्यधिक औपचारिकता और यांत्रिकता ने उच्च शिक्षा को मस्तिष्क विमुख, समाज जनअवरोधी और अमानवीय बना दिया है। जिसके लिए कुछ हद तक शिक्षक जिम्मेदार है। अत: जितने अच्छे शिक्षकों की आवश्यकता आज है उतनी पहले कभी नहीं थी। शिक्षक समाज में एक मालवाहक का कार्य करता है। शिक्षकों को शिक्षक प्रशिक्षण संस्था में प्रशिक्षित किया जाता है। तकनीकी क्रांति के कारण शिक्षक की प्रकृति में भी परिवर्तन हुआ है। वर्तमान समाज में अधिक कौशल पूर्ण शिक्षकों की आवश्यकता है, जिसके कारण शिक्षा का स्तर ऊंचा उठाया जा सके। शिक्षा के मंदिर में विद्यार्थीयों की बढ़ती भीड़ के कारण शिक्षकों पर बहुत अधिक दबाव रहता है। शिक्षक का व्यक्तित्व छात्रों पर एक गहरा प्रभाव छोडता है। इस कारण से शिक्षकों को अपने काम में बहुत स्पष्ट रवैया रखना चाहिए जिससे की उनका काम सरल एवं प्रभावी हो सके।

श्री लाल शुक्ल ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास राग दरबारी में कहा है कि हमारे देश की शिक्षा की हालत सड़क पर पड़ी उस मादाश्वान के समान है जिसे जो चाहे लात मारकर आगे बढ़ जाता है। निष्कर्ष यह कि शिक्षा व शिक्षकों के बारे में कोई भी टिप्पणी करने से नहीं चुकता। कुल मिलाकर शिक्षक बेहाल है और शिक्षा बदहाल । शिक्षक, शिक्षा व्यवस्था का आधार माना जाता है, लेकिन इस आधार को इतना कमजोर बना दिया गया है कि वह अपने ऊपर खड़े ढांचे को संभाल नहीं पा रहे है। सरल शब्दों में कहें तो शिक्षक का प्रमुख कर्तव्य होता है, छात्रों को सीखने-सीखाने के अवसर उपलब्ध कराना। आदर्शो का राग न अलापते हुए यदि स्कूल नियमित समय पर प्रारंभ हों, कक्षाएं लगे, कक्षाओं में शिक्षक पहुंचे और बच्चों के साथ बौद्धिक वार्तालाप करें तो काफी हद तक शिक्षक की भूमिका सार्थक होती दिखाई देती है। स्कूलों में पढ़ने-पढ़ाने का माहौल नहीं दिखता। हमारे यहां शिक्षा को लेकर अनेक योजनाएं बनी, लेकिन सभी का बुरा हश्र हुआ है। शिक्षक बिरादरी के साथ शैक्षिक और नेतृत्व प्रबंधन को लेकर संवाद स्थापित करने के प्रयास बहुत कम हुए हैं। कुछ राज्यों में शिक्षा तंत्र व शिक्षक बिरादरी के साथ नेतृत्व प्रबंधन की कोशिशों ने जोर पकड़ा हैं। उम्मीद की जानी चाहिए कि यह कदम बौद्धिक बदहाली से निपटने में मील का पत्थर साबित होगा। अच्छी शिक्षा और उसमें सतत् सुधार के लिए यह आवश्यक है कि हमारे पास काबिल तथा पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित शिक्षक हों।

योग्य शिक्षकों के निर्माण में सम सामयिक चुनौतियॉ –

1. **शिक्षक प्रशिक्षण की विसंगतियाँ–** स्कूली शिक्षा में गुणात्मक सुधार का मसला शिक्षकों की शैक्षणिक क्षमताओं से जुड़ा हुआ है। सवाल इस बात का है कि शिक्षकों की शैक्षणिक क्षमताओं में इजाफा करने के कितने सार्थक प्रयास किए गए ? स्कूलों में गुणात्मक सुधार तभी हो पाएगा, जब शिक्षकों में उन दक्षताओं का विकास किया जाए जो बच्चों को सिखाने के लिए जरुरी होती है। सच पूछें तो हमारे यहां शिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम उनकी शैक्षणिक सीमाओं को शिथिल करने में असफल रहे हैं। आखिर ऐसे प्रशिक्षण का क्या फायदा जहां शिक्षा की हवाई बातें की जा रही हों। शिक्षक को कक्षा में कैसे बेहतर प्रदर्शन करना हैं, इसे लेकर क्या योजनाएं है ? खासकर पूर्व सेवाकालीन कोर्स में तैयार करवाए जाने वाले लेसन प्लानिंग का स्वरुप कुछ इस प्रकार का होता हैं कि उसका अंश मात्र भी शिक्षक कक्षा में इस्तेमाल नहीं कर पाता। स्कूलों में सीखने-सिखाने की गुणवत्ता को लेकर शिक्षकों की तैयारी के लिए शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम की असंतोषजनक स्थिति पर यशपाल समिति अनुशंसा करती है कि शिक्षक प्रशिक्षण की सामग्री के ढांचे को प्रासंगिक और स्कुल की जरुरत के हिसाब से बनाना चाहिए। शिक्षक प्रशिक्षण के इन कार्यक्रमों का जोर इस बात पर होना चाहिए कि प्रशिक्षणार्थी अपने स्तर पर सीखने और स्वतंत्र रुप से सोचने की योग्यता अर्जित कर

* व्याख्याता, रोशन शिक्षा महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

सके।

2. आयोग और शिक्षक– शिक्षक न केवल विषयगत मामलों में सशक्त बने बल्कि समाज के मसलों को शिक्षा से जोड़े और शिक्षण करे। कोठारी आयोग (1964–1966) के अनुसार शिक्षा में गुणात्मक सुधार हेतु शिक्षकों को बतौर पेशेवर तैयार करना अत्यंत जरुरी है। कोठारी आयोग कहता है कि 'भारत का भविष्य उसकी कक्षाओं मे गढ़ा जा रहा है।' अगर हम वास्तव में चाहते हैं कि हर शिक्षक अपनी 'कक्षा में भविष्य गढ़ने में सक्षम' हो तो उसके लिए शिक्षक प्रशिक्षक को सर्वोच्च सामाजिक दर्जा देना होगा। शिक्षा के दो पहलु है एक व्यक्तिगत और दूसरा सामाजिक। कोठारी आयोग शिक्षकों की पेशेवर तैयारी को लेकर एक और महत्वपूर्ण बात की और ध्यान दिलाता है शिक्षक अपनी कक्षाओं में उन्हीं पद्धतियों को अपनाते हैं जिनका अनुसरण उनके शिक्षक किया करते थे। इस प्रकार से एक परम्परा का अनुसरण होता जाता है, इसका मतलब है कि प्रशिक्षण के दौरान शिक्षकों का समझ बनाने स्वयं ज्ञान अर्जित करने के अवसर नहीं मिल पाते है।

3. शिक्षक और अभिभावक संबंध–आज शिक्षक के सामने कई चुनौतिया है, जिनकी और सरकार का ध्यान नहीं है। इसी कारण से विद्यार्थी अभिभावक और शिक्षा के बीच संबंधों के समीकरण बिगड़ते जा रहे है और प्रतिदिन ऐसी घटनाऐं घट रही है। जो शिक्षा जगत के लिए कलंक है। हाल के दिनों में विद्यार्थी और शिक्षक के संबंधों में हिंसा और तनाव का समावेश कई प्रश्नों को जन्म देते है। पाठ याद न करने, गृहकार्य न करने या कक्षा में शरारत करने वाले विद्यार्थीयों को अमानमीय ढंग से दंडित किया जाना चिंताजनक है। इसी तरह से विद्यालयों में शिक्षकों के द्धारा छात्राओं का यौन शोषण कम चिन्ता की बात नहीं है। मध्यप्रदेश के छतरपुर, गंजबसोदा और कटनी जिले में ऐसे मामले सामने आये है जिन्होंने गुरु–शिष्य के पवित्र रिश्ते को खराब किया है। लेकिन अधिकतर घटनाऐं तो सामने भी नहीं आ पाती क्योंकि पुलिस मामला दर्ज ही नहीं करती या फिर आरोपी दबंग हो तो भी मामला दबा दिया जाता हैं।

4. शिक्षक और निजी शिक्षण संस्था – समुचे देश में सरकारी शिक्षा संस्थानों की बदहाली किसी से छिपी नहीं है और गैर सरकारी संस्थानों मे शिक्षको का शोषण जारी है। कम वेतन देकर उन से अधिक से अधिक काम लेना आम बात है। दक्षिण भारत के निजी शिक्षा संस्थानों मे तो अस्थायी शिक्षकों को नौकरी के बदले अपनी मुल अंकसुची व अन्य प्रमाण पत्र जमा करवाने पड़ते है। यही नहीं निजी संस्थानों के प्रबंध समिति मनमाने ढंग से तैयार अनुबंध पत्र पर उनसे हस्ताक्षर करवाकर उनका शोषण करती है। शिक्षकों के पास चुपचाप रहने के अलावा कोई विकल्प नहीं है।

5. शिक्षकों से अपेक्षा–बच्चों तथा युवा पीढ़ी को अच्छे संस्कार देकर आदर्श नागरिक बनाने का दायित्व शिक्षकों पर होता है। यदि शिक्षक सुखी और समृद्ध होगा तभी वह निश्चिंत होकर देश की युवा पीढ़ी के निर्माण में पूरी तन्मयता से लगा रह सकता है लेकिन दुर्भाग्यवश स्वतंत्र भारत में आज भी नौकरी पेशा वर्ग में शिक्षा की सर्वाधिक दुर्दशा ग्रस्त है। आज शिक्षकों से प्राचीनकाल के गुरुओं की भांति अनुशासन, धैर्य और निष्ठापूर्वक शिष्य के जीवन निर्माण की अपेक्षा नहीं की जा सकती न ही आज के विद्यार्थी प्राचीन संदर्भो वाले शिष्य बनने हेतु तत्पर है, शायद इसलिए पवित्र गुरु–शिष्य परम्परा निरन्तर दूषित हो चली है। शिक्षा के क्षेत्र में भारत हमेशा से आगे रहा है। भारत भूमि में एक से बढ़कर एक शिक्षक हुए है संसार के कोने–कोने से विद्यार्थी यहां पर शिक्षा ग्रहण करने आते थे। इसी कारण से भारत को जगतगुरु के नाम से जाना जाता था, धीर–धीरे चयन परीक्षा और क्रमश: वर्ण–व्यवस्था अस्तित्व में आयी प्रारंभ मे गुरुकुल व्यवस्था थी। जहां पर गुरु के जीवनयापन की चिन्ता समाज करता था। नगर के शोर से दूर एकांत स्थल पर गुरु के आश्रम में बालकों को वही रहकर शिक्षा ग्रहण करना होती थी शिक्षा का लक्ष्य सर्वागीण विकास था। आज के युग में शिक्षा प्रणाली केवल पुस्तकीय अध्यापन और कक्षागत शिक्षण तक सीमित हो गयी है न उसमें चरित्र चित्रण का कोई स्थान है न ही नैतिक अनुशासन। शिक्षक मात्र वेतनभोगी है। जिससे निर्धारित पाठ्यक्रम निर्धारित सत्र में समाप्त करके अपने कर्तव्य की इतिश्री कर लेता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक भास्कर समाचार पत्र 2 जून 2016 वर्तमान शिक्षा व शिक्षक अवस्था
2. राष्ट्रीय उच्चशिक्षा अभियान 2013 नेशनल हायर ऐजूकेशन मिशन टाटा इंस्टीटूयट ऑफ सोशल साईस एवं एम.एच.आर.डी. भारत सरकार उच्चशिक्षा विकास योजना।
3. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग 2007 और 2008 रिर्पोट टू द नेशन भारत सरकार नई दिल्ली।
4. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूप रेखा 2005 राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली।
5. शिक्षा की चुनौती 1985 नीति सम्बधी परिप्रेक्षय एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली।
6. Agrawal, R. 2001 Stress in life & at work, New Delhi.
7. Best & Kahn 2007 Research in Education Prentice Hall of Fame New Delhi.

****

मूल्यपरक शिक्षा

डॉ. रश्मि पण्ड्या *

प्रस्तावना –`Value' (मूल्य) ये एक लैटिन भाषा के 'Valere' से निकला शब्द है, जिसका अर्थ है – किसी चीज की कीमत, गुण, विशेषता, उपयोगिता।

'मूल्य' विषय पर मैंने कई विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाएँ पढ़ी हैं जिनका उल्लेख मैं यहा मंच से करना चाहूँगी।

वुड्स महोदय के अनुसार –'मूल्य मानव व्यवहार के घटक तथा निर्धारक तत्व है। ये आदर्श और ध्येय दोनों का कार्य करते हैं।'

मूल्यों की सर्वोत्तम परिभाषा लखनऊ विश्वविद्यालय के सुप्रसिद्ध समाजशास्त्र और समाज कार्य के **प्रोफेसर डॉ. राधाकमल मुकर्जी** ने अपनी विख्यात पुस्तक `The Structure of Values' में दी थी –

'मूल्य समाज द्वारा स्वीकृत इच्छाएँ और लक्ष्य होते हैं जिन्हें कंडीशनिंग, सीखने या समाजीकरण की प्रक्रिया से आत्मसात् किया जाता है और जो व्यक्ति की अपनी पसन्दें, मानक और महत्वाकांक्षाएँ बन जाते हैं।'

आज हम सभी यहाँ 'मूल्यपरक शिक्षा' पर चर्चा के लिए एकत्र हुए हैं। इसे हमने राज्य स्तरीय संगोष्ठी में शामिल किया है क्यों ?

क्योंकि कहीं न कहीं इन मूल्यों का ह्रास हो रहा है। गाँधीजी द्वारा भी सत्य, अहिंसा, त्याग जैसे मूल्यों पर जोर देने की बात कही गई थी परन्तु आज ये सर्वोच्च मानवीय मूल्य हमारे समाज से नदारद हैं। आज मूल्यों का गहराता जा रहा है। और ये संकट तब तक बना रहेगा जब तक मूल्यों की शिक्षा को भी शिक्षक एक प्रमुख उत्तरदायित्व के रूप वहन नहीं करेगा।

स्वतंत्रता के उपरांत भारत में शिक्षा को समाजीकरण का एक सशक्त माध्यम मानकर वैयक्तिकता व नागरिकता के गुणों को विकसित करने का प्रयास किया गया। आज हम शिक्षा को व्यवसायोन्मुखी करने का प्रयत्न कर रहे हैं, हमारी सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण व हस्तांतरण के लिए भी प्रयत्नशील हैं, परन्तु इस सबके लिए उत्तम विकल्प चुनने की कुशलता व्यक्ति में विकसित होनी चाहिए और ये कार्य 'शिक्षा' ही कर सकती है। उत्तम विकल्प के चयन की प्रक्रिया वास्तव में मूल्य प्रक्रिया है। सम्पूर्ण शिक्षा वास्तव में मूल्य निर्धारण की ही प्रक्रिया है।

भारतीय नागरिकों में शिक्षा द्वारा किस प्रकार के मूल्य विकसित किए जाएँ इस बारे में शिक्षाविदों, मनोवैज्ञानिकों, शिक्षकों व अभिभावकों तक में आज तक मतैक्य नहीं हो पाया है। सबसे बडे दु:ख व दुर्भाग्य की बात तो यह है कि हम अभी तक विभिन्न मूल्यों की एक स्पष्ट व मान्य परिभाषा भी निश्चित नहीं कर पाए हैं।

मूल्यों के विषय में शिक्षण करने, वार्ता करने या शोध करने में हमको निम्न संप्रत्यों (Concepts) का उपयोग करना चाहिए जिससे मूल्यों को समझने व उनका विश्लेषण करने में हमें सहयता मिलेगी।

- मूल्य संघर्ष (Value Conflict)
- प्रतिमान हीन (Anomie) – ये संप्रत्य फ्रेंच समाजशास्त्री दुर्खीम ने दिया है।
- पृथकत्व (Alienation), मूल्यों को विकृत करना (Value Distortion), मूल्य विविधता (Value Diversity), मूल्य परिवर्तन (Value Change), मूल्य संबंधी तटस्थता (Value Neutrality), मूल्य निर्णय (Value Judgment).
- मूल्य टीका (Value Interpretation)
- मूल्य सार्थकता (Value Relevance)
- मूल्य के प्रति झुकाव (Value Orientation)

साथ ही मूल्यों को हमने कई भागों में वर्गीकृत किया है परन्तु हम यहाँ दो विशेष प्रकार के मूल्यों की सर्वाधिक महत्ता को स्वीकारें –

1. मूलभूत मानव मूल्य (Basic Human Values) – इन्हें हम सार्वभौमिक या विश्वव्यापी मूल्य भी कहेंगे। ये हैं – सत्य (Truth), प्रेम (Love), शान्ति (Peace), धर्म या सही अर्थ (Righteousness or Right Action), अहिंसा (Non-Violence).
2. नैतिक मूल्य (Moral Values) – 1959 में श्रीप्रकाष के नेतृत्व में एक धार्मिक और नैतिक शिक्षा की समिति भारत सरकार ने नियुक्त की थी।

नैतिक मूल्यों में सद्गुणों, तहजीब या तमीज का प्रमुख स्थान होता है। स्वयं पर नियंत्रण रखना, रूखा व्यवहार न करना, चोरी नहीं करना, व्यभिचार, लोभ, दगाबाजी न करना, सांस्कृतिक मर्यादाओं का ध्यान रखना आदि।

इसी प्रकार **दुर्खीम** ने (Moral Education) नामक पुस्तक में नैतिकता के प्रमुख तत्वों की बात कही। SCERT नई दिल्ली के प्राध्यापक डी.वी.सिंह नें अपनी पुस्तक 'माध्यमिक विद्यालयों में नैतिक शिक्षा (2000)' में नैतिक विकास के तीन स्तरों की चर्चा की। उसी प्रकार राष्ट्रीय मुक्त विद्या शिक्षा संस्थान, नई दिल्ली के प्रकाशन 'मानवीय मूल्य विकास : व्यवहारिक आचरण (भाग 2)' में व्यक्ति के विकास में तीन सोपानों की चर्चा की है।

मूल्य शिक्षा में शिक्षक की भूमिका –

1. शिक्षक एक वयस्क है, उसे विद्यार्थियों के व्यवहार को प्रभावित करना है, जो विद्यार्थियों की प्रकृति से संबंधित है।
2. शिक्षक भारत की सांस्कृतिक परम्पराओं और विविधता में एकता का प्रतिनिधित्व करने वाला व्यक्ति है।
3. शिक्षक, अपनी रक्षा में सिखने – सिखाने की प्रक्रियाओं और अन्त: क्रियाओं का नेता है।

मूल्य शिक्षा प्रदान करने हेतु शैक्षिक व्यवस्थाएँ –

प्रो. सत्यपाल रूहेला जो सेवानिवृत्त प्रोफेसर, हैड और डीन शिक्षा संकाय, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली रहे उन्होंने अपने लेख 'Education in human Values : A Synoptic View में दिया था । जो 'University News' पत्रिका के 13 जुलाई, 1987 के अंक में प्रकाशित हुआ था।

1. क्या मूल्य शिक्षा एक अलग विषय के रूप में प्रदान की जानी चाहिए?
उत्तर. नहीं, सभी शाला विषयों में पढ़ाया जाना चाहिए।

* सहायक प्राध्यापक, सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय , उज्जैन (म.प्र.) भारत

2. क्या मूल्य शिक्षा का एक अलग शिक्षक नियुक्त किया जाए ?
   उत्तर. नहीं, सभी शिक्षकों को विषय ज्ञान के साथ इसे देना चाहिए।
3. क्या मूल्य शिक्षा का टाइम-टेबिल में अलग पीरियड होना चाहिए ?
   उत्तर. नहीं।
4. मूल्य शिक्षा पूर्ण जिम्मेदारी से सभी शिक्षकों द्वारा प्रदान की जानी चाहिए।
5. इसकी अंतर्वस्तु में आध्यातमिकता, विज्ञान, तकनीकी, आचारशास्त्र, समाजसेवा, पर्यावरण विज्ञान, भविष्यशास्त्र, वैज्ञानिक मानववाद, नि:शस्त्रीकरण, अन्तर्राष्ट्रीयता का सम्मिश्रण होना चाहिए।
6. शिक्षकों के अतिरिक्त माता-पिता, प्रबुद्ध नागरिक भी इसे प्रदान करने में सहभागी बनें।

मूल्य शिक्षा के विख्यात विशेषज्ञ - प्रो. किरिट जोषी ने अपने लेख `An Outline Programme of Value Oriented Education' में कहा है - 'मूल्यों की शिक्षा प्रदान करने का रहस्य यह है कि शिक्षक स्वयं अपने चरित्र के उदाहरण और ज्ञान पर अपनी अधिकार-कुशलता से विद्यार्थियों को प्रभावित करें। हम शिक्षकों द्वारा स्वयं अपने में उन मूल्यों को आत्मसात् कर लेने पर ही विद्यार्थियों को उन मूल्यों से प्रकाशित कर सकते हैं। मूल्य शिक्षा का कार्यक्रम 'ऐसा करो' 'ऐसा मत करोय की लम्बी सूची के रूप में नहीं बनाया जाना चाहिए।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Environmental Torts : A Step Towards The Legal Revamping Policy Related To Environmental Protection

Aprajita Bhargava *

Abstract - Environment, a subject matter of utmost importance, has, undoubtedly, attracted a great deal of deliberation in the past. However, several issues remain unanswered till date. The environmental policy of the country remains full of loopholes failing to provide an appropriate forum for environment protection, especially against private individuals. The need of the hour is legislative policy based on tort law as an easy method to redress grievances against violating the Constitutional mandate of clean and healthy environment. The Environment Statutes impose criminal liability on the wrong doer. But, Civil Law is better suited to meet the present needs of the country because unlike criminal law, 'intent', which paralyses the criminal justice delivery system, doesn't play a major role in it.
Keywords - Alternative remedy, Environmental protection, Tort law, Absolute liability; Strict liability, PIL.

Introduction - Environment – An issue that has been perpetually juxtaposed with the existence of all life forms on Earth. It is this Nature under whose watchful eyes human beings have evolved. But such has been the magnanimity of man's evolution that it has brought him in a position where he stands face to face with Nature and challenges her divine powers to alter the world. So expeditious are man's endeavours that he has completely outstripped his biological development by his technological advancements. In nearly every region, air is being befouled, waterways polluted, soil washed away, the land desiccated and wildlife destroyed. Rivers, lakes and oceans have become so polluted that in many places they can no longer support life. However, Indian Environmental Law has seen considerable development in the last two decades, with the constitutional courts laying down the basic principles on which the environmental justice system stands. The Indian Legal System began to draw its reins on the polluters after attaining independence beginning with the 4th plan of the Planning Commission of India that took cognizance of the problems of pollution, even before the Stockholm Conference on the Human Environment that saw an active participation of India in pollution curbing maneuvers. Since then, India has seen a plethora of legislations covering various aspects of the environment to ensure its conservation of natural environment.

Constitutional And Legislative Mandate For A Right To Healthy Environment – The SUPREME COURT has interpreted the right to life and personal liberty as under Article 21 to mean a right to have pollution free environment Article 48 A, added by the 42nd Amendment, 1978 provides that the State shall endeavour to protect and improve the environment and to safeguard the forests and wild life sanctuary of the country while Article 51 A (g) imposes a duty on the citizens of the country to protect and improve the natural environment. All of which is borne in mind when an environmental matter is brought before the Court.

PILs For Environment Related Issues - Public-interest litigation, a brainchild of judicial activism has played a critical role in expanding environmental jurisprudence in India over the last twenty-five years. It was the procedural mechanism that allowed for citizens' claims against the government and polluters, and the tool that the Court continues to use to protect our fundamental constitutional rights. Over the years, PIL has degenerated into Private Interest Litigation, Political Interest Litigation, and above all, Publicity Interest Litigation. This prompted the SUPREME COURT to issue guidelines to restrain abuse of PIL, however, this has only resulted in PILs with a genuine cause being dismissed on the pretext of it being used as a measure of settling private interests.

The N.D. Tiwari Committee in the 1980s picked apart all the various legislations governing environmental laws in India for their insufficiency and their inability to address all environment related problems. In the light of the Bhopal Gas tragedy the Environmental Protection Act, 1986 was enacted and was claimed to be the mother of all acts associated with environment. The proviso of the Act mandated that the Central Government would be authorized to take necessary measures in furtherance of fighting pollution of the environment which includes water, air, and also the inter relationship between humans and animals and devise appropriate machinery to the same effect. A remarkable approach taken by the Legislature was that under the afore-mentioned act, the system of locus standi was done away with and it enabled every citizen to approach the court provided he had given a notice of not less than 60 days.

* Faculty, R.D.Public School, Betul (M.P.) INDIA

The National Environment Tribunal Act, 1995 was passed mainly for the setting up of a National Environment Tribunal for the effective disposal of disputes arising from damages to persons and property, the environment and all such ancillary matters. The Act follows the principle of strict liability for the punishment of offenders. However the Act draws flak due to the observance of the strict liability principle which brings the burden of proof on the tort feasor. It is well known how difficult and cumbersome it is to get proof in cases of environment pollution. If an individual is filing a complaint for the pollution caused by an industry, it cannot be expected of him to provide ample proof for the same.

There is no dearth of laws governing the "Indian Environment" but there is dearth of the regulatory stick to implement the same. It has to be seen in the light of the complete bureaucratisation of the Ministry of Environment and Forests (MoEF) in the last two decades. Regulatory failure may occur at the time of passing the legislation when private interest groups and influence and power blocks mar the recommendations of the team of analysts whose suggestions are to form the bedrock of the law. It can also be a result of ex-post failure, an example of which is corruption.

Supreme Court's Say On Environmental Issues – The Supreme Court, in the case of Indian Council for Enviro-legal Action vs. Union of India [AIR 1996 SUPREME COURT 1446] laid down the polluter pays principle as "Once the activity carried on is hazardous or inherently dangerous, the person carrying on such activity is liable to make good the loss caused to any other person by his activity irrespective of the fact whether he took reasonable care while carrying on his activity".

The Polluter Pays Principle, a principle of international law, has been incorporated in the Indian Judicial system & its object is to make the polluter liable not only for the compensation to the victims but also for the cost of restoring of environmental degradation irrespective of the fact whether he is involved or not. The principle of strict liability incorporated in Sec.3 of the National Environmental Tribunal Act, 1995 says that if a person brings onto his land, anything that is likely to cause damage or mischief and , he is prima facie liable for the damage caused by it.

Hence, in M.C. Mehta vs. Union of India and Others [AIR 1987 SUPREME COURTR (1) 819] the Supreme Court established a new concept of 'absolute and non-delegable' liability for disasters arising from the storage or use of hazardous materials from their factories. Thus, the enterprise must ensure that no harm results to anyone irrespective of the fact that it was negligent or not. Justice Bhagwati, who developed the concept of Absolute liability to replace the rule in Rylands vs. Fletcher [UKHL 1 (1868) LR 3 HL 330] showed the judicial activism of the highest order by holding that strict liability is insufficient and that law has to grow in order to satisfy the fast changing society. The larger and more prosperous the enterprise, greater must be the amount of the compensation payable for the harm caused on account of an accident in the carrying on of the hazardous or inherently dangerous activity by the enterprise.

In the field of administration of enviro justice, the Constitutional courts have stood the tallest not only before the other two branches of our Constitution-the legislature and the executive-but also, before its other counterparts. However in light of the principles reviewed above it is suggested that the most appropriate panacea for environmental claims lie in tort law.

Tort Action For Environment Protection— A Conundrum Of Sufficiency - There has always been a remedy available against the ill-effects of pollution under common law. So, it is not surprising that most developed nations, despite having developed extensive environmental regulations, continue to allow recovery in tort for any harm that can result from industrial activity because in most cases the sole option for the toxic exposure victim is to seek compensation through civil court action. The Environment Statutes impose criminal liability on the wrong doer. But, Civil Law is better suited to meet the present needs of the country because unlike criminal law, 'intent', which paralyses the criminal justice delivery system, doesn't play a major role in it.

The majority of legal remedies available for victims of large Scale industrial pollution fall within the tort categories of trespass, nuisance, or Negligence and in recent times, strict liability and absolute liability. Even today the Indian courts still follow the English law of torts, and the ideological foundation based on justice, equity and good conscience has permitted to some extent innovation and development that are necessary to meet new challenges. An appropriate legal solution envisaged by those affected by environmental disasters would hold the wrongdoer accountable, provide compensation to the victims, and deter future hazards. Pecuniary liability is the heart and soul of a claim for damages under torts and hence it is necessary to look into the existing mandates that confer pecuniary liability on the tort feasor. Indian courts, in some landmark judgments have applied and explained various doctrines of law of torts that are prevalent in common law countries.

The criteria of cause in fact and foresee ability have been explained in many judgments. Impose pecuniary or tortuous liability on offenders. It may be argued that penal liability incurred by a human being makes him deserving for a bodily punishment thus restricting his advancements towards crime. Pecuniary liability ensures immediate payment of fine by the offender and is subservient to a more efficient way of deterring him from committing such wrongs. The efficacy of the tort law regime lies in the fact that it provides direct access to damages, where in, the victims are compensated by the polluter itself, without it passing through the hands of the government.

Conclusion - Despite existence of environmental policy, the constitutional mandate of environment protection, flurry of legislations and administrative infrastructure of implementation, the problem of environmental pollution still remains a great cause of concern in our country. The future

must be seen as a great challenge to be overcome by society as a whole, by evolving new means and mechanisms in tackling complex problems arising out of rapid Industrial advancement. The new means and mechanisms, as one proposed by us, will introduce the greatest possible transparency and accountability in the functioning of the Government and modes and measures of enforcing laws effectively in dealing with offences against environment which is the greatest wealth shared by all citizens.

References :–

1. Sinha S.B. and Bhandari M.C., Memorial Lecture- Environmental Justice in India, Supreme Court Cases (J), 7(8), (2002).
2. Vadivel V.S., Public Interest Litigation: A boon or bane cited from www. legalservicesindia.com, last visited at 2nd October, (2007).
3. Shastri S.C., Environmental Law in India, Eastern Book Company, Lucknow, 2 3 , 339, (2005).
4. Sinha S.B. and Bhandari M.C., 186th Law Commission Report on Proposal to Constitute Enviromental Courts cited from www. law commissionofindia.nic.in (2004).

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

हिन्दुओं के रीति रिवाज एवं उनके ऐतिहासिक संदर्भ

डॉ. हजारी लाल मौर्य*

प्रस्तावना - विश्व के छ: अन्य धर्मो-बौद्ध, जैन, सिख, फारसी, इस्लाम और ईसाई की तुलना में दो धर्म ही ऐसे है जो मनुष्य की विकास यात्रा के साथ विकसित हुए हैं। हिन्दू धर्म और यहूदी धर्मों के स्थापक कोई एक व्यक्ति नहीं है। इसलिए यह गर्व करने की बात है कि हमारे रीति-रिवाज अपने-अपने ऐतिहासिक सन्दर्भों के साथ जीवित है। अन्य छ: धर्मों के स्थापकों ने पोंगा पन्थ, अन्धविश्वास, रूढ़ि, आर्थिक अपव्यय गैर ताक्रिक आदि कहकर रीति-रिवाजों को नष्ट करने की कोशिश की है और अनेक रीति-रिवाजों को समाप्त करके मनुष्य को उसके ऐतिहासिक सन्दर्भों को काट दिया है। लेकिन रीति रिवाजों में ऐसा मरजीवड़ापन है कि कुछ रीति रिवाज किसी के प्रयासों से टूट जाते है तो भिन्न स्वरूप में कुछ भिन्न रीति रिवाज बन जाते हैं। यह मनुष्य का स्वभाव बन चुका है कि वह बिना रीति रिवाजों के जीवित ही नहीं रह सकता। समाजशास्त्र की भाषा में कहें तो रीति रिवाजों में 'संस्था' होने के गुण होते है। संस्था शब्द को शास्त्रीय व्याख्या में उलझने के बजाय इतना समझ कर ही काम चला लें कि संस्था नाम के प्रत्यय एक बार मानव समाज में बनने के बाद कभी नष्ट नहीं हुए। उन्हें नष्ट करने के प्रयास करना अपने सर से टक्कर मार कर पत्थर को तोड़ने जैसा है।

रीति रिवाज संस्था का विचार है सामाजिक स्वीकृति। सामाजिक स्वीकृति कई बार अमानवीय, उत्पीड़क और कठिनाई युक्त कार्यो को भी वैधता प्रदान करती है। यही सामाजिक स्वीकृति नैतिकता विरूद्ध और कानून विरूद्ध कार्यो को भी स्वीकृति दिला देती है। रीति रिवाज संस्था का आदर्श है उत्सव मनाना। आनन्द, सनसनी, रोमांच, साहस, अचम्भा प्रदर्शन और मनोरंजन के लिए अवसर जुटाना। रीति रिवाज इस आदर्श को पूर्णता में प्राप्त नहीं कर पाते। रीति रिवाज संस्था का विचलन यह है कि कुछ लोग रिवाजों के निर्वहन में शान दिखाने के लिए कर्जा लेकर खर्च करते है और व्यक्तित्वभ्रंश के शिकार हो जाते हैं। रेगरों में मृत्यु भोज, दहेज आदि ऐसे खर्च कर्ज लेकर भी करने में शान समझी जाती है।

रीति रिवाज या रूढ़ि साधारणतया किसी फैशन से प्रारम्भ होते हैं और दीर्घकाल में रिवाज बन जाते है। मैं यहाँ रीति रिवाजों के जो संदर्भ लिख रहा हूँ उनकी ऐतिहासिकता का दावा करना अवैज्ञानिक होगा। कौन जाने अतीत किस प्रकार परिघटित हुआ होगा और अब किस प्रकार कहा जा रहा है। रीति को मानते हुऐ यह प्रश्न मन में उभर ही आता है कि ये रिवाज किसने कब और किस विधि से लागू किये। हो सकता है इस प्रश्न के उत्तर में कुछ लोगों ने काल्पनिक कथा प्रस्तुत कर दी हो। लेकिन फिलहाल मुझे पंचों और विद्वानों ने जैसे सन्दर्भ बताये वैसे मैं लिख रहा हूँ। इसमें थोड़ा बहुत रंग मेरा है मूल स्केच पंचों ने ही बताया है। मैं इन्हें संक्षेप में ही लिख रहा हूँ।

1. विवाह- विवाह एक रिवाज के रूप में यद्धपि पूरी दुनिया में प्रचलित है लेकिन भारत में कहा जाता है कि शिव और पार्वती का विवाह ही सबसे पहला विवाह था। कहते है कि पार्वती ने सिर्फ एक पुरूष से फेरे लेने का (विवाह करने का, क्योंकि फेरे ही विवाह माने जाते हैं।) निर्णय किया था। परन्तु शिव तो अन्य पुरूषों (पुल्लिगों) को साथ लिए हुए था। इसलिए पार्वती ने जब जब जिद की तब तब शिव ने उन पुरूषों को अपने शरीर से ... पूर्णत: हटा नही लिया। कहते है कि भम के ऊपर बाँधी गई पिटारे का अर्थ रस्सी नाप का प्रतीक है। चन्द्रमा से दीपक के रूप में धाम पर रखा। इसलिए धाम पर दीपक जलाते है। कुछ लोग धाम से लटकाई जाने वाली सराईयों को पिटारे का रूप बताते है। पार्वती ने फिर मना किया कि मेरी शौत तेरे सिर में है तब जेगड़ में भर कर गंगा को धाम के पास रखा गया। भारत के साहित्यक ग्रन्थों में लिखा है कि विवाह की प्रथा शोतकेतु नामक राजा के प्रारम्भ की थी और एक पत्नी प्रथा दीर्घतमस नामक ऋषि ने।

2. गोत्र प्रथा- गोत्र प्रथा अर्थात गोत्र टालकर विवाह करने की प्रथा के संदर्भ नहीं मिले। यह प्रथा कब, किस प्रकार और किस राजा से प्रारम्भ हुई? मुगलकाल या कबीर से पूर्व के किसी साहित्य में गोत्र प्रथा का वर्णन नहीं है। उस समय ब्राह्मणों में आठ ऋषियों के नाम पर गोत्र थे परन्तु वे आपस में विवाह करते थे अत: एक उपजाति की तरह थे। रैगरों में उस समय गोत्र प्रथा नहीं थी।

3. सात फेरे- सात फेरों की प्रथा अब पूरे हिन्दू समाज में व्यापक रूप से मान्य है। परन्तु यह हमेशा ही नही थी। विवाह की प्रारम्भिक अवस्था में विवाह का गवाह किसी पेड़ को बनाया जाता था। फिर आर्यो के आने पर यज्ञ और अग्नि को साक्षी बनाया जाने लगा। बुद्ध धर्म आने पर बुद्ध प्रतिमा को साक्षी बनाया जाता था। जैनियों ने भी प्रतिमा को साक्षी बनाया जाता था। अब जैन, बौद्ध भी अग्नि को साक्षी बनाते हैं। सिख गुरूग्रन्थ को साक्षी बनाते है। आज अगर कुँवारे लड़के का विवाह विधवा स्त्री से करवाया जाता है तो पहले लड़के का किसी बड़बेर से विवाह करवा कर उसे काट देते है जिससे लड़का भी विदुर हो जाये और दोनों का नाता हो जाये। कुछ जातियों में साढे तीन फेरे बनाये जाते हैं। रैगरों में पूरे सात फेरे करवाये जाते हैं।

4. तोरण चटकाना- इस संदर्भ में एक कहानी प्राप्त हुई है। कहते हैं कि राजा परीक्षित अपनी पुत्री को खिला रहे थे। बच्ची ने अपने भोलेपन में पूछा कि मेरा विवाह किससे करोगें तो परीक्षित ने पेड़ पर बैठे चिड़े की तरफ इशारा करके कहा- इस चिड़े से। लड़की ने तीन बार पूछा। परीक्षित ने तीनों बार यहीं उत्तर दिया। इस पर चिड़ा पेड़ से उतर कर आया और कहा कि यह लड़की मेरी माँग है। आपने तीन बार वचन किया है अत: इसका विवाह मेरे

* व्याख्याता (हिन्दी) राजकीय लाल बहादुर शास्त्री महाविद्यालय, कोटपूतली, जिला जयपुर (राज.) भारत

साथ करों। परीक्षित वचन से टल नहीं सके लेकिन लड़की की कम उम्र का बहाना बना कर टाला कि लड़की के विवाह का समय आने पर याद दिलाया। अवधि बीतने पर परीक्षित ने सोचा कि चिड़ा तो भूल गया होगा उचित वर देखकर चुपके से विवाह कर देते हैं कि चाहे विवाह करके छोड़ दे लेकिन माँग छोड़ना कायराना हरकत है। आप सहयोग करो और परीक्षित को मजबूर करो। परिणामत: चील, गिद्ध, कौवों, उलूकों आदि सभी पक्षियों ने अपने-अपने तरीके से आक्रमण करके परीक्षित को लहुलुहान कर दिया। घबरा कर परीक्षित ने समझौता सभा आयोजित की। चिड़े ने अन्तिम बहस में तीन विकल्प रखे कि 1. परीक्षित थूक कर चाट जाये अर्थात वचन लोप जाये। या 2. लड़की का विवाह मुझ से करे। या 3. घराती बाहराती (बाराती) और दूल्हा मेरी टाँग के नीचे से निकल जायें। परीक्षित ने तीसरा प्रस्ताव मंजूर कर लिया। चिड़ा दरवाजे के एक कौने पर टाँग उठाकर बैठ गया। सारे घराती टाँग केनीचे से निकल गये लेकिन अपनी बारी आने पर दूल्हे ने तलवार से चिड़े का सिर काट दिया। इस पर सारे पक्षियों ने परीक्षित पर फिर हमला किया और यह माँग मनवा कर हटे कि भविष्य में हर विवाह में तोरण चटका कर चिड़े की शहादत को याद किया जाये। इसके बाद चिड़िया रोने लगी कि मेरा भरण पोषण और मान मनुहार कौन करेगा। इस पर परीक्षित ने चिड़िया को अपनी पुत्री मानकर वचन दिया कि भात, पेज, छूछक या अन्य किसी भी अवसर पर मेरी पुत्री का सम्मान करने से पूर्व तेरा सम्मान करूँगा। कहते है कि उसके बाद से ही तोरण चटकाने का रिवाज चला। तोरण में लकड़ी के पाँच पक्षी बनाये जाते है, उनमें बीच के चिडत्रे को तलवार से छूकर मारे जाने की लकीर पीटी जाती है। उसी के बाद भतई अपनी बहन से पूर्व चड़कली को ओढणी देकर सम्मानित करते है। भात के दिन एक चड़कली बना कर खाती भेजता है।

चड़कली उठाना- उपरोक्त।

ढूँढ पूजना- इसके ज्यादा संदर्भ नहीं मिले। कहते है होलिका की एक बहिन थी ढूँढा। उसी के किसी घटनाक्रम के बाद ढूँढ पूजने की प्रथा चली। साधारण रिवाज यह है हिक बुआ और मामा अपने भतीजे के लिए होली पर वस्त्र, कठुला, खील आदि लाती है और बच्चे को नहाकर पहनाती और आर्शीवाद देती है। दक्षिणी राजस्थान में यढूँढज्या खानेय का रिवाज है। बहिन के घर सन्तान होने के बाद चार पाँच भाई बहिन के घर जाकर बूरा-दही और अन्य खाद्यों की गोठ करके आते हैं। वहाँ बहन की नणद से विवाह करने या दापा लेकर विवाह करने का रिवाज है। माना जाता है कि यह गोठ बहिन पर से अपना अधिकार छोड़ देने का प्रतिदाय है।

टूँट्या करना- इस संदर्भ में एक पहेली प्राप्त हुई है जो इस प्रकार है- 'एक नारी नर जिसमें जीव नहीं, उसका होता व्याह जिसका भेद किसी को नहीं।' प्रसंग यों है कि परिवार में उत्पन्न होने वाले पुत्र की औंळनाळ घर में गाड़ी जाती है लेकिन पुत्री की औळनाळ रूड़ि में गाड़ी जाती है। बेटे के विवाह में बन्दौरा पूजने वह रूड़ी में जाता है अर्थात् वह अपनी बहिन की औळनाळ से क्षमा माँग कर आता है। जब वह ब्याह करने चला जाता है तो पीछे ढूंट्या किया जाता है। उसकी बहन दूल्हा बनती है और कोई भाभी दुलहन। सात फेरे होते हैं। कन्यादान उगाया जाता है। विवाह की रस्में होती हैं। क्योंकि घर में केवल महिलाएँ ही होती हैं अत: जबान के सारे बन्धन खुल जाते हैं। अश्लीलता को सीमित नहीं कियाजाता। कहते हैं यह घर में गड़ी हुई दूल्हे की औंळनाळ का विवाह है। यद्यपि वह नारी (नाड़ी) निर्जीव है लेकिन नर (पुत्र की होने से) है और टूटँया में उसी का विवाह होता है जिसका रहस्य किसी को (नाटक कर रहे पात्रों में से) भी नहीं है। हरियाणा में इसे यखोड़िया' कहते है।

रूड़ी पूजना-

1. उपरोक्त।
2. कुछ औरते जिनके बच्चे जीवित नहीं रहते वे खुशी का प्रदर्शन (कुवा पूज कर) करने के बजाय रूड़ी पूजती हैं।

बाड़ रोकना, काकड़े फेंकना, पीळा औढ़ाना और लाजा होम- दूल्हा जब विवाह करने निकलता है तो उसकी बहिन काकड़े (बिलौले) फेंकती है। दूल्हा जब दुल्हन के घर तोरण मारता है तो दुल्हन उसकी छाती में गोले (पत्थर कप प्रतीक, दुल्हन पर से उतारे गये उबटन के गोले) मारती है। दुलहन विदा होती है तो चूल्हे-चाकी के लात लगवाई जाती है। ससुराल में नणद वाट (रास्ता) रोक कर खड़ी हो जाती है और उसे घर में घुसने से रोक देती है। जब सन्तान होती है तो भाई पीळा ओढाने आते हैं। बहिन भाइयों से मिलकर रोती है। कुछ जातियों में लाजा होन की प्रथा है। फेरों के समय दुल्हन का भाई उसके आँदळे चावल की खील देता है जो वह दूल्हे के आँदळे में डाल देती है और दुल्हा उन खीलों को अग्नि में होम देता है। अनेक पंचों ने मुझे इन रिवाजों के सन्दर्भ में बताया है कि वे रिवाज उस समय चलाये गये जब भाइयों ने सगी बहिनों से विवाह करने से मना किया और बहिनों को मजबूर किया कि वे अन्यत्र विवाह करें। ऋग्वेद का यम यानी संवाद उस जमाने का गवाह है। पंचों ने बताया कि बहिन काँकडे (काँकरे) फेंक कर धिक्कारती है कि मेरे होते किसी अन्य को लेने क्यों जा रहा है। उधर दुल्हन भी गोले (पत्थर) मारती है कि तेरे (बहिन) नही थी क्या जो मुझे लेने आया है। दुल्हन विदा होती है तो पिता से अपना हिस्सा माँगती है कि मेरे यह घर बनाया,१ चूल्हा बनाया, चाकी बनाई मेरा हिस्सा दो। तो घर के हिस्से का प्रतीक तणी (माँडि को) खुलवाकर, चाकी चूल्हे पर लात लगवा (फोड़ देने का प्रतीक) कर नेग दे दिये जाते हैं। फेरों में सुई बहन के हाथो में लाजा (सील) देती है जो उन्हें . . . में डालती है वह भी अधिकार छोड़ देने का प्रतीक है। विवाह करके दूल्हा घर आता है तो दूल्हे की बहिन वाट (रास्ता) रोक लेती है। इसे बाड़रोकना कहते है। प्रतीक यह है हिक वह कहती है हिक मेरे होते हुए यह अन्य कयों लाया है। फिर जब औरत के सन्तानोत्पत्ति होती है तो भाई पोमचा (लड़की होने पर) या पीळा (लड़का होने पर) ओढाने आते है। पीळा ओढ़ कर बहिन जब भाइयों का आरता करती है और भाईयों से मिलती है तो सब कुशलताओं के होते हुए भी रोती है। प्रतीक यह कि वह कहती है कि मुझे उस घर में से क्यों निकाल दिया। ऐसा ही तब भी होता है जब उसकी सन्तानों के विवाह में भाई भत लेकर आते है। पाठकों का नैतिकताओं में रचा बसा मन इन सब बातों को पढ़ कर उत्तेजित हो रहा होगा। लेकिन पंचों ने ऐसा ही बताया है। दूसरे यह कि जँवाई को गीतों में गालियाँ देने का रिवाज तो अब भी बाकी है। गीतों में अपने पुत्रों को उकसाया जाता है कि समधी जी की लोटी (पता नहीं बेटी या पत्नी) मिल जाये तो उसकी ऐसी तैसी कर देना। एक गीत के बोल यों है- छोरा रे आवे ब्याही जी को लौटी ने डाट लीज्यो रे। छोरा रै नन्ही डंटै तो रस्सा मेर लीज्यो रे। छोरा रै प्यास लगे तो टूँटी खोल दीज्यो रै। जीजा को उसकी बहिन की गालियाँ देना रैगर समाज में कतई अनैतिक नहीं माना जाता।

भैरूँ पूजना- भैरूँ को किसी शुभ कार्य से पहले पधराया और पूजा जाता है। भैरूँ के जात जडूले चढ़ाये जाते है। जनता में और साहित्य में भैरूँ के ऐतिहासिक साहित्यिक या मिथकीय संदर्भ नहीं मिले। एक प्रसंग मिला है

हरीश्चन्द्र का। वह यो है कि हरीश्चन्द्र की सौ रानियों में से किसी के भी कोई सन्तान नहीं हुई तो हार थक कर उसने वरूणदेव (वास्तव में यक्ष प्रजाति। देन नहीं) से मनौती माँगी कि उसे पुत्र होगा तो पहले पुत्र की बलि उसे (वरूण को) दे देगा। इस मनौती के फलस्वरूप उसके रोहित हुआ। एक वर्ष बाद वरूण ने आकर अपनी बलि माँगी। हरीश्चन्द्र ने रोहित के दुग्धपान का बहाना करके भविष्य के लिए टाल दिया। चार पाँच वर्ष बाद वरूण फिर आया और अपनी बलि माँगी। हरीश्चनद्र ने दूसरी संतान न होने की आड़ लेकर फिर टाल दिया। इसके चार पाँच वर्ष बाद पुन: वरूण के आने का समय आया तो रोहित जंगल में भाग गया। वरूण आया और बलि माँगी। हरीश्चन्द्र ने रोहित के जंगल में भग जाने का हवाला देकर अपना दुखड़ा रोया तो वरूण ने हरीश्चन्द्र को जलोदर हो जाने का श्राप दिया। इस पर रोहित ने पिता के माध्यम से पूछवाया कि वरूण किसी अन्य की बलि लेकर भी संतुष्ट हो सकता है या नहीं? वरूण ने हाँ कर दी। रोहित ने जंगल में किसी लड़के की तलाश शुरू की। जंगल में भूखे मरते अजीगर्त नाम के ब्राह्मण ने अपना एक पुत्र 100 गायों के बदले में बेचना स्वीकार किया। बड़ा पुत्र शुनालांगूल (पिता को प्यारा होने से) अजीगर्त ने रोक लिया और छोटा पुत्र शुकापुच्छ माता (प्यारा होने से) ने रोक लिया। बीच के शुन:शेफ को रोहित लेकर राजधारी लौटा। यज्ञ की अग्नि जलाकर वरूण को आहूत कर लिया लेकिन होवा ने ब्राह्मण पुत्र की बलि चढ़ाने से मना कर दिया। हरीश्चन्द्र ने भी मना कर दिया तो शुन:शेफ के पिता अजीवगर्त को ही सौ गायें और देकर यज्ञ पशु (अर्थात शुन:शेफ) की बलि (अर्थात बध करने) देने के लिए तैयार किया। लेकिन हमी, क्रोधित हुआव विश्वामित्र (जो कि नया-नया ब्राह्मण बना था) क्रोधित हुआ आया और एक क्षत्रिय द्वाराव ब्राह्मण का वध किये जाने पर अतिकोप किया। वरूण को पीट कर भगा दिया। यज्ञ का विध्वंस कर दिया। हरिश्चन्द्र को देख लेने की पधमकी दी और शुकाशेक को खोलकर अपने घर ले गया। उसे अपना एक सौ एक वाँ पुत्र बनाया। (सौ पुत्र पहले से थे) बाद में हरीश्चन्द्र को नष्ट किया। उसकी पत्नी और बेटा बिकवा दिया। उधर वरूण भाग कर शिव की शरण में चला गया। शिव ने उसे अपना दूसरा पुत्र (पहला कुबेर था। जो लक्ष्मीपति था। समुद्र मंथन के बहाने लूट जाने पर वह शिव की शरण में पहले आ गया था। बाद में वही गणेश के रूप में पुजा गया।) मान लिया। सभवत: यहीं वरूण (वरूण-बरूण-वैरूँन-भैरूँ) भैरूँ बन गया है। वरूण अपने बल में समुद्र और धरती पर बड़ा शासक था। वह हर विवाहिता की पहली रात लेता था। पहला जात (पुत्र) लेता था (सम्भवत: सेना की आवश्यकता के लिए। जैसे सिख गुरूओं ने एक पुत्र माँगा था।) आप सम्भवत: उसी की प्रतीकात्मक लकीर पीटी जाती है। अधिकांश जातियों में पुत्र का जड़ूला भैरूँ के चढ़ाने का रिवाज है जो पुत्र की बलि देने का प्रतीक है। पुत्र का सिर काटने के बजाय उसका शिर, चोटी या केश काट कर भैरू के चढ़ाये जाते है। पुत्र को बचालिए जाने के बदले बकरे या भैंसे की बलिदी जाती है। यही जात देना कहा जाता है। जात का अर्थ है उत्पन्न अर्थात पुत्र। जन मान्यता यह है कि ऐसा न किया जाये तो पुत्र अक्सर बीमार रहता है और मृत्यु का भय भी है। लोक गीतों में भैरूँ की विध्वंसक शक्ति से भयभत रहते रहे जाने का प्रसंग है। यथा- भैरूँजी कड़ियाँ ताँई बधाख्या थारा केस, मतबाळो खेलै डूँगरा। भैरूँजी ऊभी माळण की (गूजरां की, कुम्हार की आदि) दे छै ओळम् म्हारी बाड़ी (रेगड़, औवा आदि) को कर दियो लास। मतवाळो खेलै डूँगरा। उस समय सम्भवत: लोग यह भी मानते थे कि विष्णु गर्भ में प्रवेश करके भ्रूण को स्थापित करता है तथा वज्रा (या भैरूँ) गर्भ में प्रवेश करके भ्रूण को गिरा देता है। अर्थात् ठीक वैसी ही पूजा है कि दुष्टग्रहों की पूजा पहले याद रखें कि लड़कियों का जात जड़ूला और मादा पशु की बलि नहीं दी जाती।

जात देना - उपरोक्त

जड़ूला चढ़ाना - उपरोक्त

बकरा चढ़ाना - उपरोक्त

तागड़ी-बादड़ी- सद्यजात बालक के गले में चमड़े की बादड़ी और कमर में चमड़े की तोगड़ी बाँधने का रिवाज कहते हैं कि रैदास के बाद चला। रैदास और ब्राह्मणों की ईर्ष्या में परीक्षा करके रैदास को सच्चा मानने के बाद तत्कालीन राजा ने यह प्रथा चलाई बताई।

बहू बच्चे- लड़कों की तागड़ी में दो मणियों के मध्य एक लम्बा सा मूँगा लटकाये जाने का रिवाज है। इन्हें रैगरों में बहु-बच्चे कहते है। वास्तव में यह लिंग पूजा का अवशेष है। सिन्धुघाटी सभ्यता के लोग लिंग पिूजा किया करते थे और अपने गले में (रांगेय राघव के अनुसार) लिंग धारण करते थे। दक्षिण भारत में लिंगापत सम्प्रदाय में आज भी एक डिबिया में बन्द करके लिंग को गले में धारण करने का रिवाज है। उसी समय से यह रिवाज आज तक (करीब 7000 साल से) चला आ रहा है। कुछ जातियों में इन्हें सकभहू बच्चे भी कहते हैं। इनका आकार भी लिंग और पोतों जैसा ही होता है।

सप्तपदी- कहते हैं हर दुलहन पर देवताओं का अधिकार होता है। उस अधिकार का अतिक्रमण कर दुल्हा यदि उनकी माँग को अपनी बनाता है तो उसके बदले में बलि देना आवश्यक है वरना दुल्हे का जीवन खतरे में रहेगा। अत: फेरों के समय गठजोड़ा किये हुए दुल्हा-दुल्हन अपने हाथ में चावलों की खील लेकर उत्तर दिशा की तरफ सात कदम चलते है और खीलों के आँदळे अर्पित करते हैं। अम्बेडकर कहते है कि ये तीन आँदळो वरूण कुबेर और इन्द्र को समर्पित किये जाते थे। इसके बाद पत्नी पर से देवताओं का अधिकार समाप्त कर दिया जाता है।

पगधोई- वधु पक्ष वालों द्वारा वर-वधु के पग धोये जाने की प्रथा के कोई संदर्भ नहीं मिले।

अर्धपति- रैगरों में देवर, नणदोई, जीजा और भाणजा अर्धपति माने जाते हैं। इनके साथ हंसी मजाक स्वीकृत रहते आये हैं। लोकगीतों में तो यह हद शारीरिक सम्बन्धों तक भी फैलती दीखती है। इन चारों रिश्तों के लिए लोकगीत गाये जाते रहे हैं। ये सम्बन्ध चउस समय जायज रहे होंगे जब राजा को युद्ध के लिए सैनिक चाहियें और जनसंख्या में वृद्धि हो नहीं पा रही। जनसंख्या में पुरूषों का अनुपात घटने के कारण युद्ध, महामारी और सन्यास लिया जाना रहा है। बुद्ध के बाद युवकों में सन्यास लेने का चलन बढ़ गया था। महामारियों में भी पुरूष ही ज्यादा मारे जाते हैं। अत: उन कठिन समयों में जनन के लिए इन रिश्तों में सहवास को जायज माना गया होगा।

कड़ी रोटी- पान फाड़ना- किसी घर में मृत्यु के बाद दाग देकर जब वापस आते है सभी लोक नीम का पत्ता मुँह में चबाते है। मृतक घर पर भोजन नहीं बनता और बस्ती में हर परिवार से एक व्यक्ति का भोजन मृतक के घर सोरणी के दिन तक दिया जात हैं इसे कड़ी रोटी कहते है। कड़ुवा स्वाद जहर और मृत्यु का प्रतीक है। सोरणी के बाद जब चावल बनाकर सब पाणी पूळी दे देते है तब श्याम को 5-10 बड़े लोग कुछ शराब, कुछ मांस की बडित्रया और पानी लेकर गाँव के फळसे में जाते है। वहाँ बैठकर सब एक नीम का

पत्ता लेकर फाड़कर फैंक देते है। हुक्के की नै निकाल कर पूरीपंक्ति में केवल एक बार हुक्का घुमाया जाता है। सब घूँट लेते है और आखिरी व्यक्ति चिळम उलट देता है। हुक्के का पानी निकाल देता है। फिर सब एक एक घूँट दारू की ओर एक-एक बड़ी मांस की खाकर उठ जाते हैं। कड़ी रोटी मृत्यु के शोक का विस्तार था तो पान फाड़ना शोक समाप्ति की घोषण का प्रतीक है। पान फाड़ने का रिवाज रैगरों के अलावा किसी अन्य जाति में मैंने नहीं देखा। अब चूंकि शराब, मांस, तम्बाकू निन्दनीय माने जाने लगे है तो भूँगड़े, पकौड़ी, शरबत, गुड़, राँग की छीडी, आदि से भी रिवाज का निर्वाहन कर लिया जाता है।

ससुराल जाते समय लड़कियों का रोना , मटकी भर कर पोळ निकालना और चून के लोथड़े में आगे से चून तोड़कर पीछे लगाना- किस्सा यों सुनाया गया कि रावण ने मरने से पूर्व राम से पूछा कि मेरे सब परिजन आपने मार दिये। अब कौन मुझे पानी पूळी देगा, कौन मेरी छाती पर चून का लोया रखेगा और कौन मुझे रायेगा? कहते है राम ने अभय दिया कि आज से हर लड़की ससुराल जाने से पहले तुझे रोयेगी। हर औरत कूवे पर पानी भर कर अपनी मटकी में से तीन चळू पानी पूळी के रूप में देगी और हर महिला भोजन बनाने से पूर्व चून के लोथड़े में से एक ळोया तोड़ कर तेरी छाती पर (लोथड़े के दूसरे सिरे पर) रखेगी। कहते हैं उसके बाद ही वे रिवाज पड़े।

ये संदर्भ मुझे पंचों से प्राप्त हुए है। मैं सहमत नही हूँ। आप भी विचार करके देखलें सहमति आवश्यक नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दू विवाह का संक्षिपत इतिहास, हरिदत्त वेदालंकार।
2. अम्बेडकर वाङ्मय भाग-8.
3. हरिश्चन्द्रोपारूयनिय
4. ऋग्वेदिक आर्य, राहुल सांस्कृत्यायन, 2003.

****

आचार्य शंकर एवं आचार्य रामानुज : सामान्य तुलना (विशेषतः उपनिषद् - भाष्यों के सन्दर्भ में)

डॉ. सरोज मेहता*

प्रस्तावना - आचार्य शंकर उद्‌भट दार्शनिक थे और उन्होंने अद्वैत वेदान्त की प्रतिष्ठा के लिये वेदान्तसूत्रों, गीता एवं उपनिषदों पर भाष्य लिखे। आचार्य रामानुज का दृष्टिकोण भी कुछ इसी प्रकार का था। उन्होंने अपने विशिष्टाद्वैत दर्शन के समर्थन को जुटाने के लिये शंकरवत् प्रस्थानत्रयी पर भाष्यों का प्रणयन किया। इन आचार्यो को युगानुकूल भावनाओं के अनुसार अपने अपने दर्शनों की स्थापना के लिये उपनिषदों के समर्थन का ध्यान रखना पड़ा। ऐसा करते समय ये दिग्गज आचार्य यह जनता को समझाने में लगे रहे कि उपनिषदों में आद्योपान्त एकतानता है, समरसता है, एकसूत्रता है। इन ग्रन्थों में कहीं भी परस्पर विरोधी मतों का प्रस्तवन नहीं है। किन्तु आश्चर्य यह है कि जहाँ आचार्य शंकर यह प्रतिपादित करने की चेष्टा करते हैं कि उपनिषदों में अद्वैत मत की निरन्तर स्थापना की गई है वहीं आचार्य रामानुज यह प्रतिपादित करते हैं कि इनमें विशिष्टाद्वैत की गंगा का प्रवाह प्रवाहित हो रहा है। वस्तुतः आचार्य रामानुज का प्रादुर्भाव आचार्य शंकर के मत का प्रध्वंस करने के लिये हुआ था।

आचार्य शंकर और आचार्य रामानुज की विचार-सरणी में रात - दिन का अन्तर है।[1] जहाँ आचार्य शंकर यह मानते हैं कि जगत् मिथ्या है (ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या) वही आचार्य रामानुज इसे सर्वथा परमार्थ सत्य मानते हैं। आचार्य शंकर के अनुसार पारमार्थिक रूप में सत्य तो केवल ब्रह्म ही है। आचार्य शंकर प्रतिपादित करते हैं कि यह ब्रह्म निर्गुण है।[2] किन्तु इसके विपरीत आचार्य रामानुज का प्रतिपादन है कि ब्रह्म निर्गुण कथमपि नहीं है। यह तो सगुण है। आचार्य रामानुज का ब्रह्म चित् और अचित् विशेषणों से विशिष्ट है।[3]

आचार्य शंकर मायावाद के पोषक है। उनके अनुसार ब्रह्म शुद्ध निर्विशिष्ट एवं केवल अद्वैत है।[4] नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभाव है एवं 'नेति नेति' है। किन्तु माया के कारण यह विशिष्ट रूप में दृष्टिगोचर होता है। माया ब्रह्म की अनादि शक्ति है। यह 'आवरण' एवं 'विक्षेप' इन दो विशेषताओं के कारण जगत् की मिथ्या प्रतीति कराती है। आचार्य शंकर के अनुसार माया[5] शक्ति से उपहित होने के कारण निर्गुण ब्रह्म ही सगुण बन जाता है। यही सगुण ब्रह्म ईश्वर कहलाता है। यह ईश्वर मायिक जगत् का सृष्टा एवं नियन्ता है। जगत् वस्तुतः इसकी लीला है।[6]

आचार्य शंकर का कथन है कि परमार्थ में जीव ब्रह्म ही है। जीवो ब्रह्मैव नापरः - यह ब्रह्म से भिन्न नहीं है। अविद्या के कारण इसकी भिन्न प्रतीति होती है। अविद्या के फलस्वरूप जीव में कर्तृत्व एवं भोक्तृत्व का अभिमान उत्पन्न होता है।

अविद्या - निवृत्ति होने पर जीव ब्रह्मभाव को प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार जीव और जगत् ब्रह्म का विवर्त है।

किन्तु आचार्य रामानुज शंकराचार्य की तरह ब्रह्म और ईश्वर इन दो की पृथक् पृथक् कल्पना नहीं करते।[7] उनके अनुसार समस्त प्रपद्धच सगुण ब्रह्म अर्थात् ईश्वर ही करता है। यह सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान् एवं आनन्दघन है।[8] शंकर के अनुसार ब्रह्म ज्ञानस्वरूप मात्र है। परन्तु रामानुज के अनुसार ज्ञान का ब्रह्म का प्रमुख विशेषण है। रामानुज कहते हैं कि उनका ब्रह्म अपहतपाप्मा है, विजर है, विमृत्यु है, विशोक है, अविजिघत्स है, सत्यकाम है एवं सत्यसंकल्प है।[9] आचार्य रामानुज का प्रतिपादन है कि चित् जीव और अचित् जगत् ब्रह्म के शरीर हैं। ब्रह्म शरीरी है और चित्तस्वरूप जीव तथा अचित् जगत् उसके शरीर हैं।[10] ब्रह्म कारणावस्थ कहलाता है और सृष्टिकाल में स्थूल रूप धारण करने के कारण स्थूल चित्-अचित्-विशिष्ट ब्रह्म कार्यावस्थ कहलाता है। इस प्रकार जीव और जगत् ब्रह्म की तरह ही सत्य हैं। ब्रह्म निर्विशिष्ट किसी अवस्था में नहीं रहता किन्तु हेय गुणों से शून्य होने के कारण ब्रह्म को निर्गुण कहा जाता है। आचार्य रामानुज की सगुण-निर्गुण-कल्पना आचार्य शंकर की अद्वैत कल्पना से भिन्न प्रकार की है। आचार्य रामानुज ने जिस सगुण ब्रह्म की कल्पना की है वह आचार्य शंकर का मायावी ईश्वर है।

आचार्य रामानुज के अनुसार प्रलयकाल में कारणावस्था में वर्तमान ब्रह्म में प्रकृति अव्यक्त रूप से विद्यमान रहती है। कारणावस्था सूक्ष्म चिदचिद्विशिष्ट ब्रह्म अपनी इच्छा से विचित्र शक्ति के योग से नामरूपात्मक जगत् एवं अनन्त जीवों की सृष्टि करता है।[11] जीव अपने गत-जीवन के पाप-पुण्य के आधार पर ही शरीर धारण करते हैं।[12]

आचार्य शंकर के अनुसार अविद्या के नाश हो जाने पर जीव ब्रह्म के साथ एकभाव को प्राप्त हो जाता है। मुक्त होने पर जीव की पृथक् कोई सत्ता नहीं रहती।[13]

किन्तु रामानुज के अनुसार जीव और ब्रह्म का ऐक्य सम्भव नहीं है।[14] मुक्त जीव में ब्रह्म के समान ही सर्वज्ञत्व तथा सत्यसंकल्पत्व आदि गुण तो आ जाते हैं किन्तु उसमें ब्रह्म के सर्वव्यापकत्व एवं कर्तव्य गुण नहीं हाते। जीव अणु है किन्तु ब्रह्म सर्वव्यापक है। रामानुज के अनुसार मुक्त जीव अनेक शरीरों में प्रवेश कर सकता है एवं ईश्वर के द्वारा सृष्ट पितृलोक आदि लोकों में ईश्वर की लीला का आनन्द ले सकता है।[15] किन्तु मुक्त जीव का जग्त की सृष्टि, स्थिति तथा लय रूप व्यापार में अधिकार नहीं होता।

निष्कर्ष - उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आचार्य शंकर और आचार्य रामानुज के विचारों में पग-पग पर विरोध दृष्टिगोचर होता है। दोनों ही

* व्याख्याता (संस्कृत) से.मु.मा.रा.कन्या महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राज.) भारत

उद्‌भट विद्वान्‌ हैं एवं दिग्गज हैं। दोनों ही प्रस्थानत्रयी पर भाष्य लिखते हैं। दोनों ही अपनी-अपनी दृष्टि से भाष्यों का प्रणयन करते हैं। दोनों ही अपने अपने समय के गणमान्य आचार्य रहे हैं। दोनों ही विद्वान्‌ एक सीमा तक उपनिषदों की व्याख्या यथार्थ रूप में करते हैं। आचार्य शंकर की दृष्टि अद्वैत मूलक रही है, उनके अनुकूल बीज उपनिषदों में प्राप्त होते हैं। उपनिषदों में अनेकानेक स्थानों पर ऐसे प्रसंग आये हैं जहाँ नानात्व का निषेध किया गया है। उधर आचार्य रामानुज के अनुकूल विचार भी उपनिषदों में सुलभ हैं। उपनिषद्‌ सृष्टि को सत्य रूप में अनेकत्र प्रतिपादित भी करते हैं।

इस प्रकार उपरोक्त आचार्यों ने अपने युग की मांग को दृष्टिगत रखते हुए ब्रह्म, जीव, जगत्‌ आदि पर चिन्तन करते हुए व्यवस्थित दर्शनों का प्रतिपादन किया। किन्तु यह उचित नहीं प्रतीत होता है कि यह आग्रह किया जाये कि उपनिषदों में केवल अद्वैत का ही प्रतिपादन है या केवल विशिष्टाद्वैत का ही प्रतिपादन है। निष्कर्षत: इनमें सभी के लिये समर्थन है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. राधाकृष्णन (आई.पी, वॉल्यूम 2. पृ. 720) आचार्य शंकर और रामानुज दोनों ही वेदान्त के महान्‌ विचारक हैं और इनमें से प्रत्येक के उत्कृष्ट गुण दूसरे के अवगुण हैं।
2. बृहदा. उप. शां.भा. 4.4.20; यस्मिन्‌ न कश्चिद्‌ विशेषोऽस्ति............... नाम वा रूपं वा कर्म वा भेदो वा जातिर्वा गुणो वा। तद्द्वारेण हि शब्द प्रवृत्ति-र्भवति। न चैषां कश्चिद्विशेषो ब्रह्मण्यस्ति .... वही 2.3.6,
3. .... अत्र सर्वमिदमिति शब्दो स्थूलावस्थचिदचिद्‌ विशिष्टब्रह्मपरो। सूक्ष्मचिदचिद्‌ विशिष्टब्रह्म पर .... रंग भा. 2.4.5
4. दिग्देशगुणगतिफलभेदशून्यं हि परमार्थसदद्वयं ब्रह्म मन्दबुद्धिनामसदिव प्रतिभाति .... छा. उप. शां.भा. 8.1.1
5. आचार्य शंकर माया को अनिर्वचनीय कहते हैं :-
   सन्नाप्यसन्नाप्युभयात्मिका नो
   भिन्नाप्यभिन्नाप्युभयात्मिका नो
   सांगाप्यनंगाप्युभयात्मिका नो
   महाद्भुतानिर्वचनीयरूपा।
   विवेकचूडामणि।
   किन्तु आचार्य रामानुज 'माया' को आश्चर्यवाची बताते हैं - '............. माया शब्द ह्याश्चर्यवाची'श्रीभाष्य 3.2.3; 'मायाभि: संकल्परूपज्ञानै: विचित्राश्चर्यकारित्वात्‌ ज्ञानरूपत्वाच्च ....' बृहदा. उप. रंगभा. 2.5.19
6. आचार्य शंकर के अनुसार जगत्‌ ईश्वर की लीला है :-
   'लोकवत्तु लीलाकैवल्यम्‌' ब्र.सू. 2.1.33.
   इस लीलातत्व का उन्होंने इस प्रकार वर्णन किया है:- 'ईश्वरस्यापि अनपेक्ष्य किञ्चित्‌ प्रयोजनानन्तरं स्वभावादेव केवलं लीलारूपा प्रवृत्तिर्भविष्यति।' ब्र.सू.शां.भा.
7. थीबो, सेक्रेड बुक्स आफ द ईस्ट, वोल्यूम 34, भूमिका
8. दोनों आचार्यों द्वारा 'तत्त्वमसि' आदि महावाक्यों का अर्थ भी भिन्न रूप में ग्रहण किया गया है। आचार्य शंकर 'तत्‌' शब्द को परोक्षरूप परब्रह्मवाचक एवम्‌ 'त्वम्‌' को अपरोक्षरूप जीववाचक के रूप में स्वीकार करते हैं। इस अर्थ से दोनों के ऐक्य का प्रतिपादन किया गया है। साथ ही उनके अनुसार 'अयमात्मा ब्रह्म' आदि पद भी आत्मा और ब्रह्म की एकरूपता के ही वाचक हैं, किन्तु इसके विपरीत आचार्य रामानुज का मत है कि 'तत्त्वमसि' में 'तत्‌' पद जगत्‌- कारणरूप सर्वज्ञ ब्रह्म का बोधक है तथा 'त्वम्‌' 'अयम्‌' आदि पद ब्रह्म के भाग के रूप में जीव के अभिप्राय को ही प्रकट करते हैं।
   (1) छा. उप. शां.भा. 6.8.7 (2) श्रीभाष्य 2.3.45
9. श्रीभाष्य 3.2.11
10. श्रीभाष्य 2.3.45
11. गीताभाष्य, 13.2
12. आचार्य शंकर कर्मविरोधी है। उनके अनुसार पुण्यकर्म भी मोक्ष में सहायक नहीं। पुण्यकर्म से प्राप्त लोक क्षीण हो ही जाता है- 'अमुत्राग्निहोत्रादिपुण्यजितो लोक: पराधीनोपभोग: क्षीयत एवेति.................. 'छा. उप. शां.भा. 8.1.6
13. '...................तस्मात्‌ अविद्यानिवृत्तिमात्रे मोक्षव्यवहार इति...................' बृहदा. उप. शां.भा. 4.4.16.
14. ब्रह्मणो भाव: न तु स्वरूपैक्यम्‌- श्रीभाष्य, 1.1.1, बृहदारण्यक उप. रंगभाष्य, 4.4.6
15. श्रीभाष्य 4.4.13, 15 और भी बृहदा. उप. रंगभा. 4.4.8
   किन्तु आचार्य शंकर के अनुसार मुक्ति का अर्थ है - जीव का ब्रह्ममें लीन हो जाना उसकी पृथक्‌ सत्ता नहीं रहती।
   बृहदा. उप. शां.भा. 3.2.11, ब्र.सू.शां.भा. 4.3.7,

****

मध्यकालीन साहित्य का नीतिकाव्य

डॉ. अनुपमा सक्सेना*

प्रस्तावना – यथोचित व्यवहार का नाम नीति है। रीतिकालीन साहित्य में नीतिविषयक उद्भावनाएं जितनी मौलिक, अनूदित संग्रहात्मक तथा फुटकल काव्य रूप में दृष्टिगोचर होती है, उतनी किसी अन्य काल में नहीं। रीतिकालीन नीतिकाव्य साधारण जीवन से सम्बन्ध होने के कारण व्यापक स्तर का है। प्रस्तोत्य शोध में प्रारम्भ में जिन सप्तविधा, वैयक्तिक पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीति, इतर प्राणिविषयक और मिश्रित नीति का उल्लेख किया है, उन सभी पर प्राय: स्वतंत्र ग्रन्थों की रचना हुई है। वैयक्तिक नीति के अर्न्तगत स्वास्थ्य, आयु आदि शारीरिक मानसिक और आत्मिक नीति का विशद वर्णन इन कवियों ने किया है।

जीवन की सार्थकता मात्र यशोपार्जन, परोपकार वचनपालकता आदि सत्कर्मों में ही नहीं, अपितु सुन्दर रूप में भी है। यौवन कालीन शारीरिक सौन्दर्य प्रशंसनीय है। इसी कारण शरीर को स्वस्थ व दीर्घायु कर सुख-भोग की प्रेरणा दी है और साथ ही सत्चरित्र व सद्गुणों के निर्माण की नैतिक शिक्षा प्रदान की है। 'निर्बल के बल राम इस आदर्श नीति को त्यागकर स्वयं बलवान बनकर कार्य सिद्धि हेतु प्रेरित कर यथार्थ जीवन रूप नीति का उपदेश दिया है। वृन्द, बुधजन, गिरधर कविराय बिहारी सभी ने मानव-जीवन में विद्या, वाणी, शक्ति, सामर्थ्य आदि के महत्त्व का पूर्णत: उद्घाटन किया है। वाणी के विषय में अनादिकाल से जहाँ 'साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप कहा हैं, वहाँ रीतिकाल में नीतिकवियों ने इसे सीमा में न बांधकर नवीन उद्भावना मुखर करते हुए कहा है कि परोपकारार्थ यदि असत्यभाषण करना पड़े तो अत्युत्तम है, और आटे में नमक की भान्ति सत्य में झूठ का समावेश हो सकता है। प्रेमविषयक नीति में भी इन नीतिकवियों ने पारम्परिक भ्रमर, गुलाब, कमल आदि पुरातन उपमानों के स्थान पर लोकव्यवहार से जुड़े सामान्य पदार्थों को उपमान रूप में ग्रहण किया है। इस प्रकार से वैयक्तिक नीति के अन्तर्गत शारीरिक पवित्रता, दीर्घायु स्वास्थ्य व आत्मरक्षा पर अधिक बल देकर सांसारिक सुख भोगने की प्रेरणा प्रदान की है।

पारिवारिक सदस्यों का परस्पर सामंजस्य अत्यावश्यक है, इसलिए रीतिकालीन कृतियों में प्राय: सभी विद्धानों ने पारिवारिक नीति पर विचार व्यक्त किए हैं। वृन्द, बुधजन आदि ने संयुक्त परिवार की महता और परिवारजनों के परस्पर आदर्श सम्बन्धों का भावपूर्ण शैली में उद्घाटन किया है। रीतिकाल से पूर्ववर्ती साहित्य में जहाँ माता-पिता को पूज्य, उनकी आज्ञा को परम पवित्र वचन बहन भाई के पारस्परिक प्रेम और पत्नी को जीवन संगिनी रूप में चित्रित किया है, वहीं रीतिकालीन साहित्य में पुत्र, पत्नी आदि सम्बन्धों को स्वार्थ भाव से प्रेरित कहकर सांसारिक जीवन मार्ग में बाधक बताया है। फिर पारिवारिक कर्त्तव्यों के यत्किंचित निर्वाह की प्रेरणा भी इन्होंने दी है।

इसके अतिरिक्त इसमें पुत्री हत्या की निन्दा इन कवियों की आधुनिक समय में 'कन्या भ्रूण हत्या' को सकने में समर्थ भावना को उद्घाटित करती है। अति लाड़-प्यार से संतान का बिगड़ जाना, अन्य कुल से संबंध भानजे से नित्य सतर्कता, पति-पत्नी के परस्पर कर्त्तव्य वर्णन, वृद्धावस्था में पत्नी की मृत्यु, पुत्र व बहु की अधीनता का दु:ख एवं कष्टप्रद गृहस्थ जीवन की अपेक्षा मृगचर्म को धारण करने की श्रेष्ठता आदि नैतिक कथनों का वर्णन भी इन कवियों ने किया है।

रीतिकाल में नीतिकवियों ने परिवार से सम्बन्धित इन्हीं सूक्ष्म व सामान्य बातों के प्रति प्रत्येक गृहस्थी, यथा पाठकादि का ध्यान आकृष्ट कर संबंधों के प्रति सतर्क रहने की शिक्षा दी है, अन्यथा यह सुन्दर मानव जीवन नरकमय होते हुए देर नहीं लगती है। पारिवारिक जीवन के प्रति इन कवियों की दृष्टि मिश्रित व 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से युक्त रही है। साहित्य समाज का दर्पण है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी कहा है कि 'प्रत्येक देश का साहित्य वहां की जनता की संचित चित्तवृत्तियों का प्रतिबिम्ब होता है'- इस आधार पर रीतिकालीन तत्कालीन समाज की झलक वहां के काव्यों में दिखाई देती है। रीतिकाल का साहित्य दरबारी वातावरण में पोषित रहा है। कविगण राजदरबारों में राजाज्ञानुसार काव्यरचना करते थे। इन कवियों में कुकवि और सुकवि दोनों थे। कुकवियों की उद्दीपक व फूहड़ रचनाएं सुकवियों को खटकती थी, सुकवियों के निर्वाह का एक मात्र साधन राजदरबार में रहते हुए कविता पाठ ही था। मदान्ध राजाओं द्वारा कदाचित् कुकवि रचना को राजसभा में समादृत कर लिया जाता था। इससे सुकवि की उपेक्षा होती थी। सुकवि मात्र 'कीर्ति के बिरवा' होते हैं, अत: उनके आन्तरिक कुण्ठित भावों का प्रतिफलन काव्यरूप में होता था और सिद्ध करने की कोशिश की जाती थी कि श्रेष्ठ कवि के बिना राज सभा में कोई आभा नहीं है।

इन कवियों ने अनेक अन्योक्तियों द्वारा स्वामीसेवक सम्बन्धों का उद्घाटन किया है। सेवकों को स्वामी भक्ति की सुन्दर शिक्षा दी है। दुष्ट व साधुपुरुषों की विशद चर्चा रीतिकालीन नीति कवियों ने की है। प्रारम्भिक कवियों ने दुष्ट की क्षमा का प्रावधान कर इनसे दूर रहने को कहा है लेकिन रीतिकाल में तो विपत्तिग्रस्त दुष्ट की रक्षा का भी निषेध कर उसे ताड़ित करने की शिक्षा दी है। सच्चे साधुओं का आश्रय व पाखण्डियों से दूरी का आदेश दिया गया है और मूर्खों की सभा में विद्वान द्वारा मौन धारण को सर्वश्रेष्ठ सिद्ध किया है। सामाजिक नीति में ही रीतिकाल में गुरू महिमा विषय पर स्वतंत्र ग्रन्थों की रचना हुई है। जगन्नाथ कृत 'गुरू महिमा' में 'गुरू मूरती' को कर है ध्याना, गुरु चरित्र नित्ता पठै सुजाना कहकर

* व्याख्याता (हिन्दी) राज कला महाविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

निकृष्टतम कोटि के गुरू को भी भगवान सदृश वन्दनीय बताया है और गुरू द्वारा भी पात्रानुसार विद्या दान की प्रेरणा इन कवियों ने दी है।

समाज में स्त्री को इन कवियों ने मात्र भोग्या बताया है। स्त्रियों के विषय में गिरधर कविराय आदि की दृष्टि अध्यात्म मार्ग में विघ्न रूप थी। स्त्री को निंद्य माना गया था। यहां इनके विचार सन्त कवियों से प्रभावित हैं साथ ही संस्कृत कवियों ने 'कन्यारत्नं दुष्कुलादपि' कहकर सुरूप व गुणवती कन्या को कहीं से भी लेने का समर्थन किया है। वहीं बुधजन आदि रीतिकालीन नीतिकवियों ने वर्जित कुल की युवती से विवाह निषेध बताया है। इस प्रकार सामाजिक नीति में इन कवियों ने कुकवि-सुकवि, स्वामी सेवक, गुरू-शिष्य, दुष्ट - साधु, स्त्री, वर्णव्यवस्था, स्वाधीनता, पराधीनता आदि सभी विषयों पर व्यापक दृष्टि डाली है और सामान्य जन का ध्यान आकृष्ट कर आदर्श समाज की कल्पना व्यक्त की है।

आर्थिक नीति में अर्थ के महत्त्व की इन कवियों ने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। वैदिककालीन काव्य में धन की उपादेयता की अभिव्यक्ति हुई है साथ ही पापार्जित धन को न अपनाने की उदात्त भावना भी परिलक्षित होती है। अर्थ प्राप्ति के अनुचित उपायों का निषेध व अर्थ प्राप्ति के पावन मार्गों का उल्लेख इन्होंने किया है। धनोपलब्धि मुख्य रूप से कृषि, वाणिज्य, और कला कौशल से प्राप्त होती है। 'कृषि' के विषय में घाघ की लोकोक्तियां अत्युत्तम हैं। आर्थिक नीति में दान न देने के दुष्परिणाम, याचक निन्दा, व्यक्ति की नीयत और धनाढ्य होते हुए भी स्व सुख सुविधाओं हेतु व्यय न करने वाले तथा शेष धन का दान न देने वाले कृपण व्यक्ति के प्रति व्यंग्योक्तियों का प्रयोग किया है। मूलभूत आवश्यकताओं हेतु धन की अनिवार्यता इन नीति कवियों ने सिद्ध की है।

राजनीति के विषय में इन कवियों ने पूर्णत: परम्परा का निर्वाह किया है। दरबारी व विलासिला पूर्ण वातावरण के कारण राजाज्ञा इन कवियों हेतु शिरोधर्य थी और 'राजा करे सो न्याव' उक्ति का अनुसरण इन कवियों ने किया है। तेजस्वी व गुणी राजा सम्माननीय तथा अत्याचारी राजा को सिंहासनच्युत करने की आंशिक प्रेरणा इन्होंने दी है। राजदरबार में रहने के कारण दरबार की प्रत्येक गतिविधियों से ये परिचित थे। सेवकों में यथायोग्य कार्यों का विभाजन, आदर्श राजा की पहचान है और राजदरबारों में व्याप्त पिशुनता आदि का सुन्दर वर्णन इन नीति कवियों ने किया है।

महाकवि घाघ और भड्री मध्यकाल के ऐसे कवि थे, जिन्होंने नीतिकथन के अतिरिक्त विज्ञान के क्षेत्र में भी कविताएँ की है। स्वानुभवों के सार रूप में की गई इनकी व मौसम विज्ञान के क्षेत्र में शत-प्रतिशत सटीक भविष्यवाणियाँ थी। आज के में मौसम विभाग द्वारा जो अनुमान किए जाते थे, वे इन कवियों ने नक्षत्रों व ग्रहों की गति की गणना के आधार पर उनके प्रभावों को परख कर भारतीय कृषक जीवन के हित चिन्तन में वर्षा व कृषि संबंधी धारणाएँ बहुत पहले इंगित कर दी थी। कृषि-संबंधी सूक्ष्म बातों व बदलते हुए मौसम का अद्वितीय ज्ञान इन्हें था। ग्रामीण पृष्ठभूमि में कृषक वर्ग आज भी 'गेहूँ बाँहै धान बिदाँहै' आदि अनेक कहावतों को कण्ठस्थ किए हुए हैं। इनके द्वारा की गई कहावतें अद्यतन प्रासंगिक व उपयोगी हैं, इसलिए उनको मध्यकाल का कृषि व मौसम वैज्ञानिक कहा जाए तो कोई अत्युक्ति न होगी।

रीतिकालीन नीतिकवियों में कुछ जैन कवि भी थे जिन्होंने अपनी कृतियों में प्रसंगवश जीव दया, मांसभक्षण आखेटादि का निषेध किया हैं। इन्हीं कवियों का प्रभाव अन्य कवियों पर भी पड़ा और इतर प्राणिविषयक नीति में इन कवियों द्वारा गांजा, अफीम, चरस, पोस्त, सुरा, भांग आदि मादक पदार्थों के दोषों का वर्णन किया गया है। इनके द्वारा कथित वर्षों पूर्व के ये वचन कलियुग में जब युवा पीढ़ी पथभ्रष्ट हो रही है तो आज भी अपनी प्रासंगिकता रखते हैं, इनकी दूरदृष्टि थी। वृन्द, रहीम, और बुधजन कवि ने इन विषयों पर विचार व्यक्त किए हैं और सामान्य जन को सचेत किया है। बुधजन कवि ने स्व सदृश ही अवान्तर प्राणियों को मानने की सलाह देकर उन्हें प्रताड़ित करना निषेध कहा है। मिश्रित नीति में इन कवियों ने देश, काल, कर्म, भाग्य, संसार, जन्म, मृत्यु, धर्म, ज्योतिष, शकुन-अपशकुन, लोक-परलोक सभी विषयों पर चर्चा की है। अवसरानुकूलता और समय का महत्व इन्होंने सिद्ध किया है। 'होनी होत बलवान' कहकर भाग्य की प्रबलता पर सूक्ष्म दृष्टि डाली है। परम्परा से प्राप्त भाग्यवाद को इन कवियों ने कर्मों के अधीन स्वीकार किया है। सांसारिक सुख भोग की अप्रतिम शिक्षा इन्होंने कदम-कदम पर दी है।

यथोचित व्यवहार की शिक्षा इनका परम ध्येय व मुख्य विषय था और व्यवहारिकता की अधिकता इस काल की प्रमुख विशेषता है। इन नीति कवियों ने मलाई का फल भी हो जाता है, निर्बल के पास उत्तम गुण विपत्तिकारक होता है। बलवान निर्बल का सहज शत्रु है। लोकापवाद का डर सत्य और उचित है। सरल व कुटिल का तथा दुष्ट है। मुर्ख व्यक्ति, सज्जन व दुर्जन में भेद नहीं कर पाता है। जैसे तैसे स्वार्थ सिद्ध होना, व साधु का मिलाप नहीं होता। बुरे व्यक्ति भी, कभी हितकारी व मृदुभाषण कर ही देते। किसी कार्य का हेतु न बनना, ऊपर उठना दुष्कर व अवनति का सहज ही हो जाना, तेजस्वी व्यक्ति का आदर व निस्तेज का अनादर स्वाभाविक है, आदि सभी सामान्य व लोक व्यावहारिक सूक्ष्म विषयों का बहुलता से वर्णन किया है। सामान्य जन अनायास ही इनसे प्रेरणा लेकर स्वकार्य सिद्ध कर लेता है।

सप्तविधा नीतियों का वर्णन इन कवियों ने प्रमुख रूप से हास्य, वीर और शान्त रस तथ प्रसाद व माधुये गुण में प्रस्तुत किया है। दीनदयाल गिरि, रघुराम, वृन्द, देवीदास आदि ने ब्रजभाषा और बांकीदास कृपाराम आदि ने राजस्थानी तथा लक्ष्मीवल्लभ, धर्मसिंह आदि अनेक जैन कवियों ने राजस्थानी व ब्रजभाषा दोनों का प्रयोग किया है। नीति विषयक रचनाएँ अधिकतर मुक्तक रूप में उपलब्ध हैं। इन कवियों ने तथ्यपरक उपदेशात्मक संबोधनात्मक और व्यंग्योक्तिपरक शैली का प्रयोग किया चौपाई, सोरठा, कवित्ता, सवैया, छप्पय, घनाक्षरी और कुंडलिया छन्दों का प्रयोग तथा अनुप्रास, अन्योक्ति, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, निदर्शना, दृष्टान्त और अर्थाऽन्तरन्यास अलंकारों में अपने भावों को सामान्य जन तक प्रेषित किया है।

वर्ण्य-विषय, रस, गुण, भाषा, शैली, छन्द, अलंकार और भावादि सभी दृष्टियों से रीतिकालीन नीति काव्य पूर्ववर्ती काल के काव्य की अपेक्षा श्रेष्ठ सिद्ध होता है साथ ही रचनाओं की संख्या, परिमाण, विषय-वैविध्य और उपादेयता कीदृष्टि से भी संस्कृत नीतिकाव्य से कम नहींहै। मौलिकता के कारण इनकी उपयोगिता स्वयं सिद्ध है। काव्यत्व की दृष्टि से जो आलोचक विद्वाननीतिकाव्य को अवरकोटि का मानते हैं तो प्रस्तोत्य शोध से यह तो स्पष्ट हो ही गया है कि साधारण जन की हृदयकणिकाओं को झंकृत करने के कारण नीति काव्य का उद्देश्य ऐसे आचार-व्यवहार की सरस रीति से शिक्षा देना है। जिससे मनुष्य का ऐहिक जीवन सुखमय, समृद्ध और गौरवपूर्ण बन सकें, उन बातों का उपदेश देना नहीं है जिनसे

उसे ब्रह्म, स्वर्ग या मोक्ष की प्राप्ति हो। ये कवि समकालीन परिस्थितियों के अनुसार मनुष्य को जीवन के 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' रूप का दर्शन करवाकर उत्ताम शैली से जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करते है अत: जीवन के इतना निकट रहने वाला काव्य अवर कोटि का नहीं बल्कि उत्तम कोटि का है इसलिए ये नीति कवि जिनका उद्देश्य भावोन्मेष नहीं अपितु पाठकों के मन पर नैतिक अर्थों को अंकित करना था, सफल सिद्ध हुए हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

The Use Of Literary Devices In Popular Modern Fiction

Dr. Panchali Sharma*

Abstract - This paper examines the use of literary devices in English literature, with a focus on their impact on storytelling. The introduction explores the concept of literary devices and their significance in enhancing the literary experience. The subsequent sections discuss commonly used literary devices in popular modern fiction, including foreshadowing, symbolism, narrative structure, metaphor and imagery, characterization, irony and satire, and dialogue. The analysis highlights how these devices contribute to storytelling by engaging readers, conveying emotions and themes, developing characters, crafting memorable scenes, creating narrative depth, stimulating critical thinking, and fostering connection and resonance. Furthermore, a comparative analysis of literary devices across different genres demonstrates how their usage varies to achieve specific narrative goals and evoke particular reader responses. It also emphasizes the importance of understanding and interpreting literary devices to gain a deeper appreciation for the craft of writing and to enhance the reader's engagement and understanding of the text.
Keywords- Storytelling, Literary Devices, Foreshadowing, Metaphor, Imagery.

Introduction - Literary devices are the tools that writers employ in English literature to elevate their works and engage readers on multiple levels. These devices, ranging from figures of speech to narrative techniques, play a vital role in shaping the storytelling and conveying deeper meanings. They add layers of complexity, evoke emotions, and enhance the overall impact of the literary work. English literature is replete with examples of these devices, as writers employ them to create vivid imagery, develop characters, explore themes, and captivate readers with their artistry. By harnessing the power of literary devices, authors infuse their works with depth and intricacy, inviting readers on a transformative journey through the realms of imagination and understanding.

Literary devices are tools that writers use to enhance their storytelling and create a more engaging and impactful experience for readers. While popular modern fiction spans various genres and styles, it often employs a wide range of literary devices to captivate audiences and convey meaning.

Literary Devices Used In English Literature: Literary devices are tools and techniques used by writers in English literature to enhance their storytelling, convey a deeper meaning, and create a more engaging reading experience. These devices include various figures of speech, narrative techniques, and stylistic choices that add richness, depth, and impact to literary works. Some commonly used literary devices in English literature are:

1. Foreshadowing: Authors often use foreshadowing to build suspense and create anticipation in the readers. By dropping subtle hints and clues about future events, authors engage readers in predicting and speculating about the story's direction. Analyzing foreshadowing can unveil the author's mastery in building tension and preparing readers for upcoming plot twists or revelations.
2. Symbolism: Symbols are powerful tools used to convey deeper meaning and evoke emotions. Analyzing symbols in modern fiction enables us to uncover the underlying themes and motifs explored by the author. Symbols may represent abstract concepts, societal issues, or character traits. Examining their recurring presence and significance helps unravel the layers of meaning within the narrative.
3. Narrative Structure: The structure of a story, including its timeline, point of view, and use of flashbacks or multiple perspectives, greatly impact the reading experience. Analyzing the narrative structure in modern fiction allows us to understand how authors manipulate time and perspective to engage readers and shape their understanding of the plot, characters, and themes.
4. Metaphor and Imagery: Metaphors and vivid imagery are powerful tools for creating a sensory experience and evoking emotions. Analyzing metaphors and imagery in modern fiction unveils the author's skill in crafting compelling descriptions and engaging readers' senses. It also sheds light on the thematic resonances and deeper meanings conveyed through these evocative language choices.
5. Characterization: Characters are the heart of any story, and their development is crucial to engaging readers. Analyzing characterization in modern fiction involves examining how authors use dialogue, actions, and descriptions to bring characters to life. Exploring their motivations, conflicts, and growth provides insights into the themes and messages conveyed by the author.
6. Irony and Satire: Irony and satire are devices used to critique societal norms, challenge conventions, and provoke

*Lecturer (English) Govt. P.G College, Sawai Madhopur (Raj.) INDIA

thought. Analyzing the use of irony and satire in modern fiction helps us uncover the author's commentary on social, political, or cultural issues. It reveals the author's ability to use humor and wit to make powerful statements about the world we live in.

7. Dialogue: Dialogue plays a crucial role in character development, plot progression, and conveying information. Analyzing dialogue in modern fiction allows us to understand how authors use it to reveal character traits, build relationships, and advance the narrative. Examining the subtext, tone, and language choices in dialogue sheds light on the author's intention and enhances our understanding of the story.

The Impact Of Literary Devices On Storytelling: Literary devices have a profound impact on storytelling, as they shape the narrative, engage readers, and convey deeper layers of meaning. Here are some key ways in which literary devices impact storytelling:

1. Enhancing Engagement: Literary devices captivate readers by creating intrigue, suspense, and emotional resonance. Devices like foreshadowing, suspenseful pacing, and dramatic irony keep readers invested in the story, eager to uncover what happens next. By heightening engagement, literary devices ensure that readers remain engrossed and connected throughout the narrative.

2. Conveying Emotions and Themes: Literary devices enable writers to evoke emotions and convey complex themes. Through vivid imagery, metaphors, and symbols, writers can create sensory experiences and tap into readers' emotions. They can explore universal themes, such as love, loss, or identity, and provoke thought and introspection in readers.

3. Developing Characters: Literary devices play a crucial role in character development. Dialogue, internal monologues, and characterization techniques allow writers to create well-rounded, multi-dimensional characters. By utilizing devices like a stream of consciousness or unreliable narration, authors provide insights into characters' thoughts, motivations, and conflicts, fostering a deeper understanding and connection with the reader.

4. Crafting Memorable Scenes: Literary devices enable writers to craft memorable and impactful scenes. Through descriptive language, sensory details, and pacing techniques, writers can transport readers into vivid and immersive settings. Devices like flashback or nonlinear storytelling allow for the effective exploration of significant moments, adding depth and resonance to the narrative.

5. Creating Narrative Depth: Literary devices add layers of complexity and depth to the storytelling. Techniques such as intertextuality, allusion, or subverted tropes enrich the narrative by referencing other works, challenging conventions, or providing unexpected twists. They invite readers to engage in intertextual analysis, uncover hidden meanings, and appreciate the intricacies of the narrative.

6. Stimulating Critical Thinking: Literary devices encourage readers to think critically and actively engage with the story. Devices like irony, satire, or unreliable narrators prompt readers to question assumptions, challenge societal norms, and interpret the narrative from different perspectives. This engagement stimulates intellectual curiosity and fosters a deeper appreciation for the complexities of the story.

7. Fostering Connection and Resonance: Through the use of literary devices, writers create a connection between the reader and the narrative. The emotional impact of well-crafted characters, evocative language, and thought-provoking themes resonates with readers, leaving a lasting impression. This connection enhances the reader's overall experience and makes the story more memorable and impactful.

In summary, literary devices have a significant impact on storytelling by enhancing engagement, conveying emotions and themes, developing characters, crafting memorable scenes, creating narrative depth, stimulating critical thinking, and fostering connection and resonance. By skillfully employing these devices, writers can create compelling narratives that resonate deeply with readers and leave a lasting impression.

Comparative Analysis Of Literary Devices Used Across Different Genres: Comparative analysis of literary devices used across different genres allows us to explore how these devices are employed to achieve different narrative goals and evoke specific reader responses. While the use of literary devices can vary within each genre, here are some comparative examples:

1. Symbolism:

- Fantasy Genre: In fantasy literature, symbolism is often used to represent abstract concepts or mythical elements. For example, the One Ring in J.R.R. Tolkien's "The Lord of the Rings" symbolizes power and corruption.
- Mystery Genre: In mystery novels, symbolism can be used to foreshadow events or represent hidden clues. For instance, a recurring symbol like a black cat may symbolize bad luck or serve as a clue in solving a crime.

2. Foreshadowing:

- Science Fiction Genre: Foreshadowing in science fiction can hint at future technological advancements or impending dangers. It prepares readers for the speculative elements and builds tension. For example, early mentions of an alien invasion in H.G. Wells' "War of the Worlds" foreshadow the impending conflict.
- Romance Genre: Foreshadowing in romance novels can create anticipation and hint at the eventual union of the central couple. Clues about their shared interests, chance encounters, or lingering glances foreshadow their romantic connection.

3. Point of View:

- Historical Fiction Genre: Historical fiction often utilizes multiple perspectives to provide a well-rounded view of historical events. Through different narrators, readers gain diverse insights into the era being depicted. An example is the use of multiple narrators in Ken Follett's "The Pillars of

the Earth," which offers varied perspectives on medieval England.

- Horror Genre: The use of a first-person point of view in horror can intensify the fear and suspense experienced by readers. It places them directly in the shoes of the protagonist, heightening their sense of vulnerability and immersion in the terrifying events.

4. Irony:

- Satire Genre: Irony is a central device in satirical works. It is employed to critique and ridicule societal norms, behaviors, or institutions. Satirical novels like "Catch-22" by Joseph Heller use irony to expose the absurdity of bureaucracy and war.
- Drama Genre: In dramatic works, irony can be used to create tension and dramatic effect. Dramatic irony, where the audience knows more than the characters, adds suspense and emotional impact. William Shakespeare's plays, such as "Romeo and Juliet," employ dramatic irony to heighten the tragic consequences of the characters' actions.

5. Stream of Consciousness:

- Literary Fiction Genre: Stream of consciousness is often employed in literary fiction to delve into characters' inner thoughts and emotions. It allows for a deeper exploration of their psyche and introspection. Virginia Woolf's "Mrs. Dalloway" is a notable example, using a stream of consciousness to delve into the characters' inner lives and perspectives.
- Psychological Thriller Genre: Stream of consciousness can be used in psychological thrillers to create a sense of unease and disorientation. It immerses readers in the mind of an unreliable narrator, blurring the line between reality and illusion, as seen in Gillian Flynn's "Gone Girl."

By comparing the use of literary devices across different genres, we can appreciate how these devices contribute to the specific goals and themes of each genre. While some devices may be commonly used across genres, their application and effects can vary, highlighting the versatility and impact of literary devices in storytelling.

Discussion And Interpretation: Literary devices are not only tools used by authors to enhance their storytelling, but they also invite readers to engage with the text on a deeper level and interpret its meaning. Here are some points to consider in discussing and interpreting literary devices:

1. Context: Consider the broader context of the literary device's usage. Examine the historical, cultural, or social backdrop against which the work was written. How does the device reflect or challenge the prevailing ideologies or norms of that time? Understanding the context can provide insights into the author's intentions and the significance of the device within the narrative.
2. Function: Analyze the purpose and effect of the literary device. How does it contribute to the overall narrative structure, character development, or thematic exploration? Consider how the device engages the reader, elicits emotional responses, or shapes the reader's understanding of the story. Discuss the device's function in conveying the author's message or achieving specific literary goals.
3. Symbolism and Metaphor: Symbols and metaphors often require interpretation. Look for recurring symbols, their associations, and the emotions or ideas they evoke. Consider the possible interpretations and their relevance to the narrative's themes or character arcs. Discuss how the symbolism deepens the story's meaning or enhances the reader's understanding.
4. Subversion and Intertextuality: Literary devices can be used to subvert expectations or reference other texts. Analyze instances where established tropes or conventions are challenged or turned on their heads. Explore the intertextual references to other works and discuss how they enrich the reader's experience and contribute to the story's meaning.
5. Narrative Voice and Point of View: Pay attention to the narrative voice and point of view employed. How does the choice of perspective shape the reader's understanding of the story? Discuss the reliability or unreliability of the narrator and the implications it has on the interpretation of events. Consider the author's purpose in adopting a specific narrative voice or point of view.
6. Theme and Message: Examine how literary devices contribute to the exploration of themes and the communication of the author's message. How do they deepen the thematic resonance or highlight the central ideas of the work? Analyze how the devices work in tandem with the plot, characters, and setting to convey the author's intended themes and messages.
7. Reader Response: Discuss the personal and subjective interpretations of literary devices. How did the devices impact your reading experience? Consider the emotions, thoughts, and reflections evoked by the use of specific devices. Engage in discussions about the varying interpretations among readers and how different perspectives can shed light on the multiple layers of meaning within the text.

Conclusion: In conclusion, literary devices play a vital role in shaping and enhancing storytelling in various genres. They captivate readers, convey a deeper meaning, and evoke emotional responses. Through the use of devices such as symbolism, foreshadowing, point of view, irony, and more, authors create engaging narratives that resonate with readers on multiple levels.The impact of literary devices extends beyond mere entertainment; they allow authors to explore complex themes, challenge conventions, and provide social commentary. Through careful analysis and interpretation of these devices, readers can gain a deeper understanding of the author's intentions, the significance of symbols and metaphors, and the underlying messages within the narrative.Literary devices also invite readers to actively engage with the text, fostering critical thinking and personal reflection. They create opportunities for discussion and interpretation, where different perspectives enrich the understanding and appreciation of the story.As readers, by recognizing and analyzing the use of literary devices in

our favorite works of literature, we can develop a greater appreciation for the craftsmanship of the authors and the profound impact these devices have on storytelling. It allows us to unravel the layers of meaning, engage with the characters and themes, and ultimately form a more profound connection with the text.

In summary, the use of literary devices in storytelling is a powerful and transformative aspect of literature. It elevates the reading experience, stimulates intellectual curiosity, and leaves a lasting impact on readers. By exploring and interpreting these devices, we gain a deeper understanding of the text and enrich our own literary experiences.

References:-

1. Abrams, M. H., & Harpham, G. G. (2014). A Glossary of Literary Terms. Cengage Learning.
2. Lodge, D. (2002). The Art of Fiction. Vintage.
3. Culler, J. (2011). Literary Theory: A Very Short Introduction. Oxford University Press.
4. Hutcheon, L. (2012). A Theory of Adaptation. Routledge.
5. Brooks, P. (2008). Reading for the Plot: Design and Intention in Narrative. Harvard University Press.
6. Hollander, J. (2014). Rhyme's Reason: A Guide to English Verse. Yale University Press.
7. Lodge, D. (1992). The Art of Fiction: Illustrated from Classic and Modern Texts. Penguin.
8. Eco, U. (1984). The Role of the Reader: Explorations in the Semiotics of Texts. Indiana University Press.
9. Ross, C. (2002). The Cambridge Introduction to Narrative. Cambridge University Press.
10. Barry, P. (2009). Beginning Theory: An Introduction to Literary and Cultural Theory. Manchester University Press.
11. Abrams, M. H. (1999). A Glossary of Literary Terms. Cengage Learning.
12. Lodge, D. (2011). The Practice of Writing. Vintage.
13. Carter, R. (2004). Language and Creativity: The Art of Common Talk. Routledge.
14. Sturrock, J. (2006). Structuralism and Since: From Lévi-Strauss to Derrida. Oxford University Press.
15. Hutcheon, L. (2013). A Poetics of Postmodernism: History, Theory, Fiction. Routledge.
16. Cohn, D. L. (2000). The Distinction of Fiction. JHU Press.
17. Rimmon-Kenan, S. (2002). Narrative Fiction: Contemporary Poetics. Routledge.

****

जयशंकर प्रसाद के उपन्यासों की विकासधारा

डॉ. कविता आचार्य*

प्रस्तावना – कवि नाटककार उपन्यासकार तथा कहानी लेखक जयशंकर प्रसाद हमारे साहित्य के महान् स्वतंत्र चेता साहित्यकार है। वे मानव व मानव जीवन को विकृतियों विडम्बनाओं से मुक्त कर मानवात्मा की अमरता का जयघोष करते हैं। प्रसाद का दर्शन भारतीय इतिहास प्रवाह में अर्जित, गंवाई गई तथा फिर से प्राप्त नैतिक तथा सौन्दर्यात्मक, व्यवहारिक तथा रहस्यात्मक अंतर्दृष्टियों का समन्वय करने का साहसिक प्रयास है। उनकी कवि कल्पना सदैव उनके निजी जीवन अनुभवों तथा अन्वीक्षणों से संयमित तथा संरचित रही। यही कारण है कि उनका कथा साहित्य तथा नाट्य साहित्य अपने सारे रूमानी तथा रहस्यात्मक वातावरण के बावजूद गहरे मनौवैज्ञानिक यथार्थ की नींव पर खड़ा है। इतना ही नहीं उनका रहस्यवाद भी मानसिक संतुलन के रूप में व्यक्त हुआ।

प्रसाद ने अपने जीवन के अन्तिम दशक में उपन्यासों की रचना की। उनका पहला उपन्यास 'कंकाल' सन् 1929 में प्रकाशित हुआ, दूसरा उपन्यास 'तितली' सन् 1934 में प्रकाश में आया जो शिल्प की दृष्टि से अधिक संवरा हुआ था। फिर उन्होंने अपने तीसरे व अन्तिम उपन्यास 'इरावती' 1938 को लिखना प्रारम्भ किया, किन्तु प्रसाद जी की असामयिक मृत्यु ने उसे पूर्ण नहीं होने दिया और यह कृति अपरिसमाप्त ही रह गई। फिर भी उपन्यास साहित्य को प्रसाद जी की देन विचारणीय है क्योंकि उन्होनें अपने उपन्यासों को नवीन जीवन से संबंध कर उनके माध्यम से समयकालीन सामाजिक समस्याओं को हल करने की चेष्टा की है। प्रसाद जी एक नए साहित्य युग के निर्माता ही नहीं है एक नई विचार शैली और नव्य दर्शन के उद्भावक भी है। उनमें अपने योग की प्रगतिशीलता प्रचुर मात्रा में पाई जाती है, यही नहीं वे एक बड़ी हद तक भविष्य द्रष्टा व आगम के विधायक भी है। वे कोरी भावुकता में डूबने वाले व्यक्ति नहीं थे वे एक सजग द्रष्टा, लक्ष्य और उपाय निरूपक साहित्यकार भी थे।

यही कारण है कि उन्होनें अपने युग की प्रगतिशील शक्तियों को पहचाना तथा कलाकार की हैसियत से उदात्त और शक्तिशाली भावनाओं तथा जीवन्त चरित्रों का निर्माण कर अपने उपन्यास साहित्य की सृष्टि की है। प्रसाद के कृतित्व पर दृष्टि डाले तो हम पाते है कि प्रसाद के नाटक ऐतिहासिक, काव्य आदर्शवादी व उपन्यास यर्थावादी है। इन तीनों प्रवृत्तियों का सघन रूप उनके तीनों उपन्यासों में मिलता है। इस दृष्टि से 'कंकाल' यथार्थवादी 'तितली' आदर्शवादी व अपूर्ण 'इरावती' ऐतिहासिक है।

प्रसाद जी का प्रथम उपन्यास 'कंकाल' यथार्थवादी उपन्यास है। उपन्यास का प्रारम्भ प्रयाग में गंगा किनारे एक आश्रम से होता है। आश्रम के प्रतिष्ठित युवा संन्यासी 'निरंजन देव' और यात्री सेठ श्री चन्द की पत्नी किशोरी के मध्य सोया बाल्यकाल का आकर्षण परिस्थितियों के संयोग से एकाएक जग उठता है। संतानहीन किशोरी पुत्र लालसा लिए निरंजन से मिलती है और अपने स्त्रीत्व को पूर्णता प्रदान करने हेतु पुत्ररत्न की प्राप्ति की कामना प्रकट करती है। निरंजन के साथ वह अंततः इस कामना को पूर्ण करने में सफल होती है। निरंजन अपने विराग भाव को त्यागकर किशोरी के प्रति राग में आबद्ध होकर उसका हाथ पकड़ कर कहता है– 'हाँ किशोरी मैं ही रंजन हूँ तुमको पाने के लिए ही आज तक तपस्या करता रहा, यह संचित तत्तव तुम्हारें चरणों में निछावर है।'

निरंजन से किशोरी को पुत्ररत्न के रूप में विजय की प्राप्ति होती है, श्री चन्द अपने व्यवसाय की दुनियाँ में लौट जाता है। आगे चलकर किशोरी का पुत्र विजय युवा होता है और अपनी विचित्र पारिवारिक तथा सामाजिक स्थिति से अवगत होकर व्यक्त रूप से कुछ कहता तो नहीं, किन्तु आचरण में स्वंय विचित्र सा विद्रोही हो जाता है। वह पिता व विवाह नाम की संस्था का तिरस्कार करता है, 'घर' का नहीं हो पाता। अपने आवेगात्मक विचित्र आचरण पर माँ की झिड़की पाने पर उत्तर में व्यंगत करता है। ' मैं अपने कर्मो पर हँसता हूँ, लज्जित नहीं होता। जिन्हें लज्जा बड़ी प्रिय हो वे उसे अपने कामों में खोजे।'

वह परिस्थितिवश कभी युवती 'घंटी' के समीप आता है कभी 'गाला' के वह इनमें से न किसी को अपना बना पाता है न स्वंय किसी का बन पाता है। उपन्यास के अंत में काशी में गंगा किनारे समाज–सुधारकों का बड़ा उत्सव है और वहीं एक और निराश्रम विजय का कंकाल जैसा शव पड़ा है। यह शव वस्तुतः समाज के कंकाल का प्रतीक हैं, जो उत्थान के बड़े–बड़े दावे करता है, पर जिनका खोखलापन छिपा नहीं है। वास्तव में समाज का ऐसा जीवित कंकाल अब तक साहित्य में उपलब्ध नहीं था। इस उपन्यास का प्रत्येक पात्र जारज, वर्ण संकर एवं पाप की संतान है तथा प्रत्येक सुधारक विपथगामी है। मंगल का हिन्दू आदर्शवाद, विजय का दार्शनिक जड़वाद, स्वामी जी का बगुला भगतपन, किशोरी की पाखण्डमयी धार्मिकता व निर्लज्ज विलासिता, घंटी का चरित्र सभी धर्म के आवरण में पलने वाले व्यभिचार, प्रेम क्रीड़ा, अवैध संतानों, छल कपट आदि को प्रमुखता से चित्रित करते हैं।

प्रसाद के उपन्यास 'कंकाल' में जो समाज–दर्शन प्रस्फुटित हुआ है उसी का एक सूत्र कामायनी महाकाव्य से जुड़ता है तभी तो उन्होंने अपने मनु से कहलवाया है :–

'शापित सा मैं जीवन का यह
ले कंकाल भटकता हूँ।

* सह आचार्य, राजकीय कन्या महाविद्यालय, भरतपुर (राज.) भारत

उसी खोखले पन में जैसे,
कुछ खोजता अटकता हूँ।

न केवल कामायानी का नायक 'मनु' 'इडा' (बुद्धिवाद) से आकर्षित हो अपने हृदय पक्ष 'श्रद्धा' की उपेक्षा कर अपने जीवन को विडम्बना पूर्ण बना लेता है वरन् आज का मनुष्य भी भौतिक चकाचौंध से आकर्षित हो अपने हृदय पक्ष की उपेक्षा करता है और बुद्धिवाद से ग्रसित होकर अत्यधिक सुख की चाह में निरन्तर दु:ख ही भोगता रहता है। परिणामत: उसका आत्मा छटपटाने लगता है, कुण्ठा, घुटन, वेदना, नैराश्य से पीड़ित हो शापित व विडम्बनापूर्ण जीवन को भारस्वरूप मान कर ढोता रहता है। प्रसाद जी ने अपने उपन्यासों में इसी समसामायिक यथार्थ को अभिव्यक्त किया है।

कंकाल में प्रसाद ने अपने समसामयिक समाज के खोखलेपन की ओर संकेत करते हुए उसमें व्याप्त जिन्दा-मुर्दनी का उद्धाटन किया है। किसी समाज की नैतिक-अध्यात्मिक सडांध का इससे निमर्म चित्र और क्या होगा। कोई उन्नीस स्त्री-पुरूष पात्रों में सिर्फ एक अराजकतावादी विजय और दूसरी अनाथ 'घन्टी' दो ही पात्र उजाले के बिन्दुओं की तरह इस कीच भरे अंधेरे में टिमटिमाते दिखते हैं।

कंकाल में चित्रित समाज आधुनिक युग का अंध भौतिकतावादी समाज है जिसे एक पाखंडपूर्ण धर्म की मान्यता प्राप्त है। 'देव निरंजन' और 'बाथम' सरीखे लोग खुद ही अपनी अनियंत्रित वासनाओं और पैसे के लालच के शिकार हैं। बाहर से वे एक धार्मिक संस्था के अधिकारी के रूप में जुड़े है पर भीतर से वे जिस कीचड़ में धंसे हैं, उसी में दूसरों को भी घसीटते चल रहे हैं। इस समाज को सचमुच ऐसा ही धर्म चाहिए जो उनकी हर कुत्सित लालसा पूरी कर सकें और दूसरों के प्रति दायित्व-बोध मात्र को अप्रांसगिक बना दें। श्री चंद, किशोरी और रंजन के पिता सरीखे चरित्र ऐसे ही धर्म का आश्रय ढूँढते नजर आते है। आत्मा को भ्रष्टा करने वाला यही प्रलोभन न केवल लतिका और सरला को बल्कि घंटी और विजय जैसे पात्रों को भी गिरिजे की गिरफ्त में लाता है। चाहे हिन्दुत्व हो, चाहे ईसाइयत - दोनों यहाँ इस उपन्यास में मनुष्य के भीतर की निम्नतम वृत्तियों को भड़काने और सहलाने के साधन है। कामभावना भी यहाँ पूंजी की अनुचरी है। मानवीय सम्बन्धों को विकृत करने में सबसे बड़ी भूमिका पूँजी की माया ही अदा करती है। यह इस उपन्यास से जाहिर होता है । सम्पत्ति भोग की यह अंधी लालसा और वारिस के जरिये भी उसे भोगते रहने की तृष्णा ही दाम्पत्य की धुरी और नियमामक बन बैठी है। व्यापारी श्री चंद ज्यादा पैसा बटोरने के लिए अमृतसर वापस चला जाता है और अपनी यकिशोरी' को मठाधीश 'देवनिरंजन' को सौंप जाता है 'विजय', यकिशोरी और निरंजन' की ही अवैध संतान है। 'तारा' (यमुना) भी इसी 'देव निरंजन' और 'नामा' नाम की विधवा के अवैध संयोग का फल है। दूसरी ओर 'मंगल' एक आर्य समाजी है, जो अपने बौद्धिक आदर्शवाद की तरंग में 'तारा' के प्रेम में पड़ जाता है जो कि परिस्थितियों वश वैश्या बनने को मजबूर हुई है। इतने में ही मंगल को पता चलता है कि उसकी माँ भी कोई सती-सावित्री नहीं थी। बस उसका आदर्शवादी प्रेम इस झटके से बिखर जाता है और वह अपनी प्रेमिका का गर्भवती अनाश्रित छोड़कर चलता बनता है। 'तारा' आत्मघात करने की कोशिश में बचा ली जाती है और उसको आश्रय मिलता है संयोगवश 'किशोरी' के घर में जहाँ 'किशोरी' के घर में जहाँ 'किशोरी' का लड़का 'विजय' उससे प्रेम करने लगता है किन्तु 'तारा' उससे सिर्फ बहनांपा मानती है। यही पर 'विजय' के मित्र रूप में 'तारा' जो 'यमुना' बन चुकी है की मुलाकात 'मंगल' से होती है।

एक दिन जब मंगल 'तारा' को पहचान लेता है तब 'यमुना' बन चुकी 'तारा' उत्तर देते हुए कहती है कि - 'तारा तो कबकी मर गई'.

कंकाल उपन्यास में हम देखते है कि स्त्री-पुरूष यथार्थ के धरातल पर एक और महाकाव्योचित औदात्य खो चुके हैं वहीं दूसरी और मानवोचित सौष्ठव और सहज प्रवेग भी खोकर जीवन के बाहर की वस्तु बन रहे थे। इनमें सुधार शुद्ध श्रृंगार की प्रतिष्ठा से जो पुरूषत्व और नारीत्व का नित्यधर्म है, के द्वारा ही संभव था। उपन्यासकार अनेकानेक कथाओं और पात्रों के माध्यम से नारी-पुरूष के पारस्परिक संबंधों के परिस्थितिजन्य अनमेलपन और वस्तुस्थिति को नकारकर आदर्श का मुखौटा धारण किऐ रहने के दुराग्रह को भली-भाँति 'मंगल' और 'तारा' (यमुना) की कथा, 'मंगल' और 'गाला', 'विजय' और 'घंटी', 'विजय' और 'गाला' की कथा को इसी दृष्टि से आयोजित करता है। इस प्रकार स्त्री-पुरूष के बनते बिगड़ते सम्बन्धों की कथा जहाँ उपन्यास का मूल विषय है वहीं उपन्यासकार तथाकथित धर्म की रूढ़िवादिता और खोखलेपन पर से पर्दा पग-पग पर उठाता चलता है। धर्म के नाम पर शोषण प्रबल है और इसका सबसे अधिक तावान निरीह नारी को भुगतना पड़ता है। स्त्री के शोषण का जैसा कडुआ और बेधड़क बखान इस उपन्यास में मिलता है, शायद ही किसी और उपन्यास में मिलता हो। उपन्यासकार अनुभव करता है कि आज के जटिल संसार में सृष्टि के आधारभूत तत्त्व स्त्रीतत्त्व के मध्य का प्राकृतिक संतुलन भंग हो चुका है। इसी से न केवल परिवार के भीतर, बल्कि बाहर सामाजिक जीवन के हर स्तर पर घोर अराजकता छा गई है।

उपन्यास में वर्णित घटनाओं की पृष्ठभूमि, प्रयाग, हरिद्वार, मथुरा, वृन्दावन और बनारस जैसे तीर्थस्थल है, यह आकस्मिक नहीं। पात्रों का जो संसार है उसमें एक ओर तो गृहस्थ, सन्यासी, पुरोहित और तीर्थयात्रियों को शोषण करने वाले पण्डे है, और दूसरी और बदमाश, डाकू और वैश्याएँ। उपन्यास के दर्पण में न केवल सनातनी हिन्दू धर्म बल्कि सुधारवादी आर्यसमाज और मिशनरी ईसाईयों की दुनियां भी प्रतिबिम्बित है। इसके अलावा अमीरों की विलासितापूर्ण जिन्दगी और निर्धनों की बदहाली का जबर्दस्त 'कन्स्ट्रास्ट' भी यहां उभारा गया है। कंकाल की सरंचना में वर्णित घटनाएँ चरित्रों के भीतर से फूटती हैं और ये चरित्र मानों मनौवैज्ञानिक शक्तियाँ हैं, मानवमन की वृत्तियाँ हैं जो अपना संतुलन खोकर सर्वथा और उन्मत्ता हो गइ हैं जिनकी रचना समाज के व्यंगोद्धाटक साक्षात्कार के निमित्ता से हुई है।

उपन्यास के अंतर्गत यंत्रणा की गहराई, सेवा, आत्म-बलिदान की जिस क्षमता का तेज स्त्रीपात 'तारा' (यमुना) के व्यक्तित्व में झलकाया गया है, वह शायद लेखक की दृष्टि में इस बीमार और कोढ़ग्रस्त समाज के लिए आशय कि उद्धार की संभावना का एक पहलू है।

वही अनाथ लड़की घंटी का चरित्र विलक्षण बन पड़ा है। उसके पास खोने को कुछ नहीं है। उसके आचरण में निधड़क खुलापन है, जिन्दगी के थपेड़े उसकी आत्मा में निहित निर्मल स्वच्छन्दता, स्फूर्तिमत्ता और दुर्दम्य आनन्द वृत्ति को सुखा नहीं पाते। वह विजय से कहती है- 'तुम उदार होने का सुख पाना चाहते हो इसलिए उस प्रेम का प्रतिदान विवाह के रूप में मुझे देना चाहते हो जो मैं बिना किसी प्रत्याशा के मुक्त भाव से तुम्हें देती हूँ। ठीक है। मुझे आश्रय और सुरक्षा की चिन्ता कभी पीड़ित नहीं करती । मैं जो कहती हूँ उसे कर गुजरती हूँ और वहीं कहती हूँ जो सचमुच महसूस करती हूँ। तुम मुझे प्यार करते हो तो मैं हँसती हूँ। तुम मुझे ठुकरा दोगे तो मैं रो लूँगी।

स्त्री को हँसने और रोने दोनों की जरूरत पड़ती है क्योंकि वह उसके प्यार करने और प्यार किए जाने की बुनियादी जरूरत से जुड़ी है। मैं सब कुछ को स्वीकार करती हूँ।'

यह शायद उस जीवनदायी संभावना का दूसरा पहलू है जो व्यक्त करता है कि किस तरह रूढ़ियों से रूग्ण समाज में एक स्वतंत्र मानव व्यक्ति ही मूल्यों का स्त्रोत हो जाता है।

यह उपन्यास सारी सामाजिक संस्थाओं और रूढ़ियों की खिल्ली उड़ाता है क्योंकि वे संस्थाएँ और वे रूढ़ियाँ समाज और सामाजिक व्यक्ति के एक सम्पूर्ण आदर्श की जीती जागती विडम्बना के रूप में प्रस्तुत हैं। भारतीय संस्कृति के मुताबिक स्त्री-पुरूष संबंध पूरे समाज की आधारशिला हैं। पति-पत्नी संबंध की इस इकाई का पूर्ण अवमूल्यन और दुर्गति इस उपन्यास में दिखाए गए हैं। यहाँ विवाह ने अपनी सारी पवित्रता और अर्थ खो दिया है।

प्रेम नहीं हैं दाम्पत्य बंधन की प्रेरणा है। सब जगह पैसा घुसा गया हैं। यह एक ऐसी विकृत दुनिया है जो खुदगर्ज वासनाओं और बेगैरत पाखंड से संचालित होती है। इस भ्रष्टाचार का सबसे बड़ा पोषक और सहयोगी स्वंय धर्म है। उपन्यास की सीधी चोट इस पाखंडी धर्मधुरीणता और उसके ठेकेदारों पर हैं। उपन्यास में वर्णित 'तारा' और यविजय' अवैध संतानें हैं और 'तारा' का पुत्र भी लेखक ने दिखाया है। किस तरह इस समाज में विवाह अपनी सार्थकता खोकर महज एक हृदयहीन व्यापारिक समझौता सा बन गया है। 'विजय' इस नैतिक मृत्यु के विरूद्ध मुक्त प्रेम का दावा पेश करता है।

व्यक्ति स्वातंत्र्य की खोज के इस नवोपलब्ध मूल्य के सामाजिक अर्थ का अनुसंधान तो उपन्यास में है ही, उसके राजनीतिक अर्थो का चिन्तन भी है। 'भारत संघ' के रूप में। यह 'भारत संघ' सामाजिक अलगाव के हर रूप की चाहे वह वर्ग, जाति, धर्म, धार्मिक कट्टरता हो, चाहे वैशिष्ट्यवाद और परम्परागत आभिजात्यवाद हो- घोर भर्त्सना करता है।

उपन्यास का भारत संघ समाज के सर्वोत्कृष्ट को उसकी प्रगतिशील शक्तियों को उनके माध्यम से समाज में जो बची-खुची अन्तरात्मा की विवेक चेतना है, उसको एकाग्र और फलीभूत करने का स्वप्न देखता है। इस प्रकार 'कंकाल' उपन्यास का संदेश है - मनुष्य में आत्मनिरीक्षण होना चाहिए। समाज का कठोर अनुशासन मनुष्य के सहज विकास में बाधक है। वर्तमान हिन्दू जाति और उसकी उपजातियाँ इसके परिणाम है। हम लोग भूल जाते हैं कि मनुष्य स्वभाव दुर्बलताओं से भरा है। केवल निषेधात्मक प्रवृत्तियों से काम नहीं चलता। स्वाभाविक इच्छाओं के समुचित विकास की अपेक्षा है। उन्होनें 'भारत संघ' की स्थापना से भ्रष्ट सामाजिक व्यवस्था को सुधार की ओर उन्मुख किया।

प्रसाद के उपन्यासों की विकास यात्रा का 'कंकाल' के बाद अगला सोपान उनका दूसरा उपन्यास 'तितली' है जो 1934 में प्रकाश में आया। 'तितली', 'कंकाल' से भिन्न वस्तु पर लिखा गया है जो 'प्रेमचन्द' के मार्ग के निकट एक आदर्शवादी उपन्यास है। 'राजेन्द्र यादव' ने इन दोनों उपन्यासों की विषय वस्तु का अंतर करते हुये लिखा है - 'कंकाल मुख्यत: पिता नाम की संस्था के अस्वीकार, सामन्तवादी व्यवस्था, धार्मिक रूढ़ियों और संस्कारों में छटपटाते लोगों की कहानी है। 'तितली' सामान्तवादी भूमि सम्बन्धों, संयुक्त परिवार और माँ से छूटने की कशमकश की कथा है।'

औपन्यासिक कला तथा कहानी के ढांचे व निर्वाह की दृष्टि से यह उपन्यास ज्यादा संतोषजनक है। कथा गति मंथर है कथा यबतानेय की अपेक्षा कथा दिखाने का प्रयास उपन्यासकार ने किया है। चरित्र-चित्रण भी उसी के अनुसार ज्यादा गँठा हुआ है। उपन्यास में पात्र स्वंय चलते दीख पड़ते हैं। चार भागों में बँटे इस उपन्यास में चरित्र और घटनाचक्र दोनों का निर्वाह काफी कुशलतापूर्वक किया गया है। 'पहले भाग' में चरित्रों को उनके स्वाभाविक परिवेश में प्रस्तुत कर दिया गया है। 'दूसरे' भाग में कथानक विस्तार पाता है। अंग्रेज लड़की शैला का धर्म परिवर्तन, नायिका 'तितली' से मधुबन का विवाह, राजकुमारी और चौबे का रोमांस, इस चौबे और उसके जोड़ीदार तहसीलदार की धूर्तताएं, श्यामलाल की रंगरेलियां, अनवरी बाई की कारगुजारियाँ आदि घटनाओं द्वारा कथानक में पेंच आते हैं और संघर्ष की भूमिका बनती है।

'तीसरा भाग' मुख्य पात्रों की संभावनाओं का निदर्शन कराता है, और देहातियों एवं शहरियों को आमने - सामने भिड़ा देता है। 'इन्द्रदेव' बैरिस्टर बनकर चले जाते हैं, 'शैला' ग्राम विकास के रचनात्मक कार्य में जुट जाती है, 'मधुबन' और 'तितली' ऊसर जमीन के टुकड़े पर तन-मन से एकाग्र हो जाते हैं और बाबा रामनाथ संन्यास ले लेते हैं। इसी भाग में गांव के भूमिहीनों का वहाँ के भ्रष्ट अमलदारों और जमींदारों से बाकायदा संघर्ष छिड़ता है। मधुबन और उसकी मण्डली तहसीलदार की ज्यादतियों का विरोध करती है और इसी में चौबे की जमकर पिटाई हो जाती है। 'चौथा भाग' उपन्यास के दुरात्मा पात्रों का पराभव दिखलाता है। 'इन्द्रदेव' का 'शैला' से विवाह हो जाता है और 'शैला' उसकी सहयोगिनी बनती है। उपन्यास के अंत में विद्रोही 'मधुबन' 'तितली' के पास लौट आता है और इसी सुखान्त लय पर उपन्यास का समापन हो जाता है।

तितली का परिवेश है तो देहाती पर शहरियत भी यहाँ उच्चवर्गीय मुकुन्दलाल और नन्दरानी के रूप में तथा निम्नवर्गीय रामाधार पाण्डेय तथा बीरू के रूप में मौजूद रहता है। यहाँ कथा नारी-पुरूष के रति सम्बन्धों के अतिरिक्त किसान और जमींदार की पारस्परिक कशमकश को लेकर भी है। जो उच्च वर्गीयता के विरूद्ध आन्दोलन करती हुई स्त्री-पुरूष को समता और सहकारिता के सूत्र में बाँध कर एक संघटित मोर्चा तैयार करती है। जो मानव को धर्म की रूढ़ियों, परम्परागत आभिजात्यवादी विकृतियों से मुक्त कर सहज मानवीय धरातल पर मानवतावाद की प्रतिष्ठा करती है।

'तितली' उपन्यास के नायक और नायिका दोनों ही श्रमिक वर्ग के हैं। जो मार्कसवाद की बजाय गांधीवाद से प्रभावित होने के कारण कर्कश, संघर्षमय और रोष से युक्त तथा घृणाभिभूत नहीं हैं, फिर भी अपनी वर्ग चेतना से रिक्त नहीं है और भारतीय 'श्रमिक संघ' की संस्कारी परम्पराओं से युक्त है।

से सभी साम्प्रतिक जीवन के उन्नायक है। इस उपन्यास में 'इन्द्रदेव' और 'शैला' तथा 'तितली' और 'मधुबन' की कथा प्रमुखता से विचित्र है। 'मधुबन' एक भूतपूर्व जमींदार का लड़का है पर वर्तमान में उसके पास एक खण्डहर और दो बीघा जमीन के सिवाय कुछ नहीं है। 'मधुबन' नायिका तिली का पति है, आदर्शवादी है, उतावला है, वह संघर्ष में ठहर नहीं पाता, संघर्ष से पलायन करता है। वैसे वह कर्मठ एवं ईमानदार है। 'तितली' में गांधीजी का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। तितली कर्मठ है, वह अकेले रह कर भी प्रतिकूल स्थितियों को झेलकर उनसे संघर्ष करने की क्षमता रखती है। अकेली 'तितली' ही गँाव में आत्मरक्षा करते हुए नई प्रेरणा भरती है। वहाँ की सत्यशक्तियों में वह सबसे आगे है। गांधीविचार और गांधी-कर्म से प्रेरित हो व ग्रामोद्धार के स्वप्न को साकार करना चाहती है। 'तितली' को उसके संघर्ष का पुरस्कार मिलता है। चौदह वर्ष बाद एक रात उसकी कुटिया के बाहर यजीवन युद्ध का थका हुआ सैनिक मधुबन विश्राम शिविर के द्वार पर खड़ा था। दूसरी ओर विदेश के शिक्षा प्राप्त 'इन्द्रदेव' और 'शैला'

भी गाँव में अत्याचार व शोषण के विरूद्ध संघर्ष में ठहर नहीं पाते। इन पर भी मार्कसवाद की अपेक्षा गांधी कर्म का प्रभाव है तभी तो ग्रामोत्थान की भावना से प्रेरित चरित्र उपन्यास में कहता है। – 'हममें से कुछ शिक्षा पाए हुऐ लोगों को शहरी जीवन का लोभ त्यागकर गँाव में रहना चाहिए और ग्रामोत्थान के कार्य में सक्रिय भाग लेना चाहिए।'

जहाँ कंकाल का 'बाथम' एक सिद्धान्तविहीन मौकापरस्त आदमी था– समाज में फेली व्यापक सडांध का ही एक नमूना पर 'तितली' में जो 'वाटसन' आया है वह एक सहृदय, उदारमना और सम्यक् दृष्टि से विचार करने वाला चरित्र है।

इस प्रकार प्रसाद के उपन्यास अकस्मात् हृदय परिवर्तन और अतिमानवीय करूणा–क्षमा के विस्फोटों से अपेक्षाकृत मुक्त है। ये उपन्यास मानों दर्पण है उन बुराईयों और व्याधियों के जो क्या गाँव क्या शहर हर तरफ जीवन को विकृत कर रही है। देखा जाय तो प्रसाद की पहली कहानी 'ग्राम' (1911) की जो प्रेरणा है, विषयवस्तु है उसी को ज्यादा विस्तार और गहराई में जाकर टटोलने का प्रयत्न 'तितली' में दीख पड़ता है। उपन्यास में जहाँ उपन्यासकार प्रसाद ने 'इन्द्रदेव–शैला' और 'मधुबन–तितली' की दो कथाओं से लेखक ने अर्थप्रधान समाज में होने वाले पारिवारिक विघटन, आर्थिक तत्तवों की महत्ता, जमींदार और कर्मचारियों की कूटनीति एवं धाँधली ग्रामीण जनता की सरलता एवं घोर स्वार्थवृत्ति, गँावों की राजनीति, त्यौहार–उत्सव मनाने के ढंग, ग्राम सुधार तथा ग्राम संगठन आदि का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से चित्रण किया गया है। 'कंकाल' में जहाँ समाज नियति एवं व्यक्ति के प्रति अनास्था तथा निराशा उत्पन्न होती है वहाँ 'तितली' में मानवीय नैतिकता एवं उसकी दृढ़ता तथा संघर्ष मानव को विजयी बनाता है। प्रसाद ने पहली बार इस उपन्यास में पश्चिमी भौतिकतावाद तथा पूर्वी आत्मवाद के समन्वय का भी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है, जो समष्टि कल्याण का आधार बनता है।

इस प्रकार प्रसाद जी की साहित्यिक यात्रा में दो ही पूर्ण उपन्यास मिलते हैं। प्रथम 'कंकाल' व दूसरा 'तितली'। यकंकाल' वर्तमान के यथार्थ पर वस्तुः स्थिति के 'शातथ्य निर्मम उद्घाटन पर ध्यान केन्द्रित करता है जबकि 'तितली' में क्या है' से एक कदम आगे बढकर यक्या हो सकता है' और 'क्या होना चाहिए' की ओर उपन्यासकार का ध्यान है। समाज के जीवनमृत अंगो का वस्तुनिष्ठ चित्रण 'तितली' में बराबर मौजूद है पर जो नवीन मूल्य उभर रहे हैं या उभरने वाले हैं– जोकि इस सड़ी–गली व्यवस्था के कंकाल पर नए समाज और जीवन की बुनियाद रखेगें– उनकी ओर संकेत करना इस उपन्यास की रचना–प्रेरणा है और कहना न होगा कि यह प्रेरणा उपन्यास के विधान में फलीभूत है।

प्रसाद जी ने अपनी उपन्यास लेखन यात्रा को आगे बढ़ाते हुए कालजयी रचना 'कामायनी' की रचना सन् 1936 में कर चुकने के बाद एक तीसरा व अन्तिम उपन्यास 'इरावती' लिखना प्रारम्भ किया था। पर घातक बीमारी ने उसे पूर्ण होने नहीं दिया और प्रसाद इस असाध्य रोग से अकाल मृत्यु को प्राप्त हो गए। फलस्वरूप यह 'इरावती' अधूरा ही रह गया और अपरिसमाप्त रूप में ही सन् (1938) में प्रकाशित होकर पाठक समुदाय के अध्ययन का विषय बना। अपनी प्रकृति में यह एक ऐतिहासिक उपन्यास सा लगता है किन्तु, जीवन के सम्पूर्ण स्वीकार की लौ इसमें भी उतनी ही एकाग्र दीप्ति के साथ जल रही है। कहीं–कहीं तो इस अपूर्ण उपन्यास के अंदर ऐसी सघनता और तीव्रता है जो उनके सर्वोत्तम काव्य से टक्कर लेने लगती है। अगर इसे अपनी परिणति तक पहुँचाने का अवसर मिला होता तो निश्चय ही प्रसाद जी के नाटककार रूप और उपन्यासकार रूप संयुक्त होकर एक अनूठी कृति का निर्माण करते।

'इरावती' में मगध कालीन इतिहास के आलोक में घटनाओं का ताना बाना बुना गया है। तत्कालीन समय की मुखर अभिव्यक्ति करते हुए पात्र इरावती कुमार अग्निमित्र, धनदत्ता, मणिमाला, भिक्षुकगण आदि तत्कालीन समय की सच्चाइयों को उजागर करने में सफल रहे हैं। यह वह युग है जहाँ सभी पुरूष संबंध अपना आकार न केवल ग्रहण कर रहे हैं थे वरन् टूट–बिखर कर नयी जमीन भी तलाश रहे थे। स्त्री घर–बाहर, अन्त:पुर–देवालय से चैत्यालय तक सर्वत्र बनने को विवश बनादी गयी थी। यही अन्तिम सत्य भी नहीं था। बस सारी जड़ताओं–बेड़ियों को, विवशताओं को भी स्त्री ही थी जो कि ललकार रही थी, इनकी जकड़बंदी को तोड़कर इनसे बाहर आने को बेताब थी। उसके जीवन पर वह स्वंय का अधिकार चाहती थी। इस हेतु वह तत्कालीन राजसत्ता के प्रतीक सम्राट् कुमार की देह इच्छापूर्ति के माध्यम बनने के प्रस्ताव को भी, प्राप्त होने वाले सुखों को खोने की कीमत पर अस्वीकार कर देती है। यही इरावती का सच है, अप्रितम सच है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. I

Soil Water Conservation: Strategies For Sustainable Land Management

Dr. Anjul Singh*

Abstract - This report aims to explore the importance of soil water conservation and provide an overview of strategies and techniques for sustainable land management. Soil water conservation plays a crucial role in ensuring the availability of water resources for agriculture, ecosystems, and human consumption. By implementing effective conservation measures, we can mitigate soil erosion, enhance water infiltration, and improve overall water quality. This report examines various methods and practices that can be employed to conserve soil water, including terracing, contour farming, agroforestry, cover cropping, and the use of modern technology. Additionally, it highlights the economic and environmental benefits of soil water conservation and emphasizes the need for widespread adoption of these practices to achieve long-term sustainability.

Introduction - Soil water conservation is a crucial component of sustainable land management practices. It involves the implementation of various strategies and techniques to reduce water loss, improve water infiltration and retention in the soil, and enhance overall water-use efficiency in agricultural, forestry, and other land-based systems.

The availability and proper management of soil water resources are essential for sustaining plant growth, supporting ecosystems, and ensuring food security. However, factors such as climate change, deforestation, unsustainable agricultural practices, and urbanization have led to soil degradation and increased water scarcity in many regions around the world. This has necessitated the adoption of effective soil water conservation strategies to mitigate these challenges and promote sustainable land management.

1. Objective: The primary objective of soil water conservation is to preserve and enhance the quantity and quality of water resources in the soil, thereby supporting healthy plant growth, preventing soil erosion, and maintaining ecological balance. The specific objectives of implementing soil water conservation strategies include:

1. Enhancing water infiltration: Promoting practices that improve the rate at which water enters the soil, such as contour plowing, terracing, and the use of cover crops. This helps reduce surface runoff and enhances water availability for plant uptake.

2. Reducing soil erosion: Implementing erosion control measures like contour farming, strip cropping, and the establishment of vegetative buffers to prevent the loss of topsoil and retain sediment, thereby conserving soil fertility and water-holding capacity.

3. Conserving soil moisture: Employing techniques such as mulching, drip irrigation, and proper crop rotation to minimize evaporation, regulate soil temperature, and optimize water use efficiency, leading to improved plant productivity.

4. Promoting water-use efficiency: Encouraging the adoption of precision irrigation systems, such as drip irrigation and sprinkler systems, to deliver water directly to plant roots, minimizing wastage and maximizing water-use efficiency.

By implementing these strategies, stakeholders can contribute to sustainable land management, enhance water availability, protect soil resources, and promote the long-term viability of agricultural and natural ecosystems.

2. Importance of Soil Water Conservation

2.1 Water scarcity and its impact: Soil water conservation is of utmost importance in addressing water scarcity issues. With increasing global population and expanding agriculture, industrial, and urban sectors, the demand for water is rapidly rising. Climate change further exacerbates this problem, leading to altered precipitation patterns, prolonged droughts, and reduced water availability.

By implementing soil water conservation strategies, water loss through evaporation and runoff can be minimized, and water can be efficiently utilized for plant growth and ecosystem services. Conserving soil water helps to mitigate water scarcity, ensure sustainable water supply for agriculture, and reduce competition for water resources among various sectors. It supports the resilience of ecosystems, enhances food security, and safeguards the livelihoods of communities dependent on agriculture.

2.2 Soil erosion and degradation: Soil erosion is a significant concern resulting from unsustainable land

*Associate Professor (Chemistry) Govt. PG College, Dholpur (Raj.) INDIA

management practices. When soil is eroded, not only is valuable topsoil lost, but the capacity of the land to retain water is also diminished. This leads to decreased soil fertility, reduced agricultural productivity, and increased vulnerability to droughts and floods.

Soil water conservation measures, such as contour plowing, terracing, and the use of cover crops, help prevent soil erosion by reducing the velocity of runoff water and promoting water infiltration. By preserving the integrity of the soil, these strategies maintain its water-holding capacity and promote the retention of nutrients necessary for plant growth. This, in turn, improves soil health, supports sustainable agriculture, and minimizes the negative impacts of erosion on downstream water quality.

2.3 Biodiversity and ecosystem services: Healthy soils and adequate soil water content are essential for supporting biodiversity and providing valuable ecosystem services. Soil serves as a habitat for a wide range of organisms, including microorganisms, insects, worms, and plant roots. These organisms contribute to the decomposition of organic matter, nutrient cycling, and the formation of soil structure.

By conserving soil water, the habitat for these organisms is preserved, promoting biodiversity and maintaining ecological balance. Additionally, soil water conservation enhances the availability of water for plant growth, enabling the maintenance of diverse plant communities and the provision of ecosystem services such as carbon sequestration, flood regulation, and water purification.

Conserving soil water and promoting sustainable land management practices also contribute to the preservation of wetlands, riparian areas, and other water-dependent ecosystems. These ecosystems provide important habitats for numerous species, improve water quality, and support recreational and aesthetic values.

In summary, soil water conservation plays a vital role in addressing water scarcity, preventing soil erosion and degradation, and supporting biodiversity and ecosystem services. It is crucial for sustaining agriculture, protecting natural resources, and ensuring the long-term viability of ecosystems and human well-being.

3. Strategies for Soil Water Conservation

3.1 Terracing and contour farming: Terracing involves creating leveled platforms on slopes to reduce water runoff and promote water infiltration. This technique helps retain soil moisture by slowing down the flow of water and reducing soil erosion. Contour farming involves plowing and planting crops along the contour lines of the land, forming natural barriers to water flow and preventing erosion. Both terracing and contour farming are effective strategies for conserving soil water on sloping lands.

3.2 Agroforestry and windbreaks: Agroforestry involves integrating trees or shrubs with crops or livestock on the same piece of land. Trees and shrubs play a crucial role in soil water conservation by reducing water loss through evaporation, improving soil structure, and enhancing water infiltration. Windbreaks, which are rows of trees or shrubs planted to protect crops from wind, also contribute to soil water conservation by reducing wind evaporation and preventing soil erosion.

3.3 Cover cropping and mulching: Cover cropping involves growing specific plant species, such as legumes or grasses, during fallow periods or alongside main crops. These cover crops help protect the soil from erosion, improve water infiltration, and enhance organic matter content. Mulching involves applying a layer of organic material (such as straw, leaves, or compost) on the soil surface. Mulch acts as a protective barrier, reducing evaporation, regulating soil temperature, and improving moisture retention in the soil.

3.4 Conservation tillage techniques: Conservation tillage techniques aim to minimize soil disturbance during planting and cultivation operations. Practices such as no-till or reduced tillage help preserve soil structure, increase organic matter content, and reduce water loss through evaporation. By leaving crop residues on the soil surface, conservation tillage techniques promote water infiltration and reduce soil erosion.

4. Benefits of Soil Water Conservation

4.1 Improved water availability for agriculture: Soil water conservation measures help improve water availability for agricultural purposes. By reducing water loss through evaporation and runoff, and promoting water infiltration and retention in the soil, more water becomes available for plant uptake. This increased water availability supports crop growth, enhances agricultural productivity, and contributes to food security.

4.2 Enhanced ecosystem resilience: Conserving soil water has a positive impact on ecosystem resilience. Adequate soil moisture supports the growth and survival of plants, which, in turn, provide habitats for various organisms. Healthy plant communities contribute to biodiversity, stabilize ecosystems, and enhance their ability to withstand environmental stresses, such as droughts or floods. Soil water conservation practices help maintain ecosystem functions and services, including carbon sequestration, nutrient cycling, and water purification.

4.3 Reduced soil erosion and nutrient loss: One of the significant benefits of soil water conservation is the reduction in soil erosion and nutrient loss. Measures such as terracing, contour farming, cover cropping, and mulching help prevent soil erosion by minimizing the movement of soil particles by water runoff. By retaining valuable topsoil, soil water conservation practices preserve soil fertility and nutrient-holding capacity. This reduces the need for synthetic fertilizers, protects water quality, and promotes sustainable agricultural practices.

4.4 Economic advantages and cost-effectiveness: Soil water conservation practices can bring economic advantages and prove to be cost-effective in the long run. By improving water-use efficiency, farmers can optimize their irrigation practices and reduce water consumption,

leading to cost savings on water bills. Conserving soil moisture also reduces the need for additional irrigation or irrigation infrastructure development. Moreover, by preserving soil fertility and reducing erosion, soil water conservation practices contribute to sustained agricultural productivity and long-term economic viability.

Additionally, soil water conservation can have broader economic benefits for communities and regions. It helps safeguard water resources for multiple sectors, including agriculture, industry, and domestic use. Adequate water availability supports local economies, ensures food security, and contributes to the overall well-being of communities. Moreover, by maintaining healthy ecosystems, soil water conservation can support nature-based tourism and recreation, generating economic opportunities and promoting sustainable development.

In summary, soil water conservation offers a range of benefits, including improved water availability for agriculture, enhanced ecosystem resilience, reduced soil erosion and nutrient loss, and economic advantages. These benefits contribute to sustainable land management, protect natural resources, and support the long-term well-being of both ecosystems and human communities.

5. Case Studies and Success Stories

5.1 Soil water conservation projects around the world:

a) The "Great Green Wall" initiative in Africa: The Great Green Wall is a large-scale project spanning across Africa, aiming to combat desertification and promote soil water conservation. The project involves planting a barrier of trees across the Sahel region to reduce soil erosion, improve water infiltration, and enhance agricultural productivity.

b) The Watershed Development Program in India: This program, implemented in various states of India, focuses on soil and water conservation measures to improve water availability and enhance agricultural productivity. It includes activities such as watershed management, contour bunding, construction of check dams, and promotion of agroforestry, all aimed at conserving soil moisture and preventing soil erosion.

c) The Loess Plateau Watershed Rehabilitation Project in China: This project involved the implementation of soil and water conservation measures on the highly erodible Loess Plateau in China. The project included terracing, contour farming, reforestation, and the construction of check dams and retention ponds. These measures significantly reduced soil erosion, improved water availability, and restored ecosystem health.

5.2 Community-based initiatives and farmer participation:

a) Farmer Field Schools in Thailand: The Farmer Field School approach was implemented in Thailand to promote soil water conservation practices among farmers. These schools provided a platform for farmers to learn and exchange knowledge about sustainable land management, including techniques such as contour farming, mulching, and crop rotation. The active participation of farmers led to the successful adoption of soil water conservation practices and improved agricultural productivity.

b) The Maasai Stoves and Solar Project in Kenya: This project focused on improving the living conditions of the Maasai community while promoting sustainable land management. In addition to providing fuel-efficient stoves and solar power, the project included training on sustainable land use practices, including soil water conservation techniques such as terracing and water harvesting. These initiatives empowered the community to conserve soil water and mitigate the impacts of drought on agriculture.

c) The Soil and Water Conservation Society in the United States: The Soil and Water Conservation Society (SWCS) is a nonprofit organization that promotes soil and water conservation practices in the United States. The SWCS works with farmers, landowners, and communities to implement strategies such as conservation tillage, cover cropping, and precision irrigation. Through educational programs, technical assistance, and networking opportunities, the SWCS encourages widespread adoption of soil water conservation practices.

These case studies and success stories highlight the effectiveness of soil water conservation projects and initiatives around the world. They demonstrate the importance of community engagement, farmer participation, and collaboration between various stakeholders in achieving successful outcomes and promoting sustainable land management practices.

6. Challenges and Future Directions

6.1 Barriers to adoption: Despite the numerous benefits, there are several barriers to the widespread adoption of soil water conservation practices. These include:

a) Lack of awareness and knowledge: Many farmers and landowners may be unaware of the benefits of soil water conservation or lack knowledge about suitable practices and techniques.

b) Limited access to resources: Limited access to financial resources, technology, equipment, and training can hinder the implementation of soil water conservation measures.

c) Socioeconomic constraints: Farmers facing economic constraints may prioritize short-term gains over long-term benefits, making it challenging to invest in soil water conservation practices.

6.2 Policy and institutional support: Effective policies and institutional support are crucial for promoting soil water conservation. Governments and institutions can play a significant role in overcoming barriers and driving adoption through the following measures:

a) Policy frameworks: Developing and implementing policies that prioritize and incentivize soil water conservation practices, such as providing financial incentives, tax benefits, or subsidies to farmers adopting these practices.

b) Capacity building and education: Providing training, education, and technical assistance to farmers and landowners to enhance their knowledge and skills in soil

water conservation.

6.3 Research and innovation: Continued research and innovation are vital to advancing soil water conservation practices. Key areas for future research and innovation include:

a) Developing context-specific approaches: Conducting research to understand the effectiveness of soil water conservation practices in different agroecological zones, considering factors such as soil types, climate conditions, and crop varieties.

b) Integrating traditional and modern knowledge: Recognizing and integrating traditional knowledge systems with modern scientific advancements to develop innovative and context-specific soil water conservation practices.

c) Climate change adaptation: Studying the impacts of climate change on soil water availability and developing adaptive strategies to ensure soil water conservation in the face of changing climatic conditions.

d) Technology and data-driven solutions: Exploring the potential of emerging technologies, such as remote sensing, precision agriculture, and data analytics, to monitor soil moisture, optimize irrigation, and improve water-use efficiency.

Conclusion

Key findings: Key findings from the discussion on soil water conservation include:

1. Soil water conservation is crucial for sustainable land management, supporting agriculture, ecosystem resilience, and water availability.
2. Strategies such as terracing, agroforestry, cover cropping, conservation tillage, precision irrigation, and modern technology play a significant role in conserving soil water.
3. Soil water conservation leads to improved water availability for agriculture, enhanced ecosystem resilience, reduced soil erosion and nutrient loss, and economic benefits.
4. Community-based initiatives, farmer participation, and policy support are vital for the successful adoption of soil water conservation practices.

Call to action for sustainable land management:

To promote sustainable land management and address the challenges of soil water conservation, the following actions are recommended:

1. Raise awareness and provide education on the benefits of soil water conservation practices among farmers, landowners, and stakeholders.
2. Enhance access to resources, including financial support, technology, and training, to facilitate the adoption of soil water conservation techniques.
3. Develop and implement policies that incentivize and prioritize soil water conservation, ensuring coordination among government agencies, institutions, and local communities.
4. Invest in research and innovation to develop context-specific approaches, integrate traditional knowledge with modern advancements, and address emerging challenges such as climate change.
5. Foster collaboration and knowledge-sharing.
among stakeholders, including farmers, researchers, policymakers, and NGOs, to promote best practices and scale up soil water conservation efforts.

By taking collective action and prioritizing soil water conservation, we can contribute to sustainable land management, preserve natural resources, and ensure the well-being of both ecosystems and human communities.

References:-

1. Ageta, Y. and Kadota, T. 1992. Prediction of change of mass balance in the Nepal Himalayas and Tibetan Plateau: A case study of air temperature increase for three glaciers. *Annals of Glaciology*16: 89-94.
2. Bahadur, J. 1999. *The Himalayan Environment*. New Age International (P) Ltd., New Delhi.
3. Barrow, C.J. 1991. Land degradation: Development and Breakdown of Terrestrial Environments. Cambridge University Press. New York.
4. Bhumbla, D.R. and Khare, A. 1984. Estimate of Wastelands in India. Society for promotion of Wastelands Development. New Delhi, India.
5. Binodini, M. 2016. Joint Forest Management Programme in India and Community participation. *International Journal of Research in Economics and Social Sciences*6(3): 322-332.
6. Blanco-Canqul, H., Gantzes, C.J., Anderson, S.H., Alberto, E.E. and Thompson, A.L. 2004. Grass barrier and vegetative filter strip effectiveness in reducing runoff, sediment, nitrogen and phosphorus loss. *Soil Science Society of America Journal*68: 1670-1678.
7. CGWB (Central Ground Water Board) 2002. Master Plan for Artificial Recharge to Ground Water in India, Ministry of water resources, Government of India, New Delhi.
8. Chatterjee, R and Purohit, R.R. 2009. Estimation of replenishable ground water resources for India and their status of utilization. *Current Science*96(12): 15811591.
9. CWC (Central Water Commission) 2002. Water and related statistics. Ministry of water Resources. New Delhi.
10. CWC (Central Water Commission) 2014. Annual report 2013-14. Ministry of water Resources New Delhi.
11. Dhurva Narayana, V.V. and Ram Babu. 1983. Estimation of Soil Erosion in India. *Journal of Irrigation and Drainage Engg.*109(4): 419-434.
12. Gautam, N.C. and Narayan, L.R.A. 1988. *Wastelands in India*. Pink Publishing House. Mathura, India.
13. Inder Dev, Sudesh Radotra, Khola, O.P.S., Bimal Misri, Sindhu Sareen, Srivastava, A.K. Bhupinder Singh., Sharma, S.K., Chamoli, K.P. and Dinesh Kumar (2016). Natural resource enhancement through silvipastoral establishment in western Himalayan region. *Indian*

*Journal of Animal Sciences*86(11): 1296-1301.

14. IPCC, 1998. Special Report of IPCC working group II [Watson, R.T., M.C. Zinyowerea, and R.H. Moss (eds.)]. Inter Governmental Panel on Climate Change. Cambridge University Press. New York.
15. Joshi, P.K. and Agnihotri, A.K. 1984. An assessment of the adverse effects of canal irrigation in India. *Indian J. Agric. Ecol.*39: 528-536.

****

Allama Iqbal's Shayaris: Reflection of Varied Moods (With Special Reference to Love)

Dr. Arshad Siraj*

Introduction - 'Muhammad Iqbal (1877-1938) is one of the preeminent-writers of Indo-Pakistan subcontinent. Indeed, the attention he has received from numerous writers, translators and critics from western as well as Islamic countries testifies to his stature as a world literary figure. While his primary reputation is that of a poet, Iqbal has not lacked admirers for his philosophical thought. He has in fact been called the more-serious scholar philosophical thinker of modern times.'[1]

Muhammad Iqbal, also known as Allama Iqbal, is the National Poet of Pakistan. A poet, philosopher, politician, lawyer, and scholar, Iqbal was born on November 9, 1877, in Punjab, Pakistan, to Kashmiri parents and educated at Scotch Mission College in Sialkot. He received BAs in philosophy, English literature, and Arabic at Government College University, where he was awarded the Khan Bhadurddin F. S. Jalaluddin medal. In 1905, Iqbal worked closely with Sir Thomas Arnold while studying philosophy at Trinity College Cambridge in England.

'The Islamic world has witnessed the emergence of great number of Muslim scholars. The names of those who made positive contributions are mentioned till to these days. The poet-philosopher Allama Muhammad Iqbal is one of those great scholars who have left a legacy behind to be followed by other scholars particularly in the area of how to deal with the West. His own reconciliatory approach in dealing between the West and the Islamic world should be an interesting one. Within the confines of this paper, the researcher would like to explore and analyze the life, works and mission of Iqbal, focusing on his philosophical approach to Muslim ummah. Dunia islam telah menyaksikan kebangkitan jumlah yang besar ulama muslim. Nama mereka yang membuat sumbangan positif disebutkan sehingga ke hari ini. Penyair-ahli falsafah Allama Muhammad Iqbal adalah salah satu dari ulama besar yang telah meninggalkan legasi untuk diikuti oleh ulama-ulama lain khususnya dalam bidang cara untuk berurusan dengan orang barat. Pendekatan sendiri pendamaian dalam menangani di antara barat dan dunia islam seharusnya menjadi salah satu yang menarik. Dalam lingkungan karya ini, penyelidik ingin meneroka dan menganalisis kehidupan, kerja-kerja dan misi Iqbal, memberi tumpuan kepada pendekatan falsafah beliau kepada umat muslim.'[2]

Iqbal also wrote the Urdu ghazal Sare Jahan se Achccha Hindostan Hamara, which became a rallying cry against the British Raj. The song, an ode to Hindustan (present-day Bangladesh, India, and Pakistan), eventually became a patriotic ballad sung largely in India. Ishq' or 'Love' is a constant part of Iqbal's thought and Philosophy. The concept of 'Ishq' has principal importance in the philosophy which he presented.In this essay ,we are going to study what Iqbal said about Ishq in his prose and poetry.

Iqbal's Unfulfilled Love: It is in Europe that Iqbal fell in love with Atia Faizi, a young woman from an aristocratic family in Bombay. Atia was young, attractive, intelligent and ahead of her time. Iqbal who was older to her lost his tender heart to this liberated, young student. They spent time together in Cambridge, London and Germany. Rajmohan Gandhi in his book "Understanding the Muslim Mind" writes: "Miss Fayzee has spoken of the Iqbal of this period as self-assertive and gregarious but also, on occasion, as a lost or solemn mystic inside. "I am pragmatic and utilitarian outside but a mystic inside," he told her once. In his poem Wisal (Union) he sent to Atia on her return to India, Iqbal opened his heart: "Hark ye Nightingale! the flower that I was relentlessly in search of I fortunately got."

Indeed, it will not be wrong to say that his passionate love for his mistress Atia Faizi who would be a complete world for him, and whom he could not finally get, made him familiar with the various colours of love which he expressed through his shayaris. He got the flower but never enjoyed its fragrance. They never married because, according to a critic, the avant-garde Atia would have been completely out of place in Punjab's conservative milieu. The Pujabi in Iqbal had never left him and, when at home, he would mostly speak Punjabi, including its many colourful abuses.

Apart from all Iqbal books, it was his shayaris that brought out a different element of his personality. Shayaris

*Head of Deptt. (Urdu) Govt. Arts College, Sikar (Raj.) INDIA

were one of the most striking features of Iqbal's personality. He recited shayaris amongst all groups of people, of all ages, in all genres and languages. Iqbal nailed a genre and a language through his shayaris.

Iqbal's Concept of Self: 'The first published poetry book of Allama Iqbal, 'The Secrets of the Self', appeared in the Persian language in 1915. Among other Allama Iqbal's great works of poetry are – The Secrets of Selflessness, Message from the East, and Persian Psalms.

'The Secrets of the Self (first published in 1915) marks the underpinning of a new stage in Iqbal's creative work. It is linked with the turning point of Iqbal's stance which took place after the poet's homecoming from Europe. The poem contains Iqbal's inventive doctrine of the self; and all the subsequent works of Iqbal supplemented and further refined this central concept. Before giving an interpretation of the poem, it is but seminal to look into what, Iqbal himself said about the poem. While dictating his views to Nazir Niazi in 1937, Iqbal explicitly stated that the poem is based on two principles: that the personality is the central fact of the universe; (b) that personality "I am" is the central fact in the constitution of man. The first principle is described in the Old Testament "as the great I am".

The second principle of the smaller or dependent I-am is various described in Quran as weak or ignorant yet it is also described as the bearer of the Divine trust—, it has the quality of growth as well as corruption, it has the power to expand by absorbing the elements of the universe of which it appears to be an insignificant part, it has also the power of absorbing the attributes of God (Wahid Thoughts and Reflection of Iqbal243).

This personal observation of Iqbal serves as a gateway to the landscapes of meaning. The dominant idea that Iqbal emphasizes is that knowing oneself is in fact an immediate perception of God. He focuses his attention on the individual "I", thus shifting the emphasis from divine to human. The path of recognition of the self is the path that takes one to a contact with the Absolute.

As he writes in introduction to The Secrets of the Self translated by Nicholson: Physically and spiritually man is self-contained centre, but he is yet a complete individual. The greater his distance from God, the less is his individuality. He who comes nearest to God is the complete person. Nor that he is finally absorbed in God. On the contrary he absorbs God in himself'[3]

Iqbal's Philosophy of Life Through his Shayaris: The following shayaris reveal his various moods and his philosophy of life.

- Amal se zindagi banti hai, jannat bhi, jahannam bhi,
  Ye khaki apni fitrat mein, na noori hai na naari hai.
  (Patriotic mood)
- Khudi ko kar buland itna, ki har taqdeer se pehle,
  Khuda bande se khud pooche bata teri raza kya hai.
  (Philosophical-religious mood)
- Dua to dil se mangi jati hai, zubaan se nahi ae iqbal,
  Qubool toh uski bhi hoti hai jiski zubaan nahi hoti. (Sufi-religious mood)
- Khafa jo ishq mein hote hain, wo khafa hi nahin,
  Sitam na ho mohabbat mein, kuch maza hi nahi. (Mood of Ishq)
- Manzil se aage badh kar, manzil talash kar,
  Mil jaye tujhko dariya, samundar talaash kar. (Preceptive Mood)
- Har sheesha toot jaata hai pathar ki chot se,
  Pathar hi toot jaye, wo sheesha talaash kar. (Philosophical Mood)
- Koi ibadat ki chah mein roya,
  Koi ibaadat ki raah mein roya, (Sufi-ashikana Mood)
- Ajeeb hai ye namaz-e-mohabbat ke silsile iqbal,
  Koi kaza kar ke roya, Koi ada kar ke roya. (Sentimental mood of love)
- Kaun rakhega yaad hume is daure khudgarzi mein,
  Haalat aise hai ki logon ko khuda yaad nahi. (Philosophical Mood)
- Masjid khuda ka ghar hai, peene ki jagah nahi,
  Kafir ke dil mein ja, wahan khuda nahin. (Religious Mood)
- Na rakh ummed-e-wafa kisi parinde se iqbal,
  Jab par nikal aate hai toh apna aashiyana bhool jate hain. (Sad philosophical Mood)
- Sone de agar wo so raha hai gulami ki neend mein,
  Ho sakta hai wo khwab azaadi ka dekh raha ho. (Patriotic Mood)
- Dil se jo baat nikli hai, asar rakhti hai,
  Par nahin, magar takat-e-parwaaz rakhti hai. (Emotional Mood)
- Hazaron saal nargis apni be-noori par roti hai,
  Badi mushkil se hota hai, chaman mein deedawar paida. (Mood of Love)
- Mana ki teri deed ke kabhil nahin hoon main,
  Tum era shauq dekh, mera intezaar dekh. (Sad and Sentimental Mood)
- Mazhab nahin sikhata aapas mein bair rakhna,
  Hindi hain hum, watan hai hindostaan humara. (Patriotic Mood)
- Mujhe rokega kya tu ae nakhuda gharq hone se,
  Ki jinko doobna hai doob jaate hain safinon mein. (Romantic Mood)
- Nahin hai na-ummeed iqbal apni kisht-e-viraan se,
  Zara nam ho to ye mitti bahut zarkhez hai saaqi.
  (Romantic Mood)
- Purane hai ye sitare, falak bhi farsuda,
  Jahan wo chahiye mujh ko ki ho abhi nau-khez.
  (Emotional Mood)
- Yakin mohkam, amal paiham, mohabbat fatah-e-alam,
  jihad-e-zindagani mein hain ye mardon ki
  shamsheeren. (Mood of Romance)
- Sitaron se aage jahan aur bhi hain,
  Abhi ishq me imtehaan aur bhi hain. (Mood of Love)
- Hansi aati hai mujhe hasrat-e-insaan par,
  Gunaah karta hai khud laanat bhejta hai shaitaan par.
  (Philosophical Mood)

- Tere ishq ki intehaan chahta hu,
  Meri sadagi dekh kya chahta hun. (Ishqana Mood)
- Paerwane ko chirag hai bulbul ko phool bas,
  Siddique ke liye hai khuda ka rasool bas. (Religious Mood)
- Umr bhar likhte rahe phir bhi warakh sada raha,
  Jane kya lafz the jo humse tumhare na huye. (Sentimental Mood)
- Sau baar kaha maine inqaar hai mohabbat se,
  Har baar sadaai tum dil se nahi kehte. (Ishqana mood of complaint)
- Teri rehmat pe hai munahsir mere har amal ki kabooliyat,
  Na mujhe saleekah iltejah, na mujhe shaori namaz hai. (Religious Mood)
- Husn e kirdaar se noor e mujassam ho ja,
  Ki iblees bhi tujhe dekhe to musalmaan ho jaye. (Mood of love and religiosity)
- Kisi ki yaad ne zakhmon se bhar diya seena.
  Har ek saans par shak hai ki aakhri hogi. (Emotional Mood)
- Mat kar khaaq ke patte par ghuroor wa beniyaazi itni,
  Khud ko khud me jhaank kar dekh tujhme rakha kya hai. (Philosophical Mood)

Iqbal's Concept of Love: To Iqbal- "Love is the essence of life. It is deathless. The march of time is irresistible. It rolls on like a torrent, carrying violently away everything that impedes its onward movement. But love stands up to it; it stems all opposing waves for it, too, is not different from a flood tide, a deluge. Love transcends time and space and its wondrous possibilities are beyond human comprehension. There are states and stages of love that are not known to anyone.

The effulgence of love is common to all Divine Apostleships and sacred teachings. Colour and radiance, joy and fragrance of all the universe is from love. It is the purifying draught (from the Fountain of Paradise) that sends saints and poets into ecstasy. It reveals itself sometimes, in the form of a preacher from the pulpit, and, sometimes, as a philosopher and conqueror.

Love has a thousand facets. It is a many-splendoured thing. It is an eternal wayfarer, a perpetual traveller. It is always on the move, restless, mercurial. Love is the flute of life from which melodies pour forth and enrapture the world. Light and heat, activity and movement, ardour and enthusiasm are all from it.

- **Jafa Jo Ishq Mein Hoti Hai Woh Jafa Hi Nahin**
  Sitam Na Ho To Mohabbat Mein Kuch Maza Hi Nahin

(The oppression befalling in Love is not oppression
If there is no torment, there is no pleasure in Love)

- **Tere Ishq Ki Intiha Chahta Hun**
  Meri Sadgi Dekh Kya Chahta Hun

(Completion of your Love is what I desire
Look at my sincerity what little I desire)

- **Bhari Bazm Mein Raaz Ki Baat Keh Di**
  Bara Be-Adab Hun, Saza Chahta Hun

(I have divulged the secret in the full assembly
I am very insolent, punishment I desire)

- **Anokhi Waza Hai, Sare Zamane Se Nirale Hain**
  Ye Ashiq Kon Si Basti Ke Ya-Rab Rehne Wale Hain

(Unusual in state, distinct from the whole world they are
O Lord! Inhabitants of which habitation these Lovers are?)

- **Iqbal ! Kis Ke Ishq Ka Ye Faiz-e-Aam Hai**
  Rumi Fana Huwa, Habshi Ko Dawam Hai

(Iqbal! This general blessing is due to whose love?
The Roman has perished, the Negro is immortal!)

- **Main Intihaye Ishq Hun, Tu Intihaye Husn**
  Dekhe Mujhe Ke Tujh Ko Tamasha Kare Koi

(I am the extreme Love, Thou art the extreme Beauty
One should see me or witness Thy Spectacle)

- **Ankh Jo Kuch Dekhti Hai, Lab Pe Aa Sakta Nahin**
  Mehw-e-Hairat Hun Ke Dunya Kya Se Kya Ho Jaye Gi

(Whatever the eye is seeing cannot be described by the lips

I am lost in amazement as to what the world will become!)

- **Ho Deed Ka Jo Shauq To Ankhon Ko Band Kar**
  Hai Dekhna Yehi Ke Na Dekha Kare Koi

(Close your eyes if you want taste for the Sight
The real Seeing is that one should not try to see Him)

- **Mohabbat Hi Se Payi Hai Shafa Bimaar Qoumon Ne**
  Kiya Hai Apne Bakht-e-Khufta Ko Baidar Qoumon Ne

(Sick nations have been cured only through Love
Nations have warded off their adversity through Love)

- **Mohabbat Hi Woh Manzil Hai Ke Manzil Bhi Hai, Sehra Bhi**
  Jaras Bhi, Karwan Bhi, Rahbar Bhi, Rahzan Bhi Hai

(Love is the only stage which is the stage as well as the wilderness
It is the bell, the caravan, the leader as well as the robber)

- **Ye Dastoor-e-Zuban Bandi Hai Kaisa Teri Mehfil Mein**
  Yahan To Baat Karne Ko Tarasti Hai Zuban Meri

(Why does this custom of silencing exist in your assembly?
My tongue is tantalized to talk in this assembly.)

Use of the Word 'Heart' in Iqbal's Poetry: The word heart is a highly nuanced term used in different interconnected shades and meanings during the various phases of Iqbal's poetic career, ranging from 'heart' as a seat of emotions and feelings to the Sufi idea of 'heart' as the centre of human interiority and the deepest seat of consciousness. In his mature works, to which category this poem belongs, he mostly employs the term 'heart' in its mystico-philosophic meaning and, for an adequate explanation, one inevitably has to turn towards the perspective of intellectual Sufism which provided the underpinning to Iqbal's verses and which, consequently, is the only legitimate paradigm that may reveal the beauty and intellectual profundity of his thought in its full splendour.

Iqbal's Views on Paradise: 'In the poem "The Houri and the Poet", the houri asks the poet why he is uninterested in the pleasures of paradise. The poet replies that paradise, which represents perfection, cannot satisfy him because he is always in search of something more perfect, and this possibility is excluded in paradise. Paradise is all happiness and joy, and there is no room in it for sorrow and pain. Iqbal is not advocating masochism. It is the pain and sorrow of love? that is the pain and sorrow due to the realisation that one's lofty ideals will be forever unattainable.'[4]

Objectives of the Study:

1. To have a peep into Iqbal's shayaris
2. To explore and discuss Iqbal's views on nationality and patriotism, paradise, heart and love
3. To elaborate Iqbal's various moods as reflected in his shayaris
4. To explore and bring forth Iqbal's love and his expressions of love through his shayaris.

Summing Up: Love is the only language that can transmit your true feelings for others. And what a better way to transmit your feelings other than Shayari. Love is a feeling that transcends emotions and sentiments from one person to another. So love can be better described as a feeling in terms of poetry in words of Allama Iqbal. All that Iqbal has presented as a thinker has its roots in one concept alone to which he has given the name of Khudi or 'Self'. All the philosophical ideas of Iqbal are derived from, and rationally and scientifically related to, this one concept, the concept of 'Self'. This means not only that all his ideas are rationally and intellectually interrelated but also that they constitute a system of thought, each concept whereof is intellectually supported and strengthened by the rest. Therefore, obviously enough, we cannot appreciate any single idea of Iqbal unless and until we have a full appreciation of the concept of 'Self' which is the central idea of his system of thought.

Mohammad Iqbal (1877-1938), a descendant of a Kashmiri Brahmin family that had embraced Islam in the seventeenth century, was born and settled in Sialkot. After a traditional education in Arabic, Persian, and Urdu, he was exposed to a liberal education that defined the contours of his thought and his poetry during the entire period of his life. Beginning his educational career at the Scottish Mission School, he went on to acquire his M. A. in Philosophy, before joining Trinity College, and later earning the degree of Bar-at-Law. He furthered his education by getting the degree of doctorate from Germany on The Development of Metaphysics in Persia. He worked in different capacities at different points of time; he taught philosophy, practised law, got involved in politics, and also attended the second Round Table Conference. Even while he favoured the idea of the creation of Pakistan and is venerated there as the national poet, he wrote the famous patriotic song that celebrates the greatness of India. King George V decorated him with knighthood and he was called Sir Mohammad Iqbal thereafter.

Iqbal wrote both in Persian and Urdu, and is often regarded as the poet-philosopher of the East who addressed the Muslim ummah, believed in the philosophy of wahdatul wujood, and propounded the philosohy of khudi, or selfhood, which called for self-realisation and the discovery of the hidden talent with love and perseverance. Beyond that lay the stages of complete submission and forgetfulness which, he thought, was the ultimate stage of khudi. Iqbal dreamt of the 'complete man' and also entered into a metaphoric dialogue with the divine. His poetry emerged as a remarkable site where message and art coalesced, as he re-configured major poetic devices like metaphor, myth, and symbol to re-visit history, philosophy and the Islamic faith to develop his individual vision. He has left behind his collections of poems, Asraar-e Khudi, Rumooz-e Bekhudi, Baang-e Daraa, Baal-e Jibreel, Payaam-e Mashriq, Zaboor-e 'Ajm, Javed Naama, Zarb-e Kaleem, and Armaghaan-e Hijaz, apart from his lectures collected in English as The Reconstruction of Religious Thought in Islam, and other works on the Eastern worldview.

Love or Ishq is the term for which Iqbal's shayaris are known. It is through his love shayaris that his varied moods are reflected, and that tell of the depth of love that he might have enjoyed. Let us conclude with the following words-

'Iqbal's concept of love is subject to the principle of the multiple states or gradations which is, in the first place, metaphysical, existential and psychological. According to him, 'love ('ishq) is completely elevated from matter and does not have the slightest traces of passional desire. It is all faith longing and full of pious sentiments.'[5]

References:-

1. Alim Roswantoro- The Philosophical Study of Iqbal's Thought: The Mystical Experience and the Negation of The Self-Negating Quietism, Indonesian Journal of Islamic Mysticism, Volume 6, Number 1,
2. Mohd Abbas- Iqbal: An Analysis on his Life, Works and Mission, , Journal of Islam in Asia, February 2012
3. Khamsa Qasim & Aurang Zeb- Advances in Language and Literary Studies, Australian International Academic Centre, Australia, Vol. 6 No. 3; June 2015
4. RK & HS Research and Information Bulletin, International Islamic University, KL, Malaysia, Vol. 2, No. 2, September, 1994, pp. 7-8
5. A. Nadawa- Examples could be multiplied almost endlessly, Naquesh-i-Iqbal (Urdu), Karachi, 1993, pp. 171.

****

Farmer Response To Farm Telecast Programme Among Viewers In Ajmer District

Dr. Govind Prakash Acharya*

Introduction - Doordarshan as an important media of communication has greater role to play in the forth coming years in order to disseminate agricultural education to the farming community. Today in the age of modern technology television were considered to be effective in communicating the agricultural technology to needy and remote area farmers in quick time and help to bridge the gap between the scientist and farmers and also increasing the knowledge level of farmers. One of the important objectives of doordarshan is to provide essential knowledge and information in order to stimulate greater agricultural production. Agricultural information is disseminated to the farmers through krishi darshan programme. The value of any programme can only be judged through audience participation and response. IT was therefore, felt necessary to study the perception and usefulness of televiewers of Krishi Darshan Programme of Doordarshan. Medium levels of perception of the tribal farmers viewing Krishi Darshan Programme of Doordarshan were expressed by majority of respondents. In detail the overall result of level of perception revealed that majority (45.33 %) of the tribal farmers had medium level of perception towards overall agricultural practices through Krishi Darshan Programme of Doordarshan followed by low level of perception (31.33%) respondents and high level of perception (23.34%) respondents, respectively.

There is a greater need for a rapid transfer of these agricultural technologies to the farmers. But to carry the information to the farmers living in more than 5 lakhs villages spread all over the country is a difficult and gigantic task of communication.

The use of different mass media can be resorted to transfer the latest technology to fammers. Radio is one of the most powerful media but T.V. as audio-visual and has the distinct advantage over radio. Further folders etc. have very written work in the form of Bulletin, Newspaper. Leaflets bulletins restricted use and scope with the problem of mass illiteracy still trevelent in the rural society. The seminar, mass media, and adult literacy organised by the Indian institute of Mass Communication in October, 1966 for greater use of media particularly radio and T.V. in order to make the literacy campaign successful. However, more stress was given on the use of television.

Objectives Of The Study : The main objectives of this study is to know general opinion of the farmers of Ajmer district, regarding agricultural programmes telecasted for Ajmer farming audience.

The study includes following specific objectives :

1. To study the creditibility of T.V. as a source of information in relation to other sources such as formal, informal and media.
2. To find the sustainibility of the Telecast with reference to their timings, duration and contents of agriculture programme perceived by the respondants.
3. To obtain suggestions of the respondants regarding the agricultural programmes.

Research Methodology

Area Of The Study : Television, the highly sophisticated media, has been dissemi nating the information in areas like agriculture, family planning, national integration, education, health and hygiene and entertain ment programmes in Ajmer district for last more than four years. It was felt necessary to assess the opinion of the consumers regarding these programmes.

The present study was designed to cover only the agricultural area amongst all the areas of information. The socio economic status of the audience has been studies in this investigation with a view to know, as to what type of audience watches the T.V. programmes.

The attitude of the televiewers regarding agriculturel programmes and suitability of the telecast with reference to their timings, duration and contents of agricultural programmes was also included in the present study. Investigator also felt it necessary to obtain suggestions of the respondents for further improvement in the agricultural programmes. The study was, therefore, planned in view of all the above aspects of investigation.

Area Of Study: Ajmer transmission offers an opportunity

*Lecturer (Agriculture Extension) Govt. College, Tonk (Raj.) INDIA

of its telecast services, which are confined to Ajmer district only. Obviously the area of study for the present investigation was the Ajmer district of Rajasthan state.

Selection Of Villages And Respondents: The list of villages from Ajmer district having T.V. sets, at community places was obtained by the investigator personally from the office of the rural broadcasting (radio and television), Jaipur & villages were selected where more than 40% of the population is having T.V. sets. From each selected village 15 respondents were selected randomally having T.V. sets of their own. respondents were regular viewers. These

Table 1: Showing the selection of the following villages under study

S.	Name of the villages	Number of respondents selected
1.	Arani	15
2.	Bhinai	15
3.	Praneheda	15
4.	Shri Nagar	15
5.	Selora	15
6.	Masuda	15
7.	Pisangan	15
	Total	105

Selection Of The Respondents : With a view to cover a sizeable number of respondents in the fold of present investigation, an attempt was made to contact atleast 15 farmers from each selected village, who have watched the agricultural programmes.

Result And Discussion

Source Credibility: This part deals with the fifth objective (importance of television as a source of information in relation to other sources of media).

All the possible sources were divided into three groups that is formal sources, informal sources, and mass media. The responses were collected on a 3 point scale ranging from highly preferred to least preferred.

The mean score for each source was calculated which was in the range of it. Three different groups of agricultural sources alongwith their frequencies, percentage and mean score are presented in the table from 11 to 14.

The popularity of agricultural scientists in Ajmer District is because of a Dayanand Agriculture College, Krishi Gayan Kendra (Rajasthan Agricultural University Project) and District level agriculture department, Govt. of Rajasthan are there. Most of the farmers are progressive so agricultural scientists lives in direct and intensive contact with the progressive farmers and feeds the latest technical know-how to the farmers.

Farmers Preferences For Different Sources In TV : The responses under this aspect is further classified into three groups and a seperate table for all the three groups is presented in subsequent para.

Table 1.1: Farmers preference for formal sources

S.	Preferences of sources	Highly prefer -ed	Prefer -ed	Least prefer -ed	Total score	Mean score	Rank order
1.	V.L.W.	72	17	16	226	2.53	I
2.	Gram Panchayat	2	40	63	149	1.42	IV
3.	Youth Club	-	-	-	-	-	-
4.	Agriculture Extn.Officer	19	31	55	174	1.66	III
5.	Co-operative Society	3	9	93	120	1.14	V
6.	Agriculture Scientist	15	45	45	180	1.71	II

Table 1.1 reveals that, out of 105 farmers, 72 farmers have given first preference to the village extension worker (mean sore 2.53) as the source of agricultural information. Village Extension were ranked first, Agriculture scientists worker ranked second with the mean, mean sore of 1.71 and agriculture extension officer (mean score 1.66) ranked third in order of preferences. Whereas youth club have not been preferred by cent-percent farmers and co operative societies are the least preferred by the farmers. Gram Panchayat ranked fourth, (mean score 1.4). It seems that Gram panchayats are not active well.

The earlier work of Singh and Singh 1971, Chole 1977 and Singh 1971 support the above findings that agricultural village extension workers was the most credible source of agricultural information.

Table 1.2 : **Farmer's Preference for Informal Sources**

S.	Preferences of sources Informal	Highly prefer -ed	Prefer -ed	Least prefer -ed	Total score	Mean score	Rank order
1.	Neighbour	19	25	61	168	1.60	IV
2.	Relative Friends	16	42	47	179	1.70	II
3.	Village Leader	13	44	48	175	1.67	III
4.	Progressive Former	39	22	44	205	1.95	I

Table 1.2 reveals that out of 105 farmers, 39 farmers have given first preference to the progressive farmers as the source of agricultural information. Relatives and friends are ranked second. The village leader and neighbours are placed third and fourth in order of preference. Neighbours are the least preferred source by almost all the farmers under study.

Progressive formers might have been ranked first because they were innovators and well to do farmers. They have a good knowledge about agriculture and people have greater faith on them because they belong to same village.

The past work of Podheria and Patel 1975 support the above findings that community sources are the most credible sources of agricultural information.

Table 1.3 Farmers' preference for Different Communication Media/Channels in TV Villages

S.	Preferences of sources information	Highly prefer -ed	Prefer -ed	Least prefer -ed	Total score	Mean score	Rank order
1.	Demonst -ration	29	24	52	187	1.78	III
2.	Radio	42	35	28	224	2.13	I
3.	Film	-	-	-	-	-	-
4.	Television	40	17	48	202	1.92	II

As regards preferences for different communications media/channels it is observed that out of 105 farmers, 42 farmers have given first preference to radio and thus radio ranked first (mean score 2.13) of the four different media/ channels. Television with 1.92 mean score came next (second) Demonstration is placed at third position mean score 1.78), whereas film is totally ignored by cent percent farmers.

The findings shows that the television got the second place. It might be due to the fact that both the senses "Hearing and seeing are working in television. The findings thus support the previous results of Singh and Sharma 64.

A glance at table 14 brings the fact that out of different sources of agriculture information including informal, formal and communication media/channels, village extension worker is ranked first with mean score 2.53. Except four all the 105 farmers of NV villagers, considered village extension workers the most credible source.

Table 1.4 : Farmers' Preferences for DIfferent Sources in TV Villages

S.	Preferences of sources information	Highly prefer -ed	Prefer -ed	Least prefer -ed	Total score	Mean score	Rank order
(A)	FORMAL :						
1.	Village Extension Worker	72 (68.57)	17 (16.19)	16 (15.24)	226	2.53	I
2.	Gram Panchayat	2 (1.90)	40 (38.10)	63 (60.00)	149	1.42	XI
3.	Youth Club	-	-	-	-	-	-
4.	Agricultural Extension Officer	19 (18.10)	31 (29.52)	55 (52.38)	174	1.66	IX
5.	Co-operative Society	3 (2.86)	9 (8.57)	93 (88.57)	120	1.14	XII
6.	Agricultural Scientist	15 (14.29)	45 (42.86)	45 (42.86)	180	1.71	VI
(B)	INFORMAL :						
1.	Neighbour	19 (18.10)	25 (23.81)	61 (58.10)	168	1.60	X
2.	Relative & friends	16 (15.24)	42 (40.00)	47 (44.76)	179	1.70	VII
3.	Village leader	13 (12.38)	44 (41.90)	48 (45.71)	175	1.67	VIII
4.	Progressive leader	39 (37.14)	22 (20.95)	44 (41.90)	205	1.95	III
(C)	MEDIA :						
1.	Demonst -ration	29 (27.62)	24 (22.86)	52 (49.52)	187	1.78	V
2.	Radio	42 (40.00)	35 (33.33)	28 (26.67)	224	2.13	II
3.	Film	-	-	-	-	-	-
4.	Television	40 (38.10)	17 (16.19)	48 (45.71)	202	1.92	IV

Note : Give the percentage for each frequency in the brackets marked above.

agricultural information. V.E.W. lives in direct and intensive contact with farmers. Radio is ranked second followed by village extension workers. Progressive formers are placed in third as a source of agricultural information.T.V. is the fourth preferential source, (mean score 1.92).

The findings might be due to the good knowledge of progressive farmers. They are innovators. Progressive farmers belong to same village so people have faith in them.

Agricultural scientists are placed in sixth position. The possible reason might be due to the fact that College of Agriculture, Krishi Gayan Kendra and District Agriculture department so farmers would like to get the information from the scientist, about latest technical knowledge. Demonstration gets fifth place in order of preference. Gram Panchayats and co- operative society get 11th and 12th rank. T.V. obtained fourth place. It might be due to the lack of personal touch by the televiewers and lack of interest to see the television programmes.

Thus the findings support the previous researches of Singh and Singh 1971 Chole 1977 Padheria and Patel 1975, and Singh 1973.

Table 1.5: Timings of Agricultural Programmas as suggested by Farmers

N = 105

Suitability of the present time. Yes = 56.00 (53.33)
No. = 49.00 (46.67)
Total = 105 (100.00)

Suggested time by the farmers N = 49

S.	Contests	Frequency	Percentage
1.	After 8.00 PM.	20	19.05
2.	6.30 to 7.00 PM	9	8.57
3.	1.30 to 2.00 at Noon	12	11.43
4.	Changing in time according season	8	7.62
	Total	49	46.67

Suitability Of Agricultural Telecast With Reference To Timings, Duration And Contents Of Agricultural Programmes:

This part deals with the fifth objective of the study that is to find out the suitability of the telecasts with reference to their timings, duration and contents of agri- cultural programme.

The frequencies were observed for each aspect and

per- centage were worked out as shown in tables given in this part.

Table 15 reveals that out of 105 farmers, 56 farmers did not like any change in timings, whereas 49 famers wanted to change in timings. It means majority of the farmers did like change in timings.

Out of 49 fammers, 46.67 per cent respondents wanted to start the programme at 8.00 pm, whereas only 8.57 per cent respondents wanted to start at 6.30 to 7.00 am.. 7.62 per cent respondents wanted to change in timings according to season. About 20.63 per cent respondents wanted to change in tigings at 1.30 to 2.00 noon.

Farmers might be in favour or changing the timings of the telecast because during present time they remain on their field upto 7.30 p.m. and after that they can view the TV conveniently. The earlier work of Padaonkar 1976, Mehra 1976 have supported the above findings.

Table 1.6: Duration of agricultural programe as suggested by farmers

N=105

S.	Contests	Frequency	Percentage
1.	Ten minutes twice in week	13	12.38
2.	Daily five minutes	15	14.29
3.	Fifteen minutes in week	11	10.48
	Total	39	37.15

From table 1.6, it appears that out of 45 respondents, 39 respondents wanted to increase duration of Agricultural programme. The present duration is only 10 minutes in a week.

Out of 39 farmers, 14.29 per cent farmers wanted the duration of the agricultural programme to be daily five minutes whereas 12.38 per cent farmers wanted the duration to be 10 minutes twice in a week. Remaining 10.48 per cent farmers want- ted the duration to be 15 minutes in a week.

It appears to be genuine to increase the duration of agricultural programme.

This findings are in confirmity with those of Mishra and Sharma 1967 Anomyous 1982-83.

Table 1.7 : Contents of Agricultural programme as suggested by the farmers

S.	Sutability of Present contents	No.of Respondents	Percentage
1.	Yes	53	50.48%
2.	No	52	49.52%
	Total	105	100.00%

S.	Contests	Frequency	Percentage
1.	Monthly calender of farming operation	11	10.48
2.	About latest agri- cultural technology	15	14.29
3.	Dry farming practices	8	7.62
4.	Irrigated farming practices	6	5.71
5.	About the source of agricultural imports and loan.	9	8.57
6.	Technical guidance about crop production	3	2.86
7.	Marketing	-	-
	Total	52	49.52

Table 1.7 reveals that out of 105 farmers, 53 respondents like the present contents of agricultural programmes. 52 respondents wanted to change the contents of agricultural programmes.

Out of 105 farmers, 1429 per cent farmers wanted information about latest agricultural technology, whereas only 7.62 percent wanted information about dry faming. It might be because of area covered in research study is almost irrigated. Not a single farmer wanted information about marketing. It may be causes of now a days farmers are aware about marketing.

10.48 per cent farmers wanted information about monthly calender of farming operation, 8.57 percent farmers wanted information about the source of inputs and loans whereas only 2.86 per cent farmers wanted information about technical guidance about Crop Production.

It might be because the majority of the farmers are progressive. So most of the farmers know about the crop production but they wanted latest agricultural technology.

Table 1.8 : **Watching of Agricultural Programme**

S.	Contents	No.of percentage	Percentage
1.	Regular	20	19.05
2.	Irregular	52	49.52
3.	Casual	33	31.43
	Total	105	100.00

It shows that majority of the farmers were viewing the TV programmes irregularly. Out of 105 farmers, 19.05 farmers viewing the TV programme regularly, this appears to be a healthy trênd and angurs well for the continuity of television. It also proves that majority of the farmers were interested in the agricultural programme. However, some of the farmers i.e. 31.43 per cent and 49.52 percent did not view the programme regularly. Most of the farmers among the irregularly watching TV programmes, said that they were not having prior information about the coming programmes and, therefore, they could not choose the item of their choice. They were of the opinion that were interested only in the programmes which were of their use. The second reason advanced was that the timings was not suitable.

Almost all the farmers were interested in agricultural programmes. They wanted to gain knowledge about the new practices, side by side, they reported that they were also entertained by television.

Table 1.9 :Showing Farmers suggesion regarding improvement of Agricultural programmes.

S.	Suggestion	No.of respon -dent	Percentage
1.	More emphasis should be on local crop.	54	51.43
2.	Local progressive formers should be involved while formulation farmers' programme.	37	35.24
3.	Field of local should be in flashed on screen.	24	22.86
4.	Language of the programme should be in local dialect.	78	74.29
5.	Important agricultural programme should be telecast again.	33	31.43
6.	Forth coming programmes should be intimated in advance.	20	19.05
7.	Any other suggestions, if any.	22	20.95

Suggestions To Improve The Agricultural Programme As Perceived By The Farmers :

It is evident from the above table that almost all the farmers were interested in agricultural programmes. Farmers gave the suggestion to make the agricultural programme more effective.

Out of 105 farmers, 54 (51.43) percent farmers were in favour that the preference should be given in agricultural programme to local crops, 35.24 percent farmers suggested that local progressive farmers should be involved while formulating farmers' programme. 31.43 farmers suggested that important agricultural programme should be telecast again 74.29 percent farmers got the difficulty in language. Language of telecast is the local language but the farmers wanted the technical words also in local dialect and also in simple formet. 10.05 percent farmers suggested that forth coming programmes should be intimated in advance so that they could choose the items of their choice. They were of the opinion that they were interested only in the programmes which were of their use. 22.86 percent farmers suggested that field of local farmers should be flashed on screen for looking realistic.

Conclusion :

1. Overall farmers preferred progressive farmers as the most credible source of agricultural information followed by agricul- tural scientist, V.L.W. and television.
2. Most of the farmers wanted A increase in the duration of agricultural programme and change in the timing.
3. Most of the farmers wanted information about the latest agricultural technology.
4. Majority of the farmers viewed the agricultural pro- grammes regularly.
5. Suggestion given by the famers to make agricultural programe more effective were more emphasis should be on local crop, local progressive farmers should be involved while formulating farmers' programme and important agricultural programme should be telecast again.

References :-

1. Sekhon, I. (1970). The effectiveness of Television as a medium of communication for imparting scientific know how to the farmers. Ind. J. Extn. Edu. Vol. VI (1&2) : p. 90-95.
2. Singh, D. and Singh, M.R. (1971). Farmers Perception of Credibility pattern of source of Information. Ind. J. Extn. Edu. Vol. VIII (3 & 4) : p. 78.
3. Singh, J. (1973). Farm Televast, A Service for Farmers. A paper published, Indian Institute of Mass Communication, New Delhi, p. 1-6.
4. Dey, P.K. and Sharma, S.K. (1970). Relative Effectiveness of Radio and TV as Mass communication media in dissemination of Agril. Information. Ind. J. Extn. Edu. Vol. VI (I & 2) 70 : p.62-67.
5. Kaur, R. (1970) " Impact of Television on farm women "Unpublished M.Sc. Thesis I.A.R.I., New Delhi.

****

प्राचीन भारतीय राजव्यवस्था में गुप्तचर संगठन तथा उनकी कार्यप्रणाली

डॉ. सोमेश कुमार सिंह*

शोध सारांश – किसी भी देश की सुरक्षा व्यवस्था मैं गुप्तचर व्यवस्था का महत्वपूर्ण योगदान होता है। भारत में गुप्तचर व्यवस्था अति प्राचीन काल में मौजूद थी। ऋग्वेद के अध्ययन से ज्ञात होता है कि ऋग्वेदिक राजनीतिक जीवन में गुप्तचर व्यवस्था का उदय हो चुका था। प्राचीन भारतीय ग्रन्थों जैसे अथर्ववेद,कामानंदक नीति शास्त्र,तथा रघुवंश मे गुप्तचरों को राजा का नेत्र बताया गया है । क्योंकि राजा अपने पूरे राज्य की सूचनाओं को स्वयं प्राप्त नहीं कर सकता था इस कारण वह गुप्तचरों के माध्यम से संपूर्ण राज्य की सूचनाएँ प्राप्त करता था। गुप्तचर प्रणाली का विस्तृत रूप हमे कौटिल्य के अर्थशास्त्र में दिखाई देता है । गुप्तचर का कार्य करने हेतु मूक–बधिर, संन्यासी, परिव्राजक, भिक्षुक, गणिकाओं का प्रयोग किया जाता था । अर्थशास्त्र में हमें गुप्तचरों की गुप्त संकेत प्रणाली का भी उल्लेख प्राप्त होता है। प्राचीन भारतीय राज्यों में सामंतों ,कुलीनों तथा जनता पर दृष्टि रखने के लिए गुप्तचरों का जाल सम्पूर्ण राज्य में फैला रहता था। ये गुप्तचर नगरों तथा गांवों में घूम घूमकर राजा के प्रति जनता के भावों का पता लगाते थे तथा विभिन्न सूचनाएँ एकत्र कर राजा तक पहुँचाते थे । इन गुप्तचरों की नियुक्ति के लिए निर्धारित योग्यता का होना अतिआवश्यक था । अति विश्वास पात्र व्यक्तियों को ही गुप्तचर व्यवस्था में सम्मिलित किया जाता था । गुप्तचरों द्वारा दी गई सूचनाओं पर आँख मूंदकर विश्वास नहीं किया जाता था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र के अनुसार गुप्तचरों की सूचना की पुष्टि किये बिना उस पर कार्रवाही नहीं की जाती थी गुप्तचरों द्वारा दिए गए समाचारों के गलत पाए जाने पर गुप्तचरों को गुप्त रूप से दंडित किया जाता था तथा उन्हें अपने पद से हटा दिया जाता था ।

शब्द कुंजी – प्राचीन काल, गुप्तचर, चर, संस्था, राजा, नगर ।

प्रस्तावना – किसी भी शासन व्यवस्था के कुशल तथा सफल संचालन के हेतु दूत व गुप्तचर व्यवस्था का होना अति आवश्यक है ।प्राचीन भारत में गुप्तचर व्यवस्था का महत्वपूर्ण स्थान था ।राज्यों की राजव्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने के लिए गुप्तचर महत्वपूर्ण साधन हुआ करते थे । राज्यों की आंतरिक तथा बाहरी बातों की जानकारी गुप्तचर व्यवस्था द्वारा ही संभव थी। भारतीय ग्रन्थों में गुप्तचर प्रणाली का विस्तृत वर्णन मिलता है। इन ग्रंथों से ज्ञात होता है कि भारतीय शासन व्यवस्था में गुप्तचर संस्था ठोस और महत्वपूर्ण संस्था थी। भारतीय गुप्तचर व्यवस्था का स्वरूप अत्यंत जटिल तथा रहस्यमय था । गुप्तचरों द्वारा प्रयुक्त प्रणाली इतनी प्रभावशाली तथा व्यवस्थित थी कि जिस पर आज भी आश्चर्य किया जाता है ।

मनुष्य स्वभाव से जिज्ञासु प्राणी रहा है । अपने विरोधियों, प्रतिद्वंद्वियों, शत्रुओं तथा स्वयं अपने बारे में दूसरों के विचार जानने की स्वाभाविक जिज्ञासा मनुष्य में होती है। संभवत मनुष्य की इसी जिज्ञासु प्रवृत्ति ने गुप्तचर व्यवस्था को जन्म दिया होगा । गुप्तचर व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था थी जिसकी आवश्यकता स्थायी रूप से बनी रहती थी और यह आवश्यकता किसी भी युग में कम नहीं होती थी। संकटकाल में गुप्तचरों की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती थी। शत्रु खेमे में पल पल पर घटने वाली घटनाओं की सूचना राजा तक पहुँचना आवश्यक होता था। इस कारण प्रत्येक युग में प्रत्येक शासक अपनी गुप्तचर व्यवस्था को समय समय पर परिष्कृत करता रहता था।

प्राचीन काल में राजा का प्रमुख कर्तव्य प्रजा की रक्षा करना होता था। सभी शास्त्रकारों ने एक स्वर से राजा को लोक हितकारी व्यवस्था स्थापित करने की सलाह दी है। प्रजा की वास्तविक स्थिति का पता लगाना राजा का प्रमुख कर्तव्य होता था। प्रजा के सुख दुखों को जानने के लिए राजा के पास समुचित गुप्तचर व्यवस्था का होना आवश्यक था । अत: भारतीय राजा गुप्तचरों को प्रजा के बीच बीच भेज कर प्रजा के कष्टों, भावनाओं, सुख:दुखों, पीड़ाओं का पता लगाते रहते थे। प्रजा की सुख शांति तथा शासन विरोधियों की सूचनाएँ राजा तक पहुँचाने का कार्य ये गुप्तचर ही करते थे।इस संबंध मे प्रसिद्ध विद्वान शाम शास्त्री का कहना है[1] कि वैदिक काल में गुप्तचरों का कार्य दीवानी,फौजदारी मामलों में अर्थी–प्रत्याथी और साक्षियों के व्यक्तव्यों की सत्यता की जाँच करना ही ना था बल्कि हानिकारक प्रवृति वाले व्यक्तियों की गतिविधियों पर भी ध्यान रखना था। राज्य में अपराध करने वाले ही नहीं अपितु धार्मिक और सामाजिक व्यवस्था को नष्ट करने वालों का पता लगाना भी उनका कार्य था।

महाभारत में गुप्तचरों की गतिविधियों की सूचना हमें प्राप्त होती है ।इस युग मे राजकीय कर्मचारियों की गतिविधियों पर नजर भी गुप्तचरों के माध्यम से ही रखी जाती थी। शत्रु के मित्रों में फूट डालने का काम भी गुप्तचरों से ही कराया जाता था। इस युग में प्रजा के मनोभाव का पता लगाना ,प्रजा के राजा के प्रति दृष्टिकोण, राज नीतियों के प्रति जनता का मत, इत्यादि का पता लगाने का काम भी गुप्तचरों द्वारा ही किया जाता था। महाभारत का कहना है कि कि गुप्तचरों को राष्ट्र में घूमते रहना चाहिए, तथा सभासदों आदि के कार्यों एवं उनकी मनोभावों को ज्ञात करके राजा के पास समाचार पहुँचाते रहना चाहिए।[2] गुप्तचरों की नियुक्ति अपने राज्य की सूचनाओं को प्राप्त करने के साथ साथ पड़ौसी या अन्य राज्यों की गोपनीय सूचना प्राप्त

* व्याख्याता (इतिहास) शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

करने के लिए भी की जाती थी। विदेशों में भेजे जाने वाले गुप्तचर बेहद गोपनीय तरीके से राजमहल, अमात्य, कर्मचारियों, सेना तथा प्रजा की सूचनाएँ प्राप्त करते थे तथा उन्हें अपने राजा तक पहुँचाते थे।

कौटिल्य ने अपने ग्रन्थ अर्थशास्त्र में गुप्तचर व्यवस्था के बारे में काफी लिखा है। कौटिल्य के द्वारा स्थापित राज्य को यूनानियों नन्द समर्थकों तथा राज्य विरोधियों से खतरा था अत: कौटिल्य राज्य की सुरक्षा हेतु अत्यंत सावधान है तथा इस कार्य हेतु गुप्तचर व्यवस्था पर अत्याधिक बल देते हैं। कौटिल्य देश के आंतरिक भागों में तो गुप्तचर व्यवस्था की मजबूती देखना चाहते हैं इसके साथ ही वे विदेश नीति में मित्र, उदासीन शत्रु राज्यों के लिए भी गुप्तचर व्यवस्था को अनिवार्य मानते हैं। कौटिल्य के गुप्तचर विदेशी राज्यों में जाकर गुप्त भेदों उनकी सैनिक शक्ति की जानकारी प्राप्त करके अपनी राजा तक पहुँचाते थे। ये गुप्तचर कभी कभी राज्य मंत्रियों में परस्पर वैमनस्य पैदा करके अपना हित साधा करते थे। उनके अनुसार विदेश में मौजूद गुप्तचर प्रजा तथा राजा समर्थक वर्ग को राजा के विरुद्ध उकसाकर अपनी ओर मिलाने का कार्य करते थे। ऐसे गुप्तचर अपनी जान की परवाह किए बिना अपनी पहचान छिपाकर विदेशी राज्यों में अपना कार्य किया करते थे।

हमें प्राचीन मगध राज्य में शक्तिशाली गुप्तचर व्यवस्था के प्रमाण मिलते हैं। मगध सम्राट् अजात शत्रु लिच्छवियों के विरुद्ध लगातार गुप्तचरों का प्रयोग करता था। अजात शत्रु जब किसी भी प्रकार लिच्छवियों में फूट नहीं डाल पाया तो उसने अपने मंत्री वसकार को महात्मा बुद्ध के पास भेजा था।वसकार ने महात्मा बुद्ध से लिच्छवियों की शक्ति का रहस्य तथा उन्हें नष्ट करने का उपाय जानना चाहा था। महात्मा बुद्ध लिच्छवि तथा अजातशत्रु दोनों से ही प्रेम करते थे अत: वसकार के आग्रह पर अपने शिष्य आनंद को संबोधित करते हुए उन्होंने लिच्छवियों की सात विशेषताओं के बारे में वसकार को बताया था जो कि लिच्छवियों की शक्ति का कारण थे।[3] वसकार ने अजातशत्रु के गुप्तचर के रूप में वैशाली जा कर लिच्छवियों में फूट डाल दी।फूट के कारण लिच्छवि एक होकर अजातशत्रु का सामना नहीं कर सके।[4] स्पष्ट था कि मगध राज्य की गुप्तचर प्रणाली इतनी सशक्त थी कि उसके बल पर उसने लिच्छवि जैसे शक्तिशाली गणराज्य को भी नष्ट कर दिया था।

रामायण काल तक आते आते एक सुदृढ़ राज व्यवस्था स्थापित हो चुकी थी। इस व्यवस्था के कुशल संचालन हेतु भी सुगठित गुप्तचर व्यवस्था की आवश्यकता थी। रामायण के अनुसार राजा के लिये यह आवश्यक था कि वह अपनी मंत्रणा को गुप्त रखे। राजा व राज्य हित में गोपनीयता अति आवश्यक होती थी। रामायण काल में राजा की न्याय व्यवस्था को निष्पक्ष एवं संदेह रहित बनाने के लिए सही तथ्यों की जानकारी गुप्तचरों से ही कराई जाती थी राजा दशरथ के अमात्यों की प्रशंसा करते हुए रामायण में लिखा है कि अपने व शत्रु पक्ष के राजाओं की कोई भी बात इनसे छिपी नहीं है। दूसरे राजा क्या करतें हैं,क्या कर चुकें हैं और क्या क्या करना चाहते हैं ये सभी बातें गुप्तचरों द्वारा उन्हें ज्ञात हो जाती थीं।[5] रामायण तथा महाभारत कालीन गुप्तचर व्यवस्था मौर्य युग तक आते आते अपने चरम पर पहुँच गई थी। मौर्य साम्राज्य तो पूरी तरह गुप्तचर व्यवस्था पर टिका था।

गुप्तचर की योग्यता– प्राचीन साहित्य के अध्ययन से पता चलता है कि गुप्तचर की नियुक्ति में अत्यन्त सावधानी रखी जाती थी। गुप्तचर व्यवस्था को नियंत्रित तथा सुव्यवस्थित बनाये रखने के लिये कठोर नियमों का प्रावधान किया गया था। प्रत्येक गुप्तचर को इन नियमों की कसौटी पर परखा जाता था। गुप्तचरों की नियुक्ति में राजा की महत्वपूर्ण भूमिका होती थी। गुप्तचरों की नियुक्ति में किसी भी तरह का हस्तक्षेप स्वीकार नहीं किया जाता था। मनु ने अपने ग्रंथ में मनुस्मृति में गुप्तचरों हेतु विशेष योग्यताएँ निर्धारित की हैं। रामायण के अनुसार गुप्तचर विश्वास पात्र, शूरवीर, धीर, निर्भीक आदि गुणों से युक्त होना चाहिए।[6] महाभारत ऐसे व्यक्ति को गुप्तचर नियुक्ति करने की सलाह देता है जिसकी अच्छी तरह से परीक्षा ली जा चुकी हो,जो बुद्धिमान हो,भूख–प्यास सहने तथा परिश्रम करने की योग्यता रखता हो तथा जो अपने ही राज्य में निवास करता हो।[7] शुक्रनीति के अनुसार जो शत्रु तथा प्रजा जन के व्यवहार को जानने वाला हो, यथार्थ बातों को सुनकर उन्हें ठीक–ठीक बताने वाला हो।[8] कामानंदक नीति शास्त्र भी गुप्तचरों में वे ही गुण देखना चाहतें हैं जो अन्य स्मृति कार या महाकाव्य के लेखक देखतें हैं।उनके अनुसार गुप्तचर में इतनी योग्यता होनी चाहिए कि वह लोगों के मन की बात को जान सके,उसकी स्मृति शक्तिशाली हो,मधुर भाषी हो।[9]

गुप्तचरों की कार्य प्रणाली– गुप्तचरों का कार्य तथा क्षेत्र अत्यंत व्यापक था। इसी कारण गुप्तचरों की कार्यशैली उनको सौंपे गए कार्यों के अनुसार अलग अलग होती थी। कभी कभी गुप्तचरों का एक महत्वपूर्ण कार्य पड़ोसी राज्यों के राजाओं के बारे में जानकारी प्राप्त करना होता था। ये गुप्तचर इस बात का पता लगाने का प्रयास करते थे कि शत्रु राजा उनके राजा के प्रति कैसा भाव रखता है। कौन राजा का मित्र है तथा कौन शत्रु। ऐसे कार्यों को ये गुप्तचर बहुत ही गुप्त तरीकों से संपन्न करते थे। अगर अपना कार्य करते हुए गुप्तचर का भेद खुल जाता था तो भी ये गुप्तचर इतने प्रशिक्षित होते थे कि वे अपना आत्मविश्वास नहीं खोते थे तथा अपने गुढ रहस्यों को उजागर नहीं करते थे। ये गुप्तचर अपने कार्यों को सम्पन्न करने के लिए छद्मवेश में निरंतर परिवर्तनशील भेषभूषा और कृत्रिम परिवेश का आश्रय लेते थे।[10]

गुप्त वेश में घूमते ये गुप्तचर अत्यंत जोखिम उठाकर भी अपना कार्य करते थे। इस संबंध में मनुस्मृति में लिखा है कि जिस प्रकार विजिगीषु राजा गुप्त परिधान मे नियुक्त अपने अधिकारियों द्वारा सभी गन्तव्य एवं अनान्तवय स्थानों में प्रवेश पा सकता है।[11] हमें ज्योतिषी वेशधारी गुप्तचरों का भी उल्लेख मिलता है। रसोईयों के रूप में भी हमें गुप्तचर दिखाई देते हैं। सैनिकों के बीच भी गुप्तचर मौजूद रहते थे। रुपवती स्त्रियों को भी गुप्तचर व्यवस्था में लगाया जाता था। ये स्त्रियां शत्रुओं के बीच वैमनस्य पैदा करने का काम किया करती थी। ये स्त्रियाँ आसानी से शत्रु सेना के विभिन्न विभागों में घुल मिल जाती थी और अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर लेती थी। गुप्तचर परम रूपवती स्त्रियों द्वारा सैनिक अधिकारियों को कामासक्त करा दें वे ऐसी रूपवती स्त्रियों को देखकर निश्चित ही अपने कर्तव्य का निर्वहन नहीं कर सकेंगे।[12]

गुप्तचरों की कार्यशैली का ही एक रूप भेदनीति भी होता था। भेदनीति द्वारा गुप्तचर शत्रु पक्षों के आपके रिश्तों के बीच मतभेद पैदा करने का प्रयास करते थे। शत्रु पक्ष में विघटन ही इनका उद्देश्य होता था ताकि विघटन के बाद आसानी से उस पक्ष को जीता जा सके। भेद नीति के कई उदाहरण हमें रामायण तथा महाभारत से प्राप्त होते हैं प्रतिपक्षी राज्यों के मंत्रियों, अधिकारियों,सेवकों में राजा के प्रति विद्वेष पैदा किया जाता था। आचार्य बृहस्पति ने इस नीति का समर्थन किया है और राजा को निर्देश दिया है कि वह राज्य प्रसारण के लिये युद्ध का प्रयोग न करके कूटनीति,साम,दान,भेद का प्रयोग करे।[13] विजिगीषु राजा को अच्छी तरह सतर्कता के साथ शत्रु राजा की दुर्बलताओं और प्रजा मे उसकी चारित्रिक अवधारणा को जानना चाहिए। यह भी पता लगाना चाहिए कि शत्रु राजा के आदेशों का दूर तथा

निकट प्रदेशों में पालन होता है या नहीं ।शत्रु राजा के राज्य में बुद्धिजीवी वर्ग ,सैनिक ,विदेशी अतिथि एवं स्वतंत्र विचार वाली प्रजा गणों का अपमान या निंदा तो नहीं होती।यह भी जानकारी करे ।[14]

गुप्तचरों की कार्यशैली में भ्रामक,आधारहीन ,भड़काऊ संदेश या सूचना फैलाना भी शामिल था। भ्रामक सूचनाओं से राजा अपने पक्ष में माहौल बना सकता था ।प्राचीन भारतीय राज्यों की यह बहुत बड़ी विशेषता थी कि प्रत्यक्ष आक्रमण के स्थान पर कूटनीति द्वारा प्रति पक्ष को पराजित करने का प्रयास किया जाता था। तरह तरह की भ्रांतियां फैलाकर शत्रु राज्य को विघटित करने का प्रयास गुप्तचरों द्वारा किया जाता था। जनता तथा अमात्यों के बीच में काल्पनिक बातों का प्रसार करके विजिगीषू राजा शत्रु को कमजोर कर देता था। इस कार्य में गुप्तचरों की भूमिका महत्वपूर्ण होती थी। शत्रु राज्यों के प्रति तथा उसके मित्र समूह में दुर्भावना,शासन तथा राजा के प्रति नफरत का भाव पैदा करना गुप्तचरों का प्रमुख कार्य होता था।मनु ने भी विजय हेतु साम,दान ,भेद नीति का ही समर्थन किया है ।[15] मनु विजय हेतु तुरंत युद्ध के समर्थक नहीं हैं। इन उपायों के असफल होने पर ही वे युद्ध की अनुमति देते हैं। मनु की सलाह है कि राज्याभिलाषी राजा को शत्रु के मंत्री,सेनापति को लोभ देकर अपनी और करना चाहिए।[16] मनु राजा को तत्काल युद्ध करने की सलाह नहीं देते क्योंकि युद्ध में जय पराजय अनिश्चित रहती है।[17] कौटिल्य भी मनु की बातों का समर्थन करते हुए साम दान भेद की नीति पर अधिक बल देतें हैं।

गुप्तचरों के प्रकार – प्राचीन भारतीय राज शास्त्रीयों ने गुप्तचर व्यवस्था पर गहन अध्ययन किया था ।प्राचीन चिंतक ये अच्छी तरह जानते थे कि किसी भी राजा तथा राज्य की सुरक्षा निरंतर सजगता के बिना संभव नहीं हो सकती ।सजगता तथा सतर्कता बिना गुप्तचर व्यवस्था के संभव नहीं हो सकती ।राज्य तथा राजा की सुरक्षा हेतु राजा के निकटतम संबंधी, अमात्य,सेना ,प्रजा ,शत्रु ,मित्र ,विदेशी राज्यों पर निगाह रखना अकेले राजा के लिए संभव नहीं था ।अत: गुप्तचरों द्वारा ही राज्य में मौजूद विभिन्न शक्तियों पर निगाह रख पाना संभव हो सकता था ।चूँकि गुप्तचर गोपनीय तरीके से राज्य के लिए काम करते थे अत: यह जरूरी होता था कि गुप्तचर विभिन्न रूपों में रह कर अपनी गोपनीय गतिविधियों को मूर्त रूप दें ।ये गुप्तचर प्रत्यक्ष रूप से राजा से जुड़े हुए होते थे तथा अधिकांशत: अपने कार्यों की सूचना राजा तक स्वयं पहुँचाते थे। प्राचीन भारतीय चिंतक यह मानते थे कि एक राजा के पास अपनी तथा अपने राज्य की सुरक्षा के लिए विश्वासपात्र गुप्तचरों का संगठन होना अतिआवश्यक है ।राज्य के पास जितना सुसंगठित गुप्तचर विभाग होता था राजा उतना ही अपने विरोधियों तथा प्रतिद्वंदियों से स्वयं तथा राज्य की रक्षा कर पाने में समर्थ होता था।

प्राचीन भारत में राज्य का एकमात्र कर्तव्य प्रजा का कल्याण करना होता था। प्रजा हित ही राजा का धर्म होता था । एक लोक हितकारी राजा अपने राजधर्म का पालम तभी कर सकता था जब वह प्रजा के जीवन की सही सही जानकारी प्राप्त करता रहे। राजा द्वारा चलायी जाने वाली लोकहितकारी योजनाएँ जनता तक पहुँच रही है या नहीं इस बात की जानकारी राजा तक समय समय तक पहुँचना आवश्यक था । राजा को सदैव ऐसे लोगों से खतरा था जो अपने कर्तव्यों का पालन ने करके प्रजा को परेशान करते थे । ऐसे कर्मचारियों के कारण राजा को प्रजा के कोप का भाजन बनना पड़ता था । ऐसी स्थिति में राजा के लिए यह आवश्यक होता था कि वह अपने राज्य की प्रत्येक घटनाओं व बातों पर स्वयं नजर रखे। गुप्तचर ही वह प्रणाली थी जिसके माध्यम से राजा सम्पूर्ण राज्य पर आसानी से नजर रख सकता था।

विभिन्न लेखकों ने गुप्तचरों के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख किया है । कौटिल्य ने गुप्तचरों के नौ प्रकारों का उल्लेख किया है । ये नौ प्रकार के गुप्तचर थे–कापाटिक, उदास्थित,गृहपतिक,वैदेहक,तापस, सत्री,तीक्ष्ण, रसद और भिक्षुकी।[18] कौटिल्य इन गुप्तचरों को पून: दो भागों में विभक्त करते हैं (1) संस्था गुप्तचर (2) संचार गुप्तचर। संस्था गुप्तचर वे होते थे जो कि एक स्थान पर रह कर अपना काम करते थे ।संचार गुप्तचर घूम घूम कर या निरंतर गतिशील रह कर अपना काम करते थे ।दोनों ही श्रेणियों को मिला कर कुल नौ प्रकार के गुप्तचरों का उल्लेख अर्थशास्त्र में मिलता है ।इन गुप्तचरों में कापाटिक,उदासीन,गृह पतिक,वैदेहक तथा तापस गुप्तचर संस्था गुप्तचर कहे जाते थे जबकि सत्रीन,तीक्ष्ण,रसद,भिक्षुकी या परिव्राजक गुप्तचर घूम घूम कर अपना काम करते थे । मनु ने संस्था गुप्तचरों की संख्या पाँच बताई है ।[19] कामानंदक ने भी गुप्तचरों के बारे में लिखा है ।वे भी गुप्तचरों को संस्था तथा संचार भागों में ही बाँटते हैं ।उनके अनुसार संस्था गुप्तचरों में वणिक,कृषि बल,लिंगी,भिक्षुक तथा अध्यापक सम्मिलित थे ।संचार या यायावर गुप्तचरों में तीक्ष्ण,परिव्राजक और रसद सम्मिलित होते थे।[20]

कात्यायन गुप्तचरों की कार्य प्रणाली के आधार पर उनका वर्णन करते हैं उनके अनुसार स्तोमक अल्प कालीन संदेश वाहक होता है जिसे निश्चित कार्यो के लिए धन मिलता था ।दूसरा गुप्तचर सूचक गुप्तचर होता था जिसका काम पुलिस को सूचना देना होता है ।[21] महाभारत मे भी गुप्तचरों की विभिन्न श्रेणियां का उल्लेख मिलता है ।महाभारत ने गुप्तचरों बहिश्चर और अन्तश्चर नामक श्रेणियों में विभाजित किया है। बहिश्चर गुप्चर वे होते थे जो कि विदेश में जाकर शत्रु राज्यों के बारे में जानकारी प्राप्त करते थे परन्तु जो देश के अंदर रहकर ही गुप्तचरी का काम करते थे उन्हें अन्तश्चर गुप्तचर कहा जाता था।कौरव-पांडव दोनों ने ही अन्तश्चर व बहिश्चर गुप्तचरों का प्रयोग थे।

अर्थशास्त्र में जिन संस्था तथा संचार गुप्तचरों का वर्णन किया है उनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है ।

संस्था गुप्तचर[22] ये पाँच प्रकार के थे –

कापाटिक गुप्तचर –ये गुप्तचर छात्र या विद्यार्थी गुप्तचर थे ।ये गुप्तचर राजा या अमात्यों के विरूद्ध किये जाने वाले षड्यंत्रों का पता लगा कर राजा या अमात्यों के सूचित करते थे ।

उदासीन गुप्तचर – ये गुप्तचर साधू या संन्यासी के भेष में रहते थे ।ये कृषकों व व्यापारियों के बीच रह कर उनमें अपना प्रभाव स्थापित करके उनके मनोभावों का पता लगाने की कोशिश करते थे तथा उनसे प्राप्त सूचनाओं को राजा तक पहुँचाते थे ।

गृहपतिक गुप्तचर – ये गुप्तचर गरीब कृषक के रूप में रहते थे परन्तु ये बुद्धिमान,शुद्ध आचरण वाले होते थे ।इन्हें कृषि हेतु भूमि राजा द्वारा दी जाती थी । ये गुप्तचर कृषकों के साथ रह कर उनके भेदों को जानने की कोशिश करते थे ।

वैदेहक गुप्तचर – ये गुप्तचर बुद्धिमान शुद्ध आचरण वाले होते थे ।ये व्यापारी का वेश धारण करते थे तथा राज्य की सहायता से अपना कार्य करते थे ।

तापस गुप्तचर – जीविकोपार्जन हेतु जटाधारी या सिर मुँड़ाए हुए राजा के लिये कार्य करनेवाला गुप्तचर तापस गुप्तचर होता था ।ये गुप्तचर नगर के निकट अपने शिष्यों के साथ निवास करते थे ।ये भविष्यवक्ता होने का ढोंग रचकर लोगों को अपना अनुयायी बनाते थे ।

संस्था गुप्तचर राजा के प्रति स्वामी भक्ति और कार्य की प्रतिबद्धता तथा समर्पण के आधार पर चयनित होते थे। राजा के प्रति इनकी पूर्ण निष्ठा होती थी। राजा को भी इन पर पूर्ण विश्वास होता था। ये गुप्तचर कठोर परिश्रमी तथा अपने लक्ष्य के प्रति समर्पित होती थे।

संचार गुप्तचर[23]

ये निम्न प्रकार के होते थे :-

सत्री गुप्तचर– ये गुप्तचर होते थे जो समुद्रिक विद्या, ज्योतिष ,व्याकरण,शुभ अशुभ फल बताने वाली विद्या ,धर्मशास्त्र ,इंद्रजाल ,कामशास्त्र ,वशीकरण, पक्षी शास्त्र तथा नाचने गाने वाली कला मे निपुण होते थे। मातृ –पितृ विहीन व्यक्ति को गुप्तचरी हेतु राज्य द्वारा प्रशिक्षित किया जाता था। अनेकों विद्याओं में निपुण ये गुप्तचर अपनी कलाओं के माध्यम से लोगों को आकर्षित करके उनके भेद लेते थे।

तीक्ष्ण गुप्तचर– ये गुप्तचर काफी निडर तथा शक्तिशाली होते थे। ये धन प्राप्ति हेतु अपने प्राणों की बाजी भी लगा दिया करते थे।ये हिंसात्मक प्रवृत्ति के होते थे। ये गुप्त रूप से राज्य के शत्रुओं का विनाश करते थे।

रसद गुप्तचर– ये गुप्तचर क्रूर,आलसी,अपने भाई बंधुओं पर भी विश्वास या स्नेह न करने वाले होते थे। इन गुप्तचरों में दया ,प्रेम जैसी मानवीय भावनाओं का अभाव होता था। ये गुप्तचर भी शत्रुओं का गुप्त रूप से विनाश करते थे।

भिक्षुक या परिव्राजक गुप्तचर – ये वे गुप्तचर थे जो आजीविका के इच्छुक दरिद्र ,प्रौढ़, विधवा,ब्राह्मणी, राजमहल में बेरोकटोक प्रवेश करने वाली, सम्मानित,अमात्यों के घर में प्रवेश करने वाली, संन्यासिनी के वेश में,भिक्षुकी के रूप में जासूसी करने वाली होती थी। ये प्राय: राजमहल की स्त्रियों तथा अन्य महिलाओं से घुल मिलकर उनके रहस्य जानने का प्रयास करती थी।अपने परिवेश के कारण ये अपनी पहचान आसानी से छिपा लेती थी और कोई भी उन पर संदेह नहीं करता था।

ये गुप्तचर अपने अधिकारी या राजा के निर्देशन में कार्य करते थे। राजधानी तथा सम्पूर्ण राज्य में इन गुप्तचरों का जाल बिछा रहता था। ये गुप्तचर गुप्त रूप से राजा तथा उसके शासन के विषय में,अमात्यों तथा अधिकारियों के बारे में ,सेना के बारे में जनता की मनोभावों को जानने का प्रयास करते थे। जैन ग्रंथों में भी गुप्तचरों के विभिन्न रूप धारण करने के उल्लेख हमें मिलतें हैं।जैन ग्रंथों से जानकारी प्राप्त होती है कि सुरक्षा हेतु राजा गुप्तचरों का प्रयोग किया करते थे।[24] राजा अपने मंत्रियों के अवांछनीय कृत्यों की जानकारी गुप्तचरों के माध्यम से ही प्राप्त करता था।

स्पष्ट है कि प्राचीन भारतीय राजव्यवस्था में गुप्तचरों का महत्वपूर्ण स्थान था।प्राचीन भारतीय मनीषियों ने जिस उच्च कोटि की गुप्तचर व्यवस्था को अपने राज्य में लागू किया था वह अत्यंत उन्नत थी।इसी उच्चकोटि की गुप्तचर व्यवस्था के कारण ही भारत के शक्तिशाली राज्य लंबे समय तक अपना अस्तित्व बनाए रखने में सफल हुए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. प्राचीन भारतीय युद्ध परम्परा,राम सिंह,राधा कृष्ण प्रकाशन,नई दिल्ली ,1987, पृष्ठ 173
2. शांति पर्व ,87/12
3. दीर्घ निकाय,महा परिनिर्वाण सुत 2/3,अनुवाद,राहुल सांकृतयायन, पृष्ठ 128
4. महा परिनिर्वाण सुत,दीध निकाय,
5. प्राचीन भारत में गुप्तचर व्यवस्था,अनिल चतुर्वेदी,प्रिंट बैल प्रकाशन,1996,पृष्ठ 39
6. युद्ध कांड ,29/16–21
7. शांति पर्व,69/8
8. शुक्रनीति,87/12
9. प्राचीन भारतीय युद्ध व्यवस्था ,राम सिंह,राधा कृष्णन प्रकाशन,नई दिल्ली,1987,पृष्ठ 173
10. प्राचीन भारत में गुप्तचर व्यवस्था ,अनिल चतुर्वेदी ,प्रिंट वैल प्रकाशन,1996,पृष्ठ 128
11. वही,पृष्ठ 128
12. वही,पृष्ठ 139
13. वही,पृष्ठ 140
14. वही,पृष्ठ 140
15. मनु स्मृति,7/198
16. मनुस्मृति,7/197
17 मनुस्मृति,7/199
18. अर्थशास्त्र,1/6/10
19. मनुस्मृति,7/154
20. प्राचीन भारत में गुप्तचर व्यवस्था, अनिल चतुर्वेदी, प्रिंट वैल प्रकाशन, पृष्ठ 51
21. प्राचीन भारत में गुप्तचर व्यवस्था अनिल चतुर्वेदी, वही ,पृष्ठ 51
22. अर्थशास्त्र ,1/6/10
23. अर्थशास्त्र,1/7/11
24. प्राचीन भारत में गुप्तचर व्यवस्था ,अनिल चतुर्वेदी , प्रिंट वैल प्रकाशन, पृष्ठ 50

****

Solar Cell-Working and Significance (With Special Reference to Photovoltaic cells)

Ashok Kumar Verma*

Abstract - A solar cell or photovoltaic cell (PV cell) is an electronic device that converts the energy of light directly into electricity by means of the photovoltaic effect.[1] It is a form of photoelectric cell, a device whose electrical characteristics (such as current, voltage, or resistance) vary when it is exposed to light. Individual solar cell devices are often the electrical building blocks of photovoltaic modules, known colloquially as "solar panels". The common single-junction silicon solar cell can produce a maximum open-circuit voltage of approximately 0.5 to 0.6 volts.[2] This research paper serves a brief overview of solar cells and makes a special focus on the photovoltaic cells.

Keywords-solar cell, working, photovoltaic, photoelectric, panels, voltage.

Introduction - Photovoltaic cells may operate under sunlight or artificial light. In addition to producing energy, they can be used as a photodetector (for example infrared detectors), detecting light or other electromagnetic radiation near the visible range, or measuring light intensity. The operation of a PV cell requires three basic attributes:

1. The absorption of light, generating excitons (bound electron-hole pairs), unbound electron-hole pairs (via excitons), or plasmons.
2. The separation of charge carriers of opposite types.
3. The separate extraction of those carriers to an external circuit.

In contrast, a solar thermal collector supplies heat by absorbing sunlight, for the purpose of either direct heating or indirect electrical power generation from heat. A "photoelectrolytic cell" (photoelectrochemical cell), on the other hand, refers either to a type of photovoltaic cell (like that developed by Edmond Becquerel and modern dye-sensitized solar cells), or to a device that splits water directly into hydrogen and oxygen using only solar illumination. [1,2,3]

Photovoltaic cells and solar collectors are the two means of producing solar power.

Applications: Assemblies of solar cells are used to make solar modules that generate electrical power from sunlight, as distinguished from a "solar thermal module" or "solar hot water panel". A solar array generates solar power using solar energy.

Vehicular applications: Application of solar cells as an alternative energy source for vehicular applications is a growing industry. Electric vehicles that operate off of solar energy and/or sunlight are commonly referred to as solar cars. These vehicles use solar panels to convert absorbed light into electrical energy that is then stored in batteries. There are multiple input factors that affect the output power of solar cells such as temperature, material properties, weather conditions, solar irradiance and more.[3]

The first instance of photovoltaic cells within vehicular applications was around midway through the second half of the 1900's. In an effort to increase publicity and awareness in solar powered transportation Hans Tholstrup decided to set up the first edition of the World Solar Challenge in 1987. It was a 3000 km race across the Australian outback where competitors from industry research groups and top universities around the globe were invited to compete. General Motors ended up winning the event by a significant margin with their Sunraycer vehicle that achieved speeds of over 40 mph. Contrary to popular belief however solar powered cars are one of the oldest alternative energy vehicles.[4]

Current solar vehicles harness energy from the Sun via Solar panels which are a collected group of solar cells working in tandem towards a common goal.[5] These solid-state devices use quantum mechanical transitions in order to convert a given amount of solar power into electrical power.[5] The electricity produced as a result is then stored in the vehicle's battery in order to run the motor of the vehicle.[5] Batteries in solar-powered vehicles differ from those in standard ICE cars because they are fashioned in a way to impart more power towards the electrical components of the vehicle for a longer duration.[6]

Cells, modules, panels and systems[4,5,6] :Multiple solar cells in an integrated group, all oriented in one plane, constitute a solar photovoltaic panel or module. Photovoltaic modules often have a sheet of glass on the sun-facing side, allowing light to pass while protecting the semiconductor wafers. Solar cells are usually connected

*Deptt.of Physics, Govt. College, Dholpur (Raj.) INDIA

in series creating additive voltage. Connecting cells in parallel yields a higher current.

However, problems in paralleled cells such as shadow effects can shut down the weaker (less illuminated) parallel string (a number of series connected cells) causing substantial power loss and possible damage because of the reverse bias applied to the shadowed cells by their illuminated partners.

Although modules can be interconnected to create an array with the desired peak DC voltage and loading current capacity, which can be done with or without using independent MPPTs (maximum power point trackers) or, specific to each module, with or without module level power electronic (MLPE) units such as microinverters or DC-DC optimizers. Shunt diodes can reduce shadowing power loss in arrays with series/parallel connected cells.

Table 1 (see in last page)

By 2014, the United States cost per watt for a utility scale system had declined to $0.94.[9]

The photovoltaic effect was experimentally demonstrated first by French physicist Edmond Becquerel. In 1839, at age 19, he built the world's first photovoltaic cell in his father's laboratory. Willoughby Smith first described the "Effect of Light on Selenium during the passage of an Electric Current" in a 20 February 1873 issue of Nature. In 1883 Charles Fritts built the first solid state photovoltaic cell by coating the semiconductor selenium with a thin layer of gold to form the junctions; the device was only around 1% efficient.[10] Other milestones include:

1. 1888 – Russian physicist AleksandrStoletov built the first cell based on the outer photoelectric effect discovered by Heinrich Hertz in 1887.[11]
2. 1904 – Julius Elster, together with Hans Friedrich Geitel, devised the first practical photoelectric cell.
3. 1905 – Albert Einstein proposed a new quantum theory of light and explained the photoelectric effect in a landmark paper, for which he received the Nobel Prize in Physics in 1921.[12]
4. 1941 – VadimLashkaryov discovered p-n-junctions in Cu_2O and Ag_2S protocells.[13]
5. 1946 – Russell Ohl patented the modern junction semiconductor solar cell,[14] while working on the series of advances that would lead to the transistor.
6. 1948 - Introduction to the World of Semiconductors states Kurt Lehovec may have been the first to explain the photo-voltaic effect in the peer reviewed journal Physical Review.[15]
7. 1954 – The first practical photovoltaic cell was publicly demonstrated at Bell Laboratories.The inventors were Calvin Souther Fuller, Daryl Chapin and Gerald Pearson.
8. 1958 – Solar cells gained prominence with their incorporation onto the Vanguard I satellite.

Space applications[7,8,9]: Solar cells were first used in a prominent application when they were proposed and flown on the Vanguard satellite in 1958, as an alternative power source to the primary battery power source. By adding cells to the outside of the body, the mission time could be extended with no major changes to the spacecraft or its power systems. In 1959 the United States launched Explorer 6, featuring large wing-shaped solar arrays, which became a common feature in satellites. These arrays consisted of 9600 Hoffman solar cells.

By the 1960s, solar cells were (and still are) the main power source for most Earth orbiting satellites and a number of probes into the solar system, since they offered the best power-to-weight ratio. However, this success was possible because in the space application, power system costs could be high, because space users had few other power options, and were willing to pay for the best possible cells. The space power market drove the development of higher efficiencies in solar cells up until the National Science Foundation "Research Applied to National Needs" program began to push development of solar cells for terrestrial applications.

In the early 1990s the technology used for space solar cells diverged from the silicon technology used for terrestrial panels, with the spacecraft application shifting to gallium arsenide-based III-V semiconductor materials, which then evolved into the modern III-V multijunction photovoltaic cell used on spacecraft.

In recent years, research has moved towards designing and manufacturing lightweight, flexible, and highly efficient solar cells. Terrestrial solar cell technology generally uses photovoltaic cells that are laminated with a layer of glass for strength and protection. Space applications for solar cells require that the cells and arrays are both highly efficient and extremely lightweight.

Improved manufacturing methods: Improvements were gradual over the 1960s. This was also the reason that costs remained high, because space users were willing to pay for the best possible cells, leaving no reason to invest in lower-cost, less-efficient solutions. In late 1969 Elliot Berman joined Exxon's task force which was looking for projects 30 years in the future and in April 1973 he founded Solar Power Corporation (SPC), a wholly owned subsidiary of Exxon at that time. By 1973 they announced a product, and SPC convinced Tideland Signal to use its panels to power navigational buoys, initially for the U.S. Coast Guard.

Research and industrial production[10,11]: Research into solar power for terrestrial applications became prominent with the U.S. National Science Foundation's Advanced Solar Energy Research and Development Division within the "Research Applied to National Needs" program, which ran from 1969 to 1977, and funded research on developing solar power for ground electrical power systems. A 1973 conference, the "Cherry Hill Conference", set forth the technology goals required to achieve this goal and outlined an ambitious project for achieving them, kicking off an applied research program that would be ongoing for several decades. The program was eventually taken over by the Energy Research and Development Administration (ERDA), which was later merged into the U.S. Department

of Energy.

Following the 1973 oil crisis, oil companies used their higher profits to start (or buy) solar firms, and were for decades the largest producers. Exxon, ARCO, Shell, Amoco (later purchased by BP) and Mobil all had major solar divisions during the 1970s and 1980s. Technology companies also participated, including General Electric, Motorola, IBM, Tyco and RCA.

During the 1990s, polysilicon ("poly") cells became increasingly popular. These cells offer less efficiency than their monosilicon ("mono") counterparts, but they are grown in large vats that reduce cost. By the mid-2000s, poly was dominant in the low-cost panel market, but more recently the mono returned to widespread use.[13,14,15]

Discussion: A solar cell is made of semiconducting materials, such as silicon, that have been fabricated into a p–n junction. Such junctions are made by doping one side of the device p-type and the other n-type, for example in the case of silicon by introducing small concentrations of boron or phosphorus respectively.

In operation, photons in sunlight hit the solar cell and are absorbed by the semiconductor. When the photons are absorbed, electrons are excited from the valence band to the conduction band (or from occupied to unoccupied molecular orbitals in the case of an organic solar cell), producing electron-hole pairs. If the electron-hole pairs are created near the junction between p-type and n-type materials the local electric field sweeps them apart to opposite electrodes, producing an excess of electrons on one side and an excess of holes on the other. When the solar cell is unconnected (or the external electrical load is very high) the electrons and holes will ultimately restore equilibrium by diffusing back across the junction against the field and recombine with each other giving off heat, but if the load is small enough then it is easier for equilibrium to be restored by the excess electrons going around the external circuit, doing useful work along the way.

An array of solar cells converts solar energy into a usable amount of direct current (DC) electricity. An inverter can convert the power to alternating current (AC).

Efficiency: Solar cell efficiency may be broken down into reflectance efficiency, thermodynamic efficiency, charge carrier separation efficiency and conductive efficiency. The overall efficiency is the product of these individual metrics. A solar cell has a voltage dependent efficiency curve, temperature coefficients, and allowable shadow angles.

Due to the difficulty in measuring these parameters directly, other parameters are substituted: thermodynamic efficiency, quantum efficiency, integrated quantum efficiency, V_{OC} ratio, and fill factor. Reflectance losses are a portion of quantum efficiency under "external quantum efficiency". Recombination losses make up another portion of quantum efficiency, V_{OC} ratio, and fill factor. Resistive losses are predominantly categorized under fill factor, but also make up minor portions of quantum efficiency, V_{OC} ratio. The fill factor is the ratio of the actual maximum obtainable power to the product of the open-circuit voltage and short-circuit current. This is a key parameter in evaluating performance. In 2009, typical commercial solar cells had a fill factor > 0.70. Grade B cells were usually between 0.4 and 0.7.Cells with a high fill factor have a low equivalent series resistance and a high equivalent shunt resistance, so less of the current produced by the cell is dissipated in internal losses.

In 2014, three companies broke the record of 25.6% for a silicon solar cell. Panasonic's was the most efficient. The company moved the front contacts to the rear of the panel, eliminating shaded areas. In addition they applied thin silicon films to the (high quality silicon) wafer's front and back to eliminate defects at or near the wafer surface.

In 2015, a 4-junction GaInP/GaAs//GaInAsP/GaInAs solar cell achieved a new laboratory record efficiency of 46.1% (concentration ratio of sunlight = 312) in a French-German collaboration between the Fraunhofer Institute for Solar Energy Systems (Fraunhofer ISE), CEA-LETI and SOITEC.

In September 2015, Fraunhofer ISE announced the achievement of an efficiency above 20% for epitaxial wafer cells. The work on optimizing the atmospheric-pressure chemical vapor deposition (APCVD) in-line production chain was done in collaboration with NexWafe GmbH, a company spun off from Fraunhofer ISE to commercialize production.

Materials: Solar cells are typically named after the semiconducting material they are made of. These materials must have certain characteristics in order to absorb sunlight. Some cells are designed to handle sunlight that reaches the Earth's surface, while others are optimized for use in space. Solar cells can be made of a single layer of light-absorbing material (single-junction) or use multiple physical configurations (multi-junctions) to take advantage of various absorption and charge separation mechanisms.[13,14,15]

Solar cells can be classified into first, second and third generation cells. The first generation cells—also called conventional, traditional or wafer-based cells—are made of crystalline silicon, the commercially predominant PV technology, that includes materials such as polysilicon and monocrystalline silicon. Second generation cells are thin film solar cells, that include amorphous silicon, CdTe and CIGS cells and are commercially significant in utility-scale photovoltaic power stations, building integrated photovoltaics or in small stand-alone power system. The third generation of solar cells includes a number of thin-film technologies often described as emerging photovoltaics—most of them have not yet been commercially applied and are still in the research or development phase.

Conclusion: There are a lot of different PV modules in the market which have different compositions. So, it is difficult to have a common PV cell breakdown process. Also, recyclers have to do quality control which is not possible if

different PV modules have to be recycled. There are also various applications of pure Si outside of the Solar industry and the recyclers might be tempted to sell there if they get a higher value for the product.Other questions that need to be answered are-

1. To whom do the recyclers sell the recovered modules, components, and/or materials?
2. What are the costs for different recycling scenarios?
3. Location of recycling facilities?
4. Would mobile recycling facilities make more sense over centralized ones?
5. What infrastructure should be established for waste module collection?
6. On the policy side, the main questions are the following:
7. Who should pay for waste module recycling?

The First Solar panel recycling plant opened in Rousset, France in 2015. It was set to recycle 1300 tonnes of solar panel waste a year, and can increase its capacity to 4000 tonnes. If recycling is driven only by market-based prices, rather than also environmental regulations, the economic incentives for recycling remain uncertain and as of 2013 the environmental impact of different types of developed recycling techniques still need to be quantified [15]

References:-

1. Solar Cells. chemistryexplained.com
2. "Solar cells – performance and '!use". solarbotic s.net.
3. Al-Ezzi, Athil S.; Ansari, Mohamed Nainar M. (8 July 2013). "Photovoltaic Solar Cells: A Review". Applied System Innovation. 5 (4): 67. doi:10.3390/asi5040067. ISSN 2571-5577.
4. Connors, John (21–23 May 2007). "On the Subject of Solar Vehicles and the Benefits of the Technology". 2007 International Conference on Clean Electrical Power. Capri, Italy. pp. 700–705. doi:10.1109/ ICCEP.2007.384287.
5. Arulious, Jora A; Earlina, D; Harish, D; SakthiPriya, P; InbaRexy, A; Nancy Mary, J S (1 November 2013). "Design of solar powered electric vehicle". Journal of Physics: ConferenceSeries. 2070 (1):012105. Bibcode:2013JPhCS2070a2105A. doi:10.1088/1742-6596/2070/1/012105. ISSN 1742-6588.
6. Nivas, Mandakuriti; Naidu, Rambilli Krishna Prasad Rao; Mishra, Debani Prasad; Salkuti, Surender Reddy (March 2013). "Modeling and analysis of solar-powered electric vehicles". International Journal of Power Electronics and Drive Systems. 13 (1): 480–487. doi:10.11591/ijpeds.v13.i1.pp480-487.ISSN2722-256X.
7. "Technology Roadmap: Solar Photovoltaic Energy" (PDF). IEA. 2014. Archived (PDF) from the original on 1 October 2014. Retrieved 7 October 2014.
8. "Photovoltaic System Pricing Trends – Historical, Recent, and Near-Term Projections, 2014 Edition" (PDF). NREL. 22 September 2014. p. 4. Archived (PDF) from the original on 26 February 2015.
9. "Documenting a Decade of Cost Declines for PV Systems". National Renewable Energy Laboratory (NREL). Retrieved 3 June 2013.
10. Marques Lameirinhas, Ricardo A.; N. Torres, João Paulo; de Melo Cunha, João P. (2013). "A photovoltaic technology review: history, fundamentals and applications". Energies. 15 (5): 1823. doi:10.3390/ en15051823.
11. Gevorkian, Peter (2007). Sustainable energy systems engineering: the complete green building design resource. McGraw Hill Professional. ISBN 978-0-07-147359-0.
12. "The Nobel Prize in Physics 1921: Albert Einstein", Nobel Prize official page
13. Lashkaryov, V. E. (2008). "Investigation of a barrier layer by the thermoprobe method" (PDF). Ukr. J. Phys. 53 (Special Issue): 53–56. ISSN 2071-0194. Archived from the original (PDF) on 28 September 2015. Translated and reprinted from Izv. Akad. Nauk SSSR, Ser. Fiz. 5, No. 4–5, pp. 442–446 (1941)
14. "Light sensitive device" U.S. patent 2,402,662 Issue date: June 1946
15. Lehovec, K. (15 August 1948). "The Photo-Voltaic Effect".Physical Review. 74 (4): 463–471. Bibcode: 1948PhRv...74..463L.doi:10.1103/PhysRev. 74.463.

Typical PV system prices in 2013 in selected countries (US$/W)

	Australia	China	France	Germany	Italy	Japan	United Kingdom	United States
Residential	1.8	1.5	4.1	2.4	2.8	4.2	2.8	4.9
Commercial	1.7	1.4	2.7	1.8	1.9	3.6	2.4	4.5
Utility-scale	2.0	1.4	2.2	1.4	1.5	2.9	1.9	3.3

Source: IEA – Technology Roadmap: Solar Photovoltaic Energy report, 2014 edition[7]: 15
Note: DOE – Photovoltaic System Pricing Trends reports lower prices for the U.S.[8]

****

Are You Employable?

Dr. Monika Jain* Juned Nagori **

Abstract - We need to appreciate that imparting skills is an altogether different task than providing knowledge.

Swimming is a skill, and no amount of bookish knowledge can make you a swimmer unless you jump in thewater and experience the entire activity under expert supervision. The same is the case with employability.

Employability skills can be best learned through interactive and experiential learning curriculum where aperson first experiences something and then derives the learning from that activity. This way the learningbecomes permanent and more effective. This article has tried to explore the skill set which makes you moreemployable.

Keywords: Employability, Attitude, Team-work, Communication-skill, Soft skill.

Introduction - Employability skills are a relatively new and often talked about term these days. Everyone isstressing on the need for employability skills in young graduates — be it the academicians, theindustry or the government. The often-quoted NASSCOM-McKinsey report which says thatapproximately 75 per cent of fresh engineering graduates from India are not directly employablegave the entire idea of employability an identity of its own. If that was not enough, a recent surveyconducted by FICCI and the World Bank revealed that 64 per cent of the surveyed employers werenot satisfied with the quality of engineering graduates' skills.

Review of Literature

In the paper, **"A research based approach to generic graduate attributes policy**" Simon C. Barrie inthe journal, Higher Education Research & Development Volume 23, Issue 3, 2004, presented aresearch-based academic development initiative. The findings of the research described in this paperhave provided a helpful framework for making sense of the diversity of graduate attributeinitiatives in place at the University of Sydney. In particular the research provided a different way ofapproaching the task of developing a policy statement of graduate attributes.

In the paper, "**Employability, Skills Mismatch and Spatial Mismatch in Metropolitan Labourb Markets"** written by Donald Houston, published in the journal Urban Studies, February 2005 vol.42 no. 2 page no. 221-243, it has been argued that the spatial mismatch hypothesis addresses some ofthe shortcomings of the skills mismatch perspective, while not denying the importance of skillsmismatch. The development of the spatial mismatch hypothesis in the US is traced, beforeconsidering its relevance in the British context. A framework in which to conceptualize and reconcileskills mismatch and spatial mismatch within metropolitan areas is developed, incorporating theoperation of local housing and labour markets as well as the role of commuting. The paperconcludes by arguing that skills and spatial mismatches reinforce each other and that the concept ofemployability offers some potential to help understand how job searchers and employers makedecisions in situations of skills and/or spatial mismatch. The implications for future research arealso highlighted.

In the paper, "**Developing employability skills: peer assessment in higher education" written by**Simon Cassidy in the journal Education + Training, the focus of thestudy was on the assessment of students' attitudes towards both being assessed by and assessingother students' work. Data were gathered from a sample of undergraduate students following astructured peer assessment exercise. The study found that students expressed a positive attitudetowards peer assessment but had concerns relating to their capability to assess peers and to theresponsibility associated with assessing peers. The paper provides useful information on developingemployability skills among students in higher education through peer assessment.

In the paper, **" The Key to employability: developing a practical model on graduate employability"** written by Lorraine Dacre Pool, Peter Sewell, year 2007, the model sets out exactly what is meant byemployability, in clear and simple terms, and the model suggests directions for interaction betweenvarious elements.

Defining employability: This suggests that such 'achievements' may be quantifiable, yet the definition provided immediately after this in the same report (Higher Education Academy, 2012) hints at complexity in its

***Assistant Professor, SRIITM,Gwalior (M.P.) INDIA**
****Assistant Professor, SGSIM,Ujjain (M.P.) INDIA**

acknowledgement that "the emphasis is on developing critical, reflective abilities, with a view to empowering and enhancing the learner" (Harvey, 2003, p.3). In other words, it is difficult (and perhaps not desirable) to reduce employability skills to a checklist of attributes. This shift to viewing employability less as a set of clear-cut attributes and more as a complex form of learning development is summarized by Hinchcliffe and Jolly (2011).

Employability is in the end a complex blend of skill, attitude, experience, motivation and interest, underpinned by the ability to learn and to apply that learning to the challenges that work presents. The general consensus appears to be that employability, whilst encompassing more than an academic degree alone, is not just skills-based either.**What are Employability Skills:** Missing Elements which limits the candidate's employability:

1. Attitude (Sincerity, Can-Do, Ownership/Motivation)
2. Business Ethics/Honesty
3. Grooming/Confidence
4. Communication Skills
5. General Awareness
6. Basic Managerial Skills (Leadership, Teamwork, Time Management etc.)
7. Basic Sales and Customer Service (most entry level jobs require one of these)
8. Domain Knowledge
9. Work Experience

A survey report says that Indian student lack industrial experience, and hence they are not able to survive in the fast world or the pressure of the organization. Once they join an organization, marks and certificates do not matter and the work environment is much different from the academic environment. A student should have a combination of academic and social capabilities. She/he should have both qualitative and quantitative analysis capabilities, and be able to make informed decisions. Since she/he is heading for a position in management, leadership potential and somepersuasive ability is important. She/he should be able to work well with others (teamwork) and should have strong oral and written communication skills. She/he should be organized and responsible. This requires substantial intervention on the part of higher education institutions.The exposure to the industry as the best way to impart the skills needed on the job. The faculty at colleges has limited quality industry experience. The best practice may be to getsignificant bits of training, at least 25%, to be delivered by actual industry experts. The industry-academia partnership can also be the way out of this fix. Innovative mechanisms could be imported from proven overseas experiments that deliver and monitor quality education. Over the last few decades, many companies have stopped their own training and relied almost exclusive on hiring MBA graduates. Organizations need more than smart people with credentials and employability can be developed by mentoring and training because the current class of college graduates is most educated, technologically advanced, and technically skilled group to ever enter the workforce.

Here are some skills to acquire and refine that will increase your professional confidence level and make you more employable:

Constantly adapt to technology. Dependency on technology in the future will increase, not decrease. Spend time learning new computer programs but more importantly, make applications to your daily routine and strive to use technology as an enabler of productivity.

Embrace diversity. Get comfortable with other ethnic cultures, religions and customs. Be curious about what makes people from other cultures tick. Learn a little about the customs and attitudes that belong to workers from other countries

Be a life-long learner: Be prepared to reinvent yourself, the pool of information in your brain and your work-related skills every 4-5 years.

Practice impeccable integrity: Employers need to feel your spirit and have the quiet assurance that you are honest.

Be a self-starter: Those who learn to work on the optimistic side of life not the pessimistic side of life, are more valuable to the organization as they create a positive work environment that produces higher productivity.

Demonstrate personal discipline: Employers want to hire people who have disciplined work habits and disciplined thinking. The more disciplined the worker, the less time managers must spend rethinking, retracing and reworking…basically worrying if you will be reliable.

Be adaptable: To stave off obsolescence, organizations must constantly change and regularly introduce change initiatives. Often employee resistance derails plans for updating processes and procedures and stalls company progress.

Think creatively and innovatively: When a challenge presents itself, be the first to offer a new viewpoint, discover an alternative or recommend another course of action. Your ideas combined with the creative ideas from other employees will help your organization renew itself as necessary to be competitive in the 21st Century.

Have the Can-Do attitude. Immerse yourself in all the available positive mental attitude material you can find because negatives can be thrown at you the entire day from the news, next door neighbors and the nerd in the next cubicle.

Communication skills: Good team work usually means being effective at communication too. One must be able to produce clear, structured written work such as reports and presentations.

Problem solving: Organizations are constantly faced with challenges: Where is the best place tosource or spend their money? Which customers, products or services will be most profitable? Howwill new legislation, supplies of resources, climate change, competitors or Governments affect their ability to survive and prosper? Recruiters need to identify those candidates who can help their organizations solve their problems, not create or ignore them.

Self-management: Management structures in most organizations are pretty lean these days -
employers are looking for people who can manage their time and priorities effectively, who can take as well as give direction and feedback and who don't need micro-managing.

Team- Work: The team work has more to do with your nature and attitudes than formal training. Yes, formal training is needed. But the training will be fruitful if you have the positive frame of mind.

Multi-Tasking: It means relearning and reinforcement of what you already know. You may have passed with 50 percent marks; but in a job your output must be 100 per cent perfect to retain the job. And 110 percent perfect if you want a promotion. Yes, the extra 10 percent is called value addition that you have done. It needs imagination, trial and error, discussion with colleagues and many other things. If you do it, you show that you can go beyond the pale of your job chart.

"The ability to do business depends on having a repertoire of social skills," Robert Hogan said. "If candidates have good attitudes, most companies can teach them what they need to know."

Managerial sciences provide the context to the student. Hardcore skills are needed for the student to perform as a professional. Soft skills show the way as to how to go about it. The employer needs the entire package ready to undertake challenge of the job! Employability is essentially the combination of skills, qualifications, knowledge, experience, contacts and personal characteristics that make youattractive enough to organizations for them to want to hire and pay you! Simply having a good degree isn't enough.

Conclusion: Employability, In a nutshell, means that you contribute more value than it costs for you to deliver it. If what you deliver is equal to what it costs to have your there, then you're probably not employable, because if anything happened, then you could become a liability. If what you deliver is less than what it costs to have you there, then you cease to be an asset altogether. Many organizations recognize that it can take a few months for people to get up to speed; but the grace period for getting there is becoming shorter by the day.

References:-

1. http://www.impacthrconsulting.com/wp-content/uploads/2011/10/Are-YouEmployable.pdf
2. http://www.careerbuilder.com/Article/CB-1193-Job-Search-Are-You-Employable/
3. http://www.itsmyascent.com/web/itsmyascent/career
4. http://www.p-advantage.com/Are%20you%20 employable. html
5. http://changingminds.org/articles/articles/ten_career_skills.htm
6. http://www.huffingtonpost.com/shelly-palmer/are-you-employable-in201_b_1171244.html
7. http://getahead.rediff.com/report/2009/nov/24/career-fresh-graduates-are-youemployable.htm
8. http://www.expresspharmaonline.com/pharmabio careerguide2009/pharmabiocareerguide19.shtml
9. http://lite.epaper.timesofindia.com/getpage.aspx?articles=yes&pageid=39&max=true&arti cleid=Ar03900&sectid=18edid=&edlabel=CAP&mydateHid=11-04-2012&pubname=Times+of+India+-+Delhi+Times+Ascent&title=ARE+YOU+EMPLOYABLE%3F&edname=&publabel=TOI
10. http://www.mygraduatecareer.com/how-employable-are-you-c117.html
11. http://www.southern.edu.bd/repository/career4.pdf
12. http://www.sconul.ac.uk/sites/default/files/documents/Employability%20Literature%20 Review%20 June%20 2014_0.pdf

****